पण्डितचतुर्थीलालशर्मप्रणीतः

अनुष्ठानप्रकाशः

भाषाटीकासमन्वितः

द्वितीयो भागः

※ तृतीयं पुरश्चरणकाण्डम् ※

गणपतिमन्त्रपुरश्चरणप्रकरणम् • शिवमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम् • देवीमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम्
विष्णुमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम् • वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान)प्रकरणम्
सूर्य्यादिनवग्रहमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम् • सर्वरोगोपशमनप्रकरणम्

श्री गणेश, शिव, दुर्गा, विष्णु एवं सूर्य के मन्त्र-जप, यन्त्र, मण्डल और हवन के मूलभूत-सिद्धान्तों तथा रोग-निवारण इत्यादि के वैदिक-तान्त्रिक कर्मकाण्ड का प्रामाणिक ग्रन्थ

सम्पादक एवं टीकाकार

महर्षि अभय कात्यायन

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
612

पण्डितचतुर्थीलालशर्मप्रणीतः

अनुष्ठानप्रकाशः

ANUṢṬHĀNA-PRAKĀŚA

भाषाटीकासमन्वितः

द्वितीयो भागः

❊ तृतीयं पुरश्चरणकाण्डम् ❊

गणपतिमन्त्रपुरश्चरणप्रकरणम् • शिवमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम् • देवीमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम्
विष्णुमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम् • वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान)प्रकरणम्
सूर्य्यादिनवग्रहमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम् • सर्वरोगोपशमनप्रकरणम्

श्री गणेश, शिव, दुर्गा, विष्णु एवं सूर्य के मन्त्र-जप, यन्त्र, मण्डल और हवन के मूलभूत-सिद्धान्तों तथा रोग-निवारण इत्यादि के वैदिक-तान्त्रिक कर्मकाण्ड का प्रामाणिक ग्रन्थ

Light of Karmakāṇḍa—Scripture of Vaidika and Tāntrika Karmakāṇḍa comprising fundamental principles of Japa, Hymns, Yantra, Maṇḍala and Havana of Gaṇeśa, Śiva, Durgā, Viṣṇu and Sūrya along with ritualistic treatment of various diseases

सम्पादक एवं टीकाकार

महर्षि अभय कात्यायन

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

अनुष्ठानप्रकाशः (द्वितीयो भागः)
पृष्ठ : 32+500
ISBN : 978-93-86554-57-4 (Set)

प्रकाशक
चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001
दूरभाष : +91 542-2335263
email : chaukhambasurbharatiprakashan@gmail.com
website : www.chaukhamba.co.in

प्रथम संस्करण 2018 ई०
मूल्य : ₹ 1500.00 (1-2 सम्पूर्ण)

अन्य प्राप्तिस्थान
चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली नं. 21-ए, अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002
दूरभाष : +91 11-23286537; 32996391
email : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

•

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पो. बा. नं. 2113, दिल्ली 110007

•

चौखम्बा विद्याभवन
चौक (बैंक ऑफ बड़ौदा भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001

उपोद्घात

'अनुष्ठान' वह श्रद्धापूर्वक शास्त्रोक्त विधि से सांगता-सहित सम्पन्न आयोजन होता है, जो गुप्त अथवा प्रकट रूप में किसी कर्त्ता द्वारा किसी निमित्त अथवा कामना की पूर्ति-हेतु दृढ़ संकल्प से युक्त होकर किया जाता है। संस्कृत शब्दकोशों में 'अनुष्ठान' शब्द का अर्थ कार्य करना, धर्मकृत्य करना, कार्य में परिणत करना, कार्य-निष्पादन, आज्ञापालन, धार्मिक तपश्चर्याओं का प्रयोग, आरम्भ, उत्तरदायित्व, कार्य में सर्वतोभावेन व्यस्तता, धार्मिक कृत्यों का प्रयोग आदि दिया हुआ है। देववाणी का यह शब्द (अनु + स्था + ल्युट्) 'अनु' उपसर्गपूर्वक 'स्था' धातु के पश्चात् 'ल्युट्' प्रत्यय लगकर बनता है। इस अनुष्ठान का कर्त्ता पुरुष—अनुष्ठातृ (अनुष्ठाता) अथवा अनुष्ठायिन् (अनुष्ठायी) कहलाता है। राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रचलित 'अनूठा' देववाणी के शब्द 'अनुष्ठु' (अनु + स्था + कु) इस तत्सम शब्द का तद्भव रूप है, जिसका अर्थ 'अनुपम' अथवा 'सम्यक्' होता है। 'त्रिकाण्डशेष' नामक शब्दकोश में 'अनुष्ठ' (अनु + स्था + क) दिया गया है। इस प्रकार जो धार्मिक उपचार विधानपूर्वक किसी कष्ट या दु:ख से मुक्ति अथवा किसी कामना की पूर्ति-हेतु किया जाता है, उसे 'अनुष्ठान' कहते हैं। ये 'अनुष्ठान' व्यक्ति, परिवार, समाज अथवा राष्ट्र के हित के लिये किये जाते हैं। इनके आयोजन के पीछे अनुष्ठाता की दृढ़ इच्छाशक्ति होती है। हिन्दी का ठानना क्रिया इस कर्म में अवश्यमेव प्रयुक्त होती है। तात्पर्य यह है कि अनुष्ठान को अनुष्ठाता (कर्त्ता) द्वारा ठाना जाता है। अनुष्ठान 'शान्तिक' तथा 'पौष्टिक' दोनों प्रकार के होते हैं।

प्राकृत भाषा में अनुष्ठान को अणुट्ठाण, दूसरे से अनुष्ठान कराने को 'अणुट्ठावण' (अनुष्ठापन), अनुष्ठान करने वाले को 'अणुट्ठाइ' कहते हैं। अनुष्ठान की क्रिया का प्राकृत रूप अणुट्ठा है, अनुष्ठान की दूसरी संज्ञा शान्तिकर्म भी है।

शान्ति का वैदिक अर्थ—व्याकरण के अनुसार 'शान्ति' शब्द 'शम्' धातु में 'क्तिन्' प्रत्यय लगने से बनता है। 'शम्' धातु दिवादिगण की परस्मैपदी तथा चुरादिगण की उभयपदी धातु है। इसके अर्थ 'शान्त होना, चुप होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना, थमना, ठहरना, समाप्त होना, नष्ट करना' आदि होते हैं। इस प्रकार शान्तिकर्म का अनुष्ठान वह अनुष्ठान होता है, जिससे आगत दु:ख, कष्ट, शूल, विघ्न, रोग, शोक, भय, अन्तराय आदि नष्ट, शमित, शान्त या समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकार 'शान्ति' व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की समस्याओं, कष्टों, व्याधियों तथा आधियों का प्रशमन, निराकरण या समाधान करती है। शान्ति अथवा शान्तिक कर्म का यही आशय ग्रहण करना अभीष्ट है। 'शम्' धातु में 'क्विप्' प्रत्यय लगकर 'शम्' अव्यय का निर्माण होता है।

'शम्' अव्यय ऋग्वेद में अनेकों स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है तथा शम् धातु भी अनेकों स्थलों पर प्रयुक्त हुई है। शं (शम्) का अर्थ 'सुख एवं कल्याण' अथवा 'स्वास्थ्य एवं सम्पत्ति' होता है, जो कि कहीं 'शंयो:' के रूप में तथा कहीं 'शंययोश्च' के रूप में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार ऋग्वेद में 'शम्' शब्द लगभग १६० बार आया है। निम्न उदाहरण द्रष्टव्य है—

बृहस्पते सदभिन्न: सुगं कृधि शं योर्यत् ते मनुर्हितं तदीमहे।
रथं न दुर्गाद् वसव: सुदानवो विश्वस्मान्नो अहंसोनिष्पिपर्त्त॥
(ऋ० १ । १०६ । ५)

ताभिर्देवानामवो यक्षि विद्वानथा भव यजमानाय शंयो:।
अग्निं सुदीतिं सुदृशं गृणन्तो नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेद:॥
(ऋ० ३।१७।३)

तपोस्वग्ने अन्तराँ अमित्रान् तपा शं समररुष: परस्य।
तपो वसो चिकितानो अचित्तान् वितेतिष्ठन्तामजरा अयास:॥
(ऋ० ३।१८।२)

अग्निषोमा हविषा प्रस्थितस्य वीतं हर्यतं वृषणा जुषेथाम्।
सुशर्माणा स्त्रवसाहि भूत मथा धत्तं यजमानाय शंयो:॥
(ऋ० १।९३।७)

इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरा महेमती:।
यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम्॥
(ऋ० १।११४।१)

या वो भेषजा मरुता शुचीनि या शंतमा वृषणो यामयोभु।
यानि मनुरवृणीत: पितानस्ता शं च योश्च रुद्रस्य वश्मि॥
(ऋ० ३।३३।१३)

मृळानो रुद्रोत वो मयस्कृधि क्षयद्वीराय नभसा विधेम ते।
यच्छं च योश्च मनुरायेजे पिता तदस्याम तव रुद्र प्रणीतिपु॥
(ऋ० १।११४।१)

यहाँ पर 'शं' एवं 'यो:' का अन्वयरूपी अर्थ क्रमश: 'सुख' एवं 'दु:खरहित' है।

अथर्ववेद में शान्ति शब्द का प्रयोग (१९।९ में) लगभग १७ बार हुआ है तथा 'शम्' का प्रयोग अनेकों सूक्तों में प्रचुरता से हुआ है। इस १९वें काण्ड के ९वें सूक्त के तीसरे से पाँचवें मन्त्र तक वाक्-मन तथा पञ्चेन्द्रियों के उल्लेखपूर्वक उनके दुष्कृत्यों की शान्तिहेतु प्रार्थना की गई है, मन की शान्ति-हेतु प्रार्थना है। इसके आगे छठे से ग्यारहवें मन्त्र तक देवों, ग्रहों, पृथिवी, उल्कापातों, गौओं, नक्षत्रों, जादूकृत्यों, राहु, धूमकेतु, रुद्रों, वसुओं, आदित्यों, ऋषियों तथा बृहस्पति की स्तुति में कल्याण एवं सुख की कामना की गई है। बारहवें मन्त्र में इन्द्रादि देवों से प्रार्थना है तथा तेरहवें मन्त्र में कल्याणकारी वस्तुओं की प्राप्ति तथा चौदहवें मन्त्र में पापादि की शान्ति-हेतु प्रार्थना है। यथा—

शान्ताद्यौ: शान्ता पृथिवी शान्तमिदमुर्वन्तरिक्षम्। शान्ता उदन्वती राप: शान्ता न: सन्त्वोषधी:॥ १॥
शान्तानि पूर्वरूपाणि शान्त नो अस्तु कृताकृतम्। शान्तं भूतं च भव्यं च सर्वमेव शमस्तु न:॥ २॥
इयं या परमेष्ठिनी वाग् देवी ब्रह्म संशिता। ययैव ससृजे घोरं तयैव शान्तिरंस्तु न:॥ ३॥
इदं या परमेष्ठिनं मनो वां ब्रह्म संशितम्। येनैव ससृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तु न:॥ ४॥

इमानि पञ्चेन्द्रियाणि मन: षष्ठानि मे हृदि ब्रह्मणा संशितानि।
यैरेव ससृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तु न:॥ ५॥

शं नो मित्र: शं वरुण: शं विष्णु: शं प्रजापति:। शं न इन्द्रो बृहस्पति: शं नो भवत्वर्यमा॥ ६॥
शं नो मित्र: शं वरुण: शं दिवस्वां छमन्तक:। उत्पाता: पार्थिवान्तरिक्षा: शं नो दिविचरा: ग्रहा:॥ ७॥
शं नो भूमिर्वेप्यमाना शमुल्का निहितं च यत्। शं गावो लोहितक्षीरा: शं भूमिरवतीर्यती:॥ ८॥

नक्षत्रमुल्काभिहतं शमस्तुनः शं नोऽभिचाराः शमु सन्तु कृत्याः।
शं नो निखाता वल्गा शमुल्का देशोपसर्गाः शमुनो भवन्तु॥ ९॥
शं नो ग्रहाश्चान्द्रमसाः शमादित्यश्च राहुणा। शं नो मृत्युर्धूमकेतुः शं रुद्रास्तिग्मतेजसः॥ १०॥
शं रुद्राः शं वसवः शमादित्याः शमाग्नयः। शं नो महर्षयो देवाः शं देवाः शं बृहस्पतिः॥ ११॥
ब्रह्म प्रजापतिर्धाता लोका वेदाः सप्त ऋषयोऽग्नयः।
तैर्मे कृतं स्वस्त्ययनमिन्द्रो मे शर्म यच्छतु ब्रह्मा मे शर्म यच्छतु॥
विश्वे मे देवा शर्म यच्छन्तु सर्वे मे देवाः सर्म यच्छन्तु॥ १२॥
यानि कानिचिच्छान्तानि लोके सप्तर्षयो विदुः। सर्वाणि शंभवन्तु मे शं मे अस्त्वभयं मे अस्तु॥ १३॥
पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति द्यौः शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शाान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिः सर्वे मे देवाः शान्तिः शान्तिः शान्तिर्शान्तिभिः। ताभिः शान्तिभिः सर्वं शान्तिभि शमयामोऽहं यदिह घोरं यदिह क्रूरं, यदिह पापं तच्छान्तं तच्छिवं सर्वमेव शमस्तु नः॥ १४॥ (अथर्ववेद १९। ९। १-१४)

यह अथर्ववेद का सुप्रसिद्ध शान्तिसूक्त है, जिसके विधिपूर्वक प्रयोग से व्यक्ति एवं राष्ट्र के सभी कष्ट दूर हो जाते हैं। इसके आगे के दसवें सूक्त में 'शम्' शब्द इक्यावन बार प्रयुक्त हुआ है। फिर ग्यारहवें सूक्त में अठारह बार के लगभग 'शं' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

शुक्लयजुर्वेद वाजसनेयि संहिता में छत्तीसवें अध्याय में 'शं' शब्द अनेकशः व्यवहृत हुआ है, जहाँ दिव्य जल से सुख-शान्ति एवं समृद्धि की प्रार्थना की गई है—

इन्द्रो विश्वस्य राजति शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ ८॥
शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रम ॥ ९ ॥
शं नो वातः पवता छं शं नस्तपतु सूर्यः। शं न कनि कृदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु॥ १०॥
अहानि शं भवन्तु नः शछं रात्रीः प्रति धीयताम्। शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रा वरुणा रातहव्या॥
शं न इन्द्रा पूषणा वाजसातौ शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयोः॥ ११॥
शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभिस्त्रवन्तु नः॥ १२॥
(शुक्लयजु० अ० ३६। ८-१२)

इन मन्त्रों में १२वाँ मन्त्र ऋग्वेद (१०। ९। ४), अथर्ववेद (१। ६। १) तथा सामवेद (३३वाँ) में है। इसमें इन्द्र, मित्र, वरुण, अर्यमा, बृहस्पति, विष्णु, वायु, सूर्य, पर्जन्य आदि से कल्याणार्थ प्रार्थना की गई है।

कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तरीय संहिता (३। ४। १०) में रुद्र को वास्तोष्पत्ति कहकर उन्हें प्रसन्न एवं शान्त करने के लिये प्रार्थना की गई है—

वास्तोष्पते प्रति जानीहि अस्मान् त्स्वाविवेशो अनमीवो भवानः।
यत् त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शं न एधि द्विपदे शं चतुष्पदे॥ १॥
वास्तोष्पते शग्मया स ँ सदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
आवःक्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ २॥
(काण्ड ३ प्रपाठक ४ अनुवाक)

रुद्रः खलु वै वास्तोष्पतिर्यद्‌हुत्वा वास्तोष्पतीयं प्रयायाद् रुद्रं एनं भूत्वाऽग्निरनुत्थाय हन्याद्वास्तोष्पतीयं जुहोति भागधेयेनैवैन ँ् शमयति नाऽऽर्तिमार्च्छति यजमानो यद्युक्ते जुहुयाद्यथा प्रयाते वास्ता वाहुतिं जुहोति तादृगेव तद्यदयुक्ते जुहुयाद्यथा क्षेमं आहुतिं जुहोति तादृगेव तद्‌हुतस्य वास्तोष्पतीय ँ् स्याद्' (तैत्तरीय ब्राह्मण भाग)।

काठकसंहिता में 'शं' का प्रयोग देखिये—

शं न आपो धन्वन्याश्शं न स्सन्त्वनूप्याः। शं नस्समुद्रिया आपश्शमु नस्सन्तु कूप्याः॥

(स्थानक २।२)

शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवस्वर्काः।
जम्भयन्तोऽहिं वृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः॥

(काठक सं० १३।५१)

संहिताओं के पश्चात् ब्राह्मणग्रन्थों में शान्ति अनुष्ठान के अनेक साधनों का वर्णन है; किन्तु वे साधन अत्यन्त सरल हैं, तांत्रिक विधान की भाँति जटिल नहीं हैं। इन ग्रन्थों में जल को भी शान्ति के साधनों में घोषित किया गया है; संप्रति भी अभिमंत्रित जल तथा शान्त्युदक का प्रयोग शान्तिकर्म में प्रचलित है। वैदिक साहित्य में शान्ति का प्रयोग मुख्यतः तीन अर्थों में हुआ है—(१) बुरे प्रभावों से दूर होने की स्थिति, (२) जलमन्त्रादि से बुरे प्रभावों को दूर करना तथा (३) शान्तिकर्म। वेदों में दुःस्वप्न-दर्शन होने पर भी शान्ति के उपायों का वर्णन मिलता है। बुरे शकुनों के प्रभाव की शान्ति-हेतु भी वैदिक साहित्य में उपाय सुझाये गये हैं। वैदिक साहित्य में सभी प्रकार के शकुनों तथा उत्पातों एवं उनकी शान्तियों के विषय में विशद् विवेचन उपलब्ध होता है।

पुराणसाहित्य में अनुष्ठान एवं शान्तिकर्मों का विवरण—पुराणों एवं उपपुराणों में शान्तिकर्म तथा विविध प्रकार के अनुष्ठानों की विधियाँ भरी पड़ी हैं। मत्स्यपुराण में वर्णित १९ शान्तियाँ संक्षेप में निम्नानुसार हैं—

(१) **अभया शान्ति**—भीतरी एवं बाहरी शस्त्रभय उपस्थित होने पर राज्य में अभया शान्ति करनी चाहिये। (२) **सौम्या शान्ति**—राजयक्ष्मा रोग की शान्ति के लिये की जाती है। (३) **वैष्णवी शान्ति**—भूकम्प, दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि एवं अनावृष्टि की शान्ति की लिये की जाती है। (४) **रौद्री शान्ति**—पशुओं एवं मानवों की महामारी की शान्ति-हेतु, भूत-प्रेतादि के उपद्रवादि में करते हैं। (५) **ब्राह्मी शान्ति**—इसकी व्यवस्था वेदाध्ययन के नष्ट होने पर, नास्तिकता का प्रसार होने पर, धार्मिक एवं सांस्कृतिक आक्रमण होने पर अर्थात् स्वदेशी संस्कृति के स्थान पर विदेशी कुसंस्कृति का प्रचार-प्रसार होने पर तथा बुरे विचारों एवं आचारों वाले लोगों का सम्मान होने पर करने का विधान है। (६) **वायवी शान्ति**—वातरोगों के फैलने पर करनी चाहिये। (७) **वारुणी शान्ति**—अनावृष्टि तथा असामान्य वृष्टि में करते हैं। (८) **प्राजापत्य शान्ति**—असामान्य प्रजनन, प्रसव आदि में करते हैं। (९) **त्वाष्ट्री शान्ति**—उपकरणों तथा अस्त्र-शस्त्रों की असामान्यता में होती है। (१०) **कौमारी शान्ति**—बालकों के उपद्रवों को दूर करने के लिये होती है। (११) **आग्नेयी शान्ति**—बार-बार होने वाले अग्निकाण्डों की शान्ति के लिये की जाती है। (१२) **गान्धर्वी शान्ति**—कर्मचारियों द्वारा बिना उचित कारण के आज्ञोल्लंघन (हड़ताल) करने पर, नागरिकों में विद्रोह या आन्दोलन अकारण होने पर की जाती है। (१३) **आङ्गिरसी शान्ति**—हाथियों के विकृत होने पर (बड़े वाहनों की अकारण दुर्घटनाएँ होने पर) की जाती है। (१४) **नैर्ऋती शान्ति**—पिशाचों के भय में (मानव अंगों एवं पशु आदि की तस्करी की अधिकता होने पर) की जानी चाहिये। (१५) **याम्या शान्ति**—इसकी व्यवस्था मृत्यु या दुःस्वप्न की घटनाओं में होती है। (१६) **कौबेरी शान्ति**—जब धन की हानि हो तथा वित्तव्यवस्था गड़बड़ हो तब करनी चाहिये। (१७) **पार्थिवी शान्ति**—वृक्षों की असामान्य दशाओं में पार्थिवी

शान्ति करनी चाहिये। (१८) **ऐन्द्री शान्ति**—ज्येष्ठा एवं अनुराधा नक्षत्र में उत्पात होने पर तथा ग्रहयुद्धादि की शान्ति के लिये करनी चाहिये। (१९) **भार्गवी शान्ति**—अभिशाप के भय में भार्गवी शान्ति का विधान है। यथा—

भये महति सम्प्राप्ते अभया शान्तिरिष्यते। राजयक्ष्माभिभूतस्य क्षतक्षीणस्य चाप्यथ॥ १॥
सौम्या प्रशस्यते शान्तिर्यज्ञकामस्य चाप्यथ। भूकम्पे च समुत्पन्ने प्राप्ते चान्नक्षये तथा॥ २॥
अतिवृष्ट्यामनावृष्ट्यां शलभानां भयेषु च। प्रमत्तेषु च चौरेषु वैष्णवी शान्तिरिष्यते॥ ३॥
पशूनां मारणे प्राप्ते नराणामपि दारुणे। भूतेषु दृश्यमानेषु रौद्री शान्तिस्तथेष्यते॥ ४॥
भविष्यत्यभिषेके च परचक्रभयेऽपि च। स्वराष्ट्रभेदेऽरिवधे रौद्री शान्तिः प्रशस्यते॥ ५॥
त्र्यहातिरिक्ते पवने भक्ष्ये सर्वविगर्हिते। वैकृते वातजे व्याधौ वायवी शान्तिरिष्यते॥ ६॥
अनावृष्टिभये जाते प्राप्ते विकृतिवर्षणे। जलाशयविकारेषु वारुणी शान्तिरिष्यते॥ ७॥
अभिशापभये प्राप्ते भार्गवी च तथैव च। जाते प्रसववैकृत्ये प्राजापत्या महाभुज॥ ८॥
उपस्कराणां वैकृत्ये त्वाष्ट्री पार्थिवनन्दन। बालानां शान्तिकाम्यस्य कौमारी च तथा नृप॥ ९॥
कुर्याच्छान्तिमथाऽऽग्नेयीं सम्प्राप्ते वह्निवैकृते। आज्ञाभङ्गे तु संजाते तथा भृत्यादिसंक्षये॥ १०॥
अश्वानां शान्तिकामस्य तद्विकारे समुत्थिते। अश्वानां कामयानस्य गान्धर्वी शान्तिरिष्यते॥ ११॥
गजानां शान्तिकामस्य तद्विकारे समुत्थिते। गजानां कामयानस्य शान्तिराङ्गिरसी भवेत्॥ १२॥
पिशाचादिभयैर्जाते शान्तिर्वै नैर्ऋती स्मृताः। अपमृत्युभये जाते दुःस्वप्ने च तथा स्थिते॥ १३॥
याम्यां तु कारयेच्छान्तिं प्राप्ते तु मारके तथा। धननाशे समुत्पन्ने कौबेरी शान्तिरिष्यते॥ १४॥
वृक्षाणां तथार्थानां वैकृते समुपस्थिते। भूतिकामस्तथा शान्तिं पार्थिवीं प्रतियोजयेत्॥ १५॥
प्रथमे दिनयामे च रात्रौ वा मनुजोत्तम। हस्ते स्वातौ च चित्रायामादित्ये चाश्विने तथा॥ १६॥
अर्यम्णि सौम्यजातेषु वायव्यां त्वद्भुतेषु च। द्वितीये दिनयामे च रात्रौ च रविनन्दन॥ १७॥
पुष्याग्नेयविशाखासु पित्र्यासु भरणीषु च। उत्पातेषु तथा भाग आग्नेयीं तेषु कारयेत्॥ १८॥
तृतीये दिनयामे च रात्रौ च रविनन्दन। रोहिण्यां वैष्णवे ब्राह्मे वासवैर्वैश्वदेवते॥ १९॥
ज्येष्ठायाञ्च तथा मैत्रे ये भवन्त्यद्भुताः क्वचित्। ऐन्द्री तेषु प्रयोक्तव्या शान्ती रविकुलोद्वह॥ २०॥
चतुर्थे दिनयामे च रात्रौ वा रविनन्दन। सार्प्ये पौष्णे तथाऽऽर्द्रायामहिर्बुध्न्ये च दारुणे॥ २१॥
मूले वरुणदैवत्ये ये भवन्त्यद्भुतास्तथा। वारुणी तेषु कर्तव्या महाशान्तिः महीक्षिताः॥ २२॥

—मत्स्यपुराण, अध्याय २२८

अध्याय २२९वें में अद्भुत उत्पातों के फल तथा २३० में कुछ विशिष्ट उत्पातों के फल दिये गये हैं। २३१वें अध्याय में मूर्ति के उपद्रवों, २३२ में वृक्षों के विविध उपद्रवों, २३३ में अतिवृष्टि एवं अनावृष्टि के फल एवं २३४ में नदियों में होने वाले उपद्रवों का वर्णन मत्स्यपुराण में किया गया है। अ० २३५ में स्त्रियों की विकाल में सन्तानोत्पत्ति, २३६ में रथ आदि में उपद्रव, अ० २३७ में पशुओं में उपद्रव तथा अ० २३८ में राजभवनों में होने वाले उपद्रवों का वर्णन है। अग्निपुराण के २६३वें अध्याय में भी इन शान्तियों का उल्लेख है। धर्मसिन्धु, भविष्यपुराण, वैखानस स्मार्त्तसूत्र, ब्रह्माण्डपुराण, मानवगृह्यसूत्र, विष्णुधर्मोत्तर, वैजवाप गृह्यसूत्र तथा याज्ञवल्क्यादि में जातकर्मादि संस्कारों, यात्रा, युद्धकाल, संकट, देवपूजा, ग्रहपूजा आदि में गजानन की पूजा अथवा गणपति शान्ति आवश्यक रूप से करने का निर्देश है तथा ग्रहशान्ति का भी उल्लेख है।

अद्भुतों एवं उत्पातादि के होने पर महाशान्ति का निर्देश है। अद्भुतसागर, शान्तिमयूख, कमलाकर भट्ट-कृत शान्तिरत्न में इसका सम्पादन रजस्वला होने पर, राज्याभिषेक, युद्धयात्रा, दुःस्वप्नों, अशुभ निमित्तों आदि में किया जाता था। नवग्रह अशुभ हो, उल्कापात हो, केतुदर्शन हो, अन्धड़-भूकम्प हो, मूल या गण्डान्त में प्रसूति हो, यमल जन्म हो, जब दण्ड या छत्र पृथ्वी पर गिर जायँ, जब काक या कबूतरों का घर में प्रवेश हो, जब पापग्रह वक्र हो या जन्मराशि या नक्षत्र में पापग्रहों का गोचर भ्रमण हो, किसी की जन्मराशि से गुरु प्रथम स्थान पर, शनि चतुर्थ में, मंगल अष्टम में तथा सूर्य द्वादश में हो, ग्रहयुद्ध हो, रात्रि में इन्द्रधनुष दिखे तब ग्रहशान्ति का निर्देश है।

प्राय: यह देखने में आता है कि कभी-कभी कोई व्यक्ति मृत समझ लिया जाता है और जब उसके परिजन उसे मरा हुआ जानकर श्मशान में ले जाते हैं तब वह जीवित हो जाता है, तब धर्मसिन्धु के अनुसार एक प्रकार की शान्ति का विधान है। धर्मशास्त्रीय संस्कृत ग्रन्थों में भी अनुष्ठानों (शान्तियों) का वर्णन प्रचुरता से किया गया है।

बौद्ध एवं जैन साहित्य में कर्मविपाक तथा अनुष्ठानादि का उल्लेख—विविध शुभाशुभ कर्मों का शुभाशुभ फल भी जीवों को जन्म-जन्मान्तर में भोगना पड़ता है; अत: बौद्ध एवं जैन साहित्य में भी दानादि शुभ कृत्य के द्वारा शुभ-प्राप्ति तथा प्रार्थना एवं मन्त्रजपादि से अरिष्ट फलनाश की घटनाओं का विवरण मिलता है। भारत के पड़ोसी बौद्ध देशों में यह प्रक्रियाएँ आज भी बौद्ध जनता में प्रचलित हैं। भिक्षुओं एवं भिक्षुसंघ को दान देने की महिमा का पालि त्रिपिटक में अनेकों स्थलों पर वर्णन हुआ है। एक बार महाप्रजापति गौतमी ने अपने हाथ से काता गया एवं बुना गया रेशमी दुशाला भेंट किया तो भगवान् ने कहा—'गौतमी! इसे संघ को दे दो। संघ को देने से मैं भी पूजित हो जाऊँगा और संघ भी।' इसी प्रकार सत्पुरुष के लक्षण बताते हुए कहा था कि 'सत्पुरुष वही प्रशंसनीय है, जो जीवन-पर्यन्त उदारतापूर्वक खुले हाथों से दान देने वाला होकर गृहस्थ धर्म का पालन करता है तथा मिल-बाँट कर खाता है।' भगवान् ने रोगियों एवं पीड़ितों की सेवा को बड़ा पुण्यकारक कहा है। संयुत्त निकाय के विवरण के अनुसार एक बार भगवान् श्रावस्ती के जेतवन विहार में ठहरे थे, उसी समय एक देवता ने उनसे प्रश्न पूछा 'भगवन्! रात-दिन किन पुरुषों के पुण्य बढ़ते रहते हैं तथा कौन स्वर्ग को जाते हैं?' भगवान् ने इसके उत्तर में कहा—'जो लोग बाग तथा उपवन लगाते हैं; जो लोग पुल बनवाते हैं; जो प्याऊ लगाते हैं, पेयजल की व्यवस्था कर यात्रियों को सुखी करते हैं, उन लोगों के पुण्य दिन-रात बढ़ते हैं तथा धर्म पर दृढ़ रहने वाले शील-सम्पन्न व्यक्ति स्वर्ग को जाते हैं'।

बर्मा (म्यामार) देश का प्राचीन नाम मरम्म रट्ठ भी है। यहाँ सन् १८६१ ई० में पञ्ञा सामी (प्रज्ञास्वामी) नामक बौद्धभिक्षु ने पालिभाषा में 'सासनवंसो' (शासनवंश:) नामक इतिहासग्रन्थ लिखा था, जिसे भारत में पहिली बार 'नव नालन्दा महाविहार नालन्दा' द्वारा सन् १९६१ ई० में प्रकाशित किया है। भिक्षु पञ्ञासामी तत्कालीन म्यामार (बर्मा) के राजा 'मेङ्-दुन्-मेङ्' के राजगुरु थे तथा स्वयं माण्डले के संघराज के शिष्य थे। इन्हें 'सिरि कविद्धज महाधम्मराजगुरु' (श्री कविध्वज महाधर्मराजगुरु) की उपाधि प्राप्त थी। अनुष्ठान के प्रयोग के सम्बन्ध में उस पालि भाषा में निबद्ध बौद्ध इतिहास ग्रन्थ में छठे परिच्छेद में एक मनोरंजक तथा विस्मयकारी घटना का उल्लेख किया गया है—अनिरुद्ध नामक राजा के शासनकाल में अरहन्तथेर ने राजा से कहा कि 'महाराज! आप अपरन्त राष्ट्र के राजा मनोहारि के यहाँ से पालि त्रिपिटक के प्रतियों की प्रतिलिपि करवा कर अपने राज्य में मँगवा लें तथा भगवान् बुद्ध की शरीरधातु भी मँगवा लें। तब राजा ने अपने दूत को इस प्रस्ताव के साथ अपरन्त राष्ट्र की राजधानी सुधम्मपुर में भेजा; किन्तु सुधम्मपुर के राजा मनोहारी ने पालित्रिपिटक की प्रतिलिपियाँ देने से मना कर दिया, तब राजा अनुरुद्ध ने क्रोधित होकर अपनी सेना के साथ सुधम्मपुर के बाहर डेरा डाल दिया; किन्तु बहुत प्रयत्न करने पर भी राजा अपनी सेना-सहित राजधानी सुधम्मपुर में प्रवेश न पा सका। तब आश्चर्यचकित होकर

राजा ने एक वैदिक विद्वान् ब्राह्मण से इस सम्बन्ध में परामर्श लिया तो वेदज्ञ ब्राह्मण ने राजा को बताया कि महाराज! अथर्ववेदीय प्रयोग के कारण' आप नगर में प्रवेश नहीं कर पा रहे हैं। उस वेदज्ञ के परामर्शानुसार राजा अनिरुद्ध ने पृथ्वी में गड़े हुए मृत शरीर को उखाड़कर महासमुद्र में फेंक दिया तथा एक मनुष्य को एक कीड़ा मिलाकर मारकर उसके अंग-प्रत्यंगों को काटकर नगर के चारो ओर फेंकवा दिया तो राजा की (तान्त्रिक) बाधा दूर हो गई और उसने नगर में प्रविष्ट होकर वहाँ के राजा मनोहारि को गिरफ्तार कर सोने के सन्दूक में पालित्रिपिटक तथा बुद्ध की शरीरधातु रखकर अपनी राजधानी में ले गया और वहाँ उनकी प्रतिष्ठा कराई। यह प्रतिष्ठा पुण्णगाम (पुण्यग्राम) में हुई, जिसे आजकल पूगं (पूगन् या पुगान्) कहा जाता है। यथा—

दूता पच्चागन्त्वा मनोहारि राजा त अत्थं आरोचेसुं।
तं सुत्वा अनुरुद्ध राजा कुज्झि, तत्तक कपाले पक्खिततिलं वियतटतटायि॥

अथ राजा नदी मग्गेन नावानं असीति सत सहस्सेहि नाविकानं, योधानं, अट्ठकोटीहि सेनं व्यूहित्वा, थलमग्गेन सद्धिं चतूहि महायोधनायकेहि, हत्थीनं असीति सहस्सेहि अस्सानं नवुति सत सहस्सेहि, योधानं असीति कोटिया सेनं व्यूहित्वा सद्यं एव युज्झितुं सुधम्मपुरं गच्छि।

तं सुत्वा मनोहारि राजा भीतितसितो हुत्वा अत्तनोबहुयोधे संविदहित्वा सुधम्मपुरेयेव पटिसेनं कत्वा निसीदि। अथ अथब्बनवेदे आगत पयोगवसेन पुनप्पुनं वायमन्तापि नगर मूलं उपसङ्कमितुं न सक्का। तदा राजा वेदञ्ञुवो पुच्छि—'कस्मा पनेत्थ नगरमूलं उपसङ्गमितुं न सक्कोमा।' ति?

वेदञ्ञुनो आहंसु—अथब्बन वेदविधानं महाराज अत्थि मञ्ञे'ति।

अथ राजा पठवियं निदहित्वा मतकलेवरं उद्धरित्वा महासमुद्दे खिपेसि। एकं किर मनुस्सं हिन्दुकुलं जोग्यी नामकं कीटं खादापेत्वा तं मारेत्वा हत्थपादादीनि अङ्गपच्चङ्गानि गहेत्वा छिन्नभिन्नानि कत्वा नगरस्स सामन्ता पठवियं निदहित्वा ठपेसि (तदा पन नगरं उपसङ्कमितुं सक्का। नगरञ्च पविसित्वा मनोहरि राजानं जीवग्गाहं गण्हि। सुधम्म-पुरे पोराणिकानं राजूनं पवेणि आगतवसेन रतनमयमञ्जूसायं ठपेत्वा सिरि सयनगब्भे रतनमञ्चे सीसपदेसस्स समीपे ठपेसि। पिटकत्तयं पि रतनमये पासादे ठपेत्वा भिक्खुसङ्घस्स उग्गहधारनादि अत्थाय निय्यादेसि।

ततो किर आनीतं पिटकत्तयं उग्गण्हन्तानं अरियानं सहस्समत्तं अहोसीति। सुधम्मनगरं विजहित्वा, पिटकेन सद्धिं भिक्खुसङ्घं आनेत्वा सासनस्स पतिट्ठापनं जिनचक्के एकाधिके छ सते वस्स सहस्से कलियुगे च सोळसाधिके चतुस्सते सम्पत्ते ति सिलालेखनेसु वत्तं। अनुरुद्ध रञ्ञो काले पुञ्ञानुभावेन तिण्णं रतनानं परिपुण्णता 'पुण्णगामोत्ति समञ्ञा अहोसि। चिरकालं अतिक्कन्ते ण्णकारानं लोपवसेन मकाररसं च निग्गहीतवसेन 'पूगं' इति मरम्पभासाय वोहारीयतो ति अनागतवंस राजवंसेसु वुत्तं।'

—सासनवंसो पालि ६।४ (पृ० ६०-६१)

विविध विधाओं से युक्त प्राचीन प्राकृत जैन साहित्य के अनुसार उस काल में (जब प्राकृत साहित्य रचा गया था) कन्याओं को भी ज्योतिष, मन्त्र-तन्त्र, चिकित्सा के साथ महाभारत-जैसा इतिहास भी पढ़ाया-सिखाया जाता था, जिसकी बानगी इस मूलपाठ में द्रष्टव्य है—

सोहग्गसुन्दरी नन्दणाइ सुरसुन्दरित्ति वरनामं। वीयाइ मयण सुन्दरि नामं च ठवेई नरनाहो॥ १॥
समये समप्पियाओ तओ सिवधम्म जिणमय विऊणं। अज्झावयाण रन्ना सिवभूति सुबुद्धि नामाणं॥ २॥
सुर सुन्दरी असिक्खइ, लिहियं गणियं च लक्खणं छन्दं। कव्वमलङ्कार जुयं, तक्कं च पुराणसमियो॥ ३॥
सिक्खेई भरहसत्थं, गीयं, नट्ठं च जोइस तिगिच्छं। विज्जं मन्तं तन्तं हरमेहल चित्त कम्माइं॥ ४॥

अन्नाइं पि कुण्डल हाराइं करलाघवाइ कम्माइं। सत्थाइं सिक्खियाइं, तीह चमुक्कार जणयाइं॥५॥
सा काविकला तं किंपि कोसलं तं न नत्थिविन्नाणं। जं सिक्खियं न ती ए पन्ना अभिओगजोगेणं॥६॥

(सिरि-सिरिबालवाला)

यहाँ पयपाल नामक राजा की सुरसुन्दरी नामक कन्या के जोइस (ज्योतिष) तिगिच्छ (चिकित्साशास्त्र), मन्तं (मन्त्र), तन्तं (तन्त्र) आदि विद्याओं के सीखने का उल्लेख है। इसी प्रकार जैनमुनि कनकामर द्वारा रचित अपभ्रंश भाषा के 'करकंडचरिउ' नामक काव्य के अनुसार रतिवेगा नामक स्त्री के द्वारा देवी का अनुष्ठान किये जाने पर उसे देवी के दर्शन की प्राप्ति तथा मनोरथ सिद्ध होने की बात कही गई है। देवी की कृपा से रतिवेगा का पति करकण्ड कनकदीप में मिल गया। यथा—

आवासिय सेण्णा तित्थु जाव। रइवेय एं उज्जव कियउ ताव॥
पुणु तुरिउ विलक्खी हुइयाइँ। अणुसरिय देवि कोमल गिराइँ॥
उद्धरियउ मण्डलु ताएँ रम्मु। ण धम्मु जिणेन्देँ हरिय छम्मु॥
तहो मज्झि णिवे सिय दिव्व देवि। पोमावइ णामे थिर करेवि॥
पुव्वाहिँमि दिसिहिं मि जउ थियाउ। आहूयउ देविउ आइयाउ॥
रत्तन्दण कट्ठें जा घडीय। ससिचन्दण कुंकुम सम लहीय॥
फल फुल्लु णिवेज्जहिँ पुज्जकीय। उववासइँ पढमउँ अणुसरीय॥
उवएसइँ लद्धउ बीय वन्तु। णव कुंकुम कुसुमहिँ जविउ मन्तु॥
घत्ता— आरत्तहिँ दब्बहिँ अलिहि वि आरत्थहिँ वत्थहिँ परिहणिय।
आरत्त झाणु झाएवि पुणु णिज्झाइय देवअ थिरमणिय॥१२॥
समच्चिवि पूजिवि झायइ जाव। समागय देवय पोमिणि ताव॥
समन्थर लील सकोमल अंगि। कुणन्तिय कावि अउव्विय भंगि॥
विणिम्मिय रूवसमिद्धि खणेण। सरीरइँ रत्तिय सुद्ध मणेण॥
करेहिँ चऊहिँ करन्ति गुणाल। सपोत्थयभिंग समुद्द मुणाल॥
सकुडल कण्ण फुरन्त कवोल। सणेउर किंकिंणि मेहलरोल॥
फणी फण पंच सिरेण धरन्ति। पसण्णिय णिम्मल कावि करंति॥
महीयलि पायस रोय धवन्ति। सुहाविएँ वाणिएँ किंपि चवन्ति॥
दिसहँ मुहम्मि पसारिय धामु। उरम्मि णिवेसिय मोत्तिय दामु॥
घत्ता— वरु देमि भणंती देवि खणे रइवेय अग्गइँ गुण भरिय।
तुहुँ मग्गि किसोयटि जं हियइँ तउ कारणँ धरणिहे अवयरिय॥१३॥
जा देविहे दिट्ठउ मुह कमलु। रइवेयहे जायउ अंसु जलु॥
महो देवि भडारिए दुरिय मलु। तउ दंसणे णट्ठउतं सयलु॥
पइँ देवि सहावें जो थुणइ। सो दुःख परम्पर णउ मुणइ॥
जो अणु दिणु झायइ तुज्झ मुहुँ। तसु होहि तरण्डउ देवि तुहुँ॥
महो दीणहे तुहुँ कारुण्णु करि। दुहसायरे मइँ निवडन्ति धरि॥

हउँ किं पिण मग्गम्मि देवि पइँ। अब्भत्थिय तुहुँ तरु एक्कु मइँ॥
जइ सच्चइ देहि वरु। महो वयणु एक्कु तहुँ देवि करु॥
रयणायरे महो सामिउ गयउ। किं जीवइ अह किं स मुयउ॥
घत्ता— ता कहइ सुरेसरि तुहुरमणु जो जाणहो होंतउ परिपडिउ।
कणयप्पह विज्जारसु अहे सो हिय वइँ तक्खणे संचडिउ॥ १४॥

—करकण्डचरिऊ ७। १२-१४ (अपभ्रंश ग्रन्थ)

जैनसमाज में सम्प्रति भी पद्मावती देवी की पूजा कामनाओं की सिद्धि के लिये प्रचलित है। प्राकृत भाषा में निबद्ध सूरि-विरचित 'तच्चवियारो' (तत्त्वविचारः) नामक ग्रन्थ में पूजा तथा दान का अपरिमित फल बताया है। तीनों लोकों में जितने भी सुख हैं, वे सभी पूजा करने से असन्दिग्ध रूप से प्राप्त होते हैं। पूजा के फल का वर्णन तो एकादश इन्द्रियों वाले सहस्रों जीव तथा इन्द्र भी नहीं कर सकते हैं—अति बाल, वृद्ध, रोगी आदि की शारीरिक सेवा तथा उन्हें औषध, आहारादि देना महान् पुण्य का कार्य कहा गया है। परन्तु दान उसके योग्य पात्र को ही देना चाहिये; अपात्र को नहीं। यथा—

किंपि जंपिएण बहुणा तीसु वि लोएसु किंपि जं सुक्खं। पुज्जा फलेण सव्वं पाविज्जइ णत्थि सन्देहो॥
एयारसंगधारी जीह सहस्सेण सुरवरिन्दोपि। पुज्जाफलं ण सक्कइ णिस्सेसं वण्णिउ जन्हा॥

—तच्चवियारो ५। १११-११२

अयि बाल बुड्ढ रोगाभिभूयतणु किलेस सत्ताणं। चाउवण्णे संघे जह जोग्गं तह मणुण्णाणं॥
करचरण पिट्ठि सिरसामणद्दण अब्भंग सेव किरियाहिँ। उव्वत्तण परियत्तण पसारणा कुंचणाइहिँ॥

(त०वि० १२९-१३०)

ओसह दाणेण णरो अतुलित बल परक्कमो महासत्तो। वाहि विमुक्क सरीरो चिराउखो होइ तेयट्ठो॥
देहं पाणा रुअं विज्जा विज्जा धम्मं तवो सुअं मोक्खं। सत्वं दिण्णं णियमा हवेइ आहार दाणेण॥
आहारमओ देहो आहारविणा पडइ णियमेण। तम्हा जेणाहारो दिण्णो देहो हवई तेण॥
भुक्खसमा णहुवाही अण्णसमा ण च ओसहं अत्थि। तम्हा तं दाणेण य आरोयत्तं हवे दिण्ण॥

—तच्चवियारो (२३८-२४४) प्राकृत

कुत्सित पात्र को दान देने पर उसका कोई सुफल प्राप्त नहीं होता है। कुत्सित पात्र या अपात्र कौन है? उसका उत्तर वसुनन्दि ने देते हुए कहा है कि जो रत्नत्रय (दर्शन-ज्ञान-चरित्र) से रहित धर्म का उपदेश करता है, वह कुपात्र होता है। जिसमें न तप है, न आचरण है, न कोई श्रेष्ठ गुण है; उसे अपात्र जानना चाहिये। ऐसे को दिया दान निष्फल होता है। जिस प्रकार से ऊसर खेत में बोया गया बीज निष्फल जाता है, जिस प्रकार सूखे वृक्ष को सींचना निष्फल होता है, उसी प्रकार अपात्र को दिया दान भी निरर्थक होता है। यथा—

जं रयणत्तय रहियं मिच्छामइ कहिय धम्म अणुलग्गं। जइ विहु तवइ सुघोरं तहावि तं कुच्छियं पत्तं॥
जस्सण तवो ण चरणं ण चापि जस्सत्थि वरगुणा कोई। तं जाणेह अपत्तं अफलं दाणं कथं तस्स॥
ऊसर खेत्ते वीयं सुक्खे रुक्खेय णीर अहि सेओ। जह तह दाणमपत्ते दिण्णं खुणिरत्थयं होइ॥

—तच्च वियारो प्राकृत २५१-२५३

इसी प्रकार का कथन पुष्पदन्त ने भी किया है—

दुवई— कुसुइ कुसील कुतवसिहिँ रत्तउत्तं जाणसु कुवत्तयं।
होइ अवत्तयं पि सम्मतप्प वित्त वएहिँ चत्तयं॥
वज्जइ कुदिट्ठि गुणं कित्तणाइँ। लोइय वेइय मूढत्तणाइँ॥
णउ संख कंख विदिगिंछ करइ। सम्माइदिट्ठि समत्तु धरइ॥
मुक्कउ दुविहिण वि संजमेण। तं अहमुपत्तु जाणहि कमेण॥
मज्झिम सावय चारित्तएण। उत्तम सुद्धे रयणत्तयेण॥
दिण्णउ अवत्ते सुण्णउ जिजाइ। कुच्छिउ कुपत्तु फलु किंपि होई॥
तिविहेण पत्त दाणेण भोउ। तिविहु जि पावइ भुवणयलि होइ॥
दायारउ पुण णव गुण विसिट्ठ। पडि गाहि जइ रिसि घरे पइट्ठ॥
उच्चासणु दिज्जइ तहोणरेण। पुण पय पक्खालणु णिय करेण॥
पयजलु वन्दिज्जइ आयरेण। अंच्विज्जइ पणविज्जइ सिरेण॥
मुणवयणें काएं सुद्ध एण। आहारेण विणिल्लुद्धएण॥
जें दिण्ण दाणु तहो होइ पुण्णु। इयरहो पुण दिण्णेउ अडइरुण्णु॥
घत्ता— असणुल्लऊ णिवसणु देहविभूसणु गोमहिसि उलु भूमि भुवणु।
काणीणहँ दीणहिँ सिरि परिहीणहिँ दिज्जइ कारुण्णेण घणु॥

—णाय कुमार चरिउ अपभ्रंशग्रन्थे ४। ३

अपभ्रंश ग्रन्थ 'जम्बु स्वामि चरिउ' में स्तंभन विद्या का उल्लेख है, जिसमें एक विद्युच्चर नामक राजकुमार ने अपने पिता राजा विश्वन्धर के प्रहरी को स्तम्भित करके राजा के हाथ के स्वर्णनिर्मित कड़े, कटिसूत्र, कंठा आदि का हरण कर लिया (चोरी कर ली); यथा—

तहिँ परबल घन पलय महामरु। बसइ नराहिउ नाम विसन्धरु॥
पिय सिरिसेण तासु विक्खाइय। सुउ विज्जुच्चरु नाम वियाइय॥
परिवड्ढन्ते तेण कुमारें। पत्त सयल वरविज्जा पारें॥
इह विण्णाणु महीयले जंजं। परियणिउ नीसेसु वि तं तं॥
अणु दिणु विज्जउ परिसीलंतहो। चोरिय तहो परिहासिय चित्तहो॥
ओसहीए थंभेवि थाणं यरु। निसिहिं पइट्ठु निययतायहो घरु॥
जग्गन्तो वि राउ किउ सुत्तउ। हारेउ कडउकंठउ कठिसुत्तउ॥

(जम्बुलामि चरिउ अपभ्रंश)

भारत के पड़ोसी देशों में भूतविद्या का प्रचलन—अष्टाङ्ग आयुर्वेद का एक अंग भूतविद्या कहलाता है, जिसके अन्तर्गत पदार्थ विज्ञान, जीवाणु विज्ञान, भूतप्रेत विज्ञान (Demonology), मनोविज्ञान, मानसिक रोग विज्ञान तथा मनोदैहिक चिकित्साशास्त्र (Psycho-somatic medicine) आदि अनेक विषय आते हैं। जिस प्रकार भारतीय ज्ञान-विज्ञान एवं संस्कृत भाषा का प्रभाव विश्व में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है तथैव आयुर्वेद, ज्योतिष आदि

का प्रभाव भी भारत के पड़ोसी देशों में प्रचुरता से है। मन्त्र-तन्त्र आदि भी भूत-विद्या के अन्तर्गत समाविष्ट हैं। भारतीय पदार्थ विज्ञान के पंचमहाभूतवाद तथा आयुर्वेदीय द्रव्यगुण विज्ञान के तत्त्वों का प्रभाव भी यूनानी-अरबी-चीनी-सिंहली आदि प्राचीन परम्परागत पद्धतियों पर स्पष्टतः परिलक्षित है। अनुष्ठान या शान्तिकर्म, मन्त्रचिकित्सा आदि के लिये पाश्चात्य विद्वानों ने Folk medicine, Prophet medicine, Religious medicine, Magic medicine तथा Sorcery आदि नामों का उपयोग अपने अध्ययनों में किया है। इनका प्रयोग विश्व के अधिकांश देशों में न्यूनाधिक मात्रा में प्रचलित है। आगे की पंक्तियों में इस सम्बन्ध में संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत की जा रही है। आयुर्वेद में कर्मज व्याधियों की मान्यता है, वही अन्य राष्ट्रों की परम्परागत चिकित्सापद्धतियों में भी है। जिस रोग का कारण पूर्वजन्मकृत पापकर्म होता है, वह कर्मज व्याधि मानी जाती है। जब किसी रोग का निदान शास्त्रोक्त आधार पर करके उसकी चिकित्सा भी चिकित्सा शास्त्र के अनुसार की जाय; किन्तु इतना होने पर जो रोग शान्त न हो, वह कर्मज रोग कहलाता है। इसी प्रकार जिस रोग में दोषों की विकृति स्वल्प होने पर भी रोग बढ़कर कठिन रूप धारण कर ले, उसे कर्म-दोषज अर्थात् कर्म तथा दोष दोनों के कारण उत्पन्न जानना चाहिये। कर्मज व्याधियों में दैवी चिकित्सा (मन्त्र-तन्त्र अनुष्ठान) की आवश्यकता होती है तथा कर्मदोषज में दैवी उपचार के साथ भेषजोपचार की भी आवश्यकता होती है—

कर्मजा कथिता केचित् दोषजाः सन्ति चापरे। कर्मदोषोद्भवाश्चान्ये व्याधयस्त्रिविधाः स्मृताः॥
यथाशास्त्रं तु निर्णीतो यथाव्याधि चिकित्सतः। न शमं याति यो व्याधिः स ज्ञेयो कर्मजो बुधैः॥
स्वल्पदोषाः गरीयांस्ते ज्ञेयाः कर्मदोषजाः॥

—भावप्रकाश, पूर्वखण्ड, मिश्र प्रकरण

चीनी वैद्यक में दैवी चिकित्सा का प्रयोग—पाश्चात्य विद्वान् चार्ल्स लेस्ली ने एशियायी देशों में प्रचलित विभिन्न प्राचीन चिकित्सापद्धतियों के शोधकर्त्ता अध्ययनशील विद्वानों के शोधनिबन्धों का संग्रह तथा सम्पादन करके 'Asian Medical Systems' नाम से प्रकाशित कराया है। इस पुस्तक में बड़ी महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ दी गई हैं। उसके अनुसार (१) चीन के प्राचीन वैद्यक में पाँच प्रकार की प्रेतयोनियाँ मानी गई थीं। इनको चीनी भाषा (मंडारिन) में 'ङ्ग्-क्वाइ' कहा जाता है। वे व्याघ्र, गरुड़, वराह, सर्प आदि हैं। ये व्यक्ति के अन्तःकरण में प्रविष्ट होकर उसके व्यवहार को असामाजिक, असभ्य तथा उजड्ड बना देते हैं। इनकी शान्ति के लिये श्वेत बाघ, मुर्गा तथा कुत्ता का उपयोग करने की सलाह है। (२) बौद्ध सिद्धान्त के अनुसार कुछ बच्चे अपने पूर्वजन्मों में वर्तमान जन्म के माता-पिता के साथ विरोधी विचारों (शत्रुभावों) वाले होते हैं। इसका पता सन्तानों तथा उनके माता-पिता की जन्मपत्रियों के मेलापक से लग जाता है; उनमें शत्रुतापूर्ण मेलापक रहता है। इसी कारण माता-पिता ऐसे शिशुओं की पिटाई करते हैं। यथा—'The Buddhist theory of rebirth affects ideas about health and sickness in several ways. Some souls are antipathetic to their mothers and fathers because of some bad relationship in a former life........an antipathetic soul in a child, and an incompatible horoscope between mother and child, are directly correlated. A moral conception is added to the amoral one of cosmic clash by the notion that an infant with an antipathetic soul may urinate or have a bowel movement on leaving the womb 'to show contempt'. —Asian Medical systems Page 251-252

चीन में विवाह के पूर्व वर-वधू के मेलापक की प्रथा भारत की भाँति ही है—'Individuals with a particular combination of cosmically interacting elements should avoid unstable situations such as weddings and funerals, and the persons in these events who are undergoing transitions. One knows when to observe these avoidances by consulting the astrological tables in an almanac. Some people

have cosmic balances that clash with those of people with whom they have a continuous relationship. In marriage, traditionally this state of affairs was avoided by cmparing the horoscopes of the prospective bride and groom (Freedman 1967, 1970). —Asian Medical Systems Page 248

चीन में बड़ी-बूढ़ी महिलाएँ यह स्थितियाँ जानने के लिये अपने पास पंचांग रखती हैं। जब कोई व्यक्ति बीमार पड़ता है तो उसके कुछ परिजन किसी विशेषज्ञ (दैवज्ञ) अथवा ऐसी बूढ़ी महिला के पास बीमार की ग्रहदशा दिखाने के लिये जाते हैं और मार्गदर्शन लेते हैं। कभी-कभी रोग का कारण वास्तुदोष तो नहीं है? इस शंका के निवारणार्थ भी दैवज्ञों से परामर्श लिया जाता है—

'.......even for some people, a complementary—system. Its specialists are diviners who deal with the horoscope, priests who perform transitional and rebalancing rites, old women of the family and other women who are acquainted with the almanac and problems of working out the external causes of sickness. At one step removed is the geomancer who sees that people erect buildings in a way that will not disturb the balance of nature (Freedman 1968)'—Ibid page 248. इसी प्रकार चीन में रोगादिवक्ता निवारणार्थ दैवी चिकित्सा का आश्रय लिया जाता है, जिसमें मन्त्र-तन्त्र-पूजा आदि का उपयोग होता है। आवश्यक होने से यहाँ प्राचीन चीनी चिकित्सा पद्धति के मूल सिद्धान्तों का दिग्दर्शन आयुर्वेद के अतिसंक्षेप में किया जा रहा है।

ताओ तथा यिन्-याङ् का सिद्धान्त—चीनी दर्शन का मूल आधार 'ताओ' है। यह देववाणी संस्कृत के 'देव' शब्द का अपभ्रंशमात्र है। भारतीय दर्शन में यह ब्रह्म, देव, ईश्वर, मूलप्रकृति या पुरुष कहा गया है। यह 'शून्य' (शिवलिंग या शालिग्राम शिलातुल्य आकार वाला) है। लाओत्ज़े का कथन है कि ताओ एक है। वही 'दो' हो जाता है और दो से तीन तथा तीन से दश होता है। यह उपनिषदों का 'एकोऽहं बहुस्याम' है। यह एक से दो होना पुरुष तथा प्रकृति का पृथक् होना है। यह पुरुष 'यम' तथा प्रकृति 'यमी' है। संस्कृत के 'यम' शब्द का अपभ्रंश 'याङ्' तथा 'यमी' का चीनी अपभ्रंश 'यिन्' है। ताओ को चीनी भाषा में 'वु' भी कहते हैं, जो कि 'ॐ' का अपभ्रंश है। प्रश्नोपनिषद् में कहा है 'जब प्रजापति को सृष्टि रचने की इच्छा हुई तो उसने तप करके मिथुन (स्त्री-पुरुष) के जोड़े को उत्पन्न किया। रयि तथा प्राण—ये जोड़ा उत्पन्न हुआ। इनमें 'रयि' चन्द्रमा है तथा 'प्राण' सूर्य है।

प्रजापतिश्च प्रजाकामी। स तपस्तप्त्वा मिथुनमुत्पाद्यते। रयिश्च प्राणश्च इत्येतौ प्रजा: करिष्यन्ते। रयिरेव चन्द्रमा:। प्राण एव सूर्य: ॥—प्रश्नोपनिषद्।

उष्णशीतगुणोत्कर्षाद् बुधैर्वीर्यं द्विधा स्मृतम्। यत्सर्वमग्निषोमीयं दृश्यते भुवनत्रयम्॥
(भावप्रकाश पृ० सं० ६)

तच्च वीर्यं द्विविधं उष्णञ्च शीतं च, अग्निषोमीयत्वाद् जगत:। (सुश्रुत सूत्र ४०।५)

शीतोष्णमिति वीर्यन्तु क्रियते येन या क्रिया। नावीर्यं कुरुते किंचित् सर्वा वीर्यकृता क्रिया:॥
(च० सू० २६।९०)

नानात्मकमपि द्रव्यं अग्निषोमौ महाबलौ। व्यक्ताव्यक्तं जगदिव नातिक्रमति जातुचित्॥
(अ० सं० सू० १७।१५)

यमी (यिन्) तथा यम् (यांग) के दस परस्पर विरोधी गुण—(१) यमी (यिन्) जल (सोम) है; किन्तु यम (यांग) अग्नि है। (२) यिन् शीत है; किन्तु याङ् उष्ण है। (३) यिन् में आर्द्रता है, किन्तु याङ् में शुष्कता है। (४) यिन् में तमिस्रा (अंधकार) तथा याङ् में प्रकाश होता है। (५) यिन् में अधोगति तथा याङ् में ऊर्ध्वगति रहती

है। (६) यिन् में स्थिरता परन्तु याङ् में क्रियाशीलता रहती है। (७) यिन् में कोमलता, किन्तु याङ् में कठोरता का गुण होता है अर्थात् क्रमशः आदान तथा प्रदान का गुण होता है। (८) यिन् में संकोच (लज्जा) तथा याङ् में उन्मुक्तता या उत्तेजनशीलता होती है। (९) यिन् में मन्दता तथा याङ् में शीघ्रता है। (१०) यिन् में गुरुता; किन्तु याङ् में लघुता होती है। इस प्रकार सृष्टि में यिन् में स्त्रियों के तथा याङ् में पुरुषों के गुण होते हैं। ये दस जोड़ी गुण आयर्वेदीय द्रव्यगुण विज्ञान के गुर्वादि बीस गुणों की भाँति ही हैं।

आयुर्वेदीय पंचमहाभूतों की भाँति चीनी वैद्यक में 'वुजिंग' (शून्यपंचक) होते हैं; ये क्रमशः (१) उद्भिज, (२) अनल, (३) पृथ्वी, (४) अयस्क (धातु) तथा (५) आप (जल) हैं। पतंजलि के अनुसार जीवन (१) शरीर, (२) सत्व (मन) तथा (३) आत्मा का समन्वय है तथा जो पिण्ड में है, वही ब्रह्माण्ड में है—

शरीरेन्द्रियसत्वात्मसंयोगो धारि जीवितम्। नित्यगश्चानुबन्धश्च पर्यायैरायुरुच्यते॥

(चरकसूत्र १।४०)

सत्त्वमात्मा शरीरञ्च त्रयमेतद् त्रिदण्डवत्। लोकस्तिष्ठति संयोगात् तत्र सर्वं प्रतिष्ठितम्॥

(च० सू० १।४४)

चरकसंहिता का यह विचार चीनी वैद्यक में भी यथावत् स्वीकृत है—

' A Fundamental tenet of the Chinese system of medicine is that the human-body, mind, spirit continuum is a instegral whale and that the individual is linked to a greater marocosmic, entirety through a progressive continuum from family, society, environment and ultimately, the universe. From this prospective the manifestation of disease is viewed as the outcome of an imbalance orignating within oneself or in one's relationship, to external reality. Conversely health is a state of both internal and external harmony. Chinese medicine has since antiquity provided a clear description of these ideas. Farmulated principles for understanding their relationships, and developed unique therapies to correct imbalance.' —Chinese Medicine and Ayurveda; Part one, page 30.

आयुर्वेद की भाँति मनोविकारों से शारीरिक रोगों की उत्पत्ति भी चीनी वैद्यक ने मान्य की है—

' In addition to the cause-and-effect relaionship between perverse a climatic conditions and disease, another important concept is Chinese medicine's belief that emotions (namely, anger, fear, grief, joy and anxiety) also influence one's health.'

—Chinese Herbal Medicine Made Esay by T. R. Joiner P. 11.

इसी प्रकार रोगों की चिकित्सा में 'प्राणायाम' का भी उपयोग चीनी वैद्य करते हैं। प्राणायाम को चीनी भाषा में 'ची कुङ्' कहा जाता है। अतिकामुकता को चीनियों में अपथ्यकर तथा रोगकारक समझा जाता है तथा संयम पर जोर दिया गया है। 'प्राणायाम' शरीर की रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है; इसका उपयोग श्वास रोग-बस्ति के रोग (मूलप्रणाली के रोग) तथा उच्च रक्तचाप में विशेष रूप से किया जाता है। उच्च रक्तचाप के लिये चीनी वैद्य अपने रोगी को 'चियाङ्ग-चुङ्ग-कुंग' तथा 'ची कुंग' दो प्रकार का प्राणायाम कराते हैं।

अरब देशों में दैवी चिकित्सा—प्राचीन काल से लेकर अब तक भी अरब देशों, पाकिस्तान तथा भारतीय मुस्लिमों में बड़ी संख्या में मन्त्र-तन्त्र की चिकित्सा का प्रचलन है। इस्लामिक यंत्रों-मन्त्रों का खूब प्रयोग होता है। पानी को अभिमंत्रित कर रोगियों को पिलाया जाता है। जिन्न तथा भूत-प्रेतों के लिये उपाय किये जाते हैं। यथा—

' Later with support from the orthodox and the authors of Perophetic medicine, magical healing developed into gross forms of religions sorcery. Amulets were worn not only against the evil eye but also against all kinds of evil spirits. They were used, for example, by pregnant women as a means of

guarding against the difficulties of child birth. An especially widespread practice was to write words of the Koran or the Prophet on a washable material, the script was rinsed out and the rinsings administered to the sick as medicine. This practice was approved by Ahmad-ibn Hanbal, the founder of the most rigid of the four schools of Islamic rites (Elgood 1962).

—Medieval Arabic Medicine by J. Chirstoph Burgnl in Asian Medical Systems, page 58.

तिब्बत में मन्त्र-तन्त्र-अनुष्ठान चिकित्सा का उपयोग—नरेश ञा-ठ्रि-चेन्-पोने, जो कि भारत के शतयुद्ध नामक राजा का पुत्र माना जाता है, उसने (ज्ञात इतिहास के अनुसार) ईसापूर्व दूसरी शताब्दी में तिब्बत में राज्य किया तथा तिब्बती राजवंश की नींव डाली। उनसे लेकर सातवीं शताब्दी ईस्वी तक इस वंश का राज्य तिब्बत पर बना रहा। फिर इसी वंश में से ३३वाँ शासक सम्राट् 'सोङ्-चेन्-गम्-पो' हुआ। उस समय तक न तो तिब्बती भाषा की कोई लिपि थी और न वहाँ बौद्ध धर्म का प्रवेश हुआ था। तब इस राजा ने अपने मन्त्री 'थोन्मि सम्भोट' को विद्याध्ययनार्थ भारतवर्ष में भेजा। मन्त्री थोन्मि संभोट ने एक विद्वान् ब्राह्मण लिपिकार से तत्कालीन भारत में प्रचलित अनेक लिपियाँ सीखीं; साथ ही संस्कृत भाषा के पाणिनीय व्याकरण, कलाप-व्याकरण, चान्द्र व्याकरण, चाणक्यादि के राजनीति ग्रन्थों तथा अवलोकितेश्वर के २१ सूत्रों के साथ तन्त्र आदि विद्याओं की सामान्य तथा विशेष शिक्षा प्राप्त की और तिब्बत में वापिस आए। वहाँ आकर उन्होंने तिब्बती भाषा की वर्णमाला बनाकर तिब्बती लिपि का निर्माण किया तथा तिब्बती भाषा के सर्वप्रथम व्याकरण का निर्माण किया।

नवीं शताब्दी ईस्वी के प्रारम्भ में तिब्बत के ३७वें धर्मराज ठ्रि-सोङ्-देन-चेन के शासनकाल में भारत से आचार्य पद्मसंभव तथा उपाध्याय शान्तिरक्षित आदि विद्वानों ने तिब्बत जाकर बौद्धज्ञान का प्रचार किया; किन्तु १०वीं शताब्दी में तिब्बत के ४१वें राजा ने अपने अधार्मिक मंत्रियों के कहने में आकर बौद्धधर्म का बहुत अहित किया; परन्तु उसके पश्चात् बौद्धभिक्षु भारत में विद्याध्ययन के लिये १३वीं शताब्दी तक आते रहे तथा चिकित्सा आदि अनेक विषयों के ग्रन्थ तिब्बती में अनूदित हुए। चिकित्सा के साथ ज्योतिष, तन्त्र-मन्त्र तथा धर्मदर्शन में उस काल में विशेष प्रगति हुई। आयुर्वेद के आठों अंगों तथा पतंजलि के अष्टाङ्ग योग के साथ संस्कृत व्याकरण का भी इस काल में तिब्बत में प्रचार-प्रसार बना रहा। ११वीं शताब्दी में अष्टाङ्गहृदय का अनुवाद भी तिब्बती भाषा में हुआ; किन्तु तेरहवीं शताब्दी से मुस्लिम आक्रमण के कारण भारत से बौद्ध धर्म पूर्णतः उन्मूलित हो गया। इसका कारण मुस्लिम आक्रमण था; जिसके कारण आयुर्वेद-ज्योतिष तथा तन्त्र-मन्त्र विद्या भी बहुत कुछ लुप्त हो गई; जैसाकि अमेरिकन विदुषी टेरी क्लीफर्ड ने लिखा है—

ई० १३वीं शताब्दी में मुस्लिम आक्रमण से भारत में बौद्धधर्म की समाप्ति—'Buddhism in India continued to contribute to the native medical science until the very end when, by the thirteenth century, Buddhism had completely disappeared from India, not only the living religion but also the shrines, temples and universities, the arts, science and culture that represented it. The invading Moslem's systematically destroyed every vestige of Buddhism which they could find, that is true. But Buddhism as a religion had already been on the decline in India for five hundred years after a thousand years of ascendancy. Much of the essence survived there, however, through its influence on Indian thought—Yoga and Vedanta, far example. As for Indian Ayurveda, it underwent a change and decline at the hands of the Moslems. Its tradition was interrupted and partly lost.'

—Tibetan Buddhist Medicine and Psychiatry, Part I, Page 45.

मुस्लिमों द्वारा बौद्ध भिक्षुओं का संहार तथा प्राचीन ग्रन्थों को नष्ट करना—ईसा की तेरहवीं शताब्दी में मुस्लिम आक्रान्ताओं ने बौद्धधर्म के सभी सम्प्रदायों के भिक्षुओं को तलवार से काट डाला तथा ग्रन्थों को हवा में

उड़ा दिया या आग में जला दिया या पानी में गला दिया—'By the 13th century the Moslems had swept over the Indian regions and utterly destroyed all traces of Buddhist religion, culture and learning, putting monks to the sword and throwing texts to the winds.'

—Tibetan Buddhist Medicine and Psychiatry by Terry Clifford, Part I, Page 58.

मुस्लिम शासकों तथा अंग्रेजों द्वारा अष्टाङ्ग आयुर्वेद की सर्जरी तथा रसायन शास्त्रादि की हानि— 'Ayurvedic tradition declined because of internal political and cultural conflicts in India and because the real meaning of siddha medicine (Ayurvedic alchemy or tantric essence healing) began to get lost. Also surgery, so famous as Indian Ayurveda's great contribution in the history of medicine, had completely declined, the Moslem invasion caused breaks in the tradition and loss of texts. It also brought its own medical system 'Yunani, and this mixed with the Indian one. Centuries later, the British empire in India had a similar effect, breaking tradition and introducing modern medicine, which mixed with the existing strains of Ayurveda and Yunani.'—Ibid Page 59.

श्रीलंका में शान्तिकर्म तथा अनुष्ठानों का प्रचलन—सामाजिक रूप से ग्रीष्म की शान्ति के लिये श्रीलंका में पित्तनी देवी की पूजा की जाती है। तमिल हिन्दू इसे कुलत्ती पर्व कहते हैं। यह मई महीने में होती है। इस पर्व की समाप्ति के वाद मदाई पर्व मनाया जाता है, जिसमें पित्तनी देवी के मन्दिर में बासी शीतल भोजन को अर्पित कर उसे सभी लोग खाते है (भारत में इसे बासौड़ा या शीतलाष्टमी कहते हैं)। बाढ़ रोकने के लिये 'दियकप्पिया' (द्रव कल्पना) तथा अग्निकाण्डों से बचने के लिये 'गिनीपगिमा' (अग्निपरिक्रमा) का महोत्सव सार्वजनिक रूप से मनाया जाता है। सिंहली जनता (१) प्रेतदोष, (२) यक्षदोष, (३) आसवह दोष (नजर लगना), (४) कटवह दोष (दुष्टमुख दोष), (५) देइयन्रे दोष (देवदोप), (६) हुनियन दोष (अभिचार दोष), (७) ग्रहदोष तथा (८) कर्मदोष के लिये अनुष्ठान कराती है।

निष्कर्ष—उपरिलिखित विवेचना से यह स्पष्ट है कि मन्त्र-तन्त्रादि तथा प्रार्थना द्वारा रोगों एवं कष्टों को दूर करने की पद्धति का प्रचार विश्व के सभी देशों में अद्यावधि प्रचलन में है। प्रार्थना द्वारा असाध्य रोग दूर होने की घटनाएँ भी 'कल्याण' जैसे मासिक पत्रों में तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। अमेरिका जैसे विकसित देशों में भी कुछ संस्थाएँ दूसरों के लिये प्रार्थना कर उनके रोगादि कष्टों को दूर करती हैं तथा उसके प्रतिफल में कुछ शुल्क भी लेती हैं। अत: प्रार्थना द्वारा कष्ट से मुक्ति मिलती है—यह बात प्रमाणित है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के कर्त्ता का संक्षिप्त परिचय—इस ग्रन्थ 'अनुष्ठानप्रकाश' के रचयिता पं० चतुर्थीलाल गौड़ हैं। इनका जन्म रतनगढ़ (बीकानेर के समीप) में विक्रम संवत् १९२४ (१८६७ ईस्वी) में आश्विन कृष्ण चतुर्थी भौमवार को मेष लग्न में हुआ था। इनके पिता पं० कस्तूरीचन्द्र थे। पं० चतुर्थीलाल जी की सम्पूर्ण शिक्षा रतनगढ़ में ही हुई थी। इनका यज्ञोपवीत संस्कार १२ वर्ष की आयु में तथा उस समय की बालविवाह की प्रथानुसार विवाह भी चैत्र शुक्ल पंचमी संवत् १९३७ में हुआ। इन्होंने अपने मामा पं० हरनन्द राय से कर्मकाण्ड, आयुर्वेद तथा श्रीमद्भागवत का अध्ययन किया। पं० भूधरमल की सहायता से इन्होंने व्याकरण, पुराण, वेदान्त तथा अन्य शास्त्रों का अभ्यास किया। फिर पं० गौरीशंकर से आयुर्वेद की विशेष शिक्षा प्राप्त की तथा पं० रामप्रताप मिश्र से ज्योतिष शास्त्र विषय में विशेष दक्षता अर्जित की। संवत् १९४७ विक्रमी में (२३ वर्ष की वय में) पं० चतुर्थीलाल की प्रथम पत्नी की मृत्यु हो गई तो संवत् १९५० विक्रमी में ज्येष्ठ शुक्ल १२ को दूसरा विवाह हुआ। सेठ स्नेहीराम गुप्त ने एक धर्मसभा की स्थापना की तो उसमें लगातार २० वर्षों तक क्रमश: अठारह पुराणों, श्री महाभारत तथा श्री वाल्मीकि रामायण की कथा का वाचन करते रहे। इनका शुक्ल यजुर्वेद, माध्यन्दिनि शाखा तथा कात्यायन का सूत्र था तथा ये वसिष्ठगोत्रीय थे। इनकी माता हरीबाई थीं।

पं० चतुर्थीलाल जी के समय में जो भी धर्मशास्त्र-कर्मकाण्डादि के ग्रन्थ प्रचलित थे, वे सब दाक्षिणात्य तथा मैथिल विद्वानों द्वारा रचित थे। वाराणसी में भी वही ग्रन्थ प्रचलित थे—ऐसा विचार कर उन्होंने मूल संस्कृत में उत्तर भारतीय ब्राह्मणों (शुक्ल यजुर्वेदीय माध्यन्दिन शाखीय तथा कात्यायन = पारस्कर गृह्यसूत्रियों) के लिये बारह महानिबन्धों की रचना की। उनके नाम—१. प्रतिष्ठाप्रकाश, २. जलाशयोत्सर्गप्रकाश, ३. गौडीय श्राद्धप्रकाश, ४. शान्तिप्रकाश, ५. मुहूर्तप्रकाश, ६. अनुष्ठानप्रकाश, ७. संस्कारप्रकाश, ८. व्रतोद्यापनप्रकाश, ९. प्रायश्चित्तप्रकाश, १०. दानप्रकाश, ११. बुद्धिप्रकाश तथा १२. चिकित्साप्रकाश हैं। इनके अतिरिक्त शूद्रवास्तुपद्धति, शूद्र श्राद्धपद्धति, शूद्रविवाहपद्धति तथा नित्यकर्मप्रयोगमाला भी इन्हीं के द्वारा रचित अन्य ग्रन्थ हैं। ये चारो ग्रन्थ तथा मुहूर्तप्रकाश एवं चिकित्साप्रकाश तो हिन्दी टीका-सहित हैं; शेष मूल हैं। इन्होंने अपने जीवनकाल में सम्पूर्ण भारत के प्रमुख तीर्थक्षेत्रों की यात्रा भी की थी। इनकी मृत्यु का वर्ष ज्ञात नहीं है; किन्तु ५३ वर्ष की आयु तक इन्होंने ग्रन्थरचना कर उन्हें प्रकाशित करा लिया था और प्रशंसापत्र भी प्राप्त किये थे।

प्रस्तुत ग्रन्थ अनुष्ठानप्रकाश का परिचय—इस ग्रन्थ का नाम अनुष्ठानप्रकाश है। इसकी रचना १९६० विक्रमी में (३६ वर्ष की वयस में) की थी; तदनुसार ग्रन्थ को फाल्गुन शुक्ल पंचमी सन् १८०४ ईस्वी को पूर्ण किया गया। इस ग्रन्थ में विचारकाण्ड, पद्धतिकाण्ड तथा पुरश्चरणकाण्ड—ये तीन प्रमुख विभाग हैं। इसमें विचार-काण्ड नामक प्रथम काण्ड में अनुष्ठान एवं पूजन से सम्बन्धित सम्पूर्ण आधारभूत ज्ञान, जो आगे के दोनों काण्डों में उपयोग-हेतु आवश्यक है, दिया गया है। इसे सीख लेने पर कर्मठ विद्वान् को आगे के काण्डों को समझने में सुगमता हो जाती है। विचारकाण्ड को प्रकरणों में विभाजित नहीं किया गया है।

द्वितीय काण्ड पद्धतिकाण्ड है; जिसमें (i) पूर्वकर्मप्रकरण, (ii) मध्यकर्म प्रकरण तथा (iii) हवनकर्म प्रकरण हैं।

तृतीय काण्ड पुरश्चरण काण्ड है; जिसे (i) गणपतिमन्त्रानुष्ठान, (ii) शिवमन्त्रानुष्ठान, (iii) देवी-मन्त्रानुष्ठान, (iv) विष्णुमन्त्रानुष्ठान, (v) सूर्यमन्त्रानुष्ठान तथा (vi) रोगशमन—इन छः प्रकरणों में विभाजित किया है। इनमें पाँच प्रकरण तो सनातन हिन्दू (वैदिक) धर्मावलम्बी जनता की श्रद्धा एवं सम्प्रदायानुसार उपास्य देवों के सामान्य पौष्टिक कर्म-हेतु अनुष्ठानों के प्रयोगार्थ दिये गये हैं। छठा प्रकरण सामान्य रोग, ज्वर, अतिसार, संग्रहणी, अर्श (बवासीर), अजीर्ण, मन्दाग्नि, विसूचिका, पाण्डुरोग, रक्तपित्त, क्षयरोग, कास-श्वास, वातरोग, शूल, गुल्म, उदररोग, जलोदर, प्लीहा, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, वृषण रोग, कुष्ठ, शिरोरोग, नेत्ररोग, कर्णरोग, मुखरोग, अपस्मार (मृगी), भगंदर, व्रण, स्तनस्फोट (थनैला), वातरक्त, प्रदर, वातरक्त आदि का कर्मविपाक तथा अनुष्ठान का प्रकरण है। इसी में प्रतिमास गर्भरक्षा का विधान, शीघ्र प्रसव के उपाय, अनावृष्टि-शमन विधान, सर्वरोगनाशक धर्मराज मन्त्र तथा चित्रगुप्त के मन्त्र का अनुष्ठान भी दिया गया है।

अनुष्ठानप्रकाश की उपयोगिता तथा उपादेयता—आज के इस पश्चिमी सभ्यता से आक्रान्त भारत में प्रत्येक वर्ण, वर्ग तथा जाति के लोग अनुदिन लोभग्रसित तथा स्वार्थपरायण होते जा रहे हैं। धर्मोपदेशक, कर्मकाण्डी, चिकित्सक, ज्योतिषी, वकील, व्यवसायी आदि सभी का एकमात्र उद्देश्य अर्थोपार्जन-मात्र रह गया है। दूरदर्शन के माध्यम से अधिकांश ठगवृत्ति के लोगों ने लोगों की मानवसुलभ दुर्लभता का लाभ उठाने के लिये ज्योतिष, अनुष्ठान, यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र को धन लूटने का साधन बना लिया है। इनमें से अधिकांश ठग तो सम्बन्धित विषय में पूर्णतः अशिक्षित तथा अनभिज्ञ भी हैं तथा केवल विज्ञापन के द्वारा प्रसिद्धि को प्राप्त हो रहे हैं। ऐसे पाखण्डियों पर ठगी, धोखा तथा व्यभिचार के आरोप भी लग रहे हैं। कुछ लोग तो मोटी फीस वसूल कर लोगों को लाल-पीले अनेक रंगों की जलेबियाँ, रसगुल्ले, शर्बत, पकौड़ियाँ, समोसे, चटनी आदि खाने का परामर्श देकर उनकी

समस्याओं के समाधान का आश्वासन दे रहे हैं। इस प्रकार से मीडिया की टी. आर. पी. बढ़ रही है, भारत के प्राचीन ज्ञान-विज्ञान के प्रति जनता में अविश्वास बढ़ता जा रहा है। ऐसे समय में सदाचारी, सुपात्र, विद्याध्ययन-शील विद्वान् ब्राह्मणों एवं जनसामान्य को अनुष्ठान-सम्बन्धी यथार्थ जानकारी की आवश्यकता है तथा इस प्रकार की जानकारी देने में यह अनुष्ठानप्रकाश ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। यतः अनुष्ठान जैसे विषय का सम्बन्ध ज्योतिष, धर्मशास्त्र, मन्त्र, तन्त्र, आयुर्वेद, रसायन विज्ञान, रत्नविज्ञान आदि अनेक विषयों से है; अतः इस विषय के ऊपर साधिकार ग्रन्थ के लेखन के लिये योग, व्याकरण, छन्द, धर्मशास्त्र, अष्टांग आयुर्वेद तथा ज्योतिष आदि अनेक विषयों में पारंगत होना ग्रन्थ-रचयिता के लिये आवश्यक है। यह हम सबका सौभाग्य है कि इस ग्रन्थ (अनुष्ठान-प्रकाश) के रचयिता पण्डित चतुर्थीलाल जी गौड़ इस अर्हता की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यही कारण है कि भारत में इस ग्रन्थ से पूर्व प्रणीत इस विषय के ग्रन्थों की अपेक्षा यह अनुष्ठानप्रकाश ग्रन्थ सर्वाधिक उपयोगी तथा उत्तम है; यह बात असन्दिग्ध है। इस ग्रन्थकर्त्ता की वंशपरंपरा भारतीय शास्त्रों के ज्ञान एवं अनुभव से समृद्ध रही है। ('यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः। न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परांगतिम्॥'—गीता १६। २३)

प्रस्तुत संस्करण के सम्बन्ध में—इस ग्रन्थकर्ता के सभी ग्रन्थ अभी तक (कुछ को छोड़कर) मूल रूप में ही प्रकाशित हैं; अतः इस अनुष्ठानप्रकाश ग्रन्थ की हिन्दी टीका की आवश्यकता का अनुभव कर चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी के संचालक श्री नवनीत दास जी गुप्त ने इस ग्रन्थ की टीका-हेतु मुझसे आग्रह किया तो मैंने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस कार्य में मुझे लगभग ५ वर्षों का समय लगा। इस समय में युगानुकूल राष्ट्रभाषा हिन्दी में टीका की रचना का प्रयास मेरे द्वारा किया गया है। क्लिष्ट शब्दावली एवं विषय को सरल बनाने के लिये स्थान-स्थान पर रेखाचित्र, सारणियाँ आदि दी गई हैं। टीका तथा विमर्श के लेखन में इस बात को ध्यान में रखा गया है कि वर्तमान समय में संस्कृत के विद्वान् पंडितों के अतिरिक्त अन्य सुशिक्षित, उच्च शिक्षित जिज्ञासु जनों के लिये भी ग्रन्थ सुबोध रहेगा तथा उसकी विषय-वस्तु का उन्हें सरलतापूर्वक ज्ञान हो सकेगा। इस भूमण्डलीकरण (वैश्वीकरण) के युग में अब किसी भी प्रकार के ज्ञान का एकाधिकार समाप्त होता जा रहा है; अतः अधिकतम जिज्ञासुजनों की अनुष्ठान-विषयक जिज्ञासा इसके अध्ययन से पूर्ण हो—ऐसा भरसक प्रयास मेरे द्वारा किया गया है। आवश्यकता पड़ने पर आज की वैज्ञानिक भाषा-शैली एवं शब्दावली के द्वारा भी विषय को स्पष्ट किया गया है ('तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ। ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्त्तुमिहार्हसि'—गीता १६। २४)।

आशा है, ग्रन्थ का यह संस्करण वैदिक, पौराणिक, तान्त्रिक, कर्मकाण्डी, ज्योतिर्विद तथा आयुर्वेदज्ञ विद्वानों के लिये समान रूप से उपयोगी होगा। सुधी वाचकों से प्रार्थना है कि इस संस्करण में मुद्रणादि या प्रमादादि से कुछ त्रुटियाँ रह गई हों तो उन्हें सुधार कर तथा समझकर पढ़ें। इस ग्रन्थ में दिये गये प्रयोगों एवं उनकी विधियों का प्रयोग किसी सुयोग्य, विषय के ज्ञाता, तपःपूत विद्वान् ब्राह्मण के निर्देशन में ही करें। प्रयोगों की सिद्धि-असिद्धि प्रयोक्ता के भाग्य पर निर्भर करेगी। इसमें ग्रन्थ के टीकाकार की ओर से कोई प्रतिभूति नहीं दी जा रही है। सम्पूर्ण उत्तरदायित्व प्रयोक्ता का रहेगा; क्योंकि गीता में भगवान् ने स्पष्ट कहा है—

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे। सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्॥
अधिष्ठानं तथा कर्त्ता करणं च पृथग्विधम्। विविधाश्च पृथक् चेष्टा दैवं चात्र पञ्चमम्॥
—गीता १८। १३-१४

गंगादशहरा—संवत् २०७१ वि०

विदुषामनुचरः
अभयकात्यायन

विषयानुक्रमणिका

विषयाः	पृष्ठाङ्काः

विचारकाण्डे

देवपूजाविचारप्रकरणं प्रथमम् •१

स्मार्तहोमविचारप्रकरणं द्वितीयम् • २

तन्त्रोक्तानुष्ठानप्रकरणं तृतीयम् • ३

तान्त्रिकहोमविधानप्रकरणं चतुर्थम् •४

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे

गणपतिमन्त्रपुरश्चरणप्रकरणं प्रथमम् •१

वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान)प्रकरणं पञ्चमम् •५

चित्र-सूची

॥ श्रीः ॥

पण्डितचतुर्थीलालशर्मप्रणीतः

अनुष्ठानप्रकाशः

भाषाटीकासमन्वितः

शास्त्रस्य विहितं कर्म सम्यक्सम्पादनं तु यत्।
तद्धि ज्ञेयमनुष्ठानं नित्यनैमित्तकर्मसु।।

शास्त्रों द्वारा नित्य एवं नैमित्तिक प्रयोग-हेतु जिन कर्मों का विधान किया गया है, उनके सम्यक् रूप से सम्पादन को ही 'अनुष्ठान' कहा जाता है।

यस्तु सन्ध्यामुपासीत श्रद्धया विधिवद् द्विजः।
न तस्य किञ्चिद् दुष्प्राप्यं त्रिषु लोकेषु विद्यते।।

(बृहन्नारदीयपुराणम्)

जो द्विज (ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य) श्रद्धापूर्वक सविधि सन्ध्या की उपासना करता है, उसके लिये तीनों लोकों में कुछ भी दुष्प्राप्य नहीं होता।

सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु।
यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलमश्नुते।।

(आग्नेयपुराणम्)

सन्ध्या से रहित अपवित्र व्यक्ति किसी भी कर्म को करने का अधिकारी नहीं होता। वह प्रतिदिन जो भी कर्म करता है, वह निष्फल होता है और उसका लेशमात्र फल भी उसे प्राप्त नहीं होता।

अहिंसा सत्यवचनं सर्वभूतानुकम्पनम्।
शमो दानं यथाशक्ति गार्हस्थ्यो धर्म उच्यते।।

(बृहन्नारदीयपुराणम्)

हिंसा न करना, सत्य बोलना, समस्त प्राणियों पर दया करना, इन्द्रियजय एवं शक्ति के अनुसार दान करना ही गृहस्थ का धर्म कहा गया है।

अङ्गुष्ठपर्वादारभ्य वितस्तिं यावदेव तु।
गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः।।

(मत्स्यपुराणम्)

विज्ञजनों को घर में पूजा-हेतु अङ्गुष्ठपर्व से लेकर वितस्तिमात्र परिमाण वाली देव-प्रतिमा रखनी चाहिये, इससे अधिक परिमाण वाली प्रतिमा गृहस्थों को अपने घरों में नहीं रखनी चाहिये।

तृतीयं पुरश्चरणकाण्डम्

गणपतिमन्त्रपुरश्चरणप्रकरणम्

शिवमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम्

देवीमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम्

विष्णुमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम्

वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान)प्रकरणम्

सूर्य्यादिनवग्रहमन्त्रानुष्ठानप्रकरणम्

सर्वरोगोपशमनप्रकरणम्

तृतीयं पुरश्चरणकाण्डम्

१. गणपति—गणपतिमन्त्र-पुरश्चरण, वक्रतुण्ड गणेश मन्त्र-पुरश्चरण, गणपतिमन्त्र, उच्छिष्टगणपति-लक्ष्मीविनायक-त्रैलोक्यमोहनगणपति-हरिद्रागणपति-मन्त्र, उच्छिष्ट-गणपतिकवच, हरिद्रागणेश कवच, पार्थिव गणेश-पूजा।

२. शिव—श्रीकण्ठादि कला मातृका न्यास, पञ्चाक्षर एवं अष्टाक्षर शिवमन्त्र, शिवयन्त्र, त्र्यक्षर मृत्युञ्जय मन्त्र, त्र्यम्बक मन्त्र एवं यन्त्र, महामृत्युञ्जय मन्त्र, वसिष्ठकल्पोक्त महामृत्युञ्जय मन्त्र, मृत्युञ्जय कवच, रुद्र-विधान, दशाक्षर रुद्रयन्त्र-विधान, शिवसंकल्पसूक्त, पुरुष सूक्त, अप्रतिरथ सूक्त, विभ्राट् सूक्त, शतरुद्री, रुद्रयन्त्र, रुद्रपीठपूजा, रुद्रस्तोत्र, पञ्च रुद्र-निर्णय, रुद्र-माहात्म्य, रुद्राध्याय, चमकाध्याय, रुद्रहोम, रुद्राभिषेक, चण्डेश्वर मन्त्र, त्वरित रुद्र, पार्थिवलिङ्ग-पूजन, पार्थिवलिङ्ग-माहात्म्य, कामनाभेद से लिङ्गसंख्या, दक्षिणामूर्ति मन्त्र एवं तन्त्र, वटुकभैरव मन्त्र, भैरव यन्त्र, वटुकभैरव कवच, भैरव स्तवराज, शिवाथर्वशीर्ष।

३. देवी—नवार्ण मन्त्र, देवी यन्त्र, अष्टाक्षर दुर्गा मन्त्र, दुर्गा कवच, नवरात्र दुर्गा-पद्धति, कलश-स्थापन मन्त्र, देवीपूजा मन्त्र, सप्तशती पाठ-विधान, कुमारी-पूजा, कामनानुसार चण्डीपाठसंख्या, मन्त्र-सम्पुटीकरण, कवचाहुति-निषेध, शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी-विधान, चण्डिका यन्त्र, लक्ष्मी एवं महालक्ष्मी मन्त्रानुष्ठान, महालक्ष्मी यन्त्र, लक्ष्मी-स्तोत्र-कवच-सूक्त; सरस्वती मन्त्रानुष्ठान, सरस्वती के षोडशाक्षर एवं एकादशाक्षर मन्त्र, सरस्वती यन्त्र तथा स्तोत्र, अन्नपूर्णा के मन्त्र, यन्त्र एवं कवच, गंगा-शीतला-पृथ्वी मन्त्र, गायत्री के मन्त्र-यन्त्र एवं कवच।

४. विष्णु—नारायण मन्त्र एवं यन्त्र, विष्णु का द्वादशाक्षर मन्त्र, लक्ष्मीनारायण मन्त्र, दधिवामन मन्त्र, राममन्त्र, नृसिंह यन्त्र, लक्ष्मीनृसिंह मन्त्र, षडक्षर नृसिंह मन्त्र, गोपालकृष्ण मन्त्र, श्रीकृष्ण मन्त्र, त्रैलोक्यमोहन विष्णु मन्त्र, सन्तानगोपाल मन्त्र एवं यन्त्र, हरिवंश-श्रवण-विधान, विष्णुयाग-विधान, गरुड मन्त्र, हनुमन्मन्त्र एवं यन्त्र, वेद-अष्टादश पुराण-भागवत पारायण-विधान।

५. सूर्य—तन्त्रोक्त अष्टाक्षर सूर्य मन्त्र, सूर्य यन्त्र, सूर्यार्घ्य, त्र्यक्षर सूर्य मन्त्र, तन्त्रोक्त चन्द्र-मंगल-बृहस्पतिमन्त्र, वेदोक्त चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि-राहु-केतु मन्त्र, सूर्य स्तोत्र, आदित्यहृदय स्तोत्र, सूर्य अथर्वशीर्ष।

६. रोगशमन—ज्वर शमन-विधान, जातवेदसमन्त्रानुष्ठान, महेश्वर कवच, ज्वरस्तोत्र एवं तर्पण, विष्णुसहस्रनाम-विधान, अतिसार-संग्रहणी-श्वासकासादि अनेकविध रोगों का शमन-विधान।

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे गणपतिपुरश्चरणप्रकरणं प्रथमम्॥ १ ॥

गणपतिमन्त्रपुरश्चरणे प्रारम्भिककृत्यम्

अथ पुरश्चरणप्रयोगकाण्डः—प्रथमं तावत्सकलविघ्ननिवर्त्तकश्रीगणेशमन्त्रपुरश्चरणप्रकरणम्।

सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं दन्तं पाशाङ्कुशेष्टान् पुरुकरविलसद्बीजपूराभिरामम्।
बालेन्दूद्द्योतमौलिं करिपतिवदनं दानपूरार्द्रगण्डं भोगीन्द्राबद्धमौलिं भजत गणपतिं रक्तवस्त्राङ्गरागम्॥ १ ॥

चन्द्रतारादिबलान्विते सुमुहूर्ते विविक्ते देशे जपस्थानं प्रकल्प्य तत्र भूशुद्धिं कूर्मशुद्धिम् आसनादिशुद्धिं च पूर्ववत् कृत्वा पूर्वदिने स्वदेहशुद्ध्यर्थमयुतगायत्रीजपं कुर्य्यात्। ततः प्रारम्भदिने प्रातर्नित्यमावश्यकं कर्म समाप्य पूर्वोक्तविधिना मङ्गलस्नानं गणेशपूजनादिजापकवर्णान्तं सर्वं सम्पाद्य स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुककामनासिद्धये अमुकश्रीगणपतिदेवताप्रीतये अमुकश्रीगणपतिमन्त्रस्यामुकसङ्ख्यात्मकजप-पुरश्चरणं करिष्ये, तदङ्गत्वेनासनादिशुद्धिं भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकान्यासं बहिर्मातृकान्यासं विघ्नेशादि-कलामातृकान्यासं च करिष्ये' इति च सङ्कल्प्य बहिर्मातृकान्यासान्तं पूर्ववत्सर्वं कृत्वा सर्वगणेशमन्त्राङ्गभूत-विघ्नेशादिकलामातृकान्यासं कुर्य्यात्। तद्यथा—ॐ अस्य विघ्नेशादिकलामातृकान्यासस्य गणक ऋषिर्निचृत् गायत्री छन्दः विनायको देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः सर्वेष्टसिद्धये न्यासे विनियोगः।

सर्वप्रथम सम्पूर्ण विघ्नों के विनाशक श्री गणेशजी से सम्बन्धित (विशेष सिद्ध) मन्त्रों की पुरश्चरणविधि का प्रकरण (इस पुरश्चरण काण्ड के अन्तर्गत) लिखा जा रहा है।

श्री गणपतिवन्दना—सिन्दूर के समान आभा वाले, तीन नेत्रों वाले, बड़े पेट वाले, अपने करकमलों में दन्त (लेखनी), पाश, अङ्कुश तथा इष्ट (वरदान की मुद्रा) धारण करने वाले, सूण्ड में बीजपूर (कैथ या बिजौरा नीबू का फल) धारण कर सुशोभित होने वाले, शिर को बालचन्द्र की द्युति से जगमगाने वाले, हाथी के समान मुख वाले, दानपुर (हाथी के मस्तक से रिसने वाला मद) से आर्द्र गण्ड (कपोलों) वाले, शिर पर सर्प को बाँधने वाले तथा लाल वस्त्र एवं अङ्गराग से युक्त गणपति को भजो॥ १ ॥

मुहूर्त तथा प्रारम्भिक कृत्य—पञ्चाङ्ग के अनुसार शुभ मुहूर्त निकलवाकर या निकाल कर उस दिन तथा समय पर चन्द्र, तारा, लग्न तथा अन्य ग्रहों का गोचरबल देखकर जपस्थान का निश्चय करके उस स्थान पर भूशुद्धि, कूर्मशुद्धि, आसनादि की शुद्धि का विचार कर उस निर्धारित मुहूर्त के एक दिन पूर्व स्वदेह की शुद्धि के लिये अयुत (दस सहस्र) की सङ्ख्या में गायत्री का जप करे। फिर प्रारम्भ करने के दिन प्रातः शीघ्र ही प्रातः के आवश्यक कार्य पूर्ण कर पूर्वकाण्डों में वर्णित विधि से मङ्गलस्नान, गणेशादि पूजन, जापकों का वरण तक के सम्पूर्ण कर्म सम्पादित करके अपने आसन पर पूर्वमुख या उत्तराभिमुख बैठकर आचमन एवं प्राणायाम कर देश-काल का सङ्कीर्तन कर मूलोक्त सङ्कल्प करे तथा बहिर्मातृकान्यास-पर्यन्त सब कर्म पूर्ववत् करके सर्व गणेश मन्त्रों के अङ्गभूत विघ्नेशादि मातृकान्यास करे। यथा—ॐ इस विघ्नेशादिमातृकान्यास मन्त्र के गणक ऋषि, निचृत् गायत्री छन्द, विनायक देवता, हल अक्षर बीज हैं, स्वर शक्तियाँ हैं। सभी इष्टों की सिद्धि के लिये न्यास में विनियोग करता हूँ।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ गां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ गीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ गूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ गैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ गः अस्त्रायः फट्॥ ६॥ एवं षडङ्गन्यासं कृत्वा गजाननं ध्यायेत्। **अथ ध्यानं**—

गुणाङ्कुशवराभीतिपाणिरक्ताब्जहस्तया । प्रिययालिङ्गितं रक्तं त्रिनेत्रं गणपं भजे॥

षडङ्ग न्यास—ॐ गां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ गीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ गूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ गैं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ गः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इन मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करके गणपति का ध्यान निम्न प्रकार से करे—

गुणाङ्कुशवराभीतिपाणिरक्ताब्जहस्तया । प्रिययालिङ्गितं रक्तं त्रिनेत्रं गणपं भजे॥

अर्थात् पाश, अङ्कुश वरमुद्रा, अभय मुद्रा को धारण करने वाले तथा हथेली में रक्त कमल के चिह्न वाले, प्रिया के द्वारा आलिङ्गित किये जाते हुए रक्तवर्ण त्रिनेत्र गणपति को भजता हूँ।

गणपतिमन्त्रानुष्ठाने कलान्यासः

एवं ध्यात्वा कलान्यासं कुर्यात्; तत्र क्रमः—ॐ विघ्नेशह्रीभ्यां नमः ललाटे॥ १॥ ॐ विघ्नराजश्रीभ्यां नमः मुखवृत्ते॥ २॥ ॐ इं विनायकपुष्टिभ्यां नमः दक्षिणनेत्रे॥ ३॥ ॐ ईं शिवोत्तमशान्तिभ्यां नमः वामनेत्रे॥ ४॥ ॐ उं विघ्नकृत्स्वस्तिभ्यां नमः दक्षिणकर्णे॥ ५॥ ॐ ऊं विघ्नहर्तृसरस्वतीभ्यां नमः वामकर्णे॥ ६॥ ॐ ऋं गणस्वाहाभ्यां नमः दक्षिणनासापुटे॥ ७॥ ॐ ॠं एकदन्तसुमेधाभ्यां नमः वामनासापुटे॥ ८॥ ॐ लृं द्विदन्तकान्तिभ्यां नमः दक्षिण-गण्डे॥ ९॥ ॐ लॄं गजवक्त्रकामिनीभ्यां नमः वामगण्डे॥ १०॥ ॐ एं निरञ्जनमोहिनीभ्यां नमः ऊर्ध्वोष्ठे॥ ११॥ ॐ ऐं कपर्दिनटीभ्यां नमः अधरोष्ठे॥ १२॥ ॐ ओं दीर्घजिह्वपार्वतीभ्यां नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ॥ १३॥ ॐ औं शङ्कुकर्ण-ज्वालिनीभ्यां नमः अधोदन्तपङ्क्तौ॥ १४॥ ॐ अं वृषभध्वजनन्दाभ्यां नमः शिरसि॥ १५॥ ॐ अः गणेशसुरेशाभ्यां नमः मुखे॥ १६॥ ॐ कं गजेन्द्रकामरूपिणीभ्यां नमः दक्षिणबाहुमूले॥ १७॥ ॐ खं शूर्पकर्णोमाभ्यां नमः दक्षिणकूर्परे॥ १८॥ ॐ गं त्रिलोचनतेजोवतीभ्यां नमः दक्षिणमणिबन्धे॥ १९॥ ॐ घं लम्बोदरसत्याभ्यां नमः दक्षाङ्गुलिमूले॥ २०॥ ॐ ङं महानन्दविघ्नेशीभ्यां नमः दक्षाङ्गुल्यग्रे॥ २१॥ ॐ चं चतुर्मूर्त्तिसुरूपिणीभ्यां नमः वामबाहुमूले॥ २२॥ ॐ छं सदाशिवकामदाभ्यां नमः वामकूर्परे॥ २३॥ ॐ जं आमोदमदजिह्वाभ्यां नमः वाममणि-बन्धे॥ २४॥ ॐ झं दुर्मुखभूतिभ्यां नमः वामाङ्गुलिमूले॥ २५॥ ॐ ञं सुमुखभौतिकाभ्यां नमः वामाङ्गुल्यग्रे॥ २६॥ ॐ टं प्रमोदसिताभ्यां नमः दक्षपादमूले॥ २७॥ ॐ ठं एकपादरमाभ्यां नमः दक्षजानुनि॥ २८॥ ॐ डं द्विजिह्वमहिषीभ्यां नमः दक्षगुल्फे॥ २९॥ ॐ ढं शूरभञ्जनीभ्यां नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले॥ ३०॥ ॐ णं वीरविकरणाभ्यां नमः दक्षपादा-ङ्गुल्यग्रे॥ ३१॥ ॐ तं षण्मुखभृकुटीभ्यां नमः वामपादमूले॥ ३२॥ ॐ थं वरदलज्जाभ्यां नमः वामजानुनि॥ ३३॥ ॐ दं वामदेवदीर्घघोणाभ्यां नमः वामगुल्फे॥ ३४॥ ॐ धं वक्रतुण्डधनुर्धराभ्यां नमः वामाङ्गुलिमूले॥ ३५॥ ॐ नं द्विरदयामिनीभ्यां नमः वामाङ्गुल्यग्रे॥ ३६॥ ॐ पं सेनानीरात्रिभ्यां नमः दक्षपार्श्वे॥ ३७॥ ॐ फं कामान्धग्रामणीभ्यां नमः वामपार्श्वे॥ ३८॥ ॐ बं मत्तशशिप्रभाभ्यां नमः पृष्ठे॥ ३९॥ ॐ भं विमत्तलोललोचनाभ्यां नमः नाभौ॥ ४०॥ ॐ मं मत्तवाहनचञ्चलाभ्यां नमः जठरे॥ ४१॥ ॐ यं त्वगात्मभ्यां जटीदीप्तिभ्यां नमः हृदि॥ ४२॥ ॐ रं असृगात्मभ्यां मुण्डीसुभगाभ्यां नमः दक्षांसे॥ ४३॥ ॐ लं मांसात्मभ्यां खड्गीदुर्भगाभ्यां नमः ककुदि॥ ४४॥ ॐ वं मेदात्मभ्यां वरेण्यशिवाभ्यां नमः वामांसे॥ ४५॥ ॐ शं अस्थ्यात्मभ्यां वृषकेतनभगाभ्यां नमः हृदयादिदक्षहस्तान्तम्॥ ४६॥ ॐ षं मज्जात्मभ्यां भक्तिप्रियभगिनीभ्यां नमः हृदयादिवामहस्तान्तम्॥ ४७॥ ॐ सं शुक्रात्मभ्यां गणेशभगिनीभ्यां नमः हृदयादि-दक्षपादान्तम्॥ ४८॥ ॐ हं प्राणात्मभ्यां मेघनादसुभगाभ्यां नमः हृदयादिवामपादान्तम्॥ ४९॥ ॐ ळं शक्त्यात्मभ्यां व्याप्तिकालरात्रिभ्यां नमः जठरे॥ ५०॥ ॐ क्षं परमात्मभ्यां गणेश्वरकालिकाभ्यां नमः मुखे॥ ५१॥ एवं कलान्यासं कृत्वा प्राणानायम्य मूलमन्त्रन्यासं कुर्यात्। एवं कलान्यासः सर्वगणपतिमन्त्रेषु कार्यः।

कलान्यास—गणेश जी का ध्यान करने के उपरान्त मातृकलान्यास करना चाहिये; उसका क्रम इस प्रकार है—'ॐ अं विघ्नेशह्रीभ्यां नमः' इस मन्त्र से ललाट में न्यास करे। 'ॐ आं विघ्नराजश्रीभ्यां नमः' से मुखवृत्त में न्यास करे। 'ॐ इं विनायकपुष्टिभ्यां नमः' से दक्षिणनेत्र की कला का न्यास करे। 'ॐ ईं शिवोत्तमशान्तिभ्यां नमः' इस मन्त्र से वाम नेत्र में कलान्यास करे। 'ॐ उं विघ्नकृत्स्वस्तिभ्यां नमः' इस मन्त्र से दक्षिणकर्ण में कलान्यास करे। 'ॐ विघ्नहर्तृसरस्वतीभ्यां नमः' से वामकर्ण में, 'ॐ ऋं गणस्वाहाभ्यां नमः' से दाहिने नासाछिद्र में, 'ॐ ॠं एकदन्तसुमेधाभ्यां नमः' से बाँएँ नासाछिद्र में, 'ॐ लृं द्विदन्तकान्तिभ्यां नमः' से दक्षिण गण्ड (कल्ला) में, 'ॐ लॄं गजवक्त्रकामिनीभ्यां नमः' से वामगण्ड में, 'ॐ एं निरञ्जनमोहिनीभ्यां नमः' से ऊपरी ओठ में, 'ॐ ऐं कपर्दिनटीभ्यां नमः' से अधरोष्ठ में, 'ॐ ओं दीर्घजिह्वपार्वतीभ्यां नमः' से ऊपरी दाँतों में, 'ॐ औं शङ्कुकर्णज्वालिनीभ्यां नमः' से निचले दाँतों में, 'ॐ अं वृषभध्वजनन्दाभ्यां नमः' से शिर में, 'ॐ अः गणेशसुरेशाभ्यां नमः' से मुख में, 'ॐ कं गजेन्द्रकामरूपिणीभ्यां नमः' से दक्षिण बाहुमूल में, 'ॐ कं शूर्पकर्णोमाभ्यां नमः' से दक्षिण कूर्पर (कोहनी) में, 'ॐ गं त्रिलोचनतेजोवतीभ्यां नमः' से दक्षिण मणिबन्ध (कलाई) में, 'ॐ घं लम्बोदरसत्याभ्यां नमः' से दाहिनी अङ्गुलियों के मूल में, 'ॐ ङं महानन्दविघ्नेशीभ्यां नमः' से दाहिनी अङ्गुलियों के अग्रभाग में, 'ॐ चं चतुर्मूर्तिसुरूपिणीभ्यां नमः' से बाँईं भुजा के मूल में, 'ॐ छं सदाशिवकामदाभ्यां नमः' से वामकूर्पर (बाईं कुहनी) में न्यास करे। 'ॐ जं आमोदमदजिह्वाभ्यां नमः' से बाँई कलाई में, 'ॐ झं दुर्मुखभूतिभ्यां नमः' से वामाङ्गुलि मूल में, 'ॐ ञं सुमुखभौतिकाभ्यां नमः' से बाँईं अङ्गुलियों के अग्रभाग में, 'ॐ टं प्रमोदसिताभ्यां नमः' से दक्षपादमूल (दाहिनी एड़ी) में, 'ॐ ठं एकपादरमाभ्यां नमः' से दक्षिण जानु (दाहिने घुटने) में, 'ॐ डं द्विजिह्वमहिषीभ्यां नमः' से दक्षिण गुल्फ (दाहिने टखने में), 'ॐ ढं शूरभञ्जनीभ्यां नमः' से दक्ष पादाङ्गुलिमूल (दाहिनी एड़ी) में न्यास करे। 'ॐ णं वीरविकर्णाभ्यां नमः' से वामपार्श्व में न्यास करे। 'ॐ तं षण्मुखभृकुटीभ्यां नमः' से वाम गुल्फ (बाँएँ टखने) में, 'ॐ थं वरदलज्जाभ्यां नमः' से वाम जानु (बाँएँ घुटने) में, 'ॐ दं वामदेवदीर्घघोणाभ्यां नमः' से वाम गुल्फ में, 'ॐ धं वक्रतुण्डधनुर्धराभ्यां नमः' से वामाङ्गुलिमूल में, 'ॐ नं द्विरदयामिनीभ्यां नमः' से बाईं अङ्गुलियों के अग्रभाग में न्यास करे। 'ॐ पं सेनानीरात्रीभ्यां नमः' से दाहिने पार्श्व में, 'ॐ फं कामान्धग्रामणीभ्यां नमः' से वामपार्श्व में न्यास करना चाहिये। 'ॐ बं मत्तशशिप्रभाभ्यां नमः' से पृष्ठ (पीठ) में, 'ॐ भं विमत्तलोललोचनाभ्यां नमः' से नाभि में, 'ॐ मं मत्तवाहनचञ्चलाभ्यां नमः' इस मन्त्र से जठर में (पेट में) न्यास करे। 'ॐ यं त्वगात्मभ्यां जटीदीप्तिभ्यां नमः' इस मन्त्र से हृदय में, 'ॐ रं असृगात्मभ्यां मुण्डीसुभगाभ्यां नमः' से दक्षांस (दाहिने कन्धे) में, 'ॐ मांसात्मभ्यां खड्गीदुर्भगाभ्यां नमः' से ककुद (ठोढ़ी) में न्यास करे। 'ॐ वं मेधाभ्यां वरेण्यशिवाभ्यां नमः' से वामांस (बाँएँ कन्धे) में न्यास करे। 'ॐ ह्रीं अस्थ्यात्मभ्यां वृषकेतनभगाभ्यां नमः' से हृदय आदि से लेकर दक्षिणी हाथ के अन्त तक न्यास करे। 'ॐ षं मज्जात्मभ्यां भक्तिप्रियभगिनीभ्यां नमः' से हृदयादि से लेकर वाम हस्त के अन्त तक न्यास करे। 'ॐ सं शुक्रात्मभ्यां नमः गणेशभगिनीभ्यां नमः' से हृदयादि दक्षिण पादान्त न्यास करे। 'ॐ हं प्राणात्मभ्यां मेघनादसुभगाभ्यां नमः' से हृदय से लेकर वामपादान्त न्यास करे। 'ॐ लं शक्त्यात्मभ्यां व्याप्तिकालरात्रिभ्यां नमः' से जठर (पेट) में, 'ॐ क्षं परमात्मभ्यां गणेश्वरकालिकाभ्यां नमः' से मुख में न्यास करे। इस प्रकार कलान्यास करके प्राणायाम करे। फिर मूल मन्त्र से न्यास करे। ऐसा सभी गणपतिमन्त्रों में करना चाहिये।

वक्रतुण्डगणेशमन्त्रः

मन्त्रमहोदधौ यथा—'ॐ वक्रतुण्डाय हुं' इति षडक्षरो मूलमन्त्रः। अस्य श्रीगणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः विघ्नेशो देवता वं बीजं यं शक्तिः सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः। अथ ऋष्यादिन्यासः—ॐ भार्गवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ विघ्नेशदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ वं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ यं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥

अथ करन्यासः—ॐ वं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्रं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ तुं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ डां अनामिकाभ्यां नमः। ॐ यं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ हुं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ वं नमः हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ क्रं नमः शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ तुं नमः शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ डां नमः कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ यं नमः नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ हुं नमः अस्त्राय फट्॥ ६॥

अथ वर्णन्यासः—ॐ वं नमः भ्रूमध्ये॥ १॥ ॐ क्रं नमः कण्ठे॥ २॥ ॐ तुं नमः हृदये॥ ३॥ ॐ डां नमः नाभौ॥ ४॥ ॐ यं नमः लिङ्गे॥ ५॥ ॐ हुं नमः पादयोः॥ ६॥ इति वर्णन्यासं कृत्वा 'ॐ वक्रतुण्डाय हुं नमः' इति सर्वाङ्गे व्यापकं न्यस्य ध्यायेत्—

उद्यद्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मे पाशाङ्कुशाभयवरान्दधतं गजास्यम्।
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं ध्यायेत्प्रसन्नमखिलाभरणाभिरामम्॥ १॥

इति ध्यात्वा स्वदेहे 'ॐ मं मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' इति न्यस्य पीठपूजां कुर्यात्।

वक्रतुण्ड गणेश का मूलमन्त्र—ॐ वक्रतुण्डाय हुं—यह मन्त्रमहोदधि ग्रन्थ के अनुसार छः अक्षरों वाला गणेशमन्त्र है। **विनियोग**—इस श्रीगणेश मन्त्र के भार्गव ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, विघ्नेश देवता, वं बीज, यं शक्ति है। इसका विनियोग सर्वेष्ट सिद्धिहेतु जप में किया जा रहा है। **ऋष्यादि न्यास**—'ॐ भार्गवऋषये नमः शिरसि' कहकर शिर पर ऋषि का न्यास करे। 'ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे' से मुख में छन्द का न्यास करे। 'ॐ विघ्नेशदेवतायै नमः' से हृदय में, 'ॐ वं बीजाय नमः' से गुह्य में, 'ॐ यं शक्तये नमः' से दोनों शिरों में न्यास करे। **करन्यास**—'ॐ वं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' से हथेली के अङ्गूठों में, 'ॐ क्रं तर्जनीभ्यां नमः' से तर्जनियों में, 'ॐ तुं मध्यमाभ्यां नमः' से मध्यमा में, 'ॐ डां अनामिकाभ्यां नमः' से अनामिका में, 'ॐ यं कनिष्ठिकाभ्यां नमः' से कनिष्ठा में, तथा 'ॐ हुं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः' से करतलपृष्ठों से करन्यास करे। **षडङ्गन्यास**—फिर 'ॐ वं नमः हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से षडङ्गन्यास करना चाहिये। मन्त्र मूल में लिखे हैं। **वर्णन्यास**—'ॐ वं नमः' से भ्रूमध्य में, 'ॐ क्रं नमः' से कण्ठ में, 'ॐ तुं नमः' से हृदय में, 'ॐ डां नमः' से नाभि में, 'ॐ यं नमः' से लिङ्ग में, 'ॐ हुं नमः' से पैरों में—इस प्रकार वर्णन्यास करे। फिर 'वक्रतुण्डाय हुं नमः' इस मन्त्र का न्यास सर्वाङ्ग में कर उससे व्यापक करने के उपरान्त 'उद्यद् दिनेश्वररुचिं' इत्यादि मूलोक्त श्लोक से ध्यान करे। जिसका भावार्थ इस प्रकार है—सूर्य की भाँति प्रकाशमान; स्वकमलरूपी हाथों में पाश, अङ्कुश, अभय तथा करमुद्रा धारण करने वाले, गजवदन, रक्ताम्बरधारी, सम्पूर्ण दुःखों के नाशक, प्रसन्न वदन, सम्पूर्ण आभरणों में अभिराम गणेश जी का मैं ध्यान करता हूँ। ऐसा ध्यान करके स्वशरीर में साधक 'ॐ मं मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' ऐसा न्यास कर आगे लिखी विधि से पीठपूजा करे (स्वशरीर में ही पीठ की कल्पना करे)।

गणपतिमन्त्रानुष्ठाने पीठपूजा

तद्यथा—पुष्पाक्षतानादाय स्ववामभागे श्रीगुरुभ्यो नमः॥ १॥ दक्षिणे गणपतये नमः॥ २॥ मध्ये स्वेष्टदेवतायै नमः॥ ३॥ पीठमध्ये ॐ मं मण्डूकाय नमः॥ १॥ ॐ कां कालाग्निरुद्राय नमः॥ २॥ ॐ आं आधारशक्तये नमः॥ ३॥

ॐ कूं कूर्म्माय नमः ॥ ४ ॥ ॐ अं अनन्ताय नमः ॥ ५ ॥ ॐ पृं पृथिव्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ क्षीं क्षीरसागराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ रं रत्नद्वीपाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ रं रत्नमण्डपाय नमः ॥ ९ ॥ ॐ कं कल्पवृक्षाय नमः ॥ १० ॥ ॐ रं रत्नवेदिकायै नमः ॥ ११ ॥ ॐ रं रत्नसिंहासनाय नमः ॥ १२ ॥ इत्युपर्युपरि सम्पूज्य आग्नेय्याम् ॐ धं धर्माय नमः ॥ १३ ॥ नैर्ऋत्यां ॐ ज्ञां ज्ञानाय नमः ॥ १४ ॥ वायव्याम् ॐ वैं वैराग्याय नमः ॥ १५ ॥ ईशान्यां ॐ ऐं ऐश्वर्याय नमः ॥ १६ ॥ पूर्वे ॐ अं अधर्माय नमः ॥ १७ ॥ दक्षिणे ॐ अं अज्ञानाय नमः ॥ १८ ॥ पश्चिमे ॐ अं अवैराग्याय नमः ॥ १९ ॥ उत्तरे ॐ अं अनैश्वर्याय नमः ॥ २० ॥ इति पूजयेत्। ततो मध्ये आं आनन्दकन्दाय नमः ॥ २१ ॥ सं संविन्नालाय नमः ॥ २२ ॥ ॐ सं सर्वतत्त्वकमलासनाय नमः ॥ २३ ॥ ॐ प्रं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः ॥ २४ ॥ ॐ विं विकारामयकेसरेभ्यो नमः ॥ २५ ॥ ॐ पं पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णिकाभ्यो नमः ॥ २६ ॥ ॐ अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः ॥ २७ ॥ ॐ सों सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः ॥ २८ ॥ ॐ वं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः ॥ २९ ॥ ॐ सं सत्त्वाय नमः ॥ ३० ॥ ॐ रं रजसे नमः ॥ ३१ ॥ ॐ तं तमसे नमः ॥ ३२ ॥ ॐ अं आत्मने नमः ॥ ३३ ॥ ॐ पं परमात्मने नमः ॥ ३४ ॥ ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ॥ ३५ ॥ ॐ मं मायातत्त्वाय नमः ॥ ३६ ॥ ॐ कं कलातत्त्वाय नमः ॥ ३७ ॥ ॐ विं विद्यातत्त्वाय नमः ॥ ३८ ॥ ॐ पं परतत्त्वाय नमः ॥ ३९ ॥ एवं पीठदेवताः सम्पूज्य पीठशक्तीः प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्। तत्राष्टदिक्षु मध्ये च क्रमेण ॐ तीव्रायै नमः ॥ १ ॥ ॐ चालिन्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ नन्दायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ भोगदायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ कामरूपिण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ उग्रायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ तेजोवत्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सत्यायै नमः ॥ ८ ॥ ॐ विघ्ननाशिन्यै नमः ॥ ९ ॥ इति विनायकस्य सर्वमन्त्राणामेताः पीठशक्तयो ज्ञेयाः।

पीठपूजा—हाथ में पुष्प एवं अक्षतों को लेकर अपने शरीर के वामभाग में श्रीगुरुभ्यो नमः से, 'ॐ गणपतये नमः' से दक्षिण भाग में एवं मध्य में 'स्वेष्टदेवतायै नमः' कहकर पूजन करे। पीठ के मध्य में 'ॐ मं मण्डूकाय नमः', 'ॐ कां कालाग्निरुद्राय नमः', 'ॐ आं आधारशक्तये नमः', 'ॐ कूं कूर्माय नमः', 'ॐ अं अनन्ताय नमः', 'ॐ पृं पृथिव्यै नमः', 'ॐ क्षीं क्षीरसागराय नमः', 'ॐ रं रत्नदीपाय नमः', 'ॐ रं रत्नमण्डपाय नमः', 'ॐ कं कल्पवृक्षाय नमः', 'ॐ रं रत्नवेदिकायै नमः', 'ॐ रं रत्नसिंहासनाय नमः'—इस प्रकार एक के ऊपर एक (मध्यभाग में) पूजन करके फिर अग्निकोण में 'ॐ धं धर्माय नमः', नैर्ऋत्य में 'ॐ ज्ञां ज्ञानाय नमः', फिर वायव्य में 'ॐ वैं वैराग्याय नमः', ईशान कोण में 'ॐ ऐं ऐश्वर्याय नमः', पूर्व में 'ॐ अं अधर्माय नमः', दक्षिण में 'ॐ अं अज्ञानाय नमः', पश्चिम में 'ॐ अं अवैराग्याय नमः', उत्तर में 'ॐ अं अनैश्वर्याय नमः'—इस प्रकार पूजा करे। फिर मध्य में 'आं आनन्दकन्दाय नमः', 'ॐ सं संविन्नालाय नमः', 'ॐ सं सर्वतत्त्वकमलासनाय नमः', 'ॐ प्रं प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नमः', 'ॐ विं विकारमयकेसरेभ्यो नमः', 'ॐ पं पञ्चाशद् वर्णाढ्यकर्णिकाभ्यो नमः', ॐ अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः,ॐ सों सोममण्डलाय षोडशकमलात्मने नमः, 'ॐ वं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः', 'ॐ सं सत्त्वाय नमः', ॐ रं रजसे नमः, ॐ तं तमसे नमः, ॐ अं आत्मने नमः, ॐ पं परमात्मने नमः, ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः, ॐ मं मायातत्त्वाय नमः, ॐ कं कलातत्त्वाय नमः, ॐ विं विद्यातत्त्वाय नमः, 'ॐ पं परतत्त्वाय नमः'— इस प्रकार पीठदेवताओं का पूजन करके फिर पीठशक्तियों की प्रतिष्ठा कर पूजन करे।

पीठशक्तियों की पूजा—पूर्व में 'ॐ तीव्रायै नमः', आग्नेय में 'ॐ चालिन्यै नमः', दक्षिण में 'ॐ नन्दायै नमः', नैर्ऋत्य में 'ॐ भोगदायै नमः', पश्चिम में 'ॐ कामरूपिण्यै नमः', वायव्य में 'ॐ उग्रायै नमः', उत्तर में 'ॐ तेजोवत्यै नमः' तथा ईशान में 'ॐ सत्यायै नमः' एवं मध्य में 'ॐ विघ्ननाशिन्यै नमः'—इन पीठशक्तियों का पूजन सभी गणेशमन्त्र के पुरश्चरण में करना चाहिये।

गणपतिमन्त्रानुष्ठानविधिः

ततः ॐ गं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इति मन्त्रेणासनं दत्त्वा तद्देशे ॐ वक्रतुण्डाय हुम् इति मूलमन्त्रेण मूर्तिं प्रकल्प्य तस्यां गणेशमावाह्य पूर्वोक्तपद्धतिमार्गेण षोडशोपचारैः सम्पूज्य ततः आवरणार्चनं कुर्यात्। तत्र क्रमः यन्त्रोद्धारश्च—मध्ये

षट्कोणमण्डले आग्नेयादिकोणेषु क्रमेण ॐ वं हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ क्रं शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ तुं शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ डां कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ इत्यभ्यर्च्य स्वाग्रे ॐ यं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ दिक्षु ॐ हुं अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति प्रथमावरणार्चनम् ॥ १ ॥ ततः पूर्वादिष्वष्टदलेषु क्रमेण—ॐ विद्यामादिमायै नमः ॥ १ ॥ ॐ विधात्र्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ भोगदायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ विघ्नघातिन्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ निधिप्रदीपायै नमः ॥ ५ ॥ ॐ पापघ्न्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ पुण्यायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ शशिप्रभायै नमः ॥ ८ ॥ इति द्वितीयावरणम् ॥ २ ॥ ततो दलाग्रेषु—ॐ वक्रतुण्डाय नमः ॥ १ ॥ ॐ एकदंष्ट्राय नमः ॥ २ ॥ ॐ महोदराय नमः ॥ ३ ॥ ॐ गजास्याय नमः ॥ ४ ॥ ॐ लम्बोदराय नमः ॥ ५ ॥ ॐ विकटाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ विघ्नराजाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ धूम्रवर्णाय नमः ॥ ८ ॥ इति तृतीयावरणम् ॥ ३ ॥ ततो भूपुरे पूर्वादिक्रमेण—[पूर्वे] ॐ लं इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ [आग्नेय्याम्] ॐ रं अग्नये नमः ॥ २ ॥ [दक्षिणे] ॐ मं यमाय नमः ॥ ३ ॥ [नैर्ऋत्याम्] ॐ क्षं निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ [पश्चिमे] ॐ वं वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ [वायव्याम्] ॐ यं वायवे नमः ॥ ६ ॥ [उत्तरे] ॐ कुं कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ [ऐशान्ये] ॐ हं ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ [ईशानपूर्वयोर्मध्ये] ॐ आं ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ [निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये] ॐ अं अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति चतुर्थावरणम् ॥ ४ ॥ पुनः पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिसमीपे—ॐ वं वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शं शक्त्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ दं दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खं खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पां पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अं अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गं गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिं त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पं पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चं चक्राय नमः ॥ १० ॥ इति पञ्चमावरणम् ॥ ५ ॥ एवं पञ्चावरणैर्गणनायकं सम्पूज्य षड्लक्षं मन्त्रं जपेत्। ततो जपान्ते इक्षु १ सक्तु २ रम्भाफल ३ चिपिट ४ तिल ५ मोदक ६ नारिकेल ७ लाजै ८ रित्यष्टभिर्द्रव्यैर्जपदशांशतो हुत्वा तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन शुद्धान् विप्रांश्च भोजयेत्। एवं कृते मन्त्रः सिद्धो भवति।

गणपति-यन्त्रपूजा—'ॐ गं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः' इस मन्त्र से आसन प्रदान कर 'ॐ वक्रतुण्डाय हुँ' इस मूल मन्त्र से मूर्ति रखकर पूर्वोक्त पद्धति से षोडशोपचारों से पूजन कर गणेशयन्त्र के आवरणदेवताओं की पूजा करे।

गणपति यन्त्र-पूजा का क्रम—यन्त्र के मध्य में जो षट्कोणमण्डल है, सर्वप्रथम उसकी पूजा करे (यन्त्र के मध्य गणेश जी की मूर्ति बनाये) यह ऊपर बता चुके हैं। फिर षट्कोण के देवताओं की पूजा अग्निकोण से प्रदक्षिणक्रम से प्रारम्भ करे तथा मूल में लिखित 'ॐ वं शिरसे स्वाहा' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करे। षट्कोण गणपति यन्त्र का प्रथम आवरण है। फिर पूर्वादि दिशाओं में क्रमशः अष्टदल कमल के दलों में मूल में लिखित 'ॐ विद्यामादिमायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजन करे। यह द्वितीय आवरण है। पूर्वादि क्रम से मूलोक्त 'ॐ वक्रतुण्डाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजन करे। वह तृतीय आवरण है। भूपुर में यन्त्र में जो बाहर की ओर चौकोर रेखा द्वारा निर्मित भाग है, उसे 'भूपुर' कहते हैं। इस 'भूपुर' में पूर्व से मूलोक्त 'ॐ लं इन्द्राय नमः' कहकर पूजन करे। आग्नेय में 'ॐ रं अग्नये नमः' से पूजन करे। इसी प्रकार प्रदक्षिणक्रम से आठो दिशाओं का पूजन करना चाहिये। तदुपरान्त ईशान तथा पूर्व के मध्य में 'ॐ आं ब्रह्मणे नमः' से ऊर्ध्व दिशा का तथा पश्चिम एवं नैर्ऋत्य के मध्य में अधोदिशा के स्वामी अनन्त का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार यह यन्त्र के चतुर्थ आवरण की पूजा हुई।

आयुध-पूजा—तदुपरान्त इन्द्रादि के समीप उनके वज्र आदि आयुधों की पूजा पूर्वादि क्रम से मूल में लिखित 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि मन्त्रों से कराये। इस प्रकार यह गणपति यन्त्र की पाँचो आवरणों की पूजाविधि वर्णित की जा चुकी है।

मन्त्रजप—आवरणों की पूजा के उपरान्त 'ॐ वक्रतुण्डाय हुँ' इस मन्त्र को छः लाख की सङ्ख्या में जप कर जप की समाप्ति पर ईख, सत्तू, केले का फल, चिपिट (चिउड़ा), तिल, मोदक, नारियल तथा धान—इन आठ द्रव्यों से दशमांश हवन, उसका दशमांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन, मार्जन का दशांश शुद्ध ब्राह्मणों को भोजन कराने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

गणपतिमन्त्रानुष्ठानोपयोगिगणपतिभद्रमण्डलम्
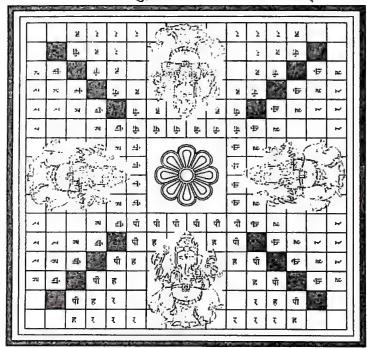
गणपतियन्त्रम्
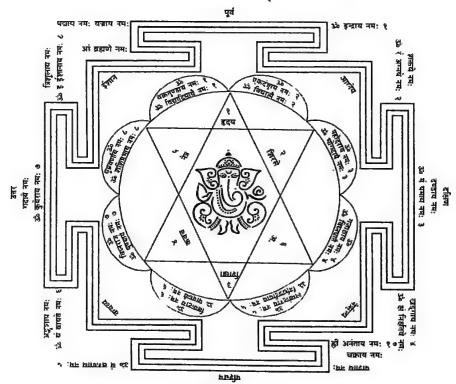
विमर्श—गणपतिभद्र-निर्माण के लिये सप्तदश रेखाएँ पूर्व से पश्चिम तथा सप्तदश (१७) रेखाएँ उत्तर से दक्षिण खींचनी चाहिये। इस प्रकार इसमें १६×१६=२५६ कोष्ठक होते हैं। इसमें चारो कोणों पर चार श्वेत वर्ण के खण्डेन्दु रहते हैं। खण्डेन्दुओं से मध्य की ओर को चार-चार कोष्ठकों की चार शृङ्खला बनानी चाहिये। शृङ्खलाओं के दोनों पार्श्व में पाँच-पाँच कोष्ठक पीत वर्ण के रखे। फिर उन पीत कोष्ठों के पार्श्वों में (दोनों ओर) पाँच-पाँच हरित वर्ण के कोष्ठक बनाये। चारो किनारों के समीप प्रत्येक ओर हरित वर्ण के कोष्ठक की बगलों में लाल रङ्ग से चार-चार कोष्ठक के भद्रों का निर्माण करे। मध्य के सोलह कोष्ठों में अष्टदल कमल श्वेत वर्ण का बनाये तथा चारो दिशाओं के रिक्त २२-२२ कोष्ठों में गणेशजी को बनाये। गणपति का वर्ण कृष्ण रखे। भद्र के चारो ओर सत्त्व (श्वेत), रज (लाल) तथा तम (कृष्ण) की परिधि बनानी चाहिये।

चित्र में रङ्गों का निर्देश—रिक्त कोष्ठ = श्वेत वर्ण, ⊡ एक विन्दु = पीतवर्ण, ⛶ तीन विन्दु = हरित वर्ण, ⛶ दो विन्दु = लाल वर्ण। (गणपतिभद्रमण्डल का चित्र देखें)।

कामनासिद्धये प्रयोगविधिः

अनन्तरं ततः सिद्धमन्त्रेण स्वकामनार्थं प्रयोगान् कुर्यात्; तत्र प्रकारः—

ब्रह्मचर्यरतो मन्त्री जपेद्रविसहस्रकम्। षण्मासमध्याद्दारिद्र्यं नाशयत्येव निश्चितम्॥
चतुर्थ्यादिचतुर्थ्यन्तं जपेद्दशसहस्रकम्। प्रत्यहं जुहुयादष्टोत्तरं शतमतन्द्रितः॥
पूर्वोक्तं फलमाप्नोति षण्मासाद्भक्तितत्परः। आज्याक्तान्नस्य होमेन भवेद्धनसमृद्धिमान्॥
पृथुकैर्नारिकेलैर्वा मरिचैर्वा सहस्रकम्। प्रत्यहं जुह्वतो मासाज्जायते धनसञ्चयः॥
जीरसिन्धुमरीचाक्तैरष्टद्रव्यैः सहस्रकम्। जुह्वन्प्रतिदिनं पक्षात्स्यात्कुबेर इवार्थवान्॥
चतुःशतं चतुश्चत्वारिंशदाद्य दिनं प्रति। तर्पयेन्मूलमन्त्रेण मण्डलादिष्टमाप्नुयात्॥

इति वक्रतुण्डगणपतिमन्त्रः प्रथमः॥ १॥

कामना-सिद्धि के लिये प्रयोगविधि—मन्त्रजापक को ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए बारह सहस्र की सङ्ख्या में जप करने से छः मास के भीतर दरिद्रता निश्चित ही दूर हो जाती है। अथवा एक चतुर्थी तिथि से दूसरी चतुर्थी तिथि तक एक सहस्र की मात्रा में जप कर लेने से तथा प्रतिदिन १०८ आहुति (इसी मन्त्र से) हवन करने से भी छः मास में पूर्वोक्त फल की प्राप्ति होती है। यदि घृतमिश्रित अन्न का होम किया जाय तो जापक धन-समृद्धि से युक्त हो जाता है। चिउड़ा अथवा नारियल अथवा काली मिर्च के साथ प्रतिदिन हवन करने से एक मास में धनसञ्चय हो जाता है। जीरा, सेंधा नमक, काली मिर्च मिलाकर धृताक्त करके एक सहस्र आठ (१००८) की सङ्ख्या में प्रतिदिन होम करने से होता एक पक्ष में कुबेर के समान धनवान् हो जाता है। प्रतिदिन चार सौ चौवालीस की सङ्ख्या में मूल मन्त्र से तर्पण करने से मण्डल (चालीस दिन) में इष्ट मनोरथ की प्राप्ति हो जाती है (यह प्रथम प्रकार के गणपति मन्त्र के अनुष्ठान का फल है)।

गणपतेर्द्वितीयो मन्त्रः

अथ गणपतेर्द्वितीयमन्त्रो मन्त्रमहोदधौ—'ॐ रायस्पोषस्य ददिता निधिदो रत्नधातुमान्। रक्षोहणो वलगहनो वक्रतुण्डाय हुम्।' एकत्रिंशद्वर्णयुक्तो मन्त्रोऽभीष्टप्रदायकः। अस्य ऋष्यादिन्यासान्तं पूर्ववत्कृत्वा—ॐ रायस्पोषस्य हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ददिता शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ निधिदो रत्नधातुमान् शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ रक्षोहणो कवचाय

हुम्॥४॥ ॐ वलगहनो नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ ॐ वक्रतुण्डाय हुम् अस्त्राय फट्॥६॥ अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। इति गणपतिर्द्वितीयो मन्त्रः॥२॥

द्वितीय गणपति मन्त्र—'ॐ रायस्पोषस्य ददिता निधिंदो रत्नधातुमान्। रक्षोहणो वलगहनो वक्रतुण्डाय हुम्।' यह इकतीस अक्षरों का मन्त्र अभीष्ट फल देने वाला है। इसके ऋष्यादि का न्यास पूर्व मन्त्र में कथित विधि से करके इस विधि से षडङ्गन्यास करना चाहिये—ॐ रायस्पोषस्य हृदयाय नमः॥१॥ ॐ ददिता शिरसे स्वाहा॥२॥ ॐ निधिदो रत्नधातुमान् शिखायै वषट्॥३॥ ॐ रक्षोहणो कवचाय हुम्॥४॥ ॐ वलगहनो नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ ॐ वक्रतुण्डाय हुं अस्त्राय फट्॥६॥ इस प्रकार षडङ्गन्यासोपरान्त अन्य सब विधि पूर्व के मन्त्र की भाँति करनी चाहिये। यह गणपति का द्वितीय मन्त्र है।

उच्छिष्टगणपतिमन्त्रविधानम्

अथोच्छिष्टगणपतिमन्त्रप्रयोगस्तत्रैव—'ॐ हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा' इति नवाक्षरो मन्त्रः। अस्य श्रीउच्छिष्ट-गणेशमन्त्रस्य कङ्कोलऋषिः, विराट् छन्दः, उच्छिष्टगणपतिर्देवता अखिलाप्तये जपे विनियोगः। ॐ कं कङ्कोलऋषये नमः शिरसि॥१॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥२॥ ॐ उच्छिष्टगणपतिदेवतायै नमः हृदये॥३॥ इति ऋष्यादिन्यासं कृत्वा हृदयादिन्यासं कुर्य्यात्—ॐ हस्ति हृदयाय नमः॥१॥ ॐ पिशाचि शिरसे स्वाहा॥२॥ ॐ लिखे शिखायै वषट्॥३॥ ॐ स्वाहा कवचाय हुम्॥४॥ ॐ हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा अस्त्राय फट्॥५॥ पञ्चाङ्गे नेत्रहीनं कार्य्यम्। इति पञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

चतुर्भुजं रक्ततनुं त्रिनेत्रं पाशाङ्कुशौ मोदकपात्रदन्तौ। करैर्दधानं सरसीरुहस्थमुन्मत्तमुच्छिष्टगणेशमीडे॥१॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे उच्छिष्टगणपतिं पूजयेत्। तत्र प्रथमावरणे पूर्ववत् हृदयाद्यङ्गानि सम्पूजयेत्॥१॥ द्वितीयावरणे अष्टसु दिक्षु—ॐ ब्राह्म्यै नमः॥१॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः॥२॥ ॐ कौमार्यै नमः॥३॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥४॥ ॐ वाराह्यै नमः॥५॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥६॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥७॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः॥८॥ इति पूजयेत्॥२॥ तृतीयावरणे दशसु दिक्षु—ॐ वक्रतुण्डाय नमः॥१॥ ॐ एकदंष्ट्राय नमः॥२॥ ॐ लम्बोदराय नमः॥३॥ ॐ विकटाय नमः॥४॥ ॐ धूम्रवर्णाय नमः॥५॥ ॐ विघ्नराजाय नमः॥६॥ ॐ गजाननाय नमः॥७॥ ॐ विनायकाय नमः॥८॥ ॐ गणपतये नमः॥९॥ ॐ हस्तिदन्ताय नमः॥१०॥ इति पूजयेत्॥३॥ चतुर्थावरणे पूर्वादिषु दिक्षु पूर्ववदिन्द्रादयो दशदिक्पालाः पूज्याः॥४॥ पञ्चमावरणे वज्राद्यायुधानि पूजयेत्। एवं सम्पूज्य 'ॐ हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा' इति लक्षमेकं मन्त्रान् जपेत्। ततो जपान्ते जपदशांशतस्तिलहोमं कृत्वा तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन विप्रांश्च भोजयेत्। एवं सिद्धे मन्त्रे काम्यान्प्रयोगान्मन्त्री साधयेत्। तत्प्रकारोऽपि (तत्रैव) स्वाङ्गुष्ठप्रमाणां रक्तचन्दनेन श्वेतार्केण वा गणेशप्रतिमां रम्यामुक्तलक्षणलक्षितां कृत्वा विधानेन प्रतिष्ठाप्य नित्यं मधुना तां संस्नाप्य कृष्णचतुर्दशीमारभ्य शुक्लचतुर्दशीपर्यन्तं सगुडं पायसं प्रत्यहं निवेद्य प्रत्यहं सहस्रमन्त्रान् जपेत्। जपान्ते प्रत्यहं तावत् सघृततिलाहुतिं दद्यात्।

गणेशोऽहमिति ध्यायन्नुच्छिष्टेनाऽऽवृतो रहः। पक्षाद्राज्यामवाप्नोति नृपजोऽन्योऽपि वा नरः॥
कुलालमृत्स्ना प्रतिमा पूजितैवं सुराज्यदा। वल्मीकमृत्कृता लाभमेवमिष्टा प्रयच्छति॥
गौडी सौभाग्यदा सैवं लावणी क्षोभयेदरीन्। निम्बूजा नाशयेच्छत्रून् प्रतिमेयं समर्चिता॥
मध्वक्तैर्होमतो लाजैर्वशयेदखिलं जगत्। सुप्तोऽधिशय्यमुच्छिष्टो जपञ्छत्रून् वशं नयेत्॥
कटुतैलान्वितै राजीपुष्पैर्विद्वेषयेदरीन्। द्यूते विवादे समरे युक्तोऽयं जयमावहेत्॥
कुबेराख्यमनोर्जापान्निधीनां स्वामितामियात्। लेभाते राज्यमनरि वानरेशविभीषणौ॥

रक्तवस्त्राङ्गरागाद्यस्ताम्बूलं निश्यदञ्जपेत्। यद्वा निवेदितं तस्मै मोदकं भक्षयञ्जपेत्॥
पिशितं वा फलं वापि तेन तेन बलिं हरेत्।

बलिमन्त्रोऽपि (तत्रैव)—'ॐ गं हं क्रौं ग्लौं उच्छिष्टगणेशाय महायक्षायायं बलिः' इत्येकोनविंशतिवर्णात्मको बलिमन्त्रः। इति उच्छिष्टगणपतिमन्त्रविधानम्।

उच्छिष्ट गणपति मन्त्र—'ॐ हस्तपिशाचिलिखे स्वाहा' यह नवाक्षर मन्त्र उच्छिष्टगणपति मन्त्र कहा जाता है। इसके विनियोग का विधान इस प्रकार है—'अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशमन्त्रस्य कङ्कोलऋषिः विराट् छन्दः, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, अखिलाप्तये जपे विनियोगः' कहकर पृथ्वी पर जल छोड़ना चाहिये। ऋष्यादि न्यास—'ॐ कं कङ्कोलऋषये नमः' से शिर में, 'ॐ विराट्छन्दसे नमः' से मुख में, 'ॐ उच्छिष्टगणपतिदेवतायै नमः' से हृदय में न्यास करे। फिर हृदयादिन्यास करे—'ॐ हस्ति हृदयाय नमः' से हृदय में, 'ॐ पिशाचि शिरसे स्वाहा' से शिरोन्यास करे। 'ॐ लिखे शिखायै वषट्' से शिखा में, 'ॐ स्वाहा कवचाय हुँ' से दोनों भुजाओं में, 'ॐ हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा' से अस्त्राय फट् करे। यदि पञ्चाङ्ग न्यास करना हो तो नेत्रन्यास (नेत्रत्रयाय वौषट्) नहीं करते हैं। इस प्रकार पञ्चाङ्ग न्यास करके ध्यान करे। ध्यानमन्त्र का भावार्थ इस प्रकार है—चार भुजाओं से युक्त रक्त शरीर वाले, तीन नेत्रों वाले, पाश एवं अङ्कुशधारी, मोदकपात्र को हाथों में धारण किये, कमलासन पर विराजमान, मतवाले उच्छिष्ट गणपति का ध्यान एवं पूजन करता हूँ। इस प्रकार ध्यान करके पूर्वकथित पीठ पर उच्छिष्टगणपति की पूजा करे। प्रथम आवरण में हृदयादि अङ्गों की पूजा करे। फिर द्वितीय आवरण में आठो दिशाओं में (ईशानादि क्रम से) ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णवै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ लक्ष्म्यै नमः—इन आठ मन्त्रों से आठ देवियों का पूजन करे। तीसरे आवरण में दशों दिशाओं में (पूर्वादि क्रम से) ॐ वक्रतुण्डाय नमः, ॐ एकदंष्ट्राय नमः, ॐ लम्बोदराय नमः, ॐ विकटाय नमः, ॐ धूम्रवर्णाय नमः, ॐ विघ्नराजाय नमः, ॐ गजाननाय नमः, ॐ विनायकाय नमः, ॐ गणपतये नमः तथा ॐ हस्तिदन्ताय नमः—इन मन्त्रों से पूजन करे। यन्त्र के चतुर्थावरण में पूर्व की भाँति इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करे। पाँचवें आवरण में उन दिक्पालों के वज्रादि आयुधों की पूजा (पूर्वादि क्रम से) करनी चाहिये।

मन्त्रजप—फिर 'ॐ हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा' इस मन्त्र का एक लाख की सङ्ख्या में जप करे। जप के अन्त में जप के दशांश सङ्ख्या में तिल (कृष्णतिल) से होम करे। तिलहोम की सङ्ख्या का दशांश ($\frac{१}{१०}$) तर्पण करे। तर्पण का दशांश मार्जन, उससे दशांश सङ्ख्या में ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। फिर अपनी कामना के अनुसार मन्त्र का प्रयोग करना चाहिये।

प्रयोगविधि—श्वेतार्क मूल की गणपति-प्रतिमा बनवाकर अथवा लाल चन्दन की सुन्दर गणपति-प्रतिमा बनवाकर विधानपूर्वक उसकी प्रतिष्ठा करे। उसे मधु से स्नान कराये तथा कृष्णपक्ष की चतुर्दशी से प्रारम्भ कर शुक्लपक्ष की चतुर्दशी-पर्यन्त प्रतिदिन गुड़ एवं खीर का भोग लगाये एवं प्रतिदिन उच्छिष्टगणपति के एक सहस्र मन्त्रों का जप करे। प्रतिदिन जपान्त में घृतमिश्रित काले तिल की आहुतियाँ दे। फिर 'मैं गणेश हूँ' ऐसा ध्यान कर एकान्त में (नैवेद्यादि के) उच्छिष्ट को शरीर में आवृत करे अथवा ऐसा ध्यान करे तो राजकुलोत्पन्न अथवा अन्य साधक व्यक्ति राज्य को प्राप्त कर लेता है। यदि कुम्हार की माटी से गणेशप्रतिमा बनाकर उसका पूजन किया जाय, तो वह सुराज्यदायक होती है। यदि बाँबी की मिट्टी से उच्छिष्टगणपति की प्रतिमा बनाकर पूजित की जाय तो इष्टलाभ को देती है। गुड़ से बनी प्रतिमा का पूजन सौभाग्यदायक तथा लवण (नमक) से बनी प्रतिमा का पूजन शत्रुक्षोभक होता है। निम्बू की गणेशप्रतिमा का पूजन शत्रुनाशक होता है। मधुमिश्रित लाजा का होम संसार को वश में

करता है। यदि शयन करते हुए साधक मन्त्र जपता है तो शत्रु वश में हो जाते हैं। कटु तैल तथा सरसों के फूलों का होम शत्रुओं में विद्वेषण कराता है। इस प्रयोग से जुआ, विवाद तथा युद्ध में विजय होती है। इस प्रयोग से कुबेर को निधियों का स्वामित्व प्राप्त हुआ था। इसी प्रयोग से विभीषण ने निष्कण्टक राज्य प्राप्त किया था। रक्त वस्त्र, अङ्गराग, ताम्बूल आदि को तथा मोदकों को अर्पित करके जपना चाहिये। लपसी या फल की बलि देनी चाहिये। 'ॐ गं हं क्रौं ग्लौं उच्छिष्टगणेशाय महायक्षाय बलिः' इस उन्नीस अक्षरों वाले मन्त्र से बलि देनी चाहिये।

उच्छिष्टगणपतेर्द्वितीयो मन्त्रः

अथोच्छिष्टगणपतिमन्त्रो द्वितीयोऽपि (तत्रैव)—ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आँ क्रीं ह्रीं गँ घे घे स्वाहा इति सप्तत्रिंशदक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य गणक ऋषिः, गायत्रीछन्दः, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, अखिलाप्तये जपे विनियोगः। ॐ गणकऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्री छन्दसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ उच्छिष्टगणतिदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ षडङ्गन्यासः। ॐ नमो भगवते हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ लम्बोदराय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ उच्छिष्टमहात्मने कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ आं क्रों ह्रीं गं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ घे घे स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गं कृत्वा ध्यायेत्—

शरान्धनुः पाशसृणी स्वहस्तैर्दधानमारक्तसरोरुहस्थम्। विवस्त्रपत्न्यां सुरतप्रवृत्तमुच्छिष्टमम्बासुतमाश्रयेऽहम्॥ १॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे गणपतिं सम्पूज्य पूर्ववल्लक्षावृत्त्या मन्त्रं जपेत्। ततो जपान्ते घृतेन दशांशहोमादिपुरश्चरणं समाप्य स्वाभीष्टसिद्धये वक्ष्यमाणविधानं कुर्य्यात्। तदुक्तं मन्त्रमहोदधौ—कृष्णाष्टम्यादिकृष्णाचतुर्दशीपर्य्यन्तं प्रत्यह-मष्टोत्तरसहस्रं जप्त्वा तद्दशांशेन घृतं हुत्वा तर्पयेत्। एवं कृतो हि मन्त्रोऽयं सर्वार्थसिद्धिं प्रयच्छति।

धनं धान्यं सुतान्पौत्रान्सौभाग्यमतुलं यशः। मूर्तिं कुर्य्याद्गणेशस्य शुभाहे निम्बदारुणा॥
प्राणप्रतिष्ठां कृत्वाथ तदग्रे मन्त्रमाजपेत्। यं ध्यात्वा दासवत्सोऽपि वश्यो भवति निश्चितम्॥
नदीजलं समादाय सप्तविंशतिसङ्ख्यया। मन्त्रयित्वा मुखं तेन प्रक्षाल्येशसभां व्रजेत्॥
पश्येद्य दृश्यते येन स वश्यो जायते क्षणात्। चतुःसहस्रधत्तूरपुष्पाणि मनुनार्पयेत्॥
गणेशाय नृपादीनां जनानां वश्यताकृते। सुन्दरीवामपादस्य रेणुमादाय तत्र तु॥
संस्थाप्य गणनाथस्य प्रतिमां प्रजपेन्मनुम्। तां ध्यात्वा रविसाहस्रं सा समायाति दूरतः॥
श्वेतार्केणाथ निम्बेन कृत्वा मूर्तिं धृतांशुकाम्। चतुर्थ्यां पूजयेद्रात्रौ रक्तैः कुसुमचन्दनैः॥
जप्त्वा सहस्रं तां मूर्तिं क्षिपेद्रात्रौ सरित्तटे। स्वेष्टं कार्य्यं समाचष्टे स्वप्ने तस्य गणाधिपः॥
सहस्रं निम्बकाष्ठानां होमादुच्चाटयेदरीन्। वज्रिणः समिधा होमाद्रिपुर्यमपुरं व्रजेत्॥
वानरस्यास्थि सञ्जप्तं क्षिप्तमुच्चाटयेद्गृहे। जप्तं नरास्थि कन्याया गृहे क्षिप्तं तदाप्तिकृत्॥
कुलालस्य मृदा स्त्रीणां वामपादस्य रेणुना। कृत्वा पुत्तलिकां तस्या हृदि स्त्रीनाम संल्लिखेत्॥
निखनेन्मन्त्रसञ्जप्तैर्न्निम्बकाष्ठैः क्षिताविमाम्। सोन्मत्ता भवति क्षिप्रमुद्धृतायां सुखं भवेत्॥
शत्रावेवं कृता सा तु लशुनेन समन्विता॥
शरावान्तर्गता सम्यक् पूजिता द्वारि विद्विषः। निखाता पक्षमात्रेण शत्रूच्चाटनकृत्स्मृता॥
विषमे समनुप्राप्ते सितार्कनिम्बदारुजम्। गणपं पूजितं सम्यक् कुसुमै रक्तचन्दनैः॥
मद्यभाण्डस्थितं हस्तमात्रे तं निखनेत्स्थले। तत्रोपविश्य प्रजपेन्मन्त्री नक्तं दिवा मनुम्॥
सप्ताहमध्ये नश्यन्ति सर्वे घोरा उपद्रवाः। शत्रवो वशतां यान्ति वर्द्धन्ते धनसम्पदः॥
दुष्टस्त्रीवामपादस्य रजसा निजदेहजैः। मलैर्मूत्रपुरीषाद्यैः कुम्भकारमृदापि च॥
एतैः कृत्वा गणेशस्य प्रतिमां मद्यभाण्डगाम्। सम्पूज्य निखनेद्भूमौ हस्तार्द्धे पूरिते पुनः॥

संस्थाप्य वह्नौ जुहुयात् कुसुमैर्हयमारजैः। सहस्त्रं सा भवेद्दासी तत्त्वाचमनसाधनैः॥

एवमादिप्रयोगाणां नवार्णेनापि साधयेत्।

इति उच्छिष्टगणपतिमन्त्रो द्वितीयः।

उच्छिष्टगणपति का द्वितीय मन्त्र—'ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रों ह्रीं गं घे घे स्वाहा' यह सैंतीस अक्षरों का मन्त्र है। इस मन्त्र के गणक ऋषि, गायत्री छन्द, उच्छिष्टगणपति देवता हैं। इसका विनियोग सम्पूर्ण काम्य पदार्थों की प्राप्ति के लिये किया जाता है। **ऋष्यादिन्यास**—ॐ गणक ऋषि को शिर से नमस्कार है॥ १॥ ॐ गायत्री छन्द को मुख से नमस्कार है॥ २॥ ॐ उच्छिष्टगणपति देवता को हृदय से नमस्कार है॥ ३॥ इस प्रकार के भावार्थ वाले मूलोक्त मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। **षडङ्गन्यास**—'ॐ नमो भगवते हृदयाय नमः' से हृदयन्यास एवं 'ॐ एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय शिरसे स्वाहा' से शिरोन्यास करे। ॐ लम्बोदराय शिखायै वषट् से शिखान्यास एवं 'ॐ उच्छिष्टमहात्मने कवचाय हुँ' से दोनों भुजाओं में न्यास करे। 'ॐ आं क्रों ह्रीं गं नेत्रत्रयाय वौषट्' से नेत्रों का एवं 'ॐ घे घे स्वाहा अस्त्राय फट्' से शिर से ऊपर से दक्षिण हस्त घुमाकर वाम हस्त पर ताली का शब्द करे। इस प्रकार षडङ्गन्यास करके उच्छिष्टगणपति का ध्यान करे। मूलोक्त ध्यानमन्त्र का भावार्थ इस प्रकार है—धनुष, बाण, पाश तथा सृणी (अङ्कुश) को हाथों में धारण किये हुए जो लाल कमल की आसन पर बैठे हैं तथा जो अपनी विवस्त्र पत्नी से मैथुन में प्रवृत्त हो रहे हैं, उन पार्वतीपुत्र की शरण मैं ग्रहण करता हूँ।

ऐसा ध्यान करके पूर्वोक्त पीठ पर गणपति का पूजन कर एक लाख की सङ्ख्या में मन्त्र का जप करे। जप की समाप्ति पर घृत से दशांश होमादि पुरश्चरण समाप्त कर अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये आगे वर्णित प्रयोग-विधि का उपयोग करे।

सिद्ध मन्त्र की प्रयोगविधि—कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि से प्रारम्भ कर कृष्ण चतुर्दशी-पर्यन्त प्रतिदिन एक सहस्र आठ की सङ्ख्या में ऊपर लिखित सैंतीस अक्षरों के उच्छिष्टगणपति मन्त्र का जप करके उसके दशांश (१०८ की सङ्ख्या) में घी से होम कर दशांश (१०) की सङ्ख्या में तर्पण करे। ऐसा करने से यह मन्त्र सर्वार्थ-सिद्धियाँ प्रदान करता है तथा धन-धान्य, सुत-पौत्र, सौभाग्य तथा अतुल यश भी देता है। शुभ दिन में नीम की लकड़ी से श्री गणेशजी की मूर्ति बनवाकर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा कर उसके आगे पूर्वोक्त मन्त्र का जप करना चाहिये। ऐसा करने पर साधक जिस व्यक्ति (स्त्री या पुरुष) का ध्यान करता है, वह व्यक्ति दास की भाँति साधक (मन्त्रजापक) के वश में हो जाता है, यह निश्चित है। अथवा सत्ताईस नदियों का जल लाकर उसे पूर्वोक्त मन्त्र से (१०८ वार) अभिमन्त्रित करके उस जल से साधक अपना मुख प्रक्षालित करे (धोये), फिर राजा की सभा में जाय तो साधक की दृष्टि जिस किसी व्यक्ति पर पड़ेगी, वही तत्क्षण वश में हो जायगा। अथवा चार सहस्र की सङ्ख्या में धत्तूरपुष्प श्री गणेशजी की कृपाप्राप्ति के लिये अर्पित करे तो राजा आदि विशिष्ट पुरुष वश में हो जाते हैं। जिस सुन्दरी स्त्री को वश में करना हो, उसके बाँयें पैर के नीचे की धूल लाकर रखकर उसके ऊपर श्री गणेशजी की प्रतिमा संस्थापित कर चौदह सहस्र की सङ्ख्या में मन्त्र जपना चाहिये। फिर उसका बारह सहस्र वार ध्यान करे (उसका नाम लेकर याद करे) तो वह दूर से ही दौड़ी चली आती है।

श्वेतार्क गणपति का प्रयोग—श्वेतार्क (सफेद आक) अथवा नीम के काठ से गणपति की मूर्ति बनाकर उसे अंशुक (श्वेत रेशमी वस्त्र) पहिना दे। कृष्णपक्ष की चतुर्थी की रात्रि में उसका पूजन लाल चन्दन एवं लाल

रङ्ग के फूलों से करके पूर्वकथित मन्त्र का एक सहस्र बार जप करके उस मूर्ति को रात में ही नदी के किनारे रख दे तो साधक के मन में चाहे गये कार्य की पूर्ति-हेतु गणेशजी स्वप्न में साधक को उपाय बता देते हैं।

उच्चाटन हेतु प्रयोग—यदि इस सिद्ध मन्त्र से नीमकाठ की एक सहस्र समिधाओं से (घृताक्त करके) होम करे तो शत्रुओं का उच्चाटन होता है। थूहर की समिधा से हवन (१००८ सङ्ख्या) में करने से शत्रु यमपुर को चला जाता है।

उच्चाटनार्थ तान्त्रिक प्रयोग—इस मन्त्र को जप कर उससे वानर (बन्दर) की हड्डी को अभिमन्त्रित कर उसे शत्रु के घर में फेंक दे या छिपा दे तो शत्रु का उच्चाटन होता है।

स्त्रीप्राप्ति-हेतु तान्त्रिक प्रयोग—मनुष्य की अस्थि को सिद्ध मन्त्र से अभिमन्त्रित कर उसे अभीष्ट कुमारी के घर में डाल दे तो वह साधक को प्राप्त हो जाती है। अथवा स्त्रियों के बाँयें पैर के नीचे की मिट्टी तथा कुम्हार की मिट्टी दोनों को मिलाकर एक पुत्तलिका (पुतली) बना ले; उस पुतली के हृदय में मनोवाञ्छित स्त्री का नाम लिख दे। फिर उच्छिष्टगणपति के पूर्वोक्त मन्त्र को जपते हुए नीम की लकड़ी की नोंक से भूमि को खोदकर उसमें उस पुत्तली को गाड़ दे और ऊपर से मिट्टी रख दे तो वह चाही गयी स्त्री पागल-सी होकर साधक के पास दौड़ी चली आती है।

यदि शत्रु के पैर की मिट्टी को कुम्हार के घर की मिट्टी के साथ मिलाकर उसी में लहसुन के कन्द को पीसकर पुतली बनायी जाय और उसके हृदय में शत्रु का नाम लिखकर पूजित करके शत्रु के घर के द्वार पर सकोरे में भूमि में नीम की लकड़ी की नोक से खोदकर गाड़ दी जाय तो एक पक्ष में शत्रु का उच्चाटन हो जाता है (वह शत्रु साधक की शरण में आ जाता है)।

शत्रु से उत्पन्न घोर सङ्कट की शान्ति के लिये—विषम स्थिति उत्पन्न होने पर श्वेतार्कमूल से अथवा नीम की लकड़ी से श्री गणपति की प्रतिमा बनाकर उसे रक्त पुष्प तथा रक्त चन्दन के द्वारा भली-भाँति पूजकर मद्यभाण्ड में (शराब से भरे बर्तन में) रखकर भूमि में हाथ भर गहरा गड्ढा खोदकर गाड़ दे। फिर वहाँ बैठकर साधक को निरन्तर चौदह अहोरात्र तक उक्त मन्त्र का जप करना चाहिये। इससे एक सप्ताह के भीतर ही सभी घोर उपद्रव नष्ट हो जाते हैं, शत्रु वश में हो जाते हैं तथा घर में धन-धान्य एवं सम्पत्ति की वृद्धि होने लगती है।

दुष्टा स्त्री के वशीकरणार्थ प्रयोग—जो स्त्री पति के वश में न हो, उसके वाम पाद की (बाँयें पैर के नीचे की) मिट्टी लेकर साधक स्वयं के शरीर के मल-मूत्रादि को उसमें मिलाकर फिर उसी में कुम्हार के चाक की मिट्टी भी मिला दे। इस मिश्रण से गणेशजी की प्रतिमा का निर्माण कर उसे मद्यभाण्ड (मदिरापूरित बर्तन) में रखकर पूजित करके भूमि में आधा हाथ गड्ढा खोद कर गाड़ दे और उसी भूमि पर लाल कनेर के पुष्पों से एक सहस्र आहुति हवन करे तो वह दासी की भाँति पति की आचमन इत्यादि से सेवा करने लगती है। इस प्रकार के प्रयोग नवार्ण मन्त्र से भी किये जा सकते हैं।

उच्छिष्टगणपतेस्तृतीयो मन्त्रः

अथ उच्छिष्टगणपतिमन्त्रस्तृतीयोऽपि तत्रैव; तद्यथा—ॐ हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रौँ ह्रीं क्लीं ह्रीं हूँ घे घे उच्छिष्टाय स्वाहा। अस्य मन्त्रस्य ऋष्यादिन्यासं पूर्वमन्त्रवत् कृत्वा मूलमन्त्रेण करन्यासं षडङ्गन्यासं च कुर्य्यात्॥

अथ षडङ्गन्यासः। ॐ हस्तिमुखाय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ लम्बोदराय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ उच्छिष्टमहात्मने शिखायै वषट्॥ ३॥ आं क्रौँ ह्रीं क्लीं ह्रीं हूँ कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ घे घे उच्छिष्टाय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ एवं षडङ्गन्यासं कुर्य्यात्। अन्यत् सर्वं पूर्ववज्ज्ञेयम्।

उच्छिष्टगजवक्त्रस्य मन्त्रेष्वेषु न शोधनम्। सिद्धादिचक्रं मासादेः प्राप्तास्ते सिद्धिदा गुरोः॥ १॥
मनवोऽमी सदा गोप्या न प्रकाश्या यतस्ततः। परीक्षिताय शिष्याय प्रदेया निजसूनवे॥ २॥

तीसरा उच्छिष्ट गणपति मन्त्रप्रयोग—'ॐ हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्ट महात्मने आं क्रौं ह्रीं क्लीं ह्रीं हूं घे घे उच्छिष्टाय स्वाहा' यह मन्त्र है। विनियोग—ॐ अस्य मन्त्रस्य गणक ऋषिः गायत्री छन्दः उच्छिष्टगणपतिर्देवता अखिलाप्तये जपे विनियोगः कहकर विनियोग का जल छोड़े। फिर पूर्वकथित द्वितीय मन्त्र की भाँति ऋष्यादि न्यास करके मूल मन्त्र से करन्यास तथा षडङ्गन्यास करे। षडङ्गन्यास—'ॐ हस्तिमुखाय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ लम्बोदराय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ उच्छिष्टमहात्मने शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ आं क्रौं ह्रीं क्लीं ह्रीं हूं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ घेघे उच्छिष्टाय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ इन मन्त्रों से षडङ्गन्यास करे। इसके सिद्ध करने का शेष विधान द्वितीय मन्त्र की भाँति है। प्रयोग-विधि भी उसी प्रकार है। इसमें किसी प्रकार के शोधन की आवश्यकता नहीं है। यह गुरु की कृपा से ही सिद्ध होता है; अतः इसे सदैव शिष्य की परीक्षा करके तभी उसे दीक्षित करना चाहिये।

लक्ष्मीविनायकमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ—'ॐ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा' इत्यष्टाविंशतिवर्णो लक्ष्मीविनायकमन्त्रः। अस्य लक्ष्मीविनायकमन्त्रस्य अन्तर्यामी ऋषिर्गायत्री छन्दः। लक्ष्मीविनायको देवता, श्रीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ अन्तर्यामिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ लक्ष्मीविनायकदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ श्रीं बीजाय नमो गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहाशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ षडङ्गन्यासः। ॐ श्रां गाँ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ श्रीं गीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ श्रूं गूँ शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ श्रैं गैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ श्रौं गौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ श्रं गँ अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गं कृत्वा ध्यायेत्—

अथ ध्यानम्—

दन्ताभये चक्रवरौ दधानं कराग्रगं स्वर्णघटं त्रिनेत्रम्।
धृताब्जयालिङ्गितमब्धिपुत्र्या लक्ष्मीगणेशं कनकाभमीडे॥ १॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे लक्ष्मीगणेशं सम्पूज्य मध्ये षट्कोणमण्डले पूर्ववत् हृदयाद्यङ्गानि सम्पूज्य अष्टदलेषु ॐ बलायै नमः॥ १॥ ॐ विमलायै नमः॥ २॥ ॐ कमलायै नमः॥ ३॥ ॐ वनमालिकायै नमः॥ ४॥ ॐ विभीषिकायै नमः॥ ५॥ ॐ मालिकायै नमः॥ ६॥ ॐ शाङ्कर्यै नमः॥ ७॥ ॐ वसुमालिकायै नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ शक्तिः सम्पूज्य तत्रैव दक्षिणपार्श्वे ॐ शङ्खाय नमः॥ १॥ वामपार्श्वे ॐ पद्मनिधये नमः॥ २॥ इति पूजयेत्। ततो भूपुरे पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिलोकपालान् तद्बहिरस्त्राणि च पूर्ववत्पूजयेत्। ततश्चतुर्लक्षावृत्त्या मन्त्रं जप्त्वा तद्दशांशेन बिल्ववृक्षसमिद्भिर्होमं कृत्वा तद्दशांशतस्तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन विप्रांश्च भोजयेत्।

एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति। ऊरुमात्रे जले स्थित्वा मन्त्री ध्यात्वार्कमण्डले॥
एवं त्रिलक्षं जपतो धनवृद्धिः प्रजायते। बिल्वमूलं समास्थाय तावज्जप्ते फलं हि तत्॥
अशोककाष्ठैर्ज्वलिते वह्नावाज्याक्ततण्डुलैः। होमतो वशयेद्विश्वमर्ककाष्ठे शुचावपि॥
खदिराग्नौ नरपतिं लक्ष्मीं पायसहोमतः॥

इति लक्ष्मीविनायकप्रयोगः।

लक्ष्मीविनायक मन्त्र-प्रयोग—'ॐ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा' यह अट्ठाईस अक्षरों वाला लक्ष्मीविनायक मन्त्र है। विनियोग—'अस्य लक्ष्मीविनायकमन्त्रस्य अन्तर्यामी ऋषिः गायत्री

छन्दः लक्ष्मीविनायक देवता, श्रीं बीजम् स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। ऋष्यादि न्यास—'ॐ अन्तर्यामिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ लक्ष्मीविनायकदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ श्रीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। षडङ्ग न्यास—'ॐ श्रां गाँ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ श्रीँ गीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ श्रूं गूँ शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ श्रैँ गैँ कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ श्रौं गौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ श्रं गँ अस्त्राय फट्॥ ६॥' इन मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर 'दन्ताभये चक्रवरौ०' इत्यादि मन्त्र से ध्यान करे। फिर पूर्वोक्त पीठ पर लक्ष्मी एवं गणेश की पूजा कर षट्कोण मण्डल के मध्य में हृदय आदि अङ्गों को पूजकर मूलोक्त 'ॐ बलायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ शक्तियों की पूजा आठो दलों पर करे। फिर उसके दक्षिण पार्श्व में 'ॐ शङ्खाय नमः' तथा वामपार्श्व में 'ॐ पद्मनिधये नमः' मन्त्रों से पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्व आदि दिशाओं में आठ इन्द्रादि लोकपालों को तथा उनके बाहर की ओर उनके अस्त्रों की पूजा करे। फिर चार लाख की आवृत्ति में मन्त्र का जप करने के उपरान्त उसके दशांश (चालीस सहस्र) की सङ्ख्या में बेलवृक्ष की समिधाओं से हवन करके उसके दशांश तर्पण, उसके दशांश मार्जन तथा उसके दशमांश ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने के उपरान्त मन्त्र का प्रयोग करना चाहिये।

सिद्ध मन्त्र की प्रयोगविधि—ऊरुमात्र (घुटनों से ऊपर तथा कमर से नीचे) जल में खड़े होकर साधक को सूर्यमण्डल का ध्यान करके तीन लाख जप से धनवृद्धि होती है। इसी प्रकार बेलवृक्ष की जड़ में बैठकर भी जप करने का वही फल होता है। अशोकवृक्ष की समिधा को घृत से डुबोकर चावलों के साथ होम करने से संसार वश में हो जाता है। आक की समिधा से अग्नि में होम करने से तथा पायस होम करने से राजा को लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

त्रैलोक्यमोहनगणपतिमन्त्रप्रयोगः

अथ त्रैलोक्यमोहनगणपतिप्रयोगः मन्त्रमहोदधौ—'ॐ वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लीँ ह्रीँ श्रीँ गं गणपते वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा' इति त्रयस्त्रिंशद्वर्णात्मको मन्त्रः। अस्य त्रैलोक्यमोहनकरगणेशमन्त्रस्य गणकऋषिः। गायत्री छन्दः त्रैलोक्यमोहनकरो गणेशो देवता ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ऋष्यादिन्यासं कृत्वा षडङ्गं कुर्यात्।

अथ षडङ्गन्यासः। ॐ वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लीँ ह्रीँ श्रीँ गं हृदयाय नमः॥ १॥ गणपतये शिरसे स्वाहा॥ २॥ वरवरद शिखायै वषट्॥ ३॥ सर्वजनं कवचाय हुम्॥ ४॥ मे वशमानय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

गदाबीजपूरे धनुः शूलचक्रे सरोजोत्पले पाशधन्यैकदन्तान्
करैः सन्दधानं स्वशुण्डाग्रराजन्मणीकुम्भमङ्काधिरूढं स्वपत्न्या।
सरोजन्मना भूषणानां भरेणोज्ज्वलद्धस्ततन्व्या समालिङ्गिताङ्गम्
करीन्द्राननं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं जगन्मोहनं रक्तकान्तिं भजे तम्॥ १॥

एवं ध्यात्वा पूर्वोदिते पीठे गणनायकं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तत्र मध्ये षट्कोणमण्डले पूर्ववत् हृदयाद्यङ्गानि सम्पूज्य अष्टदलेषु—ॐ वामायै नमः॥ १॥ ज्येष्ठायै नमः॥ २॥ ॐ रौद्र्यै नमः॥ ३॥ ॐ काल्यै नमः॥ ४॥ ॐ कलविकरिण्यै नमः॥ ५॥ ॐ बलप्रमथिन्यै नमः॥ ६॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः॥ ७॥ ॐ मनोन्मन्यै नमः॥ ८॥ ततः पूर्वादिचतुर्दिक्षु—पूर्वे ॐ प्रमोदाय नमः॥ १॥ दक्षिणे ॐ सुमुखाय नमः॥ २॥ पश्चिमे ॐ दुर्मुखाय नमः॥ ३॥ उत्तरे ॐ विघ्ननाशकाय नमः॥ ४॥ ततो दलाग्रेषु—ॐ आं ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ ईं माहेश्वर्यै नमः॥ २॥ ॐ ऊँ कौमार्यै नमः॥ ३॥ ॐ ऋृं वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ लृं वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ ऐं इन्द्राण्यै नमः॥ ६॥ ॐ औं चामुण्डायै नमः॥ ७॥ ॐ अः लक्ष्म्यै नमः॥ ८॥ इति मातृः सम्पूज्य भूपुरे पूर्वादिषु पूर्ववत् इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बहिः तदायुधान्यपि च

पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा चतुर्लक्षवारं मन्त्रं जप्त्वा तद्दशांशेन पूर्वोक्तैरष्टद्रव्यैर्हुत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जन-ब्राह्मणभोजनरूपकर्म कुर्यात्। एवं सिद्धे मन्त्रे स्वेष्टप्रयोगान् साधयेत्।

वशयेत्कमलैर्भूपान्मन्त्रिणः कुमुदैर्हुतैः। समिद्भिरश्वलदलसमुद्भूतैर्द्धरासुरान् ॥ १ ॥
उदुम्बरोत्थैर्नृपतीन् प्लक्षैर्वाटैर्विशोन्तिमान्। क्षौद्रेण कनकप्राप्तिर्गोप्राप्तिः पयसा गवाम्॥ २ ॥
ऋद्धिर्दध्यौदनैरन्नं घृतैः श्रीर्वैतसैर्जलम्।

त्रैलोक्यमोहन गणपति मन्त्र—'ॐ वक्रतुण्डायैकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपते वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा' यह तैंतीस (३३) अक्षरों का मन्त्र है। विनियोग—'अस्य त्रैलोक्यमोहनकरगणेशमन्त्रस्य गणक ऋषिः गायत्री छन्दः त्रैलोक्यमोहनकरो गणेशो देवता ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' ऐसा कहकर विनियोग-हेतु जल छोड़ना चाहिये।

षडङ्गन्यास—मूलपाठ में लिखित छः मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करे तथा फिर गणेश जी का ध्यान करे। मूल में लिखित 'गदाबीजपूरे धनुः शूलचक्रे०' इत्यादि एक श्लोक से ध्यान करे। फिर पीठ पर पूर्व की ओर उदित गणेश जी को पूजकर फिर आवरणपूजा करे। उस पीठ पर बने यन्त्र में जो मध्य में षट्कोण मण्डल है, उसपर हृदयादि अङ्गों को पूजकर फिर उसके आठ दलों पर 'ॐ वामायै नमः ॥ १ ॥ ज्येष्ठायै नमः ॥ २ ॥ ॐ रौद्र्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ काल्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ कलविकरिण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ बलप्रमथिन्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ मनोन्मन्यै नमः ॥ ८ ॥' इन आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर पूर्वादि चारो दिशाओं में क्रमशः—ॐ प्रमोदाय नमः ॥ १ ॥ ॐ सुमुखाय नमः ॥ २ ॥ ॐ दुर्मुखाय नमः ॥ ३ ॥ तथा ॐ विघ्ननाशकाय नमः ॥ ४ ॥ इन चार मन्त्रों से प्रदक्षिणक्रम से पूजन करे। फिर आठ दलाग्रों में प्रदक्षिणक्रम से ॐ आं ब्राह्म्यै नमः ॥ १ ॥ ॐ ईं माहेश्वर्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ ऊं कौमार्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ ॠं वैष्णव्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ ॡं वाराह्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ ऐं इन्द्राण्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ औं चामुण्डायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ अः लक्ष्म्यै नमः ॥ ८ ॥' इन आठ मन्त्रों से मातृगणों को पूजकर फिर भूपुर में पूर्वादि दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से पूर्व की भाँति इन्द्रादि दिक्पालों तथा उनके दश आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार आवरणपूजा करके फिर चार लाख बार त्रैलोक्यमोहनगणपति मन्त्र का जप करना चाहिये। जप की सङ्ख्या का दशांश अर्थात् ४०,००० (चालीस सहस्र) हवन पूर्वकथित द्रव्यों से करे। फिर हवन की सङ्ख्या का दशमांश (अर्थात् चार सहस्र) तर्पण, फिर उसका दशमांश (अर्थात् चार सौ) मार्जन करे तथा उसका दशमांश (चालीस) ब्राह्मणों को भोजन कराये। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से अपने अभीष्ट सिद्धि-हेतु प्रयोग करे। कमल के होम से राजाओं को, पीपल की समिधा से देवताओं को, ऊमर की समिधा से नेताओं को, पाकर से वैश्यों को तथा वाट (काँटेदार) समिधा से शूद्रों को वश में करते हैं। मधु के होम से स्वर्ण-प्राप्ति तथा गोदुग्ध के होम से गायों की प्राप्ति होती है।

हरिद्रागणपतिमन्त्रप्रयोगः

अथ हरिद्रागणपतिप्रयोगः—ॐ हुं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वरवरद सर्वजनहृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा ॥ ३२ ॥ अस्य हरिद्रागणनायकमन्त्रस्य मदन-ऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। हरिद्रागणनायको देवता। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ मदनऋषये नमः शिरसि ॥ १ ॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे ॥ २ ॥ ॐ हरिद्रागणनायकदेवतायै नमः हृदये ॥ ३ ॥ ॐ हुं गं ग्लौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ हरिद्रागणपतये तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ वरवरद मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ सर्वजनहृदयम् अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ स्तम्भय स्तम्भय कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ इति करन्यासः।

अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः—ॐ हुं गं ग्लौं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ हरिद्रागणपतये शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वरवरद शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ सर्वजनहृदयं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ स्तम्भय स्तम्भय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

पाशाङ्कुशौ मोदकमेकदन्तं करैर्दधानं कनकासनस्थम्। हारिद्रखण्डप्रतिमं त्रिनेत्रं पीतांशुकं रात्रिगणेशमीडे॥ १॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे सम्पूज्य पूर्ववत् आवरणपूजां कृत्वा चतुर्लक्षवारं मन्त्रं जप्त्वा जपान्ते हरिद्रामिश्रितैस्तण्डुलैर्दशांशहोमं कृत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्य्यात्।

एवमाराधितो मन्त्रः सिद्धो यच्छेन्मनोरथान्। शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु कन्यापिष्टहरिद्रया॥
विलिप्याङ्गं जले स्नात्वा पूजयेद्गणनायकम्। तर्पयित्वा पुरस्तस्य सहस्रं साष्टकं जपेत्॥
शतं हुत्वा साज्यापूपैर्भोजयेद् ब्रह्मचारिणः। कुमारीनपि संतोष्य गुरुं प्राप्नोति वाञ्छितम्॥
लाजैः कन्यामवाप्नोति कन्यापि लभते वरम्। वन्ध्या नारी रजःस्नाता पूजयित्वा गणाधिपम्॥
पलप्रमाणगोमूत्रे पिष्टाः सिन्धुवचानिशाः। सहस्रं मन्त्रयेत्कन्या वटून् संभोज्य मोदकैः॥
पीत्वा तदौषधं पुत्रं लभते गुणसागरम्। वाणीस्तम्भं रिपुस्तम्भं कुर्य्यान्मनुरुपासितः॥
जलाग्निचौरसिंहास्त्रप्रमुखानपि रोधयेत्। प्रोक्ता एते गणेशस्य मन्त्रा इष्टमभीप्सता॥
गोपनीया न दुष्टेभ्यो वदनीयाः कथञ्चन॥

इति मन्त्रमहोदधौ हरिद्रागणपतिमन्त्रविधानं समाप्तम्।

हरिद्रागणपति मन्त्रप्रयोग—'ॐ हुं गं ग्लौं हरिद्रा गणपतये वरवरद सर्वजनहृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा' यह मन्त्र है। **विनियोग**—'अस्य हरिद्रागणनायकमन्त्रस्य मदनऋषिः अनुष्टुप्छन्दः हरिद्रागणनायको देवता, ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' ऐसा कहकर विनियोग के लिये जल छोड़े। **ऋष्यादि न्यास**—'ॐ मदनऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ हरिद्रागणनायकदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥' इन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। **करन्यास**—'ॐ हुं गं ग्लौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ हरिद्रागणपतये तर्ज्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ वरवरद मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सर्वजनहृदयम् अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ स्तम्भयस्तम्भय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ तथा ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥' इन छः मन्त्रों से क्रमशः दोनों हाथों के अङ्गूठे, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा हथेलियों के पृष्ठभाग पर न्यास करे। **हृदयादि षडङ्गन्यासः**—'ॐ हुं गं ग्लौं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ हरिद्रागणपतये शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वरवरद शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ सर्वजनहृदयं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ स्तम्भय-स्तम्भय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥' इन छः मन्त्रों से षडङ्गन्यास करे। फिर इस प्रकार ध्यान करे—पाश, अङ्कुश, मोदक तथा एकदन्त को अपने हाथों में धारण किये हुए, स्वर्णनिर्मित आसन पर बैठे हुए, हल्दी के समान रङ्ग वाले, तीन नेत्रों वाले, पीले रेशमी वस्त्र को धारण किये हुए रात्रिगणेश की पूजा-ध्यान करता हूँ। इस प्रकार ध्यान कर पूर्वोक्त विधि से निर्मित पीठ एवं यन्त्र (पीछे चित्र देखें) की पूजा तथा आवरणपूजा करे। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध हो जाता है तथा मनोरथों को पूरा करता है। चार लाख जप तथा तदनुसार होमादि करके मन्त्र सिद्ध होता है।

प्रयोगविधि—शुक्लपक्ष की चतुर्थी को किसी कन्या के द्वारा हल्दी पिसवाकर अपने शरीर में लगाकर स्नान कर लेना चाहिये; फिर गणेशजी की पूजा करनी चाहिये। उन्हें नैवेद्यादि से तृप्त करके उनके आगे बैठकर एक सहस्र आठ की सङ्ख्या में मन्त्रजप करे। एक सौ आठ आहुति घृत की देकर फिर मालपुओं से ब्रह्मचारी वटुकों

को भोजन कराये। कन्याओं को भी भोजन एवं दान से तृप्त करे। अपने गुरु को भी सन्तुष्ट करे तो वाञ्छित फल की प्राप्ति होती है।

लाजा होम करने से वर को कन्या की तथा कन्या को वर की प्राप्ति होती है। यदि वन्ध्या स्त्री रजस्वला होने के उपरान्त गणेश जी की (हरिद्रागणपति की) पूजा करके सेंधानमक, वच तथा हल्दी को 'हरिद्रागणपति मन्त्र' का एक सहस्र जप करके कन्या एवं बालकों को लड्डुओं का भोजन कराने के उपरान्त उस औषधि का सेवन करे तो गुणवान् पुत्र प्राप्त होता है।

अन्य प्रयोग—चौदह सहस्र की सङ्ख्या में इस मन्त्र का प्रयोग करके वाणीस्तम्भन, शत्रुस्तम्भन, जलस्तम्भन, अग्निस्तम्भन, चौरस्तम्भन, हिंसक पशु आदि का भी स्तम्भन होता है। यह गणेश मन्त्र गोपनीय कहा गया है। इसे दुष्टों को कभी नहीं बताना चाहिये।

उच्छिष्टगणपतिकवचम्

अथ उच्छिष्टगणपतिकवचम्; उक्तं च रुद्रयामले—

देव्युवाच—

देव देव जगन्नाथ सृष्टिस्थितिलयात्मक। विना ध्यानं विना मन्त्रं विना होमं विना जपम्॥ १॥
यस्य स्मरणमात्रेण लभ्यते शीघ्रचितिन्तम्। तदेव श्रोतुमिच्छामि कथयस्व जगत्प्रभो॥ २॥

उच्छिष्टगणपतिकवच—देवी ने कहा—हे देवाधिदेव! जगत् के स्वामी! सृष्टि, स्थिति एवं लय के कारक प्रभो! बिना ध्यान के, बिना मन्त्र के, बिना होम के तथा बिना जप किये हुए जिसके स्मरणमात्र से शीघ्र ही मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है, वह सब सुनने की इच्छा है। वह सब जानकारी वर्णित करें॥ १-२॥

ईश्वर उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गुह्याद्गुह्यतरं महत्। उच्छिष्टगणनाथस्य कवचं सर्वसिद्धिदम्॥ ३॥
अल्पायासैर्विना कष्टैर्जपमात्रेण सिद्धिदम्। एकान्ते निर्जनेऽरण्ये गह्वरे च रणाङ्गणे॥ ४॥
सिन्धुतीरे च गाङ्गेये कूले वृक्षतले जले। सर्वदेवालये तीर्थे लब्ध्वा सम्यक् जपं चरेत्॥ ५॥
स्नानशौचादिकं नास्ति नास्ति निर्बन्धनं प्रिये। दारिद्र्यान्तकरं शीघ्रं सर्वतत्त्वं जनप्रिये॥ ६॥
सहस्रशपथं कृत्वा यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति। निन्दकाय कुशिष्याय खलाय कुटिलाय च॥ ७॥
दुष्टाय परशिष्याय घातकाय शठाय च। वञ्चकाय वरघ्नाय ब्राह्मणीगमनाय च॥ ८॥
अशक्ताय च क्रूराय गुरुद्रोहरताय च। न दातव्यं न दातव्यं न दातव्यं कदाचन॥ ९॥
गुरुभक्ताय दातव्यं सच्छिष्याय विशेषतः। तेषां सिध्यन्ति शीघ्रेण ह्यन्यथा न च सिध्यति॥ १०॥
गुरुसन्तोषमात्रेण कलौ प्रत्यक्षसिद्धिदम्। देहोच्छिष्टैः प्रजप्तव्यं तथोच्छिष्टैर्महामनुम्॥ ११॥
आकाशे च फलं प्राप्तं नान्यथा वचनं मम। एषा राजवती विद्या विना पुण्यं न लभ्यते॥ १२॥
अथ वक्ष्यामि देवेशि कवचं मन्त्रपूर्वकम्। यस्य विज्ञानमात्रेण राजभोगफलप्रदम्॥ १३॥

भगवान् शंकर (ईश्वर) ने कहा—हे देवि! सुनो; अब मैं गोपनीय से भी अधिक गोपनीय महान् ज्ञान तुम्हें बता रहा हूँ। उच्छिष्ट गणपति कवच सभी सिद्धियों का देने वाला है। यह कवच थोड़े से परिश्रम-मात्र करने से बिना किसी कष्ट के जपमात्र से सफलता देने वाला है। इसका जप किसी एकान्त स्थान में, निर्जन वन में, गुफा में या युद्ध के मैदान में या समुद्रतट अथवा नदीतट अथवा वृक्ष के नीचे अथवा जल में अथवा किसी देवालय में अथवा तीर्थस्थान में सम्यक् प्रकार से करना चाहिये। हे प्रिये! इसके लिये स्नान तथा शौचादि का नियम नहीं है; और न ही किसी प्रकार

का बन्धन है। यह कवच दरिद्रता को शीघ्र दूर करने वाला सारतत्त्व है। यह कवच निन्दक, कुशिष्य, खल, कुटिल, दुष्ट, परशिष्य, घातक, शठ, वञ्चक, वरघ्न (श्रेष्ठ पुरुषों को हानि पहुँचाने वाला), ब्राह्मणी के साथ मैथुन करने वाला, अशक्त, क्रूर, गुरुद्रोही को कभी नहीं बताना चाहिये। भले ही ऐसा आचरण करने वाला व्यक्ति एक सहस्र बार सौगन्ध (शपथ) खाकर मुझमें (शिव में) अपनी श्रद्धा ही क्यों न प्रकट करे। इस कवच को विशेषकर गुरुभक्त श्रेष्ठ शिष्य को ही देना चाहिये। ऐसे ही शिष्यों को यह (कवच) सिद्ध होता है; अन्यों को नहीं। यह गुरु के सन्तुष्ट होने-मात्र से कलियुग में प्रत्यक्ष सफलता देने वाला है। श्रेष्ठ आचरण वाले को इसे उच्छिष्ट (बिना स्नानादि के) शरीर से जपना चाहिये। 'इसका फल अचानक प्राप्त होता है' यह मेरा कथन अन्यथा नहीं है। यह राजवती विद्या है, जो बिना पुण्य के प्राप्त नहीं होती है। हे देवेशि! अब मैं मन्त्रपूर्वक कवच का वर्णन करता हूँ, जिसके विज्ञानमात्र (जाननेमात्र) से राजभोग (वैभव) का फल प्राप्त होता है॥ ३-१३॥

(यह कवच की विधि एवं फलश्रुति है। अब आगे कवच लिखा जाता है। इसमें कुल ६० श्लोक हैं, जिनका मूल पाठ शुद्ध रूप में साधक को करना चाहिये)।

कवचम्—

ऋषिर्मे गणकः पातु शिरश्चैव निरन्तरम्। त्राहि मां देवि गायत्री ऋषिच्छन्दः सदा मुखे॥ १४॥
हृदये पातु मां नित्यमुच्छिष्टगणदेवता। गुह्ये रक्षतु तद्बीजं स्वाहाशक्तिश्च पादयोः॥ १५॥
कामकीलकसर्वाङ्गे विनियोगश्च सर्वदा। पार्श्वद्वये सदा पातु स्वशक्तिं गणनायकः॥ १६॥
शिखायां पातु तद्बीजं भ्रूमध्ये तारबीजकम्। हस्तिवक्त्राय शिरसि लम्बोदर ललाटके॥ १७॥
उच्छिष्टो नेत्रयोः पातु कर्णौ पातु महात्मने। पाशाङ्कुशमहाबीजं नासिकायां च रक्षतु॥ १८॥
भूतीश्वरः परां पातु आस्यं जिह्वां स्वयंवपुः। तद्बीजं पातु मां नित्यं ग्रीवायां कण्ठदेशके॥ १९॥
गं बीजं च तथा रक्षेत्तथा त्वग्रे च पृष्ठके। सर्वकामश्च हृत् पातु पातु मां च करद्वये॥ २०॥

कवच—गणक ऋषि इस कवच के ऋषि हैं, वे मेरे शिर की रक्षा निरन्तर करें। गायत्री ऋषि छन्द मेरे मुख की रक्षा सदैव करती रहें। उच्छिष्ट गणपति देवता मेरे हृदय की रक्षा करें। उनका बीज मेरे गुह्य स्थल की रक्षा करें। स्वाहा शक्ति पैरों की रक्षा करें। कामकीलक तथा विनियोग सर्वदा मेरे सर्वाङ्ग की रक्षा करें। गणनायक अपनी शक्ति से मेरे दोनों पार्श्वों की रक्षा करें। उनका बीज शिखा की रक्षा करें तथा तारबीज भ्रूमध्य की रक्षा करें। गजमुख शिर की तथा लम्बोदर ललाट की रक्षा करें। उच्छिष्ट नेत्रों की रक्षा तथा महात्मन् कानों की रक्षा करें। पाश अङ्कुश महाबीज नासिका की रक्षा करे। भूतीश्वर मेरे पराक्रम की एवं मुख तथा जीभ की रक्षा स्वयंवपु करें। उनका बीज मेरी ग्रीवा एवं कण्ठप्रदेश की नित्य रक्षा करें। गं बीज आगे तथा पीछे (पीठ) की रक्षा करें। सर्वकाम हृदय की तथा दोनों हाथों की रक्षा करें॥ १४-२०॥

उच्छिष्टाय च हृदये वह्निबीजं तथोदरे। मायाबीजं तथा कट्यां द्वावूरू सिद्धिदायकः॥ २१॥
जङ्घायां गणनाथश्च पादौ पातु विनायकः। शिरसः पादपर्यन्तमुच्छिष्टगणनायकः॥ २२॥
आपादमस्तकान्तं च उमापुत्रश्च पातु माम्। दिशोऽष्टौ च तथाकाशे पाताले विदिशोऽष्टके॥ २३॥
अहर्निशं च मां पातु मदचञ्चललोचनः। जलेऽनले च सङ्ग्रामे दुष्टकारागृहे वने॥ २४॥
राजद्वारपथे घोरे पातु मां गणनायकः। इदं तु कवचं गुह्यं मम वक्त्राद्विनिर्गतम्॥ २५॥
त्रैलोक्ये सततं पातु द्विभुजश्च चतुर्भुजः। बाह्यमाभ्यन्तरं पातु सिद्धिबुद्धिविनायकः॥ २६॥

सर्वसिद्धिप्रदं देवि कवचं त्वृद्धिसिद्धिदम्। एकान्ते प्रजपेन्मन्त्रं कवचं युक्तिसंयुतम्॥ २७॥
इदं रहस्यं कवचमौच्छिष्टगणनायकम्। सर्वकर्म्मसु देवेशि इदं कवचनायकम्॥ २८॥
एतत्कवचमाहात्म्यं वर्णितुं नैव शक्यते। धर्मार्थकाममोक्षं च नानाफलप्रदं नृणाम्॥ २९॥
शिवपुत्रः सदा पातु पातु मां च सुरार्चितः। गजाननः सदा पातु गणराजश्च पातु माम्॥ ३०॥

उच्छिष्ट हृदय की तथा अग्निबीज उदर की रक्षा करें। मायाबीज कमर तथा दोनों ऊरुओं (कमर से घुटने तक का पैरों का भाग) को सिद्धिदायक रक्षित करें। जङ्घा (पिण्डलियों) की रक्षा गणनाथ करें तथा विनायक पैरों की रक्षा करें। शिर से पैर तक की रक्षा उच्छिष्टगणेश करें। पैरों से लेकर ऊपर शिर तक उमापुत्र मेरी रक्षा करें। दिशाओं-विदिशाओं तथा आकाश एवं पाताल में भी वे मेरी रक्षा करें। मदचञ्चल लोचन रात-दिन मेरी रक्षा करें। जल में, अग्नि में, संग्राम (युद्ध) में, दुष्टों के द्वारा प्रदत्त कारावास में, वन में, राजमार्ग में तथा घोर सङ्कट में गणनाथ मेरी रक्षा करें। यह गुप्त कवच मेरे (शिवजी के) के मुख से निकला है। द्विभुज तथा चतुर्भुज तीनों लोकों में मेरी निरन्तर रक्षा करें। सिद्धिबुद्धि विनायक मेरे बाहर तथा भीतर की रक्षा करें। हे देवि! यह कवच सभी प्रकार की सिद्धि को देने वाला तथा ऋद्धि-सिद्धि प्रदान करने वाला है। युक्तिपूर्वक इस कवच का एकान्त स्थान में जप करना चाहिये। यह उच्छिष्टगणपति का रहस्ययुक्त कवच है। हे देवेशि! यह कवच अन्य सभी कवचों में श्रेष्ठ है। इस कवच की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। यह धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष से सम्बन्धित अनेक प्रकार के फलों को मनुष्यों को प्रदान करता है। शिवपुत्र सदैव मेरी रक्षा करें। देवताओं द्वारा पूजित (सुरार्चित) सदैव मेरी रक्षा करते रहें; गजानन तथा गणराज मेरी रक्षा करें॥ २१-३०॥

सदा शक्तिरतः पातु पातु मां कामविह्वलः। सर्वाभरणभूषाढ्यः पातु मां सिन्दुरार्चितः॥ ३१॥
पञ्चमोदकरः पातु पातु मां पार्वतीसुतः। पाशाङ्कुशधरः पातु पातु मां च धनेश्वरः॥ ३२॥
गदाधरः सदा पातु पातु मां काममोहितः। नग्ननारीरतः पातु पातु मां च गणेश्वरः॥ ३३॥
अतर्क्यवरदः पातु शक्तियुक्तः सदावतु। भालचन्द्रः सदा पातु नानारत्नविभूषितः॥ ३४॥
उच्छिष्टगणनाथश्च मदाघूर्णितलोचनः। नारीयोनिरसास्वादः पातु मां गजकर्णकः॥ ३५॥
प्रसन्नवदनः पातु पातु मां भगवल्लभः। जटाधरः सदा पातु पातु मां च किरीटिकः॥ ३६॥
पद्मासनस्थितः पातु रक्तवर्णश्च पातु माम्। नग्नसामप्रदोन्मत्तः पातु मां गणदैवतम्॥ ३७॥
वामाङ्गे सुन्दरीयुक्तः पातु मां मन्मथः प्रभुः। क्षेत्रपः पिशितं पातु पातु मां श्रुतिपाठकः॥ ३८॥
भूषणाढ्यस्तु मां पातु नानाभोगसमन्वितः। स्मिताननः सदा पातु श्रीगणेशकुलान्वितः॥ ३९॥
श्रीरक्तचन्दनमयः सुलक्षणगणेश्वरः। श्वेतार्कगणनाथश्च हरिद्रागणनायकः॥ ४०॥

शक्तिरत सदैव रक्षा करें। कामविह्वल मेरी रक्षा करें। सर्वाभरणभूषाढ्य तथा सिन्दूर्चित मेरी रक्षा करें। पञ्चमोद मेरी रक्षा करें। पार्वतीसुत मेरी रक्षा करें। पाशाङ्कुशधर मेरी रक्षा करें। धनेश्वर मेरी रक्षा करें। गदाधर मेरी सदैव रक्षा करें। काममोहित मेरी रक्षा करें। नग्न नारीरत मेरी रक्षा करें। गणेश्वर मेरी रक्षा करें। अतर्क्यवरद रक्षा करें। शक्तियुक्त सदैव रक्षा करें। भालचन्द्र सदैव रक्षा करें। नानारत्न-विभूषित मेरी रक्षा करें। उच्छिष्ट गणनाथ मदाघूर्णित लोचन नारीयोनि रसास्वादन तथा गजकर्मक मेरी रक्षा करें। प्रसन्नवदन रक्षा करें। भगवल्लभ मेरी रक्षा करें। जटाधर मेरी रक्षा करें। किरीटिक रक्षा करें। पद्मासनस्थित रक्षा करें तथा रक्तवर्ण मेरी रक्षा करें। नग्नसामप्रद, उन्मत्त गणदैवत मेरी रक्षा करें। वामाङ्ग में सुन्दरी से युक्त मन्मथ प्रभु मेरी रक्षा करें। क्षेत्रप मेरे शरीर के पिशित (मांस) की रक्षा करें। श्रुतिपाठक मेरी रक्षा करें। नाना भोगों से समन्वित तथा भूषणाढ्य मेरी रक्षा करें। श्रीगणेश कुलान्वित

स्मितानन मेरी रक्षा करें। श्री रक्तचन्दनमय सुलक्षण गणेश्वर, श्वेतार्क गणनाथ तथा हरिद्रागणनायक मेरी रक्षा करें॥ ३१-४०॥

पारिभद्रगणेशश्च पातु सप्तगणेश्वरः। प्रवालकगणाध्यक्षो गजदन्तो गणेश्वरः॥ ४१॥
हरबीजगणेशश्च भद्राक्षगणनायकः। दिव्यौषधीसमुद्भूतो गणेशश्चिन्तितप्रदः॥ ४२॥
लवणस्य गणाध्यक्षो मृत्तिकागणनायकः। तण्डुलाक्षगणाध्यक्षो प्रवालाक्षगणेश्वरः॥ ४३॥
स्फटिकाक्षगणाध्यक्षो रुद्राक्षगणदैवतः। नवरत्नगणेशश्च आदिदेवो गणेश्वरः॥ ४४॥
पञ्चाननश्चतुर्वक्त्रो षडाननगणेश्वरः। मयूरवाहनः पातु पातु मां मृषकासनः॥ ४५॥
पातु मां देवदेवेशः पातु मामृषिपूजितः। पातु मां सर्वदा देवो देवदानवपूजितः॥ ४६॥
त्रैलोक्यपूजितो देवः पातु मां च विभुः प्रभुः। रङ्गस्थं च सदा पातु सागरस्थं सदावतु॥ ४७॥
भूमिष्ठं च सदा पातु पातालस्थं सदावतु। अन्तरिक्षे सदा पातु आकाशस्थं सदावतु॥ ४८॥
चतुष्पथे सदा पातु त्रिपथस्थं च पाहि माम्। बिल्वस्थं च वनस्थं च पाहि मां सर्वतस्तनूम्॥ ४९॥
राजद्वारस्थितं पातु पातु मां शीघ्रसिद्धिदः। भवानीपूजितः पातु ब्रह्मविष्णुशिवार्चितः॥ ५०॥

पारिभद्रगणेश तथा सप्तगणेश रक्षा करें। प्रवालक गणाध्यक्ष, गजदन्त गणेश्वर, हरबीजगणेश तथा भद्राक्ष गणनायक दिव्यौषधि से उत्पन्न गणेश वाञ्छित कामना की पूर्ति करे। लवणनिर्मित गणेश, मृत्तिका-निर्मित गणेश, तण्डुलाक्ष गणेश, प्रवालाक्ष गणेश, स्फटिक के गणेश, रुद्राक्ष गणेश, नवरत्न गणेश तथा आदिदेव गणेश, पञ्चमुख गणेश, चतुर्मुख गणेश, षण्मुख गणेश, मयूरवाहन गणेश तथा मूषकासन गणेश मेरी रक्षा करें। देवदेवेश मेरी रक्षा करें। ऋषिपूजित मेरी रक्षा करें। देव-दानवपूजित देव मेरी सदैव रक्षा करें। त्रैलोक्यपूजित देव तथा विभु एवं प्रभु गणेश मेरी सदैव रक्षा करें। रङ्गस्थ गणेश सदैव रक्षा करें तथा सागरस्थ गणेश सदैव रक्षा करें। भूमिस्थित गणेश सदा रक्षा करें तथा पातालस्थ सदा रक्षा करें। अन्तरिक्ष में सदैव रक्षा करें। आकाश में सदैव रक्षा करें। चौराहे पर सदैव रक्षा करें। तिराहे पर सदैव रक्षा करें। बिल्वस्थित तथा वनस्थित मेरे सम्पूर्ण शरीर की रक्षा करें। राजद्वार-स्थित रक्षा करें। शीघ्र सिद्धिप्रद मेरी शीघ्र रक्षा करें। भवानी द्वारा पूजित रक्षा करें तथा ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव द्वारा पूजित रक्षा करें॥ ४१-५०॥

इदं तु कवचं देवि पठनात्सर्वसिद्धिदम्। उच्छिष्टगणनाथस्य समन्त्रं कवचं परम्॥ ५१॥
स्मरणाद्भूभुजत्वं च लभ्यते साङ्गकं ध्रुवम्। वाचा सिद्धिकरं शीघ्रं परसैन्यविदारणम्॥ ५२॥
प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने दिवा रात्रौ पठेन्नरः। चतुर्थ्यां दिवसे रात्रौ पूजने मानदायकम्॥ ५३॥
सर्वसौभाग्यदं शीघ्रं दारिद्र्यार्णवघातकम्। सुदारासु प्रजासौख्यं सर्वसिद्धिकरं नृणाम्॥ ५४॥
जलेऽथवानलेऽरण्ये सिन्धुतीरे सरित्तटे। श्मशाने दूरदेशे च रणे पर्वतगह्वरे॥ ५५॥
राजद्वारे भये घोरे निर्भयो जायते ध्रुवम्। सागरे च महाशीते दुर्भिक्षे दुष्टसङ्कटे॥ ५६॥
भूतप्रेतपिशाचादियक्षराक्षसजे भये। राक्षसीयक्षिणीक्रूरा शाकिनीडाकिनीगणाः॥ ५७॥
राजमृत्युहरं देवि कवचं कामधेनुवत्। अनन्तफलदं देवि मतिं मोक्षं च पार्वति॥ ५८॥
कवचेन विना मन्त्रं यो जपेद्गणनायकम्। इह जन्मनि पापिष्ठो जन्मान्ते मूषको भवेत्॥ ५९॥
इति परमरहस्यं देवदेवार्चनं च कवचपरमदिव्यं पार्वतीपुत्ररूपम्।
पठति परमभोगैश्वर्यमोक्षप्रदं च लभति सकलसौख्यं शक्तिपुत्रप्रसादात्॥ ६०॥

इति श्रीरुद्रयामलतन्त्रे उमामहेश्वरसंवादे उच्छिष्टगणेशकवचं समाप्तम्॥ शुभमस्तु॥

हे देवि! यह कवच पाठ करने से सभी प्रकार की सफलता देने वाला है। यह उच्छिष्टगणपति का मन्त्रसहित कवच परम उत्तम है। इसके स्मरण करने से साङ्गोपाङ्ग राज्य की प्राप्ति निश्चित रूप से होती है। यह वाणी को सिद्ध करने वाला तथा शीघ्र ही पराई सेना को विदारित करने वाला (भगाने वाला) है। इसे प्रातःकाल, मध्याह्नकाल तथा सायंकाल में मनुष्य को पढ़ना चाहिये। चतुर्थी में दिन-रात इसका पाठ तथा गणपति-पूजन सम्मान प्राप्त कराने वाला है। यह शीघ्र ही सभी प्रकार का सौभाग्य देने वाला तथा दरिद्रतारूपी समुद्र को नष्ट करने वाला, श्रेष्ठ स्त्रियों में उत्तम सन्तान का सुख देने वाला तथा पाठकर्त्ताओं को सभी प्रकार की सफलता देने वाला है। जल में अथवा अग्नि में, वन में, समुद्रतट पर, नदीतट पर, श्मशान में, दूरदेश में, युद्ध में, पर्वत की चोटी एवं गुफाओं में तथा राजद्वार में जब घोर भय प्राप्त हो तो इसका पाठकर्त्ता निश्चित ही निर्भय हो जाता है। समुद्र में, भयंकर ठण्ढ में, दुर्भिक्ष (अकाल) में, दुष्टों द्वारा उत्पन्न सङ्कट (साम्प्रदायिक दङ्गे) में, भूत-प्रेत-पिशाचादि के भय में, राक्षसी, यक्षिणी, क्रूरा, शाकिनी, डाकिनी आदि गण (आत्मघाती हमले आदि में) से उत्पन्न भय में तथा राजादि के द्वारा मृत्युभय होने पर हे देवि! यह कवच कामधेनु के समान अनन्त फलदायक, बुद्धिदायक तथा बन्धन से मोक्षदायक है। जो उच्छिष्ट गणपति के मन्त्र को बिना कवच के जपता है, वह इस जन्म में पापी होकर अगले जन्म में चूहा होता है। यह पार्वतीपुत्र-रूप देव-देवियों से अर्चित रहस्यपूर्ण गणपति का दिव्य कवच है। इसको जो पढ़ता है, उसे परम भोग, ऐश्वर्य तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है। शक्तिपुत्र (गणेश) की कृपा से सम्पूर्ण सुख इसके पाठ से प्राप्त होते हैं॥ ५१-६०॥

हरिद्रागणेशकवचम्

ईश्वर उवाच—

शृणु वक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिकरं प्रिये। पठित्वा पाठयित्वा च मुच्यते सर्वसङ्कटात्॥ १॥
अज्ञात्वा कवचं देवि गणेशस्य मनुं जपेत्। सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि॥ २॥

श्री हरिद्रागणेश कवच—श्री शिवजी बोले—हे प्रिये! सुनो; मैं यह सभी प्रकार की सफलताओं को देने वाला कवच बताता हूँ, जिसके पाठ करने तथा कराने से सम्पूर्ण सङ्कटों से छुटकारा मिल जाता है। इस कवच को बिना जाने जो मनुष्य यदि हरिद्रागणपति का मन्त्र जपता है, उस साधक को करोड़ों कल्पों में भी सफलता नहीं मिलती॥ १-२॥

ॐ आमोदश्च शिरः पातु प्रमोदश्च शिखोपरि। संमोदो भ्रूयुगे पातु भ्रूमध्ये च गणाधिपः॥ ३॥
गणक्रीडश्चाक्षियुगं नासायां गणनायकः। गणक्रीडार्चितः पातु वदने सर्वसिद्धये॥ ४॥
जिह्वायां सुमुखः पातु ग्रीवायां दुर्मुखः सदा। विघ्नेशो हृदये पातु विघ्ननाशश्च वक्षसि॥ ५॥
गणानां नायकः पातु बाहुयुग्मे सदा मम। विघ्नकर्ता च उदरे विघ्नहर्ता च लिङ्गके॥ ६॥
गजवक्त्रः कटौ देशे एकदन्तो नितम्बके। लम्बोदरः सदा पातु गुह्यदेशे ममारुणः॥ ७॥
व्यालयज्ञोपवीती मां पातु पादयुगे सदा। जापकः सर्वदा पातु जानुजङ्घे गणाधिपः॥ ८॥
हारिद्रः सर्वदा पातु सर्वाङ्गे गणनायकः। य इदं प्रपठेन्नित्यं गणेशस्य महेश्वरि॥ ९॥
कवचं सर्वसिद्धाख्यं सर्वविघ्नविनाशनम्। सर्वसिद्धिकरं साक्षात्सर्वपापविमोचनम्॥ १०॥
सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात्सर्वतापविमोक्षणम्। सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात्सर्वशत्रुक्षयङ्करम्॥ ११॥
ग्रहपीडा ज्वरा रोगा ये चान्ये गुह्यकादयः। पठनाद्धारणाद्देवि नाशमायान्ति तत्क्षणात्॥ १२॥
धनधान्यकरं देवि कवचं सुरपूजितम्। समो नास्ति महेशानि त्रैलोक्ये कवचस्य च॥ १३॥

हारिद्रस्य महेशानि कवचस्य च भूतले। किमन्यैरसदालापैर्यत्रायुर्व्ययमाप्नुयात् ॥ १४॥

इति विश्वसारतन्त्रे हरिद्रागणेशकवचं समाप्तम्।

ॐ आमोद शिर की रक्षा करें। प्रमोद शिखा की रक्षा करें। संमोद दोनों भौंहों की रक्षा करें। भौंहों के बीच में गणाधिप रक्षा करें। गणक्रीड़ दोनों नेत्रों की तथा नासिका की गणनायक रक्षा करें। गणक्रीडार्चित मुख की (चेहरे की) रक्षा कर सर्वसिद्धि प्रदान करे। जीभ की रक्षा सुमुख तथा ग्रीवा की रक्षा सदैव दुर्मुख करे। विघ्नेश हृदय की तथा विघ्ननाशक वक्ष (छाती) की रक्षा करें। गणों के नायक सदैव मेरी दोनों भुजाओं की रक्षा करें। विघ्नकर्ता उदर की तथा विघ्नहर्ता लिङ्ग की रक्षा करें। गजमुख कटिप्रदेश की एवं एकदन्त नितम्बों की रक्षा करें। लम्बोदर सदैव मेरे गुह्य देश (गुप्ताङ्ग) की रक्षा करें। अरुण व्याल के यज्ञोपवीत को धारण करने वाले मेरे दोनों पैरों की सदैव रक्षा करें। जापक सदैव जानुओं (घुटनों) की तथा जङ्घाओं (पिण्डलियों) की रक्षा गणाधिप करे। हारिद्रगणनायक सर्वाङ्ग की रक्षा करें। हे महेश्वरि! जो इसका पाठ करता है, उसके लिये यह कवच सर्वसिद्धिदायक, सर्वविघ्नविनाशक, सम्पूर्ण सफलतादायक तथा पाप का साक्षात् विमोचन करता है। यह सम्पूर्ण सम्पत्तिदायक तथा प्रत्यक्ष रूप से ग्रहपीड़ा, ज्वर, रोगों के समूह तथा अन्य गुह्यकादि की जो भी पीड़ा है, वह हे देवि! इसके पढ़ने तथा स्मरण करने से तुरन्त नष्ट होती है। यह देवताओं द्वारा पूजित कवच धन-धान्यप्रद है। हे महेशानि! इस कवच के समान अन्य कोई कवच तीनों लोकों में नहीं है। इस हारिद्रगणपति कवच के इस पृथ्वी पर होते हुए हे पार्वति! अन्य प्रकार के मनोरञ्जक आलापों में आयु को क्यों व्यर्थ व्यय किया जाय॥ ३-१४॥

पार्थिवगणेशपूजनविधानम्

अथ पार्थिवगणेशविधानं रुद्रयामले—

महादेव उवाच—

यथा पार्थिवलिङ्गन्तु सर्वसिद्धिविधायकम्। तथा विघ्नेश्वरं देवं पार्थिवं सर्वकामदम्॥
निर्विघ्नं जायते कार्य्यं सर्वां सिद्धिं पुमाँल्लभेत्। षट् कर्माणि तथा वक्ष्ये शृणुष्वैकमना भव॥

श्री गणेश जी का पार्थिव पूजन—महादेव जी बोले—जिस प्रकार पार्थिव शिवलिङ्ग सभी कामनाओं को पूर्ण करता है, उसी प्रकार श्रीगणेश जी का पार्थिव पूजन करना सर्वकामनाओं को पूर्ण करने वाला है। इसके साधन के सभी कार्य निर्विघ्न पूर्ण होते हैं तथा उसे सभी प्रकार की सफलता प्राप्त होती है। अब हे पार्वति! एकाग्रचित्त होकर सुनो; मैं षट्कर्मों का वर्णन कर रहा हूँ।

रक्तोपचारैः सिन्दूरैः रक्तमाल्याम्बरैस्तथा। जपापुष्पैः कारवीरैः कुसुमैः क्षीरपायसैः॥
सम्पूज्य वश्यतामेति यं यं चिन्तयते नरः। शुक्लमाल्यैः शुक्लवस्त्रै रोचनैर्दधिमिश्रितैः॥
मालतीकुसुमैर्धूपैर्दशाङ्गैः शान्तिलब्धये। कवितायाः पटुत्वं च जायते नात्र संशयः॥

वशीकरण—रक्तोपचार, सिन्दूर, रक्तमाल्याम्बरों के द्वारा गुड़हल तथा कनेर के फूलों, दूध तथा खीर से गणेश जी की पूजा करे तो साधक जिस-जिस का चिन्तन करता है, वह-वह प्राणी वश में हो जाता है। शुक्ल माला, शुक्ल वस्त्र, दधिमिश्रित रोचन, मालतीपुष्प, दशाङ्ग धूप आदि से पूजा करने से शान्ति प्राप्त होती है। इस विधि से पूजा करने से मनुष्य काव्यरचना में निपुण हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है।

मोहने मधुभिः स्नाप्य मधुपायसमर्पयेत्। असितैः कुसुमैः पूज्यो दमने नासितागुरुम्॥
समारोप्यार्चयेद्भक्त्या त्रैलोक्यं मोहयेत् क्षणात्। स्तम्भने निशया युक्तैरुपचारैः समर्चयेत्॥
आढकी भक्तनैवेद्यैः श्वेतदूर्वाभिरेव च। कारयेन्निम्बजरसं धूपं शत्रोस्तु तद्भवेत्॥

मारणे माहिषे चर्मण्यास्थायासितकम्बलम्। धत्तूरैरर्चयेत्पुष्पैः सर्षपाक्षतमिश्रितैः॥
नैवेद्यं गुडसम्मिश्रं महिषीक्षीरसंयुतम्। भक्तं शाल्युद्भवं देयं छागमांससमन्वितम्॥
अभिषेकस्तु तैलेन महागणपतौ भवेत्। धूपं श्मशानजतरोः पुष्पैः सद्यः समर्पयेत्॥
एवं गणाधिपं कृत्वा पूजयेत्पार्थिवं नरः। यं यं काममभिध्यायेत्तं तं सद्यः समाप्नुयात्॥

मोहन—मोहनकर्म के लिये पार्थिव गणपति को मधु से स्नान कराकर उसे मधु एवं पायस का नैवेद्य प्रदान करना चाहिये। श्वेत पुष्पों से ही पूजा करे एवं दमन कर्म में कृष्ण अगुरु का धूप दे। यदि भक्तिपूर्वक गणेश की पूजा की जाय तो क्षण भर में ही तीनों लोकों को मोह लेता है।

स्तम्भन कर्म में हल्दी के द्वारा पूजन करना चाहिये। आढकी (अरहर) की दाल तथा भात का नैवेद्य तथा श्वेत दूर्वा का अर्पण करने से एवं नीम के पत्तों, छाल आदि की धूप देने से शत्रु का स्तम्भन हो जाता है।

मारण कर्म के लिये भैंस के चमड़े पर काला कम्बल बिछाकर गणेश जी को स्थापित कर धतूरे के फूलों तथा सरसों मिश्रित चावल से पूजा करनी चाहिये। गुड़मिश्रित नैवेद्य, भैंस का दूध, शालि चावलों का भात तथा बकरे का मांस समर्पित करना चाहिये। फिर तैल से गणेश जी का अभिषेक करे तथा श्मशान में खड़े हुए वृक्ष की धूप तथा वहीं पर उत्पन्न ताजे फूलों को समर्पित करे। ऐसी विधि से गणेश जी का पार्थिव पूजन साधक को करना चाहिये तो वह जो-जो कामना करता है, वह वह फलीभूत होती है, शीघ्र पूर्ण होती है।

(पद्मपुराणेऽपि)—

सहस्रं दशसाहस्रं लक्षं कोटिं तथैव च। यः करोति गणेशानां पार्थिवानां नरोत्तमः॥ १॥
सर्वसिद्धिमवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा।

पद्मपुराण के अनुसार पार्थिव पूजन का फल—जो राजा एक सहस्र अथवा दश सहस्र अथवा एक लाख अथवा एक करोड़ की सङ्ख्या में गणेश का पार्थिव पूजन करता है, वह सभी प्रकार की सफलता प्राप्त करता है, इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिये।

अथ सर्वकार्यसिद्धिप्रदपार्थिवगणेशपूजाप्रयोगः। सुमुहूर्ते प्रातर्नित्यावश्यकं कृत्वा शिवालयादिषु कृतगोमयमण्डलं स्वासने उदङ्मुख उपविश्य भस्मत्रिपुण्ड्रं कृत्वा मूलेन आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य अमुककामनासिद्ध्यर्थं पार्थिवगणपतिपूजां करिष्ये—इति सङ्कल्प्य तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकागणेशादि-कलामातृकान्यासं च पूर्ववत्कुर्यात्। ततः अश्वत्थमूलजां तुलसीमूलजां शुद्धस्थलजां वा मृदमानीय 'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका०' इति धरां प्रार्थ्य ॐ गं गणपतये नमः मृदाहरणम्। ॐ गीं गणपतये नमः सेचनम्। ॐ गूं हेरम्बाय नमः संयोजनम्। ॐ गैं धरणीधराय नमः। ॐ गौं क्षिप्रप्रसादनाय नमः इति चतुर्भुजामेकदन्तां सुन्दरीं मूर्तिं कृत्वा 'ॐ गः सर्वसिद्धिप्रदाय नमः' इति मस्तकोपरि रक्ताक्षतान् दत्त्वा हृदिस्थं देवं सञ्चिन्त्य मानसोपचारैः सम्पूज्य नासारन्ध्रेणाञ्जलिस्थसाक्षतपुष्पैः संयोज्य देवमस्तके अक्षतपुष्पादि निधाय प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्।

सर्वसिद्धिप्रद पार्थिव गणेश-पूजन की प्रयोगविधि—शुभ मुहूर्त में प्रातःकाल उठकर आवश्यक नित्यकर्म कर शिवालय आदि स्थान में गोबर से लीपकर चौक पूरकर अपने आसन पर उत्तराभिमुख बैठकर भस्म का त्रिपुण्ड लगाकर मूल मन्त्र से आचमन एवं प्राणायाम कर देशकालोच्चारणपूर्वक 'अमुककामनासिद्ध्यर्थं पार्थिवगणपतिपूजां करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके उसके अङ्गस्वरूप भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा तथा अन्तर्मातृका न्यास—ये सब कर्म पूर्व की भाँति करने चाहिये। फिर पीपल वृक्ष की जड़ की अथवा तुलसी के जड़ की अथवा

किसी शुद्ध पवित्र स्थान की मिट्टी लाकर—'ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वञ्च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥' इस मन्त्र से पृथ्वी की प्रार्थना करे। 'ॐ गं गणपतये नमः' इस मन्त्र से मिट्टी ले। 'ॐ गीं गणपतये नमः' कहकर मिट्टी में जल डालकर गीला करे। 'ॐ गूं हेरम्बाय नमः' से मिट्टी साने। 'ॐ गैं धरणीधराय नमः' तथा 'ॐ गौं क्षिप्रप्रसादनाय नमः' कहकर गणेश जी की चतुर्भुज तथा एकदन्त मूर्ति बनाकर 'ॐ गः सर्वसिद्धिप्रदाय नमः' से उसके मस्तक पर लाल चावल के अक्षत चढ़ाकर हृदय में बैठे देव का मानसोपचारों से पूजन कर अपनी अञ्जलि में अक्षत-सहित पुष्प लेकर नाक के समीप ले जाकर देव (गणेश) के मस्तिष्क पर अक्षत-पुष्पादि रखकर प्राणप्रतिष्ठा करे।

अथ प्राणप्रतिष्ठा—अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः। ऋग्यजुःसामानि च्छन्दांसि। प्राणशक्तिर्देवता। आँ बीजम्। ह्रीँ शक्तिः। क्रौँ कीलकम्। देवे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। ऋष्यादिन्यासं कृत्वा—ॐ आँ ह्रीँ क्रौँ यँरँलँवँशँषँसँहौँ हंसः १४ अस्या गणपतिप्रतिमायाः प्राणा इह प्राणाः॥ १॥ ॐ आँ ह्रीँ क्रौँ यँरँलँवँशँषँसँहौँ हंसः १४ अस्या गणपतिप्रतिमायाः जीव इह स्थितः॥ २॥ पुनः आँ ह्रीँ क्रौँ यँरँलँवँशँषँसँहौँ हंसः १४ अस्या गणपतिप्रतिमायाः सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥ ३॥ इति त्रिः जपेदिति प्राणप्रतिष्ठा। ततः स्ववामभागे कलशं सम्पूज्य देवं ध्यायेत्। स्वशरीरे देवे च न्यासं कुर्यात्। ॐ गं गणपतये नमः। अस्य श्रीमहागणपतिमन्त्रस्य गणक ऋषिः। निचृद्गायत्रीछन्दः। गणपतिर्देवता। गं बीजम्। ॐ शक्तिः। स्वाहा कीलकम्। न्यासे विनियोगः। ऋष्यादि न्यस्य ॐ गां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ गीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ गूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ गैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ गः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

रक्तो रक्ताङ्गरागांशुककुसुमयुतस्तुन्दिलश्चन्द्रमौलिर्नेत्रैर्युक्तस्त्रिभिर्वामनकरचरणो बीजपुष्पान्तनासः।
हस्ताग्रक्लृप्त पाशाङ्कुशरदवरदो नागवक्त्रोऽहिभूषो देवः पद्मासनो नो भवतु सुरनुतो भूतये विघ्नराजः॥ १॥

इति ध्यात्वा 'ॐ गणपतये नमः' इति मूलमन्त्रेण वक्ष्यमाणनाममन्त्रेण च पूजयेत्। ॐ गणञ्जयाय नमः आवाहनम्॥ १॥ ॐ गणपतये नमः आसनं॥ २॥ ॐ हेरम्बाय नमः पाद्यं॥ ३॥ ॐ धरणीधराय नमः अर्घ्यं॥ ४॥ ॐ महागणपतये नमः मधुपर्क्कं॥ ५॥ ॐ यक्षेश्वराय नमः आचमनीयं॥ ६॥ ॐ क्षिप्रप्रसादाय नमः मलापकर्षणं॥ ७॥ ॐ अमोघसिद्धये नमः पञ्चामृतस्नानं॥ ८॥ ॐ अमृताय नमः शुद्धोदकस्नानं कारयेत्॥ ९॥ ततो रुद्रेण गाणपत्येनाथर्वशीर्षेण वा महाभिषेकः कार्यः। (अथर्वशीर्षं तु अग्रे वक्ष्यते)। ॐ मन्त्राय नमः वस्त्रं॥ १०॥ ॐ चिन्तामणये नमः उपवीतं॥ ११॥ ॐ निधये नमः गन्धं॥ १२॥ ॐ सुमङ्गलाय नमः रक्ताक्षतान्॥ १३॥ ॐ बीजाय नमः पुष्पं॥ १४॥ ॐ आशापूरकाय नमः धूपं॥ १५॥ ॐ वरदाय नमः दीपं॥ १६॥ ॐ शिवाय नमः महानैवेद्यं॥ १७॥ ॐ काश्यपाय नमः ताम्बूलं॥ १८॥ ॐ नन्दनाय नमः दक्षिणां॥ १९॥ ॐ वाचासिद्धाय नमः फलं॥ २०॥ ॐ ढौण्ढिविनायकाय नमः नीराजनं॥ २१॥ ॐ सर्वसङ्कटनाशनाय नमः मन्त्रपुष्पाञ्जलिं॥ २२॥ ॐ कुमारगुरवे नमः इति तिस्रः प्रदक्षिणाः॥ २३॥ ॐ अघनाशिने नमः नमस्कारं समर्पयामि॥ २४॥ एवं चतुर्विंशत्युपचारान्समर्प्य ततो गणञ्जयादिढौण्ढिविनायकान्तैरेकविंशतिश्वेतदूर्वाङ्कुरान् अभावे अन्यान् समर्प्य मूलमन्त्रमष्टोत्तरशतं जप्त्वा विशेषार्घ्यं दद्यात्।

ॐ रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक। भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुरग्रज प्रभो। वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद॥
गृहाणार्घ्यमिदं देव सर्वदेवनमस्कृत। अनेन सफलार्घ्येण फलदोऽस्तु सदा मम॥
इत्यर्घ्यं दत्त्वा—
ॐ अङ्गहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं गणाधिप। पूजितोऽसि यथा देव तत् क्षमस्व जगत्पते॥
इति प्रार्थयेत्।

ततो विसर्जनम्—एवंप्रकारेण सहस्रमयुतं लक्षं कोटिं वा पार्थिवगणपतीन् कृत्वाऽन्ते माघादिशुभकाले उद्यापनं कुर्यात्। तदुद्यापनविधानं तु मत्कृते उद्यापनप्रकाशे द्रष्टव्यम्।

प्राणप्रतिष्ठा—'अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजम् ह्रौं शक्तिः क्रौं कीलकम् देवे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। ऋष्यादि न्यास करके 'ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः अस्या गणपतिप्रतिमायाः प्राण इह प्राणाः॥ १॥' फिर 'ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः अस्या गणपतिप्रतिमायाः जीव इह स्थितः॥ २॥' कहे। फिर 'ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः अस्या गणपतिप्रतिमायाः सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥ ३॥' इन तीन मन्त्रों के जपने से प्राणप्रतिष्ठा होती है। फिर साधक अपने वाम भाग में रखे कलश का पूजन कर देव का ध्यान करे। अपने शरीर तथा देवमूर्ति में 'ॐ गं गणपतये नमः' से न्यास करे। 'अस्य श्रीमहागणपतिमन्त्रस्य०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र से जल छोड़कर विनियोग करे। फिर ऋष्यादि का न्यास कर षडङ्ग न्यास मूलोक्त 'ॐ गां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करे फिर ध्यान करे—'ॐ रक्तो रक्ताङ्गरागांशुककुसुमयुतस्तुन्दिलश्चन्द्रमौलिर्नेत्रैर्युक्तस्त्रिभिर्वामनकरचरणो बीजपुष्पान्तनासः। हस्ताग्रक्लृप्तपाशाङ्कुशरदवरदो नागवक्त्रोऽहिभूषो देवः पद्मासनो नो भवतु सुरनुतो भूतये विघ्नराजः॥' यह ध्यानमन्त्र है। फिर 'ॐ गणपतये नमः' यह मूल मन्त्र है इससे तथा मूल पाठ में लिखित 'ॐ गणंजयाय नमः आवाहयामि' इत्यादि चौबीस मन्त्रों से चौबीस उपचारों द्वारा गणेश जी की पूजा करे। फिर 'गणपति अथर्वशीर्ष' (आगे वर्णित है) से श्री गणेश जी का अभिषेक करे (यह अभिषेक नौ उपचारों के उपरान्त करे तथा अभिषेक के पश्चात् शेष पन्द्रह उपचारों से पूजन कर चौबीस उपचारों को पूरा करना चाहिये)। फिर गणेश जी के 'गणञ्जय' से लेकर विनायक-पर्यन्त जो इक्कीस नाम हैं, उनके द्वारा दूर्वाङ्कुर समर्पित करे। फिर गणेश जी के मूल मन्त्र को १०८ बार (एक सौ आठ बार) जप कर मूल में लिखित 'ॐ रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष०' इत्यादि तीन श्लोकों से (सुगन्धित पुष्पमिश्रित जल से) गणेश जी को विशेष अर्घ्य प्रदान करे, फिर 'ॐ अङ्गहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं गणाधिप०' इत्यादि मन्त्र से प्रार्थना कर विसर्जन करे। इस प्रकार से एक सहस्र, अयुत (दस हजार) अथवा एक लाख अथवा एक करोड़ पार्थिव गणेश बनाकर पूर्ण होने पर माघादि महीने में शुभ काल में उद्यापन करना चाहिये। उद्यापन का विधान मेरे द्वारा (चतुर्थीलाल द्वारा) रचित 'व्रतोद्यापनप्रकाश' ग्रन्थ में देखना चाहिये।

कारागृहान्मुक्तिकामः एकविंशतिदिनपर्यन्तमेकोत्तरवृद्ध्या पार्थिवगणेशान् कृत्वा पूर्वोक्तप्रकारेण सम्पूज्य पुनर्द्वाविंशतिदिनमारभ्य एकैकह्रासेन प्रथमदिनपर्यन्तं गणेशान्कृत्वा यावद्गणेशा भवन्ति तावत्प्रत्यहं गणेशाथर्वशीर्षेणाभिषेकः। 'ॐ नमो हेरम्ब मदमोहित मम सङ्कटान्निवारय निवारय स्वाहा' इति मन्त्रस्यापि तावत्सहस्रजपः। अभीष्टसिद्धिर्भवति।

इति पार्थिवगणेशपूजाप्रयोगः समाप्तः।

कारागृह से मुक्ति (जेल से छूटने) की कामना वालों के निमित्त इक्कीस दिन तक लगातार एकोत्तर वृद्धिपूर्वक पार्थिव गणेश बनाकर पूर्वोक्त प्रकार से सम्पूजित कर फिर बाईसवें दिन से एक-एक घटाकर प्रथम दिन-पर्यन्त गणेशों को पूजित करे तथा प्रतिदिन जबतक पार्थिव-पूजन हो तब तक 'गणपति अथर्वशीर्ष' से अभिषेक करने के उपरान्त 'ॐ नमो हेरम्ब मदमोहित मम सङ्कटान् निवारय स्वाहा' इस मन्त्र का एक सहस्र जप भी होना चाहिये। इससे व्यक्ति जेल से छूट जाता है।

गणेशाथर्वशीर्षम्

श्रीगणाधिराजाय नमः। अथ गणेशाथर्वशीर्षम्—ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवलं कर्त्तासि। त्वमेव केवलं धर्त्तासि। त्वमेव केवलं हर्त्तासि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्। ऋतं

वच्मि। सत्यं वच्मि। अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अवानूचानमवशिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्। त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि। सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्पदानि। त्वं गुणत्रयातीतः। त्वमवस्थात्रयातीतः। त्वं देहत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः। त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम्। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवःस्वरोम्। गणादीन् पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अर्धेन्दुलसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। गकारः पूर्वरूपम्। अकारो मध्यमरूपम्। अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्। बिन्दुरुत्तररूपम्। नादः संधानम्। स ꣳ हितासन्धिः। सैषा गणेशविद्या। गणक ऋषिः। निचृद्गायत्री छन्दः। गणपतिर्देवता। ॐ गँ गणपतये नमः। एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्।

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम्। रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्॥
रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्। रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्॥
भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्। आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्॥
एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः॥

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरद-मूर्तये नमः।

श्री गणपति अथर्वशीर्ष—श्री गणाधिराज को नमस्कार है। ॐ नमस्ते गणपतये (गणपति को नमस्कार है)। आप प्रत्यक्ष तत्त्व हो। आप ही केवल कर्ता हो। आप ही केवल धर्त्ता हो। आप ही केवल हर्त्ता हो। आप ही यह सम्पूर्ण सृष्टि एवं ब्रह्म हो। आप साक्षात् नित्य आत्मा हो। ऋत कहता हूँ। सत्य कहता हूँ। आप मेरी रक्षा करो। वक्ता की रक्षा करो। श्रोता की रक्षा करो। दाता की रक्षा करो। धाता की रक्षा करो। अनूचान (वेदवक्ता) की रक्षा करो। शिष्य की रक्षा करो। पीछे से रक्षा करो। सामने से रक्षा करो। उत्तर से रक्षा करो। दक्षिण से रक्षा करो। ऊर्ध्व से रक्षा करो। अधः से रक्षा करो। मेरी सब ओर से सब दिशाओं से रक्षा करो। आप वाङ्मय हो। आप चिन्मय हो। आप आनन्दमय हो, आप ब्रह्ममय हो। आप सच्चिदानन्द अद्वितीय हो। आप प्रत्यक्ष ब्रह्म हो। आप ज्ञानमय हो, विज्ञानमय हो। यह सम्पूर्ण जगत् आपसे उत्पन्न होता है। यह सम्पूर्ण जगत् आपके आश्रय से टिका है। यह सम्पूर्ण जगत् आपमें लीन होगा। यह सम्पूर्ण जगत् आप से ही वापस आता है। आप पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश हैं। आप चार वाक्पद हैं। आप तीनों गुणों से परे हैं। आप तीनों अवस्थाओं से परे हैं। आप तीनों देहों (सूल, सूक्ष्म, कारण) से परे हैं। आप त्रिकाल से परे हैं। आप सदैव मूलाधार में स्थित हो। आप शक्तित्रयात्मक हो। आपका ध्यान योगी जन प्रतिदिन करते हैं। आप ब्रह्मा हैं, आप विष्णु हैं। आप रुद्र हो, आप इन्द्र हो, आप अग्नि हो, आप वायु हो, आप सूर्य हो, आप चन्द्रमा हो, आप भूः भुवः स्वः ॐ हो। पूर्व में गण आदि को उच्चारित कर पश्चात् वर्णादि का उच्चारण करते हैं। इसके पश्चात् अनुस्वार है। अर्धचन्द्र से शोभित है। तार से रुद्ध है। यह आपका मनुस्वरूप है। गकार पूर्वरूप है। अकार मध्यम रूप है। अनुस्वार अन्त्य रूप है। बिन्दु उत्तर रूप है। नाद सन्धान है। संहिता सन्धि है। वही यह गणेश विद्या है। गणक ऋषि हैं। निचृद् गायत्री छन्द है। गणपति देवता है। ॐ गं गणपति के लिये नमस्कार है। (गणेशगायत्री) मैं एकदन्त को जानता हूँ। वक्रतुण्ड का ध्यान करता हूँ। वह जो

दन्ती हैं, वह मुझे (सन्मार्ग में) प्रेरित करे। एक दाँत वाले, चार हाथ वाले, पाश तथा अङ्कुश धारण करने वाले, हाथ में दाँत तथा वरमुद्रा को धारण करने वाले, मूषक ध्वज फहराने वाले, रक्तवर्ण, लम्बोदर, शूर्पकर्णक, रक्तवस्त्रधारी, रक्तगन्धानुलिप्त शरीर, रक्त पुष्पों से सुपूजित, भक्तों पर अनुकम्पा करने वाले, जगत् के कारणस्वरूप, अच्युत, प्रकृति तथा पुरुष से परे, जो सृष्टि के आदि में उत्पन्न हैं—इस प्रकार के गणेश जी का ध्यान नित्यप्रति जो योगी करता है, वह योगियों में श्रेष्ठ हो जाता है। व्रातपति को नमस्कार है। गणपति को नमस्कार है। प्रमथपति को नमस्कार है। लम्बोदर, एकदन्त, विघ्ननाशन शिवजी के पुत्र श्री वरदमूर्ति को नमस्कार है।

एतदथर्वशीर्षं योऽधीते स ब्रह्मभूयाय कल्पते। स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते। स सर्वत्र गुणमेधते। स पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति। धर्ममर्थं कामं मोक्षं च विन्दति। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्। यो यदि मोहाद्दास्यति स पापीयान् भवति। सहस्रावर्तनाद्यं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत्। अनेन गणपतिमभिषिञ्चति। स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति स विद्यावान् भवति। इत्यथर्वणवाक्यम्।

ब्रह्माद्यावरणं विद्यान्न बिभेति कदाचनेति। यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति स वैश्रवणोपमो भवति। यो लाजैर्यजति स यशोवान् भवति। स मेधावान् भवति। यो मोदकसहस्रेण यजति स वाञ्छितफलमवाप्नोति। यः साज्यसमिद्भिर्यजति स सर्वं लभते स सर्वं लभते। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति। सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात्प्रमुच्यते। महादोषात्प्रमुच्यते। महाप्रत्यवायात्प्रमुच्यते। स सर्वविद्भवति स सर्वविद्भवति। य एवं वेद। इत्युपनिषत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

इति गणेशाथर्वशीर्षम्॥

इति श्रीबीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे गणपतिपुरश्चरणप्रकरणं प्रथमं समाप्तम्।

इस अथर्वशीर्ष का जो अध्ययन करता है, वह ब्रह्मसदृश हो जाता है। उसे कोई विघ्न बाधित नहीं करता है। उसकी सर्वत्र प्रशंसा होती है (वह उत्तम गुणों को प्राप्त करता है)। वह पाँच महापापों से मुक्त हो जाता है। (इस गणपति अथर्वशीर्ष का) सायंकाल पाठ करने से दिन भर में किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है। प्रातःकाल में इसका पाठ करने से रात्रि में किया हुआ पाप नष्ट होता है। प्रातः एवं सायंकाल दोनों समय पाठ करने से निष्पाप रहता है। किसी भी समय (सब समय) पाठ करने से विघ्नरहित हो जाता है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष को प्राप्त होता है। इस अथर्वशीर्ष को अशिष्य (कुशिष्य) को नहीं देना चाहिये। यदि कोई मोहवश इस अथर्वशीर्ष को अशिष्य (कुशिष्य) को दे देता है तो वह पाप का भागी होता है। इसकी एक सहस्र आवृत्ति कर लेने पर पाठकर्ता जिस-जिस कार्य की चिन्ता करता है, वह पूरा हो जाता है। इससे (अथर्वशीर्ष से) जो गणपति का अभिषेक करता है, वह वाग्मी हो जाता है। जो चतुर्थी तिथि में निराहार रहकर इसका जप करता है; वह विद्यावान् हो जाता है। यह अथर्वण का कथन है। उसकी दृष्टि ब्रह्ममय हो जाने से वह निर्भय हो जाता है।

जो दूर्वाङ्कुरों से (गणपति का) यजन करता है, वह कुबेर के समान हो जाता है। जो लाजा से यजन करता है, वह यशोवान् हो जाता है—वह मेधावी हो जाता है। जो एक सहस्र लड्डुओं से यजन करता है, उसे वाञ्छित फल की

प्राप्ति होती है। जो घृतसहित समिधाओं से यजन करता है, वह सब कुछ प्राप्त करता है, सब कुछ प्राप्त करता है। आठ ब्राह्मणों के द्वारा इसका पाठ कराकर इसे सम्यग् रूप से ग्रहण करने वाला सूर्य के समान वर्चस्वी हो जाता है। जो सूर्यग्रहण के अवसर पर किसी बड़ी नदी के किनारे गणपति की प्रतिमा के समीप जपता है, उसे मन्त्र सिद्ध हो जाता है। वह महाविघ्न से मुक्त हो जाता है। महादोष से छूट जाता है। महान् सङ्कट से प्रमुक्त हो जाता है। वह सर्वज्ञ हो जाता है, वह सर्वज्ञ हो जाता है, जो इसे जानता है। इस प्रकार यह उपनिषत् है। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के प्रथम प्रकरण गणपतिपुरश्चरण प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १ ॥

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे शिवमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं द्वितीयम्॥ २॥

शिवमन्त्रपुरश्चरणप्रकरणम्

कैलासाद्रिनिभं शशाङ्कशकलस्फूर्जज्जटामण्डितं नासालोकनतत्परं त्रिनयनं वीरासनाध्यासितम्।
मुद्राटङ्ककुरङ्गजानुविलसत्पाणिं प्रसन्नाननं कक्षाबद्धभुजङ्गमं मुनिवृतं वन्दे महेशं परम्॥ १॥
अथ वक्ष्ये महेशस्य मन्त्रान्सर्वार्थसिद्धिदान्। यैः पूर्वमृषयः प्राप्ताः शिवसायुज्यमञ्जसा॥ २॥

मङ्गलाचरण—कैलास पर्वत के समान खण्डचन्द्रमा की चमक, जटाओं से मण्डित (शोभित), नासिकाग्र पर दृष्टियुक्त त्रिनेत्र वाले, वीरासन में संस्थित, कुरङ्ग जानुसदृश हाथों में मुद्रा तथा टङ्क धारण किये हुए, प्रसन्न मुखमण्डल वाले, कक्षाओं में भुजङ्गों को लिपटाए हुए, मुनियों से घिरे हुए परमश्रेष्ठ महेश की वन्दना करता हूँ। अब भगवान् शङ्कर के सभी सिद्धिदायक मन्त्र, जो कि शिवजी के सायुज्य में ऋषियों ने प्राप्त किये थे, उन सबका वर्णन करता हूँ॥ १-२॥

तत्रादौ शिवस्य सर्वमन्त्रारम्भप्रयोगः—शिवालयादिषु यथावज्जपस्थानं प्रकल्प्य पूर्वदिने प्रायश्चित्तादि कृत्वा आरम्भदिने प्रातर्नित्यावश्यकं समाप्य स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा शिवसन्निधौ उपविश्य भस्मत्रिपुण्ड्रं रुद्राक्षधारणं च कुर्यात्। ततः आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य मम सर्वपापनिवृत्तिपूर्वकममुककामनासिद्ध्यये श्रीसदाशिवप्रीतये शिवस्यामुकमन्त्रजपपुरश्चरणं करिष्ये तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठां मातृकान्यासं श्रीकण्ठादिकलान्यासं च करिष्ये इति च सङ्कल्प्य पूर्वोक्तपद्धतिमार्गेण बहिर्मातृकान्यासान्तं कृत्वा श्रीकण्ठादिकलामातृकान्यासं कुर्यात्। तद्यथा—अस्य श्रीकण्ठादिकलान्यासस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः। गायत्रीछन्दः। अर्धनारीश्वरो देवता। हलो बीजानि। स्वराः शक्तयश्चतुर्विध-पुरुषार्थसिद्ध्यर्थे न्यासे विनियोगः। ॐ दक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ अर्धनारीश्वरदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ हलबीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वरशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्सीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ह्सूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ह्सैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ह्सौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्सः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः॥ ॐ ह्सां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्सीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ह्सूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ह्सैं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ ह्सौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ह्सः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासः।

अथ ध्यानम्—

पाशाङ्कुशवराक्षस्त्रक्पाणिशीतांशुशेखरम्। त्र्यक्षं रक्तसुवर्णाभमर्द्धनारीश्वरं भजे॥ १॥

बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां पाशाङ्कुशौ च वरदं निजबाहुदण्डैः।
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामः॥ २॥

इति ध्यात्वा श्रीकण्ठाद्यान् न्यसेत्।

ॐ ह्सौं अं श्रीकण्ठेशपूर्णोदरीभ्यां नमो मस्तके॥ १॥ 'प्रणवमादौ सर्वत्र'। ॐ ह्सौं आं अनन्तेशविरजाभ्यां नम आननवृत्ते॥ २॥ ॐ ह्सौं इं सूक्ष्मेशशाल्मलीभ्यां नमः दक्षिणनेत्रे॥ ३॥ ॐ ह्सौं ईं त्रिमूर्तिलोलाक्षिभ्यां नमो वामनेत्रे॥ ४॥ ॐ ह्सौं उं अमरेशवर्तुलाक्षीभ्यां नमो दक्षकर्णे॥ ५॥ ॐ ह्सौं ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां नमो वामकर्णे॥ ६॥ ॐ ह्सौं ऋं भारभूतीशदीर्घमुखीभ्यां नमो दक्षनासापुटे॥ ७॥ ॐ ह्सौं ॠं तिथीशगोमुखीभ्यां नमो

वामनासापुटे॥ ८॥ ॐ ह्सौं लृं स्थाण्वीशदीर्घजिह्साभ्यां नमो दक्षगण्डे॥ ९॥ ॐ ह्सौं लॄं हरेशकुण्डोदरीभ्यां नमः वामगण्डे॥ १०॥ ॐ ह्सौं एं झिण्टीशोर्ध्वकेशीभ्यां नमः ऊर्ध्वोष्ठे॥ ११॥ ॐ ह्सौं ऐं भौतिकेशविकृतमुखीभ्यां नमः अधरोष्ठे॥ १२॥ ॐ ह्सौं ओं सद्योजातेशज्वालामुखीभ्यां नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ॥ १३॥ ॐ ह्सौं औं अनुग्रहेशोल्का-मुखीभ्यां नमः अधोदन्तपङ्क्तौ॥ १४॥ ॐ ह्सौं अं अक्रूरेशश्रीमुखीभ्यां नमः शिरसि॥ १५॥ ॐ ह्सौं अः महासेनेशविद्यामुखीभ्यां नमः मुखमध्ये॥ १६॥ ॐ ह्सौं कं क्रोधीशमहाकालीभ्यां नमः दक्षस्कन्धे॥ १७॥ ॐ ह्सौं खं चण्डेशसरस्वतीभ्यां नमः दक्षकूर्परे॥ १८॥ ॐ ह्सौं गं पञ्चान्तकेशसर्वसिद्धिगौरीभ्यां नमः दक्षमणिबन्धे॥ १९॥ ॐ ह्सौं घं शिवोत्तमेशत्रैलोक्यविद्याभ्यां नमः दक्षाङ्गुलिमूले॥ २०॥ ॐ ह्सौं ङं एकरुद्रेशमन्त्रशक्तिभ्यां नमः दक्षाङ्गुल्यग्रे॥ २१॥ ॐ ह्सौं चं कूर्मेशात्मशक्तिभ्यां नमः वामस्कन्धे॥ २२॥ ॐ ह्सौं छं एकनेत्रेशमूलमातृकाभ्यां नमः वामकूर्परे॥ २३॥ ॐ ह्सौं जं चतुराननेशलम्बोदरीभ्यां नमः वामस्कन्धे॥ २४॥ ॐ ह्सौं झं अजेशद्रविणीभ्यां नमः वामाङ्गुलिमूले॥ २५॥ ॐ ह्सौं ञं सर्वेशनागरीभ्यां नमः वामाङ्गुल्यग्रेषु॥ २६॥ ॐ ह्सौं टं सोमेशखेचरीभ्यां नमः दक्षपादमूले॥ २७॥ ॐ ह्सौं ठं लाङ्गलीशमञ्जरीभ्यां नमः दक्षजानुनि॥ २८॥ ॐ ह्सौं डं दारुकेशरूपिणीभ्यां नमः दक्षगुल्फे॥ २९॥ ॐ ह्सौं ढं अर्धनारीशवीरिणीभ्यां नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले॥ ३०॥ ॐ ह्सौं णं उमाकान्तेश-काकोदरीभ्यां नमः दक्षाङ्गुल्यग्रे॥ ३१॥ ॐ ह्सौं तं आषाढीशपूतनाभ्यां नमः वामोरुमूले॥ ३२॥ ॐ ह्सौं थं दण्डीशभद्रकालीभ्यां नमः वामजानुनि॥ ३३॥ ॐ ह्सौं दं अत्रीशयोगिनीभ्यां नमः वामगुल्फे॥ ३४॥ ॐ ह्सौं धं मीनेशशङ्खिनीभ्यां नमः वामपादाङ्गुलिमूले॥ ३५॥ ॐ ह्सौं नं मेषेशतर्जनीभ्यां नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे॥ ३६॥ ॐ ह्सौं पं लोहितेशकालरात्रिभ्यां नमः दक्षकुक्षौ॥ ३७॥ ॐ ह्सौं फं शिखीशकुब्जिनीभ्यां नमः वामकुक्षौ॥ ३८॥ ॐ ह्सौं बं छगलाण्डेशकपर्दिनीभ्यां नमः पृष्ठे॥ ३९॥ ॐ ह्सौं भं द्विरण्डेशवज्राभ्यां नमः नाभौ॥ ४०॥ ॐ ह्सौं मं महाकालेशजयाभ्यां नमः उदरे॥ ४१॥ ॐ ह्सौं यं त्वगात्मभ्यां वालीशसुमुखेश्वरीभ्यां नमः हृदये॥ ४२॥ ॐ ह्सौं रं असृगात्मभ्यां भुजङ्गेशरेवतीभ्यां नमः दक्षांसे॥ ४३॥ ॐ ह्सौं लं मांसात्मभ्यां पिनाकीशमाधवीभ्यां नमः ककुदि॥ ४४॥ ॐ ह्सौं वं मेदसात्मभ्यां खड्गीशवारुणीभ्यां नमः हृदयादिवामांसे॥ ४५॥ ॐ ह्सौं शं अस्थ्यात्मभ्यां केशवायवीभ्यां नमः हृदयादिदक्षकराग्रान्तम्॥ ४६॥ ॐ ह्सौं षं मज्जात्मभ्यां श्वेतेशरक्षोविदारिणीभ्यां नमः हृदयादिवाम-कराग्रान्तम्॥ ४७॥ ॐ ह्रीं सं शुक्रात्मभ्यां भृग्वीशसहजाभ्यां नमः हृदयादिवामपादाग्रान्तम्॥ ४८॥ ॐ ह्सौं हं प्राणात्मभ्यां लकुलीशलक्ष्मीभ्यां नमः हृदयादिदक्षपादान्तम्॥ ४९॥ ॐ ह्सौं ळं शक्त्यात्मभ्यां शिवेशव्यापिनीभ्यां नमः हृदयादिनाभ्यन्तम्॥ ५०॥ ॐ ह्सौं क्षं परमात्मभ्यां संवर्तकेशमायाभ्यां नमः हृदयादिशिरोऽन्तम्॥ ५१॥ एवं श्रीकण्ठादिकलान्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अत्र रुद्राः स्मृता रक्ता धृतशूलकपालकाः। शक्तयो रुद्रपीठस्थाः सिन्दूरारुणविग्रहाः॥
रक्तोत्पलकपालाभ्यामलङ्कृतकराम्बुजाः।

इति ध्यात्वा मूलमन्त्रेण प्राणायामं कुर्यात्। इति श्रीकण्ठादिन्यासः। अयं न्यासः सर्वशिवमन्त्रेषु ज्ञेयः।

सभी शिवमन्त्रों की सामान्य अनुष्ठान-विधि—शिवालय आदि पवित्र स्थान में भली-भाँति मन्त्रजप के लिये स्थान का चयन करके जपारम्भ के पूर्व दिन में प्रायश्चित्त आदि कर्मों को सम्पन्न कर लेना चाहिये। फिर अनुष्ठानारम्भ दिवस को प्रातः शीघ्र जागकर प्रातः के आवश्यक कृत्यों को शीघ्रता से सम्पन्न करके अपने आसन पर पूर्वमुख अथवा उत्तरमुख में शिवजी के सान्निध्य में बैठकर भस्म, त्रिपुण्ड्र तथा रुद्राक्ष धारण कर लेना चाहिये। फिर आचमन एवं प्राणायाम करके देश-काल का सङ्कीर्तन करके 'मम सर्वपापनिवृत्तिपूर्वकं अमुककामनासिद्धये श्रीसदाशिवप्रीतये शिवस्य अमुकमन्त्रजपपुरश्चरणं करिष्ये। तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं, प्राणप्रतिष्ठां, मातृकान्यासं, श्रीकण्ठादिकलान्यासं च करिष्ये' इस प्रकार का सङ्कल्प करके पूर्वोक्त पद्धतिमार्ग से बहिर्मातृका न्यास करके फिर श्रीकण्ठादि कलामातृका न्यास करना चाहिये।

श्रीकण्ठादि कलामातृका न्यास—इसके लिये सर्वप्रथम 'अस्य श्रीश्रीकण्ठादिकलान्यासस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः गायत्रीछन्दः अर्धनारीश्वरो देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे न्यासे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। ऋष्यादि न्यास—फिर मूल में लिखे 'ॐ दक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि॥ १॥' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। करन्यास—फिर मूलोक्त 'ॐ ह्सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। हृदयादि षडङ्ग न्यास—फिर 'ॐ ह्सां हृदयाय नमः' इत्यादि मूल में लिखित छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास कर लेना चाहिये। ध्यान—फिर उसके आगे मूल में लिखित 'पाशाङ्कुशवराक्षस्त्रक्०' इत्यादि दो श्लोकों को बोलकर शिव का ध्यान करना चाहिये। ध्यानोपरान्त फिर श्रीकण्ठादिन्यास करे। उसके लिये मूल में लिखित 'ॐ ह्सौं अं श्रीकण्ठेशपूर्णोदरीभ्यां नमो मस्तके०' इत्यादि इक्यावन मन्त्रों से श्रीकण्ठादि कलान्यास करे। पुनः 'अत्र रुद्राः स्मृता रक्ता०' इत्यादि श्लोकों द्वारा ध्यान करके मूल मन्त्र के द्वारा प्राणायाम करना चाहिये। यह श्रीकण्ठादि कलान्यास सभी शिवमन्त्रों के अनुष्ठान में करना चाहिये (ऐसा नियम है)।

शिवपञ्चाक्षरमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

तत्र मन्त्रन्यासः। अस्य श्रीशिवपञ्चाक्षरमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। सदाशिवो देवता। ॐ बीजम्। नमः शक्तिः। शिवायेति कीलकम्। चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे न्यासे विनियोगः। ॐ वामदेवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीसदाशिवदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ शिवाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ करन्यासः—ॐ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥

अथ हृदयादिन्यासः—ॐ ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ नं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ मं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ शिं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ यं अस्त्राय फट्॥ ६॥

अथ पञ्चमूर्तिन्यासः—ॐ नं तत्पुरुषाय नमः इति तर्जन्याम्॥ १॥ ॐ मं अघोराय नमः मध्यमायाम्॥ २॥ ॐ शिं सद्योजाताय नमः कनिष्ठिकायाम्॥ ३॥ ॐ वां वामदेवाय नमः अनामिकायाम्॥ ४॥ ॐ यं ईशानाय नमः इत्यङ्गुष्ठे॥ ५॥ ॐ नं तत्पुरुषाय नमः मुखे॥ १॥ ॐ मं अघोराय नमः हृदये॥ २॥ ॐ शिं सद्योजाताय नमः पादयोः॥ ३॥ ॐ वां वामदेवाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ यं ईशानाय नमः मूर्ध्नि॥ ५॥

अथ वक्त्रन्यासः—ॐ नं तत्पुरुषाय नमः पूर्ववक्त्रे॥ १॥ ॐ मं अघोराय नमः दक्षिणवक्त्रे॥ २॥ ॐ शिं सद्योजाताय नमः पश्चिमवक्त्रे॥ ३॥ ॐ वां वामदेवाय नमः उत्तरवक्त्रे॥ ४॥ ॐ यं ईशानाय नमः इत्यूर्ध्ववक्त्रे॥ ५॥

शिवपञ्चाक्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) की पुरश्चरण-विधि—सर्वप्रथम 'अस्य श्रीशिवपञ्चाक्षरमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः पङ्क्तिः छन्दः, सदाशिवो देवता, ॐ बीजम्, नमः शक्तिः, शिवायेति कीलकं, चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे न्यासे विनियोगः' कहकर जल छोड़े। यह न्यासार्थ विनियोग है। फिर मूल में लिखे 'ॐ वामदेवाय नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर उसी से आगे मूल में लिखे 'ॐ ॐ हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्र पढ़ते हुए हृदयादि षडङ्गों का न्यास करे। फिर 'ॐ नं तत्पुरुषाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पञ्चमूर्तिन्यास करना चाहिये। फिर उसके आगे मूल में लिखित 'ॐ नं तत्पुरुषाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से मुखादिन्यास करे। तदुपरान्त 'ॐ नं तत्पुरुषाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से क्रमशः पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर तथा ऊर्ध्वमुख—इन पाँच वक्त्रों में न्यास करना चाहिये।

अथ गोलकन्यासः—ॐ ॐ नमः हृदये॥ १॥ ॐ नं नमः वक्त्रे॥ २॥ ॐ मं नमः दशांसे॥ ३॥ ॐ शिं नमः वामांसे॥ ४॥ ॐ वां नमः दक्षिणोरौ॥ ५॥ ॐ यं नमः वामोरौ॥ ६॥ इति प्रथमन्यासः॥ १॥ ॐ ॐ नमः कण्ठे॥ १॥

ॐ नं नमः नाभौ ॥ २ ॥ ॐ मं नमः दक्षिणपार्श्वे ॥ ३ ॥ ॐ शिं नमः वामपार्श्वे ॥ ४ ॥ ॐ वां नमः पृष्ठे ॥ ५ ॥ ॐ यं नमः हृदये ॥ ६ ॥ इति द्वितीयो न्यासः ॥ २ ॥ ॐ ॐ नमः मूर्ध्नि ॥ १ ॥ ॐ नं नमः मुखे ॥ २ ॥ ॐ मं नमः दक्षिणनेत्रे ३ ॥ ॐ शिं नमः वामनेत्रे ॥ ४ ॥ ॐ वां नमः दक्षिणनासापुटे ॥ ५ ॥ ॐ यं नमः वामनासापुटे ॥ ६ ॥ इति तृतीयो न्यासः ॥ ३ ॥ ॐ नं नमः हस्ताङ्गुल्यग्रेषु ॥ १ ॥ ॐ मं नमः हस्ताङ्गुलीमूलेषु ॥ २ ॥ ॐ शिं नमः मणिबन्धयोः ॥ ३ ॥ ॐ वां नमः कूर्परयोः ॥ ४ ॥ ॐ यं नमः बाहुमूलयोः ॥ ५ ॥ इति चतुर्थो न्यासः ॥ ४ ॥ ॐ नं नमः पादाङ्गुल्यग्रेषु ॥ १ ॥ ॐ मं नमः पादाङ्गुलीमूलेषु ॥ २ ॥ ॐ शिं नमः गुल्फयोः ॥ ३ ॥ ॐ वां नमः जानुनोः ॥ ४ ॥ ॐ यं नमः जङ्घयोः ॥ ५ ॥ इति पञ्चमो न्यासः ॥ ५ ॥ ॐ ॐ नमः शिरसि ॥ १ ॥ ॐ नं नमः गुह्ये ॥ २ ॥ ॐ मं नमः हृदये ॥ ३ ॥ ॐ शिं नमः कुक्षिद्वये ॥ ४ ॥ ॐ वां नमः ऊरुद्वये ॥ ५ ॥ ॐ यं नमः पादद्वये ॥ ६ ॥ इति षष्ठो न्यासः ॥ ६ ॥ ॐ ॐ नमः हृदये ॥ १ ॥ ॐ नं नमः वक्त्राम्बुजे ॥ २ ॥ ॐ मं नमः टङ्के ॥ ३ ॥ ॐ शिं नमः मृगे ॥ ४ ॥ ॐ वां नमः अभये ॥ ५ ॥ ॐ यं नमः वरे ॥ ६ ॥ इति सप्तमन्यासः ॥ ७ ॥ ॐ ॐ नमः वक्त्रे ॥ १ ॥ ॐ नं नमः अंसयोः ॥ २ ॥ ॐ मं नमः हृदये ॥ ३ ॥ ॐ शिं नमः पादद्वये ॥ ४ ॥ ॐ वां नमः ऊरुद्वये ॥ ५ ॥ ॐ यं नमः जठरे ॥ ६ ॥ इत्यष्टमन्यासः ॥ ८ ॥ ॐ नं तत्पुरुषाय नमः मूर्ध्नि ॥ १ ॥ ॐ मं अघोराय नमः भाले ॥ २ ॥ ॐ शिं सद्योजाताय नमः उदरे ॥ ३ ॥ ॐ वां वामदेवाय नमः अंसयोः ॥ ४ ॥ ॐ यं ईशानाय नमः हृदये ॥ ५ ॥ इति नवमन्यासः ॥ ९ ॥

ॐ नमोस्तु स्थाणुभूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने। चतुर्मूर्तिवपुःस्थायाभाषिताङ्गाय शम्भवे ॥ १ ॥

इति व्यापकं न्यसेत् ॥ १० ॥ एवं दश न्यासान्कृत्वा पार्वतीपतिं ध्यायेत्।

गोलक न्यास—इसमें एक-एक करके दश न्यास किये जाते हैं। मूल में लिखित 'ॐ ॐ नमः हृदये' इत्यादि छः मन्त्रों से प्रथम न्यास करे। फिर उसके आगे लिखे 'ॐ ॐ नमः कण्ठे' इत्यादि छः मन्त्रों से द्वितीय न्यास करे। फिर उससे आगे 'ॐ ॐ नमः मूर्ध्नि' इत्यादि छः मन्त्र से तृतीय न्यास सम्पन्न करना चाहिये। फिर 'ॐ नं नमः हस्ताङ्गुल्यग्रेषु' इत्यादि छः मन्त्र मूल में लिखे हैं, उनसे चतुर्थ न्यास करे। फिर उससे आगे मूल में लिखित 'ॐ नं नमः पादाङ्गुल्यग्रेषु' इत्यादि छः मन्त्र बोलकर पञ्चम न्यास करना चाहिये। फिर आगे लिखे 'ॐ ॐ नमः शिरसि' इन छः मन्त्र से छठा गोलक न्यास करे। फिर 'ॐ ॐ नमः हृदये' इत्यादि जो छः मन्त्र हैं, उनसे सातवाँ गोलक न्यास करना चाहिये। पुनः 'ॐ ॐ नमः वक्त्रे' इत्यादि छः मन्त्र पढ़कर आठवाँ गोलक न्यास सम्पन्न करे। फिर उसके आगे 'ॐ नं तत्पुरुषाय नमः मूर्ध्नि०' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः नवम न्यास सम्पन्न करना चाहिये। सबके पश्चात् फिर मूलोक्त 'ॐ नमोस्तु स्थाणुभूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने। चतुर्मूर्तिवपुःस्थाया भाषिताङ्गाय शम्भवे ॥' इन मन्त्र से व्यापक न्यास करे। इस प्रकार दश न्यासों (गोलक न्यासों) को सम्पन्न कर फिर शिवजी का ध्यान करना चाहिये।

अथ ध्यानम्—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य शङ्खं विना अर्घ्यस्थापनादि पूर्ववत्कृत्वा पीठपूजां कुर्यात्। तद्यथा शैवे पीठे— 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताभ्यो नमः' इति पूर्वोक्तपीठदेवताः सम्पूज्य स्वाग्र्यादिप्रादक्षिण्येन ॐ वामायै नमः ॥ १ ॥ ॐ ज्येष्ठायै नमः ॥ २ ॥ ॐ रौद्र्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ काल्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ कलविकरिण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ बलविकरिण्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ बलप्रमथिन्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः ॥ ८ ॥ (मध्ये) ॐ मनोन्मन्यै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। ततः 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायाऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इति मन्त्रेणासनं दत्त्वा तत्र 'ॐ नमः शिवाय' इति मूलमन्त्रेण मूर्तिं प्रकल्प्य 'अथवा स्वर्णमयीं संस्थाप्य' आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः [पूर्वोक्तमन्त्रैः] सम्पूज्य पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा कर्णिकायाम् ईशान्याम्—ॐ ईशानाय

नमः ॥ १ ॥ पूर्वे—ॐ तत्पुरुषाय नमः ॥ २ ॥ दक्षिणे—ॐ अघोराय नमः ॥ ३ ॥ पश्चिमे—ॐ वामदेवाय नमः ॥ ४॥ उत्तरे—ॐ सद्योजाताय नमः ॥ ५ ॥ इति पञ्चमूर्त्तीः पूजयेत् ॥ इति प्रथमावरणम् ॥ १ ॥

पुनः ईशानादिषु—ॐ निवृत्त्यै नमः ॥ १ ॥ ॐ प्रतिष्ठायै नमः ॥ २ ॥ ॐ विद्यायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ शान्त्यै नमः ॥ ४॥ ॐ शान्त्यतीतायै नमः ॥ ५ ॥ इति कलाः पूजयेत्। इति द्वितीयावरणम् ॥ २ ॥

ततः पूर्वादिदिक्षु—ॐ सूर्याय नमः ॥ १ ॥ ॐ इन्दवे नमः ॥ २ ॥ ॐ क्षित्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ तोयाय नमः ॥ ४॥ ॐ अग्नये नमः ॥ ५ ॥ ॐ पवनाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ आकाशाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ यज्वने नमः ॥ ८ ॥ इत्यष्टमूर्तीः पूजयेत्। इति तृतीयावरणम् ॥ ३ ॥

ततः पूर्वादिपत्रेषु—ॐ अनन्ताय नमः ॥ १ ॥ ॐ सूक्ष्माय नमः ॥ २ ॥ ॐ शिवोत्तमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ एकनेत्राय नमः ॥ ४ ॥ ॐ एकरुद्राय नमः ॥ ५ ॥ ॐ त्रिमूर्त्तये नमः ॥ ६ ॥ ॐ श्रीकण्ठाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ शिखण्डिने नमः ॥ ८ ॥ इति विघ्नेशान् पूजयेत्। इति चतुर्थावरणम् ॥ ४ ॥

तद्बाह्ये उत्तरादिक्रमेण—ॐ उमायै नमः ॥ १ ॥ ॐ चण्डेश्वराय नमः ॥ २ ॥ ॐ नन्दिने नमः ॥ ३ ॥ ॐ महाकालाय नमः ॥ ४॥ ॐ गणेशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ वृषभाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ भृङ्गरिटये नमः ॥ ७ ॥ ॐ स्कन्दाय नमः ॥ ८ ॥ इति गणान् पूजयेत्। इति पञ्चमावरणम् ॥ ५ ॥

तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण—ॐ इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ४॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ५॥ ॐ वायवे नमः ॥ ६॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ७॥ ॐ ईशानाय नमः ॥ ८॥ ईशानपूर्वयोर्मध्ये—ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये—ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति दिक्पालान् पूजयेत्। इति षष्ठावरणम् ॥ ६ ॥

तद्बाह्ये पूर्वादिषु तत्तत्समीपे—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्त्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इत्यायुधानि सम्पूजयेत्। इति सप्तमावरणम् ॥ ७ ॥

एवमावरणपूजां कृत्वा धूपदीपादिप्रार्थनान्तं तत्तन्मन्त्रेण सम्पूजयेत्। ततस्तन्मनाश्चतुर्विंशतिलक्षात्मकं जपपुरश्चरणं कृत्वा जपान्ते तद्दशांशेन वा चतुर्विंशतिसहस्रमन्त्रैः पायसं त्रिमधुप्लुतं हुत्वा तद्दशांशेन दुग्धमिश्रजलेन तर्पणं कृत्वा तद्दशांशतो मार्जनं तद्दशांशेन शुद्धान्विप्रांश्च पायसादिना भोजयेत्। एवंकृते सिद्धो मन्त्रो भवति। तत्सिद्धमन्त्रेण सर्वार्थान्साधयेत्। तथा च शारदातिलके अष्टादशे पटले—

ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रः साधकाभीष्टसिद्धिदः। इत्थं सम्पूजयेद्देवं सहस्रं नित्यशो जपेत् ॥ १ ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाद्वाञ्छितां श्रियम्। द्विसहस्रं जपेद्रोगान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ २ ॥
त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्रं दीर्घमायुरवाप्नुयात्। सहस्रवृद्ध्या प्रजपेत्सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ३ ॥
आज्यान्वितैस्तिलैः शुद्धैर्जुहुयाल्लक्षमादरात्। उत्पातजनितान्क्लेशान्नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ४ ॥
शतलक्षं जपेत्साक्षाच्छिवो भवति मानवः।

इति शिवपञ्चाक्षरमन्त्रप्रयोगः।

ध्यान मन्त्र—मूल में लिखित 'ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभम्०' इत्यादि श्लोक से महेश का ध्यान कर मानसोपचारों से उनकी पूजा कर शङ्ख का उपयोग अर्घ्य में न करते हुए श्री शिवजी को विशेषार्घ्य प्रदान करे। फिर पूर्व से ही निर्मित शैवपीठ की पूजा अग्रलिखित विधि से करे। पीठ पर शिवयन्त्र चित्र के अनुसार बनाये तथा उसके अनुसार मन्त्र बोलते हुए पीठ का पूजन सम्पन्न करना चाहिये। यन्त्र में भीतर दो त्रिभुजों के परस्पर काटने से षड्दल कमल बनता है; उसके मध्य भाग में मूर्ति रखते हैं। षड्दल कमल के बाहर वृत्त बनाते हैं। वृत्त के

बाहर अष्टदल कमल होता है तथा उसके बाहर की ओर एक सम चतुर्भुज चतुर्द्वारयुक्त बनाते हैं। इस प्रकार इस यन्त्रपीठ में सात आवरण होते हैं तथा उसके बाह्यभाग को भूपुर कहा जाता है। सभी मन्त्रों के अनुष्ठान में इसका पूजन होता है। पूजन में दिशाओं एवं आवरणों का ध्यान रखना चाहिये।

शैव यन्त्रपीठ-पूजन—सर्वप्रथम 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताभ्यो नमः' कहे। फिर अपने सामने से प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ वामायै नमः' इत्यादि नौ मूलोक्त मन्त्रों से पीठ की शक्तियों का पूजन करे। फिर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायाऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से आसन देकर 'ॐ नमः शिवाय' इस मूल मन्त्र से भगवान् शिव की मूर्ति मन में कल्पित कर ले अथवा यदि सम्भव हो तो यन्त्रपीठ के मध्य में स्वर्णमयी शिवप्रतिमा स्थापित कर आवाहन से आरम्भ कर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त पूजन कर फिर यन्त्रपीठ में आवरण पूजा प्रारम्भ करे।

शिवयन्त्रम्
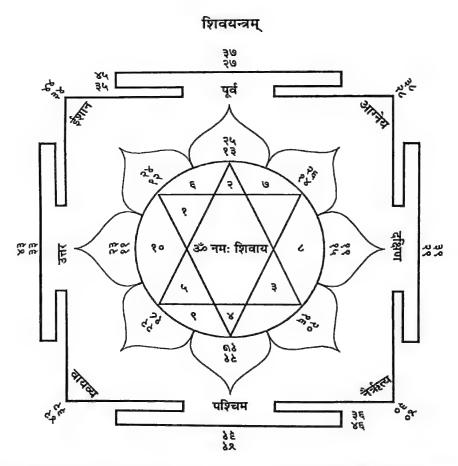
प्रथमावरण पूजा—कर्णिका (कमल का मध्य भाग) प्रथम आवरण है, उसमें ईशान से आरम्भ कर प्रदक्षिणक्रम से 'ईशानाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से प्रणवपूर्वक शिव की पञ्चमूर्तियों का पूजन करे।

द्वितीयावरण पूजा—फिर पुनः ईशानादि दिशाओं में 'ॐ निवृत्त्यै नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पञ्चकलाओं का पूजन द्वितीयावरण में करना चाहिये।

तृतीयावरण पूजा—फिर तृतीय आवरण में (जो कि द्वितीय आवरण के बाहर होता है) पूर्व आदि दिशाओं में (चारों कोणों सहित कुल आठ दिशाओं में) मूल में लिखित 'ॐ सूर्याय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से शिव की आठ मूर्तियों की पूजा करे।

चतुर्थ आवरण पूजा—फिर चौथे आवरण में पूर्वादि दिशाओं में कमल के पत्रों (पङ्खुड़ियों) पर प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ अनन्ताय नमः' आदि मूलोक्त मन्त्रों से आठ विघ्नेशों की पूजा करे।

पञ्चम आवरण की पूजा—फिर चतुर्थावरण के बारह की ओर उत्तर दिशा से आरम्भ कर 'ॐ उमायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ गणों की पूजा करे।

भूपूर में पूजा—यह छठा आवरण है। इसमें पूर्वादि दिशाओं में क्रम से 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से दश दिक्पालों की पूजा करे।

फिर उसके बाहर सातवें आवरण में पूर्वादि दश दिशाओं में 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से दिक्पालों के आयुधों की पूजा करनी चाहिये। फिर धूप-दीपादि एवं बलिदान भी दिक्पालों को करे। फिर मन लगाकर चौबीस लाख मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) का जप करके जपान्त में उसका दशांश होम, उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन, फिर उसका दशांश ब्राह्मणभोजन कराने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। हवन में पायस को त्रिमधु (घी-शक्कर तथा शहद) में मिलाकर होम करना चाहिये। इस सिद्ध मन्त्र को अपनी कामनापूर्ति-हेतु प्रयोग करना चाहिये। शारदातिलक के अठारहवें पटल के अनुसार सिद्ध मन्त्र का प्रतिदिन सहस्रवृद्धि (प्रथम दिन एक हजार, द्वितीय दिन दो हजार, तृतीय दिन तीन हजार) इस प्रकार क्रम से जप करने से सभी मनोकामनाएँ पूरी होती हैं। आदरपूर्वक घृतयुक्त काले तिलों से एक लाख आहुति देने से उत्पातजनित क्लेश नष्ट होते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। यदि सौ लाख (शत लक्ष) का जप कर ले तो मनुष्य साक्षात् शिव हो जाता है।

शिवाष्टाक्षरमन्त्रप्रयोगः

अथ अष्टाक्षरीशिवमन्त्रप्रयोगः शारदातिलके। तत्र मन्त्रस्वरूपम्—'ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं' इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः। अस्याष्टाक्षरमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः। पङ्क्तिच्छन्दः। उमापतिर्देवता। सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

अथ ऋष्यादिन्यासः—ॐ वामदेवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ उमाकान्तदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥

अथ करन्यासः—ॐ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥

अथ हृदयादिन्यासः—ॐ ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ नं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ मं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ शिं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ यं अस्त्राय फट्॥ ६॥ ततो ध्यानम्—

बन्धूकाभं त्रिनेत्रं शशिशकलधरं स्मेरवक्त्रं वहन्तं हस्तैः शूलं कपालं वरदमभयदं चारुहारं नमामि।
वामोरुस्तम्भगायाः करतलविलसच्चारुरक्तोत्पलाया हस्तेनाश्लिष्टदेहं मणिमयविलसद्भूषणायाः प्रियायाः॥ १॥

अष्टाक्षरी शिवमन्त्र-प्रयोग—'ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं' यह अष्टाक्षर मन्त्र है। सर्वप्रथम 'अस्याष्टाक्षरमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। उमापतिः देवता। सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः' ऐसा कहकर विनियोग के लिये जल छोड़ना चाहिये। तदनन्तर 'ॐ वामदेवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ उमाकान्देवतायै नमः हृदये॥ ३॥' इन मन्त्रों से ऋष्यादि का न्यास करे। इसको पश्चात् 'ॐ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ वां

कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥५॥ ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥६॥' इन छः मन्त्रों से करन्यास करे। पुनः 'ॐ ॐ हृदयाय नमः॥१॥ ॐ नं शिरसे स्वाहा॥२॥ ॐ मं शिखायै वषट्॥३॥ ॐ शिं कवचाय हुम्॥४॥ ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ ॐ यं अस्त्राय फट्॥६॥' इन छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'बन्धूकाभं त्रिनेत्र०' इत्यादि मन्त्र से श्रीशिवजी का ध्यान करे।

ततः प्राक् प्रोक्ते शैवे पीठे पूर्ववत् वामादिनवशक्तीः सम्पूज्य ॐ सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः इत्यासनं दत्त्वा तत्र उमापतिं पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—केसरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च आग्नेय्यां ॐ ॐ हृदयाय नमः॥१॥ नैर्ऋत्यां ॐ नं शिरसे स्वाहा॥२॥ वायव्यां ॐ मं शिखायै वषट्॥३॥ ईशान्यां ॐ शिं कवचाय हुं॥४॥ मध्ये ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ दिक्षु ॐ यं अस्त्राय फट् इति पूजयेत्। इति प्रथमावरणम्॥१॥ तद्बाह्ये मध्ये पूर्वादिदिक्षु च ॐ हल्लेखायै नमः॥१॥ ॐ गगनायै नमः॥२॥ ॐ रक्तायै नमः॥३॥ ॐ करालिकायै नमः॥४॥ ॐ महोच्छुष्मायै नमः॥५॥ इति द्वितीयावरणम्॥२॥ तद्बाह्ये पूर्वादिपत्रेषु—ॐ वृषभाय नमः॥१॥ ॐ क्षेत्रपालाय नमः॥२॥ ॐ दुर्गायै नमः॥३॥ ॐ कार्तिकेयाय नमः॥४॥ ॐ नन्दिने नमः॥५॥ ॐ विघ्नाय नमः॥६॥ ॐ श्यामाय नमः॥७॥ ॐ सेनापतये नमः॥८॥ इति पूजयेत्। इति तृतीयावरणम्॥३॥ ततः पत्राग्रेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ ब्राह्म्यै नमः॥१॥ ॐ माहेश्वर्य्यै नमः॥२॥ ॐ कौमार्यै नमः॥३॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥४॥ ॐ वाराह्यै नमः॥५॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥६॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥७॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः॥८॥ इति चतुर्थावरणम्॥४॥ तद्बाह्ये भूपुरे इन्द्रादीन् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपदीपादिनमस्कारान्तं कर्म्म समाप्य चतुर्दशलक्षं मन्त्रं जपेत्। जपान्ते चतुर्दशसहस्त्रं यथाविधि मधुरासिक्तैरारग्वधैः समिद्भिर्होमं कुर्य्यात्। ततः तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशतो मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनं च कुर्यात्। तथा च शारदातिलके—

मनुलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्त्रं यथाविधि। जुहुयान्मधुरासिक्तैरारग्वधसमिद्वरैः ॥१॥
एवं यो भजते मन्त्री देवेशं तमुमापतिम्। स भवेत्सर्वलोकानां प्रियः सौभाग्यसम्पदाम्॥२॥

इत्यष्टाक्षरीशिवमन्त्रप्रयोगः।

शिवयन्त्रपीठ की पूजा—फिर पूर्वकथित शैव पीठ पर वामादि नौ शक्तियों का पूजन करने के उपरान्त 'ॐ सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः' ऐसा कहकर शिवजी को आसन प्रदान करे। फिर उन उमापति का पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचारों से पूजन कर आवरणपूजा करे। बीच में बने अष्टदल कमल की केसरों में, मध्य में तथा आग्नेयादि क्रम से चारो दिशाओं में 'ॐ हृदयाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पूजा करे। यह प्रथम आवरण है। द्वितीयावरण प्रथम आवरण के बाहर होता है। उसके मध्य में तथा पूर्वादि चार दिशाओं में 'ॐ हल्लेखायै नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पूजन करे। फिर उससे बाहर पूर्वादि आठों दिशाओं में 'ॐ वृषभाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उनके बाहर पत्राग्रों में 'ॐ ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूर्वादि आठों दिशाओं में पूजन करे। यह चतुर्थ आवरण की पूजा है। फिर उसके बाहर भूपुर में इन्द्रादि देवताओं तथा उसके बाहर उनके आयुधों की पूजा करे। फिर अष्टाक्षरी मन्त्र का चौदह लाख जप करे। जप की समाप्ति पर जप का दशांश हवन अमलतास की समिधाओं को मधुरासिक्त (शर्करा या मधु में लपेटकर) कर करे। होम का दशांश तर्पण, फिर उसका दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन कराये। जैसा कि शारदातिलक में कहा है—मन्त्र को चौदह लाख की सङ्ख्या में जप कर विधिपूर्वक अमलतास की मधुरासिक्त समिधाओं से होम करे। इस प्रकार से जो मन्त्र जापक उन देव उमापति को भजता है, वह लोकप्रिय होकर सौभाग्य तथा सम्पत्ति को प्राप्त करता है।

त्र्यक्षरमृत्युञ्जयमन्त्रप्रयोगः

अथ त्र्यक्षरीमृत्युञ्जयमन्त्रप्रयोगः। अस्य श्रीत्र्यक्षरात्मकमृत्युञ्जयमन्त्रस्य कहोलऋषिर्गायत्रीछन्दः। मृत्युञ्जयो महादेवो देवता। जूँ बीजम्। सः शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ कहोलऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ मृत्युञ्जयदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ जूँ बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ सः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। अथ करन्यासः—ॐ सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ सीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ सौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ सः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ एवं हृदयादिन्यासं कुर्यात्। अथ ध्यानम्—

चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तःस्थितं मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम्।
कोटीरेन्दुगलत्सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत्॥ १॥

पूर्वोक्ते शैवे पीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य तत्र मृत्युञ्जयं महादेवं पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

त्र्यक्षरी मृत्युञ्जय मन्त्र की प्रयोगविधि—'अस्य श्रीत्र्यक्षरात्मकमृत्युञ्जयमन्त्रस्य कहोलऋषिः, गायत्रीछन्दः, मृत्युञ्जयो देवता, जूं बीजं, सः शक्तिः, सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। तदनन्तर 'ॐ कहोलऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ मृत्युञ्जयदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ जूं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ सः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥' इन पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। इसके बाद 'ॐ सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर इन्हीं छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी करना चाहिये। फिर भगवान् मृत्युञ्जय (शिव) का ध्यान मूल में लिखित 'चन्द्रार्काग्निविलोचनं' इत्यादि से करे। मन्त्र का भावार्थ इस प्रकार है—जिनके चन्द्रमा-सूर्य तथा अग्नि—ये तीनों नेत्र हैं, जिनका मुखमण्डल प्रसन्न है, जो दो कमलों के भीतर स्थित हैं; जिनके हाथों में मुद्रा, पाश, मृग, अक्षसूत्र सुशोभित हैं; जिनकी कान्ति चन्द्रमा के समान है, जिनका शरीर करोड़ों चन्द्रमा के अमृत से आप्लुत है; जो हारादि की भूषा से उज्ज्वल हैं; जो अपनी कान्ति से सम्पूर्ण विश्व को विमोहित करते हैं, ऐसे पशुपति मृत्युञ्जय का ध्यान करना चाहिये। तदुपरान्त पूर्ववर्णित शैवपीठ पर मूलमन्त्र (ॐ ह्रीं जूं सः) से मृत्युञ्जय की मूर्ति की कल्पना करे। फिर उसका पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचार करे। तदुपरान्त आवरण पूजा करे।

तद्यथा—केशरेषु आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ सां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ सीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ सूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ सैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ सौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ सः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इत्यङ्गानि यजेत्। इति प्रथमावरणम्। तद्बाह्ये इन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूजयेत्। ततो धूपादिनमस्कारान्तं समाप्य लक्षत्रयं जपं कुर्यात्। ततस्तद्दशांशेन दुग्धाज्यलोलितैरमृताखण्डैर्होमं कृत्वा तद्दशांशतस्तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि पूर्ववत् कृत्वा सिद्धे मन्त्रे प्रयोगान् कुर्यात्।

प्रथमावरण पूजा—भीतर के अष्टदल कमल की केशरों में, आग्नेयादि कोणों में, फिर मध्य में, फिर पूर्वादि दिशाओं में पूजा करके फिर 'ॐ सां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से मूर्ति के हृदयादि छः अङ्गों की पूजा करे। फिर बाहर की ओर इन्द्रादि दिक्पालों एवं उनके आयुधों की पूजा करके धूपादि नमस्कार-पर्यन्त पूजन करे। तदनन्तर 'ॐ हों जूं सः' इस त्र्यक्षरी मृत्युञ्जय मन्त्र का तीन लाख की सङ्ख्या जप करे। फिर जपसङ्ख्या के दशांश दूध-घृतमिश्रित गिलोय के टुकड़ों से होम करे। फिर होम का दशांश तर्पण करे। उसका दशांश मार्जन, फिर उसका दशांश ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाता है, तब उसका विविध काम्यकर्मों में प्रयोग करना चाहिये।

तद्यथा—

दुग्धयुक्तैः सुधाखण्डैर्मन्त्री मासं सहस्रकम्। आराधितेऽग्नौ जुहुयाद्विधिवद्विजितेन्द्रियः॥
सन्तुष्टः शङ्करस्तेन सुधाप्लावितविग्रहः। आयुरारोग्यसम्पत्तियशःपुत्रान् विवर्द्धयेत्॥

सुधावटौ तिला दूर्वा पयः सर्पिःमयो हविः। इत्युक्तैः सप्तभिर्द्रव्यैर्जुहुयात्सप्तवासरम्॥
क्रमाद्दशांशतो नित्यमष्टोत्तरमतन्द्रितः। सप्ताधिकान् द्विजान्नित्यं भोजयेन्मधुरान्वितम्॥
विकारानुगुणं मन्त्री वर्द्धयेद्धोमवासरान्। होतृभ्यो दक्षिणां दद्यादरुणा गाः पयस्विनीः॥
गुरुं सम्प्रीणयेत्पश्चाद्धनाद्यैर्देवताधिया। अनेन विधिना साध्यः कृत्याद्रोहज्वरादिभिः॥
विमुक्तः सुचिरं जीवेच्छरदां शतमञ्जसा। अभिचारे ज्वरे तीव्रे घोरोन्मादे शिरोगदे॥
असाध्यरोगक्ष्वेडादौ महादाहे महाभये। होमोऽयं शान्तिदः प्रोक्तः सर्वसम्पत्प्रदायकः॥

१. दुग्धसिक्त सुधा (गिलोय) के टुकड़ों से जापक द्वारा एक मास तक प्रतिदिन एक सहस्र हवन एक मास-पर्यन्त करने से भगवान् शङ्कर अमृत से आप्लावित विग्रह के साथ सन्तुष्ट होकर साधक के आयु-आरोग्य, सम्पत्ति, यश तथा पुत्रों की वृद्धि करते हैं। गिलोय, वट के अङ्कुर, काले तिल, दूर्वा, पय (गोदुग्ध) तथा घृत—इनसे मिश्रित हवि (इन सात पदार्थों से बना) से लगातार सात दिनों तक उक्त मन्त्र से एक सौ आठ की सङ्ख्या में अतन्द्रित होकर हवन करना चाहिये; फिर उसका दशांश तर्पणादि ब्राह्मणभोजन-पर्यन्त सम्पन्न करे। प्रतिदिन सात-सात ब्राह्मणों की सङ्ख्या बढाता रहे (अर्थात् दिनों के क्रम से ७-१४-२१-२८-३५-४२ तथा ४९—इस प्रकार ब्राह्मणों की सङ्ख्या रखें) तथा मधुर भोजन कराये। यदि रोगादि पीड़ा अधिक हो तो होम के दिन सप्ताह से अधिक बढ़ा दे। फिर होताओं को दक्षिणा तथा लाल रङ्ग की दुधारु गाय का दान करे। फिर गुरु (आचार्य) को देवता मानकर सन्तुष्ट करे। इस विधि से शत्रुता एवं ज्वरादि रोग तथा कृत्या (मूठ) आदि का दुष्प्रभाव शान्त हो जाता है। फिर इन सब कष्टों से मुक्त होकर एक सौ वर्ष की आयु-पर्यन्त जीवित रहे। इस सिद्ध मन्त्र का प्रयोग ज्वर की तीव्रता, घोर उन्माद (पागलपन), तीव्र शिरोरोग, असाध्य रोग, विषाक्तता, महादाह, महाभय आदि में होमपूर्वक करने से शान्ति प्राप्त होती है। यह होम सर्वसम्पत्तिदायक है।

द्रव्यैरेतैः प्रजुहुयात् त्रिजन्मसु यथाविधि। भोजयेन्मधुरैर्भोज्यैर्ब्राह्मणान् वेदपारगान्॥ ९॥
दीर्घमायुरवाप्नोति वाञ्छितां विन्दति श्रियम्। एकादशाहुतीर्नित्यं दूर्वाभिर्जुहुयाद्बुधः॥ १०॥
अपमृत्युजिदेष स्यादायुरारोग्यवर्द्धनः। त्रिजन्मसु सुधावल्लीकाश्मरीबकुलोद्भवैः॥ ११॥
समिद्भिः कृतो होमः सर्वमृत्युगदापहः। सिद्धान्नैर्विहितो होमो महाज्वरविनाशनः॥ १२॥
अपामार्गसमिद्धोमः सर्वामयविषूदनः॥

प्रणवरचितनालं मन्त्रमध्यार्णपत्रं भृगुविलसितमध्यं पद्मयुग्मं तदन्तः।
कृतवसतिमुमेशं वर्णनिर्यत्सुधार्द्रं कलयतु हृदि नित्यं सर्वदुःखप्रशान्त्यै॥

यन्त्राढ्ये कमले सौम्ये कलशं प्रोक्तवर्त्मना। नवरत्नसमायुक्तं दुकूलाभ्यामलङ्कृतम्॥
आपूर्य सलिलैः शुद्धैस्तस्मिन्देवं प्रपूजयेत्। उपचारैः षोडशभिर्विधानेन विधानवित्॥
अभिषिञ्चेत्प्रियं साध्यं विनीतं दत्तदक्षिणम्। आधिव्याधिमहारोगकृत्याद्रोहनिवारणः॥

मध्ये साध्याक्षराढ्यं ध्रुवमभिविलिखेन्मध्यमं दिग्दलस्थं कोणेष्वन्त्यं मनोस्तत् क्षितिभुवनमथो दिक्षु चन्द्रान् विदिक्षु।
टान्तं यन्त्रं तदुक्तं सकलभयहरं क्ष्वेडभूतापमृत्युव्याधिव्यामोहदुःखप्रशमनमुदितं श्रीप्रदं कीर्तिदायि॥

इति त्र्यक्षरीमृत्युञ्जयमन्त्रप्रयोगः समाप्तः।

इन पूर्वकथित सात द्रव्यों का हवन त्रिजन्मनक्षत्रों (जन्मनक्षत्र, फिर उससे दसवाँ नक्षत्र, फिर उससे दसवाँ अर्थात् उन्नीसवाँ नक्षत्र) में विधिपूर्वक करे तथा वेदपारङ्गत ब्राह्मणों को भोजन कराये तो उस कर्ता को दीर्घ आयु की प्राप्ति होती है तथा मनोवांछित श्री (लक्ष्मी) मिलती है। यदि बुद्धिमान् व्यक्ति नित्यप्रति ग्यारह आहुतियों से होम करता

रहे तो वह अकाल मृत्युओं एवं रोगों से बचा रहेगा (यह होम दैनिक जीवन का अङ्ग होना चाहिये) तथा आयु-आरोग्य की वृद्धि होगी। यदि त्रिजन्मनक्षत्रों पर गिलोय, गम्भारी, मौलसिरि की समिधाओं से होम करे तो सभी प्रकार की मृत्युओं (१. व्यथा, २. भय, ३. दुःख, ४. लज्जा, ५. रोग, ६. शोक, ७. मरण, ८. अपमान—ये आठ प्रकार की मृत्यु होती है) को दूर करता है। सिद्धान्न (खीर, मालपूआ आदि) से किया गया होम महाभयङ्कर रोगों को दूर करता है। अपामार्ग (अज्झाझारा) की समिधाओं से किया गया होम सर्वरोगनाशक है। सभी दुःखों की शान्ति के लिये प्रणव से रचित नाल मन्त्र के मध्य वर्ण का पत्र, भृगु विलसित मध्य, दो कमलों के भीतर जिनका निवास है उन अमृत से आर्द्र वर्ण के मृत्युञ्जय शिव का नित्य हृदय में ध्यान करना सभी दुःखों को शान्त करता है। यन्त्र से युक्त अष्टदल कमल पर कलश स्थापित कर उसमें नवरत्न डालकर पूर्णपात्र रखकर दुकूल (वस्त्र) से लपेटकर उसमें जल भरकर उसमें देव (मृत्युञ्जय) की षोडशोपचार पूजा करे। फिर उनका अभिषेक करे तो इच्छापूर्ति हो जाती है। ब्राह्मणों को विनीत भाव से दक्षिणा दे। यह विधान आधि-व्याधि तथा महान् शत्रुता एवं विद्रोह का निवारण करता है। कृत्या का भी दुष्प्रभाव दूर होता है। यह अभिषेक लक्ष्मी एवं कीर्तिप्रद कहा गया है।

त्र्यम्बकमन्त्रप्रयोगः

शारदातिलके—

त्रयम्बकं मन्त्रमभिधास्याम्यनुष्टुभम्। यं भजन्तं नरं कालः स्वयं वीक्षितुमक्षमः॥ १॥

तत्रादौ पूर्वोक्तशिवपञ्चाक्षरमन्त्रवत् श्रीकण्ठादिन्यासान्तं कृत्वा अस्य त्र्यम्बकमन्त्रस्य वसिष्ठऋषिरनुष्टुप् छन्दस्त्र्यम्बकः पार्वतीपतिर्देवता त्र्यं बीजं बं शक्तिः कं कीलकं सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। अथ ऋष्यादिन्यासः—ॐ वशिष्ठऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुपछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ त्र्यम्बकदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ त्र्यं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ बं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ कं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ अथ करन्यासः—ॐ त्र्यम्बकं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ यजामहे तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ मृत्योर्मुक्षीय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ मामृतात् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः—ॐ त्र्यम्बकं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ यजामहे शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ मृत्योर्मुक्षीय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ मामृतात् अस्त्राय फट्॥ ६॥ अथाङ्गन्यासः—ॐ त्र्यं नमः पूर्वमुखे॥ १॥ ॐ बं नमः पश्चिममुखे॥ २॥ ॐ कं नमः दक्षिणमुखे॥ ३॥ ॐ यं नमः उत्तरमुखे॥ ४॥ ॐ जां नमः उरसि॥ ५॥ ॐ मं नमः कण्ठे॥ ६॥ ॐ हें नमः मुखे॥ ७॥ ॐ सुं नमः नाभौ॥ ८॥ ॐ गं नमः हृदि॥ ९॥ ॐ धिं नमः पृष्ठे॥ १०॥ ॐ पुं नमः कुक्षौ॥ ११॥ ॐ ष्टिं नमः लिङ्गे॥ १२॥ ॐ वं नमः गुदे॥ १३॥ ॐ धं नमः दक्षिणोरुमूले॥ १४॥ ॐ नं नमः वामोरुमूले॥ १५॥ ॐ उं नमः दक्षिणोरुमध्ये॥ १६॥ ॐ वां नमः वामोरुमध्ये॥ १७॥ ॐ रुं नमः दक्षिणजानुनि॥ १८॥ ॐ कं नमः वामजानुनि॥ १९॥ ॐ मिं नमः दक्षिणजानुवृत्ते॥ २०॥ ॐ वं नमः वामजानुवृत्ते॥ २१॥ ॐ बं नमः दक्षिणस्तने॥ २२॥ ॐ धं नमः वामस्तने॥ २३॥ ॐ नां नमः दक्षिणपार्श्वे॥ २४॥ ॐ मृं नमः वामपार्श्वे॥ २५॥ ॐ त्यों नमः दक्षिणपादे॥ २६॥ ॐ मुं नमः वामपादे॥ २७॥ ॐ क्षीं नमः दक्षिणकरे॥ २८॥ ॐ यं नमः वामकरे॥ २९॥ ॐ मां नमः दक्षिणनासायाम्॥ ३०॥ ॐ मृं नमो वामनासायाम्॥ ३१॥ ॐ तां नमः मूर्ध्नि॥ ३२॥ इत्यक्षरन्यासः। अथ पदन्यासः—ॐ त्र्यम्बकं शिरसि॥ १॥ ॐ यजामहे भ्रुवोः॥ २॥ ॐ सुगन्धिं नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ पुष्टिवर्द्धनं मुखे॥ ४॥ ॐ उर्वारुकं गण्डयोः॥ ५॥ ॐ इव हृदये॥ ६॥ ॐ बन्धनात् जठरे॥ ७॥ ॐ मृत्योः लिङ्गे॥ ८॥ ॐ मुक्षीय हृदये॥ ९॥ ॐ मा जान्वोः॥ १०॥ ॐ अमृतात् पादयोः॥ ११॥ इति पदन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्के न्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलासकान्तं शिवं स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे॥ १॥

त्र्यम्बक मन्त्र-प्रयोग—जो मनुष्य इस त्र्यम्बक नामक अनुष्टुप् छन्द में रचित मन्त्र को (त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्) जपता है, उस पर काल भी अपनी दृष्टि डालने में समर्थ नहीं होता है। सर्वप्रथम पूर्वकथित शिवपञ्चाक्षर मन्त्र की भाँति कण्ठादि न्यास करके फिर विनियोग का जल 'अस्य त्र्यम्बकमन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिरनुष्टुप् छन्दः त्र्यम्बकः पार्वतीपतिर्देवता त्र्यं बीजं वं शक्तिः कं कीलकं सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग-हेतु भूमि पर जल छोड़े। फिर मूल में लिखे हुए 'ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। तदुपरान्त मूलोक्त 'ॐ त्र्यम्बकं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ त्र्यम्बकं हृदयाय नमः' इत्यादि मूल में लिखित छः मन्त्रों से हृदयादि छः अङ्गों में न्यास करे। तदनन्तर अङ्गन्यास करना चाहिये। इसे अक्षरन्यास अथवा अक्षराङ्गन्यास भी कहते हैं। मूलोक्त 'ॐ त्र्यं नमः पूर्वमुखे' इन बत्तीस मन्त्रों से यह अङ्गन्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ त्र्यम्बकं शिरसि' इत्यादि एकादश मन्त्रों को पढ़कर पदन्यास करना चाहिये।

तदनन्तर 'हस्ताभ्यां कलशद्वया०' इत्यादि श्लोक से त्र्यम्बक का ध्यान करना चाहिये। (श्लोक का भावार्थ— 'अमृतरस के दो कलशों को दोनों हाथों में लिये हुए शिर पर उड़ेलते हुए, दो हाथों में मृगाक्षवलय को उत्कृष्टतापूर्वक धारण किये, करद्वय से अमृतघट को अपने अङ्क पर लिये कैलाशपति शिव, जो कि स्वच्छ कमल पर बैठे एवं नये चन्द्रमा का मुकुट बाँधे हैं, उन त्रिनेत्र का ध्यान करता हूँ।')

त्र्यम्बकयन्त्रम्
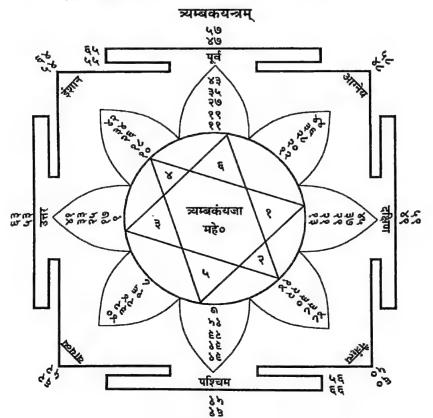
एवं ध्यात्वा पञ्चाक्षरोदिते पूर्वोक्ते पीठे मूलमन्त्रेण मूर्तिं प्रकल्प्य तत्र वृषभध्वजं त्र्यम्बकं देवं पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तत्र प्रथमावरणे आग्नेयादिषट्कोणेषु हृदयादिषडङ्गानि पूजयेत्॥ १॥ द्वितीयावरणे ॐ अर्कमूर्तये नमः॥ १॥ ॐ इन्दुमूर्तये नमः॥ २॥ ॐ वसुधामूर्तये नमः॥ ३॥ ॐ तोयमूर्तये नमः॥ ४॥ ॐ वह्निमूर्तये नमः॥ ५॥ ॐ वायुमूर्तये नमः॥ ६॥ ॐ आकाशमूर्तये नम॥ ७॥ ॐ यजमानमूर्तये नमः॥ ७॥ इति मूर्तीरष्टौ पूजयेत्॥ २॥ तृतीयावरणे तद्बाह्ये पूर्वादिषु ॐ रमायै नमः॥ १॥ ॐ राकायै नमः॥ २॥ ॐ प्रभायै नमः॥ ३॥ ॐ ज्योत्स्नायै नमः॥ ४॥ ॐ पूर्णायै नमः॥ ५॥ ॐ ऊषायै नमः॥ ६॥ ॐ पूरण्यै नमः॥ ७॥ ॐ सुधायै नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ शक्तयः पूज्याः॥ ३॥ चतुर्थावरणे तद्बाह्ये ॐ विश्वायै नमः॥ १॥ ॐ विद्यायै नमः॥ २॥ ॐ सितायै नमः॥ ३॥ ॐ प्रह्वायै नमः॥ ४॥ ॐ सन्ध्यायै नमः॥ ६॥ ॐ शिवायै नमः॥ ७॥ ॐ निशायै नमः॥ ८॥ इति शक्तीः पूजयेत्। तद्बाह्ये पञ्चमावरणे ॐ आर्यायै नम॥ १॥ ॐ प्रज्ञायै नमः॥ २॥ ॐ प्रभायै नमः॥ ३॥ ॐ मेधायै नमः॥ ४॥ ॐ शान्त्यै नमः॥ ५॥ ॐ कान्त्यै नमः॥ ६॥ ॐ धृत्यै नमः॥ ७॥ ॐ सत्यै नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ पूज्याः। तद्बाह्ये षष्ठावरणे ॐ धरायै नमः॥ १॥ ॐ मायायै नमः॥ २॥ ॐ अविन्यै नमः॥ ३॥ ॐ पद्मायै नमः॥ ४॥ ॐ शान्तायै नमः॥ ५॥ ॐ मोघायै नमः॥ ६॥ ॐ जयायै नमः॥ ७॥ ॐ अमलायै नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ शक्तयः पूज्याः॥ ६॥ तद्बाह्ये भूपुरे सप्तमावरणे इन्द्रादीन्॥ ७॥ अष्टमावरणे वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्॥ ८॥ ततो धूपदीपादिविसर्जनान्तं कर्म कृत्वा लक्षमन्त्रात्मकं पुरश्चरणं कुर्यात्। मन्त्रो यथा—ॐ त्र्यम्बकं य्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीय मामृतात्॥ ततो जपान्ते दशांशेन बिल्वं १ पलाशं २ खदिरं ३ वटं ४ तिलान् ५ सर्षपान् ६ पायसं ७ दुग्धं ८ दधि ९ दूर्वां च १० एतैर्दशद्रव्यैर्घृतसंप्लुतैर्हुत्वा तद्दशांशेन मूलमन्त्रान्ते ॐ त्र्यम्बकदेवं तर्पयामि इति तर्पणं कृत्वा तद्दशांशेन आत्मानमभिषिञ्चामीत्यभिषिच्य तद्दशांशेन ब्राह्मणान् भोजयेत्।

पीठपूजा—अब प्रधान पीठ पर त्र्यम्बक यन्त्र में आवरण पूजा करनी चाहिये। प्रथमावरण पूजा त्र्यम्बक यन्त्र में भीतर के प्रथम आवरण में षड्दल कमल में आग्नेयादि षट् कोणों में (चित्र देखिये) हृदयादि छः अङ्गों की पूजा मूलोक्त छः मन्त्रों से करे। द्वितायावरण में 'ॐ अर्कमूर्तये नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से शिव की अष्ट शक्तियों की पूजा करे। तृतीयावरण में 'ॐ रमायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से यन्त्र पर पूर्वादि आठ दिशाओं में पूजा करे। चतुर्थावरण पूजा उसके बाहरी आवरण में 'ॐ विश्वायै नमः' इत्यादि मन्त्रों से अन्य आठ शक्तियों को पूजे। पञ्चमावरण पूजा उसके बाहर पाँचवें आवरण में 'ॐ आर्यायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से करे। फिर उसके बाहर षष्ठ आवरण में 'ॐ धरायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर सप्तमावरण में दिक्पालों का एवं अष्टमावरण में उनके वज्रादि आयुधों को आठ दिशाओं में पूजे। फिर धूप-दीपादिपूर्वक विसर्जन-पर्यन्त कर्म करके मन्त्र का एक लाख की सङ्ख्या में पुरश्चरण करे। मन्त्र है—'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥' जप (पुरश्चरण) के अन्त में दस सहस्र हवन, एक सहस्र तर्पण, एक सौ मार्जन तथा दस ब्राह्मणों का भोजन कराये। हवन में बेल, खदिर, वट, तिल, सरसों, पायस, दूध, दही, पलाश तथा दूर्वा—इन दश द्रव्यों की आहुति दे।

शारदातिलके—

एवं कृते प्रयोगार्हो जायतेऽयं महामनुः। अयुतं जुहुयाद्बिल्वसमिद्भिः सम्पदे सुधीः॥
जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षस्य समिद्भिर्ब्रह्मतेजसे। खादिरैरयुतं हुत्वा कान्तिपुष्टिमवाप्नुयात्॥
वटवृक्षस्य समिधो जुहुयादयुतावधि। धनधान्यसमृद्धः स्यादचिरेणैव साधकः॥
तिलैस्तत्सङ्ख्यया हुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते। सिद्धार्थैरयुतं हुत्वा शत्रून्विजयते नृपः॥
अनेनैव विधानेन नश्येन्मृत्युरकालजः॥

पायसेन कृतो होमो रक्षाश्रीकीर्तिकान्तिदः। गोदुग्धेन च शुद्धान्नं हुत्वा कृत्यां विनाशयेत्॥
अयमेव मतो होमः शान्तिश्रीसम्पदावहः। दधिहोमेन संवादं कुर्याद्विद्वेषिणोर्मिथः॥
प्रत्यहं जुहुयान्मन्त्री दूर्वामष्टोत्तरं शतम्। आमयान्निखिलाञ्जित्वा दीर्घमायुरवाप्नुयात्॥
जुहुयाज्जन्मदिवसे पायसान्नैर्घृतान्वितैः। इच्छन्ननिन्दितां लक्ष्मीमारोग्यमतुलं यशः॥
गव्यदुग्धघृताक्ताभिर्दूर्वाभिर्जुहुयाद्वशी। सविंशतिशतं सम्यक् स्वजन्मदिवसे सुधीः॥
आमयैः सकलैर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुधीः। काश्मरी समिधस्तिस्रः पयोऽन्नं त्रिशतं पृथक्॥
जुहुयाद्ब्राह्मणानन्ते भोजयेन्मधुरान्वितम्। प्रीणयेद्धनधान्याद्यैरात्मनो गुरुमादरात्॥
अनामयमवाप्नोति दीर्घमायुः श्रिया सह। सघृतेन पयोऽन्नेन हुत्वा पर्वणि पर्वणि॥
राज्यश्रियमवाप्नोति षण्मासान्नात्र संशयः। लाजैर्विशुद्धैर्जुहुयात्कन्याप्त्यै सा वराप्तये॥
क्षीरद्रुमसमिद्धोमाद्ब्राह्मणादीन् वशं नयेत्। स्नात्वा सहस्रं प्रजपेदादित्याभिमुखो मनुम्॥
आधिव्याधिविनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात्। अनेन मनुना सर्वं साधयेदिष्टमात्मनः॥

इति शारदातिलकोक्तत्र्यम्बकमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः।

शारदातिलक में कहा है—इस प्रकार से यह मन्त्र प्रयोगार्थ सिद्ध हो जाता है। सम्पत्ति की प्राप्ति के लिये अयुत (दस सहस्र) की सङ्ख्या में बेलफल की आहुति देनी चाहिये। ब्रह्मतेज की प्राप्ति के लिये ब्रह्मवृक्ष (पलाश) की आहुति प्रशस्त होती है। खदिर (खैर) की समिधा की आहुति से शरीर की कान्ति एवं पुष्टि बढ़ती है। वटवृक्ष की समिधा से अयुत सङ्ख्या में होम इस मन्त्र से करने से शीघ्र ही साधक को धन-धान्य की प्राप्ति हो जाती है। पायस द्वारा इस मन्त्र से होम रक्षा, श्री तथा कीर्ति देता है। तिलों से अयुत सङ्ख्यक होम करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। सरसों से अयुत आहुति देने पर शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। इसी विधान से अकालमृत्यु भी दूर होती है। त्र्यम्बक मन्त्र के द्वारा गोदुग्ध में शुद्धान्न पकाकर अयुत होम करने से कृत्या (मूठ) को नष्ट किया जाता है। इसी हवन से शान्ति भी प्राप्त होती है तथा सम्पत्ति मिलती है। दही का होम करने से आपस का विद्वेष दूर होता है। साधक यदि प्रतिदिन दूर्वा से हवन करे (१०८ सङ्ख्या में) तो सम्पूर्ण रोगों को जीत कर दीर्घायु प्राप्त करता है। जन्मदिवस पर पायसान्न में घृत मिलाकर होम करने से अनिन्दित लक्ष्मी, आरोग्य तथा अतुल यश प्राप्त होता है। यदि गोदुग्ध में भिगोकर १२० की सङ्ख्या (एक सौ बीस) में अपने जन्मदिवस पर होम किया जाय तो सम्पूर्ण रोगों से रहित होकर पूर्ण एक सौ वर्ष की आयु प्राप्त होता है। गम्भारी की समिधा को तीन की सङ्ख्या में लेकर क्रमशः दूध एवं अन्न के साथ तीन सौ आहुति देकर अन्त में ब्राह्मणों को मधुर भोजन कराये तथा धन-धान्य से अपने तान्त्रिक गुरु या वैदिक आचार्य को प्रसन्न करे तो दीर्घायु, आरोग्य तथा लक्ष्मी प्राप्त होती है। प्रत्येक पर्व (पूर्णिमा-अमावास्या) को घृत-दूध तथा अन्न का होम करने से छः मास में राज्यश्री प्राप्त होती है; इसमें संशय नहीं है। वर को कन्या की प्राप्ति-हेतु तथा कन्या को वर की प्राप्ति के लिये शुद्ध लाजा से होम करना चाहिये। क्षीरीवृक्ष की समिधाओं के होम से ब्राह्मणादि को वश में किया जाता है। स्नान करके प्रतिदिन सूर्य के सम्मुख एक सहस्र जप करने से आधि-व्याधि से रहित होकर दीर्घायु को प्राप्त होता है। इस विधान से अपने सभी मनोरथों को सफल करना चाहिये।

महामृत्युञ्जयपुरश्चरणप्रयोगः

तत्र तावच्छुभेऽह्नि चन्द्रतारादिबलान्विते सुमुहूर्त्ते शिवालयादिषु जपस्थानं प्रकल्प्य तत्र गोमयोपलेपनादिभिः शुद्धिं कृत्वा आसनभूमौ कूर्मसंशोधनं दीपस्थानशोधनं च कुर्य्यात्। पूर्वदिने प्रायश्चित्तम् अयुतगायत्रीजपं च कृत्वा तद्रात्रौ पूर्वोक्तपद्धतिमार्गेण स्वप्नं विचार्य आरम्भदिने प्रातर्नित्यावश्यकं समाप्य स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य शान्तिपाठं पठित्वा लक्ष्मीनारायणादिदेवान् प्रणमेत्। ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्म्मा ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणतन्त्रोक्तफलावाप्तये अस्मिन् पुण्याहे मम जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्ष-लग्नाद्गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्टस्थानस्थिताऽमुकग्रहसूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीयैकादशशुभस्थानस्थितवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थं (अथवा) अमुकमारकग्रहदशान्तर्दशा तत्सम्बन्धिदशा चोपदशा दिनदशा वा षष्ठाष्टमद्वादशादिनिषिद्धभावाधिपतिदशा तज्जनितपीडाऽल्पायुराधिदेवाधिभौतिकाध्यात्मिकजनित-क्लेशनिवृत्तिपूर्वकायुरारोग्यार्थं परमैश्वर्य्यादिप्राप्त्यर्थं श्रीमहामृत्युञ्जयदेवताप्रीत्यर्थं च अमुकसंख्यया श्रीमहामृत्युञ्जय-मन्त्रजपं विप्रद्वारा कारयिष्ये इति (अथवा) मम जीवच्छरीराऽविरोधेनामुकरोगस्य समूलनाशनेनापमृत्युनिवारणद्वारा क्षिप्रारोग्यार्थं (वा) विषूचिकादिजनमारोपसर्गशान्त्यर्थं (वा) दृष्टिकामार्थम् 'अमुकाभियोगनिवृत्त्यर्थं वा' अमुक-दुःस्वप्ननिरासार्थं अमुकदिग्यात्रानिर्विघ्नपूर्वकसिद्ध्यर्थं (वा) प्रतिसम्मुखशुक्रदोषनिवारणार्थं (वा) काकमैथुन-दर्शनादिसूचितसर्वारिष्टनिवृत्त्यर्थं (वा) पल्लीपतनसरठारोहणामुकदुष्टाङ्गस्फुरणजनिताऽशुभफलविनाशार्थम् (अथवा) अमुकदुष्ट नक्षत्रामुकमृत्युयोगादिदुष्टयोगदुष्टतिथिपापवारदुष्टचन्द्रोत्पन्नज्वराद्यमुकव्याधेर्जीवच्छरीराविरोधेन समूल-नाशार्थम् अमुकसङ्ख्यापरिमितश्रीमहामृत्युञ्जयमन्त्रजपं विप्रद्वाराहं करिष्ये इति (एवं कामनाभेदेन स कल्पो ज्ञेयः)। तदङ्गत्वेन गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यजापकवरणं च करिष्ये इति च सङ्कल्प्य पूर्वोक्तपद्धतिमार्गेण जापकवरणान्तं कर्म्म कुर्यात्। इति विप्रद्वारा कारिते पुरश्चरणे प्रकारः। ततो जपकर्ता स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य धृतरुद्राक्षभस्मत्रिपुण्ड्रः आचम्य प्राणानायम्य, देशकालौ स्मृत्वा मम यजमानस्य वा शरीरे ज्वराद्यमुकरोगनिरासद्वारा सद्य आरोग्यार्थं (वा) अमुककामनासिद्ध्यर्थं श्रीमहामृत्युञ्जयदेवताप्रीत्यर्थं अमुकसङ्ख्या-परिमितश्रीमहामृत्युञ्जयजपं करिष्ये। इति प्रत्याहिकं सङ्कल्प्य ॐ गुरवे नमः। ॐ गणपतये नमः। ॐ इष्टदेवतायै नमः इति नत्वा पूर्वोक्तभूतशुद्ध्यादिश्रीकण्ठादिकलामातृकान्यासान्तं कुर्यात्।

महामृत्युञ्जय पुरश्चरण-प्रयोग—इसके लिये किसी शुभ दिन में तथा शुभ मुहूर्त में जब साधक को चन्द्र एवं तारा का बल प्राप्त हो तब शिवालय आदि में जपस्थान की व्यवस्था करके उस स्थान की भूमि को गोबर से लीपकर शुद्ध कर आसनभूमि पर कूर्म का संशोधन करके दीपस्थान का शोधन करे। जपारम्भ मुहूर्त वाले दिन से एक दिन पूर्व प्रायश्चित्त तथा अयुत (दस सहस्र) गायत्री-जप करके उस रात्रि में पूर्वोक्त पद्धति-मार्ग से स्वप्न का विचार कर आरम्भ दिन में प्रातःकाल के आवश्यक नित्यकर्मों को समाप्त करके अपने आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर आचमन तथा प्राणायाम कर शान्तिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण आदि देवताओं को प्रणाम करे। तदनन्तर देश-काल का सङ्कीर्त्तन करके मूल में लिखित सङ्कल्प का नाम गोत्र एवं उद्देश्य के सहित उच्चारण करे। यह विप्र द्वारा कारित पुरश्चरण का प्रकार है।

यजमान द्वारा स्वयं प्रयोग की विधि—इसमें जपकर्ता अपने आसन पर पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख बैठकर रुद्राक्ष, भस्म तथा त्रिपुण्ड्र धारण कर आचमन तथा प्राणायाम कर देश-काल का स्मरण कर 'मम यजमानस्य वा शरीरे ज्वराद्ययुक्तरोगनिरासद्वारा सद्य आरोग्यार्थं वा अमुककामनासिद्ध्यर्थं श्रीमहामृत्युञ्जयदेवताप्रीत्यर्थं अमुकसङ्ख्यापरिमितश्रीमहामृत्युञ्जयजपं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प प्रतिदिन के लिये करना चाहिये। फिर 'ॐ गुरवे

नमः ॥ १ ॥ ॐ गणपतये नमः ॥ २ ॥ ॐ इष्टदेवतायै नमः ॥ ३ ॥' इन मन्त्रों से गुरुओं को नमस्कार कर पूर्वकथित विधान से भूतशुद्धि आदि श्रीकण्ठादि कला मातृका न्यास-पर्यन्त कर्म करना चाहिये।

जपप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ—

महामत्युञ्जयं वक्ष्ये दुरितापन्निवारणम्। यं प्राप्य भार्गवः शम्भोर्मृतान् दैत्यानजीवयत्॥ १॥

अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वामदेवकहोलवसिष्ठा ऋषयः। पङ्क्तिगायत्र्यनुष्टुभश्छन्दांसि। सदाशिवमहामृत्युञ्जयरुद्रो देवता। ह्रीँ शक्तिः। श्रीँ बीजम्। महामृत्युञ्जयप्रीतये ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। अथ ऋष्यादिन्यासः—ॐ वामदेवकहोलवसिष्ठऋषिभ्यो नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिगायत्र्यनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः वक्त्रे॥ २॥ ॐ सदाशिव-महामृत्युञ्जयरुद्रदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ह्रीं शक्त्यै नमः लिङ्गे॥ ४॥ ॐ श्रीं बीजाय नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। अथ करन्यासः—ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः यजामहे ॐ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॐ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा मध्यामाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः उर्वारुकमिव बन्धनात् ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय हाँ हीं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मृत्योर्मुक्षीय ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मामृतात् ॐ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वलज्वल मां रक्ष रक्ष अघोरास्त्राय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कुर्यात्। अथ वर्णन्यासः—ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः त्र्यं नमः पूर्वमुखे॥ १॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः बं नमः पश्चिममुखे॥ २॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः कं नमः दक्षिणमुखे॥ ३॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः यं नमः उत्तरमुखे॥ ४॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः जां नमः उरसि॥ ५ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मं नमः कण्ठे ॥ ६ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः हें नमः मुखे ॥ ७ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः सुं नमः नाभौ ॥ ८ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः गं नमः हृदि ॥ ९ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः धिं नमः पृष्ठे॥ १० ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः पुं नमः कुक्षौ॥ ११ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः ष्टिं नमः लिङ्गे॥ १२ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः वं नमः गुदे॥ १३ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः धं नमः दक्षिणोरुमूले॥ १४ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः नं नमः वामोरुमूले॥ १५ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः उं नमः दक्षिणोरुमध्ये॥ १६ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः वां नमः वामोरुमध्ये॥ १७॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः रुं नमः दक्षिणजानुनि॥ १८ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः कं नमः वामजानुनि॥ १९ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः रुं नमः दक्षिणजानुवृत्ते॥ २० ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः वं नमः वामजानुवृत्ते॥ २१ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः बं नमः दक्षिणस्तने॥ २२ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः धं नमः वामस्तने॥ २३ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः नां नमः दक्षिणपार्श्वे॥ २४॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मृं नमः वामपार्श्वे॥ २५ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः त्यों नमः दक्षिणपादे॥ २६ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मुं नमः वामपादे॥ २७॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः क्षीं नमः दक्षिणकरे॥ २८ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः यं नमः वामकरे॥ २९ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मां नमः दक्षिणनासायाम्॥ ३० ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मृं नमः वामनासायाम्॥ ३१ ॥ ॐ हौँ ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः तां नमः मूर्ध्नि॥ ३२ ॥ इत्यक्षरन्यासः॥ ॐ त्र्यम्बकं शिरसि॥ १ ॥ ॐ यजामहे भ्रुवोः॥ २ ॥ ॐ सुगन्धिं नेत्रयोः॥ ३ ॥ ॐ

पुष्टिवर्धनं मुखे ॥ ४ ॥ ॐ उर्वारुकं गण्डयोः ॥ ५ ॥ ॐ इव हृदये ॥ ६ ॥ ॐ बन्धनात् जठरे ॥ ७ ॥ ॐ मृत्योः लिङ्गे ॥ ८ ॥ ॐ मुक्षीय ऊर्वोः ॥ ९ ॥ ॐ मा जान्वोः ॥ १० ॥ ॐ अमृतात् पादयोः ॥ ११ ॥ इति पदन्यासः ॥ **ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा ध्यायेत् ॥ अथ ध्यानम्—**

हस्ताम्भोजयुगस्थकुम्भयुगलादुद्धृत्य तोयं शिरः सिञ्चन्तं करयोर्युगेन दधतं स्वाङ्के सकुम्भौ करौ।
अक्षस्रङ्मृगहस्तमम्बुजगतं मूर्द्धस्थचन्द्रस्रवत्पीयूषोन्नतनुं भजे सगिरिजं मृत्युञ्जयं त्र्यम्बकम् ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा मुष्टिमुद्रां मृगमुद्रां शक्तिमुद्रां लिङ्गमुद्रां पञ्चमुखां मुद्रां च प्रदर्श्य पीठपूजां कुर्यात्। तद्यथा— 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्त पीठदेवताभ्यो नमः' इति पीठं सम्पूज्य ॐ वामायै नमः ॥ १ ॥ ॐ ज्येष्ठायै नमः ॥ २ ॥ ॐ रौद्र्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ काल्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ कलविकरिण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ बलविकरिण्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ बलप्रमथन्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः ॥ ८ ॥ मध्ये ॐ मनोन्मन्यै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। ततः 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायाऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इति मन्त्रेणासनं दत्त्वा तत्र ॐ महीद्यौरित्यादि पूर्वोक्तपद्धतिमार्गेण यथाविधिं पूर्णपात्रान्तं ताम्रकलशं संस्थाप्य तत्त्वायामीति वरुणमावाह्य सम्पूज्य कलशस्य मुखे विष्णुरित्याद्यभिमन्त्र्य 'देवदानवसंवादे' इत्यादि प्रार्थयेत्। ततः कलशोपरि कौशेयवस्त्रं प्रसार्य तत्र अष्टगन्धेन मृत्युञ्जययन्त्रं विलिख्य अथवा ताम्रमयं यन्त्रं संस्थाप्य तन्मध्ये प्रधानदेवत्र्यम्बकप्रतिमां पलसुवर्णरचितां अग्न्युत्तारणपूर्वकं मूलेन संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैर्मूलमन्त्रेण सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

जपप्रयोग (मन्त्रमहोदधि के अनुसार)—अब मैं महामृत्युञ्जय जप को कहता हूँ, जो विपत्तियों का निवारक है, जिसे शुक्राचार्य ने भगवान् शङ्कर से प्राप्त कर दैत्यों को पुनर्जीवित किया था। सर्वप्रथम 'अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वामदेवकहोलवसिष्ठा ऋषयः। पङ्क्तिगायत्रीअनुष्टुप् छन्दांसि। सदाशिवमहामृत्युञ्जयरुद्रो देवता। ह्रीं शक्तिः। श्रीं बीजम्। महामृत्युञ्जयप्रीतये ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। फिर मूल में लिखित 'ॐ वामदेववसिष्ठऋषिभ्यो नमः मूर्ध्नि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि का न्यास करने के उपरान्त 'ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवते शूलपाणये स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मूल में लिखित छः मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। फिर इन्हीं छः मन्त्रों से क्रमशः हृदयादि छः अङ्गों का न्यास करना चाहिये। इसके बाद फिर 'ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यं नमः पूर्वमुखे' इत्यादि बत्तीस मन्त्रों से मृत्युञ्जय देवता के अङ्गों में वर्णन्यास (अक्षरन्यास) करना चाहिये। तदुपरान्त 'ॐ त्र्यम्बकं शिरसि०' इत्यादि ग्यारह मूलोक्त मन्त्रों से पदन्यास करके फिर मूल मन्त्र से व्यापक करना चाहिये। तदुपरान्त मूल में लिखित 'हस्ताम्भोज०' इत्यादि मन्त्र से भगवान् मृत्युञ्जय का ध्यान करना चाहिये। ध्यान करने के बाद मुष्टिमुद्रा, मृगमुद्रा, शक्तिमुद्रा, लिङ्गमुद्रा, पञ्चमुखमुद्रा—इन पाँच मुद्राओं को क्रमशः प्रदर्शित कर 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' इस मन्त्र से पीठपूजा करने के पश्चात् 'ॐ वामायै नमः' इत्यादि नौ मूलोक्त मन्त्रों से पीठशक्तियों की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायाऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पीठ को आसन प्रदान करे। फिर पूर्वोक्त पद्धतिमार्ग से 'महीद्यौः' इत्यादि से पूर्णपात्र-सहित ताम्रकलश का स्थापन तथा पूजन करने के पश्चात् 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि श्लोकों से कलश की प्रार्थना करके कलश के ऊपर रेशमी वस्त्र लपेटकर अथवा प्रसारित करके उसपर अष्टगन्ध से मृत्युञ्जय यन्त्र का लेखन करना चाहिये अथवा ताम्रनिर्मित मृत्युञ्जय यन्त्र को स्थापित कर देना चाहिये। फिर उस यन्त्र के मध्य में प्रधान देवता त्र्यम्बक की प्रतिमा, जो कि एक पलभार सुवर्ण से बनी हो, अग्नि उत्तारणपूर्वक मूल मन्त्र द्वारा स्थापित करके उसकी प्राणप्रतिष्ठा करके आवाहन से लेकर षोडशोपचार तक पूजन करने के बाद आवरणपूजा करनी चाहिये।

महामृत्युञ्जययन्त्रम्
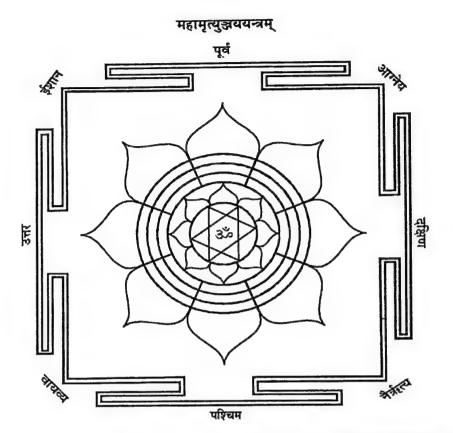
तद्यथा मध्ये—ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिब्रह्माशिवोमेअस्तुसदा शिवोम्॥ इति मन्त्रेणेशानम्॥१॥ पूर्वे-ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥ इति तत्पुरुषम्॥२॥ दक्षिणे-ॐ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्व्वशर्व्वेभ्योनमस्तेअस्तुरुद्ररूपेभ्यः॥ इति अघोरम्॥३॥ पश्चिमे-ॐ वामदेवायनमोज्येष्ठायनमःश्रेष्ठायनमोरुद्रायनमः कालाय नमः कलविकरणायनमोबल विकरणायनमः॥ इति वामदेवम्॥४॥ उत्तरे-ॐ सद्योजातंप्रपद्यामिसद्योजातायवैनमोनमः भवेभवेनातिभवेभवस्वमां भवोद्भवाय नमः॥ इति सद्योजातं च पूजयेत्॥५॥ इति प्रथमावरणम्॥१॥ ततः ईशानादि समीपेषु निवृत्त्याद्याः कलाः क्रमात् संस्थाप्य ॐ निवृत्त्यै नमः॥१॥ ॐ प्रतिष्ठायै नमः॥२॥ ॐ विद्यायै नमः॥३॥ ॐ शान्त्यै नमः॥४॥ ॐ शान्त्यतीतायै नमः॥५॥ इति सम्पूज्य ततः षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च पूर्वोक्तन्यासक्रमेण हृदयादिषडङ्गानि सम्पूजयेत्। इति द्वितीयावरणम्॥२॥ तद्बहिः पूर्वादिक्रमेण ॐ सूर्यमूर्तये नमः॥१॥ ॐ इन्दुमूर्तये नमः॥२॥ ॐ क्षितिमूर्तये नमः॥३॥ ॐ तोयमूर्तये नमः॥४॥ ॐ अग्निमूर्तये नमः॥५॥ ॐ पवनमूर्तये नमः॥६॥ ॐ आकाशमूर्तये नमः॥७॥ ॐ यज्ञमूर्तये नमः॥८॥ इति तृतीयावरणम्॥३॥ तद्बहिः—ॐ रमायै नमः॥१॥ ॐ राकायै नमः॥२॥ ॐ प्रभायै नमः॥३॥ ॐ ज्योत्स्नायै नमः॥४॥ ॐ पूर्णायै नमः॥५॥ ॐ ऊषायै नमः॥६॥ ॐ पूरण्यै नमः॥७॥ ॐ सुधायै नमः॥८॥ इति चतुर्थावरणम्॥४॥ तद्बहिः ॐ विश्वायै नमः॥१॥ ॐ वन्द्यायै नमः॥२॥ ॐ सितायै नमः॥३॥ ॐ प्रह्सायै नमः॥४॥ ॐ सारायै नमः॥५॥ ॐ सन्ध्यायै नमः॥६॥ ॐ शिवायै नमः॥७॥ ॐ निशायै नमः॥८॥ इति पञ्चमावरणम्॥५॥ तद्बहिः—ॐ आर्यायै नमः॥१॥ ॐ प्रज्ञायै नमः॥२॥ ॐ प्रभायै नमः॥३॥ ॐ मेधायै नमः॥४॥ ॐ शान्त्यै नमः॥५॥ ॐ कान्त्यै नमः॥६॥ ॐ धृत्यै नमः॥७॥ ॐ मत्यै नमः॥ इति

षष्ठावरणम्॥६॥ तद्बहिः ॐ धरायै नमः॥१॥ ॐ उमायै नमः॥२॥ ॐ पावन्यै नमः॥ ॐ पद्मायै नमः॥४॥ ॐ शान्तायै नमः॥५॥ ॐ अमोघायै नमः॥६॥ ॐ जयायै नमः॥७॥ ॐ अमलायै नमः॥८॥ इति सप्तमावरणम्॥७॥ तद्बहिः—ॐ अनन्ताय नमः॥१॥ ॐ सूक्ष्माय नमः॥२॥ ॐ शिवोत्तमाय नमः॥३॥ ॐ एकनेत्राय नमः॥४॥ ॐ एकरुद्राय नमः॥५॥ ॐ त्रिमूर्तये नमः॥६॥ ॐ श्रीकण्ठाय नमः॥७॥ ॐ शिखण्डिने नमः॥८॥ इति अष्टमावरणम्॥८॥ तत उत्तरदिशमारभ्य—ॐ उमायै नमः॥१॥ ॐ चण्डेश्वराय नमः॥२॥ ॐ नन्दिने नमः॥३॥ ॐ महाकालाय नमः॥४॥ ॐ गणेशाय नमः॥५॥ ॐ वृषभाय नमः॥६॥ ॐ भृङ्गिरिटये नमः॥७॥ ॐ स्कन्दाय नमः॥८॥ इति नवमावरणम्॥९॥ तद्बहिः—ॐ ब्राह्म्यै नमः॥१॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः॥२॥ ॐ कौमार्यै नमः॥३॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥४॥ ॐ वाराह्यै नमः॥५॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥६॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥७॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः॥८॥ इति दशमावरणम्॥१०॥ तद्बाह्ये चतुरस्रे भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये तत्तत्समीपे वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्॥१२॥ इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनप्रदक्षिणानमस्कारैर्मूर्तिं पूजयेत्। ततः कृताञ्जलिः।

ॐ मृत्युञ्जय महारुद्र त्राहि मां शरणागतम्। जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः॥१॥
तावकस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चितोऽहं सदा मृड। इति विज्ञाप्य देवेशं जपेन्मृत्युञ्जयं परम्॥२॥
इति प्रार्थ्य मध्यन्दिनावधि जपं कुर्यात्।

आवरणपूजा—सर्वप्रथम यन्त्र के मध्य में 'ॐ ईशानः सर्वविद्यानाम्०' इत्यादि मूल में लिखित मन्त्र से ईशान का पूजन, फिर पूर्व में 'ॐ तत्पुरुषाय विद्महे०' इत्यादि मन्त्र से तत्पुरुष का पूजन, फिर दक्षिण में 'ॐ अघोरेभ्यो०' इत्यादि मन्त्र से अघोर का, फिर पश्चिम में 'ॐ वामदेवाय नमः' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र से वामदेव का, फिर 'ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि०' इत्यादि से उत्तर में सद्योजात का पूजन करे। इस प्रकार से यह मध्य के प्रथम आवरण का पूजन होता है। पुनः ईशानादि पूर्वकथित पाँच स्थानों के समीप मध्य से आरम्भ करके 'ॐ निवृत्त्यै नमः' इत्यादि मन्त्रों से शिवजी के पाँचों मुखों की कलाओं का पूजन द्वितीयावरण में करना चाहिये। द्वितीय आवरण के बाहर तृतीयावरण में पूर्वादि क्रम से 'ॐ इन्दुमूर्तये नमः' इत्यादि ८ मन्त्रों से दिशाओं एवं विदिशाओं में पूजन करने के उपरान्त 'ॐ रमायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से चतुर्थावरण में पूजन करे। फिर 'ॐ विश्वायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पञ्चमावरण में क्रम से पूजा करे। षष्ठावरण में 'ॐ आर्यायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूर्वादि दिशाओं में पूजन करे। फिर 'ॐ धरायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से सप्तमावरण में पूर्वादि आठ दिशाओं में पूजन करे। तदनन्तर अष्टमावरण में 'ॐ अनन्ताय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर उत्तर दिशा से आरम्भ कर 'ॐ उमायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से नवें आवरण में पूजन करे। फिर 'ॐ ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से नवमावरण के बाहर की ओर उत्तरादिक्रम से दशमावरण में पूजन करना चाहिये। दशमावरण के बाहर भूपुर में पूर्वादि क्रम से (पूर्व-आग्नेय-दक्षिण-नैर्ऋत्य-पश्चिम-वायव्य-उत्तर तथा ईशान में) पूजन करना चाहिये। यह पूजन इन्द्रादि दश दिक्पालों तथा उनके आयुधों का करना चाहिये। इसमें ऊर्ध्व (नौवीं दिशा) की पूजा ईशान तथा पूर्व के बीच में एवं अधः (दशवीं दिशा) की पूजा नैर्ऋत्य तथा पश्चिम में करनी चाहिये। इस प्रकार आवरणपूजा करके धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन, प्रदक्षिणा तथा नमस्कार-पर्यन्त पूजन करने के उपरान्त मूल में लिखित 'ॐ मृत्युञ्जय महारुद्र त्राहि मां शरणागतम्। जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः। तावकस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड॥' से प्रार्थना कर महामृत्युञ्जय मन्त्र का जप करना चाहिये।

मन्त्रस्वरूपम्—'ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः ॐ त्र्यम्बकं य्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्॥ उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् भूर्भुवः स्वरों जूँ सः हौ ॐ॥५०॥' ततो जपान्ते मालां शिरसि निधाय प्राणानायम्य पुनः षडङ्गन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः यजामहे ॐ भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॐ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः उर्वारुकमिव बन्धनात् ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय ह्रां ह्रीं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मृत्योर्मुक्षीय ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ हौं ॐ जूँ सः भूर्भुवः स्वः मामृतात् ॐ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वलज्वल मां रक्षरक्ष अघोरास्त्राय अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा महामृत्युञ्जयकवचं पठित्वा—

गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर॥ १॥

इति प्रार्थ्य ॐ अनेन महामृत्युञ्जयजपाख्येन कर्मणा श्रीमहामृत्युञ्जयः प्रीयतामिति जपमीश्वरार्पणं कुर्यात्। एवं लक्षमन्त्रजपात्मकं पुरश्चरणं कृत्वा जपान्ते दशांशतो दशद्रव्यैर्होमं कुर्यात्। अथ दश द्रव्याणि—

दशद्रव्यैः प्रजुहुयात्तानि बिल्वफलं तिलाः। पायसं सर्प्पिषा दुग्धं दधि दूर्वा च सप्तमी॥
वटात् पलाशात्खदिरात्समिधो मधुराप्लुताः॥

ततो होमान्ते जले देवं मृत्युञ्जयं सम्पूज्य होमदशांशेन मन्त्रान्ते ॐ मृत्युञ्जयं तर्पयामीत्युक्त्वा दुग्धमिश्रजलेन तर्पणं कुर्यात्। ततस्तर्पणदशांशेन मन्त्रान्ते 'आत्मानमभिषिञ्चामि नमः' इति यजमानमूर्ध्न्यभिषेकः। 'होमतर्पणाभिषेकाणां मध्ये यदेव न सम्भवति तत्स्थाने तत्तद्द्विगुणो जपः कार्य्यः' ततोऽभिषेकदशांशतो वाऽष्टोत्तरशतब्राह्मणभोजनम्। एवं कृते सिद्धो मन्त्रो भवेत्।

महामृत्युञ्जय मन्त्र का स्वरूप—'ॐ हौं जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। भूर्भुव स्वरोम् जूं सः हौं ॐ।' यह महामृत्युञ्जय मन्त्र है। इसका जप करना चाहिये, जप की समाप्ति पर माला को शिर पर लगाकर प्राणायाम करने के उपरान्त मूल में लिखित—'ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से षडङ्गन्यास करना चाहिये। इसके पश्चात् आगे मूल में छपे मृत्युञ्जय कवच का पाठ कर 'गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर॥' ऐसी प्रार्थना करके 'अनेन महामृत्युञ्जयजपाख्येन कर्मणा श्रीमहामृत्युञ्जयः प्रीयताम्' ऐसा कहकर जप को ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिये। इस प्रकार से एक लाख की सङ्ख्या में जप से पुरश्चरण करने के बाद जप की समाप्ति पर उसकी सङ्ख्या का दशमांश (दस सहस्र) होम दश द्रव्यों के द्वारा करना चाहिये। होमार्थ दश द्रव्य हैं—१. बेलफल, २. काले तिल, ३. पायस, ४. घृत, ५. दुग्ध, ६. दधि, ७. दूर्वा, ८. वट की समिधा, ९. खदिर (खैर) की समिधा तथा १०. पलाश की समिधा। इनको शर्करा से प्लावित कर महामृत्युञ्जय जप की सिद्धि के लिये हवन करना चाहिये। होम की समाप्ति पर जल में देव मृत्युञ्जय को पूजकर होम का दशांश महामृत्युञ्जय मन्त्र के अन्त में 'ॐ मृत्युञ्जयं तर्पयामि' लगाकर तर्पण करना चाहिये (तर्पणसङ्ख्या एक सहस्र होती है)। फिर तर्पण का दशांश (एक सौ) मार्जन या अभिषिञ्चन मृत्युञ्जय मन्त्र के अन्त में 'ॐ आत्मानमभिषिञ्चामि' कहकर करना चाहिये। यहाँ तर्पण दुग्धमिश्रित जल से होना चाहिये तथा मार्जन अपने (यजमान के) शिर पर कुश से जल छिड़ककर करना चाहिये।

विशेष—यदि होम, तर्पण तथा मार्जन की व्यवस्था न हो सके तो द्विगुणित सङ्ख्या में जप करना चाहिये। ब्राह्मणभोजन या तो अभिषेक के दशांश (दश की सङ्ख्या में) कराना चाहिये अथवा होमादि न होने पर एक सौ आठ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये।

मन्त्रमहोदधौ—

जन्मभे दशमे तस्मात्पुनश्चैकोनविंशके। जुहुयाद्यः सुधावल्ल्याः समिधश्चतुरङ्गुलाः॥
स रोगान्सकलाञ्शत्रून् पराभूय श्रिया युतः। मोदते पुत्रपौत्राद्यैः शतवर्षाणि साधकः॥
समिद्भिः श्रीफलोत्थाभिर्होमः सम्पत्तिसिद्धये। पलाशतरुजाभिस्तु ब्रह्मवर्चससिद्धये॥
वटोत्थाभिर्धनप्राप्त्यै खादिरीभिस्तु कान्तये। तिलैरधर्म्मनाशाय सर्षपैः शत्रुनष्टये॥
पायसेन कृतो होमः कान्तिश्रीकीर्त्तिदायकः। कृत्यामृत्युक्षयकरो दध्ना संवादसिद्धिदः॥
होमसङ्ख्या तु सर्वत्रायुतमानेन कीर्तिता। अष्टोत्तरशतं दूर्वात्रिकहोमाद्रुजां क्षयः॥
स्वजन्मदिवसे यस्तु पायसैर्मधुरान्वितैः। जुहोति तस्य वर्द्धन्ते कमलारोग्यकीर्तयः॥
गुडूचीबकुलोत्थाभिः समिद्भिर्हवनं नृणाम्। जन्मतारात्रये रोगान्मृत्युं चापि विनाशयेत्॥
प्रत्यहं जुहुयाद्दूर्वां अपमृत्युविनष्टये। किंबहूक्तेन सर्वेष्टं प्रयच्छति शिवो नृणाम्॥
अपामार्गसमिद्भिश्च सिद्धान्नैर्ज्वरनष्टये। दुग्धाक्तैरमृताखण्डैर्मासं होमोऽखिलाप्तये॥

इति मन्त्रमहोदधिप्रोक्तो महामृत्युञ्जयमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः समाप्तः॥

काम्य प्रयोग—मन्त्रमहोदधि में कहा गया है—जन्मनक्षत्र में, जन्म से दशम नक्षत्र में तथा जन्म से उन्नीसवें नक्षत्र में जो सुधावल्ली (गिलोय) की चार अङ्गुल की समिधा से होम करता है, वह सम्पूर्ण रोगों एवं शत्रुओं को पराजित करके लक्ष्मी से युक्त हो जाता है। उसकी आयु सौ वर्ष होती है तथा उसके पुत्र तथा पौत्र आनन्दपूर्वक रहते हैं। बेल के काष्ठ की समिधा से होम करने से सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। पलास की समिधा के होम से ब्रह्मवर्चस् की प्राप्ति होती है। वटवृक्ष की समिधा से धन-प्राप्ति-हेतु हवन (महामृत्युञ्जय मन्त्र से) करना चाहिये। खैर की समिधाओं से कान्ति प्राप्त होती है। अधर्म (पाप) के नाश के लिये इस मन्त्र से तिलों (काले तिलों) का हवन करना चाहिये। सरसों का हवन साधक के शत्रुओं का नाश करता है। पायस से किया गया हवन कान्ति, श्री तथा कीर्ति देता है। साथ ही कृत्याप्रयोग के दुष्प्रभाव तथा मृत्युभय को दूर करता है। दही के द्वारा किया होम परस्पर बन्द संवाद (बोलचाल) को फिर से चालू कर देता है। इन सबमें होम की सङ्ख्या अयुत (दस सहस्र) रखनी चाहिये। यदि दूर्वा से एक सौ आठ होम किये जायँ तो रोगों का नाश होता है। जो अपने जन्मदिवस पर मीठी पायस (खीर) से होम करता है, उसकी लक्ष्मी, आरोग्य तथा कीर्ति बढ़ती है। जो महामृत्युञ्जय मन्त्र की आहुतियाँ गिलोय तथा मौलसिरी की समिधाओं से जन्म के तीन नक्षत्रों पर देते हैं, उनके रोग तथा मृत्यु नष्ट होते हैं। अपमृत्यु के विनाश के लिये प्रतिदिन दूर्वा से होम करना चाहिये। अधिक क्या कहा जाय; इस मृत्युञ्जय मन्त्र के हवन से भगवान् शङ्कर मनुष्यों के सभी अभीष्ट सिद्ध करते हैं। अपामार्ग (ओंगा = अज्झाझारा = लटजीरा) की समिधाओं से सिद्धान्न के साथ इस मन्त्र का हवन ज्वरों को नष्ट करता है। दूध में डुबोकर गिलोय के टुकड़ों का मृत्युञ्जय मन्त्र से एक मास तक किया गया होम सब कुछ प्राप्त कराता है।

वसिष्ठकल्पोक्तमहामृत्युञ्जयविधानम्

अथ वसिष्ठकल्पोक्तं महामृत्युञ्जयादिविधानं शान्तिरत्ने—

त्र्यम्बकस्य विधानं तु कीर्त्तयिष्ये मुनीश्वराः। यथोक्तविधिना युक्तं संस्मृतं ब्रह्मणा पुरा॥

मृत्युञ्जयस्त्रिधा प्रोक्त आद्यो मृत्युञ्जयः स्मृतः। मृतसञ्जीवनी चैव महामृत्युञ्जयस्तथा॥
मृत्युञ्जयः केवलः स्यात्पुटितो व्याहृतित्रयैः। तारं त्रिबीजं व्याहृत्य पुटितो मृतजीवनी॥
तारं त्रिबीजं व्याहृत्य पुटितैस्तैस्त्रियम्बकः। महामृत्युञ्जयः प्रोक्तः सर्वमन्त्रविशारदैः॥
तत्रैव विशेषः—
प्रणवान्ते प्रसादश्च मतिहारकमेव च। भूरादिव्याहृतयश्च त्र्यम्बकेति च ऋक् ततः॥
विपर्ययेण त्रिबीजं तद्वच्च व्याहृतित्रयः। स्वाहान्तो मनुरेषोऽयं शुक्रेणाराधितः पुरा॥
महामृत्युञ्जय इति विश्रुतो भुवनत्रये। ॐकारैः सहितः षड्भिश्चतुर्दशभिरेव च॥
मृत्युञ्जयं तं विधिवदुपास्येप्सितमाप्नुयात्॥

आदौ प्रासादबीजं तदनु मृतिहरं तारकं व्याहृतींश्च प्रोच्चार्य्य त्र्यम्बकं यो जपति मृतिहरं भूय एवैतदाद्यम्।
कृत्वा न्यासं षडङ्गं स्रवदमृतकरं मण्डलान्तःप्रविष्टं ध्यात्वा योगीशरुद्रं स जयति मरणं शुक्रविद्याप्रसादात्॥

अथ मन्त्रस्वरूपम्—ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे इति ऋक्। ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः ॐ ४८ इत्यष्टचत्वारिंशद्वर्णात्मकः केवलमृत्युञ्जयः॥ १॥

ॐ हौं जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे इति ऋक्। ॐ स्वःभुवःभूः ॐ सः जूं हौं ॐ ५२ इति द्विपञ्चाशद्वर्णात्मको मृतसञ्जीवनी मन्त्रः।

अथ महामृत्युञ्जयमन्त्रः—ॐ हौं ॐ जूँ ॐ सः ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः ॐ सः ॐ जूं ॐ हौं ॐ स्वाहा ६२ इति द्विषष्टिवर्णात्मको महामृत्युञ्जयः शुक्राराधितो मन्त्रः। एतन्मन्त्रत्रयाणां न्यासध्यानादिपुरश्चरणं च पूर्वोक्तमन्त्रवत् ज्ञेयम्।

वसिष्ठकल्प के अनुसार महामृत्युञ्जय-विधान—शान्तिरत्न ग्रन्थ में कहा गया है—हे मुनीश्वरों! अब मैं ब्रह्माजी द्वारा बताये गये त्र्यम्बक-विधान को कहता हूँ। जैसा उन्होंने प्राचीन काल में बताया था। मृत्युञ्जय तीन प्रकार का होता है—१. मृत्युञ्जय, २. मृतसञ्जीवनी तथा ३. महामृत्युञ्जय। जो केवल तीनों व्याहृतियों (भूर्भुवः स्वः) से पुटित होता है, उसे मृत्युञ्जय कहते हैं। जो तार (प्रणव = ॐ), त्रिबीज (हौं जूं सः) तथा व्याहृतियों से पुटित होता है, वह मृतसञ्जीवनी होता है। जिसमें तार, त्रिबीज तथा व्याहृति से त्र्यम्बकादि मन्त्र को पुटित किया जाता है, वह मन्त्रशास्त्र के विद्वानों में महामृत्युञ्जय कहा गया है। इसमें यह विशेष है कि प्रणव के पश्चात् प्रासाद (हौं) तथा मतिहारक (जूं सः), फिर भूरादि व्याहृतियाँ तथा उनके पश्चात् त्र्यम्बकादि ऋचा लगाकर फिर विपर्यय से तीनों व्याहृतियाँ लगाकर अन्त में स्वाहा लगा देते हैं। इस मन्त्र का आराधन प्राचीन काल में शुक्राचार्य ने किया था। यह तीनों लोकों में महामृत्युञ्जय नाम से विख्यात है। इस मृत्युञ्जय की ओंकार-सहित विधिवत् उपासना करनी चाहिये। इससे अभीष्ट-सिद्धि प्राप्त होती है। प्रारम्भ में प्रासादबीज, फिर मृत्युनाशक तारक, फिर व्याहृतियों को उच्चारित कर जो 'त्र्यम्बकं' इत्यादि को लगाकर जपता है तो उसकी मृत्यु का नाश होता है। मन्त्रजप के पूर्व षडङ्ग न्यास करके मृत्युञ्जय का ध्यान करने वाला इस शुक्राचार्य की विद्या की कृपा से मृत्यु को जीत लेता है॥ १-८॥

मन्त्र का स्वरूप—(१) मृत्युञ्जय मन्त्र—ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः। इसमें अड़तालीस वर्ण होते हैं।

(२) मृत्सञ्जीवनी—ॐ हौं जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। ॐ स्वः, ॐ भुवः ॐ भूः ॐ सः जूं हौं ॐ। यह बावन वर्णों का मृत्सञ्जीवनी मन्त्र होता है।

(३) महामृत्युञ्जय मन्त्र—ॐ हौं ॐ जूं सः ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। ॐ स्वः, ॐ भुवः ॐ भूः ॐ सः ॐ जूं ॐ हौं ॐ स्वाहा। यह बासठ वर्णों (अक्षरों) का महामृत्युञ्जय मन्त्र है, जिसकी आराधना शुक्राचार्य ने की थी।

इन तीनों प्रकार के मन्त्रों का न्यास, ध्यान तथा पुरश्चरण पूर्वोक्त (महामृत्युञ्जय मन्त्र) की भाँति जानना चाहिये।

प्रयोगविशेषो विधानमालायाम्—

ग्रहपीडासु सर्वासु महागदनिपीडने। वियोगे बान्धवानां च जनमार उपस्थिते॥
राज्यभङ्गे धनग्लानौ क्षिप्रमृत्युविनाशने। अभियोगे समुत्पन्ने मनोधर्मविपर्यये॥
मृत्युञ्जयस्य देवस्य विधानं क्रियते बुधैः। राष्ट्रभङ्गे जनक्लेशे महारोगनिपीडने॥
कोटिसंख्यो जपः प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः। सामान्यगदपीडायां दुष्टस्वप्नस्य दर्शने॥
मृत्युञ्जयस्य देवस्य जपो लक्षमितः शुभः। अपमृत्युविनाशाय जपोऽयुतमितः स्मृतः॥
दुर्वार्ताश्रवणे जाप्यं सुहृदामनृते क्षुते। यात्रा यामयुतं कार्य्यं सहस्त्रं वा समाहितैः॥
पूर्णस्य स्वस्य जाप्यस्य दशांशहवनं मतम्। पायसेन च साज्येन समिद्धिस्तिलसर्पिषा॥
श्रीवृक्षस्य फलैः पत्रैः कमलैः शतपत्रकैः। खर्जूरीभिश्च साज्याभिरन्यैर्यज्ञफलैस्तथा॥
हवनं कारयेद्विद्वान् कृत्वाचार्यार्चनक्रियाम्। ब्राह्मणान् भोजयेत् संयग् दशांशेन यजेत्तथा॥
एवं कृते विधाने च सर्वकर्म्मफलं लभेत्। चिन्तितार्थस्य सिद्धिः स्यान्नात्र कार्य्या विचारणा॥

सिद्ध मन्त्रों के प्रयोग—विधानमाला ग्रन्थ में कहा गया है कि समस्त प्रकार की ग्रहपीड़ाओं में, महान् रोग से पीड़ित होने पर, बान्धवों का वियोग हो जाने पर, महामारी फैलने पर, राज्यभङ्ग होने पर, धन का नाश होने पर, मृत्युभय के उपस्थित होने पर, अभियोग (शासन द्वारा आरोप लगना) लगने पर, मन में चञ्चलता होने पर विद्वानों को मृत्युञ्जय का विधान करना चाहिये। राष्ट्रभङ्ग, महाक्लेश, महामारी-पीड़ा में एक करोड़ जप करना चाहिये। ऐसा तत्त्वदर्शी मुनियों का मत है। सामान्य रोग-पीड़ा तथा दुःस्वप्न-दर्शन होने पर मृत्युञ्जय मन्त्र का एक लाख जप करना शुभ होता है। अपमृत्यु के विनाश के लिये अयुत सङ्ख्या में जप करना चाहिये। दुर्वार्त्ता-श्रवण (बुरी खबर सुनने पर), मित्रों के सम्बन्ध में झूठी अफवाह सुनने पर तथा यात्रा में सङ्कट आने पर भी अयुत (दस सहस्र) की सङ्ख्या में जप करना चाहिये अथवा एक सहस्र जप समाहित चित्त से करना चाहिये। जप पूर्ण होने पर दशांश हवन पायस, घृत, तिल, समिधा, बेल के फल, कोमल बिल्वपत्र, कमल शतपत्रक (गुलाब), खजूरफल आदि से घृत के साथ अथवा अन्य यज्ञीय फलों का हवन करके विद्वान् को पूजन कार्य करना चाहिये। फिर ब्राह्मणभोजन सम्यक् रूप से कराना चाहिये। इस प्रकार के विधान को सम्पन्न करने पर सम्पूर्ण कर्म सिद्ध होते हैं। जो भी मन में सोची हुई इच्छा होती है, वह पूर्ण होती है; इसमें सन्देह नहीं है।

शान्तिरत्ने विशेषः—

आयुःकामो घृतेनाग्नौ जुहुयाल्लक्षसंख्यया। अयुतं वा सहस्त्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥
आरोग्यकामो जुहुयादर्ककाष्ठैर्घृतप्लुतैः। पयसा वापि जुहुयाद्द्रव्येनाज्येन वा पुनः॥
पलाशसमिधो वापि सर्वरोगप्रशान्तये। अच्छिद्रैराम्रपर्णैस्तु यथाक्तैर्जुहुयाज्ज्वरे॥
गुडूचीखण्डकैर्वापि खादिरैर्वा घृतप्लुतैः। प्रमेहे मधुना होमः पयसा वा घृतेन वा॥

औदुम्बरसमिद्भिर्वा होम आमलकेन वा। गुल्मे शाल्मलिहोमः स्यात्तिलैः कृष्णैर्घृतेन वा॥
वर्धमानसमिद्धोमः सद्यः शूलहरो भवेत्।

शान्तिरत्न ग्रन्थ के अनुसार विशेष प्रयोगविधि—आयु की वृद्धि चाहने वाला एक लाख आहुतियाँ अथवा एक अयुत की सङ्ख्या में अथवा एक सहस्र अथवा एक सौ आठ आहुतियाँ घी से दे। आरोग्य चाहने वाले को आक की समिधा को घी में डुबोकर आहुतियाँ देनी चाहिये अथवा दुग्ध से अथवा गोघृत से आहुतियाँ देनी चाहिये। समस्त रोगों की शान्ति-हेतु पलाश-समिधाओं की आहुति दे। ज्वर में छिद्ररहित आम के पत्तों की आहुतियाँ घृत में डुबोकर देनी चाहिये। अथवा ज्वर में गिलोय के टुकड़ों या खैर की समिधाओं को घी में डुबोकर आहुतियाँ देनी चाहिये। प्रमेह रोग में मधु से, दुग्ध से अथवा घृत से आहुतियाँ देकर ऊमर या आँवले से हवन करना चाहिये। शूल रोग में सेमरवृक्ष की समिधाओं से और कृष्ण तिल एवं घी से हवन करना चाहिये। यदि सेमल वृक्ष की समिधाओं से वर्धमानक्रम में होम किया जाय तो शीघ्र ही शूल की पीड़ा नष्ट होती है (प्रथम आहुति में एक समिधा, द्वितीय में दो समिधा, तृतीय में तीन समिधा, चतुर्थ आहुति में चार समिधा से एक साथ होम करना वर्धमानक्रम होता है। इस क्रम से कम से कम १०८ आहुति देनी चाहिये)।

करञ्जसमिधो वापि निर्गुण्डीसमिधोऽपि वा॥
तैलेनाभ्यज्य जुहुयाद्वातरोगप्रशान्तये। शमीसमिद्भिर्जुहुयादतिसारप्रशान्तये॥
शान्त्यर्थमक्षिरोगस्य पलाशसमिधः स्मृताः। उन्मत्तसमिधो हुत्वा अपस्मारात्प्रमुच्यते॥
कुबेराक्षेन्द्रवल्लीभ्यां नेत्रशूलेषु होमयेत्। तैलेनाभ्यज्य जुहुयाद्वज्रखण्डैस्तथैव च॥
मातुलुङ्गगुडूचीनां होमः कामलनाशनः। मधुरत्रयहोमेन शान्तिः स्याद्राजयक्ष्मणाम्॥
होमाच्च फलमूलानां गर्भरोगः प्रशाम्यति। कुष्ठे मसूरिकैर्होमो मधुरत्रयसंयुतैः॥
अथवा तैलसंयुक्तैर्जुहुयाद्गौरसर्षपैः।

वातरोग शान्त करने के लिये करञ्ज की समिधा अथवा निर्गुण्डी की समिधा को तेल में डुबोकर होम करना चाहिये। अतिसार (दस्त) रोग की शान्ति के लिये शमी (छैंकुर=छौंकर) वृक्ष की समिधा से हवन करे। अक्षिरोग (नेत्ररोग) की शान्ति के लिये पलाश की समिधा से होम करते हैं। धतूरे की समिधा का हवन अपस्मार रोग को शान्त करता है। कुबेराक्षी (पाटल वृक्ष) की अथवा इन्द्रवल्ली (इन्द्रायण) की समिधाओं का होम नेत्रशूल की शान्ति के लिये तेल में डुबोकर करना चाहिये अथवा वज्रखण्ड (थूहर वृक्ष के टुकड़ों) को तेल में अभ्यक्त करके होम करना चाहिये। बिजौरा नीबू तथा गिलोय के टुकड़ों का हवन कामला को नष्ट करता है। मधुरत्रय (गुड़, घुंघची तथा सुहागा अथवा समभाग घी, शक्कर तथा मधु का मिश्रण) के हवन के राजयक्ष्मा (फेफड़ों की टी०बी०) शान्त होती है। फलों एवं मूलों का होम गर्भ के रोगों को दूर करता है। मधुरत्रय के साथ मिलाकर मसूर का होम कुष्ठ रोग (चर्मरोग) का नाशक है अथवा तैल मिलाकर श्वेत सर्षप (सफेद सरसों) का हवन करना भी कुष्ठ-नाशक होता है।

ये चान्ये मुखरोगाः स्युः शिरोरोगास्तथैव च॥
ते सर्वे प्रशमं यान्ति तिलैर्होमाद्घृतप्लुतैः। औदराणां तु रोगाणां सर्वेषां शान्तिमिच्छता॥
बिल्ववृक्षसमिद्धोमः कर्त्तव्यो द्विजसत्तम। अधःस्रावे तु जुहुयात्पद्मपत्रैर्घृतप्लुतैः॥
दूर्वाभिर्वा पयोक्ताभिर्जुहुयाच्चन्दनेन वा। अश्वत्थस्य समिद्भिश्च रक्तस्रावे तु होमयेत्॥

अथवा गोघृतेनैव रक्तातीसारशान्तये। अन्यरोगेषु सर्वेषु कण्ठरोगमहोदरे॥
त्रिभिः फलैस्तु जुहुयान्मधुक्षीरघृतप्लुतैः। मधुरत्रयहोमस्तु सर्वरोगोपशान्तये॥
आयुर्वेदेषु यत्प्रोक्तं यस्य रोगस्य भेषजम्। तस्य रोगस्य शान्त्यर्थं तेन तेन च होमयेत्॥

जितने भी मुखरोग तथा शिरोरोग हैं, वे सब घृतमिश्रित कृष्ण तिलों के होम से शान्त हो जाते हैं। जो सम्पूर्ण उदररोगों को शान्त करने का इच्छुक हो, उसे हे द्विजश्रेष्ठ! बिल्व वृक्ष की समिधाओं से होम करना चाहिये। अधःस्राव (रक्तप्रदर, श्वेत प्रदर, अर्श रोग इत्यादि) में कमल के पत्तों को घी में चुपड़ कर होम करते हैं अथवा दूर्वा को घी में आप्लुत कर अधःस्राव की शान्ति के लिये होम किया जाता है; साथ ही चन्दन को घी में मिलाकर अधःस्राव में होम करना चाहिये। रक्तस्राव की शान्ति के लिये अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष की समिधा को घृतप्लुत करके होम करना चाहिये। रक्तातिसार की शान्ति-हेतु गोघृत का होम पीपल की समिधाओं के साथ करना चाहिये। अन्य सभी रोगों, कण्ठरोग तथा जलोदर में त्रिफला के तीन फलों को मधु एवं घृत, दूध में प्लुत कर होम करना चाहिये। समस्त रोगों की शान्ति के लिये मधुरत्रय का होम करना चाहिये। आयुर्वेद में जिस रोग की जो औषधि बतायी गयी है, उस औषधि का होम उस रोग की शान्ति के लिये करना चाहिये।

श्रीकामो बिल्ववृक्षस्य समिद्भिरथवा फलैः। पत्रैर्वाप्यस्य जुहुयान्महतीं श्रियमाप्नुयात्॥
विद्यार्थी जुहुयाद्यस्तु रुद्राक्षैर्गोघृतप्लुतैः। विद्यां चायुस्ततो वित्तं लभते नात्र संशयः॥
वृष्टिकामस्तु सम्पूज्य देवदेवं त्रियम्बकम्। अर्घ्यपाद्यादिभिर्देवमब्लिङ्गैरभिषेचयेत्॥
आपो हिष्ठेति तिसृभिर्हिरण्यवर्णादिभिस्तथा। पावमानानुवाकेन त्र्यम्बकेत्यनया ऋचा॥
वैतसीभिः समिद्भिश्च जुहुयात्पयसाप्लुतैः। अयुतं वा सहस्रं वा जुहुयात्पयसापि वा॥
पुण्याहं वाचयेद्विप्रैर्ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः। दशाहाभ्यन्तरे वृष्टिर्भवत्येव न संशयः॥
वृष्टिकामश्चार्द्रवासा वटवृक्षसमुद्भवैः। समिद्भिर्जुहुयान्मन्त्रान्सद्यो वृष्टिमवाप्नुयात्॥
नाभिमात्रे जले स्थित्वा ध्यायन् वै पुष्टिवर्धनम्। जपेत्त्रियम्बकं मन्त्रं महतीं वृष्टिमाप्नुयात्॥
अग्निहोत्रात्समादाय सितं भसितमुत्तमम्। अनया तु ऋचा हुत्वा जले वृष्टिं निवारयेत्॥
पुत्रकामस्तु जुहुयात्पायसं घृतसंयुतम्। चरुशेषं स्वयं भुक्त्वा पुत्रमाप्नोति मानवः॥

इति वसिष्ठकल्पोक्तं मृत्युञ्जयसञ्जीवनीमहामृत्युञ्जयविधानं समाप्तम्।

लक्ष्मी चाहने वाले को बेलवृक्ष की समिधाओं का अथवा फलों तथा पत्तों का होम करना चाहिये। इससे उसे महान् लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। जो विद्यार्थी गोघृत में लपेट कर रुद्राक्षों का हवन करता है, उसे विद्या तथा धन की प्राप्ति होती है; इसमें सन्देह नहीं है। वर्षा कराने की इच्छा हो तो त्र्यम्बक देव (शिव) की पूजा अर्घ्य, पाद्य से करके अप् (जल) से उनका अभिषेक करे तथा आपो हिष्ठा० इन ऋचाओं का, 'हिरण्यवर्णादि' ऋचाओं का, पावमान अनुवाक का तथा 'त्र्यम्बकं' इस ऋचा का पाठ कर वेतस् की समिधाओं को दूध में डुबोकर अयुत या सहस्र की सङ्ख्या में हवन करे। विप्रों से पुण्याहवाचन कराये; फिर ब्राह्मणभोजन कराये तो दश दिन के भीतर वृष्टि होती है; इसमें सन्देह नहीं है। अथवा वृष्टि के इच्छुक को गीले वस्त्रों में वटवृक्ष की समिधाओं से मृत्युञ्जय मन्त्र से आहुति देने से तुरन्त वर्षा होती है। नाभिमात्र जल में खड़े होकर पुष्टिवर्धन (शिवजी) का ध्यान करके त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे तो घोर वर्षा होती है। अग्निहोत्र की श्वेत भस्म को लेकर 'त्र्यम्बकं यजामहे' इत्यादि ऋचा का जप करे तो वर्षा रुक जाती है। पुत्रकामी व्यक्ति को पायस में घृत मिलाकर हवन करना चाहिये। इसमें जो चरु शेष बचे, उसे स्वयं खाने से पुत्र की प्राप्ति होती है।

महामृत्युञ्जयकवचम्

भैरव उवाच—

शृणुष्व परमेशानि कवचं मन्मुखोदितम्। महामृत्युञ्जयस्यास्य न देयं परमाद्भुतम्॥ १॥
यद्धृत्वा यत्पठित्वा च यच्छ्रुत्वा कवचोत्तमम्। त्रैलोक्याधिपतिर्भूत्वा सुखितोऽस्मि महेश्वरि॥ २॥
तदेव वर्णयिष्यामि तव प्रीत्या वरानने। तथापि परमं तत्त्वं न दातव्यं दुरात्मने॥ ३॥

ॐ अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयकवचस्य श्रीभैरवः ऋषिः। गायत्रीछन्दः। श्रीमृत्युञ्जय रुद्रो देवता। ॐ बीजम्। जूं शक्तिः। सः कीलकम्। हौमिति तत्त्वम्। श्रीचतुर्वर्गफलसाधनाय पाठे विनियोगः।

मृत्युञ्जय कवच—श्री भैरव ने कहा—हे परमेश्वरि! आप मेरे मुख से कवच सुनो। यह मृत्युञ्जय का कवच परमाद्भुत है। यह हर किसी को नहीं बताना चाहिये। इस उत्तम कवच को धारण करके (कण्ठस्थ करके) तथा इसे पढ़कर स्वयं को इससे आच्छादित कर मैं (भैरव) तीनों लोकों का अधिपति हूँ। हे वरानने! आपकी प्रसन्नता के लिये इस कवच का वर्णन कर रहा हूँ, किन्तु इसे किसी दुरात्मा व्यक्ति को नहीं देना चाहिये॥ १-३॥

विनियोग—'ॐ अस्य श्री महामृत्युञ्जय कवचस्य श्री भैरव ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्री महामृत्युञ्जयरुद्रो देवता। ॐ बीजम्। जूं शक्तिः। सः कीलकम्। हौं इति तत्त्वम्। श्री चतुवर्गफलसाधनाय पाठे विनियोगः' इसको कहकर कवच के विनियोग का जल छोड़ना चाहिए।

चन्द्रमण्डलमध्यस्थे रुद्रमाले विचित्रिते। तत्रस्थं चिन्तयेत्साध्यं मृत्युं प्राप्तोऽपि जीवति॥ १॥
ॐ जूं सः हौं शिरः पातु देवो मृत्युञ्जयो मम। श्रीं शिवो वै ललाटं च ॐ हौं भ्रुवौ सदाशिवः॥ २॥
नीलकण्ठोऽवतान्नेत्रे कपर्दी मेऽवताच्छ्रुती। त्रिलोचनोऽवताद्गण्डौ नासां मे त्रिपुरान्तकः॥ ३॥
मुखं पीयूषघटभृदोष्ठौ मे कृत्तिकाम्बरः। हनुं मे हाटकेशानो मुखं बटुकभैरवः॥ ४॥
कन्धरां कालमथनो गलं गणप्रियोऽवतु। स्कन्धौ स्कन्दपिता पातु हस्तौ मे गिरिशोऽवतु॥ ५॥
नखान्मे गिरिजानाथः पायादङ्गुलिसंयुतान्। स्तनौ तारापतिः पातु वक्षः पशुपतिर्मम॥ ६॥
कुक्षिं कुबेरवरदः पार्श्वौ मे मारशासनः। शर्वः पातु तथा नाभिं शूली पृष्ठं ममाऽवतु॥ ७॥
शिश्नं मे शङ्करः पातु गुह्यं गुह्यकवल्लभः। कटिं कालान्तकः पायादूरू मेऽन्धकघातकः॥ ८॥

मूलकवच प्रारम्भ—चन्द्रमण्डल के मध्य में स्थित विचित्रित रुद्रमाल में साध्य (लक्ष्य) का चिन्तन (ध्यान) करने से मृत्यु को प्राप्त व्यक्ति भी जी उठता है। हे मृत्युञ्जय देव! ॐ जूं सः हौं मेरे शिर की रक्षा करें। श्री शिव ललाट की रक्षा करें तथा ॐ हौं सदाशिव भौंहों की रक्षा करें। नीलकण्ठ नेत्रों की तथा कपर्दी मेरे कानों की रक्षा करें। त्रिलोचन गण्डों (गालों के समीपस्थ कल्ले) तथा त्रिपुरान्तक नाक की रक्षा करें। पीयूषघटभृद् मुख की तथा कृत्तिकाम्बर होठों की रक्षा करें। हाटकेशान मेरे हनु (जबड़ों) की तथा बटुकभैरव मुख की रक्षा करें। कन्धरा (धड़) की रक्षा कालमथन तथा गले की रक्षा गणप्रिय करे। स्कन्धों की रक्षा स्कन्दपिता तथा हाथों की रक्षा गिरीश करे। गिरिजानाथ अङ्गुलियों सहित नखों की रक्षा करें। तारापति स्तनों की तथा पशुपति छाती की रक्षा करें। कुबेरवरद कुक्षि की तथा मारशासन पार्श्वों (पसलियों) की रक्षा करें। शर्व नाभि की तथा शूली मेरी पीठ की रक्षा करें। शङ्कर मेरे शिश्न (लिङ्ग) की तथा गुह्यकवल्लभ गुह्य की रक्षा करें। कटि की कालान्तक तथा अन्धकघातक दोनों ऊरू (घुटनों से ऊपर पैर का भाग) की रक्षा करें॥ १-८॥

जागरूकोऽवताज्जानु जङ्घे मे कालभैरवः। गुल्फौ पायाज्जटाधारी पादौ मृत्युञ्जयोऽवतु॥ ९॥
पादादिमूर्द्धपर्यन्तं सद्योजातो ममावतु। रक्षाहीनं नामहीनं वपुः पात्वमृतेश्वरः॥ १०॥
पूर्वे बलविकरणो दक्षिणे कालशासनः। पश्चिमे पार्वतीनाथ उत्तरे मां मनोन्मनः॥ ११॥
ऐशान्यामीश्वरः पायादाग्नेय्यामग्निलोचनः। नैर्ऋत्यां शम्भुरव्यान्मां वायव्यां वायुवाहनः॥ १२॥
ऊर्ध्वे बलप्रमथनः पाताले परमेश्वरः। दशदिक्षु सदा पातु महामृत्युञ्जयश्च माम्॥ १३॥
रणे राजकुले द्यूते विषमे प्राणसंशये। पायादों जूं महारुद्रो देवदेवो दशाक्षरः॥ १४॥
प्रभाते पातु मां ब्रह्मा मध्याह्ने भैरवोऽवतु। सायं सर्वेश्वरः पातु निशायां नित्यचेतनः॥ १५॥
अर्द्धरात्रे महादेवो निशान्ते मां महोदयः। सर्वदा सर्वतः पातु ॐ जूं सः हौं मृत्युञ्जयः॥ १६॥

जागरूक जानुओं (घुटनों) की तथा कालभैरव जङ्घाओं (पिण्डलियों) की रक्षा करें। जटाधारी गुल्फों (टखनों) की तथा मृत्युञ्जय पैरों की रक्षा करें। पैरों से लेकर शिर-पर्यन्त सद्योजात मेरी रक्षा करें तथा अमृतेश्वर शरीर के रक्षाहीन, नामहीन शेष भाग की रक्षा करें। पूर्व दिशा में बलविकरण, दक्षिण में कालशासन, पश्चिम में पार्वतीनाथ तथा उत्तर में मनोन्मन मेरी रक्षा करें। ईशान कोण (पूर्व+उत्तर का कोना) में ईश्वर मेरी रक्षा करें, अग्निकोण (पूर्व+दक्षिण का कोना) में अग्निलोचन रक्षा करें। नैर्ऋत्य (दक्षिण+पश्चिम) में शम्भु तथा वायव्य (पश्चिम+उत्तर का कोना) में वायुवाहन रक्षा करें। ऊर्ध्व (ऊपर की ओर) में बलप्रमथन एवं पाताल (पैरों के नीचे) में परमेश्वर तथा महामृत्युञ्जय सदैव दशों दिशाओं में मेरी रक्षा करें। युद्ध में, राजकुल (सेना आदि) में, द्यूत (जुआ खेलते समय=चुनाव लड़ते समय), विषम परिस्थिति में, प्राणों का संशय होने पर ॐ जूं महारुद्र दशाक्षर देव देव रक्षा करें। प्रातःकाल में ब्रह्मा तथा मध्याह्न में भैरव मेरी रक्षा करें। सायंकाल में सर्वेश्वर तथा रात्रि में नित्य चेतन रक्षा करें। अर्धरात्रि में महादेव निशान्त में महोदय तथा सब समय में सब ओर से 'ॐ जूं सः हों' मृत्युञ्जय रक्षा करें॥ ९-१६॥

इतीदं कवचं पुण्यं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम्। सर्वमन्त्रमयं गुह्यं सर्वतन्त्रेषु गोपितम्॥ १७॥
पुण्यं पुण्यप्रदं दिव्यं देवदेवाधिदैवतम्। य इदं च पठेन्मन्त्रं कवचं वाचयेत्ततः॥ १८॥
तस्य हस्ते महादेवि त्र्यम्बकस्याष्टसिद्धयः। रणे धृत्वाचरेद्युद्धं हत्वा शत्रूञ्जयं लभेत्॥ १९॥
जयं कृत्वा गृहं देवि स प्राप्स्यति सुखं पुनः। महाभये महारोगे महामारीभये तथा॥ २०॥
दुर्भिक्षे शत्रुसंहारे पठेत्कवचमादरात्।

इति श्रीमहामृत्युञ्जयकवचम्।

इस प्रकार यह पुण्य कवच तीनों लोकों में दुर्लभ है। यह सर्व मन्त्रमय तथा सभी तन्त्रों में गोपनीय है। यह देवदेवाधिदैवत पुण्य, पुण्यप्रद तथा दिव्य है। जो इस कवच का पाठ करता है (बाँचता है), उसके हाथ में हे महादेवि! त्र्यम्बक की आठ-आठ सिद्धियाँ रहती हैं। इसे रण में धारण करने पर योद्धा युद्ध में शत्रु को मारकर विजय प्राप्त करता है एवं जीत कर घर आकर वह महान् सुख प्राप्त करता है। महाभय में, महारोग में, महामारी के भय में, दुर्भिक्ष (अकाल में) तथा शत्रुसंहार में कवच को आदरपूर्वक पढ़ना चाहिये॥ १७-२१॥

रुद्रजपाङ्गभूतदशाक्षरीरुद्रमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

अथ रुद्रविधानानि; तत्र तावत् रुद्रजपाङ्गभूतदशाक्षरीरुद्रमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः। सुमुहूर्त्ते शिवालयादिषु जपयोग्यभूमिं प्रकल्प्य पूर्वदिने प्रायश्चित्तं गायत्र्यायुतजपं च कृत्वा प्रारम्भदिने प्रातर्नित्यकर्म्म समाप्य जपस्थाने कूर्मसंशोधनं

दीपस्थानशोधनं च कुर्य्यात्। ततः स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य भस्मत्रिपुण्ड्रं रुद्राक्षधारणं च कृत्वा, आचम्य, प्राणानायम्य, देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा श्रुतिस्मृतिपुराणागमोक्तफलावाप्तये अस्मिन् पुण्याहे मम सर्वविधपातकनिवृत्त्यर्थं वाऽमुककामनासिद्ध्ये श्रीरुद्रप्रीत्यर्थं रुद्रदशार्णमन्त्रपुरश्चरणं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यजापकवरणं च पूर्ववत्कुर्य्यात्। ततो भद्रंकर्णेभिरिति जपस्थानसमीपमागत्य पूर्वोक्तद्वारपूजां कृत्वा प्रविश्य, स्वासने उपविश्य, आचम्य, प्राणानायम्य, आसनशुद्धिं भूतशुद्धिं स्वप्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च पूर्ववत् कृत्वा पञ्चाक्षरोदितं श्रीकण्ठादिकलान्यासं कुर्य्यात्।

रुद्र के विधान—इसमें सर्वप्रथम दशाक्षरी रुद्रमन्त्र के पुरश्चरण की प्रयोगविधि दी जा रही है। शुभ मुहूर्त में शिवालय इत्यादि में जपयोग्य भूमि की व्यवस्था करके पुरश्चरण आरम्भ के एक दिन पूर्व प्रायश्चित्त कर्म तथा एक अयुत (दश सहस्र = १०,०००) गायत्री-जप कर ले। यह पूर्वदिन का कृत्य है। प्रारम्भ के दिन नित्यकर्म को समाप्त करके जपस्थान में कूर्मसंशोधन, दीपस्थानशोधन कर ले। तत्पश्चात् पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके अपने आसन पर बैठे। फिर भस्म, त्रिपुण्ड्र तथा रुद्राक्ष-धारण, आचमन, प्राणायाम करके सङ्कल्प करे।

सङ्कल्प—प्रथम देश-काल का उच्चारण कर 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहं श्रुतिस्मृतिपुराणागमोक्तफलावाप्तये अस्मिन् पुण्याहे मम सर्वविधपातकनिवृत्त्यर्थं वाऽमुककामनासिद्ध्ये श्रीरुद्रप्रीत्यर्थे रुद्रदशार्णमन्त्रपुरश्चरणं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके गणपतिपूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, नान्दीश्राद्ध, आचार्य-जापकवरण पूर्ववत् (प्रथम तथा द्वितीय काण्ड में वर्णित विधि के अनुसार) करे। फिर 'भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः' इत्यादि ऋचा का जप करते हुए जपस्थान के समीप आकर पूर्वकाण्डों में कथित द्वारपूजा करके प्रवेश कर अपने आसन पर बैठकर आचमन, प्राणायाम, भूतशुद्धि, आसनशुद्धि, स्वयं की प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृका न्यास, बहिर्मातृका न्यास का पूर्वकथित विधि से सम्पन्न कर फिर पञ्चाक्षर मन्त्र की पुरश्चरण-विधि में जो श्रीकण्ठकलान्यास कहा है, उसे करे।

अथ रुद्रविधानमन्त्रन्यासः। 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इति दशाक्षरो मन्त्रः। अस्य श्रीरुद्रमन्त्रस्य बौधायन ऋषिः। पङ्क्तश्छन्दः। रुद्रो देवता। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी॥ तया नस्तन्वाशंतमयागिरिशंताभिचाकशीहि॥१॥ इति शिखायाम्। ॐ अस्मिन्महत्यर्णवेंतरिक्षेभवाऽअधि॥ तेषांᳬंसहस्र योजनेवधन्वानितन्मसि॥२॥ इति शिरसि। ॐ सहस्राणिसहस्रशोबाह्वोस्तवहेतयः॥ तासामीशानो भगवःपराचीना मुखाकृधि॥३॥ इति ललाटे। ॐहुर्ठ०सःशुचिद्वसुरंतरिक्षसद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोणसत्॥ नृषद्वरसदृतसद्व्योमस दब्जागोजाऽऋतजाऽअद्रिजाऽऋतंवृहत्॥४॥ इति भ्रुवोर्मध्ये। ॐ त्र्यम्बकंयजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्व्वारुक मिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥५॥ इति नेत्रयोः। ॐ नमःस्रुत्यायचपथ्यायचनमःकाट्यायच नीप्यायच। नमः कुल्यायचसरस्यायचनमोनादेयायचवैशन्तायच॥६॥ इति कर्णयोः। ॐ मानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानोगोषु मानोऽअश्वेषुरीरिषः। मानोवीरान् रुद्रभामिनोव्वधीर्हविष्मन्तःसदमित्त्वाहवामहे॥७॥ इति नासिकायाम्। ॐ अवतत्य धनुष्ट्वर्ठ०सहस्राक्षशतेषुधे। निशीर्यशल्यानाम्मुखाशिवोनःसुमनाभव॥८॥ इति मुखे। ॐ नीलग्रीवाःशितिकण्ठाः शर्वाअधःक्षमाचराः। तेषांᳬंसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि॥९॥ इति कण्ठे। ॐ नीलग्रीवाः शितिकण्ठादिवर्ठ० रुद्राऽउपश्रिताः। तेषांᳬंसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि॥१०॥ इत्युपकण्ठे। ॐ नमस्तआयुधायानाततायधृष्णवे। उभाभ्यामुत तेनमोबाहुभ्यान्तवधन्वने॥११॥ इति स्कन्धयोः। ॐ यातेहेतिर्मीढुष्टमहस्तेबभूवतेधनुः। तयास्मान्विश्व तस्त्वमयक्ष्मयापरिभुज॥१२॥ इति बाह्वोः। ॐ येतीर्थानिप्रचरन्तिसृकाहस्तानिषङ्गिणः। तेषांᳬंसहस्रयोजनेव धन्वानितन्मसि॥१३॥ इति हस्तयोः। ॐ सद्योजातंप्रपद्यामिसद्योजातायवैनमोनमः। भवेभवेनातिभवेभवस्व

माम्भुवोद्धंवायुनमः॥१४॥ इत्यङ्गुष्ठयोः। ॐ वामदेवायनमोज्येष्ठायनमः श्रेष्ठायनमोरुद्रायनमः कालायनमः। कलविकरणायनमो बलविकरणायनमो बलायनमोबलप्रमथायनमः सर्वभूतदमनायनमोमनोन्मनायनमः॥१५॥ इति तर्जन्योः। ॐ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यःसर्व्वशर्व्वेभ्योनमस्तेअस्तुरुद्ररूपेभ्यः॥१६॥ इति मध्यमयोः। ॐ तत्पुरुषायविद्महेमहादेवायधीमहि। तन्नोरुद्रःप्रचोदयात्॥१७॥ इति अनामिकयोः। ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरःसर्वभूतानाम्ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्माशिवोमेअस्तुसदाशिवोम्॥१८॥ इति कनिष्ठिकयोः। ॐ नमोवःकिरिकेभ्योदेवानाॅं०हृदयेभ्योनमोव्विचिन्वत्केभ्योनमोव्विक्षिणत्केभ्योनमऽआनिर्हतेभ्यः॥१९॥ इति हृदि। ॐ नमो गणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमोनमोव्रातेभ्योव्रातपतिभ्यश्चवोनमोनमोगृत्सेभ्योगृत्सपतिभ्यश्चवोनमोनमोविरूपेभ्योव्विश्वरूपेभ्यश्चवोनमः॥२०॥ इति पृष्ठे। ॐ नमोहिरण्यबाहवेसेनान्येदिशाञ्चपतयेनमोनमोव्वृक्षेभ्योहरिकेशेभ्यःपशूनाम्पतये नमोनमःशष्पिञ्जरायत्विषीमतेपथीनाम्पतयेनमोनमो हरिकेशायोपवीतिनेपुष्टानाम्पतयेनमोनमोबभ्लुशाय॥२१॥ इति पार्श्वद्वये। ॐ विज्ज्यन्धनुःकपर्दिनोविशल्योबाणवाँऽउत। अनेशन्नस्ययाऽइषवऽआभुरस्यनिषङ्गधिः॥२२॥ इति जठरे। ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रेभूतस्यजातःपतिरेकऽआसीत्। सदाधारपृथिवीम्द्यामुतेमाङ्कस्मैदेवायहविषा विधेम॥२३॥ इति नाभौ। ॐ मीढुष्टमशिवतमशिवोनःसुमनाभव। परमेव्वृक्षऽआयुधन्निधायकृत्तिम्वसानऽआचरपिनाकम्बिभ्रदा गहि॥२४॥ इति कट्याम्। ॐ येभूतानामधिपतयोविशिखासःकपर्द्दिनः। तेषाॅंसहस्रयोजनेवधन्वानि- तन्मसि॥२५॥ इति गुह्ये। ॐ जातवेदसेसुनवामसोममरातीयतोनिदहातिवेदः। सनःपर्षदतिदुर्गाणिविश्वानावेव- सिन्धुन्दुरितात्यग्निः॥२६॥ इति शिश्ने। ॐ तामग्निवर्णान्तपसाज्वलन्तींवैरोचनींकर्मफलेषुजुष्टाम्। दुर्गादेवींशरण- महम्प्रपद्येसुतरसितरसेनमः सुतरसितरसे नमः॥१॥ अग्नेत्वंपारया०॥२॥ विश्वानिनोदुर्गहा०॥३॥ पृतनाजित०॥४॥ इति मन्त्रचतुष्टयरूपशिरसा सह॥ इति गुदे। ॐ मानोमहान्तमुतमानोऽअर्भकम्मानऽउक्षन्तमुतमानऽउक्षितम्। मानोवधीः- पितरम्मोतमातरम्मानःप्रियास्तन्वोरुद्ररीरिषः॥२७॥ इति ऊर्वोः। ॐ एषतेरुद्रभागः सहस्वस्राम्बिकयातंजुषस्व स्वाहैषतेरुद्रभागऽ आखुस्तेपशुः॥२८॥ इति जानुनोः। ॐ येपथाम्पथिरक्षयऐलबृदाऽआयुर्युधः। तेषाॅं०सहस्रयो- जनेव धन्वानि तन्मसि॥२९॥ इति पादयोः। ॐ अद्ध्यवोचदधिवक्ताप्रथमोदैव्योभिषक्। अहींश्चसर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योधराचीःपरासुव॥३०॥ इति कवचे। ॐ नमोबिल्मिने च कवचिनेचनमोव्वर्मिणेचवरूथिनेचनमः। श्रुताय च श्रुतसेनायचनमोदुन्दुभ्यायचाहनन्यायचनमोधृष्णवे॥३१॥ इत्युपकवचम्॥ (कवचाद्विपरीतक्रममुप- कवचम्) ॐ नमोस्तुनीलग्रीवायसहस्राक्षायमीढुषे। अथोयेऽअस्यसत्त्वानोहन्तेभ्योकरन्नमः॥३२॥ इति तृतीयनेत्रे। ॐ प्रमुञ्चधन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्ज्याम्। याश्चतेहस्तऽइषवः पराताभगवोवप॥३३॥ इत्यस्त्रम्। इति प्रथमो न्यासः। ॐ यऽएतावन्तश्चभूयाॅंसश्चदिशोरुद्राविततस्थिरे। तेषाॅंसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि॥ इति दिग्बन्धः॥१॥

दशाक्षर मन्त्र—'ॐ नमो भगवते रुद्राय' यह दशाक्षर मन्त्र है। इसके लिये 'अस्य श्रीदशाक्षररुद्रमन्त्रस्य बौधायनऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। रुद्रो देवता, ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े।

फिर मूल में लिखित 'ॐ याते रुद्र शिवा०' इत्यादि मन्त्र से शिखा में, 'ॐ अस्मिन् महत्यर्णवे०' से शिर में, 'ॐ सहस्राणि०' से ललाट में, 'ॐ हंसःशुचि०' से दोनों भौंहों के मध्य में, 'ॐ त्र्यम्बकं०' से दोनों नेत्रों में, 'ॐ नमः स्रुत्याय०' से दोनों कानों में, 'ॐ मानस्तोके०' से नासिका में, 'ॐ अवतत्य०' से मुख में, 'ॐ नीलाग्रीवा०' से कण्ठ में, 'ॐ नीलाग्रीवा०' इत्यादि मूलोक्त द्वितीय मन्त्र से उपकण्ठ में, 'ॐ नमस्त आयुध०' से दोनों स्कन्धों में, 'ॐ याते हेतिर्मीढुष्टम्०' से दोनों बाहुओं में, 'ॐ तीर्थानि०' से दोनों हाथों में, 'ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि०' इत्यादि से दोनों अङ्गूठों में, 'ॐ वामदेवाय नमो०' से दोनों तर्जनियों में, 'ॐ अघोरेभ्यो०' से दोनों मध्यमा अङ्गुलियों में, 'ॐ तत्पुरुषाय विद्महे०' से दोनों अनामिकाओं में, 'ॐ ईशानः सर्वविद्यानां०' से दोनों कनिष्ठाओं

में, 'ॐ नमो वः किरिकेभ्यो०' से हृदय में, 'ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यो०' से पृष्ठ में, 'ॐ नमो हिरण्यवाहवे०' से दोनों पार्श्वों (पसलियों) में, 'ॐ विज्यन्धनुः कपर्दिनो०' से जठर में, 'ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे०' से नाभि में, 'ॐ मीढुष्टम शिवतमो०' से कटि (कमर) में, 'ॐ ये भूतानामधिपतयो०' से गुह्य में, 'ॐ जातवेदसे सुनवाम०' से शिश्न (लिङ्ग) में न्यास करे। इसके पश्चात् 'ॐ तामग्निवर्णाम्०', 'ॐ अग्ने त्वं पारया०', 'ॐ विश्वानिनोदुर्गहा०' तथा 'ॐ पृतनाजित०' इन चार मन्त्रों से शिर के साथ गुद में न्यास करे। फिर 'ॐ मानो महान्तमुतमानो०' इत्यादि मन्त्र से दोनों ऊरुओं में, 'ॐ एषते रुद्रभाग०' से जानुओं में, 'ॐ ये पथापथि०' से दोनों पैरों में, 'ॐ नमो बिल्मिने कवचिने०' से उपकवच में, (कवच से विपरीत क्रम में उपकवच), 'ॐ नमोस्तु नीलग्रीवा०' से तृतीय नेत्र में, 'ॐ प्रमुञ्चधन्वनस्त्वमुभयो०' से अस्त्र में न्यास करे। यह प्रथम न्यास होता है। इसके बाद 'ॐ यऽएतावन्तश्च भूया०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र से दिग्बन्धन करे।

अथाक्षरन्यासः—ॐ नमः शिरसि॥ १॥ ॐ नं नमः नासिकायाम्॥ २॥ ॐ मों नमः ललाटे॥ ३॥ ॐ भं नमः मुखे॥ ४॥ ॐ गं नमः कण्ठे॥ ५॥ ॐ वं नमः हृदि॥ ६॥ ॐ तें नमः दक्षस्तने॥ ७॥ ॐ रुं नमः वामस्तने॥ ८॥ ॐ द्रां नमः नाभौ॥ ९॥ ॐ यं नमः पादयोः॥ १०॥ इति दशाङ्गन्यासो द्वितीयः॥ २॥

अक्षरन्यास—'ॐ ॐ नमः' से शिर में, 'ॐ नं नमः' से नाक में, 'ॐ मों नमः' से ललाट (माथे) में, 'ॐ भं नमः' से मुख में, 'ॐ गं नमः' से कण्ठ में, 'ॐ वं नमः' से हृदय में, 'ॐ तें नमः' से दाहिने स्तन या हाथ में, 'ॐ रुं नमः' से वामहस्त या स्तन में (इस स्थान पर ग्रन्थान्तरों में स्तने तथा हस्ते दोनों ही लिखे मिलते हैं), 'ॐ द्रां नमः' से नाभि में तथा 'ॐ यं नमः' से दोनों पैरों में न्यास करना चाहिये। इस प्रकार इस द्वितीय न्यास को दशाङ्ग न्यास कहते हैं।

ॐ सद्योजातम्प्रपद्यामिसद्योजातायवैनमोनमः। भवेभवे नातिभवेभवस्वमाम्भवोद्भवायनमः॥१॥ इति पादयोर्न्यस्य। ॐ हंसोहंसेति ब्रूयात्। ॐ वामदेवायनमोज्येष्ठायनमः श्रेष्ठायनमोरुद्रायनमः कालायनमः कलविकरणायनमोबलविकरणायनमो बलायनमोबलप्रमथायनमः सर्वभूतदमनायनमोमनोन्मोनायनमः॥२॥ इति ऊर्वोर्न्यस्य हंसोहंसेति ब्रूयात्। ॐ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यःसर्व्वशर्व्वेभ्योनमस्तेअस्तुरुद्र-रूपेभ्यः॥३॥ हृदि विन्यस्य हंसोहंसेति ब्रूयात्। ॐ तत्पुरुषायविद्महेमहादेवाय धीमहि। तन्नोरुद्रःप्रचोदयात्॥४॥ मुखे विन्यस्य हंसोहंसेति ब्रूयात्। ॐ ईशानःसर्वविद्यानामीश्वरःसर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्माशिवोमे अस्तुसदाशिवोम्॥५॥ इति मूर्ध्नि विन्यस्य हंसोहंसेति ब्रूयात्। इति तृतीयो न्यासः। **एवं न्यासत्रयं कृत्वा सम्पुटं कुर्यात्।**

'ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि०' इत्यादि मन्त्र से पादों में न्यास करके 'हंसो हंसो' कहे। फिर 'ॐ वामदेवाय०' मन्त्र से ऊरुओं का न्यास कर 'हंसो हंसो' कहे। फिर 'ॐ अघोरेभ्यो०' मन्त्र से हृदयन्यास करके 'हंसो हंसो' कहे। फिर 'ॐ तत्पुरुषाय विद्महे०' मन्त्र से मुखन्यास कर 'हंसो हंसो' ऐसा कहे। फिर 'ॐ ईशानः सर्वविद्यानां०' से मूर्धा का न्यास कर 'हंसो हंसो' कहे। इस प्रकार यह तीसरा न्यास है। तीनों न्यासों को सम्पन्न करके सम्पुट (कृताञ्जलिपुट) करना चाहिये।

तद्यथा कृताञ्जलिपुटः ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रंहवेहवे सुहवंशूरमिन्द्रम्। ह्वयामिशक्रम्पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनोमघवाधात्विन्द्रः॥ इति मन्त्रेण प्राच्यामिन्द्रं नमस्कुर्यात्॥१॥ ॐ त्वन्नोऽअग्नेवरुणस्यविद्वान्देवस्यहेडोऽ अवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठोवह्नितमःशोशुचानोविश्वाद्वेषांसिप्रमुमुग्ध्यस्मत्। इत्याग्नेय्यामग्निं प्रणमेत्॥२॥ ॐ सुगन्नः पन्थाम्प्रदिशन्नऽएहिज्ज्योतिष्मध्येह्यजरन्नआयुः अपैतुमृत्युरमृतम्मऽआगाद्वैवस्वतोनोऽअभयंकृणोतु॥ इति दक्षिणस्यां यमं प्रणमेत्॥३॥ ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छसातऽइत्या-नमोदेवि-

निर्ऋतेतुभ्यमस्तु॥ इति नैर्ऋत्यां नैर्ऋतिं प्रणमेत्॥४॥ ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते-यजमानोहविर्भिः। अहेडमानोव्वरुणेहबोध्युरुशंस०समानऽआयुःप्रमोषीः॥ इति पश्चिमायां वरुणं प्रणमेत्॥५॥ ॐ आनो-नियुद्भिःशतिनीभिरध्वरं०सहस्त्रिणीभिरुपयाहियज्ञम्। व्वायोऽअस्मिन्त्सवनेमादयस्वयूयम्पातस्वस्तिभिःसदानः॥ इति वायव्यां वायुं प्रणमेत्॥६॥ ॐ व्वयं०सोमव्रतेतवमनस्तनूषुबिभ्रतः। प्रजावन्तःसचेमहि॥ इति उदीच्यां कुबेरं प्रणमेत्॥७॥ ॐ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिंन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहेव्वयम्। पूषानोयथाव्वेद सामसद्वृधे-रक्षितापायुरदब्धःस्वस्तये॥ इति ईशान्याम् ईश्वरं प्रणमेत्॥८॥ ॐ अस्मेरुद्रामेहनापर्वतासोवृत्रहत्येभरहूतौ सजोषाः। यःशंस०सतेस्तुवतेधायि-पज्रऽइन्द्रज्येष्ठाऽअस्माँऽअवन्तु देवाः॥ इत्यूर्ध्वं ब्रह्माणं प्रणमेत्॥९॥ ॐ स्योना पृथिविनोभवानृक्षरानिवेशनी। यच्छानःशर्म्मसप्रथाः॥ इत्यधः पृथिवीं प्रणमेत्॥१०॥

एवं यः सम्पुटं कुर्य्यात् स स्यात् किल्बिषवर्जितः। तं दीप्यमानमीक्ष्यन्ते प्रेतचौराद्युपद्रवाः॥
न पराभवितुं शक्ताः पलायन्ते विदूरतः॥

एवं सम्पुटं कृत्वा चतुर्थं रक्षान्यासं कुर्यात्।

दशों दिशाओं में प्रणाम—१. 'ॐ त्रातारमिन्द्रः' इस मन्त्र से पूर्व दिशा के अधिपति इन्द्र को प्रणाम करे। २. 'ॐ त्वन्नो अग्ने०' इत्यादि मन्त्र से अग्निकोण के अधिपति अग्नि को अग्निकोण में प्रणाम करे। ३. 'ॐ सुगन्नपन्था०' इत्यादि ऋचा से दक्षिण में दिक्पाल यम को प्रणाम करे। ४. 'ॐ असुन्नवन्तं०' मन्त्र से नैर्ऋत्य कोण में उसके स्वामी निर्ऋति को प्रणाम करे। ५. फिर पश्चिम दिशा में उसके अधिपति वरुण को 'ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा०' इत्यादि मन्त्र से प्रणाम करे। ६. फिर 'ॐ आनो नियुद्भिः०' इत्यादि ऋचा से वायुकोण में उसके अधिपति वायु को प्रणाम करे। ७. फिर 'ॐ वयं सोम०' इत्यादि ऋचा से उत्तर में उसके दिगीश सोम (कुबेर) को प्रणाम करे। ८. फिर ईशान कोण में 'ॐ तमीशानं जगतस्थुष०' इस ऋचा से उसके अधिपति ईश्वर (शिव) को प्रणाम करे। ९. फिर ईशान एवं पूर्व के मध्य में 'ॐ अस्मैरुद्रामेहना०' इत्यादि ऋचा से ब्रह्मा (ऊर्ध्व दिशा के स्वामी) को प्रणाम करे। १०. फिर सबसे अन्त में 'ॐ स्योनापृथिवीनो०' मन्त्र से नैर्ऋत्य तथा पश्चिम के बीच में अधः के स्वामी अनन्त को पृथ्वी में प्रणाम करना चाहिये। जो इस प्रकार सम्पुट (दिशाओं में) प्रणाम करता है, वह पापरहित हो जाता है। उसको प्रकाशित देखकर चोर, प्रेत आदि उपद्रव आँख उठाकर भी नहीं देखते हैं। उसे वे अपराजित जानकर दूर से ही भाग जाते हैं। इस प्रकार से सम्पुट (दिग्रक्षण) करके फिर चौथा न्यास (रक्षान्यास) करना चाहिये।

ॐ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्यबृहस्पतिर्य्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टंय्यज्ञंस० समिमन्दधातु। विश्वेदेवासऽइह-मादयन्तामो ३ म्प्रतिष्ठ॥१॥ इति गुह्ये। ॐ अबोध्यग्निःसमिधाजनानाम्प्रतिधेनुमिवायतीमुषासम्। जिह्वाऽइव-प्रवयामुज्जिहानाःप्रभानवःसिस्रतेनाकमच्छ॥२॥ इति जठरानले। ॐ मूर्द्धानन्दिवोऽअरतिम्पृथिव्यावैश्वानर-मृतऽआजातमग्निङ्कविंस०सम्राजमतिथिंजनानामासन्नापात्रंजनयन्तदेवाः॥३॥ इति हृदये। ॐ मर्म्माणितेवर्म्मणा च्छादयामिसोमस्त्वाराजामृतेनानुवस्ताम्। उरोर्वरीयोव्वरुणस्तेकृणोतुजयन्तन्त्वानुदेवामदन्तु॥४॥ इति मुखे। ॐ जातवेदायदिवापावकोसि वैश्वानरोयदिवावैद्युतोसिसम्प्रजाभ्योयजमानायलोकं ऊर्जम्पुष्टिं ददद्भ्यावव्रृत्स्व॥१॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखोविश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यांधमतिसम्पतत्रैर्द्यावाभूमीजनयन्देवऽएकः इति शिरसि॥५॥ इति चतुर्थो न्यासः।

फिर चतुर्थ न्यास (रक्षान्यास) इस प्रकार करे—'ॐ मनोजूति०' इस मूलोक्त मन्त्र से गुह्य में न्यास करे। फिर

'ॐ अबोध्यग्निः' इत्यादि ऋचा से जठराग्नि में न्यास करे (इस न्यास से जापक की भूख तथा पाचन शक्ति नहीं बिगड़ती है)। फिर 'ॐ मूर्धानं दिवो०' ऋचा से हृदय में न्यास करे। 'ॐ मर्माणिते०' इस ऋचा से मुख में न्यास करे। 'ॐ जातवेदाय दिवा पावकोसि०' तथा 'ॐ विश्वतश्चक्षु' इत्यादि दो ऋचाओं से शिर में न्यास करे।

अथ षडङ्गन्यासः पञ्चमः—ॐ यज्जाग्रत इत्यादिशिवसङ्कल्पान्ते ॐ हृदयाय नमः॥१॥ ॐ सहस्रशीर्षा पुरुष इत्यादिपुरुषसूक्तान्ते ॐ शिरसे स्वाहा॥२॥ ॐ अद्भ्यः संभूत इत्याद्युत्तरनारायणान्ते शिखायै वषट्॥३॥ ॐ आशुः शिशान इत्यप्रतिरथान्ते कवचाय हुम्॥४॥ ॐ विभ्राड्बृहदित्यादिसूक्तान्ते नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव इत्यादिशतरुद्रियान्ते अस्त्राय फट्॥६॥ इति पञ्चमो न्यासः। **यज्जाग्रत इति षडर्चस्य शिवसङ्कल्प ऋषिस्त्रिष्टुपुछन्दः मनो० हृदयन्यासे विनियोगः।**

'ॐ यज्जाग्रतो०' इत्यादि छः ऋचाओं के शिवसङ्कल्पसूत्र को पढ़कर हृदयाय नमः कहकर हृदयन्यास करे। 'ॐ सहस्रशीर्षा०' इत्यादि सोलह ऋचाओं के पूरे पुरुषसूक्त का पाठ करके 'ॐ शिरसे स्वाहा' कहे। फिर 'ॐ अद्भ्यः संभृतं०' इत्यादि पूरे नारायणसूक्त का पाठ कर 'शिखायै वषट्' कहे। फिर 'ॐ आशुः शिशानो०' इत्यादि पूरे अप्रतिरथसूक्त (सत्रह ऋचाएँ) पढ़कर 'ॐ कवचाय हुं' कहे। फिर 'ॐ विभ्राट् बृहत्०' इत्यादि ऋचा से आरम्भ करके पूरा सूर्यसूक्त पढ़कर 'नेत्रत्रयाय वौषट्' कहे। अन्त में 'नमस्ते रुद्रमन्यव०' से आरम्भ कर पूरे शतरुद्रियसूक्त को पढ़कर अन्त में 'अस्त्राय फट्' कहे। यह पाँचवें न्यास की विधि है।

'अस्य श्रीमज्जाग्रत इति षडर्चस्य शिवसङ्कल्प ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। मनो देवता। हृदयन्यासे विनियोगः' कहकर हृदयन्यास के विनियोग के लिये जल छोड़ना चाहिये। यह शिवसङ्कल्प सूक्त का विनियोग है। आगे शिवसङ्कल्पसूक्त, पुरुषसूक्त इत्यादि सभी सूक्त दिये जा रहे हैं।

शिवसङ्कल्पसूक्तम्

ॐ यज्जाग्ग्रतोदूरमुदेतिदैवंतदुसुप्तस्यतथैवैतिं। दूरङ्ग्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेकंतन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु॥१॥ येनुकर्म्माण्यपसोमनीषिणोयज्ञेकृण्वन्तिविदथेषुधीराः। यदंपूर्वंयक्षमन्तःप्रजानान्तन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु॥२॥ यत्प्रज्ञानमुतचेतोधृतिश्चयज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु। यस्मान्नऽऋतेकिञ्चनकर्म्मक्क्रियतेतन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु॥३॥ येनेदम्भूतम्भुवनम्भविष्यत्परिगृहीतममृतेनुसर्व्वम्। येनयुज्ञस्तायतेसुप्तहोतातन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु॥४॥ यस्मिन्नृचःसामयजूंषियस्मिन्प्रतिष्ठितारथनाभाविवाराः। यस्मिँश्चित्तठं०सर्व्वमोतम्प्रजानान्तन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु॥५॥ सुषारुथिरश्वानिवयन्मनुष्यान्नेनीयतेभीशुभिर्व्वाजिनऽइव। हृत्प्रतिष्ठंयदजिरञ्जविष्ठन्तन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु॥६॥ इति हृदयाय नमः॥१॥

शिवसंकल्प सूक्त—जो मानवीय मन जागृतावस्था तथा सुप्तावस्था दोनों में ही दूर तक गमन करता है, वह मन शुभ सङ्कल्प करने वाला बने। जिस मन से कर्मानुष्ठान में संलग्न मनीषीजन श्रेष्ठ कर्मों का सम्पादन करते हैं तथा विविध प्रकार के यज्ञों (द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, ज्ञानयज्ञ) आदि करते हैं तथा जो प्रत्येक प्राणी की देह में विद्यमान रहता है, वह मन शुभ सङ्कल्पों को करे। जो मन उत्कृष्ट ज्ञान की ज्योति के रूप में मार्गदर्शन करता है, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्पों वाला हो। जिस अमरत्वयुक्त मन ने भूत, वर्तमान तथा भविष्यत् काल को परिगृहीत किया है तथा जिससे सप्त होता गुणों से यज्ञ का विस्तार होता है, वह अच्छे सङ्कल्पों को करने वाला हो। जिस मन में वैदिक ऋचाएँ प्रतिष्ठित हैं तथा जिसमें ऋचाएँ, साममन्त्र तथा यजुः इस प्रकार से स्थापित हैं जैसे रथ के पहिये की नाभि में अरे प्रतिष्ठित रहते हैं। जिस मन में मनुष्यों के सम्पूर्ण चित्तों का ज्ञान स्थित है, वह मन शुभ सङ्कल्पों से

युक्त हो। जिस प्रकार से अच्छा सारथी लगाम के नियन्त्रण द्वारा गतिमान् अश्वों को अपने गन्तव्य पथ पर इच्छित स्थान तक इधर-उधर होते हुए ले जाता है, उसी प्रकार यह मानव मन अपने लक्ष्य तक पहुँचता है तथा जरारहित अतिवेगशील मन इस हृदय (शिरोहृदय=मन) में विराजमान है, वह मन सदैव शिव सङ्कल्पवान् हो।

पुरुषसूक्तम्

ॐ सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायणऋषिः आद्यानां पञ्चदशानामनुष्टुप् छन्दः यज्ञेनयज्ञमित्यस्य त्रिष्टुप् छन्दः जगद्बीजं पुरुषो देवता शिरोन्यासे विनियोगः। ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। सभूमिर्ठ०सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्॥१॥ पुरुषएवेर्ठ० सर्व्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नै नातिरोहति॥२॥ एतावानस्यमहिमातो ज्ज्यायाँश्च पूरुषः। पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि॥३॥ त्रिपादूर्द्ध्वऽ उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः। ततो व्विष्वङ्व्यक्क्रामत्साशनानशने अभि॥४॥ ततो व्विराडजायत-व्विराजोऽअधिपूरुषः। सजातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः॥५॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम्। पशूँस्ताँश्चक्रे व्वायव्यानारण्याग्ग्राम्म्याश्चये॥६॥ तस्म्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचः सामानिजज्ञिरे। छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्म्माद्यजुस्तस्म्मादजायत॥७॥ तस्मादश्वाऽअजायन्तयेकेचोभयादतः। गावोहजज्ञिरेतम्स्मात्तस्म्माज्जाताऽअजावयः॥८॥ तंय्यज्ञम्बर्हिषिप्प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्ग्रतः। तेनदेवाऽअयजन्तसाद्ध्याऽऋषयश्चये॥९॥ यत्पुरुषंव्व्यदधुः कतिधाव्व्यकल्प्पयन्। मुखङ्किमस्स्यासीत्किम्बाहूकिमूरूपादाऽउच्च्येते॥१०॥ ब्राह्मणोस्यमुखमासीद्बाहूराजन्न्यः कृतः। ऊरूतदस्ययद्वैश्यःपद्भ्याꣳशूद्रोऽअजायत॥११॥ चन्द्रमामनसोजातश्चक्षोःसूर्य्योऽअजायत। श्श्रोत्राद्वायुश्चप्प्राणश्च-मुखादग्निरजायत॥१२॥ नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षर्ठ०शीर्ष्णोद्यौःसमवर्त्तत। पद्भ्याम्भूमिर्दिशःश्रोत्रात्तथा लोकाँ२ऽ-अकल्पयन्॥१३॥ यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्न्वत। व्वसन्तोस्यासीदाज्ज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मःशरद्धविः॥१४॥ सप्तास्या-सन्नपरिधयस्त्रिः सप्तसमिधःकृताः। देवायद्यज्ञन्तन्व्वानाऽअबध्नन्पुरुषम्पशुम्॥१५॥ यज्ञेनयज्ञमयजन्त देवास्ता-निधर्म्माणिप्प्रथमान्यासन्। तेहनाकम्महिमानःसचन्तयत्रपूर्व्वेसाद्ध्याःसन्ति देवाः॥१६॥ इति शिरसे स्वाहा॥२॥

पुरुषसूक्त—इस सहस्रशीर्षा० इत्यादि पुरुषसूक्त के नारायण ऋषि हैं। प्रारम्भ की पन्द्रह ऋचाएँ अनुष्टुप् छन्दों में हैं तथा अन्तिम ऋचा 'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा' का त्रिष्टुप् छन्द है। जगद् बीज है तथा पुरुष देवता है। इसका विनियोग शिरोन्यास में किया जाता है।

जिनके सहस्रों शिर, सहस्रों नेत्र, सहस्रों पैर हैं, वे विराट् पुरुष इस दस अङ्गुलरूप पृथ्वी को व्याप्त कर उसके बाहर भी स्थित हैं। जो भूतकाल में था, वर्तमान में है तथा भविष्य में भी रहेगा—ऐसा शाश्वत यह पुरुष है। इस अजस्र प्रवहमान जगत् का वही पुरुष स्वामी है। जो जीव अन्न के द्वारा पोषित तथा जीवित रहते हैं, उनका भी यह स्वामी है। इस विराट् पुरुष की महिमा बहुत बड़ी है। इसके एक चरण में ही इस विश्व के सभी प्राणी स्थित हैं तथा शेष तीन चरणों से यह अन्तरिक्ष को आवृत्त किये है। चार चरणों वाले इस विराट् पुरुष के तीन भाग द्युलोक में हैं। इसका एक चरण इस विश्व में पुनः पुनः उत्पन्न होता रहता है। फिर इसने अन्न खाने वाले तथा न खाने वाले विश्व को सब ओर से व्याप्त कर लिया है। उसी विराट् पुरुष से यह ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ तथा उसी से सभी जीव उत्पन्न हुए हैं। वही देहधारी रूप में सर्वश्रेष्ठ हुआ, जिसने प्रथम भूमि को, फिर सृष्टि को रचा। उस सर्वश्रेष्ठ यज्ञपुरुष से दधियुक्त घृत की प्राप्ति हुई। पशु, वायव्य प्राणी (नभचर) तथा वन्य जीव उत्पन्न हुए। उस विराट् यज्ञपुरुष से ऋचाएँ तथा साम गान प्रकट हुए तथा उसी से छन्द (अथर्ववेद) तथा 'यजुः' प्राप्त हुए। उसी से दोनों ओर दाँत वाले अश्व उत्पन्न हुए तथा गाएँ, भेड़ें, बकरियाँ आदि पशु भी उत्पन्न हुए। मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने उस

पूजनीय यज्ञपुरुष को अभिषिक्त करके यज्ञ को प्राप्त किया और वे यजन कर्म करने लगे। यहाँ पर वर्णित उस पुरुष की कितने प्रकार से कल्पना की गई है? इसका मुख क्या है? इसके बाहु कौन हैं? इसकी ऊरू कौन-सी है? तथा पैर कौन-से हैं? यह किस प्रकार बताए गए हैं? इस विराट् पुरुष का मुख ब्राह्मण, क्षत्रिय बाहु, वैश्य जङ्घा तथा शूद्र चरण हैं। विराट् पुरुष के मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ है। उसके नेत्रों से सूर्य उत्पन्न हुआ है। उसके कानों से वायु तथा प्राण एवं मुख से अग्नि उत्पन्न हुए। उसकी नाभि से अन्तरिक्ष तथा शिर से द्युलोक उत्पन्न हुआ है। पैरों से भूमि तथा कानों से दिशाओं का प्राकट्य हुआ है तथा लोक भी उसी से उत्पन्न है। जब देवताओं ने उस विराट् पुरुष को हवि मानकर यज्ञारम्भ किया तब उस यज्ञ के घृत से वसन्त ऋतु, समिधा से ग्रीष्म एवं शरद् से हवि हुआ। देवों ने जिस यज्ञ का विस्तार किया, उसमें पुरुषरूपी पशु को बाँधा (नियुक्त किया), उसी से यज्ञ की सात परिधियाँ (सात समुद्र) तथा इक्कीस (छन्द) समिधाएँ हुईं। उस यज्ञपुरुष से देवों ने यज्ञ करना प्रारम्भ किया और श्रेष्ठ धर्मकृत्य का प्रतिपादन किया। यज्ञीय कार्य करने वाले श्रेष्ठ मनुष्य पूर्वकाल के साध्य देवताओं के निवास (स्वर्गलोक) को प्राप्त करते हैं।

उत्तरनारायणसूक्तम्

अद्भ्यः सम्भृतं इति षड्ऋचस्योत्तरनारायणस्य नारायण ऋषिः आद्यानां तिसृणां त्रिष्टुप् छन्दश्चतुर्थ-पञ्चमयोरनुष्टुप् छन्दः आदित्यो देवता शिखान्यासे विनियोगः। अद्भ्यऽसम्भृतःपृथिव्यैरसाच्चव्विश्वकर्म्मणः-समवर्त्तताग्ग्रे। तस्यत्वष्टाव्विदधद्रूपमेतितन्मर्त्यस्यदेवत्वमाजानमग्ग्रे॥१७॥ व्वेदाहमे तम्पुरुषम्महान्तमादित्य-वर्णन्तमसः परस्तात्। तमेवव्विदित्वातिमृत्युमेतिनान्न्यऽपन्थाव्विद्यतेयनाय॥१८॥ प्प्रजापतिश्चरतिगर्ब्भेऽअन्तर-जायमानोबहुधाव्विजायते। तस्ययोनिम्परिपश्यन्तिधीरास्तस्मिन्हतस्थुर्भुवनानिव्विश्श्वा॥१९॥ योदेवेभ्यऽआतपति-योदेवानाम्पुरोहितः। पूर्व्वोयोदेवेभ्योजातोनमोरुचायब्राह्मये॥२०॥ रुचम्ब्राह्मञ्जनयन्तोदेवाऽअग्ग्रे तदब्बुवन्। यस्त्वैवम्ब्राह्मणोव्विद्यात्तस्यदेवाऽअसन्वशे॥२१॥ ॐ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्चपत्न्यावहोरात्रेपार्श्वेनक्षत्राणिरूपमश्विनौव्या-त्तम्। इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्व्वलोकम्मऽइषाण॥२२॥ इति शिखायै वषट्॥३॥

उत्तरनारायण सूक्त—मूल में लिखित विनियोग पढ़कर उसका जल पृथ्वी पर छोड़कर तब मूल सूक्त का पाठ करना प्रारम्भ करना चाहिये।

प्रारम्भ में जो सभी कर्मों (विश्वकर्म) को करने वाला ईश्वर है, उसके कर्म से पृथिवी के ऊपर स्थित जल-रूप रस से यह सब विश्व पोषण को प्राप्त हुआ है। त्वष्टा (विश्वनिर्माता) विश्व को रूपाकार देते हुए आगे बढ़ता है। मर्त्यलोक के मनुष्य को देवत्व भी वही प्रदान करता है—यह मैं जानता हूँ। मैंने उस सूर्य के समान वर्ण वाले प्रकाशमान् महान् पुरुष को जान लिया है। उसको जानकर उसकी उपासना करने वाला साधक मृत्यु को जीत लेता है (जन्म-मरण से रहित हो जाता है)। वह पुरुष अन्धकार से परे है। मुक्ति-प्राप्ति के लिये अन्य कोई मार्ग नहीं है (उस पुरुष को जान लेना ही एकमात्र उपाय है)। जो प्रजा का स्वामी (ईश्वर) सभी प्राणियों के गर्भ (सब पदार्थों के भीतर) विचरण करता है, वह अजन्मा होकर भी अनेक प्रकार से उत्पन्न होता है। उसके मूल स्वरूप को ज्ञानी लोग जानते हैं, उसी में सभी लोक स्थित हैं। जो सभी देवों को प्रकाशित करने वाला (तपाने वाला) तथा सबका अग्रगामी है, जो सभी देवों से पूर्व उत्पन्न हुआ है, उस ब्रह्मतेज को प्रणाम है। ब्रह्मज्ञान को प्रकाशित करने वाले देवों ने प्रारम्भ में ही यह कहा था कि 'जो ज्ञानी इस बात को जानता है, उसके वश में सभी देवता (इन्द्रियाँ) हो जाती हैं।' हे परमात्मन्! सम्पत्ति (श्री) तथा शोभा (लक्ष्मी) तेरी पत्नियाँ हैं तथा दोनों भुजाएँ या पार्श्व अहोरात्र हैं।

नक्षत्र तेरा रूप है, द्युलोक तथा पृथिवी तेरा खुला मुख है। मैंने सोचा कि मैं किसकी इच्छा करूँ? मुझे सभी लोक प्राप्त हों (यह इच्छा करता हूँ)।

अप्रतिरथसूक्तम्

आशुःशिशान इति सप्तदशानामप्रतिरथऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः इन्द्रो देवता कवचन्यासे विनियोगः। ॐ आशुꣳ शिशानोवृषभोनभीमोघनाघनꣳक्षोभणश्चर्षणीनाम्। सङ्क्रन्दनोनिमिषऽएकव्वीरꣳ शतꣳसेनाऽअजयत्साकमिन्द्रः॥१॥ सङ्क्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुनायुत्कारेणदुश्च्यवनेनधृष्णुना। तदिन्द्रेणजयततत्सहद्ध्वंय्युधोनरऽइषुहस्तेनव्वृष्णा॥२॥ सऽइषुहस्तैꣳसनिषङ्गिभिर्व्वशीसꣳस्त्रष्टासयुधऽइन्द्रोगणेन सꣳसृष्टजित्सोमपाबाहुशर्द्ध्युग्रधन्वाप्रतिहिताभिरस्ता॥३॥ ब्बृहस्पतेपरिदीयारथेनरक्षोहामित्राँऽअपबाधमानꣳ। प्रभञ्जन्त्सेनाꣳप्रमृणोयुधाजयन्नस्माकमेद्ध्यविताराथानाम्॥४॥ बलविज्ञायस्स्थविरꣳप्रवीरꣳसहस्वान्वाजीसहमानऽउग्रꣳ। अभिवीरोऽअभिसत्त्वासहोजाजैत्रमिन्द्ररथमातिष्ठगोवित्॥५॥ गोत्रभिदङ्गोविदंव्वज्रबाहुञ्जयन्तमज्ज्मप्रमृणन्तमोजसा। इमꣳसजाताऽअनुवीरयद्ध्वमिन्द्रꣳसखायोऽअनुसꣳरभद्ध्वम्॥६॥ अभिगोत्राणिसहसागाहमानोदयोव्वीरꣳशतमन्न्युरिन्द्रः। दुश्च्यवनꣳपृतनाषाडयुद्ध्योस्म्माकꣳसेनाऽअवतुप्रयुत्सु॥७॥ इन्द्रआसान्नेताबृहस्पतिर्द्दक्षिणायज्ञꣳपुरऽएतुसोमः। देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनाम्मरुतोयन्त्वग्ग्रम्॥८॥ इन्द्रस्य व्वृष्णोव्वरुणस्यराज्ञऽआदित्यानाम्मरुताꣳशर्द्धऽउग्रम्। महामनसाम्भुवनच्च्यवानाङ्घोषो देवानाञ्जयतामुदस्थात्॥९॥ उद्धर्षयमघवन्नायुधान्न्युत्सत्त्वनाम्मामकानाम्मनाꣳसि। उद्वृत्रहन्व्वाजिनांव्वाजिनान्न्युद्रथानाञ्जयताय्यन्तुघोषाꣳ॥१०॥ अस्म्माकमिन्द्रꣳसमृतेषुद्ध्वजेष्व्वस्म्माकंयाऽइषवस्ताजयन्तु। अस्म्माकंव्वीराऽउत्तरेभवन्त्वस्म्माꣳऽउदेवाऽअवताहवेषु॥११॥ अमीषाञ्चित्तम्प्रतिलोभयन्तीगृहाणाङ्गान्न्यप्प्वेपरेहि। अभिप्रेहिनिर्द्दहहृत्सुशोकैरन्धेनामित्रास्तमसासचन्ताम्॥१२॥ अवसृष्टापरापतशरव्व्येब्ब्रह्मसꣳशिते गच्छामित्रान्प्रपद्यस्वमामीषाङ्कञ्चनोच्छिषꣳ॥१३॥ प्रेताजयतानरऽइन्द्रोवꣳशर्म्म यच्छतु। उग्ग्रावꣳसन्तुबाहवोनाधृष्ष्यायथासथ॥१४॥ असौयासेनामरुतꣳपरेषामभ्यैतिनओजसास्प्पर्द्धमाना। ताङ्गूहत तमसापव्व्रतेनयथामीऽअन्न्योऽअन्न्यन्नजानन्॥१५॥ यत्रबाणाꣳसम्पतन्तिकुमाराव्विशिखाऽइव। तन्नऽइन्द्रोब्बृहस्प्पति रदितिꣳशर्म्मयच्छतुव्विश्श्वाहाशर्म्मयच्छतु॥१६॥ मर्म्माणितेव्वर्म्मणाच्छादयामि सोमस्त्वाराजामृतेनानुवस्ताम्। उरो र्व्वरीयोव्वरुणस्तेकृणोतुजयन्तन्त्वानुदेवामदन्तु॥१७॥ इति कवचाय हुम्॥४॥

अप्रतिरथसूक्त—सर्वप्रथम 'आशुःशिशान इति सप्तदशानमप्रतिरथ ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः इन्द्रो देवता कवचन्यासे विनियोगः' कहकर कवचन्यास के लिये विनियोग का जल छोड़ना चाहिये।

जो इन्द्र शीघ्रकारी तीक्ष्ण शस्त्रों वाला, वृषभ के समान क्रुद्ध होकर घनाघन (दनादन) शत्रुओं का क्षोभण करने वाला, सेनाओं को कम्पित करने वाला, अनिमिष वह अद्वितीय वीर सैकड़ों शत्रुओं को पराजित करता है। हे वीरों! आप लोग अपलक अपने सङ्क्रन्दन के द्वारा शत्रुओं को त्रस्त करने वाले, विविध आक्रामक मुद्राओं से युद्ध में लगने वाले, बाणधारी, अजेय इन्द्र के साथ संलग्न होकर शत्रुओं को पराजित करो। (क्योंकि) वे इन्द्र शत्रुओं को वश में करने वाले बाण तथा खड्गधारी वीरों को सैन्यदल में सम्यक् व्यवस्थित करते हुए सङ्ग्राम में शत्रुओं से युद्ध करके विजयी होने वाले हैं, हम सबकी रक्षा करें। हे बृहस्पते! आप राक्षसों का विनाश करने वाले, रथ द्वारा सर्वत्र भ्रमणकर्ता, शत्रुसेना को भङ्ग करने वाले हैं। वे हमारे प्रमृण (आतङ्कवादी) शत्रुओं को नष्ट करें। हे इन्द्र! आप शस्त्रादि बल के निपुण प्रयोजक, अनुभवी, अतिक्रूर, विजयप्रद बल से युक्त, वेगवान् उग्र, सब ओर से योद्धाओं से घिरे हुए, बली लोगों की सङ्गति से युक्त, अपने बल के लिये प्रसिद्ध विजेता हो; अतः आप युद्ध के लिये अपने रथ पर चढ़ो। हे एक समान जन्मधारी देवों! आप शत्रुविनाशक, वज्रबाहु, विजेता, अपने ओज से

शत्रुओं को नष्ट करने वाले इन्द्र को युद्ध के लिये उत्साहित कीजिये। जो अपने बल से शत्रुप्रदेशों को (उनके अभिगोत्रों = किलों) को तोड़ने वाले इन्द्रदेव हैं, वे युद्ध में हमारी सेना को संरक्षित करें। शत्रुओं के अहङ्कार को ध्वस्त करके विजयी होने वाली देवसेनाओं का नेतृत्व इन्द्र तथा बृहस्पति मिलकर करते हैं तथा इस प्रकार की सेना के पीछे मरुद्गण भी (विजयप्राप्ति के लिये) चलें। फिर सोम शान्ति स्थापित करें। युद्ध के प्राङ्गण में अविचलित मन से शत्रुसेना को दलन करने में समर्थ देवों, आदित्यों, मरुद्गणों, वरुण तथा इच्छानुसार वृष्टि करने वाले इन्द्र की सेना का जयघोष गूँज रहा है। हे ऐश्वर्ययुक्त इन्द्र! आप अपने हथियारों को भली-भाँति तीक्ष्ण करके देवसेना के वीरों का उत्साह बढ़ायें तथा अश्वों की भाँति उन्हें युद्धार्थ शीघ्रगमन के लिये प्रेरित करें। हे शत्रुमर्दक इन्द्र! विजयी रथों के जयनिनाद सब दिशाओं में गूँजें। युद्ध में जब रथों पर ध्वजाएँ फहराने लगें तब इन्द्र तथा हमारे शस्त्र भरपूर क्षमता के साथ उत्तेजित होकर शत्रुसेना पर निर्णायक प्रहार कर विजयी हों तथा हमारी विजयी वीर सेना देवों द्वारा सुरक्षित रहे। हे अध्वे (सिंहवाहिनी सेना)! तू अपनी भयङ्करता से शत्रु की सेना के अङ्गों को छिन्न-भिन्नकर दूर फेंक दे, जिससे वे मोह-शोक के अन्धकार में डूब जायँ। हे मन्त्र से तीक्ष्ण किये शस्त्रों! आप हमारे द्वारा छोड़ने पर शत्रुसेना पर एक साथ प्रहार करके उसे सन्तप्त करें। अनेक शरीरों में प्रविष्ट होकर सभी का विनाश करें, किसी शत्रु को जीवित न छोड़ें। हे वीरों! आप लोग शत्रुसेना पर तीव्रता से आक्रमण कर विजयी हों। आपके नेता इन्द्र आपको विजयसुख प्रदान करें; आपके शस्त्रादि का बल बढ़ें। हे मरुद्गणों! यह सामने से शत्रुवाहिनी अपने मद में चूर होकर हमारी ओर बढ़ रही है; उस सेना को अन्धकार से ढँक दें कि वे आपस में ही एक-दूसरे को न पहिचानते हुए भ्रमित होकर लड़कर मर जायँ। जिस युद्ध में हमारे योद्धाओं के प्रहार इधर-उधर होते हैं, उसमें बृहस्पति, अदिति तथा इन्द्र हमारा कल्याण करें। वीर लोग अपने शरीर के मर्माङ्गों को आहत होने से बचाने के लिये कवच से आच्छादित करते हैं; अतः इन कवचों को वरुण सुदृढ़ता दें तथा राजा सोम अमृत से वीरों को पुष्ट करें, जिससे देव विजयी हों।

विभ्राट्(सूर्य)सूक्तम्

विभ्राडिति सप्तदशानां विभ्राट् ऋषिर्जगती छन्दः सूर्यो देवता नेत्रन्यासे विनियोगः॥ ॐ विभ्राड्बृहत्पिबतु-सोम्म्यम्मद्ध्वयुर्द्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम्। वातजूतोयोऽअभिरक्षतित्मनाप्प्रजाः पुपोष पुरुधाविराजति॥१॥ उदुत्यञ्जात-वेदसन्देवंवहन्तिकेतवः। दृशेविश्श्वायसूर्य्यम्॥२॥ येनापावकचक्षसाभुरण्यन्तञ्जनाँ२ अनु। त्वंवरुणपश्यसि॥३॥ देव्यावध्वर्य्यूऽआगतठं०रथेनसूर्य्यत्वचा। मद्ध्वायज्ञठं०समञ्जाथे। तम्प्रत्क्नथायंवेनश्चित्रन्देवानाम्॥४॥ तम्प्रत्क्न-थापूर्वथाविश्वथेमथाज्ज्येष्ठतातिम्बर्हिषदंᳬस्वर्विदम्। प्रतीचीनंवृजनन्दोहसेधुनिमाशुञ्जयन्तमनुयासुवर्द्धसे॥५॥ अयं-वेनश्चोदयत्पृश्निगर्ब्भाज्ज्योतिर्ज्जरायूरजसोविमाने। इममपाᳬसंगमेसूर्य्यस्यशिशुन्नविप्प्रामतिभीरिहन्ति॥६॥ चित्रन्दे-वानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्यवरुणास्याग्नेः॥ आप्प्राद्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षठं०सूर्य्यऽआत्माजगतस्तस्थुषश्च॥७॥ आनऽइडाभिर्व्विदथेसुशस्तिविश्वानरःसवितादेवऽएतु। अपियथायुवानोमत्सथानोविश्वञ्जगदभिपित्वेमनीषा॥८॥ यद-द्यकच्चवृत्रहन्नुदगाऽअभिसूर्य्य। सर्व्वन्तदिन्द्रतेवशे॥९॥ तरणिर्व्विश्श्वदर्शतोज्ज्योतिष्कृदसिसूर्य्य। विश्श्वमाभासि-रोचनम्॥१०॥ तत्सूर्य्यस्यदेवत्वन्तन्महित्वम्मद्ध्याकर्तोर्व्विततठं०सञ्जभार। यदेदयुक्तहरितःसधस्थादाद्रात्रीवासस्त-नुतेसिमस्मै॥११॥ तन्मित्रस्यव्वरुणस्याभिचक्षेसूर्य्योरूपङ्कृणुतेद्योरुपस्थे। अनन्तमन्यद्रुशदस्यपाजःकृष्णमन्य-द्धरितःसम्भरन्ति॥१२॥ बण्णमहाँ२ऽअसिसूर्य्यबडादित्यमहाँ२ऽअसि। महस्तेसतोमहिमापनस्यतेद्धादेवमहाँ२ऽअसि॥१३॥ बट्सूर्य्यश्श्रवसामहाँ२ऽअसिसत्रादेवमहाँ२ऽअसि। मह्नादेवानामसुर्य्यःपुरोहितोविभुज्योतिरदाभ्यम्॥१४॥ श्रायन्तऽ-इवसूर्य्यंविश्वेदिन्द्रस्यभक्षत। वसूनिजातेजनमानऽओजसाप्प्रतिभागन्नदीधिम॥१५॥ अद्यादेवाऽउदितासूर्य्यस्य निरठं०-

इवसूर्व्यंविश्वेदिन्द्रस्यभक्षत। वसूनिजातेजनमानऽओजसाप्प्रतिभागन्नदीधिम॥१५॥ अद्यादेवाऽउदितासूर्य्यस्य निरंठ०-हसःपिपृतानिरवद्यात्। तन्नोमित्रोवुरुणोमामहन्तामदितिःसिन्धुःपृथिवीऽउतद्यौः॥१६॥ आकृष्णेनरजसावर्त्तमानो-निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च। हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयातिभुवनानिपश्यन्॥१७॥ इति नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥

विभ्राट् सूक्त—सर्वप्रथम विनियोग-हेतु 'विभ्राडिति सप्तदशानां विभ्राड्ऋषिः जगतीछन्दः सूर्यो देवता नेत्रन्यासे विनियोगः' कहकर जल छोड़े।

जो वायुवेग से युक्त, विशेष दीप्तिमान्, पूर्ण ऐश्वर्यशाली, पूर्णायु वाला, यज्ञपति को धारण कर पुष्ट करने वाला तथा अपनी शक्ति से प्रजाओं की सर्वतोभावेन रक्षा करने वाला है, उसी की भाँति तुम भी सोमादि मधुर औषधियों के रस का पान करो। विश्व को दृश्यमान बनाने के लिये उस वेदज्ञ, सबके प्रकाशक, दिव्य गुण-सम्पन्न ईश्वर के अस्तित्व की सिद्धि के लिये किरणें ऊपर की ओर उठती हैं। हे वरुण! आप सबके पापों (दुःखों) के निवारक हैं; हे पवित्र करने वाले पावक! जिस प्रकाश से सबमें पालक (ईश्वर) के तुम दर्शन करते हो, उसी प्रकार से तुम सभी मनुष्यों को देखो। हे दिव्य अध्वर्यू अश्विनी कुमारों! आप सूर्य के समान चमकीले रथ में बैठकर यहाँ आओ और मधुर हवि से सम्यक् रूप से यज्ञ को सम्पन्न करो, जिससे उस प्राचीन यज्ञ की भाँति यह हमारा यज्ञ भी कान्तिमान् तथा दिव्य तेज से समन्वित हो। उस इन्द्र की प्राचीन लोग तथा हमारे पूर्वज एवं आज के लोग स्तुति करते रहे हैं, उसी प्रकार उन स्तुतियों से हे इन्द्र! तू भी बढ़कर प्रसन्न होता है, इसीलिये तुम श्रेष्ठ की स्तुति मैं भी अपने शत्रुओं को जीतने के लिये करता हूँ। परम तेजस्वी देव अन्तरिक्ष से जल को प्रेरित कर वर्षा के रूप में पृथ्वी पर लाते हैं। जलरूप में प्राप्त उस वस्तु को पुत्रजन्म की भाँति सुखद मानकर मनीषी लोग विविध स्तुतियों से सूर्यदेव की वन्दना करते हैं। हे सोमदेव! मर्क नामक असुर के विनाश के लिये आपको नियमानुसार ग्रहण किया गया है। मित्र, वरुण, अग्नि आदि जो कि देवताओं के नेत्ररूप हैं एवं सूर्यदेव अपनी दिव्य किरणों से इस पृथ्वी, द्युलोक तथा अन्तरिक्ष को जगमगाते हैं। उन्हीं देव के लिये यह आहुति समर्पित है। हम सब प्राणियों के हितैषी सविता देव! आप हमारे उत्तम अन्नों से युक्त यज्ञशाला में पधारें। हे सदैव चैतन्यशील देव! आप यहाँ तृप्त होकर सम्पूर्ण जगत् को बुद्धि प्रदान कर तृप्त करें। सूर्य जिस प्रकार अन्धकार को नष्ट करता है, उसी प्रकार से शत्रुओं को नष्ट करने वाले हे इन्द्र! आप जहाँ-कहीं भी उदित होते हैं, वे सब स्थल आपके अधिकार में आ जाते हैं। सूर्यदेव की यह दिव्यता तथा महिमा अत्यन्त व्यापक है, जो संसार के मध्य स्थित होकर विस्तीर्ण नक्षत्रमण्डल का निर्माण तथा समाप्ति करने वाली है। जब वे सूर्यदेव अपनी लाल एवं हरी किरणों को आकाश से समेट कर अपने भीतर धारण करते हैं तब रात्रि इस ब्रह्माण्ड के ऊपर गहन अन्धकार डाल देती है। हे सूर्यदेव! आप संसार को तारने वाले, संसार के दर्शन-योग्य तथा तेजोत्पादक हैं; आप अपनी आभा से संसार को रोचित करते हैं। द्युलोक के गोद में स्थित सूर्यदेव मित्र तथा वरुण का वह रूप प्रकट करते हैं, जिससे वे सब लोगों को सब ओर से देखते हैं। वे शुद्ध, चैतन्य तथा निर्गुण हैं; किन्तु अन्य प्रकार से वे सगुण रूप में प्रकट होते हैं, जिसे सब दिशाएँ धारण करती हैं। हे सूर्यदेव! आप महानतम हैं। हे आदित्य! आपकी महानता से वे सब आपकी स्तुति करते हैं। आप निश्चित महान् हैं। आप धन-सम्पत्ति को प्रकट करने वाले होकर महान् हैं। आप प्राणी-हितैषी, देवों में अग्रगण्य, सर्वव्यापी, अविनाशी, तेजस्वी तथा यज्ञकर्ता हैं। सूर्यप्रकाश से विस्तृत किरणें समस्त भौतिक वस्तुओं को भोगती हैं, उसी भाँति हम सभी भावी पीढ़ियों के लिये सूर्य के तेज को धारण करे। हे देवों! आज के इस सूर्योदय की दिव्य किरणें हमें पापों से बचायें, अपयश से बचायें तथा वरुण, समुद्र, पृथ्वी तथा द्युलोक हमारे मनोरथों को पूरा करे। सविता देव उषःकाल की किरणों के रथ पर सवार होकर अन्तरिक्ष में भ्रमण करते हुए देवों एवं मानवों को कर्म में प्रवृत्त करते हैं। वे समस्त लोकों का निरीक्षण करते हैं॥ १-१७॥

अस्य शतरुद्रियस्याघोर ऋषिः। रुद्रो देवता नमस्तऽइति गायत्रीछन्दो यात इति तिसृणामनुष्टुप् छन्दोऽअध्यवोचदिति तिसृणां पङ्क्तिश्छन्दो नमोस्त्वित्यादि सप्तानामनुष्टुप्छन्दो मान इति द्वयोः कुत्स ऋषिर्जगतीच्छन्द एकरुद्रो देवता नमोहिरण्यबाहव इत्यादीनि यजूꣳषि एकरुद्रो देवता द्रापेऽअन्धसऽइत्युपरिष्टाद्बृहती छन्द इमारुद्रायेति जगतीछन्दो यात इत्यनुष्टुप् छन्दः परिणोमीढुष्टम इति त्रिष्टुप् छन्दो विकिरिद्रविलोहितसहस्राणिसहसस्रश इत्यनुष्टुप् छन्दोऽङ्क असङ्ख्यातेस्यादिदशानामनुष्टुप्छन्दो बहुरुद्रो देवता नमोऽस्त्वित्यादि त्रीणि यजूꣳषि बहुरुद्रदैवत्यानि व्वयꣳसोमेति गायत्रीछन्द एषते इति यजुरवरुद्रमिति पङ्क्तिश्छन्दो भेषजमिति ककुप् छन्दस्त्र्यम्बकमिति द्वे अनुष्टुभावे-तत्तइत्यास्तारपङ्क्तिश्छन्दस्त्र्यायुषमित्युष्णिक् छन्दः। शिवोनामेतियजुर्नतँव्विदेति द्वे त्रिष्टुभौ अस्त्रन्यासे विनियोगः।

ॐ नमस्तेरुद्रमन्न्यवऽउतोतऽइषवेनमः बाहुब्भ्यामुततेनमः॥१॥ यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी। तयानस्तन्न्वा-शन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि॥२॥ यामिषुङ्गिरिशन्तहस्तेबिभर्ष्यस्तवे। शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरुमाहिꣳसीःपुरुषञ्ज-गत्॥३॥ शिवेनव्वचसात्वागिरिशाच्छाव्वदामसि। यथानःसर्व्वमिज्जगदयक्ष्मꣳसुमनाऽअसत्॥४॥ अद्ध्यवोच-दधिवक्ताप्प्रथमोदैव्व्योभिषक्। अहीँश्चसर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वाश्चयातुधान्न्योधराचीः परासुव॥५॥ असौयस्ताम्म्रोऽ-अरुणऽउतबब्भ्रुः सुमङ्गलः। येचैनꣳरुद्राऽअभितोदिक्षुश्रिताःसहस्रशो वैषाꣳहेडऽईमहे॥६॥ असौयोवसर्प्पतिनील-ग्ग्रीवोव्विलोहितः। उतैनङ्गोपाऽअदृश्श्रन्नदृश्श्रन्नुदहार्य्यः सदृष्टोमृडयातिनः॥७॥ नमोस्तुनीलग्ग्रीवायसहस्राक्षायमीढुषे। अथोयेऽअस्यसत्त्वानोहन्तेब्भ्योकरन्नमः॥८॥ प्रमुञ्चधन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्न्योर्ज्ज्याम्। याश्चतेहस्तऽइषवःपराताभग-वोव्वप॥९॥ विज्ज्यन्धनुःकपर्द्दिनोव्विशल्ल्योबाणवाँऽउत। अनेशन्नस्ययाऽइषवऽआभुरस्यनिषङ्गधिः॥१०॥ याते-हेतिर्म्मीढुष्टमहस्तेबभूवतेधनुः। तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मयापरिभुज॥११॥ परितेधन्न्वनोहेतिरस्मान्वृणक्तुव्विश्वतः। अथोयऽइषुधिस्तवारेऽअस्म्मन्निधेहितम्॥१२॥ अवतत्त्यधनुष्ट्वꣳसहस्राक्षशतेषुधे। निशीर्य्यशल्ल्यानाम्मुखाशिवोनः सुमनाभव॥१३॥ नमस्तऽआयुधायानाततायधृष्ण्णवे। उभाभ्यामुततेनमोबाहुब्भ्यान्तवधन्न्वने॥१४॥ मानोमहान्तमुतमा-नोऽअर्ब्भकम्मानऽउक्षन्तमुतमानऽउक्षितम्। मानोव्वधीःपितरम्मोतमातरम्मानःप्प्रियास्तन्न्वोरुद्ररीरिषः॥१५॥ मानस्तो केतनयेमानऽआयुषिमानोगोषुमानोऽअश्वेषुरीरिषः। मानोव्वीरान्रुद्रभामिनोव्वधीर्हविष्मन्तःसदमित्त्वाहवामहे॥१६॥

इत्यादि षट्षष्टि ६६ मन्त्रान् पठित्वा ॐ वयꣳसोम०॥६७॥ एषते रुद्र०॥६८॥ अवरुद्रमदी०॥६९॥ भेषज-मसि०॥७०॥ त्र्यम्बकं यजामहे०॥७१॥ एतत्तेरुद्रावसन्तेन०॥७२॥ त्र्यायुषंजमदग्ने०॥७३॥ शिवोनामासि०॥७४॥ नमस्तेरुद्रमन्न्यव इत्यादि पुनःषोडश मन्त्रान्॥९०॥ (पुनः) एषतेरुद्रभाग०॥९१॥ अवरुद्रमदी०॥९२॥ नमस्ते रुद्र०॥९३॥ याते रुद्र०॥९४॥ नतंविदाथयऽइमा०॥९५॥ विश्वकर्माह्यनिष्ट०॥९६॥ मीढुष्टमशिवतम०॥९७॥ विकिरिद्रविलोहित०॥९८॥ सहस्राणिसहस्रशो०॥९९॥ असङ्ख्याता०॥१००॥ इत्यस्त्राय फट्॥६॥ एतच्छतरुद्रियं वदन्ति।

शतरुद्रिय सूक्त—इस शतरुद्रिय के अघोर ऋषि, रुद्रदेवता नमस्ते० इस मन्त्र से गायत्री छन्द है। 'यातेरुद्र०' इत्यादि तीन मन्त्रों में अनुष्टुप् छन्द है। 'अध्यवोचद्०' इत्यादि तीन मन्त्रों में पङ्क्ति छन्द है। नमः इत्यादि सात में अनुष्टुप् छन्द है। फिर 'मानोमहान्त०' इत्यादि दो मन्त्रों के कुत्स ऋषि, जगती छन्द एकरुद्र देवता हैं। फिर 'नमो हिरण्यबाहवे०' इत्यादि के एकरुद्र देवता हैं। 'द्रापेऽअन्धस०' इत्यादि से ऊपर बृहती छन्द है। 'इमारुद्राय०' इसमें जगती च्छन्द, यात० इत्यादि में अनुष्टुप् छन्द है। परिणोमीढुष्टम् में त्रिष्टुप् छन्द है। 'विकिरद्रविलोहित-सहस्राणिसहस्राक्ष०' इसमें अनुष्टुप् छन्द, 'असङ्ख्याता रुद्रा०' इन दश मन्त्रों में अनुष्टुप् छन्द 'बहुरुद्रदेवता, नमोस्तु०' इत्यादि तीन यजुओं में बहुरुद्र देवता हैं। 'वयꣳ सोम०' इत्यादि में गायत्री छन्द है। 'एषते०' इस यजु में तथा अवरुद्र० इत्यादि में पङ्क्ति छन्द है। 'भेषजमसि०' इत्यादि में 'ककुप्' छन्द है। त्र्यम्बकं इत्यादि दो मन्त्रों में

अनुष्टुप् छन्द, अवेतत्त इत्यादि में तारपङ्क्ति छन्द, त्र्यायुषं० में उष्णिक् छन्द, शिवोनामा० इत्यादि यजु में तथा 'नतं विदा०' इस यजु में त्रिष्टुप् छन्द है। इसका अस्त्रन्यास में विनियोग किया जाता है।

तदनन्तर 'नमस्ते रुद्र०' इत्यादि ६६ मन्त्रों को पढ़कर 'ॐ वयं ꣸ सोम०, एषते रुद्र, अवरुद्रमदी०, भेषजमसि, त्र्यम्बकं यजामहे, एतत्ते रुद्रावसन्तेन०, त्र्यायुषं जमदग्ने, शिवो नामासि,' यहाँ तक ७४ मन्त्र हो जाते हैं। पुनः 'नमस्तेरुद्रमन्यव०' इत्यादि सोलह मन्त्रों को पढ़े तो ७४+१६=९० सङ्ख्या हो जाती है। पुनः एषते रुद्रभागा, अवरुद्रमदी०, नमस्तेरुद्र०, यातेरुद्र०, न तं विदाथय ऽइमा०, विश्वकर्माह्यनिष्ट०, मीढुष्टम शिवतम०, 'विकिरिद्रविलोहितः०', सहस्राणि सहस्रशो, असङ्ख्याता०— इन एक सौ मन्त्रों का पाठ कर 'अस्त्राय फट्' कहना (करना) चाहिये। इसको शतरुद्रिय कहते हैं।

> **अग्निदाहात्सुरापानादकृत्याचरणात्तथा । सुवर्णहरणाच्चैव वृषलीगमनात्तथा॥ १॥**
> **ब्रह्महत्यादिकात् पापाच्छतरुद्रियपाठतः। सुनिस्तीर्यैव गच्छन्ति ब्राह्मणाः शिवसन्निधौ॥ २॥**

एवं पञ्चन्यासं कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य अष्टभिर्मन्त्रैर्नमस्कारं कुर्य्यात्॥ ॐ हिरण्यगर्भꣳसमवर्तताग्रेभूतस्यजातꣳ- पतिरेकऽआसीत्। सदाधारपृथिवींद्यामुतेमाङ्कस्मैदेवायहविषाविधेम॥१॥ यःप्राणतोनिमिषतोमहित्वैकइद्राजाजगतो- बभूव। यईशेअस्यद्विपदश्चतुष्पदःकस्मैदेवाय हविषाविधेम॥२॥ ॐ ब्रह्मयज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतःसुरुचो- व्वेनऽआवꣳ। सबुध्न्याऽउपमाऽअस्यविष्ठाꣳसतश्च योनिमसतश्चव्विवः॥३॥ महीद्यौꣳपृथिवीचनऽइमंयज्ञम्मिमिक्षताम्। पिपृतान्नोभरीमभिः॥४॥ उपश्वासयपृथिवीमुतद्यांपुरुत्रातेमनुतांविष्ठितंजगत्। सदुंदुभेसजूरिंद्रेणदेवैर्दूराद्दवीयोअपसेध- शत्रून्॥५॥ अग्नेनय सुपथा रायेअस्मान् विश्वानिदेववयुनानिविद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनोभूयिष्ठांतेनम- उक्तिंविधेम॥६॥ यातेअग्नेयज्ञियातनूस्तयेह्यारोहात्मानम्। अच्छावसूनिकृण्वन्नस्मैनर्यापुरूणियज्ञोभूत्वायज्ञमासीद- स्वांयोनिंजातवेदोबभूवआजायमानः सक्षयएहि॥७॥ अथावः स्वाहाग्रयेदाशेमपरीलाभिर्घृतवद्भिश्चहव्यैः तेभिर्नोअग्ने अमृतैर्महोभिः श्रितम्पूर्भिरायसीभिर्निपाहि॥ ८॥ इत्यष्टावृचो जपित्वा अथाऽत्मानं रुद्ररूपं ध्यायेत्। अथ ध्यानम्—

> **कैलासाचलसन्निभं त्रिनयनं पञ्चास्यमम्बायुतं नीलग्रीवमहीशभूषणधरं व्याघ्रत्वचा प्रावृतम्।**
> **अक्षस्रग्वरकुण्डिकाभयकरं चान्द्रीं कलां बिभ्रतं गङ्गाम्भोविलसज्जटे दशभुजं वन्दे महेशं परम्॥ १॥**

इति ध्यात्वा मानसोपचारैर्देवं सम्पूज्य यथाशक्ति मूलमन्त्रं जपेत्। जपान्ते पुनराचमनं प्राणायामं च विधाय जलं गृहीत्वा स्ववामभागे देवदक्षिणकरे ॐ गुह्यातिगुह्येति मन्त्रेण जपसमर्पणं कुर्य्यात्। इत्यभेदोपासनम्। यदि तु भेदेनोपासीत तदानीन्तनं पूजाविधि साङ्गं सोपचारं ब्रूते। तत्रैवं क्रमस्तावत् यन्त्रोद्धारस्तत्पूजा च।

शतरुद्रिय के पाठ की फलश्रुति—अग्निदाह, सुरापान, कृत्याचरण, सुवर्ण की चोरी, वृषलीगमन तथा ब्रह्महत्या इत्यादि पाप शतरुद्रिय के पाठ करने से नष्ट हो जाते हैं तथा पाठकर्ता ब्राह्मण पार होकर शिवजी के समीप पहुँच जाता है।

इस प्रकार पञ्चन्यास करके साष्टाङ्ग प्रणाम करके आठ मन्त्रों से जो आगे कहे गये हैं ('ॐ हिरण्यगर्भ०' से लेकर 'अथावः स्वाहाग्ने' इत्यादि तक), पाठ करके नमस्कार करे। फिर स्वयं का रुद्ररूप में ध्यान करे। 'कैलासाचलसन्निभं त्रिनयनं ---------- महेशं परम्।' यह ध्यान का मन्त्र है। ध्यान के उपरान्त मानसोपचार से शिव का पूजन कर यथाशक्ति मूल मन्त्र को जप कर जप के अन्त में आचमन, प्राणायाम करके हाथ में जल लेकर देवता के दक्षिण हस्त में 'गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं०' इत्यादि मन्त्र से जप का समर्पण करे। यह अभेदोपासना है।

यदि भेदोपासना करनी हो तो तदानीन्तन पूजाविधि साङ्ग सोपचारपूर्वक कहता हूँ। वहीं पर क्रमशः यन्त्रोद्धार तथा उसकी पूजा कही जा रही है।

रुद्रपीठम्

प्रणम्य जगतामीशमुमादेहार्द्धधारिणम्। यन्त्रोद्धारमहं वक्ष्ये रुद्रकल्पानुसारतः॥ १॥
मध्ये वृत्तं समालिख्य तन्मध्ये च दशाक्षरम्। बहिरष्टदलं पद्मं ततः षोडशपत्रकम्॥ २॥
चतुर्विंशतिपत्राढ्यं द्वात्रिंशत्पत्रकं तथा। चत्वारिंशत्पत्रकं तु वृत्तं सूर्यसमप्रभम्॥ ३॥
पञ्चपद्मात्मकं वृत्तं चतुरस्रं च भूगृहम्। सत्त्वं रजस्तमश्चेति त्रिगुणैः परितो वृतम्॥ ४॥
चतुर्द्वारं द्वारदेशे बहिर्नागसमावृतम्। रुद्रपीठमिति ख्यातं देवतास्तत्र विन्यसेत्॥ ५॥
चत्वारिंशच्छतं चैकं देवतानामुदाहृतम्। कर्णिकामध्यदेशे तु रुद्रं पञ्चास्यमालिखेत्॥ ॥

श्रीरुद्रयन्त्रम्

श्रीरुद्रयन्त्रम् (स्कान्दे)
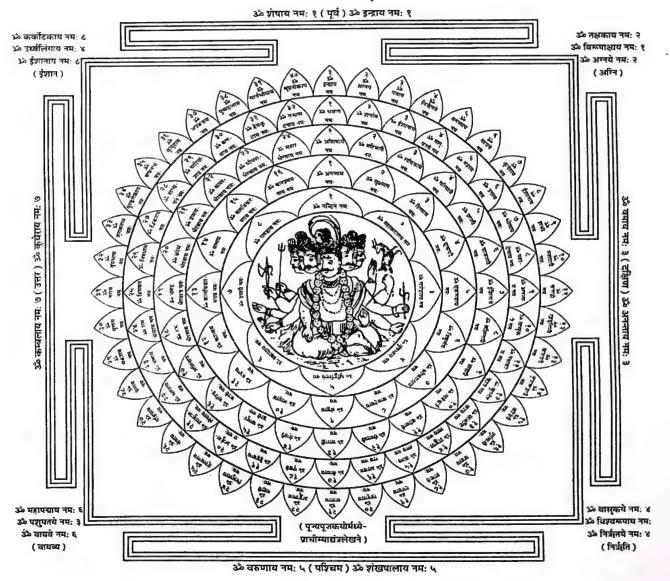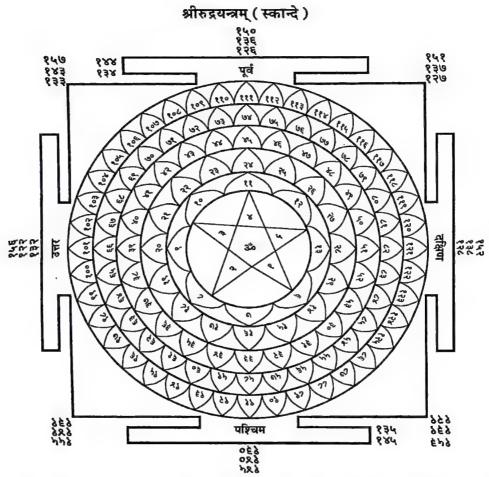
रुद्रयन्त्र का उद्धार—उमा को अर्धाङ्ग में धारण करने वाले जगदीश को प्रणाम करके मैं रुद्रकल्प नामक ग्रन्थ के अनुसार रुद्रयन्त्र (रुद्रपीठ) के उद्धार (निर्माण विधि) का वर्णन करता हूँ। मध्य में एक वृत्त बनाकर उसके मध्य में दशाक्षर मन्त्र लिखे। फिर उस वृत्त के बाहर अष्टदल कमल बनाये। उसके बाहर षोडश पत्र कमल बनाये। फिर उसके बाहर चौबीस दल का कमल बनाये। फिर उसके बाहर बत्तीस दल का कमल बनाये। पुन: उसके बाहर चालीस पत्रात्मक कमल का निर्माण करे। इस प्रकार से सूर्य के समान कान्तिमान पाँच कमलयुक्त वृत्त बनाने के पश्चात् फिर उसके बाहर चौकोर भूगृह बनाये और उसके चारो ओर सत्त्व (श्वेत), रज (लाल) तथा तम (कृष्णवर्ण) का घेरा निर्मित करे। भूगृह में चारो (मुख्य) दिशाओं में चार द्वारों का निर्माण करे। प्रत्येक द्वार पर बाहर नागों का निर्माण करे। इसे रुद्रपीठ कहते हैं। इस रुद्रपीठ में देवताओं का न्यास करना चाहिये। इस रुद्रपीठ में चार सौ एक देवता होते हैं, जिनका स्थापन तथा पूजन करना चाहिये। कर्णिका के मध्य में पञ्चमुख शिव को बनाना चाहिये।

अथ पीठपूजा—**तत्रादौ स्वे स्वे स्थाने मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवता: पूर्ववदावाह्य ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नम: इति गन्धपुष्पै: सम्पूज्य पूर्वादिषु ॐ वामायै नम: ॥ १ ॥ ॐ ज्येष्ठायै नम: ॥ २ ॥ ॐ रौद्र्यै नम: ॥ ३ ॥ ॐ काल्यै नम: ॥ ४ ॥ ॐ कलविकरिण्यै नम: ॥ ५ ॥ ॐ बलविकरिण्यै नम: ॥ ६ ॥ ॐ बलप्रमथिन्यै नम: ॥ ७ ॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नम: ॥ ८ ॥ पीठमध्ये 'ॐ मनोमन्यै नम:' इति पीठशक्ती पूजयेत्। तत: पुष्पाण्यञ्जलिना गृहीत्वा 'ॐ नमो**

भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायाऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इति मन्त्रेण पीठोपरि पुष्पाञ्जलिनासनं दद्यात्। ततः पीठमध्ये ॐ महीद्यौरित्यादिमन्त्रैः पूर्ववत्ताम्रकलशं संस्थाप्य ॐ तत्त्वायामीति वरुणमावाह्य, ॐ अपाम्पतिवरुणाय नमः इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य, कलशस्य मुखे विष्णुरित्यभिमन्त्र्य देवदानवसंवादे इत्यादि प्रार्थयेत्। ततः कलशोपरि पट्टवस्त्रं प्रसार्य तत्र गन्धेन रुद्रयन्त्रं विलिख्य तन्मध्ये पलस्वर्णनिर्मितां रुद्रप्रतिमां अग्न्युत्तारणपूर्वकं मूलेन संस्थाप्य, प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा, आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैस्तत्तत्पूर्वोक्तैर्मन्त्रैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्। तद्यथा मध्ये—'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इति सम्पूज्य तत्र पश्चिमादिचतुर्दिक्षु क्रमेण ॐ सद्योजाताय नमः॥ १॥ ॐ वामदेवाय नमः॥ २॥ ॐ अघोराय नमः॥ ३॥ ॐ तत्पुरुषाय नमः॥ ४॥ मध्ये—ॐ ईशानाय नमः॥ ५॥ इति पूजयेत्। ततः अष्टारेषु पश्चिमत आरभ्य प्रदक्षिणक्रमेण ॐ नन्दिने नमः॥ १॥ ॐ महाकालाय नमः॥ २॥ ॐ गणेश्वराय नमः॥ ३॥ ॐ वृषभाय नमः॥ ४॥ ॐ भृङ्गिरिटये नमः॥ ५॥ ॐ स्कन्दाय नमः॥ ६॥ ॐ उमायै नमः॥ ७॥ ॐ चण्डीश्वराय नमः॥ ८॥ इति प्रथमावरणम्॥ १॥ ततः षोडशदले तेनैव क्रमेण ॐ अनन्ताय नमः॥ १॥ ॐ सूक्ष्माय नमः॥ २॥ ॐ शिवाय नमः॥ ३॥ ॐ एकपदे नमः॥ ४॥ ॐ एकरुद्राय नमः॥ ५॥ ॐ त्रिमूर्तये नमः॥ ६॥ ॐ श्रीकण्ठाय नमः॥ ७॥ ॐ वामदेवाय नमः॥ ८॥ ॐ ज्येष्ठाय नमः॥ ९॥ ॐ श्रेष्ठाय नमः॥ १०॥ ॐ रुद्राय नमः॥ ११॥ ॐ कालाय नमः॥ १२॥ ॐ कलविकरणाय नमः॥ १३॥ ॐ बलाय नमः॥ १४॥ ॐ बलविकरणाय नमः॥ १५॥ ॐ बलप्रमथनाय नमः॥ १६॥ इति द्वितीयावरणे पूजयेत्॥ २॥ ततश्चतुर्विंशतिदले तेनैव क्रमेण ॐ अणिमायै नमः॥ १॥ ॐ महिमायै नमः॥ २॥ ॐ लघिमायै नमः॥ ३॥ ॐ गरिमायै नमः॥ ४॥ ॐ प्राप्त्यै नमः॥ ५॥ ॐ प्राकाम्यायै नमः॥ ६॥ ॐ ईशितायै नमः॥ ७॥ ॐ वशितायै नमः॥ ८॥ ॐ ब्राह्म्यै नमः॥ ९॥ ॐ माहेश्वर्य्यै नमः॥ १०॥ ॐ कौमार्य्यै नमः॥ ११॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥ १२॥ ॐ वाराह्यै नमः॥ १३॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥ १४॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥ १५॥ ॐ चण्डिकायै नमः॥ १६॥ ॐ असिताङ्गभैरवाय नमः॥ १७॥ ॐ रुरुभैरवाय नमः॥ १८॥ ॐ चण्डभैरवाय नमः॥ १९॥ ॐ क्रोधभैरवाय नमः॥ २०॥ ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः॥ २१॥ ॐ कालभैरवाय नमः॥ २२॥ ॐ भीषणभैरवाय नमः॥ २३॥ ॐ संहारभैरवाय नमः॥ २४॥ इति तृतीयावरणे पूजयेत्॥ ३॥ ततो द्वात्रिंशत्पत्रके तेनैव क्रमेण ॐ भवाय नमः॥ १॥ ॐ शर्वाय नमः॥ २॥ ॐ ईशानाय नमः॥ ३॥ ॐ पशुपतये नमः॥ ४॥ ॐ रुद्राय नमः॥ ५॥ ॐ उग्राय नमः॥ ६॥ ॐ भीमाय नमः॥ ७॥ ॐ महादेवाय नमः॥ ८॥ ॐ अनन्ताय नमः॥ ९॥ ॐ वासुकये नमः॥ १०॥ ॐ तक्षकाय नमः॥ ११॥ ॐ कुलीरकाय नमः॥ १२॥ ॐ कर्कोटकाय नमः॥ १३॥ ॐ शङ्खपालाय नमः॥ १४॥ ॐ कम्बलाय नमः॥ १५॥ ॐ अश्वतराय नमः॥ १६॥ 'इमे नागा अष्टौ' ॐ वैन्याय नमः॥ १७॥ ॐ पृथवे नमः॥ १८॥ ॐ हैहयाय नमः॥ १९॥ ॐ अर्जुनाय नमः॥ २०॥ ॐ शाकुन्तलेयाय नमः॥ २१॥ ॐ भरताय नमः॥ २२॥ ॐ नलाय नमः॥ २३॥ ॐ रामाय नमः॥ २४॥ 'इति नृपाष्टकम्' ॐ हिमवते नमः॥ २५॥ ॐ निषधाय नमः॥ २६॥ ॐ विन्ध्याय नमः॥ २७॥ ॐ माल्यवते नमः॥ २८॥ ॐ पारियात्राय नमः॥ २९॥ ॐ मलयाय नमः॥ ३०॥ ॐ हेमकूटाय नमः॥ ३१॥ ॐ गन्धमादनाय नमः॥ ३२॥ 'इति गिर्य्यष्टकम्' इति चतुर्थावरणम्॥ ४॥ ततश्चत्वारिंशद्दले तेनैव क्रमेण ॐ इन्द्राय नमः॥ १॥ ॐ अग्नये नमः॥ २॥ ॐ ईशानाय नमः॥ ३॥ ॐ निर्ऋतये नमः॥ ४॥ ॐ वरुणाय नमः॥ ५॥ ॐ वायवे नमः॥ ६॥ ॐ कुबेराय नमः॥ ७॥ ॐ ईशानाय नमः॥ ८॥ ॐ शच्यै नमः॥ ९॥ ॐ स्वाहायै नमः॥ १०॥ ॐ वाराह्यै नमः॥ ११॥ ॐ खड्गिण्यै नमः॥ १२॥ ॐ वारुण्यै नमः॥ १३॥ ॐ वायव्यै नमः॥ १४॥ ॐ कौवेर्य्यै नमः॥ १५॥ ॐ ईशान्यै नमः॥ १६॥ ॐ वज्राय नमः॥ १७॥ ॐ शक्तये नमः॥ १८॥ ॐ दण्डाय नमः॥ १९॥ ॐ खड्गाय नमः॥ २०॥ ॐ पाशाय नमः॥ २१॥ ॐ अङ्कुशाय नमः॥ २२॥ ॐ गदायै नमः॥ २३॥ ॐ त्रिशूलाय नमः॥ २४॥ ॐ ऐरावताय नमः॥ २५॥ ॐ मेषाय नमः॥ २६॥ ॐ महिषाय नमः॥ २७॥ ॐ प्रेताय नमः॥ २८॥ ॐ मकराय नमः॥ २९॥ ॐ हरिणाय नमः॥ ३०॥ ॐ नराय नमः॥ ३१॥ ॐ वृषभाय नमः॥ ३२॥ ॐ ऐरावताय नमः॥ ३३॥ ॐ पुण्डरीकाय नमः॥ ३४॥ ॐ वामनाय नमः॥ ३५॥ ॐ कुमुदाय नमः॥ ३६॥ ॐ अञ्जनाय नमः॥ ३७॥ ॐ पुष्पदन्ताय नमः॥ ३८॥ ॐ सार्वभौमाय नमः॥ ३९॥

ॐ सुप्रतीकाय नमः ॥ ४० ॥ इति पञ्चमावरणम् ॥ ५ ॥ **ततो भूपुरे पूर्वादिक्रमेण पुनः ॐ इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ वायवे नमः ॥ ६ ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ (ईशानपूर्वयोर्मध्ये) ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ (निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये) ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥** इति षष्ठावरणे पूजयेत्। **ततो भूपुरस्य बाह्ये आग्नेयादिषु 'आग्नेय्याम्'** ॐ विरूपाक्षाय नमः ॥ १ ॥ **'नैर्ऋत्याम्' ॐ विरूपाय नमः ॥ २ ॥ 'वायव्याम्' ॐ पशुपतये नमः ॥ ३ ॥ 'ईशान्याम्' ॐ ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः ॥ ४ ॥ पुनः भूपुराद्बहिः पूर्वादिदिक्षु क्रमेण 'पूर्वे' ॐ विप्रवर्णाय श्वेतरूपाय सहस्रफणमण्डिताय शेषाय नमः ॥ १ ॥ 'आग्नेय्याम्' ॐ वैश्यवर्णाय नीलरूपाय पञ्चाशत्फणाय उत्तुङ्गकायाय तक्षकाय नमः ॥ २ ॥ 'दक्षिणस्याम्' ॐ विप्रवर्णाय कुङ्कुमरूपाय सहस्रफणमण्डिताय अनन्ताय नमः ॥ ३ ॥ 'नैर्ऋत्याम्' ॐ क्षत्रियवर्णाय पीतरूपाय सप्तशतफणमण्डिताय उत्तुङ्गकायाय वासुकये नमः ॥ ४ ॥ 'पश्चिमायाम्' ॐ क्षत्रियवर्णाय पीतरूपाय सप्तशतफणाय शङ्खपालाय नमः ॥ ५ ॥ 'वायव्याम्' ॐ वैश्यवर्णाय कृष्णरूपाय पञ्चशत्फणाय उत्तुङ्गाय महापद्माय नमः ॥ ६ ॥ 'उत्तरस्याम्' ॐ शूद्रवर्णाय कृष्णारूपाय त्रिंशत्फणमण्डिताय कम्बलाय नमः ॥ ७ ॥ 'ईशान्याम्' ॐ शूद्रवर्णाय श्वेतरूपाय त्रिंशत्फणयुक्ताय कर्कोटकाय नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत् ॥** इति सप्तमावरणम्।

रुद्रपीठ की पूजा-विधि—प्रारम्भ में अपने-अपने स्थानों पर मण्डूकादि परतत्त्वान्त पीठदेवताओं को पूर्ववत् आवाहित करके 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताभ्यो नमः' कहकर गन्ध-पुष्पादि से पूजित करे। पीठशक्तियों की पूजा फिर पूर्वादि दिशाओं में तथा मध्य में मूल में लिखित 'ॐ वामायै नमः' इत्यादि ९ मन्त्रों से करनी चाहिये। फिर पुष्पाञ्जलि लेकर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पीठ के ऊपर पुष्पाञ्जलि द्वारा आसन प्रदान करना चाहिये।

कलश-स्थापन—फिर रुद्रपीठ के मध्य में 'ॐ महीद्यौः०' इत्यादि मन्त्रों के द्वारा पूर्व की भाँति ताम्रकलश को स्थापित करके 'ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा०' इस मन्त्र से उसमें वरुणदेव का आवाहन कर 'ॐ अपाम्पतिवरुणाय नमः' इस मन्त्र के द्वारा षोडशोपचार पूजन कर 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि श्लोकों के द्वारा कलश की प्रार्थना करे। फिर कलश के ऊपर रेशमी वस्त्र अथवा श्रेष्ठ वस्त्र पर गन्ध से रुद्रयन्त्र लिखकर ओढ़ा दे। यन्त्र के बीच में एक पल भार की सोने की रुद्रमूर्ति बनवाकर रखे। मूर्ति का पहिले अग्न्युत्तारण कर लेना चाहिये। फिर पूजन आरम्भ करे।

मध्यपूजन—यन्त्र के मध्य में 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' से पूजन करे। फिर पश्चिमादि चारो दिशाओं में 'ॐ सद्योजाताय नमः' इत्यादि दोनों मन्त्रों से पूजन करे।

आवरण पूजा—फिर मूल में लिखित 'ॐ नन्दिने नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पश्चिम से लेकर प्रदक्षिणक्रम से प्रथम आवरण में पूजा करे। फिर षोडश दल कमल में पश्चिमादि क्रम से 'ॐ अनन्ताय नमः' इत्यादि मूल में लिखित १६ मन्त्रों से द्वितीयावरण की पूजा करे। फिर चौबीस दल वाले कमल में पश्चिमादि क्रम से 'ॐ अणिमायै नमः' इत्यादि २४ मन्त्रों से तृतीयावण की पूजा करे। फिर बत्तीस दल वाले कमल में 'ॐ भवाय नमः' इत्यादि ३२ मन्त्रों से चतुर्थावरण में पूजन करे। फिर पाँचवें आवरण में चालीस दलों वाले कमल में पश्चिम से लेकर क्रमशः 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि ४० मन्त्रों से पूजन करे। फिर षष्ठावरण में भूपुर में पूर्वादि क्रम से 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से दश दिक्पालों का पूजन करे। फिर भूपुर के बाह्य भाग में आग्नेयादि आठों दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से मूल में लिखित 'ॐ विरूपाक्षाय नमः' इत्यादि ८ मन्त्रों से सप्तमावरण की पूजा करे।

विमर्श—यहाँ पर दो प्रकार के रुद्रयन्त्र दिये हैं, जिनमें एक स्कन्दपुराण के अनुसार तथा दूसरा रुद्रकल्प के अनुसार है। ये दोनों चित्र ग्रन्थकार पं० चतुर्थीलाल गौड द्वारा निर्मित हैं; अतः जिस यन्त्र में पञ्चमुख रुद्र मध्य में विराजमान हैं, उसमें दिये अनुसार पूजित करे। यन्त्र में क्रमशः पूजन के मन्त्र भी लिखित हैं।

रुद्रस्तवः

एवमावरणपूजां कृत्वा 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इति मूलान्ते धूपदीपनैवेद्याचमनीयताम्बूलदक्षिणानीराजन-त्रिःप्रदक्षिणादिभिः श्रीरुद्रं सम्पूज्य दशाक्षरेण पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा छत्रचामरपरिमलपुष्पमालाआदर्शदर्शनं समर्पयेत्। ततो रुद्रस्तवेन स्तुवीत—

ॐ नमो विरिञ्चिविष्ण्वीशभेदेन परमात्मने। सर्गसंस्थितिसंहारव्यावृत्तव्यक्तमूर्त्तये ॥ १ ॥

नमश्चतुर्धा प्रोद्भूतभूतभीतात्मने भुवः। भूरिभारार्तिसंहर्त्रे भूतनाथाय शूलिने ॥ २ ॥

विश्वग्रासाय विकसत्कालकूटविषाशिने। तत्कलङ्काङ्कितग्रीवनीलकण्ठाय ते नमः ॥ ३ ॥

नमो ललाटनयने प्रोल्लसत्कृष्णवर्त्मने। ध्वस्तस्मरनिरस्ताधियोगिध्याताय शम्भवे ॥ ४ ॥

नमो देहार्द्धकान्ताय दग्धदक्षाध्वराय च। चतुर्वर्गेष्टदिष्टार्थदायिने मायिनेऽणवे ॥ ५ ॥

स्थूलाय मूलभूताय शूलवारितविद्विषे। कालहन्त्रे नमश्चन्द्रखण्डमण्डितमौलये ॥ ६ ॥

दिग्वाससे कपर्दान्तर्भ्रान्ताहिशिरदिन्दवे। देवदैत्योरगेन्द्रादिमौलिधृष्टाङ्घ्रये नमः ॥ ७ ॥

भस्माभ्यक्ताय भक्ताय भुक्तिमुक्तिप्रदायिने। सकृद्व्यक्तस्वरूपाय शङ्कराय नमो नमः ॥ ८ ॥

नमोन्धकान्तकरिपवेऽसुरद्विषे नमोऽस्तु ते द्विरदवरावभेदिने।
विषोल्लसत्फणिकुलबद्धमूर्त्तये नमः सदा वृषवरवाहनाय ते ॥ ९ ॥
वियन्मरुद्धुतवहवायुकुम्भिनीमखेशरव्यमृतमयूखमूर्त्तये।
नमः सदा नरकायावभेदिने भवेह नो भयभङ्गकृद्विभो ॥ १० ॥

इति रुद्रस्तवेन स्तुत्वा देवं प्रदक्षिणीकृत्य तत्पदद्वन्द्वे साष्टाङ्गं प्रणम्य तत्पीठादीशानदिग्देशे तत्तोयकृते मण्डले रुद्रनैवेद्यांशं किञ्चिदल्पं गृहीत्वा 'चण्डेश्वराय शिवनैवेद्यभागं ददामि' इत्युक्त्वा प्रक्षिपेत्। तत आचम्य—

लेह्यपेयान्नपानानि ताम्बूलं स्त्रग्विलेपनम्। नैर्माल्यं भोजनं तुभ्यं दत्तमस्तु शिवाज्ञया ॥ १ ॥

यत्किञ्चित्क्रियते देव मया चण्ड तवाज्ञया। न्यूनाधिकं कृतं मोहात्परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ २ ॥

इति प्रार्थयेत्। एवं चण्डं सम्पूज्य ततो जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षमन्त्रात्मकम्। ततो जपान्ते सघृतपायसान्नेन अयुतहोमं कृत्वा तेनैव द्रव्येण आवरणदेवताभ्य एकैकाहुतीर्हुत्वा होमदशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं शक्त्या ब्राह्मणभोजनं च कुर्य्यात्।

एवमर्चन्महादेवं पञ्चाङ्गन्यासपूर्वकम्। दशाक्षरजपासक्तो न सीदेत्स्वेष्टसाधने ॥ १ ॥

मनोहराणि गेहानि सुन्दर्यो वामलोचनाः। धनमिच्छापूरणान्तं लभते शिवसेवनात् ॥ २ ॥

प्रयोगान्पूर्वमन्त्रोक्तान्कुर्वीतात्र दशाक्षरे। दशाक्षरं भजन् विप्रो रुद्रजापी भवेत्सदा ॥ ३ ॥

इति महार्णवमन्त्रमहोदधिशान्तिसारादिप्रोक्तं दशाक्षरीरुद्रमन्त्रविधानं समाप्तम्।

इस प्रकार आवरणपूजा सम्पन्न करके 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इस मूल मन्त्र (दशाक्षरी मन्त्र) से धूप, दीप, नैवेद्य, आचमनीय, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन तथा तीन प्रदक्षिणा के द्वारा रुद्र को पूजित कर दशाक्षर मन्त्र से पुष्पाञ्जलि देकर छत्र, चामर, परिमल, पुष्पमाला तथा दर्पण समर्पित करने के उपरान्त रुद्रस्तव से स्तुति करे—

रुद्रस्तव—विष्णु, विरिञ्चि (ब्रह्मा), शिव के भेद से जो सृष्टि, संस्थिति, संहाररूपी व्यावृत्ति के रूप में अव्यक्तमूर्ति परमात्मा है, उसे नमस्कार है। चार प्रकार (अण्डज, पिण्डज, स्वेदज, उद्भिज) से उत्पन्न प्राणियों को

भयभीत करने वाले तथा पृथ्वी के भाराक्रान्त होने पर उसकी पीड़ा को संहार द्वारा हरण करने वाले, त्रिशूलधारी, भूतनाथ को नमस्कार है। विश्व को ग्रासरूप में निगलने के लिये उत्पन्न कालकूट को खाने वाले तथा उसके काले चिह्न के रूप में नीलकण्ठ बनने वाले को नमस्कार है। ललाटनयन, प्रोल्लसत् कृष्णवर्त्म, कामदेव के ध्वंसक, योगियों के द्वारा ध्यायित शम्भु को नमस्कार है। देहार्ध में कान्ता से युक्त, दक्षयज्ञ के विनाशक, चतुर्वर्ग को प्रदान करने वाले, मायापति अणुस्वरूप को नमस्कार है। स्थूल, मूलभूत, त्रिशूल से शत्रुओं का संहार करने वाले, कालनाशक, चन्द्रखण्ड से मण्डित शिर वाले को नमस्कार है। दिगम्बर, कपर्दी, सर्पवेष्टित, शरद के चन्द्र के समान वर्ण वाले, देव, दैत्य, सर्पराज आदि को शिर पर धारण करने वाले को नमस्कार है। भस्माभ्यक्त, भक्त को भुक्ति-मुक्तिप्रदायक, तुरन्त प्रकट होने वाले शङ्कर को नमस्कार है। हे अन्धक दैत्य के नाशकर्ता, असुरद्वेषी, द्विरदवर का अवभेदन करने वाले, विष से उल्लसित सर्पकुल को लपेटने वाले, वृषवाहन वाले! आपको नमस्कार है॥ १-१०॥

इस प्रकार से रुद्रस्तव के द्वारा शिव की स्तुति करके प्रदक्षिणा कर उनके चरणयुगल में साष्टाङ्ग प्रणाम कर उस पीठ के ईशानकोण में जल से मण्डल बनाकर रुद्र के नैवेद्य में से कुछ अंश उनके गण चण्डेश्वर को 'शिवनैवेद्य में से भाग देता हूँ' ऐसा कहकर फेंक दे (डाल दे)। फिर आचमन कर 'लेह्य, पेय, अन्नपान, ताम्बूल, माला, विलेपन, निर्माल्य, भोजन आदि को शिव की आज्ञा से आपको देता हूँ। हे देव चण्डेश्वर! जो कुछ भी किया जाता है, वह न्यूनाधिक होने पर भी आपकी आज्ञा से पूर्ण हो।' ऐसी प्रार्थना चण्ड से करे। इस प्रकार चण्ड की पूजा करके जप करे। फिर दशाक्षरी मन्त्र का दश लाख जप कर पुरश्चरण सम्पन्न करे। जप की समाप्ति पर घृत-पायस-अन्नमिश्रित अयुत (१०,०००) होम करे तथा आवरणदेवताओं को एक-एक आहुति देकर होम का दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन, तद्दशांश ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार से पञ्चाङ्ग न्यासपूर्वक महादेव की अर्चना करके दशाक्षर का जप करने वाला अभीष्ट, सिद्धि में असफल नहीं होता है, उसे मनोहर गृहसुन्दरी स्त्री, धन आदि की प्राप्ति होती है। दशाक्षर के जप के उपरान्त सदैव रुद्रजप भी करना चाहिये।

पञ्चरुद्रविधानानि

हेमाद्रिग्रहार्णवशान्तिसारेषु तत्र तावद्रुद्रमाहात्म्यम्। जाबालश्रुतिः—'किं जाप्येनामृतत्वं नो ब्रूहि शतरुद्रियेण' इति। कैवल्योपनिषदि—यः शतरुद्रियमधीते सोग्निपूतो भवति। स वायुपूतो भवति। स सुरापानात्पूतो भवति। स गुरुतल्पगमनात्पूतो भवति। स स्वर्णस्तेयात्पूतो भवति। स ब्रह्महत्यायाः पूतो भवति। अकृत्यात्पूतो भवति। अनेन ज्ञानमाप्नोति संसारार्णवनाशनम्। तस्मादेवं विदित्वैव कैवल्यफलमश्नुत इति। पराशरोऽपि—मद्यं पीत्वा गुरुदाराश्च गत्वा स्तेयं कृत्वा ब्रह्महत्यां च कृत्वा। भस्मच्छन्नो भस्मशय्यां शयानो रुद्राध्यायी मुच्यते सर्वपापैः॥ १॥ इदमहरहः कृते मासमात्रं ज्ञेयम्। तदुक्तं पाराशरेण—

रुद्राध्यायी भवेद्भक्त्या मासमेकमतन्द्रितः। प्रायश्चित्तं भवेदेतद्रहस्यस्य न संशयः॥

पाद्मे शिवगीतायाम्—

यस्तु रुद्रं जपेन्नित्यं ध्यायमानो ममाकृतिम्। षडक्षरं वा बाणं वा निष्कामो विजितेन्द्रियः॥
अथाथर्वशिरोमन्त्रं केवलं वा रघूत्तम। स तेनैव च देहेन शिवः सञ्जायते ध्रुवम्॥

पञ्चरुद्र-विधान—जाबालश्रुति में कहा है—यदि शतरुद्रिय का जप नहीं किया तो फिर अन्य किस जप से अमृत की प्राप्ति होगी।

कैवल्य उपनिषद् में भी कहा गया है—जो शतरुद्रिय का अध्ययन (पाठ) करता है, वह अग्निपूत (पवित्र) होता है। वायुपूत होता है। वह गुरुपत्नी-गमन के दोष से मुक्त होता है। वह स्वर्ण की चोरी से पापमुक्त होता है। ब्रह्महत्या के पाप से रहित होता है। दुष्कृत्य के दोष से मुक्त होता है। इससे प्राप्त ज्ञान के द्वारा संसाररूपी समुद्र का नाश होता है तथा कैवल्य (मुक्ति) की प्राप्ति होती है।

पराशर ने भी कहा है—मद्य पीकर, गुरुदारा-गमन कर, चोरी कर, ब्रह्महत्या कर जो भस्म रमाकर भस्म में शयन करता है तथा रुद्र का पाठ करता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है। पद्मपुराणान्तर्गत शिवगीता में कहा है—

जो मेरे स्वरूप का ध्यान करता हुआ नित्य रुद्रजप करता है; षडक्षर मन्त्र का जप करता हुआ जितेन्द्रिय होकर लिङ्गपूजा करता है अथवा हे रघूत्तम! वह केवल रुद्र अथर्वशीर्ष का जप करता है तो वह व्यक्ति उसी शरीर से निश्चित ही शिव हो जाता है।

वायुपुराणे—

सर्वेषु ग्रहदोषेषु दुःस्वप्राद्भुतदर्शने। जपन्रुद्रान् सकृद्विप्रः सर्वदोषैः प्रमुच्यते॥
अनपत्यत्वदोषेषु शाकिन्यादिग्रहेषु च। सर्वज्वरविनाशाय रुद्रजाप्यो न संशयः॥
रोगवान् पापवाँश्चैव रुद्रं जप्त्वा जितेन्द्रियः। रोगात्पापात्प्रमुक्तोसावतुलं सुखमश्नुते॥

हेमाद्रौ कौशिकबौधायनौ—

रुद्रैकादशनी त्वेषा सर्वकामफलप्रदा। सर्वपापक्षयकरी सर्वशान्तिप्रदायिनी॥

विष्णुधर्मोत्तरेऽपि—

रुद्राणां च तथा जाप्यं सर्वाघविनिषूदनम्। सर्वकामकरो होमस्तथा सर्वत्र शान्तिदः॥
अजाविकानामश्वानां कुञ्जराणां तथा गवाम्। मनुष्याणां नरेन्द्राणां बालानां योषितामपि॥
ग्रामाणां नगराणां च देशानामपि भार्गव। उपद्रुतानां धर्मज्ञ व्याधितानां तथैव च॥
मारके समनुप्राप्ते रिपुजे च तथा भये। रुद्रहोमः पराशान्तिः पायसेन घृतेन वा॥

हेमाद्रौ कालिकापुराणे—

यः पुनः सततं भक्त्या अभ्यर्च्य शशिशेखरम्। जपेद्ध्यायेत्सदा रुद्रात्सोऽपि याति परं पदम्॥
अथैहते फलं किञ्चिदैहिकं पुष्कलं तथा। तानेव हि जपेद्रुद्रान् शुचिर्भूत्वा समाहितः॥
अथ वेदं जगत्सर्वं वशीकर्तुं समीहते। तदा रुद्रं जपेद्भूयो ध्यायमानो महेश्वरम्॥

इति रुद्रफलम्।

वायुपुराण में कहा है—सभी ग्रहदोषों में, बुरे स्वप्न देखने में एक बार जप करने वाला ब्राह्मण उनके दोषों से मुक्त हो जाता है। सन्तानहीनता, डाकिनी-शाकिनी आदि ग्रहों की पीड़ा, सभी ज्वर आदि रुद्र के जप से निस्सन्देह नष्ट होते हैं। जो रोगी या पापी जितेन्द्रिय होकर रुद्रजप करता है, वह रोग तथा पाप से मुक्त होकर सुखी होता है।

हेमाद्रि में कौशिक बौधायन का कथन है—यह रुद्रैकादशिनी सभी कामनाओं को पूरा करती है। सभी पापों की नाशिक तथा सम्पूर्ण शान्ति देने वाली है।

विष्णुधर्मोत्तर में भी कहा है—रुद्रों का जप सम्पूर्ण पापों का नाशक है। सम्पूर्ण कामनाओं का दायक है। उसी प्रकार रुद्रहोम भी शान्तिदायक होता है। भेड़ों-बकरियों, अश्वों, हाथियों तथा गायों, मनुष्यों, राजा लोगों, बालकों,

स्त्रियों, ग्रामों, नगरों तथा देशों की भी शान्ति हे भार्गव! हो जाती है। हे धर्मज्ञ! इन सबके उपद्रव तथा कष्ट, रोग, महामारी तथा शत्रुभय पायस तथा घृत से होम करने पर शान्त हो जाते हैं।

हेमाद्रि में कालिकापुराण का उद्धरण है—जो भक्तिपूर्वक चन्द्रमौलि (शिव) का जप एवं ध्यान नित्य करता है, वह परमपद को प्राप्त होता है। इहलोक तथा परलोक में फल चाहने वाले को रुद्रजप करना चाहिये। जिस प्रकार अथर्ववेद के जप से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं, उसी प्रकार रुद्रजप का भी फल मिलता है।

रुद्रप्रकारः

रुद्रश्च त्रिविधः—जपरुद्रो होमरुद्रोऽभिषेकरुद्रश्च। तत्र जपरुद्रः केवलजपात्मको होमाङ्गश्चेति द्वेधा। होमरुद्रे तर्पणादि। अभिषेकरुद्रे च पूजा ब्राह्मणभोजनं सिद्धम्। तत्रापि जपादिरुद्रश्च पञ्चधा। तद्भेदानाह—

शृणुष्व भो महाप्राज्ञ रुद्रभेदान्वदामि ते। रुद्राः पञ्चविधाः प्रोक्ता देशिकैरुत्तरोत्तरम्॥ १॥
साङ्गस्त्वाद्यो रूपकाख्यः सशीर्षो रुद्र उच्यते। एकादशगुणैस्तद्वद्रुद्रिसंज्ञो द्वितीयकः॥ २॥
एकादशभिरेताभिस्तृतीयो लघुरुद्रकः। लघ्वेकादशभिः प्रोक्तो महारुद्रश्चतुर्थकः॥ ३॥
पञ्चमः स्यान्महारुद्र एकादशभिरन्तिमः। अतिरुद्रः समाख्यातः सर्वेभ्यो ह्युत्तमोत्तमः॥ ४॥ इति।

रुद्रपद्धतौ—

साङ्गमाद्यं जपेद्रूपं केवलानि नवान्तरे। साङ्गं सशीर्षं चान्त्यं तु निरङ्गमिति केचन॥ १॥
षडङ्गानि जपेत्पूर्वमध्यायं रुद्रियं ततः। तदन्ते जपतेऽष्टर्चं वयं सोममहच्छिरः॥ २॥

रुद्र के प्रकार—रुद्र तीन प्रकार का होता है—१. जपरुद्र, २. होमरुद्र तथा ३. अभिषेकरुद्र। उनमें से जपरुद्र (रुद्राष्टाध्यायी का पाठ) केवल जपात्मक (पाठात्मक) होता है तथा होमात्मक रुद्र के दो भेद होते हैं। होमरुद्र में तर्पणादि होता है। अभिषेक रुद्र में पूजा तथा ब्राह्मणभोजन होते हैं। रुद्रों के पाँच भेद भी माने गये हैं। उनके भेदों को कहते हैं—हे महाप्राज्ञ! सुनो, अब मैं तुमसे रुद्र के भेदों को कहता हूँ। देशिकों (गुरुओं) ने रुद्रों के पाँच प्रकार कहे हैं, जो उत्तरोत्तर होते हैं। प्रथम रुद्र साङ्ग आद्यरूपक नामक सशीर्ष रुद्र होता है। उससे एकादशसंज्ञक रुद्र द्वितीय होता है। फिर इस द्वितीय की एकादश आवृत्ति में तीसरा लघुरुद्र होता है। लघु के एकादश से चौथा महारुद्र होता है। फिर उसके ग्यारह से अन्तिम अतिरुद्र होता है, वह सभी रुद्रों में उत्तम होता है॥ १-४॥

रुद्रपद्धति में कहा है—आदिरुद्र में केवल साङ्गरूपक का जप (पीठ) केवल नौ के अन्तर से करे। अन्तिम रुद्र का जप साङ्ग (षडङ्गसहित) तथा शीर्षसहित करे। कुछ के मत से निरङ्ग जप करना चाहिये। प्रथम षडङ्गों का जप करके फिर रुद्राध्याय का जप करना चाहिये। अन्त में 'वयं सोम' इत्यादि आठ ऋचाओं का जप किया जाता है। यही शीर्ष है॥ १-२॥

जपादिरुद्रप्रयोगः

तत्र तावत् कृच्छ्रचान्द्रायणं पराकं च कृत्वा अशक्तश्च तत्प्रतिनिधिरूपां धेनुं वा तन्मूल्यं च दत्त्वा अयुतगायत्रीजपं च स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा कुर्यात्। एवं प्रायश्चित्तं सम्पाद्य चन्द्रतारादिबलान्विते सुमुहूर्त्ते प्रातर्नित्यकर्म समाप्य सपत्नीको यजमानः स्वासने प्राङ् उदङ्मुखो वा उपविश्य भस्मत्रिपुण्ड्रं रुद्राक्षमालां च धृत्वा पवित्रपाणिः 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इति मन्त्रेणाचमनं प्राणायामं च कुर्यात्। ततः ॐ आनो भद्रा इत्यादिशान्तिपाठं पठित्वा सुमुखश्चैकदन्तश्चेति गणपतिस्मरणपूर्वकं देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे

च कृतकायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकज्ञाताज्ञातमहापातकोपपातकानां व्याधिरूपेण परिपच्यमानानां विनाशार्थं वाऽमुककामनासिद्ध्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् अमुकरुद्रहोमेन वा अमुकरुद्राभिषेकेण एतावन्तं कालं श्रीसदाशिवं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा यक्ष्ये' एवं तत्तत्कामनया सङ्कल्प्य 'तदङ्गत्वेन गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यादिवरणं च करिष्ये' इति च सङ्कल्प्य गणपतिपूजनादिआचार्यवरणान्तं पूर्ववत्कुर्य्यात्। ततो जपरुद्रे शिवालयादिषु जपस्थानं प्रकल्प्य, होमरुद्रे मण्डपकुण्डादि च कुर्य्यात्। ततो जापकः कृतनित्यक्रियः धृतभस्मत्रिपुण्ड्ररुद्राक्षः सपवित्रकरः आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम यजमानस्य वा अमुककामनासिद्ध्यर्थममुकरुद्रजपं करिष्ये, तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं श्रीकण्ठादिकलान्यासं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य भूतशुद्ध्यादिबहिर्मातृकान्यासान्तं पद्धतिकाण्डोक्तमार्गेण कृत्वा शिवपञ्चाक्षरोदितं श्रीकण्ठादिकलामातृकान्यासं च सम्पाद्य रुद्रन्यासान् कुर्य्यात्। ते चानादेशे सर्वेऽप्यङ्गुष्ठानामिकाभ्यां कार्य्याः।

जपादि रुद्रप्रयोग—प्रथम कृच्छ्रचान्द्रायण व्रत करके, अशक्ति में उसके प्रतिनिधिरूप गोदान अथवा उसका मूल्य देकर अयुत सङ्ख्या में स्वयं या ब्राह्मण द्वारा गायत्री-जप करे। इस प्रकार प्रायश्चित्त का सम्पादन करके चन्द्र-तारा बलान्वित सुमुहूर्त्त में प्रातः के नित्यकर्म को समाप्त कर सपत्नीक यजमान पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख वैठकर भस्मत्रिपुण्ड्र तथा रुद्राक्षमाला को धारण करके पवित्रहस्त होकर 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इस मन्त्र से आचमन तथा प्राणायाम करके 'ॐ आनो भद्रा०' इत्यादि शान्तिपाठ पढ़कर 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' इनका पाठ गणपतिस्मरणपूर्वक करके देश-काल का उच्चारण कर मूल में लिखित 'अमुकगोत्रोऽमुक .... नान्दीश्राद्धमाचार्यवरणमहं करिष्ये' इत्यादि को पढ़कर सङ्कल्प करके गणपति-पूजन, आचार्यवरण-पर्यन्त सब कृत्य पूर्ववत् सम्पन्न करके होमरुद्र में मण्डप तथा कुण्डादि का निर्माण करे। फिर रुद्रजप-हेतु शिवालय आदि में जपस्थान की व्यवस्था करके जापक नित्यकर्म से निपटकर भस्म, त्रिपुण्ड्र तथा रुद्राक्ष धारण कर, पवित्री धारण कर, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृका, बहिर्मातृकान्यास तथा निश्चित सङ्ख्या में रुद्राक्षजप करने का सङ्कल्प करे। फिर भूतशुद्धि आदि सब कार्य पद्धतिकाण्ड में बतायी गयी विधि के अनुसार करके शिवपञ्चाक्षर के अनुष्ठान में जो भी कण्ठादि कलामातृकान्यास एवं रुद्रन्यास कहे गये हैं, उन्हें करे। उन्हें अङ्गूठे तथा अनामिका के द्वारा सम्पन्न करे (जब तक कि अन्य प्रकार से न्यास करना न कहा गया हो)।

छन्दःपुरुषन्यासः

तत्र तावत्प्रथमं छन्दःपुरुषन्यासः—ॐ तिर्यग्विलाय चमसायोर्ध्वबुध्न्याय च्छन्दःपुरुषाय नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गौतमभरद्वाजाभ्यां नमः नेत्रयोः॥ २॥ ॐ विश्वामित्रजमदग्निभ्यां नमः श्रोत्रयोः॥ ३॥ ॐ वसिष्ठकश्यपाभ्यां नमः नासापुटयोः॥ ४॥ ॐ अत्रये नमः वाचि॥ ५॥ ॐ गायत्र्यग्निभ्यां नमः शिरसि॥ १॥ ॐ उष्णिक्सवितृभ्यां नमः ग्रीवायाम्॥ २॥ ॐ बृहतीबृहस्पतिभ्यां नमः हनौ॥ ३॥ ॐ बृहद्रथन्तरद्यावापृथिवीभ्यां नमः बाह्वोः॥ ४॥ ॐ त्रिष्टुबिन्द्राभ्यां नमः नाभौ॥ ५॥ ॐ जगत्यादित्याभ्यां नमः श्रोण्योः॥ ६॥ ॐ अतिच्छन्दाप्रजापतिभ्यां नमः लिङ्गे॥ ७॥ ॐ यज्ञायज्ञियवैश्वानराभ्यां नमः गुदे॥ ८॥ ॐ अनुष्टुब्विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ऊर्वोः॥ ९॥ ॐ पंक्तिमरुद्भ्यो नमः जानुनोः॥ १०॥ ॐ द्विपदाविष्णुभ्यां नमः पादयोः॥ ११॥ ॐ विच्छन्दावायुभ्यां नमः नासापुटस्थप्राणेषु॥ १२॥ ॐ न्यूनाक्षरच्छन्दोभ्यो नमः मस्तकादिपादान्तं सर्वाङ्गेषु॥ १३॥ इति छन्दःपुरुषन्यासः।

छन्दपुरुषन्यास—'ॐ तिर्यक् विलाय चमसायोर्ध्वबुध्न्याय नमः' इत्यादि मूल में लिखित पाँच मन्त्रों से शरीर के विभिन्न अङ्गों में क्रमशः शिर, नेत्रद्वय, कर्णद्वय, नासापुटद्वय, वाक् (जीभ) में न्यास करे। पुनः 'ॐ

गायत्री अग्निभ्यां नमः शिरसि' इत्यादि तेरह मन्त्रों से क्रमशः शिर, ग्रीवा, हनु (ठोढ़ी), भुजाएँ, नाभि, श्रोणि (कूल्हे), लिङ्ग, गुद, ऊरू, जानु, गुदों, नासापुट तथा सर्वाङ्ग में न्यास करना चाहिये।

पञ्चाङ्गरुद्राणां न्यासः

मनोजूतिरित्यस्याङ्गिरसबृहस्पतिऋषिर्यजुश्छन्दः विश्वेदेवा देवता हृदयन्यासे विनियोगः। ॐ मनोजूतिर्जुषता० हृदयाय नमः ॥ १ ॥ अबोध्यग्निरित्यस्य बुधोङ्गिरा ऋषी त्रिष्टुप्छन्दः अग्निदेवता शिरोन्यासे विनियोगः। ॐ अबोध्यग्निः स० शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ मूर्द्धानमित्यस्य भरद्वाजऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः वैश्वानरोऽग्निर्देवता शिखान्यासे विनियोगः। ॐ मूर्द्धानन्दिवो० शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ मर्माणित इत्यस्य विवस्वान् ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः, लिङ्गोक्ता देवता, कवचन्यासे विनियोगः। ॐ मर्माणिते वर्म्मणा० कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ विश्वतश्चक्षुरित्यस्य विश्वकर्माभौवनऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः विश्वकर्मादेवता नेत्रन्यासे विनियोगः। ॐ विश्वतश्चक्षुरुत० नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ मानस्तोक इत्यस्य कुत्स ऋषिर्जगती छन्दः। एको रुद्रो देवता। अस्त्रन्यासे विनियोगः। ॐ मानस्तोके तनये० अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति लघुषडङ्गन्यासः प्रथमः ॥ १ ॥

पञ्चाङ्ग रुद्रों का न्यास—'मनोजूति' इस मन्त्र के अङ्गिरस बृहस्पति ऋषि, यजुः छन्द, विश्वेदेवा देवता, हृदयन्यास में विनियोग है। ऐसा कहकर विनियोग मन्त्र पढ़े। फिर इसी भाँति मूल में निर्दिष्ट कुल छः मन्त्रों से विनियोगपूर्वक क्रमशः हृदय, शिर, शिखान्यास, कवचाय हुम्, नेत्रत्रयाय वौषट् तथा अस्त्राय फट्—इन छः अङ्गों में न्यास करना चाहिये। यह लघु षडङ्गन्यास प्रथम प्रकार का न्यास होता है।

मन्त्रन्यासः

यातेरुद्र इति परमेष्ठी ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः। एको रुद्रो देवता। शिखान्यासे विनियोगः। ॐ यातेरुद्रशिवातनूरघोरा० शिखायाम् ॥ १ ॥ अस्मिन्महत्यर्णवे इत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। बहुरुद्रो देवता। शिरोन्यासे विनियोगः। ॐ अस्मिन्महत्यर्णवे० शिरसि ॥ २ ॥ असङ्ख्यातेति परमेष्ठी ऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। बहवो रुद्रा देवताः। ललाटन्यासे विनियोगः। ॐ असङ्ख्याता० ललाटे ॥ ३ ॥ त्र्यम्बकमित्यनयोः क्रमेण वसिष्ठप्रजापती०। अनुष्टुप्त्र्यम्बको०। नेत्रन्यासे०। ॐ त्र्यम्बकं यजा० नेत्रयोः ॥ ४ ॥ मानस्तोक इति कुत्स ऋषिः। जगती छन्दः। एको रुद्रो देवता। नासिकान्यासे०। ॐ मानस्तोके० नासिकायाम् ॥ ५ ॥ अवतत्येत्यस्य परमेष्ठी ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। एको रुद्रो देवता। मुखन्यासे विनियोगः। ॐ अवतत्यधनु० मुखे ॥ ६ ॥ नीलग्रीवा इति द्वयोः परमेष्ठी ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। बहवो रुद्रा देवताः। कण्ठन्यासे विनियोगः। ॐ नीलग्रीवाः शि० कण्ठे ॥ ७ ॥ नमस्त आयुधायेत्यस्य परमेष्ठी० अनुष्टुप्० एको रुद्रो०। प्रकोष्ठन्यासे०। ॐ नमस्तऽआयु० प्रकोष्ठे ॥ ८ ॥ (मणिबन्धादूर्ध्वं कूर्पराधोभागः प्रकोष्ठः)। येतीर्थानीति परमेष्ठी०। अनुष्टुप्० बहवो रुद्रा० न्यासे०। ॐ येतीर्थानि०। हस्तयोः ॥ ९ ॥ नमो वः किरिकेभ्यः इति परमेष्ठी०। सामोष्णिग्यजुरुष्णिगतिच्छन्दांसि बहुरुद्रा०। हृदयन्यासे विनियोगः। ॐ नमोवः किरिकेभ्य० हृदये ॥ १० ॥ नमोहिरण्यबाहव इति परमेष्ठी ऋषिः। अत्रैकादशाक्षराणां यजुस्त्रिष्टुप्छन्दः। अष्टाक्षराणां यजुरनुष्टुप्०। दशाक्षरस्य यजुः पङ्क्तिः हिरण्यबाहृसादयो मन्त्रवर्णावगता उभयतो नमस्कारा बहवो रुद्रा० नाभिन्यासे विनियोगः। ॐ नमो हिरण्यबाहवे० पुष्टानां पतये नमः। नाभौ ॥ ११ ॥ इमारुद्रायेति कुत्स०। जगती०। एको रुद्रो दे०। गुह्यन्यासे०। ॐ इमारुद्राय० गुह्ये ॥ १२ ॥ मानोमहांतमितिकुत्स०। जगती० एको रुद्रो०। ऊरुन्यासे०। ॐ मानोमहांत०। ऊर्वोः ॥ १३ ॥ एषत इत्यस्य प्रजापति०। सामपङ्क्तिर्यजुर्जगतीछन्दः। रुद्रो०। ऊरुन्यासे० ॐ एषते रुद्रभाग० जानुनोः ॥ १४ ॥ अवरुद्रमित्यस्य प्रजापति०। पङ्क्ति०। रुद्रो०। जङ्घान्यासे०। ॐ अवरुद्र० जङ्घयोः ॥ १५ ॥ [जानुगुल्फयोरन्तरालं जङ्घा] अध्यवोचदित्यस्य परमेष्ठी०। पङ्क्तिच्छन्दः। एको रुद्रो०। कवचन्यासे०। ॐ अध्यवोचद०। कवचमुद्रया

कवचम्॥ १६॥ नमोबिल्मिन इत्यस्य परमेष्ठी० षडक्षराणां यजुर्गायत्री०। पञ्चाक्षरयोर्दैवीपङ्क्तिः। सप्ताक्षरस्य यजुरुष्णिग्बिल्मिनादयो मन्त्रवर्णा विगताः। अन्यतरतो नमस्कारा बहवो रुद्रा देवता उपकवचन्यासे० ॐ नमो बिल्मिने०। हनन्यायच [कवचाद्विपरीतमुपकवचम्। कवचोपरि तथैवेत्युपकवचमित्यन्ये]॥ १७॥ नमोस्तु नीलग्रीवायेत्यस्य परमेष्ठी० अनुष्टुप्०। एको रुद्रो०। तृतीयनेत्रन्यासे०। ॐ नमोस्तु नीलग्री० [मुष्टितो विमुक्तया मध्यमया तृतीयनेत्रे]॥ १८॥ प्रमुञ्चेत्यस्य परमेष्ठी०। अनुष्टुप्०। एको रुद्रो दे०। अस्त्रन्यासे०। ॐ प्रमुञ्चध्व०। अस्त्रम्॥ १९॥ यएतावन्तश्चेत्यस्य परमेष्ठी०। अनुष्टुप्०। बहवो रुद्रा०। दिग्बन्धने०। ॐ यएतावन्तश्च० दिक्षु विदिक्षु च परस्परतर्जन्यङ्गुष्ठाग्रस्फोटनेन दिग्बन्धः॥ २०॥ इति शिखाद्यस्त्रान्तो दिग्बन्धसहित एकोनविंशतिविधो द्वितीयो न्यासः॥ २॥

रुद्राध्याय के मन्त्रों का न्यास—'याते रुद्र०' इत्यादि प्रथम मन्त्र के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, एकरुद्र देवता, शिखान्यास में विनियोग है। फिर पूरा मन्त्र पढ़कर शिखा में न्यास करे। 'अस्मिन् महत्यर्णवे०' मन्त्र के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, बहुरुद्र देवता शिरोन्यास में विनियोग है। मन्त्र से शिरोन्यास करे। 'ॐ असङ्ख्याता रुद्रा०' इस मन्त्र के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, बहवो रुद्रा देवता है। इसका ललाटन्यास में विनियोग करे तथा न्यास करे। 'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे०' इत्यादि दोनों मन्त्रों के क्रमशः वसिष्ठ तथा प्रजापति ऋषि हैं। दोनों में अनुष्टुप् छन्द है तथा दोनों के त्र्यम्बक देवता हैं। दोनों मन्त्रों से नेत्रों में न्यास करे। 'मानस्तोकेतनये०' इत्यादि मन्त्र के कुत्स ऋषि, जगती छन्द, एकरुद्र देवता एवं नासिका न्यास में विनियोग है। नासिका में न्यास करे। 'अवतत्य धनुष्ट ँ सहस्राक्ष शतेषुधे०' इत्यादि मन्त्र के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, एकरुद्र देवता है, मुखन्यास में विनियोग करे। 'ॐ नीलग्रीवा शितिकण्ठा०' इत्यादि दोनों के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, बहवो रुद्र देवता एवं कण्ठन्यास में विनियोग है। 'ॐ नमस्त आयुधायानातताय०' इत्यादि के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, एकरुद्र देवता, प्रकोष्ठन्यास में विनियोग करे (कलाई से कोहनी तक का हाथ का अङ्ग प्रकोष्ठ कहलाता है)। 'येतीर्थानि०' मन्त्र के परमेष्ठी ऋषि, अनुष्टुप् छन्द बहवोरुद्र देवता हैं। इसका हस्त (हथेलियों) के न्यास में विनियोग है। फिर मूल में देखकर क्रमशः हृदय, नाभि, गुह्य, दोनों ऊरु (घुटनों से ऊपर टाँग), जानु, जङ्घा (पिण्डली), कवच, तृतीय नेत्र, अस्त्र, दिग्बन्धन—इस प्रकार से इक्कीस प्रकार के न्यास विनियोगपूर्वक करना चाहिये। ये शिखा से अस्त्रपर्यन्त दिग्बन्ध सहित इक्कीस न्यास द्वितीय न्यास कहलाते हैं।

दशाक्षरमन्त्रन्यासः

दशाक्षरमन्त्रस्य प्रजापति०। विराट्०। रुद्रो०। न्यासे० ॐ नमो मूर्द्धनि। ॐ नं नमः शिखायाम्। ॐ मों नमो ललाटे। ॐ भं नमो मुखे०। ॐ गं नमः कण्ठे। ॐ वं नमः हृदये। ॐ तें नमः दक्षिणहस्ते। ॐ रुं नमः वामहस्ते। ॐ द्रां नमः नाभौ। ॐ यं नमः पादयोः॥ १०॥ इति दशाक्षरीमन्त्रन्यासस्तृतीयः॥ ३॥

दशाक्षर मन्त्रन्यास—'अस्य दशाक्षरमन्त्रस्य प्रजापति ऋषिः विराट् छन्दः, रुद्रो देवता, न्यासे विनियोगः' यह कहकर न्यास का जल छोड़े तथा 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' मन्त्र के दश अक्षरों में 'नमः' जोड़कर क्रमशः शिर, शिखा, ललाट (माथा), मुख, कण्ठ, हृदय, दक्षिण हस्त, वामहस्त, नाभि तथा दोनों पैरों—इन दश अङ्गों में (मूल में लिखित के अनुसार) न्यास करे। यह तृतीय प्रकार का न्यास है।

सम्पुटन्यासः

अथ सम्पुटाख्यो न्यासः; स च मुद्रिताञ्जलिना प्राच्यादिदिक्षु वक्ष्यमाणमन्त्रैः कार्यः। तद्यथा—त्रातारमित्यस्य गर्ग ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। इन्द्रो देवता। सम्पुटीकरणे विनियोगः। ॐ त्रातारमिन्द्र० ॐ इन्द्राय नमः। इति प्राच्याम्॥ १॥

त्वन्नोऽअग्न इत्यस्य हिरण्यस्तूप आङ्गिरस० त्रिष्टुप् छन्दः। अग्निर्देवता सम्पुटीकरणे०। ॐ त्वन्नोऽअग्ने० ॐ अग्नये नमः। इत्याग्नेय्याम्॥ २॥ सुगन्नुः पन्था० मित्यस्य प्रजापति० त्रिष्टुप्०। यमो देवता। सम्पुटी०। ॐ सुगन्नुःपन्थां ॐ यमाय०। इति दक्षिणस्याम्॥ ३॥ असुन्वन्तमित्यस्य प्रजापति० त्रिष्टुप्० निर्ऋतिः सं०। ॐ असुन्वन्तम० ॐ निर्ऋतये नमः। इति नैर्ऋत्याम्॥ ४॥ तत्त्वायामीत्यस्य शुनःशेप० त्रिष्टुप्०। वरुणो०। सं०। ॐ तत्त्वायामि० ॐ वरुणाय नमः। इति प्रतीच्याम्॥ ५॥ आनोनियुद्भिरित्यस्य वसिष्ठ० त्रिष्टुप्०। वायुः०। सं०। ॐ आनोनियुद्भि० ॐ वायवे नमः। इति वायव्याम्॥ ६॥ वयठं०सोमेत्यस्य बन्धु०। गायत्री०। सोमो०। सं०। ॐ वयठं०सोम० ॐ सोमाय नमः। इत्युदीच्याम्॥ ७॥ तमीशानमित्यस्य गौतम०। जगती०। ईशानो०। सं०। ॐ तमीशान० ॐ ईशानाय०। इतीशान्याम्॥ ८॥ अस्मेरुद्रा इत्यस्य प्रगर्थ०। त्रिष्टुप्०। ब्रह्मा०। सं०। ॐ अस्मे रुद्रा० ॐ रुद्राय नमः। इत्यूर्ध्वम्॥ ९॥ स्योनापृथिवीत्यस्य मेधातिथि०। गायत्री छन्दः। अनन्तो देवता सम्पुटीकरणे विनियोगः। ॐ स्योनापृथिवी० ॐ अनन्ताय नमः इत्यधः॥ १०॥ एवं दिक्षु विदिक्षु च इन्द्रादीन् प्रणमेत्। इति सम्पुटाख्यश्चतुर्थो न्यासः॥ ४॥

सम्पुटन्यास—'त्रातारमिन्द्र' इत्यादि मन्त्र का सम्पुटन्यास में विनियोग (मूलानुसार) करके बन्द अञ्जलि क्रमशः १. पूर्व, २. आग्नेय, ३. दक्षिण, ४. नैर्ऋत्य, ५. पश्चिम, ६. वायव्य, ७. उत्तर, ८. ईशान, ९. ऊर्ध्व (ईशान तथा पूर्व के बीच) तथा १०. अधः (नैर्ऋत्य एवं पश्चिम के बीच) में न्यास कर दिशा-विदिशा में इन्द्रादि को प्रणाम करे। यह सम्पुट नामक चौथा न्यास होता है।

बृहत्षडङ्गन्यासः

अथ बृहत्षडङ्गन्यासः—यज्जाग्रत इति षड्ऋचस्य शिवसङ्कल्प ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। मनो देवता। हृदयन्यासे विनियोगः॥ ॐ यज्जाग्रतो०॥ १॥ येन कर्माण्य०॥ २॥ यत्प्रज्ञान०॥ ३॥ येमेदं भूतं०॥ ४॥ यस्मिन्नृच०॥ ५॥ सुषारथि०॥ ६॥ इति हृदयाय नमः॥ १॥ (मुष्टिविनिर्गताङ्गुष्ठौ संयुतौ कृत्वा हृदये न्यसेत्।) सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायण ऋषिः आद्यानां पञ्चदशानामनुष्टुप् छन्दः। यज्ञेनयज्ञमित्यस्य त्रिष्टुप्०। जगद्बीजम्। पुरुषो देवता। शिरोन्यासे विनियोगः। ॐ सहस्रशीर्षा०॥ १६॥ शिरसे स्वाहा (इति मुष्टिनिर्गताङ्गुष्ठौ संयुक्तौ न्यस्ततर्जनीकौ कृत्वा शिरसि न्यसेत्)॥ २॥ अद्भ्यः सम्भृत इति षड्ऋचस्योत्तरनारायणस्य नारायणपुरुष ऋषिः। आद्यानां तिसृणां त्रिष्टुप् छन्दः। चतुर्थपञ्चमयोरनुष्टुप्०। षष्ठस्य त्रिष्टुप् छन्दः। आदित्यो देवता। शिखान्यासे विनियोगः। ॐ अद्भ्यः संभृत० ६ शिखायै वषट् (इति मुष्टिपुटौ करौ कृत्वाङ्गुष्ठावधःप्रसक्ताग्रे कनिष्ठे चोर्ध्वतः कृत्वा शिखायां न्यसेत्)॥ ३॥ आशुःशिशान इति सप्तदशानामप्रतिरथ ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। इन्द्रो देवता। कवचन्यासे विनियोगः। ॐ आशुःशिशानो०॥ १७॥ कवचाय हुम् (इत्यङ्गुष्ठौ प्रसक्ततर्जन्यौ च त्रिकोणवत् कृत्वा मूर्द्धनि पश्चान्मुखं कृत्वोभयपार्श्वतः करौ हृदयान्तं नयन् हृदये न्यसेत्)॥ ४॥ बिभ्राडिति सप्तदशानां बिभ्राड् ऋषिः। जगती छन्दः। सूर्यो देवता। नेत्रन्यासे विनियोगः॥ ॐ बिभ्राड् बृहत्पिबतु०॥ १७॥ नेत्रत्रयाय वौषट् (इति नेत्रोन्मुखं हस्तं कृत्वा प्रसक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठिकां च कृत्वा मध्यमां किञ्चित्प्रसार्य इतराङ्गुलीर्नयन् नेत्रेषु न्यसेत्)॥ ५॥ नमस्ते इत्यादिषोडशर्चस्य परमेष्ठी ऋषिः। नमस्त इत्यस्य गायत्री यात इति तिसृणामनुष्टुप्०। अध्यवोचदिति त्रयाणां पङ्क्ति०। नमोस्त्विवतिसप्तानामनुष्टुप्०। मान इति द्वयोः कुत्स ऋषिः। जगती छन्दः। सर्वासामेको रुद्रो देवता। अस्त्रन्यासे विनियोगः। ॐ नमति रुद्र० हवामहे॥ १६॥ इत्यस्त्राय फट् (इति किञ्चित्तर्जनीं प्रसार्य मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन अस्त्राय फडित्यस्त्रम्)॥ ५॥ इति बृहत्षडङ्गन्यासः पञ्चमः॥ ५॥ ततः ॐ एषते रुद्रभाग० इति मन्त्रेण योनिमुद्राप्रदर्शनम्। एवं पञ्चाङ्गन्यासान् विधाय रुद्ररूपमात्मानं ध्यायेत्।

बृहत्षडङ्ग न्यास—मूल में लिखे अनुसार 'यज्जाग्रतो दूर०' इन छः मन्त्रों से मुट्ठी के बाहर अङ्गूठा बाँधकर हृदयन्यास करे। फिर अङ्गूठे को मुट्ठी से अलग कर तर्जनी ऊपर करके 'सहस्रशीर्षा०' मन्त्रों से शिरसे स्वाहा न्यास

करे। फिर मुट्ठी में कनिष्ठा को ऊपर कर 'अद्भ्यः सम्भृतः' इन छः ऋचाओं से शिखा न्यास करे। फिर अङ्गूठे से तर्जनी लगाकर त्रिकोण का आकार बनाकर 'आशु:शिशानो०' इत्यादि सत्रह ऋचाओं से 'कवचाय हुम्' करे। फिर विभ्राड् से नेत्रों की ओर हाथ करके अङ्गूठा तथा कनिष्ठा मिलाकर मध्यमा को थोड़ा-सा फैलाकर शेष अङ्गुलियों से नेत्रों में न्यास करे। फिर तर्जनी को कुछ फैलाकर मध्यमा तथा अङ्गूठे के योग से अस्त्राय फट् न्यास मूलोक्त नमस्ते रुद्रमन्यव इत्यादि १६ मन्त्रों से करे। यह बृहत्षडङ्ग न्यास नामक पाँचवाँ न्यास है। फिर 'ॐ एषते रुद्र भाग' इस मन्त्र को पढ़कर योनिमुद्रा का प्रदर्शन करे तथा पाँचों प्रकार के न्यासों के उपरान्त 'मैं स्वयं रुद्ररूप हूँ' इस प्रकार का ध्यान (आगे लिखे मन्त्रों से) करे।

अथ ध्यानम्—

अथात्मानं रुद्ररूपं ध्यायेत्पञ्चमुखं शिवम्। प्रतिवक्त्रं त्रिनेत्रं च दशहस्तं दशायुधम्॥ १॥

कमण्डलुं साक्षसूत्रं बाणशूलधरं हरम्। दण्डं डमरुखट्वाङ्गाभयपात्रं पिनाकिनम्॥ २॥

अष्टसिद्धियुतं सौम्यं सर्वाभरणभूषितम्। नीलग्रीवं शशाङ्कार्द्धशेखरं स्मितसुन्दरम्॥ ३॥

शुद्धस्फटिकसङ्काशं नागयज्ञोपवीतिनम्। गजचर्मपरीधानं व्याघ्रचर्मोत्तरीयकम्॥ ४॥

वृषस्कन्धसमारूढमुमादेहार्द्धधारिणम्। दुर्दन्तं कपिलजटं शिखामुद्योतकारिणम्॥ ५॥

अमृतेनाप्लुतं हृष्टं दिव्यभोगसमाकुलम्। दैवतैश्च समायुक्तं सुरासुरनमस्कृतम्॥ ६॥

शाश्वतं सच्चिदानन्दं ध्रुवमक्षरमव्ययम्। अजातममृतं नित्यं सर्वव्यापिनमीश्वरम्॥ ७॥

एवं रुद्रतनुं सर्वे यक्षराक्षसपन्नगाः। डाकिनीशाकिनीभूतपिशाचा जृम्भका ग्रहाः॥ ८॥

ज्वलन्तं ते प्रपश्यन्ति प्रलयानलसन्निभम्। एवं ध्यात्वा द्विजः सम्यक् ततो यजनमारभेत्॥ ९॥

स्वयंभूत रुद्र का ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—स्वयं का स्वरूप पञ्चमुख शिव का है, ऐसा ध्यान करे। प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं, दश हाथ तथा दश आयुध हैं। कमण्डलु, अक्षसूत्र, बाण, शूल, दण्ड, डमरू, खट्वाङ्ग, अभयपात्र तथा धनुष को शिव जी धारण किये हैं। वे आठ सिद्धियों से युक्त, सौम्य, सर्वाभरण-भूषित, नीलकण्ठ, अर्धचन्द्रधारी, स्मित मुख वाले सुन्दर हैं। वे शुद्धस्फटिक के समान शरीर वाले, सर्प के यज्ञोपवीत को धारण किये हुए, हाथी के चर्म का परिधान पहिने तथा व्याघ्रचर्म का उत्तरीय धारण किये हैं। वे वृषभ की पीठ पर (कन्धे पर) बैठे हुए अर्धनारी नटेश्वर देह वाले हैं। दुर्दन्त, कपिल जटाओं वाले तथा शिखा से प्रकाशित हैं। जो अमृत से आप्लुत, हृष्ट, दिव्य भोगों से युक्त, देवताओं से युक्त तथा सुरों एवं असुरों के द्वारा नमस्कृत हैं; जो शाश्वत, सच्चिदानन्द, ध्रुव, अक्षर, अव्यय, अजन्मा, अमर, नित्य तथा सर्वव्यापी ईश्वर है; इसी प्रकार सभी यक्ष, राक्षस, नाग, डाकिनी, शाकिनी, भूत, पिशाच, जृम्भकग्रह इत्यादि जो प्राणी हैं, वे रुद्र के रूप को प्रलयाग्नि के समान जलता हुआ देखते हैं। इस प्रकार से द्विज को रुद्ररूप का ध्यान करके सम्यक् रूप से यजन आरम्भ करना चाहिये॥ १-९॥

विमर्श—मूल में ध्यान के लिये जो आठवाँ श्लोक है, उसके शब्दों के अर्थों को यहाँ स्पष्ट किया जा रहा है—

यक्ष—एक ऐसी जाति का मनुष्य या गुणों से युक्त मनुष्य, जो दूसरों से येन-केन प्रकारेण धन प्राप्त करता है और उससे खुद भोग-विलास करता है तथा उसी में से कुछ अंश निर्धनों को एवं याचकों को दान भी कर देता है। प्राचीन काल में यह जाति हिमालय में निवास करती थी। इस जाति का प्रमुख पशु भी 'यक्षपशु' कहलाता था। उस गाय-जैसे प्राणी को आजकल 'याक' कहते हैं।

राक्षस—दादागिरी तथा जोर-जबरदस्ती से जनता से कर के रूप में (रङ्गदारी टैक्स) वसूलने वाली जाति राक्षस कहलाती थी। आजकल के 'दबङ्ग' तथा 'दादा' कहे जाने वाले लोग, नक्सली तथा आतङ्कवादी सभी राक्षस ही हैं।

पन्नग—नाग जाति के लोग, जो कि प्राकृतिक गुफाओं में रहते थे तथा बिना आग पर पका भोजन करते थे। इराक के कुर्द कबीले के लोग, रूस में सर्बिया के सर्ब (सर्प) तथा भारत में पूर्वी राज्य नागाप्रदेश के लोग प्राचीन नाग जाति के ही वंशज हैं। पन्नग तथा नाग का अर्थ साँप भी होता है।

डाकिनी—दुर्गा की एक सेविका का नाम है। भयंकर शब्द करने वाली महिला योद्धाओं को डाकिनी कहा जाता था। आजकल का डाइन शब्द भी इसी डाकिनी शब्द का अपभ्रंश है। ब्रह्मपुराण के अनुसार देवी की सेना में साढ़े तीन करोड़ डाकिनी थीं। नरभक्षी 'डायनासोर' जैसे विशाल प्राणियों को भी डाकिनी कहा जाता था। जिनका शब्द भी भयंकर होता था; जिन्हें आज कल वैज्ञानिकों ने Hominivorous नाम दिया है। अंग्रेजी Dinosauros शब्द संस्कृत के 'डाकिनी सरट' का लैटिन भाषा में रूपान्तरमात्र है। पुंल्लिङ्ग डाकिनः (डाकिनस्) शब्द से ग्रीक शब्द Deinos बना है, जिसका अर्थ डरावना होता है।

शाकिनी—शाकिनी भी देवी की सहचारी मानी गयी है। शाकिनी का दूसरा अर्थ 'शाकोत्पादक भूमि' भी होता है। सदाशिव की शक्ति भी शाकिनी है। तन्त्रसार के अनुसार षोडश स्वर-संयुक्त विशुद्ध महाचक्र में शाकिनी-सहित शिव का न्यास किया जाता है। युद्ध में पराक्रम दिखाने वाली तथा केवल शाकाहार पर जीवित रहने वाली स्त्रियाँ भी शाकिनी कही जाती थीं। प्राचीनकाल शाकाहारी सरट (Herbivorous saurus) जैसे Apatosaurus (Brontosaurus) तथा Brachiosaurus आदि को भी संस्कृत वाङ्मय में शाकिनी तथा शाकिनः (शाकिनस्) कहा गया था। विविध प्रकार के Bacteria भी इन शब्दों से बोधित होते हैं।

भूत—इसका अर्थ अशरीरी आत्मा, प्रेत, कीटाणु, छाया, प्रकाश आदि होता है। फारसी का फौत (मरा हुआ) तथा अंग्रेजी का Photo और ग्रीक भाषा के Phot एवं Phos शब्द भूत शब्द के ही अपभ्रंश हैं।

पिशाच—पिशित (कच्चा मांस या मछली) खाने वाले को पिशाच कहते हैं। प्राचीन काल में इस जाति (कबीलों) के लोग कच्चा मांस ही खा जाते थे तथा प्राणियों का रक्त भी पीते थे। जो केवल मछली तथा मांस के कच्चे आहार पर जीवित रहता है वह शब्दार्थ में पिशाच होता है। ये अदृश्य आत्मा की भाँति तथा रोगकारक कीटाणुओं के रूप में भी होते हैं।

जृम्भक—जृम्भक का अर्थ 'जम्भाई लेने वाला' होता है। जो आलसी जीव या मनुष्य खा-पीकर पड़े-पड़े जम्भाई लेता है, वह जृम्भक कहलाता है। रुद्र के एक गण का नाम भी जृम्भक है। एक बार श्वास लेकर फिर जोर के साथ प्रश्वास छोड़ने को जृम्भा कहते हैं। अजगर तथा प्राचीन डायनासोर भी जृम्भक होते थे। जम्भाई के साथ निकलने वाले रोगकारक कीटाणु भी जृम्भक हैं। वैद्यक ग्रन्थों में जृम्भा का लक्षण इस प्रकार है—

पीत्वैकं श्वासमनिलः पुनस्त्यजति वेगवान्। आलस्यनिद्रायुक्तस्य स जृम्भ इति उच्यते॥

एवं श्रीरुद्रं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य यथाशक्ति 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इति मूलमन्त्रं जपेत्। यदि तु भेदेनोपासीत तदानीन्तनीं पूजां पात्रासादनं शैवपीठपूजापूर्वकं पद्धतिकाण्डोक्तविधिना मण्डलमध्ये स्वर्णमय्यां रुद्रप्रतिमायां लिङ्गे वा वेदोक्तमन्त्रैः पुष्पान्तां पूजां कृत्वा पूर्वोक्तरुद्रयन्त्रोक्तावरणदेवताः सम्पूज्य धूपदीपनैवेद्यादि-नीराजनान्तैरुपचारैरर्चनं विधाय रुद्रस्तवेन स्तुत्वा वेदमन्त्रैर्देवमूर्द्धनि पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा 'ॐ नमस्तेऽस्तु

भगवन् विश्वेश्वराय महादेवाय त्र्यम्बकाय त्रिपुरान्तकाय त्रिकाग्निकालाय कालाग्निरुद्राय नीलकण्ठाय सर्वेश्वराय श्रीमहादेवाय नमः' इति नत्वा।

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे। साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते दीनत्वेन मया कृतः॥

इति साष्टाङ्गं प्रणम्य विविधैः स्तोत्रैः स्तुत्वा पूजां निवेदयेत्। ततस्तन्मना रुद्रं ध्यायन् जपं कुर्यात्।

मूल मन्त्र का जप—इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त रुद्र का मानसिक उपचार से पूजन कर यथाशक्ति 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' इस मन्त्र का जप करे। यदि भेदोपासना करनी हो तो पद्धतिकाण्ड में वर्णित विधि के अनुसार उसकी पूजा, पात्रासादन, शैवपीठ की पूजा आदि करनी चाहिये। मण्डल के मध्य में स्वर्णमयी रुद्रप्रतिमा या लिङ्ग में वेदोक्त मन्त्रों के द्वारा पूजा करके पूर्व में वर्णित 'रुद्रयन्त्र' के आवरणदेवताओं का पूजन कर धूप, दीप, नैवेद्य, नीराजन आदि उपचारों से पूजा करके रुद्रस्तव से स्तुति कर वेदमन्त्रों के द्वारा देवमूर्ति के शिर पर पुष्पाञ्जलि छोड़नी चाहिये। फिर तीन प्रदक्षिणा करके 'ॐ नमस्तेऽस्तु भगवन् विश्वेश्वराय, महादेवाय, त्र्यम्बकाय, त्रिपुरान्तकाय, त्रिकाग्निकालाय, कालाग्निरुद्राय नीलकण्ठाय सर्वेश्वराय श्रीमहादेवाय नमः' यह कहकर प्रणाम करना चाहिये। फिर 'नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे। साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते दीनत्वेन मया कृतः॥' इस मन्त्र से साष्टाङ्ग प्रणाम कर विविध स्तोत्रों से पूजा करके पूजा को निवेदित करके मन में रुद्र का ध्यान करके जप आरम्भ करना चाहिये।

रुद्रजपक्रमः

अथ जपक्रमः—ॐ नमस्तेरुद्रमन्न्यवऽउतोतऽइषवेनमः बाहुब्भ्यामुततेनमः॥१॥ यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी। तयानस्तन्न्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि॥२॥ यामिषुङ्गिरिशन्तहस्तेबिभर्ष्यस्तवे। शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरुमाहिंᳬसीःपुरुषञ्जगत्॥३॥ शिवेनवचसात्वागिरिशाच्छावदामसि। यथानःसर्वमिज्जगदयक्ष्मᳬसुमनाऽअसत्॥४॥ अध्यवोचदधिवक्ताप्रथमोदैव्योभिषक्। अहींश्चसर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्चयातुधान्योधराचीः परासुव॥५॥ असौयस्ताम्रोऽअरुणऽउतबब्भ्रुः सुमङ्गलः। येचैनᳬरुद्राऽअभितोदिक्षुश्रिताःसहस्रशोवैषाᳬहेडईमहे॥६॥ असौयोवसर्प्पतिनीलग्ग्रीवोविलोहितः। उतैनङ्गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः सदृष्टोमृडयातिनः॥७॥ नमोस्तुनीलग्ग्रीवायसहस्राक्षायमीढुषे। अथोयेऽअस्यसत्त्वानोहन्तेभ्योकरन्नमः॥८॥ प्रमुञ्चधन्न्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम्। याश्चतेहस्तऽइषवःपराताभगवोवप॥९॥ विज्ज्यन्धनुःकपर्द्दिनोविशल्ल्योबाणवाँ२ऽउत। अनेशन्नस्ययाऽइषवऽआभुरस्यनिषङ्गधिः॥१०॥ यातेहेतिर्म्मीढुष्टमहस्तेबभूवतेधनुः। तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मयापरिभुज॥११॥ परितेधन्न्वनोहेतिरस्मान्वृणक्तुविश्वतः। अथोयऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहितम्॥१२॥ अवतत्यधनुष्ट्वᳬसहस्राक्षशतेषुधे। निशीर्य्यशल्ल्यानाम्मुखाशिवोनः सुमनाभव॥१३॥ नमस्तऽआयुधायानाततायधृष्णवे। उभाभ्यामुततेनमोबाहुब्भ्यान्तवधन्न्वने॥१४॥ मानोमहान्तमुतमानोऽअर्भकम्मानऽउक्षन्तमुतमानऽउक्षितम्। मानोवधीःपितरम्मोतमातरम्मानःप्प्रियास्तन्न्वो रुद्ररीरिषः॥१५॥ मानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानोगोषुमानोऽअश्वेषुरीरिषः। मानोवीरान्रुद्रभामिनोव्वधीर्हविष्मन्तःसदमित्त्वा हवामहे॥१६॥ नमोहिरण्यबाहवेसेनान्येदिशाञ्चपतयेनमोनमोवृक्षेभ्योहरिकेशेब्भ्यःपशूनाम्पतयेनमोनमःशष्पिञ्जरायत्त्विषीमतेपथीनाम्पतयेनमोनमोहरिकेशायोपवीतिनेपुष्टानाम्पतयेनमोनमोबभ्लुशाय॥१७॥ नमोबभ्लुशायव्याधिनेन्नानाम्पतयेनमोनमोभवस्यहेत्त्यैजगताम्पतयेनमोनमोरुद्रायाततायिनेक्षेत्राणाम्पतयेनमोनमःसूतायाहन्त्यैवनानाम्पतये नमोनमो रोहिताय॥१८॥ नमोरोहिताय। स्थपतयेवृक्षाणाम्पतयेनमोनमोभुवन्तयेवारिवस्कृतायौषधीनाम्पतयेनमोनमोमन्त्रिणेवाणिजायकक्षाणाम्पतयेनमोनमःऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयतेपत्तीनापतयेनमोनमः

कृत्स्नायतया॥१९॥ नमः कृत्स्नायतया। धावतेसत्वनाम्पतयेनमोनमःसहमानायनिव्याधिनऽआव्याधिनीनाम्पतये
नमोनमोनिषङ्गिणे ककुभायस्तेनानाम्पतये नमो नमो निचेरवेपरिचरायारण्यानाम्पतयेनमोनमोवञ्चते॥२०॥ नमोवञ्चते।
परिवञ्चतेस्तायूनाम्पतयेनमोनमोनिषङ्गिणऽइषुधिमतेतस्कराणाम्पतयेनमोनमः सृकायिभ्योजिघाꣳसद्भ्योमुष्णता-
म्पतयेनमोनमोसिमद्भ्योनक्तञ्चरद्भ्योविकृन्तानाम्पतयेनमः॥२१॥ नमऽउष्णीषिणे। गिरिचरायकुलुञ्चानाम्पतयेनमो
नमऽइषुमद्भ्योधन्वायिभ्यश्चवोनमोनमऽआतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्चवोनमोनमऽआयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्चवोनमोनमो
विसृजद्भ्यः॥२२॥ नमोविसृजद्भ्योविद्ध्यद्भ्यश्चवोनमोनमः स्वपद्भ्योजाग्रद्भ्यश्चवोनमोनमःशयानेभ्यऽआसीनेभ्य-
श्चवोनमोनमस्तिष्ठद्भ्योधावद्भ्यश्चवोनमोनमः सभाभ्यः॥२३॥ नमः सभाभ्यः। सभापतिभ्यश्चवोनमोनमोश्वे-
भ्योश्वपतिभ्यश्चवोनमोनमऽआव्याधिनीभ्योविविद्ध्यन्तीभ्यश्चवोनमो नमऽउगणाभ्यस्तृठ०हतीभ्यश्चवोनमो-
नमोगणेभ्यः॥२४॥ नमोगणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमोनमोव्रातेभ्योव्रातपतिभ्यश्चवोनमोनमोगृत्सेभ्योगृत्सपतिभ्य-
श्चवोनमोनमोविरूपेभ्योविश्वरूपेभ्यश्चवोनमोनमःसेनाभ्यः॥२५॥ नमः सेनाभ्यः। सेनानिभ्यश्चवोनमोनमोरथि-
भ्योऽअरथेभ्यश्चवोनमोनमः क्षत्तृभ्यः संगृहीतृभ्यश्चवोनमोनमो महद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्चवोनमः॥२६॥ नमस्तक्षभ्यः।
नमस्तक्षभ्योरथकारेभ्यश्चवोनमोनमःकुलालेःकर्म्मारेभ्यश्चवोनमोनमोनिषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्चवोनमोनमः श्वनिभ्योमृगयुभ्य-
श्चवोनमोनमःश्वभ्यः॥२७॥ नमःश्वभ्यः। श्वपतिभ्यश्चवोनमोनमोभवायचरुद्रायचनमः। शर्वायचपशुपतयेचनमो-
नीलग्रीवायचशितिकण्ठायचनमः कपर्दिने॥२८॥ नमः कपर्दिनेचव्युप्तकेशायचनमः सहस्राक्षायचशतधन्वनेचनमो-
गिरिशयायचशिपिविष्टायचनमोमीढुष्टमायचेषुमतेचनमोह्रस्वाय॥२९॥ नमोह्रस्वायचवामनायचनमोबृहतेचवर्षीयसे-
चनमोवृद्धायचसवृधेचनमोग्र्यायचप्रथमायचनमऽआशवे॥३०॥ नमऽआशवे। चाजिरायचनमः शीघ्र्यायचशीभ्या-
यचनमऽऊर्म्यायचावस्वन्यायचनमोनादेयायचद्वीप्यायच॥३१॥ नमोज्येष्ठाय च कनिष्ठायचनमः पूर्वजायचापरजाय-
चनमोमद्ध्यमायचापगल्भायचनमोजघन्यायचबुध्न्यायचनमःसोभ्याय॥३२॥ नमःसोभ्यायचप्रतिसर्यायचनमो
याम्यायचक्षेम्यायचनमःश्लोक्यायचावसान्यायचनमऽउर्वर्यायचखल्ल्यायचनमोवन्न्याय॥३३॥ नमोवन्न्यायच
कक्ष्यायचनमः श्रवायचप्रतिश्रवायचनमऽआशुषेणायचाशुरथायचनमःशूरायचावभेदिनेचनमो बिल्मिने॥३४॥ नमो
बिल्मिने। चकवचिनेचनमोवर्म्मिणेचवरूथिनेचनमः श्रुतायचश्रुतसेनायचनमोदुन्दुभ्यायचाहनन्यायचनमोधृ-
ष्णवे॥३५॥ नमोधृष्णवे। चप्रमृशायचनमोनिषङ्गिणेचेषुधिमतेचनमस्तीक्ष्णेषवेचायुधिनेचनमः स्वायुधायचसुध-
न्वनेच॥३६॥ नमःस्रुत्यायचपथ्यायचनमःकाट्यायचनीप्यायचनमःकुल्यायचसरस्यायचनमोनादेयायचवैश-
न्तायचनमःकूप्याय॥३७॥ नमःकूप्यायचावट्याचनमोवीद्ध्र्यायचातप्यायचनमोमेघ्यायचविद्युत्यायचनमो-
वर्ष्यायचावर्ष्यायचनमोवात्याय॥३८॥ नमोवात्याय। चरेष्म्यायचनमोवास्तव्यायचवास्तुपायचनमःसोमाय
चरुद्रायचनमस्ताम्रायचारुणायचनमः शङ्गवे॥३९॥ नमः शङ्गवे। चपशुपतयेचनमोऽउग्रायचभीमायचनमोग्रे
वधायचदूरेवधायचनमोहन्त्रेचहनीयसेचनमो वृक्षेभ्योहरिकेशेभ्योनमस्ताराय॥४०॥ नमः शम्भवाय। चमयो-
भवायचनमः शङ्करायचमयस्करायचनमः शिवायचशिवतरायच॥४१॥ नमःपार्य्याय। चावार्य्यायचनमः प्रतर-
णायचोत्तरणायचनमस्तीर्थ्यायचकूल्यायचनमःशष्प्यायचफेन्यायचनमः सिकत्याय॥४२॥ नमः सिकत्यायच
प्रवाह्यायचनमः किंठ०शिलायचक्षयणायचनमः कपर्दिनेचपुलस्तयेचनमऽइरिण्यायचप्रपथ्यायचनमोव्रज्याय॥४३॥
नमोव्रज्यायचगोष्ठ्यायचनमस्तल्प्यायचगेह्यायचनमोहृदय्यायचनिवेष्प्यायचनमः काट्यायचगह्वरेष्ठायचनमः
शुष्क्याय॥४४॥ नमःशुष्क्यायचहरित्यायचनमः पाꣳसव्यायचरजस्यायचनमोलोप्यायचोलप्यायचनमऽऊर्व्यायच-
सूर्व्याय च नमः पर्णाय॥४५॥ नमः पर्णाय। चपर्णशदायचनमऽउद्गुरमाणायचाभिघ्नतेचनमऽआखिदतेचप्रखिदतेचनम-
इषुकृद्भ्योधनुष्कृद्भ्यश्चवोनमोनमोवःकिरिकेभ्योदेवानाठ०हृदयेभ्योनमोविचिन्वत्केभ्योनमोविक्षिणत्केभ्योनमऽआनिर्ह-

तेब्भ्यः॥४६॥ द्रापेऽअन्धसस्पतेदरिद्रनीललोहित। आसांप्प्रजानामेषाम्पशूनाम्माभेर्म्मारोङ्मोचनःकिञ्चनाममत्॥४७॥ इमारुद्द्राय। तवसेकपर्द्दिनेक्षयद्वीरायप्प्रभरामहेमतीः। यथाशमसद्द्विपदेचतुष्प्पदेविश्श्वम्पुष्टङ्ग्रामेअस्मिन्ननातुरम्॥४८॥ यातेरुद्द्रशिवातनूःशिवाव्विश्श्वाहाभेषजीशिवारुतस्यभेषजीतयानोमृडजीवसे॥४९॥ परिनोरुद्द्रस्यहेतिर्व्वृणक्तुपरित्त्वे-षस्यदुर्म्मतिरघायोः। अवस्थिरामघवद्भ्यस्तनुष्ष्वमीढ्वस्तोकायतनयायमृड॥५०॥ मीढुष्टमशिवतम। शिवोनःसुमना भव। परमेव्वृक्षऽआयुधन्निधायकृत्तिंव्वसानऽआचरपिनाकम्बिब्भ्रदागहि॥५१॥ विकिरिद्रविलोहितनमस्तेऽअस्तुभ-गवः। यास्तेसहस्रंठहेतयोन्न्यमस्मन्निवपन्तुताः॥५२॥ सहस्राणिसहस्रशोबाह्वोस्तवहेतयः। तासामीशानोभगवः पराचीनामुखाकृधि॥५३॥ असङ्ख्यातासहस्राणियेरुद्द्राऽअधिभूम्याम् तेषाळ्ठंसहस्रयोजनेवधन्न्वानितन्मसि॥५४॥ अस्मिन्महत्त्यर्णवेन्तरिक्षेभवाऽअधि। तेषाळ्ठंस०॥५५॥ नीलग्ग्रीवाः शितिकण्ठादिवंठ०रुद्द्राऽउपश्श्रिताः। तेषाळ्ठं स०॥५६॥ नीलग्ग्रीवाःशितिकण्ठाःशर्व्वाऽअधःक्षमाचराः। तेषाळ्ठंस०॥५७॥ येव्वृक्षेषुशष्प्पिञ्जरानीलग्ग्रीवाविलो-हिताःतेषाळ्ठंस०॥५८॥ येभूतानामधिपतयोविशिखासःकपर्द्दिनः। तेषाळ्ठंस०॥५९॥ येपथाम्पथिरक्षयऽऐलबृदाऽ-आयुर्य्युधः। तेषाळ्ठंस०॥६०॥ येतीर्त्थानिप्प्रचरन्तिसृकाहस्तानिषङ्गिणः। तेषाळ्ठंस०॥६१॥ येन्नेषुविविद्ध्यन्तिपात्रेषु पिबतोजनान्। तेषाळ्ठंस०॥६२॥ यऽएतावन्तश्श्चभूयाळ्ठंसश्श्चदिशोरुद्द्राव्वितस्त्थिरे। तेषाळ्ठंस०॥६३॥ नमोस्तुरुद्द्रे-भ्योयेदिवियेषांव्वर्षमिषवः। तेभ्योदशप्प्राचीर्द्दश दक्षिणदशप्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्ध्वाः। तेभ्योनमोऽअस्तुतेनोवन्तु-तेनोमृडयन्तुतेयन्द्विष्मोयश्चनोद्वेष्टितमेषाञ्जम्भेदध्मः॥६४॥ नमोस्तुरुद्द्रेभ्योयेन्तरिक्षेयेषांव्वातऽइषवः। तेभ्यो०॥६५॥ नमोस्तुरुद्द्रेभ्योयेपृथिव्व्यांय्येषामन्नमिषवः। तेभ्योदशप्राचीर्द्दशदक्षिणादशप्प्रतीचीर्द्दशोर्ध्वाः। तेभ्योनमोऽअस्तुते-नोवन्तुतेनोमृडयन्तुतेयंद्द्विष्मोयश्चनोद्वेष्टितमेषांजम्भेदध्मः॥६६॥इति रुद्राध्यायं पठित्वा—

ॐ व्वाजश्चमेप्प्रसवश्चमेप्प्रयतिश्चमेप्प्रसितिश्चमेधीतिश्चमेक्क्रतुश्चमेस्वरश्चमेश्लोकश्चमेश्श्रावश्चमेश्श्रुतिश्चमे-ज्ज्योतिश्चमेस्वश्चमेयज्ञेन कल्प्यन्ताम्॥१॥ प्प्राणश्चमेपानश्चमेव्व्यानश्चमेसुश्चमेचित्तञ्चमऽआधीतञ्चमेव्वा-क्चमेमनश्चमेचक्षुश्चमेश्श्रोत्रञ्चमेदक्षश्चमेबलञ्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥२॥ ओजश्चमेसहश्चमऽआत्माचमेतनूश्चमेशर्म-चमेव्वर्म्मचमेङ्गानिचमेस्त्थीनिचमेपरूळ्ठंषिचमेशरीराणिचमऽआयुश्चमेजराचमेयज्ञेन कल्प्यन्ताम्॥३॥ ज्यैष्ठ्यञ्चमऽ-आधिपत्यञ्चमेमन्युश्चमेभामश्चमेमश्चमेम्भश्चमेजेमाचमेमहिमाचमेवरिमाचमेप्प्रथिमाचमेवर्षिमाचमेद्राघुयाचमेव्वृद्धञ्चमेव्वृद्धिश्चमे-यज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥४॥ इत्याद्यं चमकानुवाकं पठेत्॥१॥

पुनः ॐ नमस्तेरुद्र इत्यादि (६६) पठित्वा ॐ सत्त्यञ्चमेश्श्रद्धाचमेजगच्चमेधनञ्चमेविश्श्वञ्चमेमहश्चमेक्क्रीडा-चमेमोदश्चमेजातञ्चमेजनिष्ष्यमाणञ्चमेसूक्तञ्चमेसुकृतञ्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥५॥ ऋतञ्चमेमृतञ्चमेयक्ष्मञ्चमेनामयच्चमे-जीवातुश्चमेदीर्घायुत्वञ्चमेनमित्रञ्चमेभयञ्चमेसुखञ्चमेशयनञ्चमेसूषाश्चमेसुदिनञ्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥६॥ यन्ताच-मेधर्त्ताचमेक्षेमश्चमेधृतिश्चमेविश्श्वञ्चमेमहश्चमेसंव्विच्चमेज्ञात्रञ्चमेसूश्चमेप्प्रसूश्चमेसीरञ्चमेलयश्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥७॥ शंचमेमयश्चमेप्प्रियञ्चमेनुकामश्चमेकामश्चमेसौमनसश्चमेभगश्चमेद्द्रविणञ्चमेभद्द्रञ्चमेश्श्रेयश्चमेवसीयश्चमेयशश्चमेयज्ञेन-कल्प्यन्ताम्॥८॥ इति द्वितीयं चमकानुवाकं पठेत्॥२॥

पुनः ॐ नमस्ते० इत्यादि (६६) पठित्वा ॐ ऊर्क्चमेसूनृताचमेपयश्चमेरसश्चमेघृतञ्चमेमधुचमेसग्धिश्चमे-सपीतिश्चमेकृषिश्चमेव्वृष्टिश्चमेजैत्रञ्चमऽऔद्भिद्यञ्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥९॥ रयिश्चमेरायश्चमेपुष्टञ्चमेपुष्टिश्चमेवि-भुचमेप्प्रभुचमेपूर्णञ्चमेपूर्णतरञ्चमेकुयवञ्चमेक्षितञ्चमेन्नञ्चमेक्षुच्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥१०॥ वित्तञ्चमेवेद्यञ्चमेभूतञ्चमे-भविष्यच्चमेसुगञ्चमेसुपत्थ्यञ्चमऽऋद्धञ्चमऽऋद्धिश्चमेक्लृप्तञ्चमेक्लृप्तिश्चमेमतिश्चमेसुमतिश्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥११॥ व्व्रीहयश्चमेयवाश्चमेमाषाश्चमेतिलाश्चमेमुद्गाश्चमेखल्वाश्चमेप्प्रियङ्गवश्चमेणवश्चमेश्यामाकाश्चमेनीवाराश्चमे-गोधूमाश्चमेमसूराश्चमेयज्ञेनकल्प्यन्ताम्॥१२॥ इति तृतीयं चमकानुवाकं पठेत्॥३॥

पुनः ॐ नमस्ते इत्यादि (६६) पठित्वा ॐ अश्म्माचमेमृत्तिकाचमेगिरयश्श्चमेपर्व्वताश्श्चमेसिकताश्श्चमेव्वनस्प्पतयश्श्चमेहिरण्यञ्चमेयश्श्चमेश्यामञ्चमेलोहञ्चमेसीसञ्चमेत्रपुचमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१३॥ अग्निश्श्चमऽआपश्श्चमेव्वीरुधश्श्चमऽओषधयश्चमेकृष्टपच्च्याश्श्चमेग्राम्म्याश्श्चमेपशवऽआरण्याश्श्चमेव्वित्तञ्चमेव्वित्तिश्चमेभूतञ्चमेभूतिश्श्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१४॥ व्वसुश्चमेव्वसतिश्श्चमेकर्म्म चमेशक्तिश्श्चमेर्थश्श्चमऽएमश्श्चमऽइत्याचमेगतिश्श्चमेजज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१५॥ इति चतुर्थं चमकानुवाकं पठेत्॥४॥

पुनः नमस्ते इत्यादि (६६) पठित्वा ॐ अग्निश्श्चमऽ इन्द्रश्श्चमेसोमश्श्चमऽइन्द्रश्श्चमेसविताचमऽइन्द्रश्श्चमेसरस्वतीचमऽइन्द्रश्श्चमेपूषाचमऽइन्द्रश्श्चमेबृहस्पतिश्चमऽइन्द्रश्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१६॥ मित्रश्श्चमऽइन्द्रश्श्चमेव्वरुणश्श्चमऽइन्द्रश्श्चमेधाताचमऽइन्द्रश्श्चमेत्त्वष्टाचमऽइन्द्रश्श्चमेमरुतश्श्चमऽइन्द्रश्श्चमेव्विश्वेचमेदेवाऽइन्द्रश्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१७॥ पृथिवीचमऽइन्द्रश्श्चमेन्तरिक्षञ्चमऽइन्द्रश्श्चमेद्यौश्चमइन्द्रश्श्चमेसमाश्श्चमऽइन्द्रश्श्चमेनक्षत्त्राणिचमऽइन्द्रश्चमेदिशश्श्चमऽइन्द्रश्श्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१८॥ इति पञ्चमं चमकानुवाकं पठेत्॥५॥

पुनः ॐ नमस्ते इत्यादि (६६) पठित्वा अर्ठ०शुश्श्चमेरश्मिश्श्चमेदाब्भ्यश्श्चमेधिपतिश्श्चमऽउपाꣳशुश्श्चमेन्तर्य्यामश्श्चमऽऐन्द्रवायवश्श्चमेमैत्रावरुणश्श्चमऽआश्विनश्श्चमेप्प्रतिप्प्रस्थानश्श्चमेशुक्रश्श्चमेमन्थीचमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥१९॥ आग्रयणश्श्चमेव्वैश्श्वदेवश्श्चमेद्ध्रुवश्श्चमेवैश्वानरश्चमऽऐन्द्राग्ग्नश्श्चमेमहावैश्श्वदेवश्श्चममरुत्वतीयाश्श्चमेनिष्केवल्यश्श्चमेसावित्रश्श्चमेसारस्वतश्श्चमेपात्क्नीवतश्श्चमेहारियोजनश्श्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२०॥ स्रुचश्श्चमेचमसाश्श्चमेव्वायव्व्यानिचमेद्रोणकलशश्श्चमेग्ग्रावाणश्श्चमेधिषवणेचमेपूतभृच्चमऽआधवनीयश्श्चमेव्वेदिश्श्चमेबर्हिश्श्चमेवभृथश्श्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२१॥ इति षष्ठं चमकानुवाकं पठेत्॥६॥

पुनः ॐ नमस्ते इत्यादि (६६) पठित्वा ॐ अग्निश्श्चमेघर्म्मश्श्चमेर्क्कश्श्चमेसूर्य्यश्श्चमेप्प्राणश्श्चमेश्वमेधश्श्चमेपृथिवीचमेदितिश्चमेदितिश्श्चमेद्यौश्श्चमेङ्गुलयःशक्करयोदिशश्श्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२२॥ व्व्रतञ्चमऽऋतवश्श्चमेतपश्श्चमेसंवत्सरश्श्चमेहोरात्त्रेऽऊर्व्वष्ठीवेबृहद्रथन्तरञ्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२३॥ इति सप्तमं चमकानुवाकं पठेत् ॥७॥

पुनर्नमस्ते रु० इत्यादि (६६) पठित्वा एकाचमेतिस्त्रश्श्चमेतिस्त्रश्श्चमेपञ्चचमेपञ्चचमेसप्तचमेसप्तचमेनवचमेनवचमऽएकादशचमऽएकादशचमेत्रयोदशचमेपञ्चदशचमेपञ्चदशचमेसप्तदशचमेसप्तदशचमेनवदशचमऽएकविर्ठ०शतिश्श्चमऽएकविर्ठ०शतिश्श्चमेत्रयोविर्ठ०शतिश्श्चमेत्रयोविर्ठ०शतिश्श्चमेपञ्चविर्ठ०शतिश्श्चमेपञ्चविर्ठ०शतिश्श्चमेसप्तविर्ठ०शतिश्श्चमेसप्तविर्ठ०शतिश्श्चमेनवविर्ठ०शतिश्श्चमेनवविर्ठ०शतिश्चमऽएकत्रिर्ठ०शच्चमऽएकत्रिर्ठ०शच्चमेत्रयस्त्रिर्ठ०शच्चमेमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२४॥ इत्यष्टयं चमकानुवाकं पठेत् ॥८॥

पुनर्नमस्तेरुद्र इत्यादि (६६) पठित्वा चतस्त्रश्श्चमेष्टौचमेष्टौचमेद्द्वादशचमेद्वादशचमेषोडशचमेषोडचमेविर्ठ०शतिश्श्चमेविर्ठ०शतिःश्चमेचतुर्विर्ठ०शतिश्श्चमेचतुर्विर्ठ०शतिश्श्चमेष्टाविर्ठ०शतिश्श्चमेष्टाविर्ठ०शतिश्श्चमेद्वात्रिर्ठ०शच्चमेद्वात्रिर्ठ०शच्चमेषट्त्रिर्ठ०शच्चमेचत्वारिर्ठ०शच्चमेचत्वारिर्ठ०शच्चमेचतुश्श्चत्वारिर्ठ०शच्चमेचतुश्श्चत्वारिर्ठ०शच्चमेष्टाचत्वारिर्ठ०शच्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२५॥ इति नवमं चमकानुवाकं पठेत्॥९॥

पुनर्नमस्तेरुद्र इत्यादि (६६) पठित्वा त्र्यविश्श्चमेत्र्यवीचमेदित्यवाट्चमेदित्यौहीचमेपञ्चाविश्श्चमेपञ्चावीचमेत्रिवत्सश्श्चमेत्रिवत्साचमेतुर्य्यवाट्चमेतुर्य्यौहीचमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२६॥ षष्ठवाट्चमेषष्ठौहीचमऽउक्षाचमेव्वशाचमऽऋषभश्श्चमेव्वेहच्चमेनड्वाँश्श्चमेधेनुश्श्चमेयज्ञेनकल्प्पन्ताम्॥२७॥ इति दशमानुवाकं पठेत्।

इति केवलानि नव पठित्वा पुनर्नमस्ते (६६) इत्यादि पठित्वा ॐ व्वाजायस्वाहाप्प्रसवायस्वाहापिजायस्वाहाक्क्रतवेस्वाहाव्वसवेस्वाहाहर्प्पतयेस्वाहान्हेमुग्ग्धायस्वाहामुग्ग्धायव्वैनर्ठ०शिनायस्वाहाव्विनर्ठ०शिनऽआन्त्यायनाय-

स्वाहान्त्यायभौवुनायुस्वाहाभुवनस्यपतयेस्वाहाधिपतयेस्वाहाप्प्रजापतयेस्वाहाइयन्तेराण्मित्रायंयन्तासियमनऽऊर्ज्जे-त्वाव्वृष्टयैत्वाप्प्रजानान्त्वाधिपत्याय॥२८॥ आयुर्य्यज्ञेन कल्प्यताम्प्राणोयज्ञेनकल्प्यताञ्चक्षुर्य्यज्ञेनकल्प्यताᳬश्रोत्रं-यज्ञेनकल्प्यताम्वाग्ग्यज्ञेनकल्प्यताम्मनोयज्ञेनकल्प्यतामात्मायज्ञेनकल्प्यताम्ब्रह्मायज्ञेनकल्प्यताञ्ज्योतिर्य्यज्ञेनकल्प्यताᳬ-स्वर्य्यज्ञेनकल्प्यताम्पृष्ठंय्यज्ञेनकल्प्यतांयज्ञोयज्ञेनकल्प्यताम्। स्तोमश्श्चयजुश्श्चऽऋक्चसामचबृहच्चरथन्तरञ्चस्वर्देवाऽ-अगन्मामृताऽअभूमप्प्रजापतेᳶप्प्रजाऽअभूम वेट्स्वाहा॥२९॥ इत्येकादशमनुवाकं पठेत्॥११॥ एवमाद्यं रूपं साङ्ग-हृदयादिषडङ्गसहितं पठित्वा ततो नव केवलानि च जप्त्वा अन्त्यमेकादशं वयᳬसोम इत्यादि सशीर्षकं साङ्गं निरङ्गं वा पठेत्।

अथ शीर्षकमनुवाकम्। ॐ वयᳬसोमव्व्रतेतवमनस्तनूषुबिब्भ्रतः॥ प्रजावन्तःसचेमहि॥१॥ एषतेरुद्रभागःसहस्वस्राम्बिकयातज्जुषस्वस्वाहैषतेरुद्रभागऽआखुस्तेपशुः॥२॥ अवरुद्रमदीमह्यवदेवंत्र्यम्बकम्। यथानोव्वस्यसस्करद्यथानःश्श्रेयसस्करद्यथानोव्व्यवसाययात्॥३॥ भेषजमसि भेषजङ्गवेश्श्वायपुरुषायभेषजम्। सुखम्मेषाय-मेष्यै॥४॥ त्र्यम्बकंयजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥ त्र्यम्बकंयजामहेसुगन्धि-म्पतिवेदनम्। उर्व्वारुकमिवबन्धनादितोमुक्षीयमामुतः॥५॥ एतत्तेरुद्रावसन्तेनपरोमूजवतोतीहि। अवततधन्वापिनाका-वसः। कृत्तिवासाऽअहिᳬसन्नःशिवोतीहि॥६॥ त्र्यायुषञ्जमदग्नेःकश्यपस्यत्र्यायुषम्। यद्देवेषुत्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तुत्र्या-युषम्॥७॥ शिवोनामासिस्वधितिस्तेपितानमस्तेऽअस्तुमामाहिᳬसीः। निर्वर्तयाम्म्यायुषेन्नाद्यायप्प्रजननायरायस्पोषाय-सुप्प्रजास्त्वायसुवीर्य्याय॥८॥ इति पठेत्। एवं साङ्गादिसशिरोऽन्तं जपं कृत्वा तदन्ते ॐ ऋचं वाचम् इत्यादिशान्ति-पाठं पठेत्।

हरिः ॐ ऋचंव्वाचम्प्रपद्येमनोयजुःप्प्रपद्येसामप्प्राणम्प्रपद्येचक्षुःश्श्रोत्रंप्रपद्येव्वागोजःसहौजोमयिप्राणापानौ॥१॥ यन्मेछिद्रञ्चक्षुषोहृदयस्यमनसोव्वातितृण्णम्बृहस्पतिर्मेतद्दधातु। शन्नोभवतुभुवनस्ययस्पतिः॥२॥ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि। धियोयोनःप्प्रचोदयात्॥३॥ कयानश्चित्रऽआभुवदूतीसदावृधःसखा। कया शचिष्ठयाव्वृता॥४॥ कस्त्वा सत्योमदानांमᳬहिष्ठोमत्सदन्धसः। दृढाचिदारुजेव्वसु॥५॥ अभीषुणःसखी-नामविताजरितॄणाम्। शतम्भवास्यूतिभिः॥६॥ कयात्वन्नऽऊत्याभिप्रमन्दसेव्वृषम्। कयास्तोतृभ्यऽआभर॥७॥ इन्द्रोव्विश्श्वस्यराजतिशन्नोऽअस्तुद्विपदेशञ्चतुष्पदे॥८॥ शन्नोमित्त्रःशंवरुणःशन्नोभवत्वर्य्यमा। शन्नऽइन्द्रोबृहस्पतिः शन्नोविष्णुरुरुक्रमः॥९॥ शन्नोव्वातःपवताᳬशन्नस्तपतुसूर्य्यः। शन्नःकनिक्रदद्देवःपर्ज्जन्योऽअभिवर्षतु॥१०॥ अहानिशम्भवन्तुनःशᳬरात्रिःप्प्रतिधीयताम्। शन्नऽइन्द्राग्नीभवतामवोभिःशन्नऽइन्द्रावरुणारातहव्या। शन्नऽइन्द्रापूष-णाव्वाजसातौशमिन्द्रासोमासुवितायशंय्योः॥११॥ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये। शंय्योरभिस्रवन्तुनः॥१२॥ स्योनापृथिविनोभवानृक्षरानिवेशनी यच्छानःशर्मसप्प्रथाः॥१३॥ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणाय चक्षसे॥१४॥ योवःशिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः। उशतीरिवमातरः॥१५॥ तस्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ। आपोजनयथाचनः॥१६॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षᳬशान्तिःपृथिवीशान्तिरापःशान्तिरोषधयःशान्तिः। वनस्पतयःशान्ति-र्विश्श्वेदेवाःशान्तिर्ब्रह्मशान्तिःसर्वᳬशान्तिःशान्तिरेवशान्तिःसामाशान्तिरेधि॥१७॥ दृतेदृᳬहमामित्रस्यमाचक्षुषा सर्व्वाणिभूतानिसमीक्षन्ताम्। मित्रस्याहञ्चक्षुषासर्वाणिभूतानिसमीक्षे। मित्रस्यचक्षुषासमीक्षामहे॥१८॥ दृतेदृᳬ हमा०। ज्ज्योक्तेसन्दृशिजीव्व्यासञ्ज्योक्तेसन्दृशिजीव्व्यासम्॥१९॥ नमस्तेहरसेशोचिषेनमस्तेऽअस्त्वर्चिषे। अन्न्याँस्तेऽअस्मत्त-पन्तुहेतयःपावकोऽअस्मब्भ्यᳬशिवोभव॥२०॥ नमस्तेऽअस्तुविद्युतेनमस्तेस्तनयित्नवे। नमस्तेभगवन्नस्तुयतः-स्वःसमीहसे॥२१॥ यतोयतःसमीहसेततोनोऽअभयङ्कुरु। शन्नः कुरुप्प्रजाभ्योभयन्नःपशुभ्यः॥२२॥ सुमित्त्रियानऽ-

आपुऽओषधयःसन्तु। दुर्म्मित्रियास्तस्म्मैसन्तुयोस्म्मान्द्वेष्टियञ्चवृयंद्विष्म्मः॥२३॥ तच्चक्षुर्द्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्श्येमशरदःशतञ्जीवेमशरदःशतठ्ठ०शृणुयामशरदः शतम्प्रब्ब्रवामशरदःशतमदीनाःस्यामशरदःशतम्भूयश्श्चशरदः शतात्॥२४॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः इति शान्तिपाठं पठेत्। एवं कर्तुमशक्तश्चेत्तदा दशाक्षरं यथाशक्ति जपेत्। ततः ॐ इमारुद्द्रायतवसेकपर्द्दिनेक्षयद्वीराय प्रभरामहेमतीः। यथाशमसद्द्विपदेचतुष्प्पदेविश्श्वम्पुष्टग्ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम्॥१॥ इति मन्त्रेण अर्घपात्रोदकं गृहीत्वा देवदक्षिणे धर्मार्थकाममोक्षादिष्वीप्सितफलप्राप्त्यर्थं यथाशक्ति यत्कृतरूपादिजपेन स्वयं वा ऋत्विग्द्वारा कारितेन प्रणतजनानुकम्पी सच्चिदानन्दरूपपरमात्मा श्रीसदाशिवमहारुद्रः प्रीयतामिति पठित्वोत्सृजेत्। ततो देवाभिमुखः कृताञ्जलिपुटः सन्—

ॐ जपन्यासार्चनं देव यत्कृतं तु मयाद्य वै। न्यूनातिदोषरहितं कृतं कर्म्म मया प्रभो॥
भवत्वेतत्कृपासिन्धो क्षमस्व च नमोऽस्तु ते। पूजान्यासादिकं देव कृतं यत्त्वदनुग्रहात्॥
तेन मत्कर्म्मणा रुद्र प्रीतो भव वरप्रदः। नमः शिवाय शान्ताय सगणायादिहेतवे॥
निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वरः। न्यूनातिरिक्तं तत्पूर्णं प्रसादात्तव शङ्कर॥
एतत्कृतेन देवेश सदा मे वरदो भव।

एवं देवं क्षमाप्य आत्मानं निवेद्य पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा पुनः स्तुत्वा मन्त्रहीन०॥१॥ आवाहनं न जानामि०॥२॥ इति साष्टाङ्गं प्रणमेत्।

एवं प्रत्यहं कृत्वा पञ्चरुद्राणां मध्ये यस्य रुद्रस्य यावद्भिर्ब्राह्मणैर्यावद्भिर्दिनैः पूर्वं सङ्कल्पः कृतस्तावत्पर्यन्तमुक्तप्रकारेण अक्षारलवणाशनाधःशयनादिनियमैर्जपं कुर्य्यात्। ततः समाप्ते जपे जपोक्तप्रकारेण समग्रं दशांशेन वा शतांशेन तिलादिद्रव्यैर्होमादिकं कुर्यात्। अभिषेके तु शिवमूर्ध्नि हिरण्यादिकलशेन सन्ततधारां मधुना सर्पिषा पयसा वेक्षुरसेन नारिकेलोदकेन वाऽऽम्ररसेन वा कदलीभवेन रसेन शुद्धोदकेन वा निषिञ्चेत्। पूर्वोक्तपूजादिकं कृत्वा अभिषेकः कर्तव्यः।

रुद्रजप का क्रम—(शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायी के पञ्चमाध्याय) मूल में लिखे 'नमस्तेरुद्रमन्यवऽउतोतइषवे नमः। बाहुभ्यामुतते नमः॥' इस प्रथम मन्त्र से लेकर कुल ६६ मन्त्रों का जप (पाठ) करे। रुद्राध्याय के उपरान्त 'ॐ वाजश्च मे०' इत्यादि चार मन्त्रों के चमकानुवाक को पढ़कर पुनः पूरा 'नमस्ते रुद्र०' इत्यादि ६६ मन्त्रों का नमकाध्याय पढ़े। फिर आगे के 'ॐ सत्यञ्च मे श्रद्धा च मे०' इत्यादि पाँचवें से लेकर आठवें मन्त्र तक के चार मन्त्रों का द्वितीय चमकानुवाक पढ़कर पुनः उसी रुद्राध्याय के ६६ मन्त्रों (नमकाध्याय) को पढ़े। फिर 'ऊर्क्क च मे सूनृता च मे०' इत्यादि तृतीय चमकानुवाक के नवें मन्त्र से लेकर बारहवें मन्त्र तक के कुल चार मन्त्रों को (तृतीय चमकानुवाक को) पढ़कर पुनः 'नमस्ते रुद्र०' इत्यादि नमकाध्याय (६६ मन्त्र) पढ़े। फिर 'अश्मा चमे०' इत्यादि चार मन्त्रों के चतुर्थ चमकानुवाक को पढ़कर पुनः ६६ मन्त्रों के रुद्राध्याय (नमकाध्याय) को पढ़े। फिर 'ॐ अग्निश्च मे०' इत्यादि सोलहवें मन्त्र से लेकर अठारहवें मन्त्र-पर्यन्त के तीन मन्त्रों के पाँचवें चमकानुवाक को पढ़कर पुनः 'नमस्ते रुद्र०' इत्यादि नमकाध्याय को पढ़े। फिर 'ॐ अꣳशुश्च मे०' इत्यादि उन्नीसवें मन्त्र से लेकर इक्कीसवें मन्त्र-पर्यन्त के त्रिमन्त्रात्मक छठें चमकाध्याय को पढ़कर पुनः नमकाध्याय को पढ़े। फिर 'अग्निश्च मे धर्मश्च मे०' इत्यादि दो मन्त्रों के सप्तम चमकाध्याय को पढ़कर पुनः नमकाध्याय पढ़े। फिर 'एका च मे, तिस्रश्च मे०' इत्यादि चौबीसवें मन्त्र के अष्टम चमकानुवाक को पढ़कर पुनः 'नमस्ते रुद्र' इत्यादि ६६ मन्त्रों के नमकाध्याय को पढ़े। फिर 'चतस्रश्च मे०' इत्यादि पच्चीसवें मन्त्र के

एकमन्त्रात्मक नवम चमकानुवाक को पढ़कर पुनः नमकाध्याय पढ़े। फिर 'त्र्यविश्च मे त्र्यवी च मे०' इत्यादि छब्बीसवें तथा सत्ताईसवें मन्त्रयुक्त दशम चमकानुवाक को पढ़कर पुनः नमकाध्याय का पाठ करे। तदुपरान्त 'ॐ वाजाय स्वाहा प्रसवाय स्वाहा०' इत्यादि अट्ठाइसवें उन्तीसवें मन्त्रों के ग्यारहवें चमकानुवाक को पढ़े। फिर उसके आगे 'वयः सोम०' इत्यादि आठ मन्त्रों के शीर्षानुवाक को पढ़े। तदुपरान्त 'ॐ ऋचं वाचं प्रपद्ये०' इत्यादि २४ मन्त्रों के शान्तिपाठ को पढ़ना चाहिये। तदुपरान्त 'ॐ इमा रुद्रायतवसे०' इत्यादि मन्त्र से अर्घपात्र के अर्घोदक द्वारा देवता के दक्षिण पार्श्व में अर्घ्य दे। फिर देवता के सम्मुख हाथ जोड़कर 'ॐ जपन्यासार्चनं देव०' इत्यादि चार श्लोकों (मूल में लिखित) तथा 'मन्त्रहीनं क्रियाहीनं' एवं 'आवाहनं न जानामि०' इन श्लोकों को पढ़कर साष्टाङ्ग प्रणाम करना चाहिये। यह सब क्रिया प्रतिदिन करके जिस रुद्र के लिये जितनी सङ्ख्या के ब्राह्मणों द्वारा जप पूर्वसङ्कल्प के अनुसार कराया है तथा जितने दिनों का सङ्कल्प किया है, उतने दिन-पर्यन्त उक्त प्रकार से क्षार तथा लवण रहित भोजन करते हुए, भूमि पर शयन करते हुए जप को समाप्त करे और जपोक्त प्रकार से दशांश अथवा शतांश होम तिलादि द्रव्यों से करना चाहिये। अभिषेक शिव के शिर पर सुवर्ण आदि धातु के कलश (अभाव में ताम्रकलश) से मधु, घृत, गोदुग्ध, ईख के रस, नारियल के पानी, आम के रस अथवा केले के स्वरस और शुद्ध जल से पूर्वोक्त पूजा करके करना चाहिये।

रुद्रहोमविधिः

तत्र तावत् जपान्ते मण्डपं छायामण्डपं वा यथावत्कृत्वा तन्मध्ये होमानुसारेण चतुरस्रं कुण्डं सलक्षणं विधाय तदीशान्यां रुद्रवेदीं नवग्रहमखपक्षे तत्रैव ग्रहवेदीं च कुर्य्यात्। ततः सुमुहूर्त्ते ॐ भद्रं कर्णेभिरित्यादिवेदघोषेण पश्चिमद्वारतो मण्डपं प्रविश्य रुद्रवेदीपश्चिमतः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य स्वदक्षिणस्थपत्न्या समारब्धः सपवित्रकरो मूलेनाचम्य प्राणानायम्य आनोभद्रा इत्यादिशान्तिपाठं पठित्वा सुमुखश्चेत्यादि गणपतिस्मरणपूर्वकं देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहममुकफलावाप्त्यै श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा कृतस्यामुकरुद्रजपस्य साङ्गता-सिद्ध्यर्थं समग्रं वा जपदशांशेन वा शतांशतस्तिलादिद्रव्यैर्होमं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणेशपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यादिवरणं दिग्रक्षणं च पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डमार्गेण सर्वं कुर्यात्। ततः कुण्डे अग्निं प्रतिष्ठाप्य ग्रहपीठे ग्रहान् सम्पूज्य तदीशान्यां कलशं संस्थापयेत्। ततो रुद्रपीठे वस्त्रं प्रसार्य्य तत्र द्वादशलिङ्गतोभद्रं तन्मध्ये रुद्रयन्त्रं च विलिख्य तन्मध्ये ताम्रकलशोपरि पलसुवर्णेन तदर्द्धेन वा रचितां रुद्रप्रतिमां सावयवां संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा मूलमन्त्रेण पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्तयन्त्रावरणदेवतापूजां कृत्वा रुद्रं धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनैरभ्यर्च्य साष्टाङ्गं प्रणम्य स्तुतिपाठैः स्तुत्वा होमं कुर्य्यात्। तत्राघारावाज्यभागान्ते ग्रहादिहोमं कृत्वा तिलपायसाज्यैः प्रधानदेवरुद्रहोमं कुर्य्यात्। तत्र होमक्रमः—होमस्तु त्रेधा, समग्रहोमः, जपदशांशहोमः शतांशहोमश्च। तत्राद्यः प्रधानभूतो जपाङ्गभूतश्च उत्तरौ त्वङ्गभूतावेवेति महार्णवः।'

रुद्रहोम-विधि—फिर जप की समाप्ति पर मण्डप अथवा छायामण्डप विधिपूर्वक बनाकर उसमें होम की आवश्यकता के अनुसार चौकोर लक्षणयुक्त कुण्ड बनाये। ईशान कोण में रुद्रवेदी तथा नवग्रहमख में उसी कोण में ग्रहवेदी बनाये। फिर सुमुहूर्त में 'ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा०' इत्यादि मन्त्रों का उच्चारण करते हुए पश्चिम द्वार से मण्डप में प्रवेश करके रुद्रवेदी के पश्चिम में अपने आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर अपने दक्षिण भाग में पत्नी को बैठाकर हाथों में पवित्री धारण करके मूल मन्त्र से आचमन तथा प्राणायाम करने के उपरान्त 'आनोभद्रा०' इत्यादि मन्त्रों से शान्तिपाठ पढ़कर 'सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः' इत्यादि श्लोकों को पढ़े।

फिर देश-कालादि का उच्चारण करके मूल में लिखित 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा (वर्मा अथवा गुप्ता अथवा दासो) अहं अमुकफलावाप्त्यै श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं स्वयं वा ब्राह्मणद्वारा०' इत्यादि कहकर सङ्कल्प करे। तदनन्तर गणेशपूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, नान्दीश्राद्ध, आचार्यादिवरण, दिग्रक्षण आदि सभी कर्म पूर्व में पद्धतिकाण्ड में कथित विधि से करे। फिर कुण्ड में अग्नि को स्थापित कर, ग्रहपीठ पर ग्रहों को पूजकर उसके ईशान में कलश स्थापित करे। फिर रुद्रपीठ पर वस्त्र बिछाकर द्वादशलिङ्गतोभद्र मण्डल बनाये। उस मण्डल के मध्य में रुद्रयन्त्र लिखे। उस रुद्रयन्त्र के मध्य में ताम्र कलश के ऊपर दो पल (आठ तोला = लगभग १०० ग्राम) सुवर्ण धातु की प्रतिमा अथवा एक पल (५० ग्राम) की रुद्रप्रतिमा सावयव बनवाकर उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर मूल मन्त्र से पुष्पान्त तक उपचार से पूजन करे। फिर पूर्वोक्त यन्त्रावरण के देवताओं की पूजा करके रुद्र को धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन से अर्चित कर साष्टांग प्रणाम कर स्तुतिपाठों से स्तुति कर होम करे। होम में आघाराहुति, आज्यभाग तथा ग्रहहोम करके तिल, पायस तथा घृत से प्रधान देव रुद्रदेव का होम करे। होम तीन प्रकार का होता है—१. समग्र होम, २. जपदशांश होम तथा ३. शतांश होम। महार्णव के अनुसार समग्र होम प्रधान-भूत तथा जपाङ्गभूत होता है। दशांश तथा शतांश—ये दोनों अङ्गभूत होते हैं।

प्रधानरुद्रहोमः

तत्रादौ ऋत्विजः प्राङ्मुखा उदङ्मुखाश्च कुण्डसमीपे स्थित्वा भूतशुद्ध्यादिमातृकान्यासान्तं कृत्वा पूर्वोक्तरुद्रपञ्चाङ्गन्यासान् कुर्युः। ततः पञ्चाङ्गमन्त्रैः पञ्चभिः पञ्चाहुतीर्हुत्वा रुद्रहोमः कार्यः। तद्यथा—यज्जाग्रत इति षडर्चेन एकाहुतिम्। सहस्रशीर्षेति षोडशर्चेन सूक्तेनैकाहुतिम्। अद्भ्यः सम्भृत इति षडर्चेन एकाहुतिम्। आशुः शिशान इति द्वादशर्चेन एकाहुतिम्। विभ्राड् इति सप्तदशर्चेन एकाहुतिं च हुत्वा ततः प्रधानभूतेन रुद्राध्यायेन होमः।

अथ प्रधानरुद्रहोमक्रमः। स च एकधा १ त्रेधा २ षोढा ३ षोडशधा ४ चतुश्चत्वारिंशद्धा ५ अष्टाचत्वारिंशद्धा ६ एकषष्ट्युत्तरशतधा ७ पञ्चविंशत्युत्तरचतुःशतधा चेति ८ अष्टविभागानामन्यतमं पक्षमङ्गीकृत्य होमं कुर्यात्।

प्रधान रुद्रहोम—सभी ऋत्विज (वरित ब्राह्मण) पूर्व की ओर अथवा उत्तर की ओर मुख करके बैठें। भूतशुद्धि तथा मातृकान्यास-पर्यन्त सभी कर्म करके पूर्वकथित रुद्रपञ्चाङ्ग न्यासों को करे। फिर पञ्चाङ्ग मन्त्रों के द्वारा पाँच आहुतियों से होम कर रुद्रहोम करना चाहिये। वह इस प्रकार है—(१) 'यज्जाग्रतो०' इत्यादि छः ऋचाओं से एक आहुति दे। (२) 'सहस्रशीर्षा०' इत्यादि सोलह ऋचाओं से एक आहुति दे। (३) 'अद्भ्यः संभृतं' इत्यादि छः ऋचाओं से एक आहुति दे। (४) 'आशुः शिशानो०' इत्यादि बारह ऋचाओं से एक आहुति दे तथा (५) 'ॐ विभाड् बृहत्०' इत्यादि सत्रह ऋचाओं से एक आहुति दे। इस प्रकार पाँच आहुतियाँ देकर फिर प्रधानभूत रुद्राध्याय से होम करना चाहिये।

प्रधान रुद्रहोम के आठ भेद—प्रधान रुद्रहोम के ग्रन्थों में आठ पक्ष (भेद) वर्णित है—१. एकधा, २. त्रेधा, ३. षोढा (छः भाग), ४. षोडशधा (१६), ५. चतुश्चत्वारिंशद्धा (४४), ६. अष्टाचत्वरिंशद्धा (४८), ७. एकषष्ट्युत्तरशतधा (१६१), ८. पञ्चविंशत्युत्तरचतुश्शतधा (४२५)। इन आठ भेदों में किसी भी एक भेद को चुनकर उसके अनुसार होम करना चाहिये।

अत्र एकषष्ट्युत्तरशतधा मन्त्रविभागपक्षेण होमः; तत्र मन्त्राः—ॐ नमस्ते रुद्र० स्वाहा॥ १॥ ॐ याते रुद्र शिवा० स्वाहा॥ २॥ ॐ यामिषुङ्गिरि० स्वाहा॥ ३॥ ॐ शिवेनवचसा० स्वाहा॥ ४॥ ॐ अध्यवोच० स्वाहा॥ ५॥ ॐ

असौयस्ताम्रो० स्वाहा॥ ६ ॥ (मन्त्रान्ते स्वाहापदं सर्वत्र ज्ञेयम्)। ॐ असौयोव० ॥ ७ ॥ ॐ नमोस्तुनीलग्रीवा० ॥ ८ ॥ ॐ प्रमुञ्चधन्व० ॥ ९ ॥ ॐ विज्यन्धनु० ॥ १० ॥ ॐ यातेहेति० ॥ ११ ॥ ॐ परिते धन्वनो० ॥ १२ ॥ ॐ अवतत्य० ॥ १३ ॥ ॐ नमस्तऽआयुधाया० ॥ १४ ॥ मानो महान्त० ॥ १५ ॥ ॐ मानस्तोके० ॥ १६ ॥ ॐ नमो हिरण्यवाहवे सेनान्येदिशाञ्च पतये नमः स्वाहा ॥ १७ ॥ ॐ नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ १८ ॥ ॐ नमः शष्पिञ्जरायत्त्विषीमते-पथीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ १९ ॥ॐ नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २० ॥ ॐ नमो बब्भ्लुशाय व्याधिनेत्रानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २१ ॥ ॐ नमोभवस्यहेत्यैजगताम्पतये नमः स्वाहा ॥ २२ ॥ ॐ नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणाम्पये नमः स्वाहा ॥ २३ ॥ ॐ नमः सूतायाहन्त्यैवनानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २४ ॥ ॐ नमो रोहितायस्थपतये वृक्षाणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २५ ॥ ॐ नमोभुवन्तयेवारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २६ ॥ ॐ नमोमन्त्रिणे व्वाणिजायकक्षाणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २७ ॥ ॐ नमऽउच्चैर्ग्घोषायाक्रन्दयतेपत्तीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २८ ॥ ॐ नमः कृत्स्नायतायधावतेसत्त्वानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ २९ ॥ ॐ सहमानायनिव्याधिनऽआव्याधिनीनाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३० ॥ ॐ नमोनिषङ्गिणेककुभायस्तेनानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३१ ॥ ॐ नमोनिचेरवेपरिचरायारण्यानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३२ ॥ ॐ नमो व्वञ्चतेपरिवञ्चतेस्तायूनाम्पतये स्वाहा ॥ ३३ ॥ ॐ नमोनिषङ्गिणऽइषुधिमतेतस्कराणाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३४ ॥ ॐ नमः सृकायिभ्योजिघाᳬंसद्भ्योमुष्णताम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३५ ॥ ॐ नमः सिमद्भ्योनक्तं चरद्भ्यो विकृन्तानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३६ ॥ ॐ नमऽउष्णीषिणेगिरिचरायकुलुञ्चानाम्पतये नमः स्वाहा ॥ ३७ ॥ ॐ नमऽइषु-मद्भ्योधन्वायिभ्यश्चवो नमः स्वाहा ॥ ३८ ॥ ॐ नम आतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ३९ ॥ ॐ नम आयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४० ॥ ॐ नमो विसृजद्भ्यो विध्यद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४१ ॥ ॐ स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४२ ॥ ॐ नमः शयानेभ्य आसीनेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४३ ॥ ॐ नमस्तिष्ठद्भ्योधावद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४४ ॥ ॐ नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४५ ॥ ॐ नमोश्वेभ्योश्वपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४६ ॥ ॐ नमऽआव्याधिनीभ्योव्विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४७ ॥ ॐ नम उगणाभ्यस्तृᳬठ०हतीभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४८ ॥ ॐ नमोगणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ४९ ॥ ॐ नमो व्व्रातेभ्यो व्व्रातपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५० ॥ ॐ नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५१ ॥ ॐ नमोव्विरूपेभ्योविश्वरूपेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५२ ॥ ॐ नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५३ ॥ ॐ नमोरथिभ्योऽअरथेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५४ ॥ ॐ नमः क्षत्रिभ्यः सङ्ग्रहीतृभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५५ ॥ ॐ नमो महद्भ्योअर्भकेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५६ ॥ ॐ नमस्तक्षभ्योरथकारेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५७ ॥ ॐ नमः कुलालेभ्यः कम्मरिभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५८ ॥ ॐ नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ५९ ॥ ॐ नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः स्वाहा ॥ ६० ॥ ॐ श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्श्च वो नमः स्वाहा ॥ ६१ ॥ ॐ नमो भवाय च रुद्राय च स्वाहा ॥ ६२ ॥ ॐ नमः शर्वाय च पशुपतये च स्वाहा ॥ ६३ ॥ ॐ नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च स्वाहा ॥ ६४ ॥ ॐ नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च स्वाहा ॥ ६५ ॥ ॐ नमः सहस्त्राक्षाय च शतधन्वने च स्वाहा ॥ ६६ ॥ ॐ नमो गिरिशियाय च शिपिविष्टाय च स्वाहा ॥ ६७ ॥ ॐ नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च स्वाहा ॥ ६८ ॥ ॐ नमो ह्रस्वाय च वामनाय च स्वाहा ॥ ६९ ॥ ॐ नमो बृहते च वर्षीयसे च स्वाहा ॥ ७० ॥ ॐ नमो व्वृद्धाय च सवृधे च स्वाहा ॥ ७१ ॥ ॐ नमोग्र्याय च प्रथमाय च स्वाहा ॥ ७२ ॥ ॐ नम आशवेचाजिराय च स्वाहा ॥ ७३ ॥ ॐ नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च स्वाहा ॥ ७४ ॥ ॐ नमः ऊर्म्याय चावस्वन्याय च स्वाहा ॥ ७५ ॥ ॐ नमो नादेयाय च द्वीपाय च स्वाहा ॥ ७६ ॥ ॐ नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च स्वाहा ॥ ७७ ॥ ॐ नमः पूर्वजाय चापरजाय च स्वाहा ॥ ७८ ॥ ॐ नमो मध्यमाय चापगल्भाय च स्वाहा ॥ ७९ ॥ ॐ नमो जघन्याय च बुध्याय च

स्वाहा॥ ८०॥ ॐ नमः सोभ्याय च प्रतिसर्य्याय च स्वाहा॥ ८१॥ ॐ नमो याम्याय च क्षम्याय च स्वाहा॥ ८२॥ ॐ नमः श्लोकाय चावसान्याय च स्वाहा॥ ८३॥ ॐ नम उर्व्वर्य्याय च खल्याय च स्वाहा॥ ८४॥ ॐ नमो व्वन्याय च कक्ष्याय च स्वाहा॥ ८५॥ ॐ नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च स्वाहा॥ ८६॥ ॐ नम आशुषेणाय चाशुरथाय च स्वाहा॥ ८७॥ ॐ नमः शूराय चावभेदिने च स्वाहा॥ ८८॥ ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च स्वाहा॥ ८९॥ ॐ नमो व्वर्मिणे च व्वरूथिने च स्वाहा॥ ९०॥ ॐ नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च स्वाहा॥ ९१॥ ॐ नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च स्वाहा॥ ९२॥ ॐ नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च स्वाहा॥ ९३॥ ॐ नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च स्वाहा॥ ९४॥ ॐ नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च स्वाहा॥ ९५॥ ॐ नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च स्वाहा॥ ९६॥ ॐ नमः स्रुत्याय च पथ्याय च स्वाहा॥ ९७॥ ॐ नमः काट्याय च नीप्याय च स्वाहा॥ ९८॥ ॐ नमः कुल्याय च सरस्याय च स्वाहा॥ ९९॥ ॐ नमो नादेयाय च व्वैशन्ताय च स्वाहा॥ १००॥ ॐ नमः कूप्याय चावट्याय च स्वाहा॥ १०१॥ ॐ नमो व्वीध्रयाय च तप्याय च स्वाहा॥ १०२॥ ॐ नमो मेघ्याय च विद्युत्त्याय च स्वाहा॥ १०३॥ ॐ नमो व्वर्ष्याय च वर्ष्याय च स्वाहा॥ १०४॥ ॐ नमो व्वात्याय च रेष्म्याय च स्वाहा॥ १०५॥ ॐ नमो व्वास्तव्याय च व्वास्तुपाय च स्वाहा॥ १०६॥ ॐ नमः सोमाय च रुद्राय च स्वाहा॥ १०७॥ ॐ नमस्ताम्राय चारुणाय च स्वाहा॥ १०८॥ ॐ नमः शङ्गवे च पशुपतये च स्वाहा॥ १०९॥ ॐ नम उग्राय च भीमाय च स्वाहा॥ ११०॥ ॐ नमोग्रेवधाय च दूरेवधाय च स्वाहा॥ १११॥ ॐ नमो हन्त्रे च हनीयसे च स्वाहा॥ ११२॥ ॐ नमो व्वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः स्वाहा॥ ११३॥ ॐ नमस्ताराय स्वाहा॥ ११४॥ ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च स्वाहा॥ ११५॥ ॐ नमः शङ्कराय च मयस्कराय च स्वाहा॥ ११६॥ ॐ नमः शिवाय च शिवतराय च स्वाहा॥ ११७॥ ॐ नमः पार्य्याय चावार्य्याय च स्वाहा॥ ११८॥ ॐ नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च स्वाहा॥ ११९॥ ॐ नस्तीर्थ्याय च कूल्याय च स्वाहा॥ १२०॥ ॐ नमः शष्प्याय च फेन्याय च स्वाहा॥ १२१॥ ॐ नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च स्वाहा॥ १२२॥ ॐ नमः किर्ठ०शिलाय च क्षयणाय च स्वाहा॥ १२३॥ ॐ नमः कपर्दिने च पुलस्तये च स्वाहा॥ १२४॥ ॐ नमः इरिण्याय च प्रपथ्याय च स्वाहा॥ १२५॥ ॐ नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय च स्वाहा॥ १२६॥ ॐ नमस्तल्प्याय च गेह्याय च स्वाहा॥ १२७॥ ॐ नमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च स्वाहा॥ १२८॥ ॐ नमः काट्याय च गह्सरेष्ठाय च स्वाहा॥ १२९॥ ॐ नमः शुष्क्याय च हरित्त्याय च स्वाहा॥ १३०॥ ॐ नमः पाꣳसव्याय च रजस्याय च स्वाहा॥ १३१॥ ॐ नमो लोप्याय चोलप्याय च स्वाहा॥ १३२॥ ॐ नम ऊर्व्याय च सूर्व्याय च स्वाहा॥ १३३॥ ॐ नमः पर्णाय च पर्णशदाय च स्वाहा॥ १३४॥ ॐ नम उद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च स्वाहा॥ १३५॥ ॐ नम आखिदते च प्रखिदते च स्वाहा॥ १३६॥ ॐ नम इषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमः स्वाहा॥ १३७॥ ॐ नमो वः किरिकेभ्यो देवानार्ठ० हृदयेभ्यः स्वाहा॥ १३८॥ ॐ नमो व्विचिन्वत्केभ्यः स्वाहा॥ १३९॥ ॐ नमो व्विक्षिणत्केभ्यः स्वाहा॥ १४०॥ ॐ नम आनिर्हतेभ्यः स्वाहा॥ १४१॥ ॐ द्रापेऽअन्धस० स्वाहा॥ १४२॥ ॐ इमारुद्राय० स्वाहा॥ १४३॥ ॐ यातेरुद्र० स्वाहा॥ १४४॥ ॐ परिनोरुद्रस्य० स्वाहा॥ १४५॥ ॐ मीढुष्टमशिवतम० स्वाहा॥ १४६॥ ॐ विकिरिद्रविलोहित० स्वाहा॥ १४७॥ ॐ सहस्राणि सहस्रशो० स्वाहा॥ १४८॥ ॐ असङ्ख्याता सहस्राणि स्वाहा॥ १४९॥ ॐ अस्मिन्महत्यर्णवे स्वाहा॥ १५०॥ ॐ नीलग्रीवाः शितिकण्ठा० स्वाहा॥ १५१॥ ॐ नीलग्रीवाः क्षितिकण्ठाः शर्वा० स्वाहा॥ १५२॥ ॐ ये वृक्षेषु स्वाहा॥ १५३॥ ॐ ये भूतानामधिपतयो० स्वाहा॥ १५४॥ ॐ ये पथाम्पथि० स्वाहा॥ १५५॥ ॐ ये तीर्त्थानि० स्वाहा॥ १५६॥ ॐ येन्नेषुव्विविद्ध्यन्ति० स्वाहा॥ १५७॥ ॐ यऽएतावन्तश्च० स्वाहा॥ १५८॥ ॐ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि० स्वाहा॥ १५९॥ ॐ नमोस्तु रुद्रेभ्यो येन्तरिक्षे० स्वाहा॥ १६०॥ ॐ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां० स्वाहा॥ १६१॥

एवमेकषष्ट्युत्तरशतधामन्त्रविभागपक्षहोमं घृताक्ततिलाहुतिभिः कृत्वा।

१६१ आहुतिपक्ष से होम—यहाँ पर १६१ मन्त्रों से आहुति देकर प्रधान देवता के होम करने की विधि बताई गयी है, जिसमें मूल में लिखित 'ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः' इत्यादि १६१ मन्त्रविभागों द्वारा घृत से युक्त तिल की आहुतियाँ देकर फिर आगे लिखे प्रकार से नमक-चमकयुक्त आहुतियाँ देनी चाहिये।

ॐ वाजश्चमे० ॥ १ ॥ ॐ प्राणश्चमे० ॥ २ ॥ ॐ ओजश्चमे० ॥ ३ ॥ ॐ ज्यैष्ठ्यञ्चमऽआधिपत्त्यञ्चमे० स्वाहा ॥ ४ ॥ इत्याद्यचमकानुवाकहोमं कुर्य्यात् ॥ १ ॥ पुनः ॐ नमस्तेरुद्र० इत्याद्येकषष्ट्युत्तरशतधा होमं कृत्वा ॐ सत्यञ्चमे० ॥ ५ ॥ ॐ ऋतञ्चमे० ॥ ६ ॥ ॐ यन्ताचमे० ॥ ७ ॥ ॐ शञ्चमेमयश्चमे स्वाहा० ॥ ८ ॥ इति द्वितीयचमकानुवाक होमं कुर्यात् ॥ २ ॥ ततः पुनः ॐ नमस्ते रुद्र० इत्यादि (१६१) होमं कृत्वा ॐ ऊर्क्क्चमेसूनृताचमे० ॥ ९ ॥ ॐ रयिश्चमे० ॥ १० ॥ ॐ व्वित्तञ्चमे० ॥ ११ ॥ ॐ व्व्रीहयश्चमे० स्वाहा ॥ १२ ॥ इति तृतीयचमकानुवाकहोमं कुर्यात् ॥ ३ ॥ पुनः ॐ नमस्ते रुद्र० इत्यादि (१६१) होमं कृत्वा ॐ अश्माचमे० ॥ १३ ॥ ॐ अग्निश्चमऽआपश्चमे० ॥ १४ ॥ ॐ व्वसुचमे० स्वाहा ॥ १५ ॥ इति चतुर्थानुवाकहोमं कुर्यात् ॥ ४ ॥ पुनः ॐ नमस्तेरुद्र० इत्यादि (१६१) होमं कृत्वा ॐ अग्निश्चमऽइन्द्रश्चमे० ॥ १६ ॥ ॐ मित्रश्चमइन्द्रश्चमे० ॥ १७ ॥ ॐ पृथिवीचम० स्वाहा ॥ १८ ॥ इति पञ्चमानुवाकहोमं कुर्यात् ॥ ५ ॥ पुनः ॐ नमस्ते० इत्यादि ॥ १६१ ॥ होमं कृत्वा—ॐ अ꣡ꣳशु० शुश्चमे० ॥ १९ ॥ ॐ आग्रयणश्चमे० ॥ २० ॥ ॐ स्त्रुवश्चमे० स्वाहा ॥ २१ ॥ इति षष्ठानुवाकहोमः ॥ ६ ॥ पुनः ॐ नमस्ते० इत्यादि (१६१) होमं कृत्वा ॐ अग्निश्चमे० ॥ २२ ॥ ॐ व्व्रतञ्चम० स्वाहा ॥ २३ ॥ इति सप्तमानुवाकहोमः ॥ ७ ॥ पुनः ॐ नमस्ते० इत्यादि (१६१) होमं कृत्वा ॐ एकाचमे० स्वाहा ॥ २४ ॥ इत्यष्टमानुवाकहोमः ॥ ८ ॥ पुनर्नमस्ते इत्यादि (१६१) हुत्वा ॐ चतस्त्रश्चमे० स्वाहा ॥ २५ ॥ इति नवमानुवाकहोमः ॥ ९ ॥ पुनर्नमस्ते इत्यादि (१६१) हुत्वा ॐ त्र्यविश्चमे० ॥ २६ ॥ ॐ पृष्ठवाट्चमे० स्वाहा ॥ २७ ॥ इति दशानुवाकहोमः ॥ १० ॥ पुनर्नमस्ते इत्यादि (१६१) हुत्वा ॐ व्वाजायस्वाहा० ॥ २८ ॥ ॐ आयुर्य्यज्ञेन० स्वाहा ॥ २९ ॥ इत्येकादशानुवाकहोमं कुर्य्यात् ॥ ११ ॥ एवमेकादशावर्तनेन रूपकाख्यो रुद्रो भवति एकादशावृत्तौ होमान्ते। यज्जाग्रत० इत्यादि ६ सहस्त्रशीर्षा० १६ अद्भ्यः संभृत० ६ आशुः शिशान० १७ विभ्राड्बृहत्० १६ इत्यादिपञ्चसूक्तैः पञ्चाहुतीर्हुत्वा ततो नमस्तेरुद्र० इति रुद्राध्यायेन पूर्वोक्तप्रकारेण हुत्वा होमान्ते एकैकेन चमकविभागेन हुत्वा ॐ ऋतंवाचं० स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ यन्मेछिद्रञ्चक्षुषो० स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितु० स्वाहा ॥ ३ ॥ ॐ कयानश्चित्र० स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ कस्त्वासत्यो० स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ अभीषुण० स्वाहा ॥ ६ ॥ ॐ कयात्वन्न० स्वाहा ॥ ७ ॥ ॐ इन्द्रोव्विश्वस्य० स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ शन्नोमित्र० स्वाहा ॥ ९ ॥ ॐ शन्नोव्वात० स्वाहा ॥ १० ॥ ॐ अहानिश० स्वाहा ॥ ११ ॥ ॐ शन्नोदेवी० स्वाहा ॥ १२ ॥ ॐ स्योनापृथिवि० स्वाहा ॥ १३ ॥ ॐ आपोहिष्ठा० स्वाहा ॥ १४ ॥ ॐ योवः शिवतमो० स्वाहा ॥ १५ ॥ ॐ तस्माऽअरङ्ग० स्वाहा ॥ १६ ॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष꣡ꣳ० स्वाहा ॥ १७ ॥ ॐ दृतेदृ꣡ꣳहमा० स्वाहा ॥ १८ ॥ ॐ दृतेदृ꣡ꣳहमाज्योक्ते० स्वाहा ॥ १९ ॥ ॐ नमस्तेहरसे० स्वाहा ॥ २० ॥ ॐ नमस्तेस्तु० स्वाहा ॥ २१ ॥ ॐ यतोयतः० स्वाहा ॥ २२ ॥ ॐ सुमित्रियान० स्वाहा ॥ २३ ॥ ॐ तच्चक्षुर्देवहितं० स्वाहा ॥ २४ ॥ इति शान्त्यध्यायमन्त्रैश्चतुर्विंशतिराहुतीर्जुहुयात्। एवं प्रधानहोमं विधाय सर्वे ऋत्विजः प्रागुक्तपञ्चाङ्गन्यासान् कुर्युः। एवं क्रमेण लघुरुद्रहोमं महारुद्रमतिरुद्रहोमं वा कुर्यात्। इति रुद्रहोमः।

नमक-चमक के साथ होम—सामान्य रुद्रहोम ऊपर के १६१ मन्त्रों से करने के पश्चात् 'ॐ वाजश्चमे०' इत्यादि अनुवाक से होम करे। पुनः १६१ मन्त्र से होम कर 'सत्यञ्चमे०' इत्यादि द्वितीय अनुवाक से होम करे। फिर १६१ मन्त्रों से हवनकर 'ऊर्क्क चमे०' इत्यादि तृतीय अनुवाक से होम करे। पुनः १६१ नमस्ते इत्यादि मन्त्रों के द्वारा होम कर चतुर्थ अनुवाक से होम करे। पुनः १६१ मन्त्रों से आहुति देकर पञ्चम अनुवाक के मन्त्रों से होम करे। फिर १६१ मन्त्रों से आहुति देकर षष्ठ अनुवाक के मन्त्रों से होम करे। फिर १६१ नमस्ते इत्यादि मन्त्राहुति के उपरान्त सातवें

अनुवाक से हवन करे। इस प्रकार बार-बार १६१ मन्त्रों की आहुति देकर एकादशवें अनुवाक-पर्यन्त होम करना चाहिये। यह एकादश रुद्ररूप होता है। होम के अन्त में 'यज्जागृतादि०' छः मन्त्रों से एक, फिर पुरुषसूक्त के १६ मन्त्रों से एक, 'अद्भ्यः संभृतं०' इत्यादि छः से एक, 'आशुशिशानो०' इन १७ मन्त्रों से एक, फिर विभ्राट्सूक्त से एक—इस प्रकार पाँच आहुतियाँ दे। तदुपरान्त नमस्तुरुद्र इत्यादि मन्त्रों से १६१ आहुति दे। फिर नमक-चमकविभाग से आहुति देकर 'ऋतं वाचं प्रपद्ये०' इत्यादि से २४ आहुतियाँ देनी चाहिये। फिर प्रधान होम करके ऋत्विज पञ्चाङ्ग न्यास करे। इस प्रकार से क्रमशः लघुरुद्रहोम या महारुद्रहोम, जो भी करना हो, करना चाहिये।

पीठदेवताहोमः

तत्र पीठदेवताभ्यो लिङ्गतोभद्रदेवताभ्यो रुद्रयन्त्रदेवताभ्यश्चैकैकामाज्याहुतिं जुहुयुः। तद्यथा—ॐ मण्डकाय स्वाहा॥ १॥ ॐ कालाग्निरुद्राय०॥ २॥ ॐ आधारशक्त्यै०॥ ३॥ ॐ कूर्माय०॥ ४॥ धरायै०॥ ५॥ सुधासिन्धवे०॥ ६॥ श्वेतद्वीपाय०॥ ७॥ सुराङ्घ्रिपाय०॥ ८॥ मणिहर्म्याय०॥ ९॥ हेमपीठाय०॥ १०॥ धर्माय०॥ ११॥ ज्ञानाय०॥ १२॥ वैराग्याय०॥ १३॥ ऐश्वर्याय०॥ १४॥ अधर्माय०॥ १५॥ अज्ञानाय०॥ १६॥ अवैराग्याय०॥ १७॥ अनैश्वर्याय०॥ १८॥ अनन्ताय स्वाहा॥ १९॥ तत्त्वपद्माय०॥ २०॥ आनन्दमयकन्दाय०॥ २१॥ संविन्नालाय०॥ २२॥ विकारमयकेसरेभ्य०॥ २३॥ प्रकृत्यात्मकपत्रेभ्य०॥ २४॥ सूर्यमण्डलाय०॥ २५॥ चन्द्रमण्डलाय०॥ २६॥ अग्निमण्डलाय०॥ २७॥ सत्त्वाय०॥ २८॥ रजसे०॥ २९॥ तमसे०॥ ३०॥ आत्मने॥ ३१॥ अन्तरात्मने०॥ ३२॥ परमात्मने०॥ ३३॥ ज्ञानात्मने०॥ ३४॥ मायातत्त्वाय०॥ ३५॥ कलातत्त्वाय०॥ ३६॥ विद्यातत्त्वाय०॥ ३७॥ परतत्त्वाय स्वाहा॥ ३८॥ इति पीठदेवताहोमः।

पीठदेवता होम—फिर पीठदेवताओं का पूजन लिङ्गतोभद्र (चतुर्लिङ्गतोभद्र अथवा अष्टलिङ्गतोभद्र अथवा द्वादशलिङ्गतोभद्र) के देवताओं का होम (जिनका पूजन किया गया हो) करे तथा रुद्रयन्त्र के देवताओं का होम करे। इनमें से प्रत्येक देवता को एक-एक आहुति देनी चाहिये। ये आहुतियाँ 'ॐ मण्डकाय स्वाहा' इत्यादि मूल में लिखित ३८ मन्त्रों से देनी चाहिये।

पीठशक्तिहोमः

ॐ वामायै स्वाहा॥ १॥ ज्येष्ठायै०॥ २॥ रौद्र्यै०॥ ३॥ काल्यै०॥ ४॥ कलविकरिण्यै०॥ ५॥ बलविकरिण्यै०॥ ६॥ बलप्रमथन्यै०॥ ७॥ सर्वभूतदमन्यै०॥ ८॥ मनोन्मन्यै०॥ ९॥ इति नवपीठशक्तिहोमः। ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्तयोगपीठात्मने स्वाहा॥ १॥

पीठशक्ति होम—पीठदेवताओं का होम करने के पश्चात् फिर 'ॐ वामायै स्वाहा' इत्यादि नौ मन्त्रों से नौ पीठशक्तियों के लिये एक-एक आहुति देकर फिर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्तयोगपीठात्मने स्वाहा' इस मन्त्र से एक आहुति दे। तदुपरान्त आगे लिखे मन्त्रों से रुद्रयन्त्र के आवरणदेवताओं (एक से लेकर सात आवरणों तक के देवताओं) को एक-एक आहुति देनी चाहिये।

यन्त्रावरणदेवताहोमः

ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा॥ १॥ सद्योजाताय०॥ १॥ वामदेवाय०॥ २॥ अघोराय०॥ ३॥ तत्पुरुषाय०॥ ४॥ ईशानाय०॥ ५॥ नन्दिने०॥ ६॥ महाकालाय०॥ ७॥ गणेश्वराय०॥ ८॥ वृषभाय०॥ ९॥ भृङ्गिरिटये०॥ १०॥ स्कन्दाय०॥ ११॥ उमायै०॥ १२॥ चण्डीश्वराय०॥ १३॥ इति प्रथमावरणम्। **अनन्ताय०॥ १४॥ सूक्ष्माय०॥ १५॥ शिवाय०॥ १६॥ एकपदे०॥ १७॥ एकरुद्राय०॥ १८॥ त्रिमूर्त्तये०॥ १९॥ श्रीकण्ठाय०॥ २०॥ वामदेवाय०॥ २१॥**

ज्येष्ठाय० ॥ २२ ॥ श्रेष्ठाय० ॥ २३ ॥ रुद्राय० ॥ २४ ॥ कालाय० ॥ २५ ॥ कलविकरणाय० ॥ २६ ॥ बलाय० ॥ २७ ॥ बलविकरणाय० ॥ २८ ॥ बलप्रथमनाय० ॥ २९ ॥ इति द्वितीयावरणम्। अणिम्ने० ॥ ३० ॥ महिम्ने० ॥ ३१ ॥ लघिम्ने० ॥ ३२ ॥ गरिम्णे० ॥ ३३ ॥ प्राप्त्यै० ॥ ३४ ॥ प्रकाम्यै० ॥ ३५ ॥ ईशितायै० ॥ ३६ ॥ वशितायै० ॥ ३७ ॥ ब्राह्म्यै० ॥ ३८ ॥ माहेश्वर्यै० ॥ ३९ ॥ कौमार्यै० ॥ ४० ॥ वैष्णव्यै० ॥ ४१ ॥ वाराह्यै० ॥ ४२ ॥ इन्द्राण्यै० ॥ ४३ ॥ चामुण्डायै० ॥ ४४ ॥ चण्डिकायै० ॥ ४५ ॥ असिताङ्गभैरवाय० ॥ ४६ ॥ रुरुभैरवाय० ॥ ४७ ॥ चण्डभैरवाय० ॥ ४८ ॥ क्रोधभैरवाय० ॥ ४९ ॥ उन्मत्तभैरवाय० ॥ ५० ॥ कालभैरवाय० ॥ ५१ ॥ भीषणभैरवाय० ॥ ५२ ॥ संहारभैरवाय० ॥ ५३ ॥ इति तृतीयावरणम्। भवाय० ॥ ५४ ॥ शर्वाय० ॥ ५५ ॥ ईशानाय० ॥ ५६ ॥ पशुपतये० ॥ ५७ ॥ रुद्राय० ॥ ५८ ॥ उग्राय० ॥ ५९ ॥ भीमाय० ॥ ६० ॥ महादेवाय० ॥ ६१ ॥ इति शिवाष्टकहोमः। अनन्ताय० ॥ ६२ ॥ वासुकये० ॥ ६३ ॥ तक्षकाय० ॥ ६४ ॥ कुलीरकाय० ॥ ६५ ॥ कर्कोटकाय० ॥ ६६ ॥ शङ्खपालाय० ॥ ६७ ॥ कम्बलाय० ॥ ६८ ॥ अश्वतराय० ॥ ६९ ॥ इत्यष्टनागहोमः। वैन्याय० ॥ ७० ॥ पृथवे० ॥ ७१ ॥ हैहयाय० ॥ ७२ ॥ अर्जुनाय० ॥ ७३ ॥ शाकुन्तलेयाय० ॥ ७४ ॥ भरताय० ॥ ७५ ॥ नलाय० ॥ ७६ ॥ रामाय० ॥ ७७ ॥ इति नृपाष्टकहोमः। हिमवते० ॥ ७८ ॥ निषधाय० ॥ ७९ ॥ विन्ध्याय० ॥ ८० ॥ माल्यवते० ॥ ८१ ॥ पारियात्राय० ॥ ८२ ॥ मलयाय० ॥ ८३ ॥ हेमकूटाय० ॥ ८४ ॥ गन्धमादनाय० ॥ ८५ ॥ इति गिर्य्यष्टकहोमः। इति चतुर्थावरणम्। इन्द्राय० ॥ ८६ ॥ अग्नये० ॥ ८७ ॥ यमाय० ॥ ८८ ॥ निर्ऋतये० ॥ ८९ ॥ वरुणाय० ॥ ९० ॥ वायवे० ॥ ९१ ॥ कुबेराय० ॥ ९२ ॥ ईशानाय० ॥ ९३ ॥ इतीन्द्रादिदेवहोमः। शच्यै० ॥ ९४ ॥ स्वाहायै० ॥ ९५ ॥ वाराह्यै० ॥ ९६ ॥ खड्गिन्यै० ॥ ९७ ॥ वारुण्यै० ॥ ९८ ॥ वायव्यै० ॥ ९९ ॥ कौबेर्य्यै० ॥ १०० ॥ ईशान्यै० ॥ १०१ ॥ इत्यष्टशक्तिहोमः। वज्राय० ॥ १०२ ॥ शक्त्यै० ॥ १०३ ॥ दण्डाय० ॥ १०४ ॥ खड्गाय० ॥ १०५ ॥ पाशाय० ॥ १०६ ॥ अङ्कुशाय० ॥ १०७ ॥ गदायै० ॥ १०८ ॥ त्रिशूलाय० ॥ १०९ ॥ इत्यायुधहोमः। ऐरावताय० ॥ ११० ॥ मेषाय० ॥ १११ ॥ महिषाय० ॥ ११२ ॥ प्रेताय० ॥ ११३ ॥ मकराय० ॥ ११४ ॥ हरिणाय० ॥ ११५ ॥ नराय० ॥ ११६ ॥ वृषभाय० ॥ ११७ ॥ इति वाहनहोमः। ऐरावताय० ॥ ११८ ॥ पुण्डरीकाय० ॥ ११९ ॥ वामनाय० ॥ १२० ॥ कुमुदाय० ॥ १२१ ॥ अञ्जनाय० ॥ १२२ ॥ पुष्पदन्ताय० ॥ १२३ ॥ सार्वभौमाय० ॥ १२४ ॥ सुप्रतिकाय० ॥ १२५ ॥ इति गजहोमः। इति पञ्चमावरणम्। इन्द्राय० ॥ १२६ ॥ अग्नये० ॥ १२७ ॥ यमाय० ॥ १२८ ॥ निर्ऋतये० ॥ १२९ ॥ वरुणाय० ॥ १३० ॥ वायवे० ॥ १३१ ॥ कुबेराय० ॥ १३२ ॥ ईशानाय० ॥ १३३ ॥ ब्रह्मणे० ॥ १३४ ॥ अनन्ताय० ॥ १३५ ॥ इति दिक्पालहोमः। इति षष्ठावरणम्। विरूपाक्षाय० ॥ १३६ ॥ विश्वरूपाय० ॥ १३७ ॥ पशुपतये० ॥ १३८ ॥ ऊर्ध्वलिङ्गाय० ॥ १३९ ॥ शेषाय० ॥ १४० ॥ तक्षकाय० ॥ १४१ ॥ अनन्ताय० ॥ १४२ ॥ वासुकये० ॥ १४३ ॥ शङ्खपालाय० ॥ १४४ ॥ महापद्माय० ॥ १४५ ॥ कम्बलाय० ॥ १४६ ॥ कर्कोटकाय० ॥ १४७ ॥ इत्यष्टनागहोमः। इति सप्तमावरणम्। इति रुद्रयन्त्रदेवताहोमः।

यन्त्र के आवरण के देवताओं का होम—रुद्रयन्त्र के आवरणदेवताओं के होममन्त्र मूल में दिये गये हैं। कुल सात आवरणों के 'ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा०' इत्यादि १४७ (एक सौ सैंतालीस) मन्त्रों द्वारा हवन करे।

एवं होमं कृत्वा स्विष्टकृदादिप्रायश्चित्तहोमान्तं समाप्य इन्द्रादिदिक्पालेभ्यो नवग्रहेभ्यः क्षेत्रपालादिभ्यश्च माषभक्तबलींस्तत्तन्मन्त्रैर्दद्यात्। ततः पूर्णाहुतिहोमः—

घृतकुम्भवसोर्धारां पातयेदनलोपरि। औदुम्बरीमथार्द्रां च ऋज्वीं कोटरवर्जिताम्॥
बाहुमात्रां स्रुचं कृत्वा ततः स्तम्भद्वयोपरि। घृतधारां तथा चाज्यमग्रेरुपरि पातयेत्॥
श्रावयेत्सूक्तमाग्नेयं वैष्णवं रौद्रमैन्दवम्। महावैश्वानरं साम ज्येष्ठसाम च पाठयेत्॥

इति मात्स्योक्तः पूर्णाहुतिहोमः।

फिर स्विष्टकृत् होम तथा प्रायश्चित्त होम करे। तत्पश्चात् इन्द्रादि दश दिक्पालों, नवग्रहों, क्षेत्रपालों, योगिनियों, वास्तुदेवताओं आदि को बलि प्रदान करे। बलि में उड़द एवं भात का प्रयोग उन-उन दिक्पालादि देवों के मन्त्रों से करे। तत्पश्चात् पूर्णाहुति होम करे। मत्स्यपुराण के अनुसार घृत के कुम्भ (कलश) से घी की वसुधारा होमकुण्ड के ऊपर छोड़नी चाहिये। इसके लिये गूलर की गीली तथा सूखी कोटररहित बाहुमात्र 'स्रुच' बनवाकर फिर दो स्तम्भों के ऊपर साधकर उससे घृत की धारा तथा आज्य को अग्नि के ऊपर डालना चाहिये। इस कार्य में आग्नेय सूक्त, वैष्णवसूक्त, रौद्रसूक्त, ऐन्द्रसूक्त, महावैश्वानर साम तथा ज्येष्ठ साम का पाठ करना चाहिये। यह मत्स्यपुराण के अनुसार वसोर्धारा की विधि है।

अत्र चतुर्गृहीताज्येन समुद्रादूर्मीत्यादिमन्त्रैर्मूलमन्त्रेण च वाजश्चमे इत्यनुवाकैश्च सततां वसोर्द्धारां जुहुयात्। एवं पूर्णाहुतिं वसोर्धारां च हुत्वा नमस्ते रुद्र इत्यादिभिः रुद्रं स्तुत्वा प्रणीताविमोकान्तं कर्म्मशेषं समाप्य आचार्यादिभ्यो दक्षिणां दत्त्वा जपहोमश्रेयो गृह्णीयात्। तत आचार्यादयो रुद्रग्रहकलशोदकेन यजमानस्याभिषेकं कुर्युः। ततो यजमानो ग्रहाणां रुद्रस्य चोत्तरपूजां महानीराजनं च कृत्वा त्रिः परिक्रम्य साष्टाङ्गं प्रणम्य 'ॐ कृतेनानेन ब्राह्मणद्वारा अमुकरुद्रजपेन श्रीसदाशिवमहारुद्रः प्रीयतामि'ति पठित्वा देवदक्षिणभागे जलमुत्सृजेत्। ततो देवाभिमुखः कृताञ्जलिपुटः सन्—

जपन्यासार्चनं होमं यत्कृतं तु मयाद्य वै। न्यूनातिदोषरहितं कृतं कर्म मया प्रभो॥ १॥
भवत्वेतत्कृपासिन्धो क्षमस्व च नमोऽस्तु ते। पूजान्यासादिकं देव कृतं यत्त्वदनुग्रहात्॥ २॥
तेन मत्कर्मणा रुद्र प्रीतो भव वरप्रदः। नमः शिवाय शान्ताय सगणायादिहेतवे।
निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वर॥ ३॥
न्यूनातिरिक्तं तत्पूर्णं प्रसादादस्तु शङ्कर। एतत्कृतेन देवेश सदा मे वरदो भव॥ ४॥

इति देवं क्षमाप्य विसृज्य प्रतिमादिकमाचार्यादिभ्यो दत्त्वाग्निं सम्पूज्य गच्छगच्छेति विसृजेत्। ततो यथाशक्तिब्राह्मणान् सम्भोजयित्वा यस्यस्मृत्या० इत्यादि जपित्वा कर्म्मसम्पूर्णतां वाचयित्वा कर्मेश्वरार्पणं कृत्वा सुहृद्युक्तो भुञ्जीत। इति रुद्रहोमपद्धतिः।

परन्तु इस अनुष्ठान में तो चतुर्गृहीत आज्य से 'समुद्रादूर्मि०' इत्यादि मन्त्रों से तथा 'वाजश्च मे' इत्यादि अनुवाक से वसुधारा करनी चाहिये। वसोर्धारा मन्त्रों के उच्चारण होने तथा पूर्ण आज्य का होम होने-पर्यन्त सतत् करते रहना चाहिये। इस प्रकार पूर्णाहुति तथा वसोर्धारा होम करके 'नमस्ते रुद्रमन्यव उतोतइषवे नमः०' इत्यादि मन्त्रों द्वारा रुद्र की स्तुति करके प्रणीता विमोकादि कर्म समाप्त करके आचार्यादि ऋत्विज मिलकर 'रुद्रकलश' के जल से यजमान का अभिषेक करें। फिर यजमान रुद्र की उत्तरपूजा तथा महानीराजन करके तीन परिक्रमा कर साष्टाङ्ग प्रणाम करे। फिर 'ॐ कृतेनानेन ब्राह्मणद्वारा अमुकरुद्रजपेन श्रीसदाशिवमहारुद्रः प्रीयताम्' यह पढ़कर देव (रुद्र = शिव) के दक्षिण भाग में जल छोड़े। फिर देव की ओर मुख करके हाथ जोड़कर मूल में लिखित 'जपन्यासार्चनं होमं' इत्यादि चार श्लोकों को पढ़कर क्षमा माँगकर देवमूर्ति तथा यन्त्रादि को आचार्यादि को दान कर पूजन कर 'गच्छ गच्छ०' इत्यादि मन्त्र से अग्नि एवं देवताओं का विसर्जन कर यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराकर 'यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या०' इत्यादि जप कर कर्म की सम्पूर्णता का वाचन कर उसे ईश्वर को अर्पित कर यजमान स्वयं तथा मित्रादि के साथ भोजन करे।

कामनाभेदेन रुद्रहोमद्रव्याणि

लिङ्गपुराणे—

रुद्राध्यायेन विधिना घृतेन नियतः क्रमात्। सघृतेन तिलेनैव कमलेन विशेषतः॥

दूर्वया घृतगोक्षीरमिश्रया मधुना तथा। चरुणा सघृतेनैव केवलं पयसाथ वा॥
यस्तु जुहुयात्कालमृत्योः प्रतीकारः प्रकीर्तितः॥

कामनाभेद से रुद्रहोम के द्रव्यों का कथन—लिङ्गपुराण में कहा गया है—रुद्राध्याय की विधि से तिल, घृत एवं कमल से अथवा दूर्वा, घृत एवं गोदुग्ध के मिश्रण से तथा मधु से अथवा चरु, घृत से अथवा केवल गोदुग्ध से जो होम करता है, उसकी अकालमृत्यु दूर हो जाती है।

हेमाद्रौ—

पापक्षयेऽभिचारे च तथा व्याधिविमोचने। पलाशसमिधः कार्या नान्यत्रोत्पातदर्शनात्॥
औदुम्बर्याश्च समिधो मध्वक्ताश्च तथाक्षताः। ग्राह्याश्चान्नाद्यकामेन श्रियै शान्त्यै च पायसम्॥
सर्वकामेन वा ग्राह्या आयुर्वृद्ध्यै तिलाः स्मृताः। घृताक्ता अथवा दूर्वास्तेजस्कामेन वै घृतम्॥
व्रीहयः पशुकामेन राष्ट्रकामेन वै यवाः। उपविश्य शुचौ देशे दूर्वास्तम्बे जपेद्यदि॥
जुहुयाच्छ्वेतपुष्पैर्वा स विश्वं कुरुते वशम्। स्पृष्ट्वाश्वत्थं जपेद्यस्तु रुद्रैकादशिनीं नरः॥
रोगाञ्ज्वरातिसारादीन्नाशयेदुल्बणानपि। होमः पलाशसमिधा कर्तव्यो मधुसंयुतः॥

हेमाद्रि में कहा गया है—पापक्षय के लिये तथा रोगनाश के लिये होम में पलाश की समिधाओं का उपयोग करना चाहिये। अन्य कार्यों में उत्पातकारक होने से पलाश की समिधा का प्रयोग नहीं करना चाहिये। गूलर की समिधाओं से तथा अक्षत को मधु मिलाकर अन्नादि की कामना से होम करना चाहिये, श्रीप्राप्ति तथा शान्ति की कामना, सभी कामनाओं की पूर्ति तथा आयुष्य-वृद्धि के लिये तिलों द्वारा होम करना चाहिये। जिन्हें घृत से आक्त कर लेना चाहिये। अथवा घृताक्त दूर्वा का होम करना चाहिये। तेज की प्राप्ति के लिये घी का होम करना चाहिये। पशुवृद्धि की कामना से व्रीहि (धान) आदि से होम करना चाहिये। राष्ट्र की कामना से यव से होम करना चाहिये। यदि पवित्र स्थान में बैठकर दूर्वास्तम्ब (उगी हुई घास) पर जप करे तथा श्वेत पुष्पों से होम करे तो विश्व को वश में कर लेता है। जो पीपल वृक्ष का स्पर्श करके रुद्रैकादशिनी का जप करता है, वह ज्वर, अतिसार आदि उल्बण रोगों को नष्ट करता है। उसे बाद में (जप के उपरान्त) पलाश की समिधाओं से हवन करना चाहिये॥ १-६॥

एकादशमहारुद्रान् परचक्रागमे पुनः। जपेदेकादशगुणान् होमस्तु विधिवत्स्मृतः॥
तिलैराज्येन संसिक्तैर्विधिवदभिवर्तयेत्। रुद्रैकादशिनी जाप्ये शतमेकोनमिष्यते॥
सहस्राश्च तथा रौद्रे नवत्येकोनया युतः। एवं त्रिगुणिता कार्या महारुद्रातिरुद्रयोः॥
वृष्टिकामेन वा योज्या हस्त्यश्वामयशान्तये। उद्भवेत्यद्भुतानां च ग्रहाणां तु विपर्यये॥
गृहग्रामादिशान्त्यै च तिलाश्चाज्येन संयुताः। होमान्ते सर्वकामानां कूष्माण्डैश्चापि वा जपः॥

यदि परचक्र का आगमन (दूसरे देश का अपने देश पर आक्रमण) हो तो एकादशगुणा रुद्रैकादशिनी का जप कर विधिपूर्वक होम करना चाहिये। घृतमिश्रित तिलों से विधिपूर्वक होम करके रुद्रैकादशिनी का ९९ अथवा ९९९ जप (राज्यप्राप्ति-हेतु) करना चाहिये। अथवा महारुद्र में इसका तिगुना होम करना चाहिये। वर्षा कराने के लिये, हाथी-घोड़ों आदि के रोगों की शान्ति के लिये, ग्रहों की शान्ति के लिये, उत्पातों की शान्ति के लिये, गृहशान्ति एवं ग्रामशान्ति के लिये तिल एवं घृत से होम करना चाहिये तथा होम के अन्त में सभी कार्यों की सिद्धि के लिये कूष्माण्ड होम तथा रुद्रजप करना चाहिये।

होतव्यमाज्यं विधिवन्महाव्याहृतिभिस्तथा। परिषिच्य ततो वह्निं तत्त्वायामेति चार्च्य च॥
अभिषेकं ततः कुर्यान्मन्त्रैस्त्वब्लिङ्गकैः शुचिः। आदावन्ते च सम्पूज्य पार्वतीसहितं शिवम्॥
लोकपालांश्च सम्पूज्य विधिवच्छिवसन्निधौ। गङ्गां दुर्गां च मन्त्रेण विधिवद्द्विरदाननम्॥
स्नपनोक्तविधानेन त्वरितेन नमस्कृतिः। तर्पयेद्विविधै रत्नैः पयसा पायसेन वा॥
प्रीयतां शम्भुरित्युक्त्वा भूमिदेवाञ्छुचिः शुचीन्। दत्त्वा तु दक्षिणां तेभ्यः प्रणिपत्य विसर्जयेत्॥
एवं कृते स भगवान्प्रीतः कामान्प्रयच्छति। अकामस्य फलं मुक्तिर्नात्र कार्या विचारणा॥
बौधायनोक्तमन्त्रोऽयं सर्वकामसमृद्धये॥

इति रुद्रहोमद्रव्याणि।

विधिपूर्वक महाव्याहृतियों के साथ आज्य का होम करके 'तत्त्वायामि ब्रह्मणा०' इत्यादि से परिषेचन तथा अग्नि का पूजन करे, फिर अभिषेक अलिङ्गक मन्त्रों से करे। आदि-अन्त में पार्वती-सहित शिव का पूजन करे। लोकपालों को भी शिव के समीप पूजे। गङ्गा एवं दुर्गा को तथा श्रीगणेश जी को भी उनके मन्त्रों से पूजे। स्नपन में कथित विधान से नमस्कार करे। रत्नों, दूध, खीर आदि के भोजन से भगवान् शङ्कर एवं ब्राह्मणों को 'प्रीयतां शम्भु' कहकर प्रसन्न करे। उनको दक्षिणा देकर प्रणाम करे। फिर देवताओं का विसर्जन करे। ऐसा करने से भगवान् शङ्कर प्रसन्न होकर सभी कामनाओं को पूर्ण करते हैं तथा जो निष्काम भाव से रुद्रजप, होम आदि कार्य करता है, उसकी मुक्ति होती है। इसमें सन्देह नहीं है। बौधायन में कथित मन्त्र का जप करे।

रुद्राभिषेकविधानम्

हेमाद्रौ महार्णवे च—सुमुहूर्ते कृतनित्यक्रियः धृतभस्मत्रिपुण्ड्ररुद्राक्षः पवित्रपाणिः शिवसमीपे तद्दक्षिणतः पश्चिमतो वा सन्मुखः स्वासने उदङ्मुख उपविश्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त-फलावाप्तये धर्मार्थकाममोक्षसिद्धिद्वारा सर्वपातकनिरासार्थं सर्वव्याधिनिवृत्तिपूर्वकसर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थं वा अमुककामना-सिद्ध्यर्थं च स्वयं [ब्राह्मणद्वारा वा] अमुकद्रव्येण नमस्ते रुद्र इत्यादि शतरुद्रियेण [वा षडङ्गरुद्रेण वा अमुकरूपादिरुद्रजपेन] सन्ततधारयाभिषेकं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्धये 'ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च०' इत्यादिस्मरणपूर्वकं गणपतिं सम्पूज्य स्मरणं वा कृत्वा पूर्वोक्तभूतशुद्ध्यादिश्रीकण्ठादिकलान्यासान्तं कुर्यात्। ततः याते रुद्र इत्यादि ३१ मन्त्रैः शिखाद्यस्त्रान्तमेकत्रिंशदङ्गन्यासं प्रथमम्॥ १॥ ततः ॐ नमो भगवते रुद्रायेति मन्त्राक्षरै-र्मूर्द्धादिपादान्तं दशाङ्गन्यासं द्वितीयम्॥ २॥ ततः सद्योजातादिभिः पादादिमूर्द्धान्तं पञ्चाङ्गन्यासं तृतीयम्॥ ३॥ मनोजूतिरित्यादि मन्त्रैर्गुह्यादिमस्तकान्तं पञ्चाङ्गन्यासं चतुर्थम्॥ ४॥ न्यासं च कृत्वा यज्जाग्रत इत्यादिषड्मन्त्रैर्हृदयं १ सहस्त्रशीर्षा इत्यादिषोडशभिः शिरः २ अद्भ्यः सम्भृत इत्यादिषड्भिः शिखां ३ आशुः शिशान इत्यादिसप्तदशभिः कवचम्॥ ४॥ विभ्राडिति षोडशभिर्नेत्रम्॥ ५॥ नमस्ते रुद्र इत्यादिषोडशभिरस्त्रं च विन्यसेत्॥ ६॥ इति पञ्चमं न्यासं कुर्यात्॥ ५॥

रुद्राभिषेक-विधान—हेमाद्रि तथा मन्त्रमहार्णव में कहा गया है कि शुभ मुहूर्त में नित्यक्रिया (शौच-स्नानादि) से निवृत्त होकर भस्म का त्रिपुण्ड्र तथा रुद्राक्ष लगाकर पवित्र होकर हाथों में पवित्री धारण करके शिव के समीप दक्षिण भाग में अथवा पश्चिम में अथवा सम्मुख (पूर्व में) अपने आसन पर उत्तर की ओर मुख करके बैठे तथा देश-काल का उच्चारण करके 'ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्तये धर्मार्थकाममोक्षसिद्धिद्वारा सर्वपातकनिरासार्थं सर्वव्याधिनिवृत्तिपूर्वकसर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थं वा अमुककामनासिद्ध्यर्थं श्रीभवानीशङ्करमृत्युञ्जय-

महारुद्रदेवताप्रीत्यर्थं च स्वयं (ब्राह्मणद्वारा वा) अमुकद्रव्येण नमस्तेरुद्र इत्यादिशतरुद्रियेण (वा षडङ्गरुद्रेण अमुकरूपादिरुद्रजपेन) सन्ततधारयाभिषेकं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके आदि में निर्विघ्नतासिद्धिहेतु 'ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च०' इत्यादि श्लोकों के उच्चारण के साथ श्रीगणपति का स्मरण करके पूर्व में कथित भूतशुद्धि आदि कर्म श्रीकण्ठादि कलान्यास-पर्यन्त करे। फिर 'यातेरुद्र०' इत्यादि ३१ मन्त्रों से शिखादि अस्त्रान्त तक इकतीस अङ्गन्यास करे। यह प्रथम न्यास होता है। फिर 'ॐ नमो भगवते रुद्राय०' इत्यादि मन्त्रों से गुह्य से लेकर मस्तक-पर्यन्त न्यास करे। यह द्वितीय न्यास है। फिर 'सद्योजातं प्रपद्ये०' इत्यादि मन्त्रों से पैरों से लेकर मूर्द्धा-पर्यन्त पञ्चाङ्ग न्यास करे। यह तीसरा न्यास होगा। पुनः 'मनोजूति०' इत्यादि मन्त्रों से गुह्यादि से लेकर मस्तक-पर्यन्त पञ्चाङ्ग न्यास करे। यह चौथा न्यास है। इन न्यासों को करके 'यज्जाग्रतो दैव०' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयन्यास (१), 'सहस्रशीर्षा०' इत्यादि सोलह ऋचाओं से शिरोन्यास (२), 'अद्भ्यः संभृतं पृथिव्यै रसाच्च०' इत्यादि छः मन्त्रों से शिखान्यास (३) करे, 'आशुः शिशानो०' इत्यादि सत्रह ऋचाओं से 'कवचाय हुं' करे (४), 'विभ्राड् बृहत्०' इत्यादि सोलह ऋचाओं से नेत्रत्रयाय वौषट् (५) करे तथा 'नमस्ते रुद्र०' इत्यादि सोलह ऋचाओं से 'अस्त्राय फट्' करे (६)। इस प्रकार इस पाँचवें प्रकार से न्यास को सम्पन्न करे।

एवं पञ्चन्यासं पूर्ववत् कृत्वा शातातपोक्तं षष्ठं षडङ्गन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ प्रजनने ब्रह्मतिष्ठतु॥ १॥ पादयोर्विष्णुस्तिष्ठतु॥ २॥ हस्तयोर्हरस्तिष्ठतु॥ ३॥ वाह्वोरिन्द्रस्तिष्ठतु॥ ४॥ जठरे अग्निस्तिष्ठतु॥ ५॥ हृदये शिवस्तिष्ठतु॥ ६॥ कण्ठे वसवस्तिष्ठन्तु॥ ७॥ वक्त्रे सरस्वती तिष्ठतु॥ ८॥ नासिकयोर्वायुस्तिष्ठतु॥ ९॥ नयनयोः सूर्याचन्द्रमसौ तिष्ठेताम्॥ १०॥ कर्णयोरश्विनौ देवौ तिष्ठेताम्॥ ११॥ ललाटे रुद्रास्तिष्ठन्तु॥ १२॥ मूर्ध्न्यादित्या-स्तिष्ठन्तु॥ १३॥ पृष्ठे पिनाकी तिष्ठतु॥ १४॥ पुरतः शूली तिष्ठतु॥ १५॥ पार्श्वयोः शिवाशङ्करौ तिष्ठेताम्॥ १६॥ सर्वतो वायुस्तिष्ठतु॥ १७॥ ततो बहिः सर्वतोऽग्निर्ज्वालामालापरिवृतस्तिष्ठतु॥ १८॥ सर्वेष्वङ्गेषु सर्वा देवतास्तिष्ठन्तु॥ १९॥ माऽरक्षन्तु अग्निर्वायु सूर्यश्चन्द्रमा दिश आपः पृथिव्यौषधिवनस्पतय इन्द्रः पर्जन्य ईशान आत्मा पुनर्नम अग्निर्मे वाचि श्रित इति यथालिङ्गमङ्गानि संस्पृशेत् इति न्यासषट्कं कृत्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य 'ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं०' इति ध्यात्वा लिङ्गपूजां कुर्यात्। तद्यथा—

आराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः। आराधयामि भक्त्या त्वां मां गृहाण महेश्वर॥ १॥

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे० इत्याराध्य ॐ आत्वावहन्तुहरयः सचेतसः श्वेतैरश्वैः सहकेतुमद्भिः। वाताजवैर्बलवद्भिर्मनोजवैरायाहि शीघ्रं मम हव्याय शर्वोम् ॐ सद्योजातं प्रपद्यामीत्यावाह्य॥ १॥ ॐ त्र्यम्बकं० सद्योजाताय वै नमो नमः इत्यासनम्॥ २॥ त्र्यम्बकं० भवे भवे नातिभवे भवस्य मामिति पाद्यम्॥ ३॥ ॐ त्र्यम्बकं० भवोद्भवाय नम इत्यर्घ्यम्॥ ४॥ ॐ त्र्यम्बकं० आपोहिष्ठामयो भुव इत्यादिमन्त्रत्रयेण स्नानम्॥ ५॥ देवैस्तु वन्दिता धेनुः सर्वपापप्रणाशिनी। तत्क्षीरस्नापितो देव नित्यं मे वरदो भव॥ ॐ त्र्यम्बकं० पयःस्नानम्॥ ६॥ कामतोऽकामतो वापि यन्मया दुष्कृतं कृतम्। तत्सर्वं विलयं यातु दधिस्नानेन भो शिव॥ १॥ त्र्यम्बकं० इति दधिस्नानम्॥ ७॥ रसानामुत्तमं त्वाज्यं देवानां च सदा प्रियम्। तेन त्वं स्नापितो देव निधिकान्तिप्रदो भव॥ ८॥ त्र्यम्बकं० इति घृतस्नानम्॥ ८॥ यस्य धारणमात्रेण तृप्तिं याति पितामहः। मधुना स्नापितो देव नित्यं शोकहरो भव॥ १॥ त्र्यम्बकं० मधुस्नानम्॥ ९॥ यमलोकभयत्रस्तः शरणं त्वां गतः शिवः। खण्डस्नानेन देवेश मां कुरुष्व सुखान्वितम्॥ १॥ ॐ त्र्यम्बकं० इति शर्करोदकस्नानम्॥ १०॥ यस्य दर्शनमात्रेण शुद्धिं प्राणाश्च जीवितम्। तेन चोत्तमतोयेन स्नातो देहि प्रियं ध्रुवम्॥ १॥ ॐ त्र्यम्बकं० इति शुद्धोदकस्नानम्॥ ११॥

अथाद्भिर्देवं तर्पयेत्। ॐ भवं देवं तर्पयामि। ॐ शर्वं देवं तर्पयामि। ॐ ईशानं देवं तर्पयामि। ॐ पशुपतिं देवं तर्पयामि। ॐ रुद्रं देवं तर्पयामि। ॐ भीमं देवं तर्पयामि। ॐ महान्तं देवं तर्पयामीति तर्पयित्वा तत ॐ त्र्यम्बकं० ज्येष्ठाय नमः। इत्याचमनीयम्॥ १२॥ ॐ त्र्यम्बकं० श्रेष्ठाय नमः इति मधुपर्कमाचमनं च॥ १३॥ सुगन्धं चन्दनं देव कुङ्कुमेन समन्वितम्। अर्चितोऽसि मया भक्त्या शिवलोकप्रदो भव॥ ॐ त्र्यम्बकं० इति गन्धम्॥ १४॥ अक्षय्यान्बन्धुपुत्रार्थान् कायं चैवाक्षिवाङ्मनः। अन्ते चैवाक्षयं लोकमक्षतैरर्चितः कुरु॥ ॐ त्र्यम्बकं० इत्यक्षतान्॥ १५॥ सन्तानः परिजातश्च ये चान्ये सुरपादपाः। तेषां पुष्पैर्मया देव पूजितः सुखदो भव॥ १॥ ॐ त्र्यम्बकं० कलविकरणाय नमः इति पुष्पाणि॥ १६॥ धूपोऽयं गृह्यतां देव सुन्दरो गन्धवाञ्छुचिः। ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च शुभां गतिम्॥ १॥ ॐ त्र्यम्बकं० सर्वभूतदमनाय नमः इति धूपम्॥ १७॥ शुद्धा शुक्लाम्बरा वर्तिराज्येन च समन्विता। दीपवर्तिप्रदानेन प्रीतः स्यादीश्वरो भव॥ १॥ ॐ त्र्यम्बकं० मनोन्मनाय नमः इति दीपम्॥ १८॥ सर्वमन्नप्रदानं च देवानां तु सदा प्रियम्। तेन चान्नप्रदानेन सुप्रीतो वरदो भव॥ ॐ त्र्यम्बकं० भवोद्भवाय नमः इति नैवेद्यम् आचमनं च॥ १९॥

पञ्च प्रकार के न्यासोपरान्त फिर शातातप स्मृति में कहा हुआ षडङ्ग न्यास करे। वह 'ॐ प्रजनने ब्रह्मतिष्ठतु' इत्यादि मूलपाठ में लिखित २० मन्त्रों से उन-उन अङ्गों को स्पर्श करते हुए इस छठे प्रकार के न्यास को करना चाहिये। फिर मानसोपचारों से शिव का पूजन कर 'ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं०' इत्यादि श्लोकों से ध्यान कर लिङ्गपूजा करे। पुनः 'आराधितो मनुष्यैस्त्वं०' इत्यादि मूल में लिखित श्लोक से आराधन कर 'ॐ आत्वावहन्तु हरयः' इत्यादि मूल में लिखित १९ मन्त्रों से आचमन-पर्यन्त उपचार करे।

अथाष्टभिर्मन्त्रैरष्टौ पुष्पाणि०। ॐ भवाय देवाय नमः पुष्पं समर्पयामि॥ १॥ ॐ शर्वाय देवाय०॥ २॥ ॐ ईशानाय देवाय०॥ ३॥ ॐ पशुपतये देवाय०॥ ४॥ ॐ रुद्राय देवाय०॥ ५॥ ॐ उग्राय देवाय०॥ ६॥ ॐ भीमाय देवाय०॥ ७॥ ॐ महते देवाय०॥ ८॥ इति पुष्पाणि समर्प्य। ॐ अघोरेभ्यो०१ तत्पुरुषाय०२ ईशानः सर्व०३ इति मन्त्रत्रयेणोपस्थाय नीराजनं कृत्वा पुष्पाञ्जलिं समर्प्य प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणमेत्। ततः शिवस्य मूर्ध्नि हिण्यादिकलशेन सन्ततां धारां मधुना सर्पिषा पयसा वेक्षुरसेन नारीकेलोदकेन चाम्ररसेन वा तदभावे उदकेन। ॐ नमस्तेरुद्रमन्यव० इत्येकादशानामनुवाकानामेकमेकं जपेत्सर्वेषां पारं पुनराराधयेत्। उत्तमाराधनेन तदेतद्विधानमुक्तम्। ततः अभिषेकान्ते ॐ अनेन रुद्राभिषेककर्मणा श्रीभवानीशङ्करमृत्युञ्जयमहारुद्रः प्रीयतामिति देवदक्षिणपार्श्वे जलमुत्सृजेत्। ॐ तत्सद्ब्रह्मा०। ततस्तेनाभिषिक्तोदकेन [अक्षिभ्यामित्यनुवाकेन] ॐ अक्षीभ्यान्तेनासिकाभ्यां-कर्णाभ्यां छुबुकादधि। यक्ष्मंशीर्षण्यंमस्तिष्कात्जिह्वायाविवृहामिते १ ग्रीवाभ्यस्तउष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो-अनूक्यादुयक्ष्मंदोषण्य। मुंमाभ्यांबाहुभ्यांविवृहामिते २ आंत्रेभ्यस्तेगुदाभ्योवनिष्ठोर्हृदयादधि। यक्ष्मंमतस्नाभ्यांयुक्नः प्लाशिभ्योविवृहामिते ३ ऊरुभ्यांतेअष्ठीवद्भ्यांपार्ष्णिभ्याम्प्रपदाभ्यांयक्ष्मंश्रोणिभ्यांभासदाद्भंससोविवृहामिते ४ मेहना-द्वनंकरणाल्लोमभ्यस्तेनखेभ्यः। यक्ष्मंसर्वस्मादात्मनस्तमिदंविवृहामिते ५ अंगादंगाल्लोम्नोलोम्नोजातंपर्वणिपर्वणि। यक्ष्मंसर्वस्मादात्मनस्तमिदं विवृहामिते॥६॥ इति ऋग्वेदीयानुवाकम्। वारुणैर्वा मन्त्रैः मस्तकाद्यपादान्तं संमृज्यात्। पापक्षयार्थी व्याधिविमोचनार्थी श्रीकामः पुष्टिकामो मोक्षार्थी च कुर्यादेवं कुर्वन् सिद्धिमाप्नोति। तत आचार्याय दक्षिणां ददाति दश गाः सवत्साः सुवर्णभूषिताः। वृषभैकादशस्तदलाभे एकां गां दद्यादित्याह भगवान् बौधायन। इति रुद्राभिषेकविधानम्।

फिर मूल में लिखित 'ॐ भवाय देवाय नमः पुष्पं समर्पयामि' इत्यादि आठ मन्त्रों से पुष्पों को चढ़ाये। फिर 'ॐ अघोरेभ्य०' इत्यादि तीन मन्त्रों से खड़े होकर नीराजन करके पुष्पाञ्जलि समर्पित करना चाहिये तथा

नीराजनोपरान्त प्रणाम करे। तीन प्रदक्षिणा करे। फिर शिव के मस्तक पर स्वर्णादि धातु के कलश से सतत जलधारा अथवा मधु अथवा घृत अथवा गोदुग्ध अथवा ईख का रस अथवा नारियल का पानी अथवा आम के रस या केवल जल से अभिषेक करना चाहिये। फिर 'ॐ नमस्ते रुद्र०' नामक एकादश मन्त्रों के अनुवाक को जप करके पुनः शिव का आराधन करे। उत्तम प्रकार के आराधन-हेतु यह आराधन कहा गया है।

फिर अभिषेक के अन्त में मूल में लिखित 'अक्षीभ्याम्०' इत्यादि अनुवाक के छः ऋग्वेदीय मन्त्रों से अथवा वारुण मन्त्रों से शिव का मस्तक से लेकर पाद-पर्यन्त मार्जन करे। पापक्षय की इच्छा वाला, रोग से मुक्ति चाहने वाला, लक्ष्मी चाहने वाला, पुष्टि चाहने वाला यदि इस आराधना को करता है तो उसे सफलता मिलती है। फिर आचार्य को दक्षिणा देकर दश गायें, जो कि बछड़े वाली हों तथा सुवर्णमण्डित हों, देना चाहिये तथा ग्यारह साँड़ भी दान करे। इसके अभाव में केवल एक ही गाय दे—ऐसा बौधायन का कथन है।

चण्डेश्वरमन्त्रपुरश्चरणम्

अथ चण्डेश्वरमन्त्रपुरश्चरणं शारदायाम्—मूलमन्त्रो यथा ॐ ध्वँ फट्। इति त्र्यक्षरो मन्त्रः। अस्य चण्डेश्वरमन्त्रस्य त्रिकऋषिरनुष्टुप्छन्दश्चण्डेश्वरो देवता सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे विनियोगः। ॐ त्रिकऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ चण्डेश्वरदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ दीप्त फट् हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ज्वल फट् शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ज्वालामालिनी फट् शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ फट् कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ हन फट् नेत्रत्रयाय वषट्॥ ५॥ ॐ सर्व्वज्वालिनी फट् इत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि।
ढक्कां त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रतमिन्दुचूडम्॥

एवं ध्यात्वा शिवपञ्चाक्षरोदिते पीठे मूलेन मूर्त्तिं प्रकल्प्य ॐ ध्वं चण्डेश्वराय नमः इति मन्त्रेण आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। षट्कोणे हृदयादिषडङ्गानि सम्पूज्य अष्टदले ब्राह्म्याद्यष्ट-मातृकाः सम्पूजयेत्। ततो भूपुरे इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवं चतुरावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तैश्चण्डेशं सम्पूज्य त्रिलक्षं मन्त्रं जपेत्।

चण्डेश्वर मन्त्र—'ॐ ध्वं फट्' यह मूल मन्त्र है। यह तीन अक्षरों का मन्त्र है। इस चण्डेश्वर मन्त्र के त्रिक ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, चण्डेश्वर देवता है तथा इसका विनियोग सभी प्रकार के इष्ट मनोरथों की सिद्धि के लिये है।

सर्वप्रथम मूल में लिखित तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ दीप्त फट् हृदयाय नमः' इन छः मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करके फिर 'चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं, रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि। ढक्कां त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रति चन्द्रचूडम्॥' इस श्लोक से ध्यान करे। ध्यान करने के पश्चात् पूर्व में शिवपञ्चाक्षर मन्त्र में कथित पीठ पर मूल मन्त्र से चण्डेश्वर की मूर्ति की कल्पना करके 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' इस मन्त्र से आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचारों से पूजा करके फिर आवरणपूजा करे। पीठ के षट्कोण में हृदय आदि छः अङ्गों को पूजकर अष्टदल में ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं का पूजन करे। फिर भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों, उसके बाहर उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करे। इस प्रकार चारो आवरणों की पूजा करके धूप, दीप से लेकर नीराजन-पर्यन्त चण्डेश्वर की पूजा करके तीन लाख मन्त्र का जप करे।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमं कुर्याद्दशांशतः। मधुरत्रयसंयुक्तैर्विशुद्धैस्तिलतण्डुलैः ॥
इति सिद्धे मनौ मन्त्री धनवाञ्जायतेऽचिरात्। तर्पयेन्मनुनानेन नित्यमष्टोत्तरं शतम्॥
श्रियं प्राप्नोति महतीं पुत्रमित्रसमन्वितः। प्रियङ्गुकुसुमैः फुल्लैस्तत्काष्ठज्वलितेऽनले॥
जुहुयादयुते मन्त्री पुरक्षोभः प्रजायते। साध्यवृक्षत्वचो लोणं पिष्ट्वा पिष्टसमन्वितम्॥
पुत्तलीं रुचिरां कृत्वा प्रतिष्ठाप्य समीरणम्। छित्त्वा छित्त्वा प्रजुहुयादष्टोत्तरशतं निशि॥
सप्ताहमेवं कुर्वीत साध्यो दासो भवेत्स्वयम्। शैवमन्त्रेषु निष्णातश्चण्डेश्वरमनुं भजेत्॥
सर्वान्कामानवाप्नोति परत्रेह च नन्दति।

इति चण्डेश्वरमन्त्रप्रयोगः।

चण्डेश्वर मन्त्र के जप का फल—चौंसठ लाख मन्त्र का जप करके उसके दशमांश का होम मधुरत्रय, तिल तथा तण्डुलों से करे तो मन्त्र सिद्ध हो जाता है। मन्त्र सिद्ध होने पर जापक व्यक्ति शीघ्र ही धनवान् हो जाता है। नित्य १०८ तर्पण भी इसी मन्त्र से करना चाहिये। इससे पुत्र, मित्रयुक्त लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। प्रियङ्गु के फूलों एवं उसके लकड़ी की समिधाओं से दश सहस्र होम करने पर पुर (शत्रु की राजधानी) में क्षोभ (खलबली) मच जाती है। साध्य वृक्ष (वरुण वृक्ष या कदम्ब वृक्ष) की छाल तथा नमक पीसकर उसकी पुत्तली बनाकर उसकी प्रतिष्ठा कर फिर उसको काट-काटकर रात में १०८ आहुति देने से एक सप्ताह में साध्य स्वयं ही दास हो जाता है। जो साधक शैव मन्त्रों में पारंगत हो जाय, उसे बाद में चण्डेश्वर मन्त्र भी सिद्ध करना चाहिये, इससे उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं तथा परलोक में सुख भोगता है।

त्वरितरुद्रमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

हेमाद्रिशान्तिसारशान्तिरत्नेषु—देवालयादिषु जपस्थानं प्रकल्प्य तत्र नित्यकर्मानन्तरं जपासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य भस्मत्रिपुण्ड्रं रुद्राक्षमालां च धारयित्वा मूलेनाचम्य तेनैव प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुककामनासिद्ध्यर्थं त्वरितरुद्रजपमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूर्वोक्तक्रमेण भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं श्रीकण्ठादिकलान्यासं च कृत्वा षोडशोपचारैः शिवपूजां विधाय रुद्रस्तवेन स्तुत्वा त्वरितरुद्रविधानन्यासादिकं कुर्यात्। तत्र मूलमन्त्रो यथा—ॐ यो रुद्रोऽग्नौ योऽप्सु य औषधीषु यो रुद्रो विश्वा भुवना विवेश तस्मै रुद्राय नमोस्तु॥ १॥ इत्येकत्रिंशद्वर्णो (३१) मन्त्रः। अस्य त्वरितरुद्रमन्त्रस्य अथर्वणऋषिः अनुष्टुप् छन्दः त्वरितरुद्रसंज्ञको देवता नमः इति बीजम् अस्तु इति शक्तिः त्वरितरुद्रप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः। [तत्रादौ मूलेन करशुद्धिं कृत्वा प्रणवं करतलयोर्विन्यसेत्] ॐ अथर्वर्षये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः गुह्ये॥ २॥ ॐ त्वरितरुद्रदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ नमः इति बीजाय नमः मुखे॥ ४॥ ॐ अस्तु शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः॥ ॐ यो रुद्र अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ अग्नौ तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ योप्सु मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ य ओषधीषु अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ यो रुद्रो विश्वा भुवना विवेश कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ तस्मै रुद्राय नमोऽस्तु करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिविन्यासः।

अथ पदन्यासः—ॐ यः नमः पादयोः॥ १॥ रुद्रः नमः जङ्घयोः॥ २॥ अग्नौ नमः जानुनोः॥ ३॥ यः नमः ऊर्वोः॥ ४॥ अप्सु नमः गुल्फयोः॥ ५॥ यः नमः मेढ्रे॥ ६॥ ओषधीषु नमः नाभौ॥ ७॥ यः नमः उदरे॥ ८॥ रुद्रः नमः हृदये॥ ९॥ विश्वा नमः कण्ठे॥ १०॥ भुवना नमः मुखे॥ ११॥ विवेश नमः नासिकायाम्॥ १२॥ तस्मै नमः नेत्रयोः॥ १३॥ रुद्राय नमः भ्रुवोः॥ १४॥ नमः नमः ललाटे॥ १५॥ अस्तु नमः शिरसि॥ १६॥

अथ वर्णन्यासः—ॐ यः शिरसि॥ १॥ रुद्रः ललाटे॥ २॥ अग्नौ नेत्रयोः॥ ३॥ यः कर्णयोः॥ ४॥ अप्सु नासिकायाम्॥ ५॥ यः मुखे॥ ६॥ ओषधीषु बाह्वोः॥ ७॥ यः हृदये॥ ८॥ रुद्रः नाभौ॥ ९॥ विश्वा गुह्ये॥ १०॥ भुवना अपाने॥ ११॥ विवेश ऊर्वोः॥ १२॥ तस्मै जान्वोः॥ १३॥ रुद्राय जङ्घयोः॥ १४॥ नमः गुल्फयोः॥ १५॥ अस्तु चरणयोः॥ १६॥

एवं पञ्च न्यासान्कृत्वा शुभदामुद्रां प्रदर्शयेत्। (अङ्गुल्यग्राणि मूले तु कृत्वाङ्गुष्ठेन पीडयेत्। सा मुद्रा शुभदा प्रोक्ता सैव शान्तिप्रदायिनी॥ १॥) मुद्रादर्शनमन्त्रः—ॐ एषतेरुद्रभागः सहस्वस्राम्बिकयातं जुषस्वस्वाहा। इति मन्त्रेण मुद्रां दर्शयित्वा ध्यानं कुर्य्यात्—

रुद्रं चतुर्भुजं देवं त्रिनेत्रं वरदाभयम्। दधानमूर्ध्वहस्ताभ्यां शूलं डमरुमेव च॥
अङ्कसंस्थामुमां पद्मे दधानां च करद्वये। आद्ये करद्वये कुम्भं मातुलुङ्गं च बिभ्रतीम्॥

अथवा—

चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं च शुद्धस्फटिकसन्निभम्। उग्रे कर्मणि चैवोग्रं मूर्तिं ध्यायेदुमापतिम्॥
द्विभुजं नागपाशं च शूलपाणिं जटाधरम्। ध्यात्वैवं शङ्करं पापान्मुच्यते मानसोद्भवात्॥

अथवा—

चतुर्भुजं त्रिनेत्रं च शुद्धस्फटिकसन्निभम्। अमृतेन च पूर्णौ द्वौ कलशौ हस्तयोर्द्वयोः॥
हस्तद्वयेन योगस्य कृतमुद्रं स्थिरासनम्। सर्वकामप्रदं शान्तं शङ्करं करुणाकरम्॥
उग्रकर्मणि चैवोग्रमूर्तिं ध्यायेदुमापतिम्। द्विभुजं नागपाशं च शूलपाणिं जटाधरम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य भेदपक्षे गन्धादिपूजनं कुर्यात् एवं पूजनं कृत्वा मूलमन्त्रं जपेत्। अस्य पुरश्चरणमयुतद्वयजपात्मकं कुर्यात्। प्रत्यहं शिवं पूजयेत्।

त्वरित रुद्रमन्त्र-पुरश्चरण प्रयोग—किसी देवालय इत्यादि में जपस्थान की व्यवस्था करके वहाँ नित्यकर्म के पश्चात् जप के आसन पर पूर्व की ओर अथवा उत्तर की ओर मुख कर बैठे तथा रुद्राक्ष की माला धारण करके मूल मन्त्र से आचमन तथा प्राणायाम कर देश-काल का उच्चारण कर 'अमुककामनासिद्ध्यर्थं त्वरितरुद्रजपमहं करिष्ये' कहकर सङ्कल्प करना चाहिये। फिर पूर्व में वर्णित विधि से भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृका, बहिर्मातृका न्यास, श्रीकण्ठादि कलान्यास आदि करके षोडशोपचार से शिवपूजन करके रुद्रस्तव से स्तुति करके त्वरित रुद्रविधान के न्यासादि करे।

मूल मन्त्र—'ॐ यो रुद्रोऽग्नौ योऽप्सु य ओषधीषु यो रुद्रा विश्वा भुवना विवेश तस्मै रुद्राय नमोऽस्तु (तैत्तरीय यजुर्वेद ५।५।९।९)' यह इकतीस अक्षरों का मन्त्र है।

इस त्वरित रुद्रमन्त्र के अथर्वा ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, त्वरित रुद्रसंज्ञक देवता तथा त्वरितरुद्र की प्रीति-हेतु जप में विनियोग होता है। इस प्रकार विनियोग करने के उपरान्त मूल मन्त्र से करशुद्धि करके प्रणव का न्यास करतलों में करने के पश्चात् 'ॐ अथर्वर्षये नमः शिरसि' इत्यादि ५ मूलोक्त मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ यो रुद्र अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। इन्हीं छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी करे। इसके बाद 'ॐ यः नमः पादयोः' इत्यादि सोलह मन्त्रों से पदन्यास करे। इसके अनन्तर 'ॐ यः शिरसि' इत्यादि १६ मन्त्रों से वर्णन्यास करना चाहिये। इस प्रकार पञ्चन्यासों को सम्पन्न करके शुभदा मुद्रा प्रदर्शित करनी चाहिये।

शुभदा मुद्रा—अङ्गुलियों के अग्रभाग को उनके मूल में लगाकर उनको अङ्गूठे से दबाने पर जो मुद्रा बनती है, वह शुभदा मुद्रा कही जाती है; यह शान्ति-प्रदायिनी होती है।

विमर्श—मुद्राएँ केवल अङ्गुलियों से ही प्रदर्शित नहीं होतीं; अपितु शरीर के विभिन्न अङ्गों से भी मुद्राओं को बनाकर प्रदर्शित किया जाता है। मुद्राप्रदर्शन से पापों का क्षय होता है तथा सभी देवताओं को उनकी विशेष मुद्राओं से अपने अनुकूल किया जा सकता है। कहा भी है—

योजनात् सर्वदेवानां द्रावणात् पापसंहतेः। तस्मात् मुद्रेति साख्याता सर्वकामार्थसाधनी॥

(वाचस्पत्यम्)

कामना-भेद से अलग-अलग अङ्गों से भी मुद्रा का प्रदर्शन किया जाता है। हेमाद्रि के अनुसार लक्ष्मी चाहने वाले को शिर से, तेज चाहने वाले को नेत्रों के द्वारा, अन्न की कामना से मुख द्वारा, रोगनाशहेतु ग्रीवा द्वारा, सुखाकांक्षी को हृदय से, ज्ञान के चाहने वाले को नाभि द्वारा, सन्तति की इच्छा में गुह्य द्वारा, पशु की चाहना के लिये जङ्घाओं (पिण्डलियों) द्वारा, ग्राम की चाहना वाले को अङ्ग से मुद्रा का प्रदर्शन करना चाहिये। वशीकरण के लिये वाम बाहु का प्रदर्शन करना चाहिये। पापक्षय, अभिचारकर्म अथवा व्याधि दूर करने के लिये शरीर के बाह्य भाग (पीठ से) मुद्रा का प्रदर्शन भगवान् शङ्कर के समक्ष करना चाहिये—

श्रीकामः शीर्ष्णि कुर्वीत तेजस्कामस्तु नेत्रयोः। मुखे त्वन्नाद्यकामस्तु ग्रीवायां रोगनाशनम्॥
हृदये सुखकामस्तु नाभौ ज्ञानप्रदं भवेत्। प्रजाकामस्तु गुह्ये वै पशुकामस्तु जङ्घयोः॥
जानुभ्यां ग्रामकामस्तु सर्वकामस्तु गुह्ययोः। वशीकरणकामस्तु वामबाहुं प्रदर्शयेत्॥
पापक्षयेऽभिचारे वा व्याधेरपगमे तथा। बहिः शरीरात् कुर्वीत शिवस्याग्रे तु संस्मरेत्॥

मुद्रादर्शन मन्त्र—'ॐ एष ते रुद्रभागः सहस्राम्बिकया जुषस्व स्वाहा' इस मन्त्र से मुद्रा का प्रदर्शन करे। फिर मूल में उल्लिखित चार ध्यानों में से किसी एक से ध्यान करना चाहिये—

प्रथम प्रकार का ध्यान—रुद्र चतुर्भुज देव हैं, जो तीन नेत्रों वाले, वरदायक तथा अभयदायक हैं। उनके ऊपरी हाथों में शूल तथा डमरू है एवं अधोहस्तों के द्वारा गोदी में बैठी उमा, जो कि कमलों से युक्त अवस्थित हैं, धारित हैं। उनके दोनों हाथों में कुम्भ तथा मातुलुङ्ग (नीबू) है।

द्वितीय प्रकार का ध्यान—चतुर्भुज, त्रिनेत्र, शुद्ध स्फटिक के समान कान्तिमान्, जो उग्रकर्मों में उग्र हैं, ऐसे उमापति का ध्यान करता हूँ। दो भुजाओं वाले नागपाश से युक्त जटाधर शङ्कर का मन से ध्यान करने पर साधक पापों से मुक्त हो जाता है।

तृतीय प्रकार का ध्यान—चतुर्भुज, त्रिनेत्र, शुद्ध स्फटिक-सदृश दोनों हाथों में अमृतपूर्ण कलशों से युक्त स्थिर आसन पर योगमुद्रा में विराजमान, सर्वकामप्रद, शान्त, करुणा करने वाले श्रीशङ्कर का ध्यान करता हूँ।

चतुर्थ प्रकार का ध्यान—उग्र कर्मों की सिद्धि-हेतु श्रीशङ्कर के उग्र स्वरूप का ध्यान करना चाहिये, जो कि द्विभुज, नागपाश से युक्त, शूल धारण किये तथा जटाधारी होते हैं।

इस प्रकार से ध्यान कर मानसोपचारों से शिवपूजन करना चाहिये। भेदानुसार उनका अलग-अलग प्रकार के गन्ध से पूजन करने के उपरान्त मूल मन्त्र का जप करना चाहिये।

इसके पुरश्चरण के लिये दो अयुत (बीस सहस्र) जप करना चाहिये। जपकाल में प्रतिदिन शिव का पूजन करते रहना चाहिये।

अध:शाय्येकभक्ताशी ब्रह्मचारी हविष्यभुक्। अयुते द्वे जपेत्पूर्वं प्रत्यहं पूजयेच्छिवम्॥
जुहुयात्तद्दशांशेन तद्दशांशेन तर्पणम्। मार्जनं तद्दशांशेन दशांशेन तु भोजयेत्॥
एवं कृते तु सिद्धिः स्यात्फलार्थं तु ततोजपेत्। पुरश्चरणमेवं तु कृत्वा सम्पूज्य शङ्करम्॥
जपेत्त्वरितरुद्रं तु सर्वकामसमृद्धये।

जपफल—जपकाल में भूमि पर शयन करे, एक समय भोजन करे, ब्रह्मचारी तथा हविष्यभोजी होकर रहे। प्रथम दो अयुत की सङ्ख्या में त्वरितरुद्र मन्त्र का जप करे तथा प्रतिदिन पूजन करता रहे। फिर जप के दशांश का हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। ऐसा करने से सफलता मिलती है अर्थात् मन्त्र सिद्ध हो जाता है। जब मन्त्र सिद्ध हो जाय तो सत्फल की प्राप्ति के लिये आगे जप करना चाहिये। इस प्रकार से पुरश्चरण करके शङ्कर को पूजकर त्वरित रुद्रमन्त्र का जप करने से सभी काम सफल होते हैं।

श्रीकामः शान्तिकामो वा जपेल्लक्षमतन्द्रितः॥
बिल्वसमिद्भिः श्रीकामः शान्तिकामःशमीमयैः। जुहुयादाज्यसम्मिश्रैस्तर्पणं मार्जनं तथा॥
जप्त्वा लक्षं तु पुत्रार्थी पायसंजुहुयात्ततः। वित्तार्थी श्रीफलैर्होममायुष्कामस्तु दूर्वया॥
तिलैराज्येन सम्मिश्रैस्तेजस्कामो घृतेन वै। व्रीहीभिः पशुकामस्तु राष्ट्रकामस्तु वै यवैः॥
पायसं सर्वकामेन होतव्यं शर्करान्वितम्। मध्वाक्तान्याम्रपत्राणि तीव्रज्वरविनाशिने॥

लक्ष्मी की कामना वाला, शान्ति चाहने वाला इस मन्त्र का सावधान होकर एक लाख की सङ्ख्या में जप करे। बिल्व की समिधाओं से श्रीकामी को तथा शमी (छेङ्कुर) की समिधा से शान्तिकामी को घृत-मिश्रित हवन, तर्पण, मार्जन करना चाहिये। पुत्र चाहने वाले को सिद्ध मन्त्र को एक लाख की सङ्ख्या में जप कर फिर पायस (खीर) से हवन करना चाहिये। धन चाहने वाले को बेलफलों से तथा आयुवृद्धि चाहने वाले को दूर्वा की समिधा के साथ तिल एवं घृत मिलाकर हवन करना चाहिये एवं तेजस्कामी को दूर्वा की समिधा एवं घृत से हवन करना चाहिये। पशुकामी को व्रीहि से तथा राष्ट्रकामी (राज्यप्राप्ति) को जौ से हवन करना चाहिये। समस्त कामनाओं की पूर्ति के लिये पायस का होम करना चाहिये। उस पायस में भी शर्करा मिलानी चाहिये। तीव्र ज्वर के विनाश के लिये आम के पत्तों को मधु में डुबोकर हवन करना चाहिये।

हिमभूतज्वरेणैव गुडूचीभिर्हुनेद्ध्रुवम्। सर्वरोगविनाशय सूर्यस्याभिमुखो जपेत्॥
अयुते द्वे जपे होमः कार्योऽर्कसमिधा शुभः। औदुम्बैररन्नकामस्तेजस्कामस्तु खादिरैः॥
अपामार्गसमिद्धोमाद्भूतबाधा विनश्यति। ग्रहबाधाविनाशाय जपेदश्वत्थसन्निधौ॥
लवणान्वितदध्यक्तस्तीक्ष्णाग्राश्वत्थसम्भवाः । हूयन्ते समिधः शुष्काः स्वाहान्ते मन्त्रमुच्चरेत्॥
दशपञ्चाहुतीर्हुत्वा गच्छगच्छेत्युदीरयेत्। यावद्धोमो बलिर्देयः पुरुषाहारसम्मितः॥
एवं कृते प्रमुच्येत पुमान् स्त्री वा महाग्रहात्।

शीतज्वर (पुराना मलेरिया) के लिये गिलोय की समिधा का हवन निश्चित लाभकारी होता है। सभी रोगों के नाश के लिये इस मन्त्र का जप सूर्य के सम्मुख करना चाहिये। दो अयुत जप में अर्क की समिधा से होम करना

चाहिये। अन्नकामी को गूलर की समिधा से एवं तेजस्कामी को खदिर की समिधा से हवन करना चाहिये। अपामार्ग की समिधाओं के द्वारा इस मन्त्र से किया गया हवन भूतबाधा का नाशक होता है। ग्रहबाधा के नाश के लिये पीपल वृक्ष के समीप इस त्वरित रुद्र मन्त्र का जप करना चाहिये। अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष के नोकदार सूखी समिधाओं को त्वरित रुद्रमन्त्र के अन्त में स्वाहा लगाकर समिधाओं में लवण तथा दही चुपड़कर प्रत्येक पन्द्रह आहुतियाँ देकर 'गच्छ गच्छ' कहना चाहिये। इस प्रकार होम की समाप्ति जब तक नहीं होती तब तक एक व्यक्ति के आहार की मात्रा में बलि देनी चाहिये (अथवा सम्पूर्ण होम के अन्त में बलि देनी चाहिये)। ऐसा करने से जिस पुरुष अथवा स्त्री को महाग्रह ने जकड़ लिया वह उस ग्रह (भूत-प्रेत-पिशाच आदि) की पकड़ से मुक्त हो जाता है।

यं जेतुमिच्छेत्पुरुषस्तत्स्थानाभिमुखो जपेत्॥

जुहुयाच्छतपत्राणि स दुष्टः क्षयमाप्नुयात्। लाजाहोमेन कन्यार्थी कन्यामाप्नोति रूपिणीम्॥
लाजाश्च मधुसम्मिश्राः श्वेतपुष्पाणि वापुनः। हूयन्ते हरिते देशे तस्य विश्ववशो भवेत्॥
वामाङ्गमुन्नतं कार्य्यं स्त्रीवशित्वे विचक्षणैः। हस्त्यश्वामात्यशान्त्यर्थं तिलैश्चाज्येन संयुतैः॥
होमस्थाने तु संस्थाप्य कुम्भमेकंजलान्वितम्। मन्त्रं जप्त्वाष्टसाहस्त्रं कुम्भे स्पृश्य प्रयत्नतः॥
अभिषेकं तु तेषां वै शालां प्रोक्ष्यप्रदक्षिणम्। ग्रहग्रामादिशान्तिस्तु सर्वैः कार्या तु पूर्ववत्॥
वास्तुपूजा प्रकर्तव्या प्राच्यां दिशि पदेशुभे। ईशानाय बलिः कार्यः पशूनां पतये तथा॥
एवं कृते पशूनां तु प्रजानां शान्तिमाप्नुयात्।

जिस व्यक्ति को जीतना हो, उसके निवास की ओर मुख करके मन्त्र-जप करना चाहिये। फिर शतपत्र का हवन करना चाहिये; वह दुष्ट व्यक्ति क्षमा माँग लेता है। लाजाओं का होम करने से स्त्री की चाहना करने वाले को रूपवती कुमारी प्राप्त होती है। जो मधुमिश्रित लाजा (धान की खील) से तथा श्वेत पुष्पों से होम करता है, उसके वशीभूत समस्त संसार हो जाता है। यह होम विजित प्रदेश में करना चाहिये। हाथी, घोड़ा, आमात्य आदि की शान्तिहेतु तिल एवं घृत से युक्त हवन करना चाहिये तथा होमस्थान में जलपूर्ण कलश स्थापित करना चाहिये। अठारह सहस्र मन्त्रों का जप उस कलश को स्पर्श करके करना चाहिये; फिर उन हाथी-घोड़ों आदि की शाला का प्रोक्षण (पोंछा) उस जल से प्रदक्षिणक्रम से करना चाहिये। इसी प्रकार से ग्रह एवं ग्राम आदि की शान्ति भी की जाती है। पूर्व दिशा में वास्तुपूजा करनी चाहिये। ईशान के लिये एवं पशुपति के लिये बलि देनी चाहिये। ऐसा करने से पशुओं एवं प्रजाओं की शान्ति होती है।

अद्भुतेषु च सर्वेषु निशायां ग्रामबाह्यतः॥

उपविश्य जपेद्रुद्रं त्वरितं बलिभिः सह। होमः पलाशसमिधैः कर्तव्यो घृतसंयुतैः॥
ईशानाय बलिः कार्य्यो यस्यां दिशितदद्भुतम्। तदाशापतये चैव पशूनां पतये तथा॥
वृष्टिकामो जपेल्लक्षं खिलैर्होमो घृतान्वितैः। बलिपूजा प्रकर्तव्या शिवस्य वरुणस्य च॥
सर्वस्मिन्नपि चैवार्थे त्वरितस्य जपोभवेत्। अयुतद्वयजाप्यं तु यावल्लक्षं ततोऽधिकम्॥
एवं कृते तु सिद्धिः स्यान्निष्कामः प्राप्नुयाच्छिवम्। ऐहिकामुष्मिकान् भोगान् भुक्त्वा सायुज्यमाप्नुयात्॥

इति श्रीत्वरितरुद्रमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

अद्भुत वस्तुओं के दर्शन होने पर उन उत्पातों की शान्ति के लिये रात्रि के समय ग्राम से बाहर बलि पदार्थ रखकर रुद्रजप (त्वरित रुद्र मन्त्र का जप) करना चाहिये। जप के उपरान्त पलाश की समिधाओं को घृत में डुबोकर होम करना चाहिये। जिस दिशा में वह अद्भुत उत्पात (धूमकेतु, उल्का आदि) दिखाई दे, उसी दिशा में ईशान के निमित्त बलि देनी चाहिये। साथ ही उस दिशा के स्वामी को तथा पशुपति को भी बलि देनी चाहिये। वर्षा कराने के लिये एक लाख त्वरित रुद्रमन्त्र का जप कराने के उपरान्त घृत से होम (पलाश की समिधा से) करना चाहिये तथा शिव एवं वरुण के लिये बलिपूजा देनी चाहिये। सभी अन्य कार्यों के लिये भी त्वरित रुद्र का जप दो अयुत (२०,०००) से लेकर एक लाख तक अथवा आवश्यकतानुसार अधिक भी कराना चाहिये। ऐसा करने से सफलता मिलती है तथा निष्काम व्यक्ति यदि इस जप एवं होम को करता है तो उसे शिव की प्राप्ति होती है। वह इस लोक में सुख भोगकर सायुज्य मुक्ति को प्राप्त होता है।

पार्थिवलिङ्गपूजनविधानम्

मन्त्रमहोदध्यादिषु—तत्रादौ प्रातर्नित्यकर्म्म समाप्य सुमुहूर्त्ते शिवालये पुण्यस्थाने वा गत्वा तत्र स्थानशुद्धिं सम्पाद्य स्वासने उदङ्मुख उपविश्य भस्मत्रिपुण्ड्ररुद्राक्षधारणं च कुर्यात्। ततः ॐ नमः शिवाय इत्यनेनाचम्य प्राणानायम्य गणपतिस्मरणं कृत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा मम श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्तये अमुककामनासिद्ध्यर्थं श्रीभवानीशङ्करप्रसन्नतार्थं पार्थिवलिङ्गपूजां करिष्ये' अथवा 'अमुककामोऽमुकसंख्यया एतावन्तं कालं पार्थिवलिङ्गानि स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा पूजयिष्ये, तदङ्गतया भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठां मातृकान्यासादिकर्म्म च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पृथ्वि त्वयेति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः। सुतलं छन्दः। कूर्म्मो देवता। आसनोपवेशने विनियोगः। 'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥ १॥' इति भूमिं प्रार्थ्य ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ आधारशक्त्यै नमः। ॐ विश्वशक्त्यै नमः। ॐ चिच्छक्त्यै नमः। ॐ मायाशक्त्यै नमः इति गन्धपुष्पै पूजयेत्। ततो मूलेन शिखां बद्ध्वा आचम्य स्वात्मदृष्ट्यावलोकनेन दिव्यान् विघ्नान् 'अस्त्राय फट्' इत्यभिमन्त्रितजलप्रक्षेपणान्तरिक्षस्थान्,

ॐ अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ १॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्। सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म्म समारभे॥ २॥

इति मन्त्राभ्यां वामपार्ष्णिघातत्रयेण भौमान्तरिक्षगान् विघ्नानुत्सारये। ततः ॐ सर्वभूतनिवारकाय शार्ङ्गाय सशरास्त्रराजाय सुदर्शनाय हुं फट् इति छोटिकाभिस्तालत्रयेण च दिग्बन्धं विधाय ॐ अस्त्राय फट् इति करशुद्धिं कृत्वा ॐ गुरुभ्यो नमः। ॐ परमगुरुभ्यो नमः। ॐ परात्परगुरुभ्यो नमः। ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। ॐ आचार्यगुरवे नमः। ॐ नमो महद्भ्यः इति नत्वा भूतशुद्धिं कुर्य्यात्।

शिवपार्थिवलिङ्गपूजन का विधान—सर्वप्रथम प्रातःकालीन नित्यकर्मों को समाप्त करके शुभ मुहूर्त में शिवालय अथवा पुण्यस्थान में जाकर वहाँ स्थान को शुद्ध करके अपने आसन पर पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख अवस्थित होकर भस्मत्रिपुण्ड्र एवं रुद्राक्ष धारण करने के उपरान्त 'ॐ नमः शिवाय' कहकर आचमन-प्राणायाम कर श्रीगणेश जी का स्मरण करे। फिर देश-काल का उल्लेख करते हुए 'अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकशर्मा (वर्मा / गुप्ता) मम श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्तये अमुककामनासिद्ध्यर्थं श्रीभवानीशङ्करप्रसन्नतार्थं पार्थिवलिङ्गपूजां करिष्ये' अथवा 'अमुककामोऽमुकसंख्यया एतावन्तं कालं पार्थिवलिङ्गानि स्वयं वा ब्राह्मणद्वारा पूजयिष्ये, तदङ्गतया भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठां मातृकान्यासादिकर्म च करिष्ये' इस प्रकार से सङ्कल्प करके मूल में लिखित विनियोग पढ़कर 'ॐ पृथ्वि त्वया०' इत्यादि मन्त्र से भूमि की प्रार्थना कर मूलोक्त 'ॐ पृथिव्यै नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से गन्ध एवं

पुष्पों द्वारा पृथ्वी की पूजा करे। फिर मूल मन्त्र से शिखा में गाँठ लगाकर अपनी आत्मदृष्टि से देखकर दिव्य विघ्नों का अपसारण करे। 'अस्त्राय फट्' कहकर जल छोड़े तथा 'ॐ अपसर्पन्तु ये भूताः ये भूता भूमिसंस्थिताः; ये भूता विघ्नकर्तारः ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ १॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा सर्वतोदिशम्। सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारम्भे॥ २॥' इन मन्त्रों के द्वारा समस्त भूतों के निवारक शार्ङ्ग सशस्त्र राजा सुदर्शन को 'हुं फट्' कहकर तीन बार चुटकी बजाकर दिग्बन्ध करके 'ॐ अस्त्राय फट्' कहकर शुद्धि करके मूल में लिखित 'ॐ गुरुभ्यो नमः' इत्यादि छः मन्त्रों को पढ़कर भूतशुद्धि करनी चाहिये।

अथ भूतशुद्धिः—हृदयस्थं प्रदीपकलिकाकारं जीवं ॐ हंसः सोहमिति मन्त्रेण ब्रह्माण्डस्थितसहस्रदल-पद्मान्तर्गतशिवेन संयोज्य 'ॐ लँहाँ सद्योजाताय निवृत्तिकलात्मने हुं फट्' इति पादादिजानुपर्य्यन्तं न्यसेत्॥ १॥ ॐ वँहीँ वामदेवाय प्रतिष्ठाकलात्मने हुं फट् इति जान्वादिनाभिपर्य्यन्तं०॥ २॥ ॐ रँ हूँ अघोराय विद्याकलात्मने हुं फट् इति नाभ्यादिहृदयान्तं०॥ ३॥ ॐ यँहैँ तत्पुरुषाय शान्तिकलात्मने हुं फट् इति हृदयादिभ्रूमध्यान्तं०॥ ४॥ ॐ हँ हौँ ईशानाय शान्त्यतीताय कलात्मने हुं फट् इति भ्रूमध्यादि ब्रह्मरन्ध्रान्तं च विन्यसेत्। एवं भूतानि सञ्चिन्त्य जन्मान्तरे दुःखप्रदं पापपुरुषमसद्वासनात्मकं वामकुक्षिस्थितं ॐ यँ इति वायुबीजं पूरके षोडशवारं जपित्वा विशोष्य ॐ रं इति वह्निबीजं कुम्भके चतुःषष्टिवारं जप्त्वा तं दहेत्। ततः ॐ यँ इति वायुबीजं रेचके द्वात्रिंशद्वारं जप्तेन तद्भस्म शरीराद्बहिर्निष्कास्य पुनः वँ इति षोडशधा सुधाबीजजप्तेन तद्भस्म सम्प्लाव्य लँ इति षोडशधा जप्तेन भूबीजेन घनीकृत्य कनकाण्डवत् विभाव्य नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावं ब्रह्मैवाहमिति भावयेत्। ततः ॐ हों ईशानाय नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ हें तत्पुरुषाय नमः मुखे॥ २॥ ॐ हुं अघोराय नमः हृदि॥ ३॥ ॐ हिं वामदेवाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ हं सद्योजाताय नमः पादयोः॥ ५॥ इति न्यसेत्। एवमुत्पन्ने देवात्मके देहे ब्रह्माण्डस्थितपरमात्मनः सकाशाज्जीवं हंसः सोहमिति हृदयमानीय स्वप्राणप्रतिष्ठां कुर्य्यात्। इति भूतशुद्धिः।

भूतशुद्धि इस प्रकार करे—अपने हृदय में प्रदीपकलिका के आकार के (ज्योतस्वरूप) जीव को 'ॐ हंसः सोहम्' इस मन्त्र से ब्रह्माण्ड-स्थित सहस्रदल पद्मान्तर्गत शिव से संयोजित कर 'ॐ लं हां सद्योजाताय निवृत्तिकालात्मने हुं फट्' इस मन्त्र से पैरों के घुटनों तक न्यास करे। फिर 'ॐ वं हीं वामदेवाय प्रतिष्ठाकलात्मने हुं फट्' इस मन्त्र से घुटनों से लेकर नाभिपर्यन्त न्यास करे। फिर 'ॐ रं हूं अघोराय विद्याकलात्मने हुं फट्' इस मन्त्र से नाभि से लेकर हृदय-पर्यन्त न्यास करे। फिर 'ॐ यं हैं तत्पुरुषाय शान्तिकलात्मने हुं फट्' इस मन्त्र से हृदय से लेकर भ्रूमध्य-पर्यन्त न्यास करे। फिर 'ॐ हूं हौं ईशानाय शान्त्यतीताय कलात्मने हुं फट्' इस मन्त्र से भ्रूमध्य से लेकर ब्रह्मरन्ध्र-पर्यन्त न्यास करे। इस प्रकार भूतों का चिन्तन कर जन्मान्तरों में दुःखप्रद असद्वासनात्मक वामकुक्षिस्थित पापपुरुष को 'ॐ यं' इस वायुबीज का पूरक (प्राणायाम) में बत्तीस बार जप करके उसकी भस्म को शरीर से बाहर निकालकर 'ॐ रं' इस अग्निबीज को कुम्भक प्राणायाम में चौंसठ बार जपकर उसको जला दे। फिर 'ॐ यं' इस वायुबीज को रेचक प्राणायाम की घनीभूत करके कनकाण्ड (सोने की अण्डे) की भाँति भावना करके 'मैं नित्य शुद्ध बुद्ध स्वभाव ब्रह्म हूँ' ऐसी भावना करे। तब 'ॐ हों ईशानाय नमः' कहकर शिर में, 'ॐ हें तत्पुरुषाय नमः' से मुख में, 'ॐ हुं अघोराय नमः' से हृदय में, 'ॐ हिं वामदेवाय नमः' से गुह्य (गुप्ताङ्ग) में एवं 'ॐ हं सद्योजाताय नमः' से पैरों में न्यास करे। इस प्रकार साधक का शरीर देवात्मक हो जाता है। तब उसमें ब्रह्माण्ड-स्थित परमात्मा के समीप जीव 'हंसः सोहं' इस मन्त्र के द्वारा हृदय में लाकर स्वयं की प्राणप्रतिष्ठा करे।

अथ स्वशरीरप्राणप्रतिष्ठा—अस्य प्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः। ऋग्यजुःसामानि च्छन्दांसि। प्राणशक्तिर्देवता। आँ बीजम्। ह्रीं शक्तिः। क्रौं कीलकम्। स्वशरीरप्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। 'ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि। ॐ ऋग्यजुःसामच्छन्दोभ्यो नमः मुखे। ॐ प्राणशक्त्यै देवतायै नमः हृदये। ॐ आँ बीजाय नमः गुह्ये। ॐ ह्रीं शक्त्यै नमः पादयोः। ॐ क्रौं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे' इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्राँआँअँकँखँगँघँङँआँआकाश-वायुतेजोजलपृथिव्यात्मने आँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रीँइँचँजँझँञँ ईंशब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं तर्जनीभ्यां नमः॥ ॐ ह्रूँऊँटँठँडँढँणँ ऊँ श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने मध्यमाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रैँऐँतँथँदँधँनँऐँ वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐँ अनामिकाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रौँऔँपँफँबँभँमँऔँ वचनादानगतिविसर्गानन्दात्मने औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ह्रः अँयँरँलँवँ शँषँसँहँळँक्षँअँमनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तज्ञानात्मने अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः। तत एवं हृदयादिन्यासं कुर्य्यात्। ॐ ह्राँअँकँ० १९ आँ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीँ इँचँ० १७ ईं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ह्रूँऊँटँ १७ ऊँ शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ह्रैँऐँतँ० १७ ऐं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ ह्रौँ औँपँ० १९ औँ नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ह्रः अँयँ० २४ अं अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः।

साधक द्वारा स्वयं के शरीर की प्राणप्रतिष्ठा—सर्वप्रथम मूल में लिखित 'अस्य प्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य०' इत्यादि वाक्य को पढ़कर स्वशरीर-प्राणप्रतिष्ठा के विनियोग का जल छोड़े। फिर ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर आगे लिखे मन्त्रों से क्रमशः अङ्गुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठिकाओं एवं करतलपृष्ठों के द्वारा नमस्कार करते हुए न्यास करे। इसी प्रकार से इन्हीं मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी क्रमशः 'हृदयाय नमः, शिरसे स्वाहा, शिखायै वषट्, कवचाय हुं, नेत्रत्रयाय वौषट् तथा अस्त्राय फट्' कहकर करना चाहिये।

प्राणशक्तिध्यानम्

अथ प्राणशक्तेर्ध्यानम्—

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढाकराब्जैः पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमणिगुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान्।
बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः॥ १॥

इति ध्यात्वा स्वहृदि करं निधाय ॐ आँह्रीँ क्रौँ यँरँलँवँशँषँसँहौंहंसः मम प्राणा इह प्राणाः॥ १॥ ॐ आँह्रींक्रौँ यँरँ० मम जीव इह स्थितः॥ २॥ ॐ आँह्रींक्रौँ यँ० मम सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥ ३॥ इति वारत्रयं पठित्वा पञ्चदशप्रणवावृत्तीः कृत्वा क्रमेण मम संस्कारा जाता इति भावयेत्। इति प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा ततः पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डोक्तमन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च कृत्वा पञ्चाक्षरोदितं श्रीकण्ठादि-कलान्यासं च कुर्य्यात्। एवं न्यासं कृत्वा सूर्य्यायार्घ्यं दत्त्वा 'ॐ सर्वाधारधरे देवि त्वद्रूपां मृत्तिकामिमाम्। ग्रहीष्यामि प्रसन्ना त्वं लिङ्गाय भव सुप्रभे॥' इति भूमिं प्रार्थ्य 'ॐ ह्रां पृथिव्यै नमः' इति षडर्णेनाभिमन्त्र्य 'उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। मृत्तिके त्वां च गृह्णामि प्रजया च धनेन च॥ ॐ हराय नमः' इति शुचिस्थानात् (पाषाण-वेणुकीटकेशास्थिवालुकादिदोषरहितामीशानकोणगताम्) मृदं शस्त्रेणोत्कीर्य सुस्निग्धां शुभ्रां मृदमानाय निःशर्करां कृत्वा प्रत्यहं पूजनाय संशुद्धे ताम्रादिपात्रे निदध्यात्। ततस्तां दृष्ट्यावलोकनेन संशोध्य ॐ (वँ) इति अमृत-बीजेनाभिमन्त्रितजलप्रक्षेपेण सम्पीड्य तेन पिण्डं कृत्वा तस्मात्पिण्डादल्पां मृदमादाय ॐ ह्रीं ग्लौं गं गणपतये ग्लौं गं ह्रीं इत्येकादशा११क्षरमन्त्रेण बालगणेश्वरं वराभयलसत्पाणिपद्मं निर्माय ततः 'ॐ महेश्वराय नमः' इति मनोहरं लिङ्गमङ्गुष्ठादिदशाङ्गुलान्तं सङ्घट्टनं विधाय एवमन्यान्यपि लिङ्गानि यथासङ्कल्पितानि कृत्वा अवशिष्टमृदा 'ॐ ॐ ऐं हुं क्षं क्लीं कुमाराय नमः' इति दशाक्षरमन्त्रेण षण्मुखं कुमारं च कृत्वा पङ्क्त्यन्ते स्थापयेत्।

तावत् पीठपूजा। पीठं जलेन प्रोक्ष्य तत्र पूर्वादिदिक्षु ॐ वामायै नमः॥ १॥ ॐ ज्येष्ठायै नमः॥ २॥ ॐ रौद्रयै नमः॥ ३॥ काल्यै नमः॥ ४॥ ॐ कलविकरण्यै नमः॥ ५॥ ॐ बलविकरण्यै नमः॥ ६॥ ॐ बलप्रमथिन्यै नमः॥ ७॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः॥ ८॥ (मध्ये) मनोन्मन्यै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः सम्पूज्य 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिना आसनं दत्त्वा तत्र स्वपुरतः 'ॐ शूलपाणये नमः' इति पीठमध्ये संस्थापयेत्। तत आचम्य प्राणानायम्य ॐ अस्य श्रीसदाशिवमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। श्रीसदाशिवो देवता। ॐ बीजम्। नमः शक्तिः। शिवाय कीलकं। मम साम्बसदाशिवप्रीत्यर्थे पार्थिवलिङ्गपूजने विनियोगः। ॐ वामदेवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सदाशिवदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ शिवाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ६॥ ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ नं तत्पुरुषाय नमो हृदये॥ १॥ ॐ मं अघोराय नमः पादयोः॥ २॥ ॐ शिं सद्योजाताय नमो गुह्ये॥ ३॥ ॐ वां वामदेवाय नमो मूर्ध्नि॥ ४॥ ॐ यं ईशानाय नमो मुखे॥ ५॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं नित्रनेत्रम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्।

प्राणशक्ति का ध्यान—रक्ताम्भोधि (लाल समुद्र) के ऊपर स्थित पोत में अरुण सरोज के ऊपर विराजमान, पाश, धनुष, इक्षूद्भव मणिगुण, अङ्कुश तथा पञ्चबाणों के साथ रक्तपूर्ण कपालयुक्त, त्रिनेत्र, पीनवक्षोरुद्रयुक्त, बालसूर्य के वर्ण वाली प्राणशक्ति परादेवी हमारे लिये सुख करने वाली हो—ऐसा ध्यान कर अपने हृदय पर हाथ लगाकर 'ॐ आं, ह्रीं, क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः मम प्राणा इह प्राणाः' इत्यादि मूल में लिखित तीन मन्त्रों को तीन बार पढ़कर पन्द्रह आवृत्ति प्रणव की करके मन में यह भावना करे कि क्रमशः मेरे संस्कार सम्पन्न हो गये हैं। इस प्रकार से प्राणप्रतिष्ठा करके फिर पूर्व में पद्धतिकाण्ड में वर्णित अन्तर्मातृका, बहिर्मातृका न्यास करके पञ्चाक्षर मन्त्र के अनुष्ठान में वर्णित श्रीकण्ठादि कलान्यास करे। फिर सूर्य को अर्घ्य दे तथा मूलोक्त 'ॐ सर्वाधारधरे०' इत्यादि मन्त्र से भूमि की प्रार्थना कर 'ॐ पृथिव्यै नमः' इस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित कर 'उद्धृतासि वराहेण०' इस मन्त्र के साथ 'ॐ हराय नमः' कहकर शुद्ध स्थान से मृदु मिट्टी लाकर छानकर प्रतिदिन के लिये ताम्रपात्र में पूजित कर रख ले तथा दृष्टि से शुद्ध कर 'वं' इस अमृतबीज से जल डालकर सान ले। उसका पिण्ड बना ले और उस पिण्ड में से थोड़ी मिट्टी लेकर 'ॐ ह्रीं ग्लौ० गं गणपतये ग्लौं गं ह्रीं' इस मन्त्र से ग्यारह बालगणपति बनाकर 'ॐ महेश्वराय नमः' कहकर सुन्दर लिङ्ग बना ले। इस प्रकार मिट्टी से सङ्कल्पित सङ्ख्या में लिङ्ग बनाने के पश्चात् जो मिट्टी बचे, उससे 'ॐ ॐ ऐं हुं क्षं, क्लीं कुमाराय नमः' इस दशाक्षर मन्त्र से स्वामि कार्तिकेय की छःमुखी मूर्ति बनाकर लिङ्गों की पङ्क्ति के अन्त में स्थापित करे। फिर मूल में लिखित मन्त्रों से वामादि ९ पीठशक्तियों की पूजा करे। तदनन्तर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः' कहकर पुष्पाञ्जलि द्वारा

आसन देकर पुनः मूल में लिखित मन्त्रों से विनियोग कर ऋष्यादि न्यास, करन्यास, हृदयादि षडङ्ग न्यास करके 'ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं०' इत्यादि श्लोक से श्री शिवजी का ध्यान कर मानसोपचारों से पूजा करे।

देवप्राणप्रतिष्ठा

अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि च्छन्दांसि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता। आं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। क्रौं कीलकम्। देवे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि॥ १॥ ॐ ऋग्यजुःसामच्छन्दोभ्यो नमो मुखे॥ २॥ ॐ प्राणाख्यदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ आं बीजाय नमो गुह्ये॥ ४॥ ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ क्रौं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे इति कृत्वा ॐ आँह्रींक्रौंयँरँलँ वँशँषँसँहँसः सोहं शिवस्य प्राणा इह प्राणाः॥ १॥ ॐ आँह्रीँ क्रौँ यँरँलँवँशँषँसँहँसः सोहं शिवस्य जीव इह स्थितः॥ २॥ आँह्रीँ क्रौँ यँरँलँवँशँषँसँहँसः सोहं शिवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुश्श्रोत्रत्वग्जिह्वाघ्राणपाणिपादपायूस्थानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥ ३॥ एवं प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा ध्यायेत्—

बिभ्रद्दोर्भिः कुठारं मृगमभयवरौ सुप्रसन्नो महेशः सर्वालङ्कारदीप्तः सरसिजनिलयो व्याघ्रचर्म्मात्तवासाः।
ध्येयो मुक्ताङ्गरागामृतरसकणिकाद्रिप्रभः पञ्चवक्त्रस्त्र्यक्षः कोटीरकोट्युच्चटितहिमरुचिः सर्वदा चन्द्रमौलिः॥

इति ध्यात्वा नमस्कारं कुर्यात्। तद्यथा—

नमोऽस्तु स्थाणुरूपाय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने। चतुर्मूर्तेश्च पुंछायाभासिताङ्गाय शम्भवे॥
सर्वज्ञज्ञानविज्ञानप्रदानैकमहात्मने। नमस्ते देवदेवेश सर्वभूतहितेरत॥
अनन्तकान्तिसम्पन्न अनन्तासनसंस्थित। अनन्तकान्तिसम्भोग परकान्त नमोऽस्तु ते॥
वज्ररूप महारूप सर्वरूपोत्तमोत्तम। पशुपाशार्णवासीन दृढव्रत नमोऽस्तु ते॥
स्वभावनिर्मलाकार सर्वोपाधिविनाशन। योगियोगिन्महायोग योगीश्वर नमोऽस्तु ते॥

इति नत्वा स्थापितं लिङ्गं स्पृशन् 'ॐ भूः पुरुषं साम्बसदाशिवमावाहयामि॥ १॥' इत्यावाह्य—

ॐ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ यावत्पूजावसानकम्। तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेऽस्मिन्सन्निधो भव॥ १॥

इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'ॐ ग्लौं गं गणपतये ग्लौं गं ह्रीं' इत्येकादशार्णमन्त्रेण गणपतिं सम्पूज्य ॐ ऐँ हुँ क्षुँ क्लीँ कुमाराय नमः' इति दशाक्षरमन्त्रेण स्कन्दं पूजयेत्॥ ३॥

देव की प्राणप्रतिष्ठा—मूल में लिखित 'अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः' इत्यादि से विनियोग का जल छोड़कर फिर आगे दिये छः मन्त्रों से क्रमशः शिर, मुख, हृदय, गुह्य, दोनों पैर तथा सर्वाङ्ग में नमः करके 'ॐ आँ ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हंसः सोहं प्राणा इह प्राणाः।' इत्यादि तीन मन्त्रों से देव (शिव) की प्राणप्रतिष्ठा करके ध्यान करे ध्यान के लिये 'बिभ्रद्दोर्भिः कुठारं०' इत्यादि श्लोक का प्रयोग करे। फिर 'नमोस्तु स्थाणुरूपाय०' इत्यादि पाँच श्लोकों से नमस्कार करना चाहिये। नमस्कार के उपरान्त लिङ्ग का स्पर्श करके 'ॐ भूः पुरुषं साम्बसदाशिवं आवाहयामि०' इत्यादि तीन मन्त्रों से आवाहन कर 'ॐ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ०' इत्यादि एक श्लोक से पुष्पाञ्जलि दे। फिर 'ॐ ह्रीं ग्लौं गं गणपतये ग्लौं गं ह्रीं' इस ग्यारह अक्षर के मन्त्र से गणपति को पूजकर 'ॐ ऐं हुं क्षुं क्लीं कुमाराय नमः' इस दश अक्षर के मन्त्र से स्कन्द (स्वामी कार्तिकेय) की पूजा करनी चाहिये।

शिवपूजनम्

अथ शिवपूजनम्; तत्रादौ ध्यानम्—

दक्षाङ्कस्थं गणपतिमुखं प्रामृशन्दक्षदोष्णा वामोरुस्थां नगपतनयाङ्के गुहं चापरेण।
इष्टाभीती परकरयुगे धारयन्निन्दुकान्तिरव्यादस्मांस्त्रिभुवननतो नीलकण्ठस्त्रिनेत्रः॥

एवं ध्यात्वा—ॐ नमोऽस्तुनीलग्रीवायसहस्राक्षायमीढुषेअथोयेऽअस्यसत्त्वानोहंतेभ्योकरन्नमः॥१॥ ॐ श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः पाद्यं समर्पयामि इति पाद्यं दद्यात्॥१॥ ॐ गायत्रीत्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पंङ्क्त्यासह। बृहत्युष्णिहाककुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा॥२॥ ॐ श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः अर्घ्यं समर्पयामि इत्यर्घ्यम्॥२॥ ॐ त्र्यम्बकंयजामहेसुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥३॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः आचमनं समर्पयामि इत्याचमनम्॥३॥ ॐ मधुव्वाताऽऋतायते० इति मधुपर्कम्॥४॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः इत्याचमनीयम्॥५॥ ॐ व्वरुणस्योत्तंभनमसि व्वरुणस्यस्कंभसर्ज्जनीस्थोव्वरुणस्यऋतसदन्यसिव्वरुणस्यऽऋतसदनमसिव्वरुणस्यऋतसदनमासीद॥६॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः जलस्नानं समर्पयामि इति जलस्नानम्॥६॥ ॐ पयः पृथिव्यांपयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीःप्रदिशः सन्तुमह्यम्॥७॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः पयःस्नानं समर्पयामि इति पयःस्नानम्॥७॥ ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषंजिष्णोरश्वस्यव्वाजिनः। सुरभिनोमुखाकरत्प्राणआयूंषितारिषत्॥८॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः दधिस्नानं समर्पयामि दधिस्नानं, पुनर्जलस्नानम्॥८॥ ॐ घृतंघृतपावानःपिबतव्वसांव्वसापावानःपिबतान्तरिक्षस्यहविरसिस्वाहादिशःप्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यःस्वाहा॥९॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः घृतस्नानं समर्पयामि इति घृतस्नानं, पुनर्जलस्नानम्॥९॥ ॐ मधुव्वाताऽऋतायतेमधुक्षरन्तिसिन्धवःमाध्वीर्न्नःसन्त्वोषधीःमधुनक्तमुतोषसोमधुमत्पार्थिवंरजः मधुद्यौरस्तुनःपितामधुमान्नोव्वनस्पतिर्म्मधुमाँऽ२अस्तुसूर्यःमाध्वीर्गावोभवन्तुनः॥१०॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः मधुस्नानं समर्पयामि इति मधुस्नानं पुनर्जलस्नानम्॥१०॥ ॐ अपांरसमुद्वयसंसूर्य्येसन्तंसमाहितम्। अपांरसस्ययोरसस्तंवोगृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्वाजुष्टंगृह्णाम्येषतेयोनिरिन्द्रायत्वाजुष्टतमम्॥११॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः शर्करोदकस्नानं समर्पयामि इति शर्करोदकस्नानं पुनर्जलस्नानम्॥११॥ ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः। सरस्वतीतु पञ्चधासोदेशेऽभवत्सरित्॥१२॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि इति पञ्चामृतस्नानम्॥१२॥ ॐ शुद्धवालःसर्वशुद्धवालोमणिवालस्तऽआश्विनाःश्येतःश्येताक्षोरुणस्तेरुद्रायपशुपतयेकर्णायामाऽअवलिप्तारौद्रानभोरूपाःपार्ज्जन्याः॥१३॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि इति शुद्धोदकस्नानम्॥१३॥ ततः स्नानान्ते ॐ नमोरुद्र० इति षोडशभिर्ऋग्भिः अभिषेकं कुर्यात्। ततः ॐ प्रमुञ्चधन्वनस्त्वमुभयोरात्न्योर्ज्याम्। याश्चतेहस्तऽइषवःपराताभगवोव्वप॥१४॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः वस्त्रं कौपीनं समर्पयामि इति वस्त्रकौपीनम्॥१४॥ ॐ विज्यंधनुःकपर्दिनोव्विशल्योबाणवाँउत। अनेशन्नस्ययाऽइषवआभुरस्यनिषंगधिः॥१५॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः आभरणं समर्पयामि इत्याभरणम्॥१५॥ ॐ ब्रह्मजज्ञानंप्रथमंपुरस्ताद्विसीमतःसुरुचोव्वेनऽआवःसबुध्न्या उपमाऽअस्यविष्ठाःसतश्चयोनिमसतश्चव्विवः॥१६॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि इति यज्ञोपवीतम्॥१६॥ आचमनं दद्यात्॥ ॐ नमःश्वभ्यःश्वपतिभ्यश्चवोनमोनमोभवायचरुद्रायचनमःशर्वायचपशुपतयेचनमोनीलग्रीवायचशितिकण्ठायचनमःकपर्दिने॥१७॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः गन्धं समर्पयामि इति गन्धम्॥१७॥ नमः शम्भवायचमयोभवायचनमःशङ्करायचमयस्करायचनमःशिवायचशिवतरायच॥१८॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः अक्षतान् समर्पयामि इत्यक्षताः॥१८॥ नमःपार्य्यायचावार्य्यायचनमःप्रतरणायचोत्तरणायचनमस्तीर्थ्यायचकूल्यायचनमःशष्प्यायचफेन्यायचनमः॥१९॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः पुष्पं समर्पयामि इति पुष्पाणि॥१९॥ ॐ नमोबिल्मिनेचकवचिनेचनमोवर्म्मिणेचवरूथिनेचनमः। श्रुतायचश्रुतसेनायचनमोदुन्दुभ्याय चाहनन्यायचनमोधृष्णवे॥२०॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः बिल्वपत्रं समर्पयामि इति बिल्वपत्राणि॥२०॥ ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषःपरुषस्परि। एवानोदूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेन च॥२१॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः दूर्वां समर्पयामि इति दूर्वाम्॥२१॥ एवं पुष्पान्तपूजां कृत्वा आवरणार्चनं कुर्यात्।

शिवपूजाविधि—'दक्षाङ्कस्थं गणपतिमुखं' इत्यादि श्लोक से सर्वप्रथम भगवान् शिव का ध्यान करे। श्लोक का भावार्थ निम्न प्रकार है—'जो अपने दाहिने अङ्क (गोद) में स्थित गणपति के मूल को दाहिने हाथ से सहला रहे हैं, जिनके वाम ऊरु पर स्थित पार्वती जी की गोद में श्री कार्तिकेय बैठे हैं, उन्हें अपने अपरहस्त (वामहस्त) से दुलार रहे हैं। अपने अन्य दो हाथों में इष्ट (वरदमुद्रा) तथा अभय मुद्रा धारण किये हैं तथा अपने चन्द्रमा के समान धवल कान्ति के शरीर से त्रिभुवन को जगमगा रहे हैं, वे नीलकण्ठ तथा त्रिनेत्र हैं।'

इस प्रकार ध्यान करके 'नमोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राय०' इत्यादि मन्त्र से पाद्य प्रदान करे। फिर 'गायत्रीत्रिष्टुप्०' इत्यादि मन्त्र द्वारा अर्घ्य प्रदान करे। फिर 'त्र्यम्बकं यजामहे०' इत्यादि से आचमन दे। फिर 'ॐ मधुव्वाता ऋतायते०' इत्यादि से मधुपर्क दे। पुनः 'ॐ साम्बसदाशिवाय नमः' कहकर आचमन कराये। फिर 'ॐ वरुणस्य स्तम्भनमसि०' इत्यादि से जलस्नान कराये। फिर 'ॐ पयः पृथिव्यां०' इत्यादि से दुग्धस्नान कराये। फिर 'ॐ दधिक्रब्णो०' इत्यादि से दधिस्नान तथा पुनः जल से स्नान कराये। फिर 'ॐ घृतं घृतपावानः०' इत्यादि से घृतस्नान कराकर पुनः जलस्नान कराये। फिर 'ॐ मधुव्वाता०' इत्यादि से मधुस्नान कराकर पुनः जलस्नान कराये। फिर 'ॐ अपाꣳ रसमुद्वयꣳ०' इत्यादि से शर्करोदक स्नान कराकर पुनर्जलस्नान कराये। फिर 'ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती०' इत्यादि मन्त्र से पञ्चामृत स्नान कराये। फिर 'शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो०' इत्यादि से शुद्धोदक स्नान समर्पित करे। फिर शुद्धोदक स्नान के अन्त में 'ॐ नमस्ते रुद्र०' इत्यादि १६ ऋचाओं से अभिषेक कराये। फिर 'ॐ प्रमुञ्चधन्वन०' इत्यादि मन्त्र से कौपीन प्रदान करे॥ १४॥ फिर 'ॐ विज्ज्यन्धनुः कपर्दिनो०' से आभरण दे॥ १५॥ फिर 'ॐ ब्रह्मजज्ञानं०' इत्यादि मन्त्र से यज्ञोपवीत देकर फिर आचमन कराये। फिर 'ॐ नमः अश्वभ्यः अश्वपतिभ्यः०' मन्त्र से गन्ध दे। फिर 'नमः शम्भवाय०' से अक्षत, फिर 'नमः पार्याय०' से पुष्प, फिर 'नमोः बिल्मिने०' इत्यादि से बिल्वपत्र और अन्त में फिर 'काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती०' से दूर्वा चढ़ाये। इस प्रकार पूजोपरान्त फिर आवरणपूजा करे।

तद्यथा—ॐ अघोराय नमः॥ १॥ ॐ पशुपतये नमः॥ २॥ ॐ शिवाय नमः॥ ३॥ ॐ विरूपाय नमः॥ ४॥ ॐ विश्वरूपाय नमः॥ ५॥ ॐ भैरवाय नमः॥ ६॥ ॐ त्र्यम्बकाय नमः॥ ७॥ ॐ शूलपाणये नमः॥ ८॥ ॐ कपर्दिने नमः॥ ९॥ ॐ ईशानाय नमः॥ १०॥ ॐ महेशाय नमः॥ ११॥ इत्येकादशरुद्रान् सम्पूज्य ततः ॐ भगवत्यै नमः॥ १॥ ॐ उमादेव्यै नमः॥ २॥ ॐ शङ्करप्रियायै नमः॥ ३॥ ॐ पार्वत्यै नमः॥ ४॥ ॐ गौर्यै नमः॥ ५॥ ॐ कालिन्द्यै नमः॥ ६॥ ॐ काटिव्यै नमः॥ ७॥ ॐ विश्वधारिण्यै नमः॥ ८॥ ॐ विश्वेश्वर्यै नमः॥ ९॥ ॐ विश्वमात्रे नमः॥ १०॥ ॐ शिवायै नमः॥ ११॥ इति शक्तीः पूजयेत्। एवं सगणं रुद्रं सम्पूज्य वेद्यामष्टमूर्तीः अक्षतादिना पूजयेत्। तद्यथा प्राच्याम् ॐ शर्वाय क्षितिमूर्तये नमः॥ १॥ ईशान्याम् ॐ भवाय जलमूर्तये नमः॥ २॥ उदीच्याम् ॐ रुद्रायाग्निमूर्तये नमः॥ ३॥ वायव्याम् ॐ उग्राय वायुमूर्तये नमः॥ ४॥ प्रतीच्याम् ॐ भीमायाकाशमूर्तये नमः॥ ५॥ नैर्ऋत्याम् ॐ पशुपतये यजमानमूर्तये नमः॥ ६॥ दक्षिणस्याम् ॐ महादेवाय सोममूर्तये नमः॥ ७॥ आग्नेय्याम् ॐ ईशानाय सूर्यमूर्तये नमः॥ ८॥ इति सम्पूज्य प्रणालिकायां 'ह्रीं उमायै नमः' इति पूजयेत्। तद्बहिः पूर्वादिषु इन्द्रादिदशदिक्पालान् सम्पूजयेत्। इत्यावरणपूजा।

ततः ॐ नमः॑कपर्दिने॑ चव्व्यु॑प्तकेशायचुनमः॑सहस्राक्षाय॑च शतध॑न्वनेचुनमो॑गिरिशुया॑यचशिपिविष्टाय॑चुनमो॑-मीढुष्ट॑मायुचेषु॑मतेचुनमो॑ह्रुस्वाय॑॥२२॥ ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः धूपं समर्पयामि इति धूपम्॥२२॥ ॐ नमऽआशवे॑चाजिराय॑चुनमः॑शीघ्र्या॑यचुशीभ्याय॑चुनमुऽऊर्म्याय चावस्वुन्या॑यच् नमो॑नादेया॑यचुद्वीप्या॑यच॥२३॥ ॐ साङ्गाय साम्बशदाशिवाय नमः दीपं समर्पयामि इति दीपम्॥२३॥ ॐ नमो॑ज्येष्ठाय॑च कनिष्ठाय॑चुनमः॑पूर्वु-

जार्यचापरजार्यचनमौमध्यमार्यचापगल्भार्यचनमोजघन्यायचबुध्न्यायचनमःसोभ्याय॥२४॥ ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः नैवेद्यं समर्पयामि। इति नैवेद्यम्॥२४॥ ॐ त्र्यम्बकम्यजामहेसुगन्धिंपुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥२५॥ ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः आचमनीयं समर्पयामि॥२५॥ ॐ इमारुद्रायतवसेकपर्दिनेक्षयद्वीरायप्रभरामहेमतीः। यथाशमसद्द्विपदेचतुष्पदेविश्वंपुष्टङ्ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम्॥२६॥ ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः ताम्बूलम् समर्पयामि इति ताम्बूलम्॥२६॥ ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च० ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः ऋतुफलम् समर्पयामि इति ऋतुफलम्॥२७॥ ॐ हिरण्यगर्भःसमवर्त्तताग्रेभूतस्यजातःपतिरेकऽआसीत् सदाधारपृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषाविधेम॥२८॥ ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः दक्षिणां समर्पयामि। इति दक्षिणाम्॥२८॥ एवं सम्पूज्य साक्षतजलेन तर्पणं कार्य्यम्॥ ॐ भवं देवं तर्पयामि॥ १ ॥ ॐ शर्वं देवं तर्पयामि॥ २ ॥ ॐ ईशानं देवं तर्पयामि॥ ३ ॥ ॐ पशुपतिं देवं तर्पयामि॥ ४॥ ॐ उग्रं देवं तर्पयामि॥ ५ ॥ ॐ रुद्रं देवं तर्पयामि॥ ६ ॥ ॐ भीमं देवं तर्पयामि॥ ७॥ ॐ महान्तं देवं तर्पयामि॥ ८ ॥ ॐ भवस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ १॥ ॐ शर्वस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ २ ॥ ॐ ईशानस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ ३ ॥ ॐ पशुपतेर्देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ ४॥ ॐ उग्रस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ ५ ॥ ॐ रुद्रस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ ६ ॥ ॐ भीमस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ ७॥ ॐ महतो देवस्य पत्नीं तर्पयामि॥ ८ ॥ एवं तर्पणं कृत्वा कर्पूरगर्भिताभिरेकादशवर्तिकाभिः कर्पूरेण वा आरार्तिकं कुर्य्यात्॥

आवरण पूजा—मूल में लिखित 'ॐ अघोराय नमः' इत्यादि ११ (ग्यारह) मन्त्रों से आवरणरुद्रों का पूजन करे। फिर गणों-सहित रुद्र की पूजा करके वेदी पर शिव की अष्टमूर्तियों की पूजा अक्षत आदि से करे (साथ ही 'ॐ उमादेव्यै नमः' से ११ शक्तियों का पूजन करे)। इनके ८ मन्त्र मूल में लिखे हैं। फिर शिवजी की जलप्रणालिका (पनाली) में 'ॐ ह्रीं उग्रायै नमः' से पूजा करे। अन्त में उसके बाहर इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करनी चाहिये।

आवरण-पूजोपरान्त 'ॐ नमः कपर्दिने०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र से धूप प्रदान करे। फिर 'ॐ नमः आशवो०' इत्यादि से दीप प्रदान करे। फिर 'ॐ नमो ज्येष्ठ्याय' से नैवेद्य दे। फिर 'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे०' इत्यादि से आचमन कराये। फिर 'ॐ इमारुद्राय०' से ताम्बूल देकर 'ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च०' इत्यादि से ऋतुफल प्रदान करे। फिर 'हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे०' से दक्षिणा समर्पित करे।

तर्पण—फिर उपर्युक्त पूजनोपरान्त मूल में लिखे 'ॐ भवं देवं तर्पयामि०' इत्यादि आठ मन्त्रों से जल द्वारा तर्पण करना चाहिये। तदुपरान्त 'ॐ भवस्य देवस्य पत्नीं तर्पयामि' इत्यादि आठ मन्त्रों से रुद्रों की आठो पत्नियों का तर्पण करना चाहिये। फिर तर्पण के उपरान्त कर्पूर-गर्भित ग्यारह बत्तियों से अथवा केवल कपूर से आरार्त्तिक (आरती) करना चाहिये।

तत्र नीराजनम्—

ॐ कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि॥

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम्।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियं वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥

शान्तं पद्मासनस्थं शशधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षभागे वहन्तम्।
नागं पाशं च घण्टां डमरुकसहितं साङ्कुशं वामभागे नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि॥

सामान्य नीराजन (छोटी आरती)—'ॐ कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं०' इत्यादि श्लोकों से आरती करनी चाहिये।

द्वितीयं शिवनीराजनम्—

जय गङ्गाधर हर जय गिरिजाधीशा। त्वं मां पालय नित्यं कृपया जगदीशा॥
हर हर हर महादेव॥ १॥

कैलासे गिरिशिखरे कल्पद्रुमविपिने। गुञ्जति मधुकरपुञ्जे कुञ्जवने सुघने।
कोकिलकूजतखेलतहंसावनललिता । रचयित कलाकलापं नृत्यति मुदसहिता॥
हर हर हर महादेव॥ २॥

तस्मिन् ललितसुदेशे शाला मणिरचिता। तन्मध्ये हरनिकटे गौरी मुदसहिता॥
क्रीडा रचयति भूषारञ्जितनिजमीशम्। इन्द्रादिकसुरसेवित नामयते शीशम्॥
हर हर हर महादेव॥ ३॥

विबुधवधू बहु नृत्यति हृदये मुदसहिता। किन्नर गायन कुरुते सप्तस्वरसहिता॥
धिनकत थैथै धिनकत मृदङ्ग वादयते। क्वणक्वण ललिता वेणुं मधुरं नादयते॥
हर हर हर महादेव॥ ४॥

रुणरुण चरणे चरयति नूपुरमुज्ज्वलिता। चक्रावर्ते भ्रमयति कुरुते तां धिकताम्॥
तां तां लुपचुप तां तां वादयते। अङ्गुष्ठाङ्गुलिनादं लासक्तां कुरुते॥
हर हर हर महादेव॥ ५॥

कर्पूरद्युतिगौरं पञ्चाननसहितम्। त्रिनयनशशिधरमौलिं विषधरकण्ठयुतम्॥
सुन्दरजटाकलापं पावकयुतभालम्। डमरुत्रिशूलपिनाकं करधृतनृकपालम्॥
हर हर हर महादेव॥ ६॥

मुण्डै रचयति माला पन्नगमुपवीतम्। वामविभागे गिरिजारूपं अति ललितम्॥
सुन्दरसकलशरीरे कृतभस्माभरणम्। इति वृषभध्वजरूपं तापत्रयहरणम्॥
हर हर हर महादेव॥ ७॥

शङ्खनिनादं कृत्वा झल्लरि नादयते। नीराजयते ब्रह्मा वेदऋचां पठते॥
अतिमृदुचरणसरोजं हृदिकमले धृत्वा। अवलोकयति महेशं ईशं अभिनत्वा॥
हर हर हर महादेव॥ ८॥

ध्यानं आरतिसमये हृदये अति कृत्वा। रामस्त्रिजटानाथं ईशं अभिनत्वा॥
सङ्गितमेवं प्रतिदिनपठनं यः कुरुते। शिवसायुज्यं गच्छति भक्त्या यः शृणुते॥
हर हर हर महादेव॥ ९॥

इति नीराजनम्।

बृहत् नीराजन (बड़ी आरती)—यदि सम्भव हो तो 'ॐ जय गंगाधर हर जय गिरिजाधीशा। त्वं मां पालय नित्यं कृपया जगदीशा। हर हर हर महादेव' इत्यादि नव श्लोकों से युक्त बड़ी आरती गाकर नीराजन करना चाहिये।

प्रदक्षिणा—ॐ येतीर्थानि प्रचरंतिसृकाहस्तानिषङ्गिणः। तेषांꣳसहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि॥१॥ यानि कानि च पापानि जन्मांतरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदे पदे॥ ॐ साम्बसदाशिवाय नमः प्रदक्षिणं समर्पयामीति प्रदक्षिणत्रयं कुर्यात्। शिवरहस्ये—

प्रदक्षिणत्रयं कुर्य्यात्तथा पञ्च दशाथ वा। प्रदक्षिणत्रयान्न्यूनं नैव कार्य्यं महेश्वरे॥ १॥
पूजां कृत्वा तु यः शम्भोर्न करोति प्रदक्षिणम्। सा पूजा निष्फला ज्ञेया पूजकः स च दाम्भिकः॥ २॥
भक्त्या करोति यः सम्यक् केवलं तु प्रदक्षिणम्। पूजा सर्वा कृता तेन स सम्यक् शिवपूजकः॥ ३॥

प्रदक्षिणा—

ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः। तेषां सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि॥ १॥
यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्त प्रदक्षिण पदे पदे॥ २॥
कहकर फिर 'ॐ साम्बसदाशिवाय नमः प्रदक्षिणं समर्पयामि' कहकर तीन प्रदक्षिणा शिवजी को समर्पित करे।

शिवरहस्य के अनुसार प्रदक्षिणा का महत्व—शिवजी की पूजा में तीन-पाँच अथवा दश प्रदक्षिणा करनी चाहिये। शिव की तीन से कम प्रदक्षिणा नहीं करनी चाहिये। जो पूजा करके शम्भु की प्रदक्षिणा नहीं करता है, उसकी पूजा निष्फल समझनी चाहिये तथा उस पूजक को दम्भी समझना चाहिये। जो शिव की सम्यक् रूप से प्रदक्षिणामात्र करता है, उसने मानो शिव का सम्पूर्ण पूजन कर लिया है।

अथ पुष्पाञ्जलिमन्त्रा—ॐ यु॒ज्ञेनयु॒ज्ञम॑यजन्तदे॒वास्तानि॒धर्म्मा॑णिप्रथ॒मान्यसन्। तेह॒नाकम्महि॒मान॑ःसचन्त॒यत्र॒पूर्व्वेसा॒ध्याःसन्ति॒देवाः॥१॥ ॐ साङ्गाय साम्बसदाशिवाय नमः मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'ॐ प्रपन्नं पाहि मामीश भीतं मृत्युग्रहार्णवात्' इति साष्टाङ्गं प्रणामं कुर्य्यात्। ततो यथाशक्ति पञ्चाक्षरमन्त्रं जपित्वा गुह्यातिगुह्य० इति मन्त्रेण जपं समर्प्य क्षमापराधमहिमप्रभृतिपुराणैः प्राकृतैश्च स्तवैः स्तुत्वा देवं प्रार्थयेत्।

ॐ अङ्गहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं महेश्वर। पूजितोऽसि मया देव तत् क्षमस्व भ्रमात्कृतम्॥
यद्यप्युपहृतैः पुष्पैरपास्तैर्भावदूषितैः। केशकीटापविद्धैश्च पूजितोऽसि मया प्रभो॥
अन्यत्रासक्तचित्तेन क्रियाहीनेन वा प्रभो। मनोवाक्कायदुष्टेन पूजितोऽसि त्रिलोचन॥
यच्चोपहतपात्रेण कृतमर्घ्यादिकं मया। तामसेन च भावेन तत्क्षमस्व मम प्रभो॥
मन्त्रेणाक्षरहीनेन पुष्पेण विफलेन च। पूजितोऽसि महादेव तत्सर्वं क्षम्यतां मम॥
व्रतं सम्पूर्णतां यातु फलं चाक्षयमश्नुते।
अज्ञानयोगादुपचारकर्म यत्पूर्वमस्माभिरनुष्ठितंते। तदेव सोद्वासनकं दयालो पितेव पुत्रान्प्रतनो जुषस्व॥
अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवानेव दाता त्वदन्यं न याचे।
भवद्भक्तिमन्तःस्थिरां देहि मह्यं कृपाशील शम्भो कृतार्थोऽस्मि यस्मात्॥
ॐ नम ओंकाररूपाय नमोऽक्षरवपुर्धृते। नमो नादात्मने तुभ्यं नमो बिन्दुकलात्मने॥
अलिङ्गलिङ्गरूपाय रूपातीताय ते नमः। त्वं माता सर्वलोकानां त्वमेव जगतः पिता॥
त्वं भ्राता त्वं सुहृन्मित्रं त्वं प्रियःप्रियरूपधृक्। त्वं गुरुस्त्वं गतिः साक्षात्त्वं पिता त्वं पितामहः॥
नमस्ते भगवन् रुद्र भास्करामिततेजसे। नमो भवाय रुद्राय रसायाम्बुमयाय च॥
शर्वाय क्षितिरूपाय सदासुरमिणे नमः। पशूनां पतये तुभ्यं पावकामिततेजसे॥
भीमाय व्योमरूपाय शब्दमात्राय तेनमः। महादेवाय सोमाय अमृताय नमोऽस्तु ते॥
उग्राय यजमानाय नमस्ते कर्मयोगिने। पार्थिवस्य च लिङ्गस्य यन्मया पूजनं कृतम्॥
तेन मे भगवान् रुद्रो वाञ्छितार्थं प्रयच्छतु॥

इति प्रार्थ्य अर्घ्योदकमादाय 'ॐ इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा कर्म्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्कृतं यदुक्तं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु' इति पठित्वा देवस्य चरणयोः क्षिपेत्।

पुष्पाञ्जलि मन्त्र—'ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवा०' इत्यादि मन्त्र से पुष्पाञ्जलि समर्पित करे। फिर 'ॐ प्रपन्नं पाहि मामीश भीतं मृत्युर्ग्रहाणवात्०' कहकर साष्टाङ्ग प्रणाम करे। फिर यथाशक्ति पञ्चाक्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) का जपकर के 'गुह्यातिगुह्यगोप्तात्व०' इत्यादि कहकर जप समर्पित कर शिवक्षमापराधमहिम आदि का पाठ करे। फिर 'ॐ अङ्गहीनं क्रियाहीनं०' इत्यादि पन्द्रह श्लोकों (मन्त्र में लिखित) का पाठ करे। फिर अर्घ्य का जल लेकर 'ॐ इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति अवस्थासु मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्कृतं तदुक्तं यत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु।' ऐसा पढ़कर देव (शिव) के चरणों में जल छोड़ें।

ततः ॐ साधु वाऽसाधु वा कर्म्म यद्यदाचरितं मया। तत्सर्वं कृपा देव गृहाणाराधनं मम॥ १॥ इत्यर्घजलं किञ्चिद्देवोपरि निक्षिप्य पुष्पाञ्जलिमादाय 'ॐ रश्मिरूपा महादेवा अत्र पूजितदेवताः। सदाशिवाङ्गलीनास्ताः सन्तु सर्वाः सुखावहाः'॥ १॥ इति देवोपरि निक्षिप्य तेजोरूपं ध्यात्वा ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वर। यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम्॥ १॥ ॐ नमो महादेवाय इति पठित्वा संहारमुद्रया विसृजेत्। ततो गणपतिस्कन्दौ विसृज्य ईशान्यां जलेन मण्डलं कृत्वा 'ॐ व्यापकमण्डलाय नमः' इति सम्पूज्य 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' इति निर्माल्यनैवेद्यादिकं संस्थाप्य ध्यायेत्।

चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि। टङ्कं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं बिभ्रतमिन्दुचूडम्॥

इति ध्यात्वा 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' इति निर्माल्येन सम्पूज्य 'ॐ ध्वूं फट् चण्डेश्वर इमं बलिं गृह्ण स्वाहा' इति तत्त्वमुद्रया चरणोदकधारादानेन समर्प्य—

ॐ बलिदानेन सन्तुष्टश्चण्डेशः सर्वसिद्धिदः। शान्तिं करोतु मे नित्यं शिवभक्तिं ददातु च॥
लेह्यचोष्यान्नपानादि ताम्बूलं स्रग्विलेपनम्। निर्माल्यभोजनं तुभ्यं ददामि श्रीशिवाज्ञया॥
इति निर्माल्यपुष्पाञ्जलिं समर्प्य नाराचमुद्रां प्रदर्श्य गच्छगच्छेति विसृजेत्।

ॐ बाणरावणचण्डीशनन्दिभृङ्गिरिट्यादयः। शङ्करस्य प्रसादोऽयं सर्वे गृह्णन्तु शाम्भवाः॥
निर्माल्यसलिलं पीत्वा देवदेवस्य शूलिनः। क्षयापस्मारकुष्ठाद्यैस्सद्यो मुच्येत पातकैः॥
अकालमृत्युहरणं पुण्यं ब्रह्महत्या विनाशनम्। व्याधिघ्नं भक्तकायस्य शिवनिर्णेजनोदकम्॥
इति निर्माल्यजलं पीत्वा प्रणमेत्। पुनर्निर्माल्यपुष्पादिकं लिङ्गं च नद्यादौ जलमध्ये क्षिपेत्।

तदनन्तर 'ॐ साधु वाऽसाधु वा कर्म्म यद्यदाचरितं मया। तत्सर्वं कृपया देव गृहाणाराधनं मम॥' यह कहकर अर्घ्य का थोड़ा-सा जल देव के ऊपर छोड़ना चाहिये। इसके पश्चात् पुष्पाञ्जलि लेकर 'ॐ रश्मिरूपा महादेवा अत्र पूजितदेवताः। सदाशिवाङ्गलीनास्ताः सन्तु सर्वाः सुखावहाः' यह कहकर पुष्पाञ्जलि को देव के ऊपर छोड़े। फिर उनके तेजोरूप का ध्यान करके 'ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वर। यत्र ब्रह्मादयो देवाः न विदुः परमं पदम्॥ 'ॐ नमो महादेवाय' कहकर संहार मुद्रा बनाकर विसर्जन करे। फिर गणपति तथा स्कन्द को विसर्जित कर ईशान में जल से मण्डल बनाकर 'ॐ व्यापकमण्डलाय नमः' कहकर पूजन करके 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' इस मन्त्र से निर्माल्य नैवेद्य आदि को स्थापित कर 'चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि। टङ्कं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रतमिन्दुचूडम्॥' इस श्लोक के अनुसार चण्डेश्वर का ध्यान करे। फिर 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' ऐसा कहकर निर्माल्य से चण्डेश्वर (भगवान् शिव के गणों) की पूजा करे। फिर 'ॐ ध्वूं फट्

चण्डेश्वर इमं बलिं गृह्ण स्वाहा' कहकर तत्त्वमुद्रा बनाकर चण्डेश्वर को बलि दे तथा शिवचरणोदक की धारा भी समर्पित करे। फिर 'ॐ बलिदानेन सन्तुष्टः' इत्यादि दो श्लोकों से निर्माल्य पुष्पाञ्जलि समर्पित करके नाराचमुद्रा प्रदर्शित कर 'गच्छ गच्छ' कहकर चण्ड का विसर्जन करे।

निर्माल्योदकदान—'ॐ बाणरावणचण्डीश०' इत्यादि तीन श्लोकों के मन्त्र से शिवनिर्माल्य जल को पीकर प्रणाम करे तथा फिर निर्माल्यादि को तथा पार्थिव लिङ्गों को नदी आदि के जल में डाल देना चाहिये।

पार्थिवपूजनमहिमा

मन्त्रमहोदधौ—

यो लिङ्गं पूजयेन्नित्यं शिवभक्तिपरायणः। मेरुतुल्योऽपि तस्याशु पापराशिर्लयं व्रजेत्॥
दोग्ध्रीणां तु गवां लक्षं यो दद्याद्वेदपाठिने। पार्थिवं योऽर्चयेल्लिङ्गं तयोर्लिङ्गार्चको वरः॥
चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां पौर्णमास्यां विधुक्षये। पयसा स्नापयेल्लिङ्गं धरादानफलं व्रजेत्॥
लिङ्गपूजां विधायाग्रे स्तोत्रं वा शतरुद्रियम्। प्रजपेत्तन्मना भूत्वा शिवलोके महीयते॥
यत्संख्याकं यजेल्लिङ्गं तन्मितं होममाचरेत्। आज्यान्वितैस्तिलैरग्नौ घृतैर्वा पायसेन वा॥
शिवमन्त्रेण तस्यान्ते ब्राह्मणान्भोजयेच्छतम्। एवं कृते समस्तेष्टसिद्धिर्भवति निश्चितम्॥

पार्थिव-पूजन का महत्त्व (मन्त्रमहोदधि के अनुसार)—जो शिवभक्ति-परायण होकर नित्य ही पार्थिव शिव-लिङ्गों का पूजन करता है, उसके द्वारा किये गये पापों की राशि यदि मेरु पर्वत के बराबर भी बड़ी हो तो भी वह शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। एक व्यक्ति ने वेदपाठी ब्राह्मण को एक लाख गायें दान में दी हों तथा दूसरे ने केवल पार्थिव शिवलिङ्गों का पूजन (एक लाख या सवा लाख) की सङ्ख्या में किया हो तो उन दोनों में से पार्थिव लिङ्गपूजक को अधिक शुभ फल मिलता है। जो व्यक्ति चतुर्दशी अथवा अष्टमी अथवा पूर्णिमा अथवा अमावास्या के दिन दूध से शिवलिङ्ग को स्नान कराता है (अथवा पार्थिव लिङ्गों को स्नान कराता है), उस व्यक्ति को पृथ्वी के दान करने का फल प्राप्त होता है। जो सर्वप्रथम लिङ्गपूजा करके फिर शतरुद्रिय सूक्त का पाठ भक्तिपूर्वक करता है, वह शिवसायुज्य को प्राप्त होकर शिवलोक में आनन्द भोगता है। जितनी सङ्ख्या में लिङ्गों की अर्चा हो, उतनी सङ्ख्या में ही होम करना चाहिये। घृत से लिप्त तिलों से अग्नि में होम करना चाहिये अथवा केवल घृत अथवा घृत-पायस से होम करना चाहिये। होम शिवमन्त्र से करना चाहिये तथा होमान्त में एक सौ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये; इससे निश्चित ही सभी मनोरथ सफल होते हैं।

पार्थिवपूजने कामनाभेदाच्छिवलिङ्गसङ्ख्या

अथ कामनाभेदेन सङ्ख्याभेदः शान्तिसारे—

दैशिकात्सकलं ज्ञात्वा कुर्य्याल्लिङ्गं फलप्रदम्। विद्यार्थी लिङ्गसाहस्रं धनार्थी च तदर्द्धकम्॥
पुत्रार्थी सप्तसाहस्रं कन्यार्थी तु शतत्रयम्। वन्ध्या लिङ्गायुतं कुर्यात्सर्वपापहरं शुभम्॥
राज्यार्थी शतसाहस्रं कान्तार्थी शतपञ्चकम्। मोक्षार्थी कोटिगुणितं भूकामश्च सहस्रकम्॥
रूपार्थी तु त्रिसाहस्रं तीर्थार्थी द्विसहस्रकम्। सुहृत्कामः सहस्रं स्याद्वस्त्रार्थी शतमष्टकम्॥
मारणार्थी सप्तशतं मोहनार्थी शताष्टकम्। उच्चाटनपरश्चैव सहस्रं तु यथोक्तवत्॥
स्तम्भनं तु सहस्रेण जारणे च तदर्द्धवत्। निगडान्मुक्तिकामस्तु सहस्रं सार्द्धमीरितम्॥

महाराजभये पञ्चशतं चौरादिसङ्कटे। शतद्वयं च डाकिन्या भये पञ्चशतं परम्॥
दरिद्रः पञ्चसाहस्रमयुतं सर्वकामदम्॥

कामनाभेद से सङ्ख्याभेद (शान्तिसार के अनुसार)—आचार्य से सम्पूर्ण विधि जानकर जो पार्थिव शिवलिङ्ग का पूजन करता है, उसको फल प्राप्त होता है। विद्यार्थी को एक सहस्र पार्थिव शिवलिङ्गों का निर्माण कर अर्चा करनी चाहिये। धनार्थी को पाँच सौ लिङ्गों का अर्चन प्रतिदिन करना चाहिये। पुत्रार्थी को सात सहस्र तथा कन्यार्थी (विवाह के इच्छुक) को तीन सौ, वन्ध्या स्त्री को अयुत (दश सहस्र) लिङ्गों की अर्चना करनी चाहिये; यह उसके सम्पूर्ण पापों का हरण कर शुभ फल देता है। राज्यार्थी को सौ सहस्र (१००,०००) अर्थात् एक लाख, स्त्री चाहने वाले को ५००, मोक्षार्थी को पाँच करोड़, भूमि चाहने वाले को एक सहस्र, रूपार्थी को तीन सहस्र, तीर्थार्थी को दो सहस्र, सुहृत्कामी (मित्रार्थी) को एक सहस्र, वस्त्रार्थी को आठ सौ, मारणार्थी को सात सौ, मोहनार्थी को आठ सौ एवं उच्चाटनार्थी एक सहस्र लिङ्गार्चन यथोक्त विधि से करना चाहिये। स्तम्भन-कार्य के लिये एक सहस्र, जारण-हेतु पाँच सौ एवं जेल से मुक्त होने के लिये पन्द्रह सौ की सङ्ख्या कही गयी है। महान् राजभय की शान्ति के लिये तथा चौरादि के सङ्कट से मुक्त होने के लिये पाँच सौ, डाकिनी के दोष में दो सौ तथा भयमुक्ति-हेतु पाँच सौ पार्थिव लिङ्गपूजन उत्तम होता है। यदि दरिद्रता का नाश करना हो तो पाँच सहस्र तथा सभी कार्यों की सिद्धि के लिये अयुत सङ्ख्या (१०,०००) में पार्थिव लिङ्ग का पूजन करना चाहिये।

मन्त्रमहोदधौ—

लक्षपार्थिवलिङ्गानां पूजानाद्भुवि मुक्तिभाक्। लक्षं तु मृडलिङ्गानां पूजनात्पार्थिवो भवेत्॥
या नारी मृडलिङ्गानि सहस्रं पूजयेत्सती। भर्तुः सुखमखण्डं सा प्राप्यते पार्वती भवेत्॥
नवनीतस्य लिङ्गानि सम्पूज्येष्टमवाप्नुयात्। भस्मना गोमयस्यापि वालुकायास्तथा फलम्॥
क्रीडन्ति पृथुका भूमौ कृत्वा लिङ्गं रजोमयम्। पूजयन्ति विनोदेन तेऽपि स्युः क्षितिनायकाः॥

मन्त्रमहोदधि के अनुसार सङ्ख्याभेद—एक लाख पार्थिव शिवलिङ्गों का पूजन करने वाला मुक्ति का भागी होता है। यदि राज्यकामी एक लाख पूजन करता है तो वह राजा हो जाता है। जो सती स्त्री एक सहस्र शिवलिङ्गों का पूजन करती है, वह पार्वती जी की भाँति अपने पति का अखण्ड सुख प्राप्त करती है। नवनीत (मक्खन) का शिवलिङ्ग बनाकर जो पूजन करता है, उसे अभीष्ट-सिद्धि होती है। यही फल भस्म अथवा गोबर अथवा बालू का भी होता है। यदि भूमि में खेलने वाले पृथुक (बच्चे) भी विनोद में धूलि से लिङ्ग बनाकर उनकी पूजा करते हैं तो वे भी क्षितिनायक (राजा या शासक = उच्चाधिकारी) बन जाते हैं।

विमर्श—यहाँ मूल में बच्चों के लिये संस्कृत शब्द पृथुकाः प्रयोग हुआ है। यह बहुवचन है। एकवचन रूप पृथुकः है। इसका पालिरूप पुथुक अथवा पुथुको होता है, फिर पुथुक का बिगड़कर पुदु या पिदु तथा पृथुको = पुथुको का पिथियो या पिदियों हो जाता है। यही फिर ग्रीक भाषा में Paid, Pais या Paedo, Pedes आदि हो गया है, जिसका अर्थ बालक (Child) होता है। इसी शब्द से अंग्रेजी के Paediatrics (कौमारभृत्य = बालरोग चिकित्सा) तथा Paediatrician (बालरोग चिकित्सक) आदि शब्द बने हैं, जिनका प्रयोग आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में किया जाता है। इनमें Paediatrician (पीडियाड्रीशियन) तथा Paediatric शब्दों का निर्माण Paedia+iatros शब्दों के मेल से हुआ है, जो कि संस्कृत के 'पृथुकात्रेयः' शब्द का घिसा हुआ रूप है, जिसका

आत्रेय = पुनर्वसु आत्रेय होता है। आयुर्वेद के इतिहास में अग्निवेश के गुरु महर्षि पुनर्वसु आत्रेय का नाम प्रसिद्ध है। आत्रेय के नाम पर चिकित्सा का सम्प्रदाय एवं परम्परा अद्यावधि प्रचलन में है। आत्रेय के शिष्य भी आत्रेय कहलाते थे। आयुर्वेद अष्टाङ्ग है; अतः उनमें एक अङ्ग का नाम 'कौमारभृत्य' (बालरोगचिकित्सा) है। अतः जो वैद्य बालरोग-विशेषज्ञ होते थे, उनको 'पृथुकात्रेय' अर्थात् बच्चों का आत्रेय (Physician) या वैद्य कहा जाता था। जब आयुर्वेद का ज्ञान ग्रीक में पहुँचा तब पृथुकात्रेय शब्द घिसकर ग्रीक भाषा में 'पिदिकात्रेयस्' हो गया, जिसका बिगड़ा हुआ रूप अंग्रेजी में 'पिडियाट्रिक्स' है। यह सब लिखने का तात्पर्य यह है कि प्राचीन काल में भारत से ही सब विद्याएँ यूरोप में पहुँची हैं तथा वैदिक संस्कृत भाषा ही यूरोप की लैटिन, ग्रीक, जर्मन, फ्रेञ्च, स्पेनिश, रूसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं की जननी है।

प्रातर्गोमयलिङ्गानि नित्यं यस्त्रीणि पूजयेत्। बृहतीबिल्वयोः पत्रैर्नैवेद्यं गुडमर्पयेत्॥
एवं मासत्रयं कुर्वन्ननल्पं लभते धनम्। एकादशैव लिङ्गानि गोमयोत्थानि यो यजेत्॥
प्रातर्मध्याह्नयोः सायं निशीथे प्रतिवासरम्। स सर्वाः सम्पदः पायात् षण्मासादेवमाचरन्॥
एकादश यजेन्नित्यं शालिपिष्टमयानि यः। लिङ्गानि मासमात्रेण स कल्मषचयं दहेत्॥
स्फाटिकं पूजितं लिङ्गमेनोनिकरनाशनम्। सर्वकामप्रदं पुंसामुदुम्बरसमुद्भवम्॥
रेवाश्मजं सर्वसिद्धिप्रदं दुःखविनाशनम्। यथाकथञ्चिल्लिङ्गस्य पूजा नित्यकृतेष्टदा॥
यो यजेत्पिचुमन्दोत्थैः पत्रैर्गोमयजं शिवम्। क्रुद्धं महेश्वरं ध्यायन्स पराजयते रिपून्॥

जो प्रतिदिन प्रातःकाल गोमय (गाय के गोबर) से लिङ्ग बनाकर तीन की सङ्ख्या में पूजता है तथा कटेरी के फल, बेलपत्र तथा गुड़ का नैवेद्य चढ़ाता है, उसे तीन मास तक पूजन करने के उपरान्त प्रचुर मात्रा में धन की प्राप्ति होती है। जो गोबर के ग्यारह लिङ्ग प्रतिदिन प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल तथा आधी रात को बनाकर उनकी पूजा करता है, उसे छः मास में सर्वसम्पदा की प्राप्ति होती है। जो शालि चावलों के आटे से प्रतिदिन ग्यारह लिङ्ग बनाकर पूजता है, उसके एक मास तक पूजन करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं। जो स्फटिक से बने शिवलिङ्ग की पूजा करता है, उसके कलङ्कों के समूह (मनोविकार) नष्ट हो जाते हैं। गूलर को पीसकर बने लिङ्गों का पूजन सर्वार्थ-साधक होता है। नर्मदा नदी के पत्थर से निर्मित लिङ्ग की पूजा सब प्रकार से सफलता देकर सभी दुःखों को नष्ट करती है। किसी भी प्रकार से शिवलिङ्ग बनाकर की गई पूजा नित्य होने पर अभीष्ट सिद्ध करती है। जो पिचुमन्द के पत्तों (नीम के पत्तों) को पीसकर तथा गोबर मिलाकर बनाये गये शिवलिङ्गों की पूजा करता है तथा शङ्कर के क्रोधी स्वरूप का ध्यान करता है, उसके शत्रु नष्ट होते हैं।

शान्तिसारे नित्यपूजने सङ्ख्या—

एकं पापहरं प्रोक्तं द्विलिङ्गं चाथ सिद्धिदम्। त्रिलिङ्गं सर्वकामानां कारणं परमाद्भुतम्॥
यत्फलं पाकयज्ञेषु हविर्यज्ञेषु यत्फलम्। एकाहात्तदवाप्नोति लिङ्गार्चनरतः सदा॥
गवां शतसहस्रस्य सम्यग्दत्तस्य यत्फलम्। दशाहात्तदवाप्नोति सम्यग्लिङ्गार्चने रतः॥
वाजपेयशतैरिष्ट्वा यल्लभन्ते द्विजोत्तमाः। विप्रो विंशतिरात्रेण रुद्रभक्त्या तदाप्नुयात्॥
अश्वमेधसहस्रस्य सम्यगिष्टस्य यत्फलम्। मासेन तदवाप्नोति रुद्रलिङ्गार्चने रतः॥
राजसूयसहस्रस्य सम्यगिष्टस्य यत्फलम्। मासेन तदवाप्नोति शिवलिङ्गार्चने रतः॥
सर्वतीर्थाभिषेकस्य सर्वदानफलानि च। सर्वयज्ञफलं चैव उपवासफलानि च॥

सम्यगिष्टफलः सर्वक्षेमाचारः समाधिना। नवमासात्समासाद्य ब्राह्मणो विजितेन्द्रियः।
सर्वमेतदवाप्नोति लिङ्गे योऽर्चयते शिवम्॥
यस्तु संवत्सरं पूर्णं पूजयदेकलिङ्गकम्। तस्य तुष्टः प्रयच्छामि गाणपत्यं न संशयः॥
माघे मासि समुद्युक्तस्त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेच्छिवम्। लभेत्षाण्मासिकं पुण्यं मासेनैव न संशयः॥
यथा माघे तथाऽऽषाढे कार्त्तिके तु विशेषतः। त्रिषु पुण्यं समं ज्ञेयं मासेष्वेतेषु यत्फलम्॥
यस्तु पूजयते नित्यं लिङ्गं त्रिभुवनेश्वरम्। स स्वर्गराज्यमोक्षाणां क्षिप्रं भवति भाजनम्॥

शान्तिसार के अनुसार नित्य पूजनसङ्ख्या—नित्य एक लिङ्ग की पूजा पापनाशक, दो लिङ्गों की पूजा सिद्धिदायक एवं तीन लिङ्गों की पूजा सभी कामनाओं को पूरी करने वाली तथा अद्‌भुत फल देने वाली होती है। जो फल पाकयज्ञों तथा हविर्यज्ञों से प्राप्त होता है, वह फल केवल एक दिन के लिङ्गार्चन से मिलता है। जो फल विधिपूर्वक एक सौ सहस्र (१००,०००) गोदान का मिलता है, वह दश दिन के सम्यक् लिङ्गार्चन से मिल जाता है। श्रेष्ठ ब्राह्मण एक सौ वाजपेय यज्ञों के द्वारा जो फल प्राप्त करते हैं, वही फल कोई ब्राह्मण बीस रात्रिपर्यन्त रुद्रभक्ति से प्राप्त कर लेता है। अच्छी प्रकार से एक सहस्र अश्वमेध यज्ञों का जो फल मिलता है, वही फल एक मास के लिङ्गार्चन से मिलता है। जो फल सहस्रों राजसूय यज्ञों के करने से मिलता है, वह एक मास तक लिङ्गार्चन करने वाले साधक को मिल जाता है। जो फल सभी तीर्थों के स्नान से तथा सभी प्रकार के दान से मिलता है, जो सभी यज्ञों का फल है अथवा जो सभी उपवासों का फल है, जो समाधि लगाने पर फल प्राप्त होता है, वह फल विजितेन्द्रिय ब्राह्मण को नौ मास तक लिङ्गार्चन करने-मात्र से ही मिल जाता है।

जो एक वर्ष तक निरन्तर लिङ्ग का पूजन करता है, उसे मैं प्रसन्न होकर उच्च पद प्रदान करता हूँ, इसमें संशय नहीं है। जो माघ मास में प्रातः, मध्याह्न तथा सायङ्काल तीनों सन्ध्याओं में शिव की अर्चना करता है, उसे केवल एक मास में ही छः मास की पूजा का फल मिल जाता है। जिस प्रकार का फल माघ मास में शिवार्चन से मिलता है, उसी प्रकार का फल आषाढ़ मास अथवा कार्तिक मास में भी लिङ्गार्चन से प्राप्त होता है। जो नित्य ही त्रिलोकीनाथ शिव के लिङ्ग की पूजा करता है, वह स्वर्ग के राज्य तथा मोक्ष का भागीदार शीघ्र ही बन जाता है।

शिवनारदसंवादे—

तत्रापि पार्थिवं लिङ्गं क्षिप्रं सिद्धिप्रदं भवेत्। पार्थिवेन तु लिङ्गेन बहवः सिद्धिमागताः॥
कृते रत्नमयं लिङ्गं त्रेतायां हेमसम्भवम्। द्वापरं पारदं श्रेष्ठं पार्थिवं तु कलौ युगे॥

शिव-नारद संवाद के अनुसार महत्त्व—पार्थिव लिङ्ग की अर्चा अन्य प्रकार से लिङ्गपूजा की अपेक्षा शीघ्र सफलता देती है। पार्थिव शिवलिङ्ग से अनेक प्रकार की सफलता मिलती है। रत्नमय लिङ्ग सतयुग में, त्रेतायुग में स्वर्णनिर्मित लिङ्ग, द्वापर में पारदनिर्मित लिङ्ग तथा कलियुग में पार्थिव लिङ्ग (मिट्टी से बने) की पूजा श्रेष्ठ कही गयी है।

लिङ्गमानं मन्त्रमहोदधौ—

अङ्गुष्ठमानादधिकं वितस्त्यवधि सुन्दरम्। पार्थिवं रचयेल्लिङ्गं न न्यूनं नाधिकं च तत्॥

मन्त्रमहोदधि के अनुसार लिङ्गमान—एक अङ्गुल के नाप से लेकर एक बितस्ति (बित्ती भर) का लिङ्ग श्रेष्ठ होता है; पर जो भी पार्थिव लिङ्ग बनाये जायँ, वे एक ही मान के होने चाहिये, उन्हें छोटे-बड़े नहीं होने

चाहिये। जैसे या तो प्रत्येक अङ्गुष्ठ प्रमाण का बने, यदि अधिक नाप का बनता है तो सभी लिङ्ग उस नाप के बनाने चाहिये तथा एक बित्ती से अधिक मान पार्थिव लिङ्ग का नहीं रखना चाहिये।

लिङ्गमाहात्म्यं नन्दिभविष्ययोः—

आयुष्मान्बलवाञ्छ्रीमान्पुत्रवान्धनवान्सुखी । वरमिष्टं लभेल्लिङ्गं पार्थिवं यः समाचरेत्॥
मृद्भस्मगोशकृत्पिण्डं ताम्रकांस्यमयं तथा। कृत्वा लिङ्गं सकृत्पूज्य वसेत्कल्पायुतं दिवि॥

इति पार्थिवलिङ्गपूजनप्रयोगः समाप्तः।

नन्दीश्वर तथा **भविष्यपुराण** के अनुसार—जो पार्थिव लिङ्ग बनाकर अर्चना करता है, वह आयुष्मान्, श्रीमान्, बलवान्, पुत्रवान्, धनवान् तथा सुखी होता है एवं मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है। जो मिट्टी, भस्म, गोबर, ताम्र, कांस्यमय लिङ्ग बनाकर पूजा करता है, वह अयुत कल्प-पर्यन्त स्वर्ग में निवास करता है।

दक्षिणामूर्तिशिवमन्त्रपुरश्चरणम्

शारदातिलके मूलमन्त्रो यथा—

ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने। ध्यानैकनिरताङ्गाय नमो रुद्राय शम्भवे ह्रीं ॐ॥

षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रः सर्वकामफलप्रदः। अस्य श्रीदक्षिणामूर्तिशम्भुमन्त्रस्य शुकऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। दक्षिणामूर्तिशम्भुर्देवता। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ शुकऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ दक्षिणामूर्तिशम्भुर्देवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्तये ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं तुभ्यं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ह्रीं वटमूलनिवासिने ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ह्रीं ध्यानैकनिरताङ्गाय ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ह्रीं नमो रुद्राय ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्रीं शम्भवे ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा अङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ ह्रीं नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ दं नमः भाले॥ २॥ ॐ क्षिं नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ णां नमः श्रोत्रयोः॥ ४॥ ॐ मूं नमः गण्डयोः॥ ५॥ ॐ र्तं नमः नासिकयोः॥ ६॥ ॐ यं नमः मुखे॥ ७॥ ॐ तुं नमः दक्षिणबाहुमूले॥ ८॥ ॐ भ्यं नमः दक्षिणकूर्परे॥ ९॥ ॐ वं नमः दक्षिणमणिबन्धे॥ १०॥ ॐ टं नमः दक्षिणहस्ताङ्गुलीमूले॥ ११॥ ॐ मूं नमः दक्षहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ १२॥ ॐ लं नमः वामबाहुमूले॥ १२॥ ॐ निं नमः वामकूर्परे॥ १४॥ ॐ वां नमः वाममणिबन्धे॥ १५॥ ॐ सिं नमः वामहस्ताङ्गुलीमूले॥ १६॥ ॐ नें नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ १७॥ ॐ ध्यां नमः गले॥ १८॥ ॐ नैं नमः स्तनयोः॥ १९॥ ॐ कं नमः हृदये॥ २०॥ ॐ निं नमः नाभिमण्डले॥ २१॥ ॐ रं नमः कट्योः॥ २२॥ ॐ तां नमः गुह्ये॥ २३॥ ॐ गां नमः दक्षपादमूले॥ २४॥ ॐ यं नमः दक्षिणजानुनि॥ २५॥ ॐ नं नमः दक्षिणगुल्फे॥ २६॥ ॐ मं नमः दक्षपादाङ्गुलीमूले॥ २७॥ ॐ रुं नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे॥ २८॥ ॐ द्रां नमः वामपादमूले॥ २९॥ ॐ यं नमः वामजानुनि॥ ३०॥ ॐ शं नमः वामगुल्फे॥ ३१॥ ॐ भं नमः वामपादाङ्गुलीमूले॥ ३२॥ ॐ वें नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे॥ ३३॥ ॐ ह्रीं नमः इति व्यापकेन सर्वाङ्गे न्यसेत्॥ ३४॥ एवमङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

हेमाचलतटे रम्ये सिद्धकिन्नरसेविते। विविधद्रुमशाखाभिः सर्वतोवारितातपे॥
सुपुष्पितैर्लताजालैराश्लिष्टकुसुमद्रुमैः। शिलाविवरनिर्गच्छन्निर्झरानिलसेविते॥
गायद्भृङ्गाङ्गनासङ्घे नृत्यद्बर्हिकदम्बके। कूजत्कोकिलसङ्घेन मुखरीतकृदिङ्मुखे॥
परस्परविनिर्मुक्तमात्सर्यमृगसेविते। आद्यैः शुकाद्यैर्मुनिभिरजस्रं समुपस्थितम्॥
पुरन्दरमुखैर्देवैः सेवायातैर्विलोकितम्। वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम्॥

गारुत्मतमयैः पत्रैर्निबिडैरुपशोभितम्। नवरत्नमयाकल्पैर्लम्बमानैरलङ्कृतम् ॥
स्थलजैर्जलजैः पुष्पैरामोदितमलङ्कृतम्। शृण्वद्भिर्वेदशास्त्राणि शुकवृन्दैर्निषेवितम्॥
संसारतापविच्छेदकुशलच्छायमद्भुतम् । विचिन्त्य तस्य मूलस्थे रत्नसिंहासने शुभे॥
आसीनममिताकल्पं शरच्चन्द्रनिभाननम्। स्तूयमानं मुनिगणैर्दिव्यज्ञानाभिलाषिभिः॥
संस्मरेज्जगतामाद्यं दक्षिणामूर्तिमव्ययम्।

इति विचिन्त्य—

कैलासाद्रिनिभं शशाङ्कशकलस्फूर्जज्जटामण्डितं नासालोकनतत्परं त्रिनयनं वीरासनाध्यासितम्।
मुद्राटङ्ककुरङ्गजानुविलसत्पाणिं प्रसन्नाननं कक्षाबद्धभुजङ्गमं मुनिवृतं वन्दे महेशं परम्॥

इति ध्यायेत्। एवं धात्वा पूर्वोक्ते शिवपञ्चाक्षरोदिते पीठे पाद्याद्यैः षोडशोपचारैर्यथाविधि दक्षिणामूर्त्याख्यं शिवं सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्। अस्य मन्त्रस्य सिद्धयर्थं विंशतिसहस्त्राधिकं लक्षत्रयात्मकं जपपुरश्चरणं कार्यम्। ततो जपान्ते दशांशेन क्षीरसंयुतैः शुद्धैस्तिलैर्होमं कृत्वा तत्तदशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्यात्।

तथा च शारदातिलके—

अयुतद्वयसंयुक्तं गुणलक्षं जपेन्मनुम्। तद्दशांशं तिलैः शुद्धैर्जुहुयात्क्षीरसंयुतैः॥
एवं कृतपुरश्चर्यः सिद्धमन्त्रो भवेत्सुधीः। भिक्षाहारो जपेन्मासं मनुमेनं जितेन्द्रियः॥
नित्यं सहस्त्रमष्टार्द्धं परं विन्दति वाङ्मयम्। त्रिवारं जप्तमेतेन मनुना सलिलं पिबेत्॥
नित्यशो दक्षिणामूर्तिं ध्यायन्साधकसत्तमः। शास्त्रव्याख्यानसामर्थ्यं लभते वत्सरान्तरे॥
ब्राह्मीसैन्धवसिद्धार्थवचाकुष्ठकणोत्पलैः । सुगन्धिसंयुतैः कल्कैः शृतं ब्राह्मीरसे घृतम्॥
मनुनानेन सञ्जप्तमयुतं साधु साधितम्। निपीतं कविताकान्तिरक्षायुःश्रीधृतिप्रदम्॥

इति दक्षिणामूर्तिशिवमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

श्री दक्षिणामूर्ति शिवमन्त्र का पुरश्चरण—'दक्षिणा अनुकूला मूर्ति यस्य स दक्षिणामूर्तिः' अर्थात् शिव की जो मूर्ति साधकों के लिये सर्वाधिक अनुकूल एवं शीघ्र फलप्रद हो, उसे दक्षिणामूर्ति कहते हैं। दक्षिणामूर्ति शिव की आराधना दक्षिण भारत में अधिक होती है।

दक्षिणामूर्ति मन्त्र (प्रथम)—'ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने ध्यानैकनिरताङ्गाय नमो रुद्राय शम्भवे ह्रीं ॐ।' यह छत्तीस अक्षरों का मन्त्र है, जो सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

विनियोग—अस्य श्रीदक्षिणामूर्तिशम्भुमन्त्रस्य शुकऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, दक्षिणामूर्तिशम्भुर्देवता सर्वेष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़ना चाहिये।

ऋष्यादिन्यास मूल में लिखे 'ॐ शुकऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। इन्हीं छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी कर ले। फिर 'ॐ ह्रीं नमः मूर्ध्नि' इत्यादि मूलपाठ में लिखित चौंतीस मन्त्रों से शरीर के विभिन्न अङ्गों में न्यास करे। फिर देव का इस प्रकार ध्यान करे—

हेमाचल पर्वत के रम्य तट पर सिद्ध तथा किन्नरों से सेवित, विविध वृक्षों की शाखाओं से जहाँ वर्षा एवं घाम का निवारण होता है, जहाँ सुपुष्पित लताजालों से पुष्प वाले वृक्ष वेष्टित हैं, जहाँ शिलाविवरों से झरने निकलते हैं, जिनके स्पर्श से शीतल वायु के प्रवाह का सेवन होता है, जहाँ पर भृङ्गों की अङ्गनायें गाती हैं तथा मयूर नाचते हैं,

कदम्बवृक्षों पर कोयलों का समूह कूजता है, जिससे दिशाएँ मुखरित होती हैं, मत्सरोत्पन्न मृग उन्मुक्त भाव से जहाँ पर परस्पर आलिङ्गन करते हैं, आदि मुनियों (शुकादि मुनियों) के जहाँ पर निवास हैं, जहाँ इन्द्रादि देवता सेवा के लिये आते हुए देखे जाते हैं, जहाँ अत्यन्त ऊँचा वटवृक्ष पद्मरागमणि के समान शोभायमान है, जिसमें पन्ने के समान हरे पत्ते लगे हैं तथा जिसमें नवरत्नों की शोभा है, जहाँ स्थलकमलों के पुष्प शोभित हैं तथा जहाँ वेदशास्त्रों का निर्घोष हो रहा है एवं शुकों का समूह उसे दोहरा रहा है। यह वटवृक्ष संसार के ताप को नष्ट करने वाला अद्भुत वृक्ष है। उसके मूल में रत्नसिंहासन पर अव्यय दक्षिणामूर्ति शिव विराजित हैं—ऐसा ध्यान करता हूँ। वे अमित अकल्प शरद् चन्द्रमा के समान कान्ति वाले हैं तथा दिव्य ज्ञान की अभिलाषा वाले मुनिगणों द्वारा सेवित हैं। ऐसा चिन्तन कर फिर 'जिनकी जटाओं पर कैलास पर्वत के समान हिमधवल चन्द्रकला शोभित है तथा जिनका ध्यान अपने नासाग्र पर है, ऐसे त्रिनेत्र वीरासन पर बैठे हैं, जिनके हाथ मुद्रा टङ्क कुरङ्ग के समान छवियुक्त है, जिनका मुख प्रसन्न है, जिनकी काँख में भुजङ्ग लिपटे हैं, जो मुनियों से घिरे हैं, उन परम महेश्वर की वन्दना करता हूँ।' इस प्रकार ध्यान करके फिर सफलता के लिये शिवपञ्चाक्षर मन्त्र के अनुष्ठान में कथित (पूर्वकथित) पीठ पर पाद्य आदि सोलह उपचारों से यथाविधि दक्षिणामूर्ति शिव को पूजकर उनके मूल मन्त्र को जपना चाहिये। इस प्रकार तीन लाख बीस सहस्र सङ्ख्या में जप करना चाहिये। यह पुरश्चरण है। जप की समाप्ति पर दशांश दूधयुक्त शुद्ध तिलों से होम कर, उसके दशांश तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मणभोजनादि कराना चाहिये।

शारदातिलक में कहा गया है कि तीन लाख बीस हजार मन्त्र जप करना चाहिये एवं जप के उपरान्त उसका दशांश दुग्धयुक्त शुद्ध तिलों से हवन करना चाहिये। इस प्रकार पुरश्चरण करने पर विद्वान् को मन्त्र सिद्ध हो जाता है। जो जितेन्द्रिय साधक एक मास तक भिक्षा में प्राप्त अन्न का भोजन करते हुये नित्य एक हजार आठ मन्त्रों का जप करता है, वह सभी शास्त्रों में निष्णात हो जाता है। जो उत्तम साधक प्रतिदिन इस मन्त्र का तीन बार जप करके जल पीता है, वह एक वर्ष के पश्चात् शास्त्रों के व्याख्यान का सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। ब्राह्मी, सैन्धव, सिद्धार्थ, वचा, कूठ को चूर्ण करके उनका कल्क बनाकर ब्राह्मीरस में घी मिलाकर इस मन्त्र के दस हजार जप से सम्यक् रूप से सिद्ध कर पान करने से साधक के कविताकान्ति की रक्षा होती है एवं उसे आयु, लक्ष्मी तथा धैर्य की प्राप्ति होती है।

द्वितीयो दक्षिणामूर्तिमन्त्रः

तत्रैव मूलं यथा—ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा। द्वाविंश२२त्यक्षरो मनुः। भूतशुद्ध्यादिश्रीकण्ठादिकलान्तन्यासं शिवपञ्चाक्षरवत् कृत्वा 'अस्य श्रीदक्षिणामूर्तिमन्त्रस्य चतुर्मुखऋषिः गायत्रीछन्दः दक्षिणामूर्तिः वेदव्याख्यानतत्परो देवता सर्वेष्टसिद्धये विनियोगः'। ॐ चतुर्मुखऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। ॐ दक्षिणामूर्तिदेवतायै नमः हृदये। इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ आँ ॐ नमो भगवते अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ईँ ॐ दक्षिणामूर्तये तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ऊँ ॐ मह्यं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ऐं ॐ मेधां अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ॐ प्रयच्छ कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ अः ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कृत्वा पूर्वोक्तं 'हेमाचलतटे रम्ये' इत्यादि विचिन्त्य ध्यायेत्।

स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमालाममृतकलशविद्याज्ञानमुद्राः कराग्रैः।
दधतमुरगकक्षं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं विधृतविविधभूषं दक्षिणामूर्तिमीडे॥

इति ध्यात्वा पञ्चाक्षरोदिते पीठे यजेत्।

अथ यन्त्रपूजा—शैवोक्तपीठपूजां विधाय मध्ये मूर्तिं संस्थाप्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—षट्कोणकेसरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च। ॐ आँ ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ईँ ॐ शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ऊँ ॐ शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ऐं ॐ कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ औँ ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ अः ॐ

अस्त्राय फट्॥ ६॥ इत्यङ्गानि सम्पूज्य ततो बाह्ये पत्रेष्वष्टसु पूर्वादिक्रमेण ॐ सरस्वत्यै नमः॥ १॥ ॐ ब्रह्मणे नमः॥ २॥ ॐ सनकाय नमः॥ ३॥ ॐ सनन्दनाय नमः॥ ४॥ ॐ सनातनाय नमः॥ ५॥ ॐ शुकाय नमः॥ ६॥ ॐ व्यासाय नमः॥ ७॥ ॐ गणेश्वराय नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततस्तद्बहिः पूर्वादिचतुर्दिक्षु ॐ सिद्धेभ्यो नमः॥ १॥ ॐ गन्धर्वेभ्यो नमः॥ २॥ ॐ योगीन्द्रेभ्यो नमः॥ ३॥ ॐ विद्याधरेभ्यो नमः॥ ४॥ इति पूजयेत्। तद्बहिः भूगृहे पूर्वादिषु इन्द्रादिलोकपालान्पूजयेत्। तद्बहि वज्राद्यायुधानि च सम्पूजयेत्। एवं पञ्चावरणपूजां कृत्वा प्रधानदेवं धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनैः सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा लक्षमन्त्रं जपेत्। तथा च शारदातिलके—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं ब्रह्मचारिव्रते स्थितः। जुहुयात्सघृतैः पद्मैर्दशांशं संस्कृतेऽनले॥
इत्थं पूजादिभिः सिद्धे मन्त्रेऽस्मिन् साधकोत्तमः। वल्लभो जायते वाचां बृहस्पतिरिवापरः॥
मन्त्रेणानेन सञ्जप्तैर्विशुद्धैः सलिलैः सुधीः। अभिषिञ्चेत्स्वशिरसि श्रियमारोग्यमाप्नुयात्॥
कण्ठमात्रे जले स्थित्वा जपेन्मन्त्रसहस्रकम्। प्रत्यहं मण्डलादर्वाक्कवीनामग्रणीर्भवेत्॥
गौर्या पार्श्वस्थया सार्द्धं श्रीकामी चिन्तयन्विभुम्। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं भूयसीं श्रियमाप्नुयात्॥
भुञ्जानः प्रयतो मन्त्री गोमूत्रे शृतमोदनम्। भिक्षान्नमथवा मन्त्रमयुतद्वितयं जपेत्॥
अश्रुतान्वेदशास्त्रादीन् व्याचष्टे नात्र संशयः। सिद्धगन्धर्वमुनिभिर्योगीन्द्रैरपि सेविते॥
ज्ञानवागर्थिनां प्रीत्यै कथितौ मन्त्रनायकौ॥

इति दक्षिणामूर्तिशिवमन्त्रानुष्ठानम्।

द्वितीय दक्षिणामूर्ति मन्त्र—यह दक्षिणामूर्ति भगवान् शिव की आराधना का दूसरा मन्त्र है। इसमें केवल बुद्धिप्राप्ति की प्रार्थना की गई है; अतः यह सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है; क्योंकि जिसके पास श्रेष्ठ बुद्धि है, उसका सब प्रकार से कल्याण होता है। मूल मन्त्र इस प्रकार है—ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा।

यह बाईस अक्षरों का मन्त्र है। इसकी सिद्धि के लिये प्रथम भूतशुद्धि आदि कृत्यों से लेकर श्रीकण्ठादि कलान्यास-पर्यन्त कर्म सम्पादित करे तथा शिवपञ्चाक्षर मन्त्र-साधन की भाँति करना चाहिये। इस दक्षिणामूर्ति मन्त्र के चतुर्मुख ऋषि, गायत्री छन्द, दक्षिणामूर्ति वेदव्याख्यान तत्परदेवता हैं तथा सर्वेष्टसिद्धि-हेतु इसका विनियोग होता है।

विनियोग के पश्चात् मूल में लिखित 'ॐ चतुर्मुखऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर ॐ आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे तथा पुनः इन्हीं छः मन्त्रों से क्रमशः हृदयादि न्यास करे। पूर्व मन्त्र में (प्रथम दक्षिणामूर्ति मन्त्र में) कथित 'हेमाचलतटे रम्ये०' इत्यादि से चिन्तन करने के उपरान्त 'स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमालाममृतकलशविद्याज्ञानमुद्राकराग्रैः। दधतमुरगकक्षं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं विधृतविविधभूषं दक्षिणामूर्तिमीडे॥' (जिनका वर्ण स्फटिक एवं रजत के समान है, जो मुक्ता एवं रुद्राक्ष की माला पहिने हैं, जो अपने हाथों में अमृतकलश विद्या एवं ज्ञानमुद्रा धारण किये हैं, जो सर्प का कौपीन धारण किये, चन्द्रचूड, त्रिनेत्र तथा विविध भूषा धारण किये हैं; उन दक्षिणामूर्ति की मैं पूजा करता हूँ)—इस प्रकार का ध्यान करना चाहिये। उनका पूजन पञ्चाक्षर मन्त्र में वर्णित पीठ पर करना चाहिये।

यन्त्रपूजा—शैवोक्त पीठपूजा करके उसके मध्य में दक्षिणामूर्ति की मूर्ति स्थापित करके पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूज कर आवरणपूजा करना चाहिये। वह इस प्रकार है—षट्कोण में, केसरों में, आग्नेयादि कोणों मध्य में तथा चारो दिशाओं में 'ॐ आं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गों की पूजा करके बाहर के आठों पत्रों पर पूर्वादिक्रम से 'ॐ सरस्वत्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाद पूर्वादि चारो दिशाओं में 'ॐ सिद्धेभ्यो नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से पूजन करे। फिर उसके बाहर भूगृह में पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रादि आठ लोकपालों का पूजन कर पुनः उनके बाहर उन्हीं के समीप उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करना चाहिये। इस

प्रकार यन्त्र के पाँचों आवरणों की पूजा करके प्रधानदेव (दक्षिणामूर्ति) का धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन से पूजन कर स्तोत्र से स्तुति कर मूल मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिये। जैसा कि शारदातिलक में कहा भी है—

ब्रह्मचारी रहकर एक लाख मन्त्रों का जप करे। फिर जप का दशांश घृतलिप्त कमलपुष्पों का हवन अग्नि में करना चाहिये। इस पूजादि के द्वारा मन्त्र सिद्ध कर लेने पर वह उत्तम साधक बृहस्पति के समान वाणी में सामर्थ्य को प्राप्त हो जाता है। इस मन्त्र को जपते हुए शुद्ध जल से शिव के सिर पर अभिषेक करने से लक्ष्मी तथा आरोग्य की प्राप्ति होती है। कण्ठमात्र जल में स्थित होकर यदि एक सहस्र मन्त्र (द्वितीय दक्षिणामूर्ति मन्त्र) का जप सूर्योदय के पूर्व प्रतिदिन करे तो वह मन्त्रसाधक विद्वानों में अग्रणी हो जाता है। लक्ष्मी की कामना वाला साधक गौरी के साथ पार्श्व में विराजमान शिव का चिन्तन करे तथा अयुत (दस सहस्र) की सङ्ख्या में इस मन्त्र का जप करे तो उसे अपार लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

मन्त्रसाधक को प्रयत्नपूर्वक गोमूत्र में पकाया हुआ भात खाना चाहिये अथवा भिक्षान्न का सेवन करना चाहिये। अथवा द्वितीय दक्षिणामूर्ति के मन्त्र को एक अयुत का दुगुना अर्थात् दो अयुत (चालीस सहस्र) की सङ्ख्या में जप करना चाहिये। ऐसा साधक भले ही वेदशास्त्रों को न सुना हो; परन्तु वह उनका पारङ्गत विद्वान् हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है। यह सिद्धों, गन्धर्वों, मुनियों एवं योगियों द्वारा सेवित मन्त्र है; जिसे मैंने ज्ञान एवं वाणी को चाहने वालों के लिये प्रकट किया है। यह मन्त्रों का नायक है।

श्रीदक्षिणामूर्तिमन्त्रयन्त्रम्
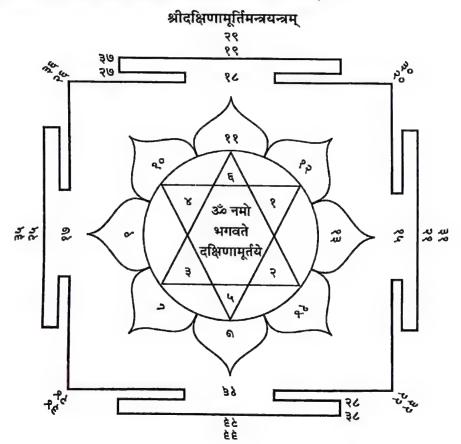
आपदुद्धारकवटुकभैरवमन्त्रानुष्ठानविधानम्

रुद्रयामले—

कदाचिद्गिरिजा शम्भुं पप्रच्छोपासनाविधिम्। येनेदं सर्वलोकानां मनेप्सितफलं भवेत्॥

आपदुद्धारक वटुकभैरव मन्त्रानुष्ठान-विधान—एक समय की बात है (रुद्रयामल के अनुसार) कि अकस्मात् देवी पार्वती ने भगवान् शङ्कर से उपासना-विधि को पूछा, जिससे कि सभी लोकों को मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति हो सके।

श्रीपार्वत्युवाच—

प्राणनाथ जगन्नाथ जगदादिजगन्मय। शम्भो शङ्कर देवेश वटुकाराधनं वद॥
एकादशसहस्रं तु भजनं हि त्वयोदितम्। विधिं तस्य विशेषेण ब्रूहि त्वं शङ्कराधुना॥

पार्वती जी ने पूछा—हे प्राणनाथ! जगत् के स्वामी, जगत् के आदि, जगत् में व्याप्त, शम्भो, शङ्कर, देवेश! आप मुझसे वटुकभैरव की आराधना-विधि बताइये। आपने जो ग्यारह सहस्र भजन कहे हैं, उनकी विधि भी आप इस समय बताइये।

शिव उवाच—

सम्यक् पृष्टं त्वया देवि लोकदुःखविमोचनम्। मया वटुकरूपं हि घृतं सर्वसुखावहम्॥
अन्ये देवास्तु कालेन प्रसन्नाः सम्भवन्ति हि। वटुकः सेवितः सद्यः प्रसीदति ध्रुवं शिवे॥
दुःखे च सेवितः शीघ्रं दुःखं नाशयते क्षणात्। सुखे च सेवितो नित्यं सुखं वर्द्धयते बहु॥
तस्मात्सेव्यो नरैश्चायं सर्वकामफलाय वै। सेवोपायं प्रवक्ष्यामि यथा सिद्धिर्भवेद्ध्रुवम्॥
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि वटुकस्य महात्मनः। विधानं परमं गोप्यं ब्रह्मादीनां सुदुर्लभम्॥
मन्त्रं वै वसुसंक्षेपात्कथयिष्यामि वल्लभे। येन विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं साधयेत्सुधीः॥
एकदा देवदेवेशि तपसे मन्दराचलम्। गतोऽहं परमानन्दान्मूलप्रकृतिमीश्वरम्॥
चक्रे परमसन्तुष्टां तपसा भावितात्मना। साकाशरूपिणी देवी प्रोवाच वचनं मुदा॥
तुष्टाहं शङ्करं प्रीता वरं वरय दुर्लभम्।

शिव उवाच—

वटुकस्य विधानं मे परमं भक्तितो वरम्॥
परमाशयान्मन्त्रस्य येन सिध्यति सर्वथा। मनोरमाणि मन्त्रस्य सर्वकार्याणि साम्प्रतम्॥
इति वाक्यं च मे श्रुत्वा मूलभूता सनातनी। उवाच यादृशं देवी विधानं शृणु वल्लभे॥
वटुकाख्यस्य देवस्य भैरवस्य महात्मनः। ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यैर्वन्दितस्य दयानिधेः॥

श्री शिवजी बोले—हे देवि! लोगों के कष्ट को दूर करने के लिये आपने बहुत अच्छी बात पूछी है। मैंने सबके लिये सुखप्रद वटुक का रूप धारण किया है। अन्य देवता तो देर में प्रसन्न होते हैं; परन्तु वटुक की सेवा करने पर हे पार्वति! वे शीघ्र ही निश्चित प्रसन्न हो जाते हैं। यदि दुःख में उनकी आराधना की जाय तो शीघ्र ही दुःख दूर होकर सुख की प्राप्ति हो जाती है। सुख में उनकी आराधना करने पर नित्य बहुत सुख की वृद्धि होती है। अतः मनुष्यों को सर्वकामफलप्रद वटुक का सेवन करना चाहिये। अब मैं सेवा का उपाय कहता हूँ, जिससे निश्चित ही सफलता मिलती है। हे देवि! सुनो, अब मैं वटुक का गोपनीय दुर्लभ विधान कहता हूँ। हे प्रिये! अब मैं संक्षेप

में उनका मन्त्र कहता हूँ, जिसे जानकर तीनों लोक सध जाते हैं। एक समय की बात है कि मैं मन्दराचल पर्वत पर मूल प्रकृति भगवती की उपासना के लिये गया था, उन्हें मैंने तप से प्रसन्न किया तो उन्होंने आकाशरूपिणी होकर कहा—हे शङ्कर! मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, तुम दुर्लभ वर माँगो, तो मैंने उनसे वटुकभैरव की उपासना-विधि पूछी। तब उन्होंने जो कि ब्रह्मा विष्णु महेश से वन्दित हैं, दया की निधान हैं, मुझे महात्मा वटुकभैरव की उपासना-विधि तथा मनोरम मन्त्रादि को बताया।

वटुकभैरवपूजनप्रयोगः

तत्र प्रयोगः शारदातिलके—सुमुहूर्ते शिवालयादिषु कृतनित्यक्रियो धृतभस्मत्रिपुण्ड्ररुद्राक्षः कूर्मसंशोधिते स्वासने उदङ्मुख उपविश्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम मन्त्रसिद्धिपूर्वकं श्रीआपदुद्धारप्रीत्यर्थमेकविंशतिलक्षात्मकं जपादिरूपपुरश्चरणमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च कृत्वा पूर्वोक्तशिवपञ्चाक्षरोदितं श्रीकण्ठादिकलान्तं न्यासं च कृत्वा मूलमन्त्रन्यासं च कुर्यात्।

मूलमन्त्रो यथा—'ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरुकुरु वटुकाय ह्रीं—इत्येकविंशतिवर्णो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। आपदुद्धारणभैरवो देवता। ह्रीं बीजं वँशक्तिः आँ कीलकम्। श्रीवटुकभैरवप्रीतये जपे विनियोगः। ॐ बृहदारण्यऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीवटुकभैरवदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ वं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ आं कीलकाय नमः॥ ६॥ चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे॥ ७॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रों वों ईशानाय नमः अङ्गुष्ठयोः॥ १॥ ॐ ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः तर्जन्योः॥ २॥ ॐ ह्रुं वुं अघोराय नमः मध्यमयोः॥ ३॥ ॐ ह्रिं विं वामदेवाय नमः अनामिकयोः॥ ४॥ ॐ ह्रं वं सद्योजाताय नमः कनिष्ठिकयोः॥ ५॥ इति करन्यासः॥ ॐ ह्रों वों ईशानाय नमः शिरसि॥ १॥ ॐ ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः वक्त्रे॥ २॥ ॐ ह्रुं वुं अघोराय नमः हृदि॥ ३॥ ॐ ह्रिं विं वामदेवाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ ह्रं वं सद्योजाताय नमः पादयोः॥ ५॥ इति देहन्यासः। ॐ ह्रों वों ईशानाय नमः ऊर्ध्ववक्त्रे॥ १॥ ॐ ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः पूर्ववक्त्रे॥ २॥ ॐ ह्रुं वुं अघोराय नमः दक्षिणवक्त्रे॥ ३॥ ॐ ह्रिं विं वामदेवाय नमः उत्तरवक्त्रे॥ ४॥ ॐ ह्रं वं सद्योजाताय नमः पश्चिमवक्त्रे॥ ५॥ इति वक्त्रन्यासः। एवं ह्रस्वशक्तिबीजमकाराढ्यं न्यासत्रयं कृत्वा एवमेव दीर्घशक्तिबीजवकारपुरःसरं अङ्गुल्यादिन्यासत्रयं पूर्ववत् कुर्यात्।

अथ हृदयादिन्यासः—ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ह्रूं वूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ह्रैं वैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ह्रः वः अस्त्राय फट्॥ ५॥ एवं षडङ्गन्यासं कृत्वा यथाकामनया ध्यायेत्।

अथ सात्त्विकध्यानम्—

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुन्तलोल्लासिवक्त्रं दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणीनूपुराद्यैः।
दीप्ताकारं विशदवसनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं हस्ताब्जाभ्यां वटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम्॥

अथ राजसध्यानम्—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।
नीलग्रीवमुदारभूषणशतं शीतांशुचूडोज्ज्वलं बन्धूकारुणवाससं भयहरं वन्दे सदा भावये॥

अथ तामसध्यानम्—

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं डमरुमथ सृणिं खड्गपाशाभयानि।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमदंष्ट्रं सर्पाकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत्किङ्किणीनूपुराढ्यम्॥

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युनिवारणम्। आयुरारोग्यजननमपवर्गफलप्रदम्॥
राजसं ध्यानमाख्यातं धर्मकामार्थसिद्धिदम्। तामसं शत्रुशमनं कृत्याभूतग्रहापहम्॥

एवं ध्यात्वा पीठपूजापूर्वकं यन्त्रादिपूजां कुर्य्यात्। तद्यथा—ॐ धं धर्म्माय नमः ॥ १ ॥ ॐ ज्ञां ज्ञानाय नमः ॥ २ ॥ ॐ वैं वैराग्याय नमः ॥ ३ ॥ ॐ ऐं ऐश्वर्य्याय नमः ॥ ४ ॥ ॐ अं अधर्माय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अं अज्ञानाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ अं अवैराग्याय नमः ॥ ७ ॥ ॐ अं अनैश्वर्याय नमः ॥ ८ ॥ इति पीठदेवता गन्धपुष्पैः सम्पूज्य ॐ वामायै नमः ॥ १ ॥ ॐ ज्येष्ठायै नमः ॥ २ ॥ ॐ रौद्र्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ काल्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ कलविकरण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ बलविकरण्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ बलप्रमथिन्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः ॥ ८ ॥ ॐ मनोन्मन्यै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः सम्पूज्य 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिना आसनं दद्यात्। ततंस्तत्र यथाविधि ताम्रकलशं संस्थाप्य तत्र वरुणमावाह्य सम्पूज्य तदुपरि पट्टवस्त्रं प्रसार्य्य तत्र शक्तिगन्धाष्टकेन भैरवयन्त्रं लिखेत्। शक्तिगन्धाष्टकं यथा—

चन्दनागरुकर्पूरचौरकुङ्कुमरोचनाः । जटामांसी कपियुता शक्तेर्गन्धाष्टकं विदुः ॥

वटुकभैरव उपासना-विधि—शारदातिलक में कहा गया है कि शुभ मुहूर्त में शिवालय आदि में यह कार्य करना चाहिये। सर्वप्रथम नित्यकर्मों से निवृत्त होकर भस्म, रुद्राक्ष, त्रिपुण्ड्र आदि धारण कर पूर्व के पद्धतिकाण्ड में कथित कूर्मशोधनादि करके अपने आसन पर बैठकर मूल मन्त्र से आचमन करके फिर प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण करके 'मम मन्त्रसिद्धिपूर्वकं श्री आपदुद्धारप्रीत्यर्थं एकविंशतिलक्षात्मकं जपादिरूपपुरश्चरणमहं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके उसके अङ्गत्वरूप में भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृका, बहिर्मातृका न्यास करके पूर्वोक्त शिवपञ्चाक्षरोदित श्रीकण्ठादि कला न्यास करके मूल मन्त्र का न्यास करना चाहिये।

मूल मन्त्र—ह्रीं वटुकाय आपदुद्धरणाय कुरुकुरु वटुकाय ह्रीं—यह इक्कीस अक्षरों का मन्त्र है। विनियोग—इस मन्त्र के बृहदारण्यक ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, आपदुद्धारक वटुकभैरव देवता हैं, 'ह्रीं' बीज है 'वं' शक्ति है, 'आं' कीलक है। इसका विनियोग वटुकभैरव की प्रसन्नता के लिये किया जाता है।

विनियोग के उपरान्त ॐ बृहदारण्यक ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि मूल में लिखित सात मन्त्रों से क्रमशः ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ ह्रों वों ईशानाय नमः अङ्गुष्ठयोः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ह्रों वों ईशानाय नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से देहन्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ ह्रों वों ईशानाय नमः ऊर्ध्ववक्त्रे' इत्यादि पाँच मन्त्र से वक्त्रादि न्यास करना चाहिये। इस प्रकार ह्रस्व शक्तिबीज तथा मकार से युक्त तीनों न्यासों को सम्पन्न कर तथैव दीर्घ शक्तिबीज वकार-पुरस्सर अङ्गुल्यादि तीनों न्यासों को करके फिर 'ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करके जैसी साधक की सात्त्विक; राजस या तामस कामना हो, उसी प्रकार के वटुकभैरव का ध्यान करना चाहिये। ध्यान के मन्त्र मूल में दिये गये हैं, यहाँ उन तीनों प्रकार के मन्त्रों के भावार्थ दिये जाते हैं—

सात्त्विक ध्यान—बालस्फटिक के समान कुन्तलों से उल्लासयुक्त मुख के साथ दिव्य कल्पों, मणियों, किंकिणियों, नूपुरों आदि से सज्जित, दीप्ताकार, विशद वसन, सुप्रसन्न, त्रिनेत्र, हाथों में शूल एवं दण्ड को धारण किये हुए वटुक की वन्दना करता हूँ।

राजस ध्यान—सूर्य के समान त्रिनेत्र, शरीर में रक्त अङ्गराग से लिप्त, प्रसन्न मुख वाले, हाथों में वरदमुद्रा, शूल, कपाल तथा अभय मुद्रा को धारण किये हुए, नील कण्ठ वाले, उदार, सैकड़ों भूषण धारण करने वाले, उज्ज्वल चन्द्रकला को धारण किये हुए, बन्धूकपुष्प (गुलदुपहरिया) के समान लाल रङ्ग के वस्त्रों को पहिने, भय को हरने वाले वटुकभैरव की सदा भावना करे।

तामस ध्यान—नीलाचल पर्वत की भाँति कान्ति वाले, चन्द्रकला को माथे पर धारण करने वाले, मुण्डमाला से युक्त, दिगम्बर, पिङ्गल वर्ण की जटाओं वाले, डमरू, सृणि (अङ्कुश), खड्ग, पाश, अभय मुद्रा, नाग, घण्टा,

कपाल को अपने करकमलों में लिये, विकट राल डाढ़ों वाले, सर्पों से वेष्टित, त्रिनेत्र, मणिमय किंकिणियों से शोभित तथा नूपुरयुक्त महेश का ध्यान करे।

त्रिविध ध्यान का फल—सात्त्विक ध्यान से अपमृत्यु का निवारण होता है। आयु-आरोग्य की प्राप्ति होती है तथा मोक्ष का फल मिलता है। राजस ध्यान धर्म, अर्थ एवं काम—इन तीनों पुरुषार्थों की प्राप्ति कराता है तथा तामस ध्यान से शत्रुओं का शमन तथा कृत्या, भूत, ग्रहादि का नाश होता है।

इस प्रकार ध्यान करके प्रथम पीठ की पूजा करने के उपरान्त यन्त्रादि की पूजा करनी चाहिये।

पीठपूजा—मूल में लिखित 'ॐ धं धर्माय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पीठदेवताओं की पूजा करे। यह पूजा गन्ध से की जाती है। फिर उसी से आगे मूल में लिखित 'ॐ वामायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से पीठशक्तियों की पूजा करनी चाहिये। फिर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः' कहकर पुष्पाञ्जलि द्वारा आसन दे। फिर उस पीठ पर विधिपूर्वक ताम्रकलश को पूर्वकथित मन्त्रों के द्वारा स्थापित करना चाहिये। फिर उस कलश पर वरुण का आवाहन करके पूजा करके तब उसके ऊपर रेशमी वस्त्र बिछाकर शक्तिगन्धाष्टक के द्वारा भैरव यन्त्र लेखन करना चाहिये।

आपद्भैरवयन्त्रोद्धारः

अथ यन्त्रोद्धारः रुद्रयामले—

यन्त्रोद्धारमिमं देवि त्रैलोक्ये चातिदुर्लभम्। तद्यन्त्रं च प्रवक्ष्यामि यत्र देवं च पूजयेत्॥ १॥
मध्ये चाष्टदलं पद्मं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम्। त्रिकोणं च ततः कृत्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत्॥ २॥
वर्तुलं चाष्टपत्रं च चतुरस्रं त्रयात्मकम्। एवं यन्त्रं च सम्पूज्य स्वस्थो भूत्वा जपेन्नरः॥ ३॥

एवं यन्त्रं संलिख्य अथवा यथाशक्ति सुवर्णनिर्मितं यन्त्रं वा। तत्र सावयवां स्वर्णनिर्मितां भैरवप्रतिमां सात्त्विकादिध्यानप्रतिपादितां स्थापयेत्। ततः प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा यथाविधि पूजयेत्। तद्यथा—देवेश भक्तिसुलभ परिवारसमन्वित। यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावदेव इहावह॥ १॥ ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामिसद्योजातायवैनमोनमः भुवेभवेनातिभुवेभवस्वुमांभुवोद्भवाय नमः। इति मन्त्रेणावाहनमुद्रां प्रदर्श्य ॐ भगवन् भैरव इहागच्छ आवाहनीभव इत्यावाहयेत्। ततः ॐ वामदेवायनमोज्येष्ठायनमःश्रेष्ठायनमोरुद्रायनमः कालायनमः कलविकरणायनमो-बलविकरणायनमः॥१॥ मूलं पठित्वा स्थापनीमुद्रां प्रदर्श्य स्थापनीभव इति संस्थापयेत्॥ २॥ ततो मूलं पठित्वा सन्निधापनमुद्रया इह सन्निधेहि सन्निधानो भवेति सन्निधाय॥ ३॥ ॐ अघोरेभ्योथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्योनमस्तेऽस्तुरुद्ररूपेभ्यः॥१॥ मूलं पठित्वा सन्निरोधनमुद्रया इह सन्निरुद्ध सन्निरोधिनीभव इति सन्निरोध्य॥ ४॥ ततो मूलं पठित्वा 'ॐ तत्पुरुषायविद्महेमहादेवायधीमहि। तन्नोरुद्रः प्रचोदयात्' इति मन्त्रेण योनिमुद्रां प्रदर्श्य सम्मुखो भव इति सम्मुखीकृत्य॥ ५॥ मूलान्ते ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपति-र्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्माशिवोमेअस्तुसदाशिवोम्॥१॥ इति वन्दनं कुर्यात्॥ ६॥ ततो मूलमन्त्रान्ते तत्तन्मन्त्रैः पाद्यादि-पुष्पान्तैरुपचारैः 'ॐ श्रीमद्वटुकभैरवाय नमः' इति मन्त्रेण सम्पूज्य आवरणपूजान्ते धूपदीपादि निवेदयेत्।

रुद्रयामल तन्त्रग्रन्थ के अनुसार यन्त्रोद्धार—किसी भी यन्त्र की निर्माण-विधि या लेखन-विधि को उसका उद्धार कहते हैं। यहाँ पर रुद्रयामल में श्री शिव जी देवी पार्वती से आपद् भैरव की पूजा के लिये आपद् भैरव यन्त्र का उद्धार कहते हैं।

हे देवि! अब मैं तुमसे इस त्रैलोक्य में दुर्लभ 'आपद् भैरव यन्त्र' का उद्धार कहता हूँ, जिससे वटुकभैरव की पूजा करनी चाहिये। मध्य में अष्टदल कमल लिखे, जिसमें कर्णिका तथा केसर प्रत्यक्ष दिखते हों। फिर उसके

बाहर त्रिकोण बनाये। त्रिकोण के बाहर षट्कोण बनाना चाहिये। फिर उसके बाहर अष्टपत्रात्मक वर्तुल बनाना (लिखना) चाहिये। उस वर्तुल के बाहर तीन चतुरस्त्र खींचना चाहिये। इस प्रकार के यन्त्र को पूजित करके साधक को स्वस्थ चित्त से मन्त्र का जप करना चाहिये।

इस प्रकार यन्त्र को लिखकर अथवा लिखने के स्थान पर यदि सामर्थ्य हो तो स्वर्ण के पत्र पर यन्त्र का लेखन कराकर स्थापित करे तथा उसके ऊपर (यन्त्र के ऊपर) स्वर्णनिर्मित बटुकभैरव की प्रतिमा स्थापित कर उसमें सात्त्विकादि ध्यान करे। फिर उसकी प्राणप्रतिष्ठा करके यथाविधि पूजा करनी चाहिये।

श्रीआपदुद्धारणबटुकभैरवयन्त्रं सदैवतं सबीजं समन्त्रमिदम्
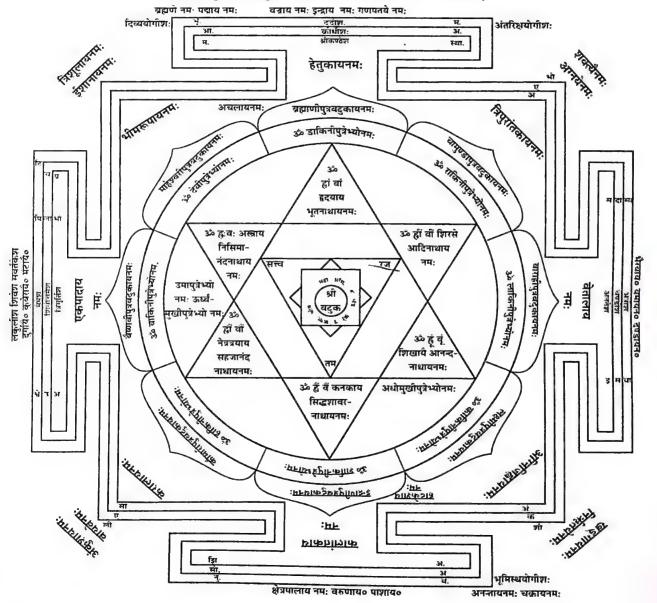
भैरवप्रतिमा पूजा-विधि—हे देवेश! आप भक्ति करने पर सुलभ हैं; अतः जब तक मैं पूजा करूँ तब तक आप यहाँ आकर प्रतिष्ठित रहें। इस प्रकार कहकर 'ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः' इस मन्त्र का उच्चारण करके आवाहनमुद्रा का प्रदर्शन करे। फिर मूल मन्त्र का उच्चारण करके 'ॐ भगवन् भैरव इहागच्छ आवाहनीभव' कहकर आवाहन करे। तत्पश्चात् 'ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः' इस आपद् उद्धारक बटुकभैरव के (इक्कीस वर्णों वाले) मन्त्र का उच्चारण करके स्थापनी मुद्रा का प्रदर्शन करके 'स्थापनी भव' कहकर स्थापित करे। फिर मूल मन्त्र (ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं) का उच्चारण कर सन्निधापन मुद्रा का प्रदर्शन कर 'इह सन्निधेहि सन्निधानीभव' ऐसा कहकर सन्निधान करे। फिर 'ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्यः' इस वैदिक मन्त्र के उच्चारणोपरान्त मूल मन्त्र पढ़कर सन्निरोधन मुद्रा के प्रदर्शन के साथ 'इह सन्निरुद्ध सन्निरोधिनी भव' कहकर सन्निरोधन करे। पुनः मूल मन्त्र को पढ़कर फिर 'ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्' इस रुद्रगायत्री को पढ़कर योनिमुद्रा का प्रदर्शन कर 'सम्मुखी भव' कहकर सम्मुखीकरण करना चाहिये। पुनः इक्कीस अक्षरों वाले मूल मन्त्र का उच्चारण करके फिर 'ॐ ईशानः सर्वविद्यानां ईश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्माशिवोमे अस्तु सदाशिवोम्' इस वैदिक मन्त्र के उच्चारण द्वारा ईशान शिव की वन्दना करनी चाहिये।

इसके पश्चात् प्रथम इक्कीस वर्णों का आपदुद्धारक वटुकभैरव मन्त्र (ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं) को, जो कि इस प्रसङ्ग में मूल मन्त्र है, प्रत्येक बार उच्चारण करके फिर षोडशोपचार के जो भी वैदिक मन्त्र हैं, उनसे पाद्य से लेकर पुष्पान्त उपचारों द्वारा पूजन करना चाहिये। वैदिक मन्त्र के अन्त में 'श्रीमद्वटुकभैरवाय नमः' मन्त्र अवश्य बोलते जाना चाहिये। इसके पश्चात् आवरण-पूजा करनी चाहिये तथा आवरण पूजादि के अन्त में धूप-दीप का निवेदन करना चाहिये।

इस यन्त्र में ग्यारह आवरण होते हैं; प्रत्येक आवरण की पूजा विधि-विस्तारपूर्वक आगे दी जा रही है।

आपदुद्धारकयन्त्रावरणपूजा

अथावरणपूजा पुष्पाञ्जलिमादाय—

ॐ संविन्मयः परो देवः परामृतरसप्रियः। अनुज्ञां देहि वटुक परिवारार्चनाय मे॥ १॥

इति पुष्पाञ्जलिं भैरवोपरि दत्त्वा आज्ञां गृहीत्वा पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीं प्रकल्प्य तदनुसारेण अन्या दिशश्च कृत्वा यन्त्रं पूजयेत्। मध्ये त्रिकोणे देवस्याग्रे ॐ ह्रौं वौं ईशानाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रैं वैं तत्पुरुषाय नमः॥ २॥ ॐ ह्रूं वूं अघोराय नमः॥ ३॥ ह्रीं वीं वामदेवाय नमः॥ ४॥ ॐ ह्रां वां सद्योजाताय नमः॥ ५॥ इति पूजयेत्॥ १॥

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥

इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात्॥ १॥ एवं सर्वत्र। इति प्रथमावरणम्॥ १॥

ततः कर्णिकाद्बहिः अष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ असिताङ्गभैरवाय नमः॥ १॥ ॐ रुरुभैरवाय नमः॥ २॥ ॐ चण्डभैरवाय नमः॥ ३॥ ॐ क्रोधभैरवाय नमः॥ ४॥ ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः॥ ५॥ ॐ कपालभैरवाय नमः॥ ६॥ ॐ भीषणभैरवाय नमः॥ ७॥ ॐ संहारभैरवाय नमः॥ ८॥ इति भैरवाष्टकं सम्पूज्य मूलेन 'अभीष्टसिद्धिं०' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति द्वितीयावरणम्॥ २॥

ततस्त्रिकोणाद्बहिः आग्नेयादिषट्कोणेषु ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः॥ २॥ ॐ ह्रीं आनन्दनाथाय नमः॥ ३॥ ॐ ह्रीं सिद्धशावरनाथाय नमः॥ ४॥ ॐ ह्रीं सहजानन्दनाथाय नमः॥ ५॥ ॐ ह्रीं निःसीमानन्दनाथाय नमः॥ ६॥ इति रुद्रयामलोक्तान्सम्पूज्य तत्रैव ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा

नमः ॥ २ ॥ ॐ हूं वूं शिखायै वषट् नमः ॥ ३ ॥ ॐ हैं वैं कवचाय हुं नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रः वः अस्त्राय फट् नमः ॥ ६ ॥ इत्यङ्गानि च सम्पूज्य मूलमन्त्रेण पूर्ववत्पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति तृतीयावरणम् ॥ ३ ॥

ततस्तद्बहिर्वतुले पूर्वादीशानपर्यन्तं क्रमेण ॐ ह्रीं डाकिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं राकिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं लाकिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं काकिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं शाकिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं हाकिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं मालिनीपुत्रेभ्यो नमः ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं देवीपुत्रेभ्यो नमः ॥ ८ ॥ इत्यष्टदिक्षु सम्पूज्य ततो (देवस्य दक्षभागे) ॐ ह्रीं उमापुत्रेभ्यो नमः ॥ ९ ॥ ॐ ह्रीं रुद्रपुत्रेभ्यो नमः ॥ १० ॥ ॐ ह्रीं मातृपुत्रेभ्यो नमः ॥ ११ ॥ (पूर्वेशानयोर्मध्ये ऊर्ध्वम्) ॐ ह्रीं ऊर्ध्वमुखीपुत्रेभ्यो नमः ॥ १२ ॥ (पश्चिमनैर्ऋतयोर्मध्ये अधः) ॐ ह्रीं अधोमुखीपुत्रेभ्यो नमः ॥ १३ ॥ इति त्रयोदश पुत्रान्सम्पूज्य मूलेन पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति चतुर्थावरणम् ॥ ४ ॥

तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादग्न्यन्तं वामक्रमेण (पूर्वे) ॐ ह्रीं ब्रह्माणीपुत्रवटुकाय नमः ॥ १ ॥ (ईशान्याम्) ॐ ह्रीं माहेश्वरीपुत्रवटुकाय नमः ॥ २ ॥ (उत्तरे) ॐ ह्रीं वैष्णवीपुत्रवटुकाय नमः ॥ ३ ॥ (वायव्याम्) ॐ ह्रीं कौमारीपुत्रवटुकाय नमः ॥ ४ ॥ (पश्चिमे) ॐ ह्रीं इन्द्राणीपुत्रवटुकाय नमः ॥ ५ ॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ ह्रीं महालक्ष्मीपुत्रवटुकाय नमः ॥ ६ ॥ (दक्षिणे) ॐ ह्रीं वाराहीपुत्रवटुकाय नमः ॥ ७ ॥ (आग्नेय्याम्) ॐ ह्रीं चामुण्डापुत्रवटुकाय नमः ॥ ८ ॥ इति सम्पूज्य मूलेन पूर्ववत्पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति पञ्चमावरणम् ॥ ५ ॥

अष्टदलाद्बहिः चतुरस्राभ्यन्तरे पूर्वादिप्राग्दक्षिणेन दशदिक्षु ॐ ह्रीं हेतुकाय नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं त्रिपुरान्तकाय नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं वेतालाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ अग्निजिह्वाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं कालान्तकाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं करालाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं एकपादाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं भीमरूपाय नमः ॥ ८ ॥ (इन्द्रेशानयोर्मध्ये) ॐ ह्रीं अचलाय नमः ॥ १ ॥ (नैर्ऋतवरुणयोर्मध्ये) ॐ ह्रीं हाटकेशाय नमः ॥ २ ॥ इति सम्पूज्य मूलेन पूर्ववत्पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति षष्ठावरणम्।

ततः त्रिरेखात्मकभूपुरस्य प्रथमरेखायां दिग्विदिगन्तरालेषु षोडशस्थानेषु श्रीकण्ठादिमहासेनान्तान्यजेत्। (पूर्वे) ॐ ह्रीं श्रीकण्ठेशपूर्णोदरीभ्यां नमः ॥ १ ॥ (दक्षिणे) ॐ ह्रीं अनन्तेशविरजाभ्यां नमः ॥ २ ॥ (पश्चिमे) ॐ ह्रीं सूक्ष्मेशशाल्मलीभ्यां नमः ॥ २ ॥ (उत्तरे) ॐ ह्रीं त्रिमूर्तीशलोलाक्षीभ्यां नमः ॥ ४ ॥ (आग्नेये) ॐ ह्रीं अमरेशवर्त्तुलाक्षीभ्यां नमः ॥ ५ ॥ (नैर्ऋते) ॐ ह्रीं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ (वायव्याम्) ॐ ह्रीं भारभूतीशदीर्घमुखीभ्यां नमः ॥ ७ ॥ (ईशान्याम्) ॐ ह्री अतिथीशगोमुखीभ्यां नमः ॥ ८ ॥ (पूर्वाग्निमध्ये) ॐ स्थाण्वीशदीर्घजिह्वाभ्यां नमः ॥ ९ ॥ (दक्षिणनैर्ऋत्ययोर्मध्ये) ॐ ह्रीं हरेशकुण्डोदरीभ्यां नमः ॥ १० ॥ (पश्चिमवायुमध्ये) ॐ ह्रीं झिंटीशोर्ध्वकेशीभ्यां नमः ॥ ११ ॥ (उत्तरेशानमध्ये) ॐ ह्रीं भौतिकेशविकृतमुखीभ्यां नमः ॥ १२ ॥ (अग्निदक्षिणमध्ये) ॐ ह्रीं सद्योजातेशज्वालामुखीभ्यां नमः ॥ १३ ॥ (निर्ऋतिवरुणमध्ये) ॐ ह्रीं अनुग्रहेशोल्कामुखीभ्यां नमः ॥ १४ ॥ (वायुसोममध्ये) ॐ ह्रीं अक्रूरेशश्रीमुखीभ्यां नमः ॥ १५ ॥ (ईशानपूर्वमध्ये) ॐ ह्रीं महासेनेशविद्यामुखीभ्यां नमः ॥ १६ ॥ इति सम्पूज्य मूलेन पूर्ववत्पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति सप्तमावरणम् ॥ ७ ॥

भूपुरस्य द्वितीयरेखायां दिग्विदिगन्तरालेषु षोडशस्थानेषु क्रोधीश्वराद्याषाढान्तान् यजेत्। (पूर्वे) ॐ ह्रीं क्रोधीशमहाकालीभ्यां नमः ॥ १ ॥ (दक्षिणे) ॐ ह्रीं चण्डीशसरस्वतीभ्यां नमः ॥ २ ॥ (पश्चिमे) ॐ ह्रीं पञ्चान्तकेशसर्वसिद्धिगौरीभ्यां नमः ॥ ३ ॥ (उत्तरे) ॐ ह्रीं शिवोत्तमेशत्रैलोक्यविजयाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ (आग्नेय्याम्) ॐ ह्रीं एकरुद्रेशमन्त्रशक्तिभ्यां नमः ॥ ५ ॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ ह्रीं कूर्मेशात्मकशक्तिभ्यां नमः ॥ ६ ॥ (वायव्याम्) ॐ ह्रीं एकनेत्रेशभूतमातृकाभ्यां नमः ॥ ७ ॥ (ऐशान्याम्) ॐ ह्रीं चतुराननेशलम्बोदरीभ्यां नमः ॥ ८ ॥ (पूर्वाग्निमध्ये) ॐ ह्रीं अजेशद्राविणीभ्यां नमः ॥ ९ ॥ (दक्षिणनैर्ऋतमध्ये) ॐ ह्रीं सर्वेशनागरीभ्यां नमः ॥ १० ॥ (पश्चिमवायुमध्ये) ॐ ह्रीं सोमेशखेचरीभ्यां नमः ॥ ११ ॥ (उत्तरेशानमध्ये) ॐ ह्रीं लाङ्गलीशमञ्जरीभ्यां नमः ॥ १२ ॥ (अग्नियाम्यमध्ये) ॐ ह्रीं दारुकेशरूपिणीभ्यां नमः ॥ १३ ॥ (नैर्ऋतपश्चिममध्ये) ॐ ह्रीं अर्धनारीशवीरणीभ्यां नमः ॥ १४ ॥ (वायुसोममध्ये) ॐ ह्रीं उमाकान्तेशकाकोदरीभ्यां नमः ॥ १५ ॥ (ईशानपूर्वमध्ये) ॐ ह्रीं आषाढेशपूतनाभ्यां नमः ॥ १६ ॥ इति पूजयेत्। मूलमन्त्रेण पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति अष्टमावरणम् ॥ ८ ॥

भूपुरस्य तृतीयरेखायां दिग्विदितगन्तरालेषु षोडशस्थानेषु दण्डीश्वरादिभृग्वीशान्तान् पूजयेत्। तत्र (पूर्वे) ॐ ह्रीं दण्डीशभद्रकालीभ्यां नमः ॥ १ ॥ (दक्षिणे) ॐ ह्रीं अत्रीशयोगिनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ (पश्चिमे) ॐ ह्रीं मीनेशशङ्खिनीभ्यां नमः ॥ ३ ॥ (उत्तरे) ॐ ह्रीं मेषेशसर्जनीभ्यां नमः ॥ ४ ॥ (आग्नेय्याम्) ॐ ह्रीं लोहि तेशकालरात्रीभ्यां नमः ॥ ५ ॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ ह्रीं शिखीशकुञ्चिकाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ (वायव्याम्) ॐ ह्रीं छागलेशकपर्दिनीभ्यां नमः ॥ ७ ॥ (ऐशान्याम्) ॐ ह्रीं द्विरण्डेशवज्रिणीभ्यां नमः ॥ ८ ॥ (पूर्वाग्निमध्ये) ॐ ह्रीं महाकालेशजयाभ्यां नमः ॥ ९ ॥ (दक्षिणनैर्ऋतमध्ये) ॐ ह्रीं त्वगात्मभ्यां वालेशसुमुखेश्वरीभ्यां नमः ॥ १० ॥ (पश्चिमवायव्यमध्ये) ॐ ह्रीं असृगात्मभ्यां भुजङ्गेशरेवतीभ्यां नमः ॥ ११ ॥ (उत्तरेशानयोर्मध्ये) ॐ ह्रीं मांसात्मभ्यां पिनाकीशमाधवीभ्यां नमः ॥ १२ ॥ (आग्नेयदक्षिणमध्ये) ॐ ह्रीं मेदात्मभ्यां खड्गीशवारुणीभ्यां नमः ॥ १३ ॥ (नैर्ऋतपश्चिममध्ये)—ॐ ह्रीं अस्थ्यात्मभ्यां वकेशवायवीभ्यां नमः ॥ १४ ॥ (वायुसोममध्ये) ॐ ह्रीं मज्जात्मभ्यां श्वेतेशरक्षोवधारिणीभ्यां नमः ॥ १५ ॥ (ईशानपूर्वमध्ये) ॐ ह्रीं शुक्रात्मभ्यां भृग्वीशसहजाभ्यां नमः ॥ १६ ॥ ततो भूपुराद्बहिः दक्षिणभागे लकुलेशादित्रयं पूजयेत्—ॐ ह्रीं प्राणात्मभ्यां लकुलीशलक्ष्मीभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं शक्त्यात्मभ्यां शिवेशव्यापिनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं क्रोधात्मभ्यां संवर्तकेशमहामायाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ (ईशानभागे) ॐ ह्रीं योगिनीसहितेभ्यो दिव्ययोगीश्वरेभ्यो नमः ॥ ४ ॥ (आग्नेयकोणे) ॐ ह्रीं योगिनीसहितेभ्योऽन्तरिक्षयोगीश्वरेभ्यो नमः ॥ ५ ॥ (नैर्ऋतकोणे) ॐ ह्रीं योगिनीसहितभूमिस्थयोगीश्वरेभ्यो नमः ॥ ६ ॥ (पूर्वे) गं गणपतये नमः ॥ ७ ॥ (दक्षिणे) भैं भैरवाय नमः ॥ ८ ॥ (पश्चिमे) क्षें क्षेत्रपालाय नमः ॥ ९ ॥ (उत्तरे) दुं दुर्गायै नमः ॥ १० ॥ इति सम्पूज्य मूलमन्त्रेण पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति नवमावरणम् ॥ ९ ॥

भूपुराद्बहिः पूर्वादिदशदिक्षु इन्द्रादीन् पूजयेत्—ॐ ह्रीं लं इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं रं अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं मं यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं क्षं निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं वं वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं यं वायवे नमः ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं सं सोमाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं इं ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं आं ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ ॐ ह्रीं अं अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति सम्पूज्य मूलमन्त्रेण पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति दशमावरणम् ॥ १० ॥

ततः पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदिक्पालसमीपे स्वस्वायुधान्पूजयेत्। तद्यथा—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इति सम्पूज्य मूलेन पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति एकादशमावरणम् ॥ ११ ॥

एवमावरणपूजां कृत्वा मूलमन्त्रेण धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनादिभिर्भैरवं सम्पूज्य स्तवराजेन स्तुत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य यथाविधि जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणमेकविंशतिलक्षात्मकम्। ततो जपान्ते मधुरसंयुतैस्तिलैर्दशांशहोमं कृत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्य्यात्। होमान्ते वा चतुर्दश्यां वाष्टम्यां मध्यरात्रे महाबलिदानं कार्य्यम्। एवं सिद्धे मन्त्रे स्वकार्यार्थं प्रयोगान्साधयेत्।

आवरणपूजा—हाथों में पुष्पाञ्जलि लेकर 'ॐ संविन्मयः परो देवः परामृतरसप्रियः। अनुज्ञां देहि वटुक परिवारार्चनाय मे ॥' इस मन्त्र से भैरव के ऊपर पुष्पाञ्जलि छोड़नी चाहिये। फिर उनसे आज्ञा लेकर पूज्य एवं पूजक के मध्य प्राची दिशा है—ऐसी मन में कल्पना करके उसी के अनुसार अन्य दिशाओं की कल्पना करके वटुकभैरव यन्त्र की पूजा करनी चाहिये। यन्त्र के मध्य के त्रिकोण में देव के आगे 'ॐ ह्रौं वौं ईशानाय नमः' इत्यादि मूल में लिखित पाँच मन्त्रों से शिवजी के पाँच मुखों की पूजा क्रम से करनी चाहिये। फिर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्' ऐसा कहकर प्रथमावरण पूजा की पुष्पाञ्जलि देव (भैरव) को समर्पित कर देनी चाहिये।

फिर कर्णिका के बाहर अष्टदलों में पूर्वादिक्रम से 'ॐ असिताङ्गभैरवाय नमः' इत्यादि मूलपाठ में लिखित आठ मन्त्रों से क्रमशः आठ भैरवों की पूजा करे। तत्पश्चात् 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्' कहकर दूसरे आवरण के देवताओं की पूजाहेतु पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।

फिर त्रिकोण के बाहर, आग्नेयादि छः कोणों में 'ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से रुद्रयामलोक्त नामों को पूजकर उसी आवरण में उसी क्रम से मूलपाठ में लिखित 'ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गों की पूजा करके फिर मूल मन्त्र (वटुकभैरव के इक्कीस वर्ण के मन्त्र) से पुष्पाञ्जलि देकर तृतीयावरण की पूजा समाप्त करे।

फिर तृतीयावरण के बाहर के वृत्त में पूर्व से लेकर ईशानकोण-पर्यन्त प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ ह्रीं डाकिनीपुत्रेभ्यो नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ दिशाओं में पूजा करे। फिर भैरव के दक्षिण भाग में 'ॐ ह्रीं उमापुत्रेभ्यो नमः, ॐ ह्रीं रुद्रपुत्रेभ्यो नमः' तथा 'ॐ ह्रीं मातृपुत्रेभ्यो नमः' इन तीन मन्त्रों से पूजन करे। फिर पूर्व तथा ईशानकोण के मध्य में ऊर्ध्व दिशा में 'ॐ ह्रीं ऊर्ध्वमुखीपुत्रेभ्यो नमः' से पूजन करे फिर पश्चिम एवं नैर्ऋत्य कोण के मध्य में अधो दिशा में 'ॐ ह्रीं अधोमुखीपुत्रेभ्यो नमः' कहकर त्रयोदश पुत्रों की पूजा कर मूल मन्त्र से चतुर्थ आवरण के देवों के लिये पुष्पाञ्जलि समर्पित करे।

फिर चतुर्थ आवरण के बाहर दलों में पूर्व से लेकर अग्निकोण तक वामक्रम से पूर्वादि दिशाओं में मूलोक्त 'ॐ ह्रीं ब्राह्मणीपुत्रवटुकाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से ईशानादि अग्निकोण-पर्यन्त पञ्चमावरण का पूजन कर मूलमन्त्र से पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये।

तदनन्तर अष्टदलों के बाहर चतुरस्त्र के भीतर पूर्वादि दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से दशो दिशाओं (पूर्व-आग्रेय-दक्षिण-नैर्ऋत्य-पश्चिम-वायव्य-उत्तर-ईशान-ऊर्ध्व-अधः) में 'ॐ ह्रीं हेतुकाय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से षष्ठावरण का पूजन करे। फिर पूर्व की भाँति मूल मन्त्र द्वारा पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये।

फिर यन्त्र में जो तीन रेखाओं वाला भूपुर है, उसकी प्रथम रेखा में दिशा-विदिशाओं के अन्तरालों (बीच के सोलह स्थानों) में श्रीकण्ठ से लेकर महासेन तक सप्तमावरण का पूजन करे। जैसे कि पूर्व में 'ॐ ह्रीं श्रीकण्ठेशपूर्णोदरीभ्यां नमः' (यन्त्र का चित्र पूर्व में द्रष्टव्य है) इस मन्त्र से पूजन करे। फिर दक्षिण में 'ॐ ह्रीं त्रिमूर्तीशलोलाक्षीभ्यां नमः' इत्यादि पूजनकर मूलमन्त्र से पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये।

फिर यन्त्र में भूपुर की द्वितीय रेखा में दिग्-विदिग् के अन्तरालों में मूलोक्त 'ॐ ह्रीं क्रोधीशमहाकालीभ्यां नमः' इत्यादि १६ मन्त्रों से पूर्वादि दिशाओं में (प्रदक्षिण) क्रम से अष्टमावरण का पूजन कर अन्त में मूल मन्त्र से पुष्पाञ्जलि प्रदान करे।

फिर भूपुर की तृतीय रेखा में दिशाओं-विदिशाओं के अन्तरालों में सोलह स्थानों में दण्डीश्वर से लेकर भृग्वीश-पर्यन्त नवमावरण का पूजन करे। मन्त्र एवं विधि मूलपाठ में लिखित है; यथा—'ॐ दण्डीशभद्रकालीभ्यां नमः' से पूर्व में, 'ॐ अत्रीशयोगिनीभ्यां नमः' से दक्षिण में, 'ॐ मीनेशशङ्खिनीभ्यां नमः' से पश्चिम में पूजन करे। इत्यादि क्रम से पूजन करके अन्त में मूल मन्त्र से पुष्पाञ्जलि दे। इसके पश्चात् भूपुर के बाहर भी दक्षिण भाग में 'ॐ ह्रीं प्राणात्मभ्यां लकुलीशलक्ष्मीभ्यां नमः' इत्यादि मूलोक्त तीन मन्त्रों से लकुलीश, शिवेश तथा क्रोधात्म की पूजा करे। तथैव ईशान में 'ॐ ह्रीं योगिनीसहितेभ्यो दिव्ययोगीश्वरेभ्यो नमः' से पूजा करे। इस प्रकार बाहरी भाग में कुल दश मन्त्रों से मूल-पाठानुसार पूजा करनी चाहिये।

फिर भूपुर के बाहर पूर्वादि दिशाओं में इन्द्र से लेकर प्रदक्षिणक्रम से अनन्त-पर्यन्त 'ॐ ह्रीं लं इन्द्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से पूजा करनी चाहिये। यह दशमावरण की पूजाविधि है।

ग्यारहवें आवरण में दिक्पालों के समीप पूर्वादि दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार से ग्यारहों आवरणों की पूजा सम्पन्न करके मूल मन्त्र से पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये। तदुपरान्त आगे दिये गये 'वटुकभैरव स्तवराज' नामक स्तोत्र का मूल पाठ करना चाहिये। फिर साष्टाङ्ग प्रणाम करके यथाविधि मूल मन्त्र का जप करना चाहिये। इसके पुरश्चरणहेतु मन्त्रजप की सङ्ख्या इक्कीस लाख निर्धारित है।

जप की समाप्ति पर शर्करा या मधु से युक्त तिलों (काले तिलों) द्वारा पुरश्चरण सङ्ख्या—इक्कीस लाख का दशमांश (दो लाख दस सहस्र) होम करना चाहिये। होम का दशमांश (२१ सहस्र) तर्पण, तर्पण का दशमांश (इक्कीस सौ=२१००) मार्जन तथा मार्जन का दशमांश अर्थात् दो सौ दस (२१०) ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। होम के पश्चात् ही अथवा चतुर्थी अथवा अष्टमी तिथियों में मध्य रात्रि में वटुकभैरव के लिये महाबलि समर्पित करनी चाहिये। इस प्रकार मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर अपने कार्य-हेतु प्रयोगों का साधन करना चाहिये।

आपदुद्धारकवटुकभैरवमन्त्रस्य विविधप्रयोगाः

शारदातिलके—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः। तद्दशांशे प्रजुहुयात्तिलैर्मधुरसंयुतैः॥ १॥
इति सम्पूजयेद्देवं वटुकं प्रोक्तवर्त्मना। धर्मार्थकाममोक्षाणां पतिर्भवति मानवः॥ २॥
विघ्नदुर्गां समाराध्य बलिं दत्त्वा विधानतः। काम्यानि साधयेन्मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात्॥ ३॥
शाल्यन्नं पललं सर्पिर्लाजाचूर्णानि शर्करा। गुडमिक्षुरसापूपैर्मध्वक्तैः परिमिश्रितैः॥ ४॥
कृत्वा कवलमाराध्य देवं प्रागुक्तवर्त्मना। रक्तचन्दनपुष्पाद्यैर्निशि तस्मै बलिं हरेत्॥ ५॥
ततः सिध्यन्ति कार्याणि बलिनानेन मन्त्रिणः। जुहुयात्सर्पिषा मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात्॥ ६॥

आपद् उद्धारक वटुकभैरव मन्त्र के विविध प्रयोग—हविष्यान्न का भोजन कर वर्णलक्ष (चौंसठ लाख) की सङ्ख्या में जितेन्द्रिय होकर जप करे तथा उसका दशांश (६,४०,०००=छः लाख चालीस सहस्र) तिल एवं शर्करा से होम करे। वटुकदेव का विधिपूर्वक पूजन करे तो मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारो पदार्थों की प्राप्ति हो जाती है। विघ्नदुर्गा की आराधना करके विधिपूर्वक उनके निमित्त बलिदान करके साधक अपनी कामनाओं को पूर्ण कर सकता है। शालि चावल, मांस, घृत, लाजाचूर्ण, शर्करा, गुड़, ईख का रस तथा मधु को मिलाकर कवल बनाकर इसका नैवेद्य देवता को (भैरव) को अर्पित करे। फिर लाल चन्दन, रक्त पुष्पादि के द्वारा रात्रि में बलिदान करे तब कार्य सिद्ध होते हैं॥ १-६॥

वश्याय जुहुयाद्दिक्षु शकलैर्वशयेज्जनान्। जुहुयात्पुत्रलाभाय प्रफुल्लैः कैरवैः सुधीः॥ ७॥
धनधान्यादिसम्पत्त्यै जुहुयात्तिलतण्डुलैः। बिल्वप्रसूनैर्जुहुयान्महतीं विन्दति श्रियम्॥ ८॥
लोणैर्मधुरसम्मिश्रैर्वशयेद्वनिताजनान्। वृष्टिकामेन होतव्यं वेतसानां समिद्वरैः॥ ९॥
अन्नेन जुहुयान्नित्यं धनधान्यादिसम्पदे। वश्याय जुहुयान्मन्त्री मधुना दिवसत्रयम्॥ १०॥

रोगोक्तौषधहोमेन रोगा नश्यन्ति तत्क्षणात्। कृत्याद्रोहे ग्रहद्रोहे भूतापस्मारसम्भवे॥ ११॥
व्याघ्राजिने समासीनो जुहुयादयुतं तिलैः। भूतादयः पलायन्ते नेक्षन्ते तां दिशं भयात्॥ १२॥

वशीकरण के लिये इक्षुखण्डों का हवन करना चाहिये। इससे लोग वश में हो जाते हैं। पुत्र की प्राप्ति के लिये कमल के फूलों का हवन करना चाहिये। धन-धान्यादि सम्पत्ति की प्राप्ति के लिये तिल एवं चावलों का हवन करना चाहिये। बेल के फूलों का हवन करने से महान् लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यदि लवण एवं शर्करा का हवन किया जाय तो स्त्रियाँ वश में हो जाती हैं। वृष्टि की इच्छा से वेतस की समिधाओं द्वारा होम करना चाहिये। नित्य ही अन्न (उबले चावल) का होम करने से धन-धान्यादि सम्पदा प्राप्त होती है। वशीकरण के लिये साधक को तीन दिन तक मधु से होम करना चाहिये। जिस रोग की जो औषध (जड़ी-बूटी खनिज आदि) हो, उसका भूतापस्मार आदि रोगों में व्याघ्रचर्म पर बैठकर एक अयुत आहुति तिलों से देनी चाहिये। इससे भूतादि उसी समय भाग जाते हैं तथा उस ओर झाँकते भी नहीं हैं॥ ७-१२॥

कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्स्यात्तच्चतुर्दशी। तिलैस्तण्डुलसम्मिश्रैर्मधुरत्रयलोलितैः॥ १३॥
त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जुहुयात्संस्कृतेऽनले। वटुकेश्वरमभ्यर्च्य भक्ष्यभोज्यफलान्वितम्॥ १४॥
नित्यं निवेद्य नैवेद्यं मध्यरात्रे बलिं हरेत्। एवं जपित्वा प्रयतः सहस्राण्येकविंशतिम्॥ १५॥
समाप्तिदिवसे रात्रावजं हुत्वा बलिं हरेत्। ततः कारयिता राजा तोषयेत्साधकं धनैः॥ १६॥
विधिनानेन सन्तुष्टो वटुकेशः प्रयच्छति। तेजो बलं यशः पुत्रान्कान्तिं लक्ष्मीमरोगताम्॥ १७॥
नश्यन्ति शत्रवः सर्वे वर्द्धन्ते बन्धुबान्धवाः। अवग्रहो न जायेत विषये तस्य भूपतेः॥ १८॥

कृष्णपक्ष की अष्टमी से कृष्णचतुर्दशी-पर्यन्त तिल, चावल तथा मधुरत्रय (गुड़, गुग्गुलु, मधु) के साथ प्रतिदिन तीन सहस्र होम करे तथा वटुकेश्वर की पूजा करके भक्ष्य-भोज्य एवं फलों का नैवेद्य समर्पित कर मध्य रात्रि में बलिदान कर मूल मन्त्र का जप इक्कीस सहस्र की सङ्ख्या में करे। समाप्ति दिवस पर अज (तीन साल पुराना अनाज = जौ) का होम कर बलिदान करे। ऐसा करने पर राजा उस साधक को धन-सम्पत्ति आदि देकर सन्तुष्ट करता है। इस विधान से सन्तुष्ट होकर वटुकभैरव साधक को तेज, यश, पुत्र, कान्ति, लक्ष्मी, आरोग्यता आदि देते हैं। साधक के सभी शत्रु नष्ट हो जाते हैं तथा उसके बन्धु-बान्धव एवं मित्र बढ़ जाते हैं; साथ ही उसके विषय में शासक के मन में कोई अवग्रह (विद्वेष भावना) नहीं रहता है॥ १३-१८॥

जुहुयात्केवलैर्लोणैरयुतं स्तम्भनेच्छया। निविडादिविमोक्षाय प्रयोगोऽयमुदाहृतः॥ १९॥
वचाचूर्णपलं जप्तं गव्येनाज्येन लोलितम्। विभज्य भक्षयेद्वन्ध्या मण्डलात्पुत्रकाङ्क्षिनी॥ २०॥
विनीतं पुत्रमाप्नोति मेधारोग्यबलान्वितम्। आदावन्ते प्रयोगस्य वटुकाय बलिं हरेत्॥ २१॥

शत्रु के स्तम्भन की इच्छा से केवल लवण की अयुत सङ्ख्या में आहुति देनी चाहिये। शत्रु का घेरा तोड़ने के लिये यह प्रयोग बताया गया है। इस मन्त्र को जपने के उपरान्त वचा (मीठी वच) का चूर्ण एक पल (५० ग्राम) की मात्रा में लेकर गोघृत में सानकर उसके चालीस समान भागों में विभाजित कर रख ले। प्रतिदिन एक भाग का सेवन करने से पुत्र की चाहना वाली वन्ध्या स्त्री बुद्धिमान्, स्वस्थ तथा विनीत पुत्र को प्राप्त करती है। इस प्रयोग के आदि एवं अन्त में श्री वटुकभैरव को बलि देनी चाहिये॥ १९-२१॥

द्विविधो बलिराख्यातो राजसः सात्त्विको बुधैः। राजसो मांसरक्ताढ्यः पलत्रयसमन्वितः॥ २२॥
मुद्गपायससंयुक्तो मधुरत्रयलोलितः। सात्त्विको मांसरहितः शेषमन्यत्पुरोक्तवत्॥ २३॥
ब्राह्मणो विनयः शुद्धः सात्त्विकं बलिमाहरेत्।

बलिदान के भेद—विद्वानों ने दो प्रकार का बलिदान कहा है—१. राजस तथा २. सात्विक। राजस बलि मांस एवं रक्त से युक्त होती है तथा इसका प्रमाण १५० ग्राम (एक सौ पचास ग्राम) होना चाहिये। मूँग, खीर तथा मधुरत्रय मिलाकर सात्विक बलि दी जाती है। सात्विक बलि मांसरहित होती है। शेष यदि कोई विशेष बात है तो वह पूर्व में यथास्थान लिख दी गई है। ब्राह्मण को शुद्ध एवं विनीत भाव से सात्विक बलि देनी चाहिये॥ २२-२३॥

साधयेन्मनुनानेन भस्म सर्वार्थसिद्धिदम्॥ २४॥
उशीरं चन्दनं कोष्ठं घनसारं सकुङ्कुमम्। श्वेतार्कमूलं वाराही लक्ष्मीक्षीरमहीरुहम्॥ २५॥
त्वचो बिल्वतरोर्मूलं शोषयित्वा सुचूर्णये। चूर्णं व्योम्नि गृहे तेन गोमयेन विमिश्रितम्॥ २६॥
कृत्वा पिण्डानि संशोध्य संस्कृते हव्यवाहने। मूलेन दग्ध्वा तद्भस्म शुद्धपात्रे विनिक्षिपेत्॥ २७॥
केतकीमालतीपुष्पैर्वासयेद्भस्म शोधितम्। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं स्पृष्ट्वा भस्म सुपूजितम्॥ २८॥
एतदादाय दिनशः प्रातः पुण्ड्रं करोति यः। तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहमहाग्रहाः॥ २९॥
रिपुचौरमृगादिभ्यो भयमस्य न जायते। वर्द्धन्ते सम्पदः सर्वाः पूज्यते सकलैर्जनैः॥ ३०॥
राजा वश्यो भवेत्तस्य सामात्यः सपरिच्छदः।

चमत्कारी भस्म त्रिपुण्ड्र बनाने की विधि—मनुष्य को चाहिये कि वह आगे वर्णित विधि के अनुसार भस्म का निर्माण करे; यह सर्वार्थसिद्धिप्रद भस्म होता है। उशीर (गण्डदूर्वा=खस), चन्दन सफेद, चन्दन लाल, कूठ, घनसार (अगर), केसर, सफेद आक की जड़, वाराही कन्द, लक्ष्मी (श्वेत तुलसी), गूलर की छाल, सागौनकाष्ठ, बेल के जड़ की छाल—इन सबको सुखा करके चूर्ण बना ले। इस चूर्ण के साथ अभ्रक का चूर्ण भी मिला दे, फिर इसमें गाय का गोबर मिलाकर उसके पिण्ड बनाकर सुखा ले। आपदुद्धारक वटुकभैरव के मूल मन्त्र को जपते हुए इन पिण्डों को अग्नि में जला दे। उस राख को शुद्ध पात्र में रखकर उसमें केतकी तथा मालती के पुष्पों के स्वरस की भावना दे। फिर उस पवित्र भस्म को स्पर्श करते हुए अयुत सङ्ख्या में सिद्ध मन्त्र का जप करे। इस भस्म को लाकर जो प्रतिदिन स्नानोपरान्त प्रातःकाल पुण्ड्र के रूप में धारण करता है, उसको रोग, कृत्या (मूठ) द्रोह, महाग्रह, शत्रु, चोर, डाकू, हिंसक पशुओं आदि का भय नहीं होता। उसकी सभी सम्पत्तियाँ बढ़ती हैं तथा सभी लोगों से वह पूजा जाता है। उसके वश में शासक एवं मन्त्री आदि सभी हो जाते हैं॥ २४-३०॥

अभिषेकं प्रकुर्वीत राज्ञो विजयकाङ्क्षिणः॥ ३१॥
पूर्वोक्तमण्डपे क्लृप्ते वितानध्वजशोभिते। सर्वतोभद्रमालिख्य कर्णिकां तस्य पूरयेत्॥ ३२॥
अष्टद्रोणप्रमाणेन शालिभिः शोधितैः शुभैः। तदर्द्धां तण्डुलांस्तस्मिन्न्यस्य दूर्वाङ्कुरान्वितान्॥ ३३॥
हेमादिविहितं कुम्भं नवरत्नसमन्वितम्। संस्थाप्य विमलैस्तोयैरापूर्यास्मिन्विनिःक्षिपेत्॥ ३४॥
क्षीरद्रुमप्रवालानि लक्ष्मीदूर्वां सहां पुनः। कर्पूरं चन्दनं बिल्वमुशीरं कुङ्कुमं पुनः॥ ३५॥
कङ्कोलमगुरुं जातिं मल्लिकां चम्पकोत्पलैः। गोमेदं दाडिमं पश्चात्पट्टयुग्मेन वेष्टयेत्॥ ३६॥

तस्मिन्नावाह्य वटुकं राजसं सम्प्रपूजयेत्। बहिरष्टसु कुम्भेषु भैरवानष्ट पूजयेत्॥ ३७॥
त्रयोदशसु कुम्भेषु त्रयोदश गणान्यजेत्। बाह्ये दशसु कुम्भेषु लोकेशानर्चयेत्सुधीः॥ ३८॥
तद्बहिर्द्व्यष्टकुम्भेषु श्रीकण्ठादीन्सुरेश्वरान्। पञ्चत्रिंशद्वटेष्वर्चेत्कादिवर्णेश्वरान् क्रमात्॥ ३९॥
इति गन्धादिभिः सम्यक् पञ्चावरणमर्चयेत्। अयुतं प्रजपेत्स्पृष्ट्वा तान्घटान्देशिकोत्तमः॥ ४०॥
पायसैः सर्पिषा शुद्धैः तिलैर्दशशतं पृथक्। जुहुयात्तान्घटान्स्पृष्ट्वा प्रत्यहं बलिमाहरेत्॥ ४१॥
राजसोक्तप्रकारेण रात्रौ देशिकसत्तमः।

राज्याभिषेक-विधि—पूर्वोक्त (पद्धतिकाण्ड में वर्णित) विधि से वितानध्वजशोभित मण्डप बनाकर उसमें सर्वतोभद्रमण्डल की रचना करे। उसकी कर्णिका में आठ द्रोण प्रमाण में शुद्ध चावल पूरित करे अथवा चार द्रोण की तौल में चावलों को दूर्वाङ्कुर कर्णिका पूरित करे। उस पर स्वर्णादि धातु तथा नवरत्नयुक्त कलश को निर्मल जल से पूरित कर रखे। कलश में क्षीरीवृक्षों के पत्ते, तुलसी, दूर्वा, कपूर, चन्दन, बेल, उशीर, केसर, कङ्कोल, अगर, मल्लिका, चम्पा, कमल—इनके फूल, गोमेद तथा अनार डाले। फिर उस कलश को एक जोड़ी वस्त्रों से लपेट दे। उस कलश के बाहर राजस वटुक की पूजा करे। बाहर के आठ कुम्भों पर आठ भैरवों की पूजा करे। इसी प्रकार तेरह कुम्भों पर तेरह गणों की पूजा करे। फिर बाहर के दश कुम्भों पर लोकपालों की पूजा करे। उनके बाहर के आठ कलशों पर श्रीकण्ठादि देवताओं तथा पैंतीस वटेश्वरों की पूजा आदि वर्णों से क्रमशः करे। इस प्रकार पाँच आवरणों में गन्धादि से पूजन करे। श्रेष्ठ आचार्य को उन घटों का स्पर्श करके अयुत की सङ्ख्या में जप करना चाहिये। पायस तथा शुद्ध तिलों से एक सहस्र आहुतियाँ देकर फिर उन घटों को बलि प्रदान करे। ऐसा प्रतिदिन करे। यह बलि राजस विधान से करनी चाहिये॥ ३१-४१॥

सुदिने शोभने लग्ने वाचयित्वा द्विजन्मभिः॥ ४२॥
स्वस्तिमङ्गलवाक्यानि विशुद्धैर्वेदपारगैः। नदत्सु पञ्चवाद्येषु प्रणम्य वटुकेश्वरम्॥ ४३॥
जितेन्द्रियं शुद्धकायं राजानं ब्राह्मणप्रियम्। आस्तिकं सत्यवचनमभिषिञ्चेत्प्रसन्नधीः॥ ४४॥
अभिषिक्तो नरपतिः प्रणिपत्य गुरुं परम्। भूयसीं दक्षिणां दद्यात्प्रसीदति यथा गुरुः॥ ४५॥
राजाभिषिक्तो भवति साक्षाद्भूमिपुरन्दरः। परान् विजयते भूपान्स्तूयते सकलैर्नरैः॥ ४६॥
कृताभिषेकः षण्मासं प्रतिमासं महीपतिः। चतुरम्भोधिवेलायां शास्ति सर्वां वसुन्धराम्॥ ४७॥

फिर शुभ दिन शुभ लग्न में ब्राह्मणों द्वारा स्वस्तिवाचन, मङ्गलवाक्य का पाठ कराते हुए पाँच प्रकार के वाद्यों को बजाते हुए वटुकेश्वर को प्रणाम करके जितेन्द्रिय, शुद्ध शरीर तथा ब्राह्मणों को प्रिय हो—ऐसे सत्यवादी तथा निर्मल बुद्धि राजा का अभिषेक करना चाहिये। अभिषेक के उपरान्त उस राजा को अपने गुरु (आचार्य) को प्रणाम करके पुष्कल दक्षिणा देनी चाहिये, जिससे गुरु प्रसन्न हो जायँ। इस प्रकार से जिस राजा का अभिषेक होता है, वह इन्द्र के समान होकर दूसरे राजाओं को जीत लेता है तथा लोकप्रिय हो जाता है। इस प्रकार से प्रतिमास अभिषेक होने पर वह शासक समुद्र-पर्यन्त भूमि पर अपना शासन करता है॥ ४२-४७॥

गजाश्वशान्तिविधये तेषां शालासु साधकः। कुण्डं कृत्वा विधानेन होमं कुर्याद्यथाविधि॥ ४८॥
पायसाज्यैस्तिलैर्विद्वानयुतत्रितयावधि। ब्राह्मणान्भोजयेन्नित्यं भक्ष्यभोज्यफलादिभिः॥ ४९॥
प्राक्प्रोक्तविधिना कुम्भान् स्थापयित्वात्र देशिकः। अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैस्तज्जलैः प्रोक्षयेद्गजान्॥ ५०॥

अश्वशालामनेनैव वर्द्धन्ते ते दिने-दिने। युद्धेषु महती शक्तिर्जायते पूर्वतोऽधिका॥ ५१॥
सर्वे रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहाः परैः कृताः। अस्मात्परतरा रक्षा नास्ति तेषां महीतले॥ ५२॥

गजाश्वादि शान्ति-विधान—गजाश्वादि की शान्ति के लिये उनकी शालाओं में कुण्ड बनाकर विधिपूर्वक होम करना चाहिये। पायस, गोघृत आदि से तीन अयुत (३० सहस्र) की सङ्ख्या में होम करे। पूर्वोक्त विधि से कुम्भों को स्थापित कर उनके गन्धाक्षत पत्रयुक्त जल से हाथी, घोड़ों का प्रोक्षण करना चाहिये। इससे वे प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होते हैं। युद्धों में पूर्वापेक्षया अधिक शक्ति प्रकट होती है। सभी रोग नष्ट होते हैं तथा कृत्याद्रोह एवं परकृत अभिचार नष्ट होते हैं। हाथी, घोड़ों की इस विधि से उत्तम रक्षा होती है; अन्य कोई दूसरा उपाय इस पृथ्वीतल पर नहीं है॥ ४८-५२॥

अभिषिच्य महीपालं गरेषां विजयोद्यतम्। उक्तेन विधिना मन्त्री यामिन्यां बलिमाहरेत्॥ ५३॥
अन्यूनाङ्गमजं हत्वा राजसं प्रागुदाहृतम्। बलिप्रदानसमये रिपूणां सर्वसैन्यकम्॥ ५४॥
निवेदयेद्बलित्वेन वटुकाय विशिष्टधीः। विदर्भयेच्छत्रुनाम्ना बलिमन्त्रं तथा सुधीः॥ ५५॥
शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिने दिने। भक्षयस्व गणैः सार्द्धं सारमेयमसमन्वितः॥ ५६॥
बलिमन्त्रोऽयमाख्यातः सर्वेषां विजयप्रदः। अनेन बलिना हृष्टो वटुकः परसैन्यकम्॥ ५७॥
सर्वं गणेभ्यो विभजेदामिषं क्रुद्धमानसः। एवं कृते परबलं क्षीयते नात्र संशयः।
विजयश्रियमेतेन राजा प्राप्नोत्ययत्नतः॥ ५८॥

बलिविधान—जो राजा दूसरों पर विजय प्राप्त करना चाहता हो, वह उक्त विधि से अभिषेक को करके रात्रि में बलिदान करे। सर्वाङ्गपूर्ण बकरे का बलिदान करे। बलिदान के समय पर वटुकभैरव से इस प्रकार निवेदन करे—हे देव! शत्रु एवं उनकी सेना का प्रतिदिन उन्मूलन करते हुए उनका रक्तपान करो। अमुक नाम के शत्रु का दलन करो। अपने गणों सारमेयों के साथ प्रतिदिन उनका भक्षण करो।

यह बलिदान मन्त्र सभी को विजय देने वाला है। इस बलि से प्रसन्न होकर वटुकभैरव शत्रुसेना को फाड़कर उसकी बोटी-बोटी अलग कर देते हैं। इस प्रकार से शत्रु का बल निश्चित रूप से क्षीण हो जाता है। इससे बिना प्रयास राजा विजयी हो जाता है॥ ५३-५८॥

श्रीमायास्मरकूटमत्र विलिखेन्मध्ये दलेष्वष्टसु द्विः प्रोक्तं वटुकाय शब्दमपरान्मन्त्रस्य वर्णान् बहिः।
अष्टद्वन्द्वदलेषु तद्बहिरधस्तत्सङ्ख्यपत्रेष्वथ द्वात्रिंशद्दलकादिसान्तसहितं यन्त्रं लिखेद्भूपुरे॥ ५९॥
आपदुद्धारणं यन्त्रमपमृत्युभयापहम्। सर्वसम्पत्प्रदं नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम्॥ ६०॥
रक्षाकरं ग्रहार्तानां राज्ञां विजयवर्द्धनम्। आपदुद्धारणादस्मादापदुद्धारणक्षमः॥ ६१॥
तन्त्रेषु नास्ति मन्त्रोऽस्य इत्याहुर्मन्त्रवेदिनः।

इति रुद्रयामलशारदातिलकोक्तमापदुद्धारणवटुकभैरवविधानम्।

आपदुद्धारण यन्त्र-विधान—अष्टदल के मध्य में श्री मायास्मर कूट का लेखन करना चाहिये (चित्र देखें)। इसके बाहर बत्तीस अक्षरों (मन्त्राक्षरों को) दलों में लिखे। यह आपदुद्धारण वटुकभैरव यन्त्र मृत्यु एवं भय को दूर करने वाला है। यह नित्यप्रति सभी प्रकार की सम्पत्ति बढ़ाने वाला है। यह सभी प्रकार के सौभाग्य को देता है। यह ग्रहों से पीड़ितों की रक्षा करता है तथा राजाओं को विजय देता है। इस यन्त्र से बढ़कर अन्य कोई उपाय आपदाओं को दूर करने वाला नहीं है—ऐसा तन्त्रविदों का मन्तव्य है॥ ५९-६२॥

श्रीवटुकभैरवयन्त्रम्
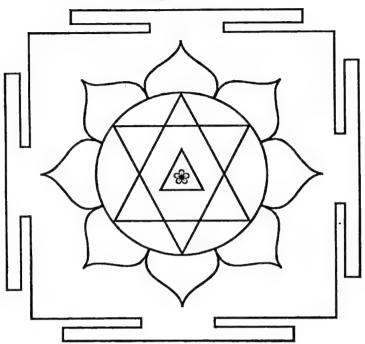
विशेष—इसके पूर्व में बड़ा चित्र दिया गया है, उसमें यन्त्र का स्वरूप स्पष्ट है। आवश्यकतानुसार उसका उपयोग करे। यहाँ दिया गया चित्र सामान्य है।

वटुकभैरवब्रह्मकवचम्

अथ वटुकभैरवब्रह्मकवचं रुद्रयामले—

श्रीदेव्युवाच—

भगवन् सर्ववेत्ता त्वं देवानां प्रीतिदायकम्। भैरवं कवचं ब्रूहि यदि चास्ति कृपा मयि॥ १॥
प्राणत्यागं करिष्यामि यदि नो कथयिष्यति। सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यमेव न संशयः॥ २॥
इत्थं देव्या वचः श्रुत्वा प्रहस्याति स्वयं प्रभुः। उवाच वचनं तत्र देवदेवो महेश्वरः॥ ३॥

वटुकभैरव ब्रह्मकवच (रुद्रयामलोक्त)—श्री देवी ने कहा—भगवन्! आप सर्वज्ञ तथा देवों के प्रिय हैं; अतः आप यदि मुझ पर कृपा करें तो मुझे भैरवकवच सुनायें। यदि आप इस कवच को नहीं सुनायेंगे तो मैं प्राणत्याग कर दूँगी। यह मैं बार-बार सत्य कह रही हूँ; इसमें सन्देह नहीं है। देवी के इस प्रकार के वचन सुनकर स्वयं श्री शङ्कर भगवान् जोर से हंस पड़े तथा उन्होंने इस प्रकार के वचन कहे॥ १-३॥

ईश्वर उवाच—

वटुकस्य कवचं दिव्यं शृणु यत्प्राणल्लभे। चण्डिकातन्त्रसर्वस्वं वटुकस्य विशेषतः॥ ४॥
तत्र मन्त्राद्यक्षरं तु वासुदेवस्वरूपकम्। शङ्खवर्णद्वयो ब्रह्मा वटुकं चन्द्रशेखरः॥ ५॥
आपदुद्धारणो देवो भैरवः परिकीर्तितः। प्रवक्ष्यामि समासेन चतुर्वर्गप्रसिद्धये॥ ६॥

चाहिये। जैसे या तो प्रत्येक अङ्गुष्ठ प्रमाण का बने, यदि अधिक नाप का बनता है तो सभी लिङ्ग उस नाप के बनाने चाहिये तथा एक बित्ती से अधिक मान पार्थिव लिङ्ग का नहीं रखना चाहिये।

लिङ्गमाहात्म्यं नन्दिभविष्ययोः—

आयुष्मान्बलवाञ्छ्रीमान्पुत्रवान्धनवान्सुखी । वरमिष्टं लभेल्लिङ्गं पार्थिवं यः समाचरेत्॥
मृद्भस्मगोशकृत्पिण्डं ताम्रकांस्यमयं तथा। कृत्वा लिङ्गं सकृत्पूज्य वसेत्कल्पायुतं दिवि॥

इति पार्थिवलिङ्गपूजनप्रयोगः समाप्तः।

नन्दीश्वर तथा **भविष्यपुराण** के अनुसार—जो पार्थिव लिङ्ग बनाकर अर्चना करता है, वह आयुष्मान्, श्रीमान्, बलवान्, पुत्रवान्, धनवान् तथा सुखी होता है एवं मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है। जो मिट्टी, भस्म, गोबर, ताम्र, कांस्यमय लिङ्ग बनाकर पूजा करता है, वह अयुत कल्प-पर्यन्त स्वर्ग में निवास करता है।

दक्षिणामूर्तिशिवमन्त्रपुरश्चरणम्

शारदातिलके मूलमन्त्रो यथा—

ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने। ध्यानैकनिरताङ्गाय नमो रुद्राय शम्भवे ह्रीं ॐ॥

षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रः सर्वकामफलप्रदः। अस्य श्रीदक्षिणामूर्तिशम्भुमन्त्रस्य शुकऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। दक्षिणामूर्तिशम्भुर्देवता। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ शुकऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ दक्षिणामूर्तिशम्भुर्देवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्तये ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं तुभ्यं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ह्रीं वटमूलनिवासिने ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ह्रीं ध्यानैकनिरताङ्गाय ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ह्रीं नमो रुद्राय ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्रीं शम्भवे ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा अङ्गन्यासं कुर्य्यात्। ॐ ह्रीं नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ दं नमः भाले॥ २॥ ॐ क्षिं नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ णां नमः श्रोत्रयोः॥ ४॥ ॐ मूं नमः गण्डयोः॥ ५॥ ॐ र्तं नमः नासिकयोः॥ ६॥ ॐ यें नमः मुखे॥ ७॥ ॐ तुं नमः दक्षिणबाहुमूले॥ ८॥ ॐ भ्यं नमः दक्षिणकूर्परे॥ ९॥ ॐ वं नमः दक्षिणमणिबन्धे॥ १०॥ ॐ टं नमः दक्षिणहस्ताङ्गुलीमूले॥ ११॥ ॐ मूं नमः दक्षहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ १२॥ ॐ लं नमः वामबाहुमूले॥ १२॥ ॐ निं नमः वामकूर्परे॥ १४॥ ॐ वां नमः वाममणिबन्धे॥ १५॥ ॐ सिं नमः वामहस्ताङ्गुलीमूले॥ १६॥ ॐ नें नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ १७॥ ॐ ध्यां नमः गले॥ १८॥ ॐ नैं नमः स्तनयोः॥ १९॥ ॐ कं नमः हृदये॥ २०॥ ॐ निं नमः नाभिमण्डले॥ २१॥ ॐ रं नमः कट्योः॥ २२॥ ॐ तां नमः गुह्ये॥ २३॥ ॐ गां नमः दक्षपादमूले॥ २४॥ ॐ यं नमः दक्षिणजानुनि॥ २५॥ ॐ नं नमः दक्षिणगुल्फे॥ २६॥ ॐ मं नमः दक्षपादाङ्गुलीमूले॥ २७॥ ॐ रुं नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे॥ २८॥ ॐ द्रां नमः वामपादमूले॥ २९॥ ॐ यं नमः वामजानुनि॥ ३०॥ ॐ शं नमः वामगुल्फे॥ ३१॥ ॐ भं नमः वामपादाङ्गुलीमूले॥ ३२॥ ॐ वें नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे॥ ३३॥ ॐ ह्रीं नमः इति व्यापकेन सर्वाङ्गे न्यसेत्॥ ३४॥ एवमङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

हेमाचलतटे रम्ये सिद्धकिन्नरसेविते। विविधद्रुमशाखाभिः सर्वतोवारितातपे॥
सुषुप्तितैर्लताजालैराश्लिष्टकुसुमद्रुमैः । शिलाविवरनिर्गच्छन्निर्झरानिलसेविते ॥
गायद्भृङ्गाङ्गनासङ्घे नृत्यद्बर्हिकदम्बके। कूजत्कोकिलसङ्घेन मुखरीतकृदिङ्मुखे॥
परस्परविनिर्मुक्तमात्सर्यमृगसेविते । आद्यैः शुकाद्यैर्मुनिभिरजस्त्रं समुपस्थितम्॥
पुरन्दरमुखैर्देवैः सेवायातैर्विलोकितम्। वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम्॥

गारुत्मतमयैः पत्रैर्निबिडैरुपशोभितम्। नवरत्नमयाकल्पैर्लम्बमानैरलङ्कृतम् ॥
स्थलजैर्जलजैः पुष्पैरामोदितमलङ्कृतम्। शृण्वद्भिर्वेदशास्त्राणि शुकवृन्दैर्निषेवितम्॥
संसारतापविच्छेदकुशलच्छायमद्भुतम् । विचिन्त्य तस्य मूलस्थे रत्नसिंहासने शुभे॥
आसीनममिताकल्पं शरच्चन्द्रनिभाननम्। स्तूयमानं मुनिगणैर्दिव्यज्ञानाभिलाषिभिः॥
संस्मरेज्जगतामाद्यं दक्षिणामूर्तिमव्ययम्।

इति विचिन्त्य—

कैलासाद्रिनिभं शशाङ्कशकलस्फूर्जज्जटामण्डितं नासालोकनतत्परं त्रिनयनं वीरासनाध्यासितम्।
मुद्राटङ्ककुरङ्गजानुविलसत्पाणिं प्रसन्नाननं कक्षाबद्धभुजङ्गमं मुनिवृतं वन्दे महेशं परम्॥

इति ध्यायेत्। एवं धात्वा पूर्वोक्ते शिवपञ्चाक्षरोदिते पीठे पाद्याद्यैः षोडशोपचारैर्यथाविधि दक्षिणामूर्त्याख्यं शिवं सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्। अस्य मन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं विंशतिसहस्राधिकं लक्षत्रयात्मकं जपपुरश्चरणं कार्यम्। ततो जपान्ते दशांशेन क्षीरसंयुतैः शुद्धैस्तिलैर्होमं कृत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्यात्।

तथा च शारदातिलके—

अयुतद्वयसंयुक्तं गुणलक्षं जपेन्मनुम्। तद्दशांशं तिलैः शुद्धैर्जुहुयात्क्षीरसंयुतैः॥
एवं कृतपुरश्चर्यः सिद्धमन्त्रो भवेत्सुधीः। भिक्षाहारो जपेन्मासं मनुमेनं जितेन्द्रियः॥
नित्यं सहस्रमष्टार्द्धं परं विन्दति वाङ्मयम्। त्रिवारं जप्तमेतेन मनुना सलिलं पिबेत्॥
नित्यशो दक्षिणामूर्तिं ध्यायन्साधकसत्तमः। शास्त्रव्याख्यानसामर्थ्यं लभते वत्सरान्तरे॥
ब्राह्मीसैन्धवसिद्धार्थवचाकुष्ठकणोत्पलैः । सुगन्धिसंयुतैः कल्कैः शृतं ब्राह्मीरसे घृतम्॥
मनुनानेन सञ्जप्तमयुतं साधु साधितम्। निपीतं कविताकान्तिरक्षायुःश्रीधृतिप्रदम्॥

इति दक्षिणामूर्तिशिवमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

श्री दक्षिणामूर्ति शिवमन्त्र का पुरश्चरण—'दक्षिणा अनुकूला मूर्ति यस्य स दक्षिणामूर्तिः' अर्थात् शिव की जो मूर्ति साधकों के लिये सर्वाधिक अनुकूल एवं शीघ्र फलप्रद हो, उसे दक्षिणामूर्ति कहते हैं। दक्षिणामूर्ति शिव की आराधना दक्षिण भारत में अधिक होती है।

दक्षिणामूर्ति मन्त्र (प्रथम)—'ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने ध्यानैकनिरताङ्गाय नमो रुद्राय शम्भवे ह्रीं ॐ।' यह छत्तीस अक्षरों का मन्त्र है, जो सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

विनियोग—अस्य श्रीदक्षिणामूर्तिशम्भुमन्त्रस्य शुकऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, दक्षिणामूर्तिशम्भुर्देवता सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़ना चाहिये।

ऋष्यादिन्यास मूल में लिखे 'ॐ शुकऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्त्तये ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। इन्हीं छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी कर ले। फिर 'ॐ ह्रीं नमः मूर्ध्नि' इत्यादि मूलपाठ में लिखित चौंतीस मन्त्रों से शरीर के विभिन्न अङ्गों में न्यास करे। फिर देव का इस प्रकार ध्यान करे—

हेमाचल पर्वत के रम्य तट पर सिद्ध तथा किन्नरों से सेवित, विविध वृक्षों की शाखाओं से जहाँ वर्षा एवं घाम का निवारण होता है, जहाँ सुपुष्पित लताजालों से पुष्प वाले वृक्ष वेष्टित हैं, जहाँ शिलाविवरों से झरने निकलते हैं, जिनके स्पर्श से शीतल वायु के प्रवाह का सेवन होता है, जहाँ पर भृङ्गों की अङ्गनायें गाती हैं तथा मयूर नाचते हैं,

इस कवच को शान्त, प्रियवक्ता, कार्पण्य दोष से रहित, वटुक-भक्ति में रत पुत्र अथवा शिष्य को ही प्रदान करना चाहिये। निश्चित ही यह कवच शीघ्रातिशीघ्र उपराग प्रदान करने वाला है। यह कवच आयु, विद्या, यश, धर्म एवं बल प्रदान करने वाला है। हे देवि! इस प्रकार तुमसे मैंने यह कवच कहा, इसे अपनी योनि के समान गुप्त रखना चाहिये॥ २२-३२॥

वटुकभैरवस्तवराजः

अथ वटुकभैरवस्तवराजो लिख्यते; रुद्रयामले—

मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं त्रिलोचनम्। शङ्करं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम्॥

(रुद्रयामलोक्त) **वटुकभैरवस्तवराज**—एक बार जब भगवान् देवाधिदेव त्रिलोचन शङ्कर मेरुपर्वत पर बैठे हुए थे तब श्री पार्वती ने उन परमेश्वर से इस प्रकार पूछा।

श्रीपार्वत्युवाच—

य एष भैरवो नाम आपदुद्धारको मतः। त्वया च कथितो देव भैरवः कल्प उत्तमः॥
तस्य नामसहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च। सारमुद्धृत्य तेषां वै नामाष्टशतकं वद॥
यानि सङ्कीर्तयन्मर्त्यः सर्वदुःखविवर्जितः। सर्वान्कामानवाप्नोति साधकः सिद्धिमेव च॥

अभी आपने आपदुद्धारक जिन भैरव का उत्तम कल्प कहा है, उसके नाम सहस्रों, प्रयुतों, अर्बुदों की सङ्ख्या में हैं; अतः उनके सारस्वरूप केवल एक सौ आठ नामों को कहो, जिनके जपने से मनुष्य सभी दुःखों से मुक्त हो जाता है एवं जिनके जपने से साधक की सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

ईश्वर उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः। आपदुद्धारणस्येह नामाष्टशतमुत्तमम्॥
सर्वपापहरं पुण्यं सर्वापद्विनिवारणम्। सर्वकामार्थदं देवि साधकानां सुखावहम्॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वोपद्रवनाशनम्। आयुःकरं पुष्टिकरं श्रीकरं च यशस्करम्॥

श्री शङ्कर ने कहा—हे देवि! अब मैं आपदुद्धारक भैरव के एक सौ आठ नाम कहता हूँ, जो कि सर्वपापनाशक, पुण्यप्रद, सभी आपदाओं के निवारक, सभी काम तथा अर्थों को देने वाले तथा साधकों के लिये सुखप्रद हैं। ये सभी मङ्गलों के भी मङ्गल हैं तथा सभी उपद्रवों के नाशक हैं। साथ ही आयुकारक, पुष्टिकारक, लक्ष्मीकारक तथा यशस्कर हैं।

तत्र प्रयोगः—ॐ अस्य श्रीवटुकभैरवनामाष्टशतस्तोत्रमन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीवटुकभैरवो देवता। अष्टबाहुमिति बीजम्। त्रिनयनमिति शक्तिः। प्रणवः कीलकम्। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ बृहदारण्यकऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुपछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीवटुकभैरवदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ अष्टबाहुमिति बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ त्रिनयनेति शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ कीलकाय नमः नाभौ॥ ६॥ ॐ विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे॥ ७॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रां वां ईशानः सर्व विद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं वीं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ह्रूं वूं अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ह्रैं वैं वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो

मनोन्मनाय नमः अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ह्रौं वौं सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवेभवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्रः वः पञ्चवक्त्राय महादेवाय नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। **एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा देहन्यासं कुर्यात्। ॐ ह्रीं भैरवाय नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे॥ २॥ ॐ ह्रीं भूताश्रयाय नमः। नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः कर्णयोः॥ ४॥ ॐ ह्रीं त्रिशूलाय नमः नासिकायाम्॥ ५॥ ॐ ह्रीं रक्तपाय नमः जिह्वायाम्॥ ६॥ ॐ ह्रीं नागहारनामयज्ञोपवीतिकाय नमः कण्ठमध्ये॥ ७॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः करयोः॥ ८॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः हृदये॥ ९॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रदाय नमः नाभौ॥ १०॥ ॐ ह्रीं सर्वौघनाशनाय नमः कट्याम्॥ ११॥ ॐ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः ऊर्वोः॥ १२॥ ॐ ह्रीं रक्तपायिने नमः जङ्घयोः॥ १३॥ ॐ ह्रीं देवदेवेशाय नमः पादयोः॥ १४॥ ॐ ह्रीं वटुकाय नमः सर्वाङ्गे॥ १५॥** इति देहन्यासः। **ॐ ह्रीं भैरवाय नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ह्रीं भूतश्रेष्ठाय नमः मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ह्रीं क्षत्रियाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः दिग्दिशायाम्॥ ७॥ ॐ भैरवाय नमः सर्वाङ्गे॥ ८॥** इति करन्यासः। **ॐ ह्रीं भैरवाय नमः शिरसि॥ १॥ ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे॥ २॥ ॐ ह्रीं भूतहननाय नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ ह्रीं सारमेयानुगाय नमः भ्रुवोः॥ ४॥ ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः कर्णयोः॥ ५॥ ॐ ह्रीं प्रेतवाहकाय नमः कपोलयोः॥ ६॥ ॐ ह्रीं भस्माङ्गाय नमः नासापुटे॥ ७॥ ॐ ह्रीं सर्पभूषणाय नमः ओष्ठयोः॥ ८॥ ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः मुखे॥ ९॥ ह्रीं शक्तिहस्ताय नमः गले॥ १०॥ ॐ ह्रीं दैत्यशमनाय नमः स्कन्धयोः॥ ११॥ ॐ ह्रीं अतुलतेजसे नमः बाह्वोः॥ १२॥ ॐ ह्रीं कपालिने नमः करयोः॥ १३॥ ॐ ह्रीं मुण्डमालिने नमः हृदये॥ १४॥ ॐ ह्रीं शान्ताय नमः वक्षःस्थले॥ १५॥ ॐ ह्रीं कामचारिणे नमः स्तनयोः॥ १६॥ ॐ ह्रीं सदातुष्टाय नमः उदरे॥ १७॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रेशाय नमः पार्श्वयोः॥ १८॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः पृष्ठे॥ १९॥ ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः नाभौ॥ २०॥ ॐ ह्रीं पापौघनाशनाय नमः कट्याम्॥ २१॥ ॐ ह्रीं वटुकाय नमः लिङ्गे॥ २२॥ ॐ ह्रीं रक्षाकराय नमः गुदे॥ २३॥ ॐ ह्रीं रक्तलोचनाय नमः ऊर्वोः॥ २४॥ ॐ ह्रीं घुर्घुराय नमः जानुनोः॥ २५॥ ॐ ह्रीं रक्तपायिने नमः जङ्घयोः॥ २६॥ ॐ ह्रीं सिद्धपादुकाय नमः गुल्फयोः॥ २७॥ ॐ ह्रीं सुरेश्वराय नमः पादपृष्ठे॥ २८॥ ॐ ह्रीं आपदुद्धारकाय नमः आपादतलमस्तकपर्यन्तम्॥ २९॥ ॐ ह्रीं क्ष्प्रौं ब्लौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारणभैरवाय नमः सर्वाङ्गे॥ ३०॥ इति व्यापकं कुर्यात्। इत्यङ्गन्यासः।**

प्रयोग—इस वटुकभैरव अष्टशतनाम स्तोत्र के बृहदारण्यक ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, श्री वटुकभैरव देवता, अष्टबाहु बीज, त्रिनयन शक्ति तथा प्रणव कीलक हैं। मैं अपने अभीष्ट-सिद्धि के लिये जपार्थ विनियोग करता हूँ। इस भावार्थ को प्रकट करने वाले विनियोग का मूल संस्कृत में पाठ करके पृथ्वी पर जल छोड़ना चाहिये।

फिर मूलपाठ में लिखित '**ॐ बृहदारण्यकऋषये नमः शिरसि**' इत्यादि १ से लेकर ७ तक मन्त्रों के द्वारा ऋष्यादि न्यास करे। फिर '**ॐ ह्रां वां ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः**' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों से करन्यास करे। इन्हीं मन्त्रों से हृदयादि न्यास करके '**ॐ ह्रीं भैरवाय नमः मूर्ध्नि**' इत्यादि १५ मन्त्र देहादि न्यास के हैं, इनसे देहादि न्यास करे।

पुनः '**ॐ ह्रीं भैरवाय नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः**' इत्यादि आठ मन्त्रों से करन्यास करे। फिर '**ॐ ह्रीं भैरवाय नमः शिरसि**' इत्यादि मूलपाठ में लिखित कुल तीन मन्त्रों से व्यापक करे। यह अङ्गन्यास हुआ।

अथ दिङ्न्यासः—ॐ ह्रीं डमरुहस्ताय नमः पूर्वे॥ १॥ ॐ ह्रीं दण्डधारिणे नमः दक्षिणे॥ २॥ ॐ ह्रीं खड्गहस्ताय नमः पश्चिमे॥ ३॥ ॐ ह्रीं घण्टावादिने नमः उत्तरे॥ ४॥ ॐ ह्रीं अग्निवर्णाय नमः आग्नेय्याम्॥ ५॥ ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः नैर्ऋत्याम्॥ ६॥ ॐ ह्रीं सर्वभूतस्थाय नमः वायव्याम्॥ ७॥ ॐ ह्रीं अष्टसिद्धिदाय नमः ऐशान्याम्॥ ८॥ ॐ ह्रीं खेचारिणे

नमः ऊर्ध्वे ॥ ९ ॥ ॐ ह्रीं रौद्ररूपिणे नमः पाताले ॥ १० ॥ इति दिङ्न्यासः। **ॐ ह्रीं रुद्राय नमः। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं शिखीसखाय नमः ॐ तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं शिवाय नमः म० ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं त्रिशूलिने० अना० ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं ब्रह्मणे० कनि० ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं त्रिपुरान्तकाय नमः करतलयोः ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं मांसाशिने० कराग्रेषु ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः करपृष्ठयोः ॥ ८ ॥** इति करन्यासः। **ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः हृदये ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः मूर्ध्नि ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं आनन्दनाथाय नमः शिखायाम् ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धशावरनाथाय नमः कवचाय हुं ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं सहजानन्दनाथाय नमः नेत्रयोः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्रीआनन्दनाथाय नमः अस्त्राय फट्।** इति षडङ्गन्यासः। **ॐ अस्य श्रीवटुकभैरवमन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीवटुकभैरवो देवता। वं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। ॐ कीलकम्। श्रीवटुकभैरवप्रसादसिद्ध्यर्थे स्तोत्रादौ अष्टोत्तरशतमूलमन्त्रजपे विनियोगः।**

अथ मन्त्रन्यासः—ॐ ह्रीं अङ्गु० ॥ १ ॥ ॐ वटुकाय० तर्ज० ॥ २ ॥ ॐ आपदुद्धारणाय मध्य० ॥ ३ ॥ ॐ कुरुकुरु अना० ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्।

दिङ्न्यास—ॐ ह्रीं डमरुहस्ताय नमः' कहकर पूर्व दिशा का न्यास करे। इस प्रकार दश मन्त्रों से दिङ्न्यास करे। फिर 'ॐ ह्रीं रुद्राय नमः, ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मूलोक्त आठ मन्त्रों से पुनः करन्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः हृदये' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करना चाहिये। पुनः इसके आगे लिखे मन्त्र से विनियोग का जल छोड़ देना चाहिये।

मन्त्रन्यास—फिर 'ॐ ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मूल में लिखित पाँच मन्त्रों से क्रमशः अङ्गुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठा में न्यास करके फिर आगे लिखित विधि से ध्यान करना चाहिये।

अथ ध्यानम्—

शुद्धस्फटिकसङ्काशं सहस्रादित्यवर्चसम्। नीलजीमूतसङ्काशं नीलाञ्जनसमप्रभम्।
अष्टबाहुं त्रिनयनं चतुर्बाहुं द्विबाहुकम् ॥
दंष्ट्राकरालवदनं नूपुरारावसङ्कुलम्। भुजङ्गमखिलं देवमग्निवर्णशिरोरुहम् ॥ २ ॥
दिगम्बरं कुमारेशं वटुकाख्यं महाबलम्। खट्वाङ्गमसिपाशं च शूलं दक्षिणभागतः ॥ ३ ॥
डमरुं च कपालं च वरदं भुजगं तथा। आत्मवर्णसमोपेतं सारमेयसमन्वितम् ॥ ४ ॥

एवं ध्यात्वा 'ॐ ह्रीं भैरवभैरवभयकरहरमांरक्षरक्षहुंफट्स्वाहा' इति मन्त्रेण प्रार्थयित्वा पूर्वोक्तयन्त्रपीठे आवाहनादिमुद्रां प्रदर्शयेत्। षोडशोपचारैरभ्यर्च्य बलिदानं कुर्य्यात्।

ध्यान—शुद्ध स्फटिक के सदृश आभा वाले, सहस्रों सूर्य के समान कान्ति वाले, नील मेघ के सदृश तथा नीलाञ्जन के समान प्रभा वाले, अष्टभुज, त्रिनेत्र, चतुर्बाहु, द्विबाहु, कराल दाँतों से युक्त मुख वाले, नूपुरों की ध्वनि से कोलाहल करने वाले, सम्पूर्ण भुजङ्गों के देव अग्निवर्ण को शिर पर धारण करने वाले, दिगम्बर, कुमारेश, वटुक, महाबली, खट्वाङ्ग, असि तथा शूल को दक्षिण भाग में धारण करने वाले, डमरू, कपाल, वरदमुद्रा तथा भुजग से युक्त अपने ही समान वर्ण वाले कुत्ते के साथ जो विराजमान हैं, उन भैरव का ध्यान करता हूँ। इस प्रकार के भाव से ध्यान करके 'ॐ ह्रीं भैरव-भैरवभयकरहर मां रक्ष-रक्ष हुं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से प्रार्थना कर पूर्वोक्त यन्त्रपीठ पर आवाहनादि मुद्राओं का प्रदर्शन करे। फिर षोडशोपचारों से पूजा करके बलिदान करे।

तद्यथा—'श्रीवटुकप्रीतये बलिदानमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणपतिं दुर्गां रक्तैश्चन्दनाक्षतपुष्पैरभ्यर्च्य देवस्याग्रे त्रिकोणं चतुरस्रं मण्डलं कृत्वा तत्र गन्धाद्यैरभ्यर्च्य बलिपात्रे माषभक्तं पायसान्नं मोदकं चणकादीनि च कवलाकारं

सम्पादितं निधाय गन्धपुष्पाभ्यां मूलान्ते बलिरूपाय नमः इति बलिं सम्पूज्य देवं तत्र सञ्चिन्त्य हस्ते जलमादाय मूलमन्त्रमुच्चार्य भूमौ निक्षिप्य स्वहस्ते बलिमादाय देवाय समर्पयेत्। इति बलिदानम्।

बलिदान—देश-कालादि का उच्चारण करके 'श्रीवटुकप्रीतये बलिदानमहं करिष्ये' कहकर बलिदान का सङ्कल्प करके श्री गणपति तथा दुर्गा को रक्तवर्ण के चन्दन, अक्षत तथा पुष्पों से पूजित करके श्रीभैरव के आगे त्रिकोण मण्डल अथवा चतुरस्र मण्डल बनाकर उसमें गन्धादि से पूजन करके उस पर एक बलिपात्र (पत्तल या बाँस आदि की टोकरी) में उड़द की कोंहरी, खीर, लड्डू, उबले चने आदि के कौर बनाकर रख दे तथा मूल मन्त्र के अन्त में 'बलिरूपाय नमः' जोड़कर गन्ध एवं पुष्पादि से बलि की पूजा करके देव (भैरव) का स्मरण करके हाथ में जल लेकर मूल मन्त्र (आपदुद्धारक वटुकभैरवमन्त्र) का उच्चारण करके भूमि पर छोड़ दे। फिर अपने हाथ में बलिपात्र लेकर देव को समर्पित करे।

अथ पाठप्रकारः—तत आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य मम सकलकामनासिद्ध्यर्थे श्रीवटुक-भैरवस्तोत्रस्यैकादशसहस्रपुरश्चरणाङ्गत्वेन प्रतिस्तोत्रं मूलमन्त्रस्याष्टोत्तरशतसङ्ख्यजपसम्पुटितपञ्चाशत्सङ्ख्यपाठमहं करिष्ये वा यथाशक्त्येकप्रभृतिपाठमहं करिष्ये इति सङ्कल्प्य ततः मूलमन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत्।

मूलमन्त्रः—ॐ ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरुकुरु वटुकाय ह्रीं ॐ। एवमष्टोत्तर१०८शतमूलमन्त्रजपं कृत्वा जपान्ते अनेन कृतजपेन श्रीवटुकभैरवः प्रीयतामिति जपं निवेद्य वटुकाय नमस्कृत्य पञ्चोपचारैः सम्पूज्य स्तोत्रं पठेत्।

पाठविधि—आचमन तथा प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण कर 'मम सकलकामनासिद्ध्यर्थे श्रीवटुकभैरवस्तोत्रस्यैकादशसहस्रपुरश्चरणाङ्गत्वेन प्रतिस्तोत्रं मूलमन्त्रस्य अष्टोत्तरशतसंख्यजपसम्पुटितपञ्चाशत्संख्य-पाठमहं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके अथवा 'यथाशक्ति एकप्रभृतिपाठमहं करिष्ये' यह सङ्कल्प करके फिर मूल मन्त्र का एक सौ आठ की सङ्ख्या में जप करना चाहिये।

मूल मन्त्र—'ॐ ह्रीं वटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु-कुरु वटुकाय ह्रीं ॐ।' इसका १०८ जप करके जप के अन्त में 'अनेन कृतजपेन श्रीवटुकभैरवः प्रीयताम्' ऐसा कहकर जप को निवेदित करके वटुक को नमस्कार कर पञ्चोपचारों से पूजित कर स्तोत्र का पाठ करना चाहिये।

अथ स्तोत्रम्—

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः। क्षेत्रदः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्॥ १॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकृत्। रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः॥ २॥
कङ्कालः कालशमनः कलाः काष्ठातनुः कविः। त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः॥ ३॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः। अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः॥ ४॥
धनदो धनहारी च धनवान्प्रीतिभावनः। नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्॥ ५॥
कालः कपालमाली च कमनीयःकलानिधिः। त्रिलोचनोज्ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः॥ ६॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भः शान्तः शान्तजनप्रियः। वटुको बटुवेशश्च खट्वाङ्गवरधारकः॥ ७॥
भूताध्यक्षः पशुपतिः भिक्षुकः परिचारकः। धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः॥ ८॥
प्रशान्तः शान्तिदः सिद्धः शङ्करः प्रियबान्धवः। अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः॥ ९॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः। भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः॥ १०॥
कङ्कालधारी मुण्डी च नागयज्ञोपवीतवान्। जृम्भणो मोहनस्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा॥ ११॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः। बलिभुग्बलिभुङ्नाथो बालो बालपराक्रमः॥ १२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः। कामी कलानिधिः कान्तः कामिनीवशकृद्वशी॥ १३॥
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभुर्विष्णुरितीव हि। अष्टोत्तरशतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः॥ १४॥

स्तोत्रपाठ—मूल में 'ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः। क्षेत्रदः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्' इस श्लोक से प्रारम्भ कर कुल चालीस श्लोकों में 'श्रीवटुकभैरवस्तवराज' नामक स्तोत्र लिखा है, उसका पाठ करना चाहिये (आगे मूल पाठ का भावार्थ दिया जा रहा है)।

स्तोत्र-भावार्थ—१. भैरव, २. भूतनाथ, ३. भूतात्मा, ४. भूतभावन, ५. क्षेत्रद, ६. क्षेत्रपाल, ७. क्षेत्रज्ञ, ८. क्षत्रिय, ९. विराट्, १०. श्मशानवासी, ११. मांसाशी, १२. खर्पराशि, १३. स्मरान्तकृत्, १४. रक्तप, १५. पानप, १६. सिद्ध, १७. सिद्धिद, १८. सिद्धसेवित, १९. कङ्काल, २०. कालशमन, २१. कलाकाष्ठातनु, २२. कवि, २३. त्रिनेत्र, २४. बहुनेत्र, २५. पिङ्गललोचन, २६. शूलपाणि, २७. खड्गपाणि, २८. कङ्काली, २९. धूम्रलोचन, ३०. अभीरु, ३१. भैरवीनाथ, ३२. भूतप, ३३. योगिनीपति, ३४. धनद, ३५. धनहारि, ३६. धनवान्, ३७. प्रीतिभावन, ३८. नागहार, ३९. नागपाश, ४०. व्योमकेश, ४१. कपालभृत्, ४२. काल, ४३. कपालमालि, ४४. कमनीय, ४५. कलानिधि, ४६. त्रिलोचन, ४७. ज्वलन्नेत्र, ४८. त्रिशिखि, ४९. त्रिलोकप, ५०. त्रिनेत्रतनय, ५१. डिम्भ, ५२. शान्त, ५३. शान्तजनप्रिय, ५४. वटुक, ५५. वटुवेश, ५६. खट्वाङ्गवरधारक, ५७. भूताध्यक्ष, ५८. पशुपति, ५९. भिक्षुक, ६०. परिचारक, ६१. धूर्त, ६२. दिगम्बर, ६३. शूर, ६४. हरिण, ६५. पाण्डुलोचन, ६६. प्रशान्त, ६७. शान्तिद, ६८. सिद्ध, ६९. शङ्कर, ७०. प्रियबान्धव, ७१. अष्टमूर्ति, ७२. निधीश, ७३. ज्ञानचक्षु, ७४. तपोमय, ७५. अष्टाधार, ७६. षडाधार, ७७. सर्पयुक्त, ७८. शिखिसख, ७९. भूधर, ८०. भूधराधीश, ८१. भूपति, ८२. भूधरात्मज, ८३. कङ्कालधारी, ८४. मुण्डि, ८५. नागयज्ञोपवीतवान, ८६. जृम्भण, ८७. मोहनस्तम्भी, ८८. मारण, ८९. क्षोभण, ९०. शुद्धनीलाञ्जनप्रख्य, ९१. दैत्यहा, ९२. मुण्डभूषित, ९३. बलिभुक्, ९४. बलिभुङ्नाथ, ८५. बाल, ९६. बालपराक्रम, ९७. सर्वापत्तारण, ९८. दुर्ग, ९९. दुष्टभूतनिषेवित, १००. कामी, १०१. कलानिधि, १०२. कान्त, १०३. कामिनीवशकृत्, १०४. वशी, १०५. सर्वसिद्धिप्रद, १०६. वैद्य, १०७. प्रभु तथा १०८. विष्णु। ये भैरव के १०८ नाम हैं॥ १-१४॥

मया ते कथितं देवि रहस्यं सर्वकामदम्। य इदं पठति स्तोत्रं नामाष्टशतमुत्तमम्॥ १५॥
न तस्य दुरितं किञ्चिन्न च भूतभयं तथा। न च मारीभयं तस्य महाराजभयं तथा॥ १६॥
न शत्रुभ्यो भयं क्वापि प्राप्नुयान्मानवः क्वचित्। पातकानां भयं चैव पठेत्स्तोत्रमनुत्तमम्॥ १७॥
मारीभये राजभये तथा चौराग्निजे भये। औत्पातिके महाघोरे तथा दुःस्वप्नदर्शने॥ १८॥
बन्धने च तथा घोरे पठेत्स्तोत्रमनन्यधीः। सर्वं प्रशमनं याति भयं भैरवकीर्तनात्॥ १९॥
एकादशसहस्रं तु पुरश्चरणमुच्यते। यस्त्रिसन्ध्यं पठेद्देवि संवत्सरमतन्द्रितः॥ २०॥
स सिद्धिं प्राप्नुयादिष्टां दुर्लभामपि मानवः। षण्मासं भूमिकामस्तु जपित्वा प्राप्नुयान्महीम्॥ २१॥
राजशत्रुविनाशार्थं जपेन्मासाष्टकं पुनः। रात्रौ वारत्रयं चैव नाशयत्येव शात्रवान्॥ २२॥
जपेन्मासत्रयं मर्त्यो राजानं वशमानयेत्। धनार्थी च सुतार्थी च दारार्थी यस्तु मानवः॥ २३॥
जपेन्मासत्रयं देवि वारमेकं तथा निशि। धनं पुत्रं तथा दारान्प्राप्नुयान्नात्र संशयः॥ २४॥
रोगी रोगात्प्रमुच्येत बद्धो मुच्येत बन्धनात्। भीतो भयात्प्रमुच्येत देवि सत्यं न संशयः॥ २५॥

फलश्रुति—हे देवि! मैंने तुमसे यह सम्पूर्ण कामनाओं को सिद्ध करने वाला रहस्य कह दिया है। जो इस उत्तम अष्टोत्तरशतनाम को पढ़ता है; उसके सामने कोई दुर्भाग्य नहीं आता तथा उसको किसी भी भूत या प्राणी से भय नहीं रहता। न उसे महामारी का भय होता है, न उसे ग्रहों का भय, न शासन ही से भय होता है। उसे शत्रु का भी किञ्चिन्मात्र भय नहीं होता है। उसे पातकों (लाञ्छनों, आरोपों आदि) का भी भय नहीं रहता है; अतः इस उत्तम स्तोत्र को पढ़ना चाहिये। महामारी के भय में, राजभय में, चौरभय में, अग्निभय में, महाघोर उत्पातों में, दुःस्वप्न-दर्शन होने पर, बन्धन (जेल) आदि में, घोर स्थिति में (अपहरण हो जाने पर) इस स्तोत्र को अनन्य भक्ति से पाठ करे तो भैरव के कीर्तन से सम्पूर्ण भय नष्ट हो जाते हैं। इसका ग्यारह हजार का पुरश्चरण कहा गया है। हे देवि! जो व्यक्ति तीनों सन्ध्याकालों में ध्यानपूर्वक एक वर्ष तक निरन्तर इसका पाठ करता है, उसे अभीष्ट तथा दुर्लभ सिद्धि प्राप्त होती है। छः मास तक निरन्तर जप करने पर जापक को पृथ्वी की प्राप्ति होती है। शत्रु के विनाश के लिये आठ मासों तक रात्रि में तीन बार जप करने से शत्रुओं का नाश होता है। यदि मनुष्य तीन माह तक इसका जप करता रहे तो वह राजा को भी वश में कर लेता है। जो मनुष्य धनार्थी, पुत्रार्थी तथा दारार्थी हो, उसे हे देवि! तीन माह तक रात्रि में प्रतिदिन एक बार इसका जप करने से धन, पुत्र तथा स्त्री की प्राप्ति होती है। इसमें कोई संशय नहीं है। रोगी रोग से मुक्त होता है तथा ज़ेल या बन्धन में पड़ा व्यक्ति बन्धन से मुक्त हो जाता है। जो भयभीत होता है, वह भय से मुक्त हो जाता है; इसमें कोई संशय नहीं है॥ १५-२५॥

निगडैश्चापि बद्धो यः कारागृहे निपातितः। शृङ्खलाबन्धनं प्राप्तः पठेच्चैव दिवा निशि॥ २६॥
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्। अप्रकाशं परं गुह्यं न देयं यस्य कस्यचित्॥ २७॥
मुकुलीनाय शान्ताय ऋजवे दम्भवर्जिते। दद्यात्स्तोत्रमिमं पुण्यं सर्वकामफलप्रदम्॥ २८॥
इति श्रुत्वा ततो देवी नामाष्टशतमुत्तमम्। जजाप परया भक्त्या सदा सर्वेश्वरेश्वरी॥ २९॥
भैरवोऽपि प्रहृष्टोऽभूत्सर्वलोकमहेश्वरः। वरं ददाति भक्तेभ्यः पठत्स्तोत्रमनन्यधीः॥ ३०॥
सन्तोषं परमं प्राप्य भैरवस्य महात्मनः॥ ३१॥

वारंवारं भुवनजननी प्रोच्य ते साधुवादः सत्यं सत्यं जगति सकले भैरवो देव एकः।
यां यां सिद्धिं भुवनजठरे कामयेन्मानवो यस्तान्तां सिद्धिं वितरति सदा भैरवः सुप्रसन्नः॥ ३२॥

जो रस्सियों से बँधा हो या बेड़ियों से जकड़ा हो, कारागार में पड़ा हो अथवा सांकलों से बँधा हो, उसे इस स्तोत्र का पाठ रात-दिन करना चाहिये। इसका पाठ करने से जो-जो इच्छा होती है, वह निश्चित ही पूरी होती है। यह गोपनीय स्तोत्र है; अतः इसे किसी ऐरे-गैरे को नहीं बताना चाहिये। इसे सुन्दर कुल में जन्म लेने वाले, शान्त, ऋत (ईमानदार), दम्भरहित व्यक्ति को ही बताना चाहिये। यह स्तोत्र पुण्यफलप्रद तथा सभी कामनाओं को पूरा करने वाला है—यह बात समझकर देवी ने परम भक्तिपूर्वक इस स्तोत्र का जप किया और भैरव भी प्रसन्न होकर सर्वलोक महेश्वर बनकर भक्तों को वर देते हैं। अतः इस स्तोत्र का अनन्य भक्ति से पाठ करना चाहिये। इससे भैरव को परम सन्तोष प्राप्त होता है। यह सुनकर भुवनजननी ने साधुवाद देकर कहा कि इस जगत् में एकमात्र भैरव देव ही सच्चे हैं। पृथ्वीलोक में जिस-जिस सिद्धि को मनुष्य चाहता है, भैरव सुप्रसन्न होकर सदैव उस-उस सिद्धि का वितरण करते हैं॥ २६-३२॥

पाणिभ्यां परितः प्रपीड्य सुदृढं निश्चोत्यनिश्चोत्य च ब्रह्माण्डे सकलं प्रचालितरसालोच्चैः फलाभं मुहुः।
पायंपायमपाययत्रिजगतीमुन्मत्तवत्तैरसैर्नृत्यंस्ताण्डवमम्बरेण शिरसा पायान्महाभैरवः॥ ३३॥
बिभ्राणः शुभ्रवर्णं द्विगुणनवभुजं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं शङ्खं भैषज्यचापं सविषममृतकं ज्ञानमुद्रेन्द्रशस्त्रम्।
शूलं खट्वाङ्गबाणान् डमरुमसिगदावह्निमारोग्यमालामिष्टाभीतिं च दोर्भिर्जयति खलु महाभैरवः सर्वसिद्ध्यै॥ ३४॥

क्काकाशः क्क समीरणः क्क दहनः क्कापश्च विश्वम्भरः क्क ब्रह्मा क्क जनार्दनः क्क तरणिः क्वेन्दुश्च देवासुराः। कल्पान्तारभटीनटप्रमुदितः श्रीसिद्धयोगीश्वरो क्रीडानाटकनायको विजयते देवो महाभैरवः॥ ३५॥

श्री महाभैरव हाथों से चारो ओर प्रपीडन करके सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को दृढ़तापूर्वक निचोड़-निचोड़ कर जैसे कोई ऊँचे आम्र वृक्ष के फलों को झकझोर कर बार-बार टपकाता है, उसी प्रकार से इस पृथ्वी पर भी वह उन्मत्त की भाँति ताण्डव नृत्य करके अशुभ को शुभ तथा शुभ को अशुभ कर डालते हैं। घूमते हुए शुभ्र वर्ण वाले, अठारह भुजाओं वाले, पाँच मुखों वाले, तीन नेत्रों वाले, शङ्ख, भैषज्य, चाप, विष-अमृत, ज्ञानमुद्रा, वज्र, शूल, खट्वाङ्ग, बाण, डमरू, असि, गदा, अग्नि, आरोग्यमाला, अभय मुद्रा धारण करने वाले महाभैरव की सर्वसिद्धियों के लिये जप किया जाता है। क्या आकाश? क्या वायु? क्या अग्नि? क्या विश्वम्भर? क्या ब्रह्मा? क्या विष्णु? क्या सूर्य? क्या चन्द्रमा? क्या देवासुर? कल्पान्त-पर्यन्त सिद्ध योगीश्वर क्रीडा-नाटकनायक महाभैरव विजयी रहते हैं॥ ३३-३५॥

लिखित्वा परया भक्त्या भैरवस्तोत्रमुत्तमम्। अष्टानां ब्राह्मणानां च देयं पुस्तकमादरात्॥ ३६॥
यान्यान् समीहते कामांस्तांस्तान्प्राप्नोत्यसंशयम्॥ ३७॥
इह लोके सुखं प्राप्य पुस्तकस्य प्रसादतः। शिवलोकमनुप्राप्य शिवेन सह मोदते॥ ३८॥
लिखित्वा भूर्जपत्रे तु त्रिलोहपरिवेष्टितम्। सौम्ये च वस्तुवसने कर्पटे च सुशोभने॥ ३९॥
करे बाहौ गले कट्यां मूर्ध्नि त्रिलोहगोपितम्। यस्तु धारयते स्तोत्रं सर्वत्र जयमाप्नुयात्॥ ४०॥

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे पार्वतीश्वरसंवादे आपदुद्धारकश्रीवटुकभैरवाष्टोत्तरशतनामस्तवराजः समाप्तः।

इस भैरवस्तोत्र को भक्तिपूर्वक लिखकर पुस्तक बनाकर (अथवा छपी पुस्तक लेकर) जो साधकर आठ ब्राह्मणों को आदरपूर्वक दान करने से जिन-जिन कामनाओं को करता है, वे-वे निःसन्देह पूरी हो जाती हैं। पुस्तक-दान के प्रसाद से उसे इस लोक में सुख मिलता है तथा मृत्यु के उपरान्त शिवलोक में जाकर श्री शिव जी के समीप सुख प्राप्त करता है। भोजपत्र पर इस स्तोत्र को लिखकर त्रिलोह के ताबीज में उसे बन्द कर किसी सुन्दर कपड़े में बाँधकर कलाई में, बाहु में, गले में अथवा कमर में अथवा शिर पर बाँधकर जो इसको धारण करता है, उसकी सदैव जीत होती है अर्थात् उसे सफलता प्राप्त होती है॥ ३६-४०॥

कुबेरमन्त्रप्रयोगः

'ॐ यक्षाय कुबेराय वैश्रवणाय धनधान्याधिपतये धनधान्यसमृद्धिं मे देहि दापय स्वाहा' इति पञ्चत्रिंशद्वर्णात्मको मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिः। बृहती छन्दः। कुबेरो देवता सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः॥ ॐ विश्रव ऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ बृहतीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ कुबेरदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ यक्षाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ कुबेराय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ वैश्रवणाय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ धनधान्याधिपतये अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ धनधान्यसमृद्धिं मे कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ देहि दापय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादि षडङ्गन्यासं कुर्यात्। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

मनुजवाह्यविमानवरस्थितं गरुडरत्ननिभं निधिनायकम्।
शिवसखं मुकुटादिविभूषितं वरगदे दधतं भज तुन्दिलम्॥

इति ध्यात्वा पीठधर्मादिपरत्त्वान्तपीठदेवताः सम्पूज्य तद्देशे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ यक्षाय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ कुबेराय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वैश्रवणाय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ धनधान्याधिपतये कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ धनधान्यसमृद्धिं

नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ देहि दापय स्वाहा अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। ततो भूपुरे इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तं सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा चोक्तम्—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः। शिवालये जपेन्मन्त्रमयुतं धनवृद्धये॥
बिल्वमूलोपविष्टेन जपतो लक्षं धनर्द्धिदम्।

इति पञ्चत्रिंशद्वर्णात्मककुबेरमन्त्रप्रयोगः।

कुबेर मन्त्रप्रयोग—'ॐ यक्षाय कुबेराय वैश्रवणाय धनधान्याधिपतये धनधान्यसमृद्धिं मे देहि दापय स्वाहा' यह पैंतीस अक्षरों का मन्त्र है। विनियोग हेतु 'अस्य मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिः। बृहती छन्दः। कुबेरो देवता। सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः' कहकर जल छोड़े। फिर मूल में लिखित 'ॐ विश्रवऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ यक्षाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों से करन्यास कर पुनः उन्हीं छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास कर ध्यान-हेतु मूल में लिखित 'मनुजवाह्य०' इत्यादि एक श्लोक का प्रयोग करे (ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—नरवाहन = पालकी में स्थित, पन्नारत्न के समान कान्ति वाले, निधियों के नायक, शिवसखा, मुकुटादि से विभूषित, वरमुद्रा एवं गदाधारी तथा तोंद वाले की सेवा करो)। इस प्रकार ध्यान करके किसी पीठ पर पीठधर्मादि परतत्वान्त देवताओं को पूज कर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके कुबेरयन्त्र पर षट्कोण में षडङ्ग पूजन, भूपुर में वज्रादि आयुध पूजन तथा दिक्पाल-पूजन कर एक लाख मंत्रजप का पुरश्चरण किसी शिवालय या बिल्ववृक्ष के नीचे बैठकर करे। मन्त्र मूल पाठ में दिये हैं।

कुबेरयन्त्रम्
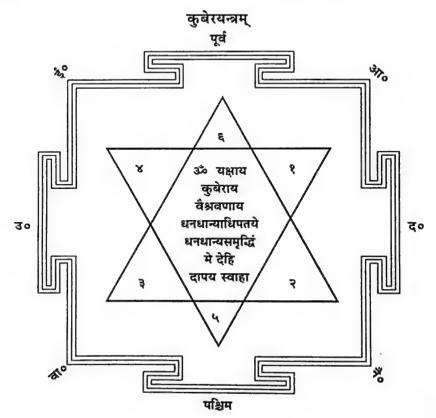
षोडशाक्षरकुबेरमन्त्रप्रयोग:

मन्त्रो यथा—'ॐ श्रीं ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीं क्लीं वित्तेश्वराय नमः'। अस्य मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिः। बृहती छन्दः। कुबेरो देवता। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ विश्रवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ बृहतीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ कुबेरदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ह्रीं क्लीं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ श्रीं क्लीं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ वित्तेश्वराय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ नमो नमः कतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्यात्। ध्यानार्चनादिकं सर्वमस्य पूर्ववदाचरेत्। इति षोडशाक्षरकुबेरमन्त्रप्रयोगः।

षोडशाक्षर कुबेर मन्त्र-प्रयोग—'ॐ श्रीं ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं वित्तेश्वराय नमः' यह सोलह अक्षरों का मन्त्र है। इसके विश्रवा ऋषि हैं, बृहती छन्द है, कुबेर देवता हैं—इस भाव से युक्तमूल में लिखित विनियोग मन्त्र पढ़कर जल छोड़े। फिर मूल में लिखित 'ॐ विश्रवऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास कर 'ॐ श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः अङ्गुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा करतल में न्यास करना चाहिये। फिर इन्हीं मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास भी करे। इसके ध्यान एवं पूजन आदि ऊपर लिखे पैंतीस अक्षर वाले मन्त्र के समान ही करने चाहिये। (परन्तु यन्त्र के मध्य में षोडशाक्षरी मन्त्र ही लिखना चाहिये)।

शिवाथर्वशीर्षम्

शिवउपनिषदि 'ॐ देवाह वै स्वर्गलोकमयंस्ते रुद्रमपृच्छन्। कोभवानिति। सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासोद्वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति। सोऽन्तरादन्तरं प्राविशद्दिशश्चान्तरं प्राविशत्सोहं नित्यानित्यो व्यक्ताव्यक्तो ब्रह्माब्रह्माहं प्राञ्चः प्रत्यञ्चोऽहं दक्षिणाञ्च उदञ्चोहमधश्चोर्ध्वश्चाहं दिशश्चाहं पुमान्पुमान् स्त्रियश्चाहं सावित्र्यहं गायत्र्यहं त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्चाहं छन्दोऽहं सत्योऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाभिराहवनीयोऽहं गौरहङ्गौर्यहमृगहं यजुरहं सामाहमथर्वाङ्गिरसोऽहं ज्येष्ठोऽहं श्रेष्ठोऽहं वरिष्ठोऽहमापोऽहं तेजोऽहं गुह्योऽहमरण्योऽहमक्षरमहं क्षरमहं पुष्करमहं पवित्रमहमुग्रञ्च बलिश्च पुरस्ताज्योतिरित्यहमेव सर्वेभ्यो मामेव स सर्वः समायोमां वेदसदेवान् वेद सर्वांश्च वेदान् साङ्गानपि ब्रह्मब्रह्माणैश्च गाङ्गोभिर्ब्राह्मणेन हविर्हविषा आयुरायुषासत्यं सत्येन धर्मेण धर्मं तर्पयामि स्वेन तेजसा।

शिवाथर्वशीर्ष (शिव उपनिषद के अनुसार)—मूल में लिखित शिवाथर्वशीर्ष० का पाठ करना चाहिये। इसका भावार्थ निम्न प्रकार है—

स्वर्ग लोकमय उन रुद्र भगवान् से देवताओं ने इस प्रकार पूछा—आप कौन हैं? वह बोले—मैं एक हूँ। मैं आदि में था, वर्तमान में हूँ तथा रहूँगा। मेरे अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। वह अन्तर से अन्तर में प्रविष्ट होता है। दिशाओं से दिशान्तर में प्रविष्ट होता है। नित्य-अनित्य, व्यक्त-अव्यक्त, ब्रह्मा-अब्रह्मा, पूर्वी-पश्चिमी, उत्तरी-दक्षिणी, निचली-ऊपरी, दिशा-प्रतिदिशा में वह मैं ही हूँ। मैं ही पुरुष-स्त्री, सावित्री, गायत्री, त्रिष्टुप्, जगती, अनुष्टुप् छन्द हूँ। मैं सत्य हूँ। मैं ही गार्हपत्य, दक्षिणा नामक अग्नि तथा आहवनीय हूँ। मैं ही गौ, गौरी, ऋक्, यजुः, साम तथा अथर्वाङ्गिरस हूँ। ज्येष्ठ हूँ, श्रेष्ठ हूँ, वरिष्ठ हूँ, आप हूँ, तेज हूँ, गुह्य हूँ, अक्षर हूँ, क्षर हूँ, पुष्कर हूँ, पवित्र हूँ, उग्र हूँ, बलि हूँ, सामने की ज्योति हूँ; मैं ही सबमें हूँ, वह समस्त मुझको जानता है। वही सभी वेदों को साङ्गतापूर्वक, ब्रह्म-ब्रह्माओं, गाय-गायों, ब्राह्मण के द्वारा हवि, हविष्य के द्वारा आयु से आयुष्य, सत्य से सत्य, धर्म से धर्म इत्यादि को अपने तेज से तृप्त करता है।

ततो ह वै ते देवा रुद्रमपृच्छन्। ते देवा रुद्रमपश्यन् ते देवा रुद्रमध्यायन् ते देवा ऊर्ध्वबाहवो रुद्रं स्तुवन्ति। ॐ यो वै रुद्र स भगवान् यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः॥ १॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च विष्णुस्तस्मै वै नमो नमः॥ २॥ यो वै रुद्रः

स भगवान् यश्च स्कन्दस्तस्मै० ॥ ३ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चेन्द्रस्तस्मै० ॥ ४ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्चाग्निस्तस्मै० ॥ ५ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च वायुस्त० ॥ ६ ॥ ॐ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सूर्यस्तस्मै० ॥ ७ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सोमस्तस्मै० ॥ ८ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् येऽष्टौ ग्रहास्तस्मै० ॥ ९ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् ये चाष्टौ प्रतिग्रहास्तस्मै० ॥ १० ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भूस्तस्मै० ॥ ११ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भुवस्तस्मै० ॥ १२ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्वस्तस्मै० ॥ १३ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च महस्तस्मै० ॥ १४ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् या च पृथिवी तस्मै० ॥ १५ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चान्तरिक्षं तस्मै० ॥ १६ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यो च द्यौस्तस्मै० ॥ १७ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् याश्चापस्तस्मै० ॥ १८ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च तेजस्तस्मै० ॥ १९ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च कालस्तस्मै० ॥ २० ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यमस्तस्मै० ॥ २१ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च मृत्युस्तस्मै० ॥ २२ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चामृतं तस्मै० ॥ २३ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चाकाशं तस्मै० ॥ २४ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च विश्वं तस्मै० ॥ २५ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्थूलं तस्मै० ॥ २६ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सूक्ष्मं तस्मै० ॥ २७ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च शुक्लं तस्मै० ॥ २८ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृष्णस्तस्मै० ॥ २९ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृत्स्नं तस्मै० ॥ ३० ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सत्यं तस्मै० ॥ ३१ ॥ यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सर्वं तस्मै० ॥ ३२ ॥

तब उन देवों ने रुद्र से पूछा। उन देवों ने रुद्र को देखा, रुद्र का अध्ययन किया तथा ऊर्ध्वबाहु होकर रुद्र की स्तुति की। वह जो रुद्र है, वह ब्रह्मा है, इसलिये उसे नमस्कार है ॥ १ ॥ वह जो रुद्र भगवान् हैं, वही विष्णु हैं, इसलिये उनको नमस्कार है, नमस्कार है ॥ २ ॥ वह जो रुद्र भगवान् हैं, वह स्कन्ध हैं; अतः उन्हें नमस्कार है ॥ ३ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह इन्द्र है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ४ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह अग्नि है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ५ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह वायु है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ६ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह सूर्य है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ७ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह सोम है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ८ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह अष्टग्रहों के रूप में है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ९ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह आठ प्रतिग्रहों के रूप में है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १० ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह भूलोक है; अतः उसे नमस्कार है ॥ ११ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह भुवःलोक है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १२ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह स्वःलोक है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १३ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह महः लोक है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १४ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह पृथ्वी है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १५ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह अन्तरिक्ष है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १६ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह द्यौः है; उसे नमस्कार है ॥ १७ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह आप है; अतः उसे नमस्कार है ॥ १८ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह तेज है; उसे नमस्कार है ॥ १९ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह काल है; उसे नमस्कार है ॥ २० ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह यम है; उसे नमस्कार है ॥ २१ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह मृत्यु है; उसे नमस्कार है ॥ २२ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह अमृत है; उसे नमस्कार है ॥ २३ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह आकाश है; उसे नमस्कार है ॥ २४ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह विश्व है; उसे नमस्कार है ॥ २५ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह स्थूल है; उसे नमस्कार है ॥ २६ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह सूक्ष्म है; उसे नमस्कार है ॥ २७ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह शुक्ल है; उसे नमस्कार है ॥ २८ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह कृष्ण है; उसे नमस्कार है ॥ २९ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह कृत्स्न है; उसे नमस्कार है ॥ ३० ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह सत्य है; उसे नमस्कार है ॥ ३१ ॥ वह जो रुद्र भगवान् है, वह सर्व है; उसे नमस्कार है ॥ ३२ ॥

भूस्ते आदिर्मध्यभुवस्ते शीर्षं विश्वरूपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा वृद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुतं दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृतं परमपरं परायणञ्च त्वं अपामसोममृता अभूमागन्मे ज्योतिरविदामदेवान्। किं नूनमस्मान्

कृणवदरातिः। किमु धूर्त्तिरमृतं मर्त्यस्य सोमसूर्यपुरस्तात्सूक्ष्मः पुरुषः। सर्वञ्जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सौम्यं सूक्ष्मं पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भावम्भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति तस्मै महाग्रासाय वै नमो नमः।

हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिता। हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः॥

तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारन्तच्छुक्लं यच्छुक्लं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म। यत् परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान् महेश्वरः॥ ३॥

भूः आपका आदि है, भुवः आपका मध्य है, श्वः आपका शीर्ष है। आप विश्वरूप हैं, एकमात्र ब्रह्म हैं, आप द्विधा, त्रिधा वृद्धि हैं, आप शान्ति हैं, पुष्टि हैं, हुत हैं, अहुत हैं, दत्त हैं, अदत्त हैं, सर्व हैं, असर्व हैं, विश्व हैं, अविश्व हैं, कृत-अकृत हैं, परम-अपरम हैं, परायण हैं।

अपों में सोम तथा अमृत हैं, अविदों और अदेवों में ज्योति हैं, आप निश्चय ही मरणशील को अमरत्व देने वाले हैं। आप ही मित्र एवं शत्रु हैं। यह सोम एवं सूर्य से भी बढ़कर सूक्ष्म पुरुष है। यहाँ प्राजापत्य सोम सूक्ष्म ग्राह्य-अग्राह्य भाव से भाव को, सूक्ष्म को सूक्ष्म से, वायव्य को वायव्य से जो ग्रसित करता है, उस महाग्रास को नमस्कार है।

आपके हृदय में सभी देवता तथा प्राण प्रतिष्ठित हैं। आप हृदय में प्रतिष्ठित हैं। नित्य ही तीन मात्रा के रूप में हैं, उनसे परे वह ब्रह्म है। उसके उत्तर की ओर सिर एवं दक्षिण की ओर पैर हैं। जो उत्तर की ओर है, वह ओंकार है। जो ओंकार है, वही प्रणव है। जो प्रणव है, वह सर्वव्यापी है। जो सर्वव्यापी है, वह अनन्त है। जो अनन्त है, वह तार है। जो तार है, वह शुक्ल है। जो शुक्ल है, वह सूक्ष्म है। जो सूक्ष्म है, वह वैद्युत् है। जो वैद्युत् है, वह परब्रह्म है। जो परब्रह्म है, वह एक है। जो एक है, वह रुद्र है। जो रुद्र है, वह ईशान है। जो ईशान है, वह महेश्वर (शिव) है॥ ३॥

अथ कस्मादुच्यते ओङ्कारः यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः। अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुःसामाथर्वाङ्गिरसं ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः। अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव यथा स्नेहेन पलालपिण्डमिव शान्तरूपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी। अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तः यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चास्यान्तो नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽनन्तः। अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भजन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात्तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम्। अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एव क्रन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम्। अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृश्यति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम्। अथ कस्मादुच्यते वैद्युतं यस्मादुच्चार्यमाण एव व्यक्ते महति तपसि द्योतयति तस्मादुच्यते वैद्युतम्। अथ कस्मादुच्यते परंब्रह्म यस्मात्परमपरं परायणञ्च बृहद्बृहत्या बृंहयति तस्मादुच्यते परंब्रह्म। अथ कस्मादुच्यते एकः यः सर्वान्प्राणान् संभक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणः प्रत्यञ्च उदञ्चप्राच्योऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सङ्गतिः साकं स एकोऽभूदन्तश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यते एकः। अथ कस्मादुच्यते रुद्रः यस्मादृषिभिर्नान्यैर्भवतैर्द्रुतमस्य रूपमुपलभ्यते तस्मादुच्यते रुद्रः।

वह ओङ्कार क्यों कहलाता है? जिसके उच्चारित होने पर प्राण ऊर्ध्वगमन करता है; अतः उसे ओंकार कहते हैं। उसे प्रणव क्यों कहते हैं? जिसके उच्चारित करते ही ऋक्-युजः-साम-अथर्व-अङ्गिरस तथा ब्राह्मणों को प्रणाम करता है (होता है), उनको नमन करता है; अतः 'प्रणव' कहा जाता है। सर्वव्यापी क्यों कहते हैं? जिसके उच्चारित होते ही जिस प्रकार स्नेह के मिश्रण से पलाल (मोटा आटा) का पिण्ड ओत-प्रोत होकर शान्तरूप हो

जाता है, उसी प्रकार इसके उच्चारण से शरीर-मन-प्राण एकाकार हो जाते हैं तथा पिण्ड-ब्रह्माण्ड भी एक रूप भासते हैं; अतः उसे सर्वव्यापी कहते हैं। इसे अनन्त क्यों कहते हैं ? जिसके उच्चारण करते ही तिरछे में, ऊर्ध्व में तथा अधः में ध्वनि के विस्तार का अन्त नहीं मिलता है; अतः उसे अनन्त कहते हैं। ॐ को तार क्यों कहते हैं ? क्योंकि यह उच्चारणमात्र से ही गर्भ, जन्म, व्याधि, जरा-मरण, संसार, महाभय से तार देता है, छुटकारा दिला देता है; अतः तार कहते हैं। इसे शुक्ल क्यों कहा जाता है ? क्योंकि इसके उच्चरित होते ही क्रन्दन होता है, क्लम होता है; अतः इसे शुक्ल कहते हैं। यह सूक्ष्म क्यों कहा जाता है ? क्योंकि यही सभी अङ्गों में व्याप्त होकर स्थित है; अतः सूक्ष्म कहलाता है। इसे वैद्युत् क्यों कहते हैं ? क्योंकि इसके उच्चारण करते ही महत् तत्त्व व्यक्त होता है, तप प्रकाशित होता है; अतः इसे वैद्युत् कहा जाता है। इसे परंब्रह्म किस कारण से कहते हैं ? क्योंकि यह परं, अपरं, परायण, बृहद् बृहती का बृंहण करता है; अतः परंब्रह्म कहलाता है। इसे एक क्यों कहा जाता है ? क्योंकि यह सभी प्राणों का संभक्षण करके उससे अज को उत्पन्न करता है, विसर्जित करता है, कुछ साधक तीर्थ (साधन) में गमन करते हैं; उनमें दक्षिण, पश्चिम, उत्तर-पूर्व को (अपनी रुचि अनुसार) जाते हैं; उन सबकी यह सङ्गति बिठाता है। यह प्राणियों में एक होकर उनके अन्तःकरण में संचरित होता है; अतः एक कहा जाता है। यह रुद्र क्यों कहा जाता है ? क्योंकि इसके रूप को केवल ऋषियों के द्वारा ही शीघ्र देखा जाता है, अन्यों के द्वारा नहीं; अतः रुद्र कहा जाता है।

अथ कस्मादुच्यते ईशानः यः सर्वान्देवानीशते ईशानीभिर्जनीभिश्च शक्तिभिः। अभित्वा शूरणोनुमो दुग्धा इव धेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वदर्शमीशानमिन्द्रतस्थुष इति तस्मादुच्यते ईशानः।

इसे ईशान क्यों कहते हैं ? क्योंकि वह सभी देवों पर स्वामित्व रखता है, वह ईशानी जनियों (स्वामित्वकारक शक्तियों) के द्वारा सभी देवों पर शासन करता है। (देवता इसी ॐ के द्वारा प्रदत्त शक्तियों से ही अपने कार्यों को करते हैं।) ठीक उसी प्रकार से जैसे कि कन्द-मूल, घास, तृण आदि गायों के दूध को उनमें प्रविष्ट होकर उत्पन्न करते हैं।

विमर्श—

ईशानमेनं कवयः पुराणाश्चराचरस्याधिपतिर्ब्रुवन्ति।
तमाह्वयन्ते स हि सर्वशास्ता स एव रक्षां कुरुते विपत्सु॥

(विष्णुकाव्ये ६४ श्लोक)

ऐश्वर्यभावेन जगत्समग्रमीष्टे स्वभावादत ईश्वरः सः।
सर्वं समावास्य स विष्णुरास्ते तस्मिन् हतस्युर्भुवनानि विश्वाः॥

(विष्णुकाव्ये १०० श्लोक)

ईष्टे जगत्येन स ईश्वरोऽस्ति विश्वं तदावास्यमिदं स्वभावात्।
हृदन्तराले संस्थितो महात्मा समीक्षते विश्वमिदं तपत् सः॥
तस्यार्द्रदृष्ट्या भवतीश्वरोना स एव रंको न यदेक्षते सः।
तस्मान्नरः पुण्यतमानि कुर्वन् ध्यायेत् सदा तं सकलेशमाद्यम्॥

(विष्णुकाव्ये ४८-४९)

यः सर्वलोकानुगतस्य विष्णोर्विधानमाद्यं जगतो भनक्ति।
तं रोदयत्येव स रुद्रकर्मा विधानभंगोद्भवदुःखजालैः॥

दुःखस्य च सारमित्वा प्रज्ञापराधाच्च भयं विमृष्य।
नूनं नरो सत्त्वगुणप्रसूतान् क्रियाकलापान् विदधीत भूयः॥
प्रबुद्धसत्त्वस्य महाशयस्य दुःखानशेषानपहन्ति रुद्रः।
भूयो यथा तुष्टमना विधिज्ञं दुःखैरशेषै रहितं विधत्ते॥

स तारणो रुद्र अनन्तशक्तिः सदा जराजन्मनिबद्धजीवम्। परादिदं दृश्यतटं तथास्मत् तटात् स जीवं नयते परञ्च॥
यथात्र लोके कवयः पुराणा नवं नवंपारमवाप्तुकामाः। वाञ्छन्ति नित्यं गहनानुकूल्यं तितीर्षुरिवञ्च सदात्र जीवः॥

तारो हि रुद्रो स च वास्ति विष्णुः द्वेषांसि तारो तरते हि शश्वत्।
द्वेषस्तमोऽतो जगतस्य तारो दीपो यथा हस्तगतोऽस्ति तारः॥
स एव नूनं प्रणवोऽत्र रुद्रो यो व्याप्य विश्वं कुरुते विचित्रम्।
तमेव वेदास्तमु विश्वदेवाः स्तुवन्ति गायन्ति नमन्ति यान्ति॥
रुद्रो हि मन्ये प्रणवः प्रसिद्धः स एव वा व्योंपरमेश्वरोऽस्ति।
स एव विष्णुः स हि सूर्य वेन्द्रः नमन्ति तं वा प्रणमोऽप्यतः सः॥

(रुद्रकाव्ये)

अथ कस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः यस्माद्भक्तान् ज्ञानेन भजत्यनुगृह्णाति च वाचं संसृजति च सर्वान् भावान् परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते तस्मादुच्यते स भगवान् महेश्वरः तदेतद्रुद्रचरितम्॥ ४॥

एषो ह देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनांस्तिष्ठति सर्वतोमुखः।
एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमाँल्लोकानीशत ईशानीभिः।
प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति चान्तकाले संसृज्य विश्वाभुवनानि गोप्ता॥
यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको येनेदं सर्वं विचरति सर्वम्।
तमीशानं वरदं देवमीड्यं निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति।
क्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे।
रुद्रमेकत्वमाहुः शाश्वतं वै पुराणमिषमूर्जेण पशवो नानुमायन्तम्मृत्युपाशान्।
तदेतेनात्मन्नेते नार्धचतुर्थेन मात्रेण शान्तिं संसृजति॥

पशुपाशविमोक्षणं या सा प्रथममात्रा ब्रह्मदेवत्या रक्ता वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेत् ब्रह्मपदम्। या सा द्वितीया मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्वैष्णवं पदम्। या सा तृतीया मात्रा ईशानदेवत्या कपिला वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेदीशानं परम्। या सार्धचतुर्थी मात्रा सर्वदेवत्याऽव्यक्तीभूता खं विचरति शुद्धा स्फटिकसन्निभा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेत्पदमनामयम्। तदेतदुपासीत मुनयो वाग्वदन्ति न तस्य ग्रहणमयं पन्थाविहित उत्तरेण येन देवा यान्ति येन पितरो येन ऋषयः परमपरं परायणञ्चेति।

बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वेदेवं जातरूपं वरेण्यम्। तमात्मस्थं ये तु पश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिर्भवति नोत्तरेषाम्।

यस्मिन् क्रोधं याञ्च तृष्णां क्षमाञ्चाक्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः रुद्रो हि शाश्वतेन वै पुराणेनेषमूर्जेण तपसा नियन्ताग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म सर्वं ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्मादव्रतमिदं पाशुपतं यद्भस्म नाङ्गानि संस्पृशेत् तस्माद् ब्रह्म तदेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षणाय॥ ५॥

उसे महेश्वर क्यों कहते हैं ? क्योंकि वह भक्तों को ज्ञान देकर अनुग्रह करता है, वाणी देता है। सभी भावों को छोड़कर वह महान् ऐश्वर्य से प्रतिष्ठित है, अतः वह भगवान् महेश्वर है। यह रुद्र का चरित्र है॥ ४॥

यह वह देव है, जो सर्वत्र सबसे पूर्व उत्पन्न तथा सबके भीतर है। वही जात है, वही जनिष्यमाण है, वही लोगों के आगे-पीछे सब ओर है। रुद्र एक ही है; अन्य दूसरा कोई नहीं है; जो इस लोक पर ईशानी शक्तियों के द्वारा शासन करता है। यह लोगों के पीछे रहता है तथा अन्त काल में विश्व एवं भुवनों को गुप्त करके रखता है। जो प्रत्येक योनि में स्थित रहता है तथा प्रत्येक में है, इससे यह सम्पूर्ण जगत् रचित है। उस ईशान, वरदायक देव को, जो कि पूजने योग्य है, पूजने से निश्चित ही परम शान्ति प्राप्त होती है। इस पृथ्वी को छोड़कर, संसार के मूल कारण को बुद्धि द्वारा विनिश्चित करके एकमात्र रुद्र को अर्पित करे तो रुद्र के साथ एकत्व को प्राप्त होकर यह जीव (बद्ध पशु) मृत्यु के पाश से मुक्त हो जाता है। इसके सम्पूर्ण ज्ञान से शान्ति प्राप्त होती है, किन्तु इसके आधे-अधूरे ज्ञान से शान्ति नहीं मिलती है।

(१) पशु (जीव) को पाश से मुक्त करने वाली जो प्रथम मात्रा है, उसके ब्रह्म देवता हैं, वह रक्तवर्ण वाली है। उसका नित्य ध्यान करने से ब्रह्मपद को प्राप्त होता है। (२) और जो द्वितीय मात्रा है, उसके विष्णु देवता हैं, वह कृष्ण वर्ण की है, जो उसका नित्य ध्यान करता है, वह विष्णुपद को प्राप्त होता है। (३) जो तृतीय मात्रा है, उसके देवता ईशान हैं तथा वह कपिल वर्ण की है। जो उसे नित्य ध्यान में ध्याता है, उसे ईशान पद प्राप्त होता है। (४) जो सार्ध चतुर्थ मात्रा है, वह सर्वदेवमयी है तथा अव्यक्त होकर आकाश में विचरती है। उसका वर्ण शुद्ध स्फटिक के समान है। जो उसका नित्य ध्यान करता है, वह अनामय (दुःखरहित) पद को प्राप्त होता है। इसकी उपासना करके मुनि लोग वाणी द्वारा अपने अनुभव प्रकट करते हैं। अमुनियों के मार्ग से न जायँ। उत्तरमार्ग जिसमें देवता, पितर तथा ऋषि परम्परापूर्वक गमन करते रहे हैं, उसी से चलें तथा अपने हृदय (शिरोहृदय) के मध्य में बालाग्र के प्रमाण वाले जातरूप के समान श्रेष्ठ विश्वेदेव का ध्यान करें। जो धीर पुरुष स्वयं में स्थित उन रुद्र का ध्यान करते हैं, उन्हें शान्ति प्राप्त होती है, अन्यों को नहीं। जिसमें क्रोध, तृष्णा, क्षमा, अक्षमा को त्यागकर इस मायाजाल को काटकर सबको रुद्र को समर्पित करने की क्षमता है, उसके लिये रुद्र ऊर्जा प्रदान कर अग्नि, वायु, जल सब कुछ को भस्मस्वरूप कर देते हैं। यह भस्म मेरे अङ्गों, नेत्रों आदि में स्पर्श करे तथा मेरे बन्धनों को काटने वाला हो॥ ५॥

योऽग्नौ रुद्रो योऽश्वन्तर्य रुध आविवेश। यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि च क्लृपे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः। यो रुद्रोऽप्सु यो रुद्रो ओषधीषु यो रुद्रो वनस्पतिषु येन रुद्रेण जगदूर्ध्वं धारितं पृथिवी द्विधा त्रिधा धर्त्ता धारिता नागायेन्तरिक्षे तस्मै रुद्राय वै नमः। मूर्धानमस्य संसेव्याप्यथर्वा हृदयञ्च यत्। मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत्यवमानोऽधिशीर्षतः। तद्वा अथर्वणः शिरोदेवकोशः समुज्झितः तत् प्राणोऽभिरक्षति शिरोऽन्तमथो मनः। न च दिवो देवजनेन गुप्ता न चान्तरिक्षाणि न च भूम इमाः। यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्नपरं किञ्चनास्ति। न तस्मात्पूर्वं न परं तदस्ति न भूतं नोत भव्यं यदासीत्। सहस्रपादेकमूर्धा व्याप्तं स एवेदमा वरीवर्तिभूतम्। अक्षरात् सञ्जायते कालः कालाद् व्यापक उच्यते। व्यापको हि भगवान् रुद्रो भोगायमानो यदा शेते रुद्रास्तदा संहार्यते प्रजाः। उच्छ्वसिते तमो भवति तमस आपोऽश्वङ्गुल्या मथिते मथितं शिशिरे शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति फेनादण्डं भवत्यण्डाद्ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुः वायोरोङ्कार ओङ्कारात् सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोका भवन्ति अर्चयति तपः सत्यं मधु रक्षन्ति यद्ध्रुवम्। एतद्धि परमं तपः। आपो ज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोन्नम इति॥ ६॥

जो रुद्र अग्नि में, विद्युत् में, औषधियों में, वीरुधों में प्रविष्ट है; जो इस विश्व एवं भुवनों को क्लृप्त (निर्गत) या कल्पित करता है, उस रुद्र को नमस्कार है, अग्नि को नमस्कार है। जो रुद्र जल में, जो औषधियों में, जो रुद्र

वनस्पतियों में है, जिस रुद्र के द्वारा जगत् को ऊर्ध्व में टिकाया गया है, पृथ्वी को द्विधा त्रिधा धर्त्त तथा आधारित किया गया है, जो नागरूप में अन्तरिक्ष में है; उस रुद्र को नमस्कार है, नमस्कार है। अथर्वा ने इस रुद्र के मूर्धा अथवा हृदय का संसेवन कर मस्तिष्क से ऊर्ध्व में प्रेरित करता लगता है। जो भी अथर्वण का शिर देवकोश से समुज्झित है, वह प्राणों की अभिरक्षा करता है, शिर तथा मन की रक्षा करता है। देवजनों के द्वारा, यह दिव गुप्त है, न अन्तरिक्ष गुप्त है और न ही यह पृथ्वी गुप्त है। जिसमें ये सब ओत-प्रोत हैं, उस रुद्र से परतर अन्य कोई पदार्थ नहीं है। न उससे पूर्व में हुआ और न पश्चात् होगा, न भूत है, न भव्य है, न वर्तमान में (उस अन्न रुद्र के समान) है। वह सहस्र पैरों वाला तथा एक शिर से इस सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त किये हुए है। अक्षर ब्रह्म (रुद्र) से काल उत्पन्न होता है, काल से व्यापक कहा जाता है। भगवान् रुद्र व्यापक हैं, जब वह भोगायमान होकर शयन करते हैं, तब प्राणियों का संहार करते हैं। उनके उच्छ्वास से तम उत्पन्न होता है, तम से आप (जल) उत्पन्न होता है, आपके अश्वङ्गुली से मथित करने से शिशिर, शिशिर के मथने से फेन होता है। फेन से अण्ड बनता है। अण्ड से ब्रह्मा उत्पन्न होता है; ब्रह्मा से वायु होती है; वायु से ओङ्कार होता है। ओङ्कार से सावित्री, सावित्री से गायत्री तथा गायत्री से लोक उत्पन्न होते हैं। तप का अर्चन, सत्य तथा मधु का रक्षण होता है। यही परंतप है। आप ज्योति है, रस अमृत है। ब्रह्म भू: भुव: स्व: है। ॐ॥ ६॥

य इदमथर्वशिरो ब्राह्मणोऽधीते। अश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति। अनुपनीत उपनीतो भवति। सोऽग्निपूतो भवति। स वायुपूतो भवति। स सूर्यपूतो भवति। स सोमपूते भवति। स सत्यपूतो भवति। स सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति। स सर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति। स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति। तेन सर्वैः क्रतुभिरिष्टं भवति। गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति। प्रणवानामयुतं जप्तं भवति। स चक्षुषः पङ्क्तिं पुनाति। आसप्तमात् पुरुषयुगान्पुनातीत्याह भगवानथर्वशिरः। सकृज्जप्त्वैव शुचिः स पूतः कर्मण्यो भवति। द्वितीयं जप्त्वा गणाधिपत्यमाप्नोति। तृतीयं जप्त्वैवमेवानूप्रविशन्त्यो सत्यमों सत्यमों सत्यम्। इत्यथर्ववेदे शिवाथर्वशीर्षम्। इति शिरउपनिषत्॥ ७॥

इति श्रीवीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे शिवमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं द्वितीयं समाप्तम्।

जो ब्राह्मण इस अथर्वशीर्ष का अध्ययन करता है, वह यदि अश्रोत्रिय है तो श्रोत्रिय हो जाता है। यदि अनुपनीत है, तो उपनीत हो जाता है। वह अग्निपूत हो जाता है। वह वायुपूत हो जाता है। वह सूर्यपूत हो जाता है। वह सोमपूत हो जाता है। वह सत्यपूत हो जाता है। वह समस्त देवों के द्वारा ज्ञात हो जाता है। वह सभी देवों द्वारा अनुज्ञात हो जाता है। वह समस्त तीर्थों में स्नात हो जाता है। उसके द्वारा सभी यज्ञ सम्पन्न हो जाते हैं। उसे साठ सहस्र गायत्री मन्त्र जपने का फल प्राप्त हो जाता है। उसे अयुत सङ्ख्या में प्रणवजप का फल मिल जाता है। वह अपनी दृष्टि से पङ्क्ति को पावन कर देता है। उनके सात पीढ़ी के पुरुषयुगल (पुरखों के सपत्नीक जोड़े) पवित्र हो जाते हैं। ऐसा भगवान् अथर्वशिरा ने कहा है। एक बार जपने से शुचि, कर्मण्य तथा पूत हो जाता है। दूसरी बार जपने से गणाधिपत्य (नेतृत्व) को प्राप्त हो जाता है। तीसरी बार जपने से सत्य में अनुप्रविष्ट हो जाता है। ओम् सत्य। ओम् सत्य। ओम्॥ ७॥

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के द्वितीय प्रकरण शिवमन्त्रानुष्ठान प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २॥

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे देवीमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं तृतीयम्॥ ३॥

मङ्गलाचरणम्

सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।
आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीरणन्नूपुरा दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुण्डला॥

मङ्गलाचरण—सिंह पर आरूढ़, शिर पर चन्द्रमा धारण किये, मरकतमणि के समान भुजाओं की कान्ति से युक्त, चार भुजा वाली, शङ्ख-चक्र-धनुष-बाणों को धारण किये, तीन नेत्रों की शोभा से युक्त, मोती के बाजूबन्द, हार धारण किये, कङ्कण एवं काञ्ची (करधनी) की ध्वनि करती हुई, रत्नों के कुण्डलों से शोभित दुर्गा हमारी दुर्गति को दूर करे।

देव्याः सर्वमन्त्रारम्भप्रयोगः

प्रातःकृतनित्यक्रियश्चन्द्रतारादिबलान्विते सुमुहूर्ते यथाकामनया प्रतिज्ञासङ्कल्पं कृत्वा गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्तं विधाय ब्राह्मणद्वारा कारिते जापकवरणं च कुर्य्यात्। ततो जपस्थानमागत्य कूर्म्मसंशोधिते स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुककामनया मन्त्रसिद्धिद्वारा श्रीभगवतीप्रसन्नतार्थं देव्या अमुकमन्त्रजपं करिष्ये, तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिमन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं निवृत्त्यादिकलामातृकान्यासं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूर्ववत् भूतशुद्ध्यादिबहिर्मातृकान्यासान्तं कृत्वा कलामातृकान्यासं कुर्य्यात्।

तद्यथा—अस्य कलामातृकान्यासस्य प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री छन्दः श्रीमातृका शारदा देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः अमुकमन्त्राङ्गत्वेन मातृकान्यासे विनियोगः। ॐ प्रजापतिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ शारदादेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमो गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अँ ॐ आँ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ इँ ॐ ईं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ उँ ॐ ऊँ शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ एँ ॐ ऐं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ ओं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ अँ ॐ अः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः।

अथ ध्यानम्—

शङ्खचक्राब्जपरशुकपालानक्षमालिकाः। पुस्तकाः मृतकुम्भौ च त्रिशूलं दधतीं करैः॥
ॐ सितपीतासितश्वेतरक्तवर्णैस्त्रिलोचनैः। पञ्चास्यसंयुतां चन्द्रसकान्तिं शारदां भजे॥

इति ध्यात्वा मातृकां न्यसेत्। तद्यथा—ॐ अं निवृत्त्यै नमः ललाटे॥ १॥ ॐ आं प्रतिष्ठायै नमः मुखवृत्ते॥ २॥ ॐ इं विद्यायै नमः दक्षनेत्रे॥ ३॥ ॐ ईं शान्त्यै नमः वामनेत्रे॥ ४॥ ॐ उं इन्धिकायै नमः दक्षकर्णे॥ ५॥ ॐ ऊँ दीपिकायै नमः वामकर्णे॥ ६॥ ॐ ऋं रेचिकायै नमः दक्षिणनासापुटे॥ ७॥ ॐ ॠं मोचिकायै नमः वामनासापुटे॥ ८॥ ॐ लृं परायै नमः दक्षकपोले॥ ९॥ ॐ ॡं सूक्ष्मायै नमः वामकपोले॥ १०॥ ॐ एं सूक्ष्मामृतायै नमः ऊर्ध्वोष्ठे॥ ११॥ ॐ ऐं ज्ञानामृतायै नमः अधरोष्ठे॥ १२॥ ॐ ओं आप्यायन्ते नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ॥ १३॥ ॐ औं व्यापिन्यै नमः अधोदन्तपङ्क्तौ॥ १४॥ ॐ अं व्योमरूपायै नमः जिह्वायाम्॥ १५॥ ॐ अः अनन्तायै नमः कण्ठे॥ १६॥ ॐ कं सृष्ट्यै नमः दक्षबाहुमूले॥ १७॥ ॐ खं नह्यै नमः दक्षकूर्परे॥ १८॥ ॐ गं स्मृत्यै नमः मणिबन्धे॥ १९॥ ॐ घं मेधायै नमः दक्षहस्ताङ्गुलिमूले॥ २०॥

ॐ ङं कान्त्यै नमः दक्षहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ २१ ॥ ॐ चं लक्ष्म्यै नमः वामबाहुमूले ॥ २२ ॥ ॐ छं द्युत्यै नमः वामकूर्परे ॥ २३ ॥ ॐ जं स्थिरायै नमः वाममणिबन्धे ॥ २४ ॥ ॐ झं स्थित्यै नमः वामहस्ताङ्गुलिमूले ॥ २५ ॥ ॐ ञं सिद्ध्यै नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ २६ ॥ ॐ टं जरायै नमः दक्षिणहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ २७ ॥ ॐ ठं पालिन्यै नमः दक्षजानुनि ॥ २८ ॥ ॐ डं क्षान्त्यै नमः दक्षगुल्फे ॥ २९ ॥ ॐ ढं ईश्वर्यै नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले ॥ ३० ॥ ॐ णं रत्यै नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे ॥ ३१ ॥ ॐ तं कामिकायै नमः वामपादमूले ॥ ३२ ॥ ॐ थं वरदायै नमः वामजानुनि ॥ ३३ ॥ ॐ दं आह्लादिन्यै नमः वामगुल्फे ॥ ३४ ॥ ॐ धं प्रीत्यै नमः वामपादाङ्गुलिमूले ॥ ३५ ॥ ॐ नं दीर्घायै नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे ॥ ३६ ॥ ॐ पं तीक्ष्णायै नमः दक्षपार्श्वे ॥ ३७ ॥ ॐ फं रौद्र्यै नमः वामपार्श्वे ॥ ३८ ॥ ॐ बं भयायै नमः पृष्ठे ॥ ३९ ॥ ॐ भं निद्रायै नमः नाभौ ॥ ४० ॥ ॐ मं तन्द्रिकायै नमः जठरे ॥ ४१ ॥ ॐ यं क्षुधायै नमः हृदये ॥ ४२ ॥ ॐ रं क्रोधिन्यै नमः दक्षांसे ॥ ४३ ॥ ॐ लं क्रियायै नमः ककुदि ॥ ४४ ॥ ॐ वं उत्कार्यै नमः वामांसे ॥ ४५ ॥ ॐ शं मृत्युकायै नमः हृदयादिदक्षहस्तान्तम् ॥ ४६ ॥ ॐ षं पीतायै नमः हृदयादिवामहस्तान्तम् ॥ ४७ ॥ ॐ सं श्वेतायै नमः हृदयादिदक्षपादान्तम् ॥ ४८ ॥ ॐ हं अरुणायै नमः हृदयादिवामपादान्तम् ॥ ४९ ॥ ॐ ळं असितायै नमः मूर्द्धादिपादान्तम् ॥ ५० ॥ ॐ क्षं अनन्तायै नमः पादादिमूर्द्धान्तम् ॥ ५१ ॥ इति देवीकलामातृकान्यासः। अयं न्यासः देव्याः सर्वमन्त्रेष्वादौ कार्यः।

देवी के सभी मन्त्रों के पुरश्चरण के आरम्भ की विधि—प्रात:काल नित्यक्रिया से निवृत्त होकर चन्द्र-तारादि बल से युक्त शुभ मुहूर्त में अपनी कामना के अनुसार प्रतिज्ञा सङ्कल्प करके गणपति पूजनादि से लेकर नान्दीमुख श्राद्धपर्यन्त कृत्य करके यदि ब्राह्मण द्वारा जप कराना हो तो जापकों का वरण करे। फिर जपस्थान में आकर कूर्मशोधन कर अपने आसन पर पूर्व की ओर मुख करके मूल मन्त्र से आचमन कर प्राणायाम कर देश-काल का सङ्कीर्तन करके 'अमुककामनया मन्त्रसिद्धिद्वारा श्रीभगवतीप्रसन्नतार्थं देव्या अमुकमन्त्रजपं करिष्ये। तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिमन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं निवृत्त्यादिकलान्यासं च करिष्ये' इत्यादि पढ़कर सङ्कल्प करके पूर्व में कथित (पद्धतिकाण्ड में वर्णित) विधि से भूतशुद्धि, अन्तर्मातृकान्यास, कलामातृकान्यास करना चाहिये।

मातृकान्यास के विनियोग-हेतु मूल में लिखित 'अस्य कलान्यासस्य प्रजापतिर्ऋषि' इत्यादि कहकर विनियोग का जल पृथ्वी पर छोड़े। फिर मूल में लिखित 'ॐ प्रजापतिऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादिन्यास क्रमशः शिर, मुख, हृदय, गुह्य तथा पाद में करे। फिर 'ॐ अँ ऊँ आं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्रत्रय तथा अस्त्राय फट् न्यास करे।

तदनन्तर मूल में लिखित 'शङ्खचक्राब्ज०' इत्यादि दो श्लोकों से देवी का ध्यान करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ अं निवृत्त्यै नमः' इत्यादि ५१ मन्त्रों से क्रमशः ललाट, मुखवृत्त, दक्षिणनेत्र, वामनेत्र, दक्षिणकर्ण, वामकर्ण, दक्षिणनासापुट, वामनासापुट, दक्षकपोल, वामकपोल, ऊर्ध्वोष्ठ, अधरोष्ठ, ऊर्ध्वदन्तपङ्क्ति, अधोदन्तपङ्क्ति, जिह्वा, कण्ठ, दक्षबाहुमूल, वामबाहुमूल, दक्षिण कूर्पर आदि में मातृका-कलान्यास करना चाहिये। इस न्यास को देवी के सभी मन्त्रों में करना चाहिये।

चण्डीविधानम्

तत्रादौ सप्तशतीपाठाङ्गभूतनवार्णमन्त्रप्रयोगः। मन्त्रो यथा—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवाक्षरो मन्त्रः। अस्य नवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषय गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः। नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः। रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि। अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि। वेदत्रयोद्भवफलप्राप्त्यर्थं सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थं च नवार्णमन्त्रजपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः शिरसि ॥ १ ॥ ॐ गायत्र्युष्णि-गनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे ॥ २ ॥ ॐ महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः हृदि ॥ ३ ॥ ॐ नन्दाशाकम्भरी-

भीमाशक्तिभ्यो नमः दक्षस्तने॥४॥ ॐ रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामरीबीजेभ्यो नमः वामस्तने॥५॥ ॐ अग्निवायु-सूर्यतत्त्वेभ्यो नमः हृदये॥६॥ इति ऋष्यादिन्यासं कृत्वा एकादशन्यासान्कुर्यात्।

तद्यथा—ॐ अं नमः ललाटे॥१॥ प्रणवमादौ सर्वत्र। आं नमः मुखवृत्ते॥२॥ इं नमः दक्षिणनेत्रे॥३॥ ईं नमः वामनेत्रे॥४॥ उं नमः दक्षिणकर्णे॥५॥ ऊं नमः वामकर्णे॥६॥ ऋं नमः दक्षिणनासिकायाम्॥७॥ ॠं नमः वामनासिकायाम्॥८॥ लृं नमः दक्षिणगण्डे॥९॥ ॡं नमः वामगण्डे॥१०॥ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे॥११॥ ऐं नमः अधरोष्ठे॥१२॥ ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ॥१३॥ औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ॥१४॥ अं नमः शिरसि॥१५॥ अः नमः मुखे॥१६॥ कं नमः दक्षिणबाहुमूले॥१७॥ खं नमः दक्षिणकूर्परे॥१८॥ गं नमः दक्षिणमणिबन्धे॥१९॥ घं नमः दक्षाङ्गुलिमूले॥२०॥ ङं नमः दक्षाङ्गुल्यग्रे॥२१॥ चं नमः वामबाहुमूले॥२२॥ छं नमः वामकूर्परे॥२३॥ जं नमः वाममणिबन्धे॥२४॥ झं नमः वामाङ्गुलिमूले॥२५॥ ञं नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे॥२६॥ टं नमः दक्षिणपादमूले॥२७॥ ठं नमः दक्षजानुनि॥२८॥ डं नमः दक्षगुल्फे॥२९॥ ढं नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले॥३०॥ णं नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे॥३१॥ तं नमः वामपादमूले॥३२॥ थं नमः वामजानुनि॥३३॥ दं नमः वामगुल्फे॥३४॥ धं नमः वामपादाङ्गुलिमूले॥३५॥ नं नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे॥३६॥ पं नमः दक्षिणपार्श्वे॥३७॥ फं नमः वामपार्श्वे॥३८॥ बं नमः पृष्ठे॥३९॥ भं नमः नाभौ॥४०॥ मं नमः जठरे॥४१॥ यं नमः हृदि॥४२॥ रं नमः दक्षांसे॥४३॥ लं नमः ककुदि॥४४॥ वं नमः वामांसे॥४५॥ शं नमः हृदयादिदक्षिणहस्तान्तम्॥४६॥ षं नमः हृदयादिवामहस्तान्तम्॥४७॥ सं नमः हृदयादिदक्ष-पादान्तम्॥४८॥ हं नमः हृदयादिवामपादान्तम्॥४९॥ ळं नमः जठरे॥५०॥ क्षं नमः मुखे॥५१॥ एवं प्रणवादिनमोऽन्तं सर्वत्र तत्त्वमुद्रया मातृकान्यासं कुर्यात्। इति मातृकान्यासः प्रथमः॥१॥

कृतेन येन देवस्य सारूप्यं याति मानवः।

ततः सारस्वताभिधं द्वितीयं न्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः॥१॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमोऽनामिकयोः॥२॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमयोः॥३॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः तर्जन्योः॥४॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अङ्गुष्ठयोः॥५॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करयोर्मध्ये॥६॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करयोः पृष्ठे॥७॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मणिबन्धयोः॥८॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कूर्परयोः॥९॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः हृदयाय नमः॥१०॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिरसे स्वाहा॥११॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिखायै वषट्॥१२॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कवचाय हुं॥१३॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नेत्रत्रयाय वौषट्॥१४॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अस्त्राय फट्॥१५॥

अस्मिन्सारस्वते न्यासे कृते जाड्यं विनश्यति।

इति द्वितीयो न्यासः॥२॥

ॐ ह्रीं ब्राह्मी पूर्वतो मां पातु॥१॥ ॐ ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां मां पातु॥२॥ ॐ ह्रीं कौमारी दक्षिणे मां पातु॥३॥ ॐ ह्रीं वैष्णवी नैर्ऋत्यां मां पातु॥४॥ ॐ ह्रीं वाराही पश्चिमे मां पातु॥५॥ ॐ ह्रीं इन्द्राणी वायव्ये मां पातु॥६॥ ॐ ह्रीं चामुण्डा चोत्तरे मां पातु॥७॥ ॐ ह्रीं महालक्ष्मीः ऐशान्यां मां पातु॥८॥ ॐ ह्रीं व्योमेश्वरी चोर्ध्वे मां पातु॥९॥ ॐ ह्रीं सप्तद्वीपेश्वरी भूमौ मां पातु॥१०॥ ॐ ह्रीं कामेश्वरी पाताले मां पातु॥११॥

तृतीयेऽस्मिन्कृते न्यासे त्रैलोक्यविजयी भवेत्।

इति तृतीयो न्यासः॥३॥

ॐ कमलाङ्कुशमण्डिता नन्दजा पूर्वाङ्गं पातु॥१॥ ॐ खड्गपात्रधरा रक्तदन्दिका दक्षिणाङ्गं पातु॥२॥ ॐ पुष्पपल्लवसंयुता शाकम्भरी पश्चिमाङ्गं पातु॥३॥ ॐ धनुर्बाणकरा दुर्गा वामाङ्गं पातु॥४॥ ॐ शिरःपात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणावधि पातु॥५॥ ॐ चित्रकान्तिभृत् भ्रामरी पादादिमस्तकान्तं पातु॥६॥ इति चतुर्थः॥४॥

तुर्भ्यं न्यासं नरः कुर्य्याजरामृत्युं व्यपोहति।

ॐ पादादिनाभिपर्य्यन्तं ब्रह्मा मां पातु॥ १ ॥ ॐ नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं जनार्दनो मां पातु॥ २ ॥ ॐ विशुद्धेर्ब्रह्मरन्धान्तं रुद्रो मां पातु॥ ३ ॥ ॐ हंसो मे पदद्वन्द्वं पातु॥ ४॥ ॐ वैनतेयः करद्वयं मे पातु॥ ५ ॥ ॐ वृषभः चक्षुषी मे पातु॥ ६॥ ॐ गजाननः सर्वाङ्गं मे पातु॥ ७॥ ॐ आनन्दमयो हरिः परापरौ देहभागौ मे पातु॥ ८ ॥ इति पञ्चमः ॥ ५ ॥

कृतेऽस्मिन्पञ्चमे न्यासे सर्वान्कामानवाप्नुयात्।

ॐ अष्टादशभुजा महालक्ष्मीर्मध्यमाङ्गं मां पातु॥ १ ॥ ॐ अष्टभुजा सरस्वती ऊर्ध्वं मां पातु॥ २॥ ॐ दशभुजा महाकाली अधो मां पातु॥ ३ ॥ ॐ सिंहो हस्तद्वयं मां पातु॥ ४॥ ॐ परमहंसोऽक्षियुग्मकं मां पातु॥ ५ ॥ ॐ महिषारूढो यमः पदद्वयं मां पातु॥ ६ ॥ ॐ महेशश्चण्डिकायुक्तः सर्वाङ्गं मां पातु॥ ७॥ इति षष्ठः ॥ ६ ॥

षष्ठेऽस्मिन्विहिते न्यासे सद्गतिं प्राप्नुयान्नरः।

ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे॥ १ ॥ ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे॥ २ ॥ ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे॥ ३ ॥ ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे॥ ४॥ ॐ मुं नमः वामकर्णे॥ ५ ॥ ॐ डां नमः दक्षिणनासापुटे॥ ६ ॥ ॐ यैं नमः वामनासापुटे॥ ७॥ ॐ विं नमः मुखे॥ ८॥ ॐ च्चें नमः गुह्ये॥ ९ ॥ इति सप्तमः ॥ ७ ॥

विन्यसेत्सप्तमे न्यासे कृते रोगक्षयो भवेत्।

ॐ च्चें नमः गुह्ये॥ १ ॥ ॐ विं नमः मुखे॥ २ ॥ ॐ यैं नमः वामनासायाम्॥ ३ ॥ ॐ डां नमः दक्षिणनासायाम्॥ ४॥ ॐ मुं नमः वामकर्णे॥ ५ ॥ ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे॥ ६ ॥ ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे॥ ७॥ ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे॥ ८॥ ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे॥ ९ ॥ इत्यष्टमः ॥ ८ ॥

कृतेऽस्मिन्नष्टमे न्यासे सर्वदुःखं विनश्यति।

मूलमुच्चार्य मस्तकाच्चरणान्तं चरणान्मस्तकान्तमष्टवारं व्यापकं कुर्यात्। मूलम्—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवाक्षरो मन्त्रो ज्ञेयः। एवं पुरो दक्षिणे पृष्ठे वामभागेऽप्येवं प्रत्यहमष्टवारं मूलं न्यसेत्। इति नवमः ॥ ९ ॥

मूलमन्त्रकृतो न्यासो नवमो देवतात्मिकृत्।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति हृदयाय नमः॥ १ ॥ एवं सर्वत्र मूलमन्त्रेण। शिरसे स्वाहा। शिखायै वषट्। कवचाय हुं। नेत्रत्रयाय वौषट्। अस्त्राय फट्। इति हृदयादिषु विन्यसेत्। इति दशमः ॥ १० ॥

कृतेऽस्मिन्दशमे न्यासे त्रैलोक्यं वशगं भवेत्।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा। शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा॥
सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी। परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी॥
यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके। तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे मया॥
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत्। सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः॥
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च। कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत्॥

इति पञ्चश्लोकं पठित्वा आद्यं बीजम् 'ऐं' कृष्णातरं ध्यात्वा सर्वाङ्गं विन्यसामि।

इति सर्वाङ्गे न्यसेत्।

ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेनचाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते। यानि चात्यन्तघोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवम्॥
खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके। करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः॥

इति श्लोकचतुष्टयं पठित्वा सूर्यसदृशं द्वितीयं मायाबीजं ह्रीं ध्यात्वा सर्वाङ्गं न्यसेत्।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते। भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्। पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते॥
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्। त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्। सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव॥
असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः। शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम्॥

इति श्लोकपञ्चकं पठित्वा स्फटिकाभासं तृतीयं कामबीजं 'क्लीं' ध्यात्वा सर्वाङ्गं न्यसेत्। इत्येकादशः॥ ११॥

एवमेकादशन्यासान्कृत्वा पुनः षडङ्गन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति मूलषडङ्गन्यासः।

ॐ ऐं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ क्लीं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः।

ॐ ऐं नमः शिखायाम्॥ १॥ ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे॥ २॥ ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे॥ ३॥ ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे॥ ४॥ ॐ मुं नमः वामकर्णे॥ ५॥ ॐ डां नमः दक्षिणनासायाम्॥ ६॥ ॐ यैं नमः वामनासायाम्॥ ७॥ ॐ विं नमः मुखे॥ ८॥ ॐ च्चें नमः गुह्ये॥ ९॥ इत्यक्षरन्यासं कृत्वा समस्तं मूलमन्त्रमुच्चार्याष्टशः व्यापकं चरेत्। एवं न्यासं कृत्वा देवीं ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्शूलं भुशुण्डीं शिरः शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभं नीलाश्मद्युतिमस्य पाददशकां सेवे महाकालिकाम्॥

इति महाकालीध्यानम्।

अक्षस्त्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुरा भाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्॥

इति महालक्ष्मीध्यानम्।

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥

इति महासरस्वतीध्यानम्।

एवं ध्यात्वा मानसोपंचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्। पीठे 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' इति पूर्वोक्तपीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वाद्यष्टदिक्षु मध्ये च 'पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीं प्रकल्प्य' जयादिनवपीठशक्तीः स्थापयेत्।

तद्यथा—ॐ जयायै नमः॥ १॥ ॐ विजयायै नमः॥ २॥ ॐ अजितायै नमः॥ ३॥ ॐ अपराजितायै नमः॥ ४॥ ॐ नित्यायै नमः॥ ५॥ ॐ विलासिन्यै नमः॥ ६॥ ॐ दोग्ध्र्यै नमः॥ ७॥ ॐ अघोरायै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ मङ्गलायै नमः॥ ९॥ इति सम्पूज्य 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इति पीठे पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा यन्त्रं पूजयेत्।

सप्तशती-पाठाङ्गभूत नवार्ण मन्त्र—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' यह नौ अक्षरों वाला मन्त्र नवार्ण मन्त्र कहलाता है। इस मन्त्र के ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ऋषि हैं। गायत्री, उष्णिक् अनुष्टुभ् छन्द हैं। महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती देवता हैं। नन्दा-शाकम्भरी तथा भीमा नामक शक्तियाँ हैं। रक्तदन्तिका, दुर्गा, भ्रामरी बीज

हैं। अग्नि, वायु तथा सूर्य तत्त्व हैं। तीनों वेदों से उत्पन्न फल की प्राप्ति के लिये तथा सर्वाभीष्ट-सिद्धि हेतु नवार्ण मन्त्र के जप हेतु इसका विनियोग है। मूल में लिखित इस भावार्थ वाले मन्त्र को पढ़कर विनियोग का जल छोड़ना चाहिये।

ऋष्यादि न्यास—फिर मूल में लिखित 'ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः शिर, मुख, हृदय, दक्षिण स्तन, वामस्तन तथा पुनः हृदय में न्यास करे। फिर एकादश न्यास क्रमशः करना चाहिये।

प्रथम न्यास (मातृकान्यास)—मूल में लिखित 'ॐ अं नमः ललाटे' इस मन्त्र से ललाट में न्यास करे। तत्पश्चात् ५० मूलोक्त मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट शरीर के अङ्गों में न्यास करे। इस प्रकार ५१ अङ्गों में मातृकान्यास किया जाता है। इस न्यास में सर्वत्र तत्त्व-मुद्रा का प्रदर्शन करना चाहिये। इसके करने से देव के सारूप्य को साधक प्राप्त होता है।

द्वितीय न्यास (सारस्वत न्यास)—इसे मूल में लिखित 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः' इत्यादि सोलह मन्त्रों द्वारा उनमें निर्दिष्ट शरीर के अङ्गों में करना चाहिये। इस सारस्वतन्यास के करने से बुद्धि की जड़ता नष्ट हो जाती है। यह द्वितीय न्यास है।

तृतीय न्यास—मूल में लिखित 'ॐ ह्रीं ब्राह्मी पूर्वतो मां पातु' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से इस न्यास को करे। इसके करने से साधक त्रैलोक्य विजयी हो जाता है। (यह रक्षान्यास है)

चतुर्थ न्यास—फिर मूल में लिखित 'ॐ कमलांकुशमण्डिता नन्दजा पूर्वाङ्गं पातु' इत्यादि छः मन्त्रों से शरीर के पूर्वाङ्ग, दक्षिणाङ्ग, पश्चिमाङ्ग, वामाङ्ग, मस्तक तक क्रमशः न्यास करना चाहिये। इस चौथे न्यास को करके साधक जरा-मृत्यु को दूर करता है।

पञ्चम न्यास—इसे मूल में लिखित 'ॐ पादादि नाभिपर्यन्तं ब्रह्मा मां पातु' मन्त्र से पैरों से नाभिपर्यन्त अपने शरीर में न्यास करे। 'ॐ नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं जनार्दनो मां पातु' कहकर नाभि से विशुद्धि (कण्ठ)-पर्यन्त न्यास करे। फिर 'ॐ विशुद्धे ब्रह्मरन्ध्रान्तं रुद्रो मां पातु' इस मन्त्र से कण्ठ से ब्रह्मरन्ध्र-पर्यन्त न्यास करे। फिर आगे लिखे मन्त्रों से क्रमशः दोनों पैरों, दोनों हाथों, नेत्रों, सर्वाङ्ग तथा परापर देह भाग (जो सूक्ष्म शरीराङ्ग हैं) में न्यास करे। इसमें कुल आठ मन्त्र है। यह पाँचवाँ न्यास है। इसके करने से सभी कामनाएँ पूरी होती हैं।

षष्ठ न्यास—फिर 'ॐ अष्टादशभुजा महालक्ष्मीर्मध्यमांगं मां पातु' इत्यादि सात मूलोक्त मन्त्रों से क्रमशः शरीर का १. मध्यमांग, २. ऊर्ध्व, ३. अधो, ४. दोनों हाथ, ५. दोनों नेत्र, ६. दोनों पैर तथा ७. सर्वाङ्ग का न्यास करे। इस छठे न्यास के करने से साधक को सद्गति प्राप्त होती है।

सप्तम न्यास—मूल में लिखित 'ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे' इत्यादि नौ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में न्यास करना चाहिये। इस सप्तम न्यास के करने से साधक के रोगों का नाश हो जाता है।

अष्टम न्यास—मूल में लिखित नौ मन्त्रों द्वारा उनमें निर्दिष्ट शरीर के अङ्गों में न्यास करना चाहिये। जैसे कि 'ॐ च्चें नमः गुह्ये' से गुप्ताङ्ग में तथा 'ॐ विं नमः मुखे' से मुख में न्यास करे। यह आठवाँ न्यास करने से साधक के सभी दुःख दूर हो जाते हैं।

नवम न्यास—मूल मन्त्र 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' का उच्चारण कर मस्तक से चरणों तक तथा चरणों से मस्तक तक आठ बार व्यापक करना चाहिये। इसी प्रकार सामने तथा दक्षिण भाग में एवं पीछे तथा वाम भाग में भी आठ बार व्यापक करे। इस मूल मन्त्र द्वारा किये गये न्यास से देवता की प्राप्ति होती है।

दशम न्यास—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे हृदयाय नमः' से हृदयन्यास करे। 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे शिरसे स्वाहा', 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे शिखायै वषट्', 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे कवचाय हुं', 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्', 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति अस्त्राय फट्' इस प्रकार से यह दशम न्यास करे। इसके करने से तीनों लोक वश में होते हैं।

एकादश न्यास—मूल में 'खड्गिनी शूलिनी घोरा गदनी चक्रिणी तथा। शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डी-परिघायुधा' इत्यादि पाँच श्लोक लिखे हैं; उनको पढ़कर आद्यबीज 'ऐं' जो कि कृष्णतट है, उसका ध्यान कर 'सर्वाङ्गं विन्यसामि' कहकर सर्वाङ्ग में न्यास करे। फिर 'ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च' इत्यादि चार श्लोकों को पढ़कर सूर्य के समान वर्ण वाले द्वितीय बीज (मायाबीज) 'ह्रीं' का ध्यान कर पुनः सर्वाङ्गन्यास करे। फिर उसके आगे मूल में लिखित—'ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते। भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोस्तु ते' इत्यादि पाँच श्लोकों का पाठ करके तृतीय (काम बीज) बीज 'क्लीं' जो कि स्फटिक-समान वर्ण वाला है, उसका ध्यान करके पुनः सर्वाङ्गन्यास करे। इस प्रकार ग्यारह न्यासों को सम्पन्न करके पुनः षडङ्ग न्यास करना चाहिये। वह इस प्रकार है।

षडङ्ग न्यास—मूल में लिखित 'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से मूल षडङ्ग करन्यास करे। फिर आगे लिखे 'ॐ ऐं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास करे।

अक्षर न्यास—फिर मूल में लिखित 'ॐ ऐं नमः शिखायां' इत्यादि नौ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट शरीराङ्गों में अक्षरन्यास करना चाहिये। अक्षर न्यास के उपरान्त मूल मन्त्र 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' का उच्चारण कर पूर्व की भाँति आठ बार व्यापक करे। इस प्रकार न्यास करके देवी का ध्यान करे।

मूल में लिखे 'खड्गं चक्रगदेषुचाप०' इत्यादि श्लोक से महाकाली का 'अक्षस्रक्परशु०' इत्यादि श्लोक से महालक्ष्मी का 'घंटाशूलहलानि शङ्खमुशलं०' इत्यादि श्लोक से महासरस्वती का ध्यान करना चाहिये। इस प्रकार तीनों ध्यान करने के उपरान्त पीठपूजा करे।

पीठपूजा—'ॐ मण्डूकादिपरतत्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' कहकर पूर्वोक्त पीठदेवताओं का पूंजन करके पूर्वादि आठ दिशाओं तथा मध्य में पूज्य-पूजक के बीच प्राची दिशा की कल्पना करके जयादि नौ पीठशक्तियों को स्थापित करना चाहिये तथा मूल में लिखित 'ॐ जयायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से उनका पूजन करना चाहिये। फिर अन्त में 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पीठ को पुष्पाञ्जलि अर्पित करके देवी-यन्त्र की पूजा करनी चाहिये।

यन्त्रोद्धारः

मध्ये त्रिकोणे तद्बहिः षड्स्त्रं तद्बहिरष्टदलं तद्बहिश्चतुर्विंशतिपत्रात्मकं तद्बाह्ये चतुरस्त्रं चतुर्द्वारयुतं भूपुरं चेति देवीयन्त्रमष्टगन्धेन विलिख्य तत्र त्रिकोणमध्ये मूलमन्त्रेण देवीं मूलेन पाद्यादिपुष्पान्तोपचारैः सम्पूज्य यन्त्रदेवान्पूजयेत्। तद्यथा—त्रिकोणस्य 'पूर्वकोणे' ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः॥ १॥ 'नैर्ऋत्ये' ॐ विष्णवे नमः। ॐ श्रियै नमः॥ २॥ 'वायव्ये' ॐ शिवाय नमः। ॐ उमायै नमः॥ ३॥ 'उत्तरे' ॐ सिंहाय नमः॥ ४॥ 'दक्षिणे' ॐ महिषाय नमः॥ ५॥ इति पूजयेत्। (षट्कोणमण्डले पूर्वादिषट्कोणेषु क्रमेण) ॐ नं नन्दजायै नमः॥ १॥ ॐ रं रक्तदन्तिकायै नमः॥ २॥ ॐ शां शाकम्भर्यै नमः॥ ३॥ ॐ दुं दुर्गायै नमः॥ ४॥ ॐ भीं भीमायै नमः॥ ५॥ ॐ भ्रां भ्रामर्य्यै नमः इति पूजयेत्॥ ६॥ (अष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण) ॐ ब्रां ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ मां माहेश्वर्य्यै नमः॥ २॥ ॐ कौं कौमार्यै नमः॥ ३॥ ॐ वैं वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ वां वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ नां नारसिंह्यै नमः॥ ६॥ ॐ ऐं ऐन्द्र्यै नमः॥ ७॥

ॐ चां चामुण्डायै नमः ॥ ८ ॥ इति च पूजयेत् (चतुर्विंशतिदलेष्वपि पूर्वादिक्रमेण)। एवं ॐ विष्णुमायायै नमः ॥ १ ॥ ॐ चेतनायै नमः ॥ २ ॥ ॐ बुद्ध्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ निद्रायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ क्षुधायै नमः ॥ ५ ॥ ॐ छायायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ शक्त्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ तृष्णायै नमः ॥ ८ ॥ ॐ क्षान्त्यै नमः ॥ ९ ॥ ॐ जात्यै नमः ॥ १० ॥ ॐ लज्जायै नमः ॥ ११ ॥ ॐ शान्त्यै नमः ॥ १२ ॥ ॐ श्रद्धायै नमः ॥ १३ ॥ ॐ कान्त्यै नमः ॥ १४ ॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः ॥ १५ ॥ ॐ धृत्यै नमः ॥ १६ ॥ ॐ वृत्यै नमः ॥ १७ ॥ ॐ श्रुत्यै नमः ॥ १८ ॥ ॐ स्मृत्यै नमः ॥ १९ ॥ ॐ तुष्ट्यै नमः ॥ २० ॥ ॐ पुष्ट्यै नमः ॥ २१ ॥ ॐ दयायै नमः ॥ २२ ॥ ॐ मात्रे नमः ॥ २३ ॥ ॐ भ्रान्त्यै नमः ॥ २४ ॥ इति पूजयेत्। तद्बाह्ये भूगृहचतुष्कोणेषु ईशान्याम् गं गणपतये नमः ॥ १ ॥ आग्नेय्याम् क्षं क्षेत्रपालाय नमः ॥ २ ॥ नैर्ऋत्याम् बं वटुकाय नमः ॥ ३ ॥ वायव्याम् यों योगिनीभ्यो नमः इति पूजयेत्। ततो भूपुरबाह्ये पूर्वादिक्रमेण ॐ लं इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ रं अग्नये नमः ॥ २ ॥ मं यमाय नमः ॥ ३ ॥ क्षं निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ वं वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ यं वायवे नमः ॥ ६ ॥ सों सोमाय नमः ॥ ७ ॥ हं रुद्राय नमः ॥ ८ ॥ उर्ध्वम् ब्रं ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ अधः अं अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति दिक्पालान्पूजयेत्। तद्बहिः (पूर्वादिषु) ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ शक्तये नमः ॥ २ ॥ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ गदायै नमः ॥ ७ ॥ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इत्यायुधानि पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा मूलेन धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणादीनि भगवत्यै निवेद्य कर्पूरादिभिर्नीराजनं कृत्वा प्रदक्षिणामेकं विधाय मन्त्रपुष्पाञ्जलिं च दत्त्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य स्तवैः स्तुत्वा यथाविधि भगवतीं ध्यायन् वाग्यतो जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षचतुष्कम्। जपान्ते साज्येन पायसेन दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। तथा च मन्त्रमहोदधौ—

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षचतुष्कं तद्दशांशतः। पायसान्नेन जुहुयात्पूजिते हेमरेतसि॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री भवेत्सौभाग्यभाजनम्। मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठेत्॥
पुटितं मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वाञ्छितम्। आश्विनस्य सिते पक्षे आरभ्याग्नितिथिं सुधीः॥
अष्टम्यन्तं जपेल्लक्षं दशांशं होममाचरेत्। प्रत्यहं पूजयेद्देवीं पठेत्सप्तशतीमपि॥
विप्रानाराध्य मन्त्री स्वमिष्टार्थं लभतेऽचिरात्॥

डामरतन्त्रे—

ऐं बीजमादीन्दुसमानदीप्तं ह्रीं सूर्यतेजोद्युतिमद्द्वितीयम्।
क्लीं मूर्तिं वैश्वानरतुल्यरूपं तृतीयमानन्त्यसुखाय चिन्त्यम्॥
चां शुद्धजाम्बूनदकान्तितुर्यं मुं पञ्चमं रक्ततरं प्रकल्प्य।
डां षट्कमुग्रार्तिहरं सुनीलं यैः सप्तमं कृष्णतरं रिपुघ्नम्॥
वि पाण्डुरं चाष्टममादिसिद्धं च्चे धूम्रवर्णं नवमं विशालम्।
एतानि बीजानि नवात्मकस्य जप्तुः प्रदद्युः सकलार्थसिद्धिम्॥

नवबीजविशुद्धोऽयं मन्त्रस्त्रैलोक्यपावनः। एनं जपति यो मन्त्री फलं तस्य वदाम्यहम्॥
वश्या भवन्ति कामिन्यो राजानोऽनुचरा इव। न हस्तिसर्पदावाग्निचोरक्षत्रभयं भवेत्॥
सर्वाः समृद्धयस्तस्य जायन्ते चण्डिकाज्ञया। नश्यन्ति दारुणा रोगाः सत्यं सत्यं न संशयः॥
सहस्रमस्य मन्त्रस्य नवबीजस्य यो जले। नाभिमात्रे जपेत्सम्यक्कवित्वं लभते ध्रुवम्॥
अयुतं नवतत्त्वस्य राजबन्धनसङ्कटैः। जपेत्तदाशु मुच्येत यो मन्त्री चण्डिकाज्ञया॥
अस्मिन्नवाक्षरे मन्त्रे महालक्ष्मीर्व्यवस्थिता। तस्मात्सुसिद्धः सर्वेषां सर्वदिक्षु प्रदीपकः॥

इति नवार्णमन्त्रप्रयोगः समाप्तः।

देवीयन्त्रनिर्माण-विधि—मध्यभाग में त्रिकोण बनाये। त्रिकोण के बाहर षडस्र (षट्कोण) बनाये। उसके बाहर वृत्त खींचकर वृत्त के चारो ओर अष्टदल का निर्माण करे। अष्टदल के बाहर पुनः एक वृत्त खींचकर उसके बाहरी भाग में चौबीस पत्रात्मक रचना बनाये। उसके बाहर एक चतुरस्र बनाये, जिसमें पूर्वादि चारो दिशाओं में चार द्वार भी बनाये। यह चतुरस्र, जो कि चौबीस दलों के बाहर होता है, भूपुर कहलाता है। इस देवीयन्त्र को अष्टगन्ध से लिखे।

देवीयन्त्रम्
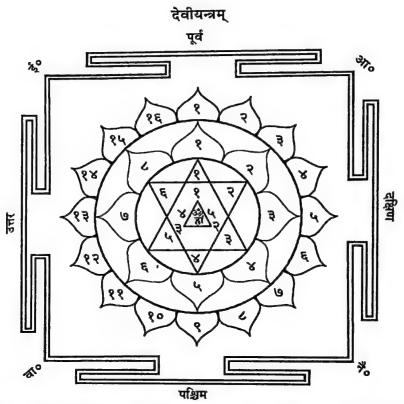
यन्त्रपूजन-विधि—मध्यवर्ती त्रिकोण में मूल मन्त्र (नवार्ण मन्त्र) से देवी की पूजा पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से करने के पश्चात् फिर यन्त्रदेवताओं की पूजा अग्रलिखित प्रकार से करे—

त्रिकोण-पूजा—मध्यवर्ती त्रिकोण के पूर्वी कोण पर 'ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ सरस्वत्यै नमः' कहकर पूजा करे। फिर नैर्ऋत्य दिशा के कोण पर 'ॐ विष्णवे नमः ॐ श्रियै नमः' इन मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके वायव्यस्थित तृतीय कोण में 'ॐ शिवाय नमः ॐ उमायै नमः' कहकर पूजन करे। इस प्रकार मध्यवर्ती लघुत्रिकोण का पूजन सम्पन्न होता है; फिर त्रिकोण की उत्तरी भुजा का 'ॐ सिंहाय नमः' तथा दक्षिणी भुजा का 'ॐ महिषाय नमः' मन्त्र से पूजन करे।

षट्कोण मण्डल में पूजा—मध्यवर्ती त्रिकोण के बाहर बने षट्कोण (पूर्वादि छः कोण) में मूल में लिखित 'ॐ नं नन्दजायै नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः पूजा करे।

अष्टदल-पूजा—फिर षट्कोण के बाहर बने चतुर्विंशति दल में पूर्वादि प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ विष्णुमायायै नमः' इत्यादि मूलोक्त चार मन्त्रों से पूजन करे। फिर भूपुर के बाहरी भाग में पूर्वादि दश दिशाओं में 'ॐ लं इन्द्राय

नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से पूजा करनी चाहिये। यह दिक्पालों की पूजा होती है। दिक्पालों के बाहरी भाग में मूलोक्त 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से उनके दश आयुधों की पूजा पूर्व से प्रारम्भ कर प्रदक्षिणक्रम से करनी चाहिये।

इस प्रकार यन्त्र के आवरणों की पूजा करके मूल मन्त्र से धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा आदि से पूजा करके भगवती को निवेदित कर कर्पूरादि से आरती कर एक प्रदक्षिणा करके मन्त्रपुष्पाञ्जलि देकर साष्टाङ्ग प्रणाम कर स्तुतियों से स्तवन कर यथानिमित्त भगवती का ध्यान करके वाणी से उनके मन्त्र का जप करना चाहिये। इसके पुरश्चरण में चार लाख जप होता है। जप की समाप्ति पर घृत एवं खीर से जप का दशांश (चालीस सहस्र) होम करना चाहिये। उसके दशांश से तर्पणादि करना चाहिये।

मन्त्रमहोदधि के अनुसार—इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र का चार लाख जप करके उसके दशांश से पायसान्न से होम करना चाहिये। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होने पर साधक सभी सौभाग्यों को प्राप्त करता है। इसके साथ ही मार्कण्डेय पुराणोक्त चण्डीस्तव (दुर्गासप्तशती) भी पढ़ना चाहिये। उसका पाठ यदि मूल मन्त्र (नवार्ण) से सम्पुटित कर किया जाय तो वाञ्छित फल की प्राप्ति होती है। आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा से आरम्भ कर अष्टमी-पर्यन्त एक लाख जप करे तथा उसका दशांश होम करे। प्रतिदिन देवी की पूजा तथा सप्तशती का पाठ करता रहे। फिर ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणादि से सन्तुष्ट करे तो उसे अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है।

डामरतन्त्र के अनुसार फल—'ऐं' बीज आदि चन्द्रमा के समन दीप्तिमान है। 'ह्रीं' बीज सूर्य के समान अद्वितीय तेज वाला है। 'क्लीं' बीज की मूर्ति अग्नि के समान रूप वाली होती है। इन तीनों बीजों का चिन्तन अनन्त सुख देता है। 'चां' बीज जाम्बूनद के समान कान्ति वाला है। 'मुं' बीज रक्ततर वर्ण का जानना चाहिये। 'डां' बीज छः प्रकार की उग्र पीड़ा को दूर करने वाला है तथा सुनील एवं कृष्णतर वर्ण का होता है; साथ ही शत्रुनाशक भी है। 'वि' वर्ण पाण्डुवर्ण आठवाँ अक्षर है, जो कि आदि सिद्ध है। 'च्चे' धूम्रवर्ण तथा विशाल होकर नवाँ वर्ण है। इस प्रकार इन बीजों से युक्त यह नवार्ण मन्त्र का जप जापक को सम्पूर्ण सिद्धियाँ देता है। यह नौ बीजों से विशुद्ध मन्त्र सम्पूर्ण लोक को पवित्र करने वाला है। जो साधक इसको जपता है, उसका फल मैं कह रहा हूँ।

इसके जापक के वश में स्त्रियाँ हो जाती हैं। राजा लोग उसके अनुचरों की भाँति हो जाते हैं। उसे हाथी, सर्प, दावाग्नि तथा चोर, डाकुओं एवं आतङ्कवादियों का भय नहीं होता है; न ही राजा का भय होता है। चण्डिका की आज्ञा से उसे सभी सम्पत्तियाँ मिल जाती हैं। उसके दारुण रोग नष्ट हो जाते हैं; यह मैं सत्य कह रहा हूँ, इसमें कोई संशय नहीं है। जो इस नवार्ण मन्त्र का एक सहस्र जप नाभिमात्र जल में खड़े होकर करता है, उसे निश्चित ही सम्यक् फल की प्राप्ति हो जाती है। नवार्ण मन्त्र का जप अयुत (दस सहस्र) करने से राजबन्धन सङ्कटादि से मुक्ति मिल जाती है। जो इस मन्त्र को जपता है, वह शीघ्र सङ्कट से मुक्त हो जाता है। इस नवाक्षर (नवार्ण मन्त्र) में महालक्ष्मी स्थित हैं; अतः यह सबके लिये सिद्ध मन्त्र है, जो सभी दिशाओं को प्रकाशित करता है।

अष्टाक्षरदुर्गामन्त्रपुरश्चरणम्

भूतशुद्ध्यादिकलान्यासान्तं पूर्ववत् ज्ञातव्यम्। शारदातिलके मन्त्रो यथा—ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य नारद ऋषिर्गायत्रीच्छन्दः। दुरिततापनिवारिणी दुर्गा देवता सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ नारदऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ दुर्गादेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं

दुर्गायै नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। अथ ध्यानम्—

सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्या चतुर्भिर्भुजैः शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।
आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीक्वणन्नूपुरा दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुण्डिका॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्। तद्यथा पीठे पूर्वोक्तमण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताः सम्पूज्य केसरेषु ॐ आं प्रभायै नमः ॥ १ ॥ ॐ ईं मायायै नमः ॥ २ ॥ ॐ ऊँ जयायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ एं सूक्ष्मायै नमः ॥ ४॥ ॐ ऐं विशुद्धायै नमः ॥ ५ ॥ ॐ ओं नन्दिन्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ औं सुप्रभायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ अं विजयायै नमः ॥ ८ ॥ (मध्ये) ॐ अः सर्वसिद्धिदायै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः सम्पूज्य तदुपरि 'ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट्' इत्यासनं दत्त्वा तत्र मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। (षट्कोणे) आग्नेयादिकोण-केसरेषु मध्ये दिक्षु च प्राचीक्रमेण ह्रां ॐ दुं ह्रीं दुर्गायै नमः हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः कवचाय हुं ॥ ४ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। तद्बाह्ये अष्टदले प्राचीक्रमेण—ॐ जं जयायै नमः ॥ १ ॥ ॐ विं विजयायै नमः ॥ २ ॥ ॐ कीं कीर्त्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ प्रीं प्रीत्यै नमः ॥ ४॥ ॐ प्रं प्रभायै नमः ॥ ५ ॥ ॐ शुं शुद्धायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ मं मेधायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ श्रुं श्रुत्यै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। (पत्राग्रेषु) ॐ चक्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शङ्खाय नमः ॥ २ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ शराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ चापाय नमः ॥ ८ ॥ इत्यस्त्राणि पूजयेत्। तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तं सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। तथा च—

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं तिलैर्मधुरलोलितैः। पयोऽन्धसा वा जुहुयात्तत्सहस्रं जितेन्द्रियः॥
इत्थं जपादिभिर्मन्त्री मन्त्रे सिद्धे विधानवित्। कुर्यात्प्रयोगानेतेन मनुना स्वमनीषितान्॥
प्रतिष्ठाप्य विधानेन कलशान्नव शोभनान्। रत्नहेमादिसंयुक्तान्पदेषु नवसु स्थितान्॥
मध्यस्थे पूजयेद्देवीमितरेषु जयादिकाः। सम्पूज्य गन्धपुष्पाद्यैरभिषिञ्चेन्नराधिपम्॥
राजा विजयते शत्रून्साधको विजयं श्रियम्। प्राप्नोति रोगी दीर्घायुः सर्वव्याधिविवर्जितः॥
वन्ध्याभिषिक्ता विधिना लभते तनयं वरम्। मन्त्रेणानेन सञ्जप्तमाज्यं क्षुद्रज्वरापहम्॥
गर्भिणीनां विशेषेण जप्तं भस्मादिकं तथा॥

इत्यष्टाक्षरदुर्गामन्त्रप्रयोगः समाप्तः।

अष्टाक्षर दुर्गामन्त्र का पुरश्चरण—इसके लिये भूतशुद्धि तथा कलान्यासादि पूर्व की भाँति करनी चाहिये। मंत्र है—ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः। शारदातिलक के अनुसार यह आठ अक्षरों वाला दुर्गामन्त्र है। 'इसके नारद ऋषि, गायत्री छन्द, दुरितातप-निवारिणी दुर्गा देवता हैं तथा सभी इष्टों की सिद्धि के लिये जप-हेतु विनियोग होता है। इस भावार्थ को प्रकट करने वाला वाक्य मूल के अनुसार पढ़कर विनियोग करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ नारदऋषये नमः शिरसि, ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे, ॐ दुर्गादेवतायै नमः हृदये' इन तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये।

हृदयादिन्यास—फिर मूल में लिखित 'ॐ ह्रां ॐ ह्रीं दुर्गायै नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से प्रथम करन्यास करके पुनः इन्हीं छः मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी करना चाहिये। तत्पश्चात् ध्यान करना चाहिये।

'ॐ सिंहस्था शशिशेखरा' इत्यादि श्लोक को पढ़कर उसके भावार्थ का ध्यान करते हुए दुर्गा देवी का ध्यान करना चाहिये। फिर मानसोपचारों द्वारा दुर्गा का पूजन करे। फिर पूर्वोक्त देवीपीठोक्त परतत्त्वान्त देवताओं का पूजन करे। फिर केसरों में 'ॐ आं प्रभायै नमः' इत्यादि ९ मन्त्रों से पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर पीठ के ऊपर 'ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट्' कहकर देवी को आसन देकर उस पर मूल मन्त्र (ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः) से मूर्ति की कल्पना करके आवाहनादि उपचारों से पूजन कर फिर आवरणपूजा करनी चाहिये।

षडङ्ग पूजा—'ह्रां ॐ दुं ह्रीं दुर्गायै नमः हृदयाय नमः' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों से यन्त्र में बने षट्कोण की पूजा प्रदक्षिणक्रम से पूर्व से प्रारम्भ कर करनी चाहिये। फिर षट्कोण के बाहर अष्टदल कमल में पूर्वदिशा से प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ जं जयायै नमः' इत्यादि मूल में लिखित आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर उसके आगे पत्राग्रों में 'ॐ चं चक्राय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से उन जयादि आठ शक्तियों के अस्त्रों की पूजा भी पूर्व से लेकर प्रदक्षिणक्रम से करे। उसके बाहर पूर्वादि क्रम से इन्द्रादि दश दिक्पालों की एवं उनके बाहर उनके वज्र आदि आयुधों की पूजा करके धूप से लेकर नमस्कार-पर्यन्त करना चाहिये। फिर मूल मन्त्र का आठ लाख की सङ्ख्या में जप करने से पुरश्चरण होता है।

जैसा कि कहा गया है—तिलों को मधुर (शर्करा या गुड़) में सानकर आठ लाख जप के उपरान्त एक सहस्र हवन करना चाहिये। इस प्रकार से साधक मन्त्र को सिद्ध कर फिर कामना के अनुसार उसका प्रयोग करे। विधिपूर्वक नौ कलशों को स्थापित कर उनमें स्वर्ण रत्नादि डालकर नौ स्थानों पर रखे। उनमें मध्य में स्थित कलस पर देवी को पूजकर जयादि की पूजा करे। उनकी गन्ध-पुष्प आदि से पूजा कर फिर साधक (राजा या यजमान) का अभिषेक करे। ऐसा करने से राजा शत्रुओं को जीतकर लक्ष्मी को प्राप्त करता है। रोगी व्यक्ति सभी रोगों से रहित होकर दीर्घायु को प्राप्त करता है। विधिपूर्वक यदि वन्ध्या का अभिषेक किया जाय तो उसे श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है। यदि इस मन्त्र को पढ़कर अभिमन्त्रित करके थोड़ा-सा जो घृत दिया जाय तो वह छोटे-मोटे ज्वरों को दूर कर देता है। गर्भिणी इत्यादि को यदि इसे जपकर यज्ञ की भस्म से शरीर का उद्धूलन हो तो उनका गर्भ स्वस्थ रहता है।

दुर्गाकवचम्

भैरव उवाच—

अधुना देवि वक्ष्येऽहं कवचं मन्त्रगर्भकम्। दुर्गाया सारसर्वस्वं कवचेश्वरसंज्ञकम्॥ १॥
परमार्थप्रदं नित्यं महापातकनाशनम्। योगिप्रियं योगगम्यं देवानामपि दुर्लभम्॥ २॥
विना दानेन मन्त्रस्य सिद्धिर्देवि कलौ भवेत्। धारणादस्य देवेशि शिवस्त्रैलोक्यनायकः॥ ३॥

श्रीदुर्गाकवच—श्री भैरवजी बोले कि हे देवि! अब मैं दुर्गा के सार का सर्वस्व कवचों में श्रेष्ठ श्रीदुर्गाकवच कहता हूँ, जो कि नित्य ही परमार्थदायक तथा महापातकों को नष्ट करने वाला है। योगियों को प्रिय, योगगम्य तथा देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। हे देवि! कलियुग में बिना देव के ही मन्त्रसिद्धि हो जाती है। हे देवि! इस कवच के धारण करने से शिव त्रैलोक्यनायक हो गये हैं॥ १-३॥

भैरवो भैरवेशानि विष्णुर्नारायणो बली। ब्रह्मा पार्वति लोकेशो विघ्नध्वंसी गजाननः॥ ४॥
सेनानीश्च महासेनो जिष्णुर्लेखर्षभः प्रिये। सूर्यस्तमोपहो लोके चन्द्रोऽमृतनिधिस्तथा॥ ५॥
बहुनोक्तेन किं देवि दुर्गाकवचधारणात्। मर्त्योऽप्यमरतां याति साधको मन्त्रसाधकः॥ ६॥

इस कवच के प्रताप से ही भैरव भैरव हैं तथा विष्णु नारायण हैं। हे पार्वति! ब्रह्मा इसके धारण करने से लोकों के स्वामी तथा गणेशजी विघ्नध्वंसी हो गये हैं। महासेन सेनानी तथा जिष्णु लेखर्षभ हो गये हैं। सूर्य तमोपह तथा चन्द्रमा अमृत का निधि हो गया है। हे देवि! अधिक क्या कहूँ, इस दुर्गाकवच के धारण से मनुष्य अमरता को प्राप्त हो जाता है, जो इसकी साधना करता है ॥ ४-६ ॥

कवचस्यास्य देवेशि ऋषिः प्रोक्तो महेश्वरः। छन्दोऽनुष्टुप्प्रियो दुर्गा देवताष्टाक्षरा स्मृता॥ ७॥
चक्रबीजं च बीजं स्यान्मायाशक्तिरितीरिता। ॐ मे पातु शिरो दुर्गा ह्रीं मे पातु ललाटकम्॥ ८॥
दुं नेत्रेऽष्टाक्षरा पातु चक्री पातु श्रुती मम॥ ९॥
कण्ठं गण्डौ च मे पातु देवेशी रक्तकुण्डला। वायुर्नासां सदा पातु रक्तबीजनिषूदिनी॥ १०॥
लवणं पातु मे चोष्ठौ चामुण्डा चण्डघातिनी। भेकी बीजं सदा पातु दन्तान्मे रक्तदन्तिका॥ ११॥
ॐ ह्रीं श्रीं पातु मे कण्ठं नीलकण्ठाङ्कवासिनी। ॐ ऐं क्लीं पातु मे स्कन्धौ स्कन्दमाता महेश्वरी॥ १२॥

हे देवेशि! इस कवच के महेश्वर ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, दुर्गा देवता, चक्र बीज, माया शक्ति है। ॐ मेरे शिर की रक्षा करे तथा ह्रीं के द्वारा दुर्गा मेरे ललाट (माथे) की रक्षा करे। दुं अष्टाक्षरा नेत्रों की रक्षा करे तथा चक्री मेरे कानों की रक्षा करे। रक्तकुण्डला मेरे कण्ठ एवं गण्ड (कल्लों) की रक्षा करे, वायु-नाक की रक्षा सदैव रक्तबीजनिषूदनी करे। मेरे ओठों के लावण्य की रक्षा चण्डघातिनी चामुण्डा करे। भेकी बीज की तथा रक्तदन्तिका दाँतों की रक्षा करे। ॐ ह्रीं श्रीं नीलकण्ठाङ्कवासिनी मेरे कण्ठ की रक्षा करे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं मेरे कन्धों की रक्षा स्कन्दमाता महेश्वरी करे॥ ७-१२ ॥

ॐ सौं क्लीं मे पातु बाहू देवेशी बगलामुखी। ऐं श्रीं ह्रीं पातु मे हस्तौ शिवाशतनिनादिनी॥ १३॥
ॐ सौं ऐं ह्रीं पातु मे वक्षो देवता विन्ध्यवासिनी। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं पातु कुक्षिं मम मातङ्गिनी परा॥ १४॥
ॐ श्रीं ह्रीं ऐं पातु मे पार्श्वौ हिमाचलनिवासिनी। ॐ स्त्रीं हूं ऐं पातु पृष्ठं मम दुर्गतिनाशिनी॥ १५॥
ॐ क्रीं हुं पातु मे नाभिं देवी नारायणी सदा। ॐ ऐं क्लीं सौं सदा पातु कटिं कात्यायनी मम॥ १६॥
ॐ ह्रीं श्रीं पातु शिश्नं मे देवी श्रीबगलामुखी। ॐ ऐं सौः क्लीं सौः पातु गुह्यं गुह्यकेश्वरपूजिता॥ १७॥
ॐ ह्रीं ऐं श्रीं हसौः पायादूरू मम मनोन्मना। ॐ जूं सः सौः पातु जानू जगदीश्वरपूजिता॥ १८॥
ॐ ऐं क्लीं पातु मे जङ्घे मेरुपर्वतवासिनी। ॐ ह्रीं श्रीं गीं सदा पातु गुल्फौ मम गणेश्वरी॥ १९॥
ॐ ह्रीं दुं पातु मे पादौ पार्वती षोडशाक्षरी।

ॐ सौं क्लीं देवी बगलामुखी मेरी भुजाओं की रक्षा करे तथा ॐ ऐं क्लीं शतनिनादिनी शिवा मेरे हाथों की रक्षा करे। ॐ सौं ऐं ह्रीं विन्ध्यवासिनी मेरे वक्ष की तथा ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं मातङ्गिनी परा मेरी कुक्षि की रक्षा करे। ॐ श्रीं ह्रीं ऐं हिमाचलवासिनी मेरे पार्श्वों की रक्षा करे। ॐ क्रीं हूं नारायणी देवी की सदैव मेरी नाभि की रक्षा करे। ॐ ऐं क्लीं सौं कात्यायनी सदैव मेरी कटि की रक्षा करे। ॐ ह्रीं श्रीं बगलामुखी मेरे शिखा की रक्षा करे। ॐ ऐं सौः क्लीं सौः गुह्यकेश्वर-पूजिता मेरे गुह्य की रक्षा करे। ॐ ह्रीं ऐं श्रीं हसौः मनोन्मना मेरी ऊरुओं की रक्षा करे। ॐ जूं सः सौः जगदीश्वर पूजिता मेरे जानुओं (घुटनों) की रक्षा करे। ॐ ऐं क्लीं मेरुपर्वतवासिनी मेरी जङ्घाओं (पिण्डलियों) की रक्षा करे। ॐ ह्रीं श्रीं गीं गणेश्वरी सदैव मेरे गुल्फों (टखनों) की रक्षा करे। ॐ ह्रीं दुं पार्वती षोडशाक्षरी मेरे पैरों की रक्षा करे॥ १३-१९ ॥

पूर्वे मां पातु ब्रह्माणी वह्नौ च वैष्णवी तथा॥ २०॥

दक्षिणे चण्डिका पातु नैर्ऋते नारसिंहिका। पश्चिमे पातु वाराही वायव्ये मापराजिता॥ २१॥

उत्तरे पातु कौमारी चैशान्यां शाम्भवी तथा। ऊर्ध्वं दुर्गा सदा पातु पात्वधस्ताच्छिवा सदा॥ २२॥

पूर्व में ब्रह्माणी मेरी रक्षा करे। अग्निकोण में वैष्णवी मेरी रक्षा करे। दक्षिण में चण्डिका तथा नैर्ऋत्य कोण में नारसिंहिका मेरी रक्षा करे। पश्चिम में वाराही तथा वायव्य में अपराजिता मेरी रक्षा करे। उत्तर में कौमारी तथा ईशान में शाम्भवी मेरी रक्षा करे। ऊर्ध्व (ऊपरी) दिशा में दुर्गा मेरी रक्षा करे तथा अधो (नीचे की) दिशा में शिवा सदैव मेरी रक्षा करे॥ २०-२२॥

प्रभाते त्रिपुरा पातु निशीथे छिन्नमस्तका। निशान्ते भैरवी पातु सर्वदा भद्रकालिका॥ २३॥

अग्रेरम्बा च मां पातु जलान्मां जगदम्बिका। वायोर्मां पातु वाग्देवी वनाद्वनजलोचना॥ २४॥

सिंहात्सिंहानना पातु सर्पात्सर्पान्तकासना। रोगान्मां राजमातङ्गी भूताद्भूतेशवल्लभा॥ २५॥

यक्षेभ्यो यक्षिणी पातु रक्षोभ्यो राक्षसान्तका। भूतप्रेतपिशाचेभ्यः सुमुखी पातु मां सदा॥ २६॥

सर्वत्र सर्वदा पातु ॐ ह्रीं दुर्गानवाक्षरा।

प्रभातकाल में त्रिपुरा देवी तथा निशीथकाल (आधी रात) में छिन्नमस्तका देवी मेरी रक्षा करे। निशान्त (रात्रि के अन्त) में भैरवी देवी तथा सिंहानन देवी सिंह से मेरी रक्षा करे एवं सर्पान्तकासना देवी सर्प से मेरी रक्षा करे। रोगों से राजमातंगी तथा भूत से भूतेशवल्लभा मेरी रक्षा करे। यक्षों से यक्षेश्वरी, राक्षसों से राक्षसान्तिका, भूत-प्रेत-पिशाचों से सुमुखी सदैव मेरी रक्षा करे। ॐ ह्रीं दुर्गा नवाक्षरा मेरी सर्वदा रक्षा करे॥ २३-२६॥

इत्येवं कवचं गुह्यं दुर्गासर्वस्वमुत्तमम्॥ २७॥

मन्त्रगर्भं महेशानि कवचेश्वरसंज्ञकम्। वित्तदं पुण्यदं पुण्यं वर्म सिद्धिप्रदं कलौ॥ २८॥

वर्म सिद्धिप्रदं गोप्यं परापररहस्यकम्। श्रेयस्करं मनुमयं रोगनाशकरं परम्॥ २९॥

महापातककोटिघ्नं मानदं च यशस्करम्। अश्वमेधसहस्रस्य फलदं परमार्थदम्॥ ३०॥

अत्यन्तगोप्यं देवेशि कवचं मन्त्रसिद्धिदम्। पठनात्सिद्धिदं लोके धारणान्मुक्तिदं शिवे॥ ३१॥

रवौ भूर्जे लिखेद्धीमान्कृत्वा कर्माह्निकं प्रिये। श्रीचक्राग्रेऽष्टगन्धेन साधको मन्त्रसिद्धये॥ ३२॥

लिखित्वा धारयेद्बाहौ गुटिकां पुण्यवर्द्धिनीम्। किं किं न साधयेल्लोके गुटिका वर्मणोऽचिरात्॥ ३३॥

गुटिकां धारयेन्मूर्ध्नि राजानं वशमानयेत्। धनार्थी धारयेत्कण्ठे पुत्रार्थी कुक्षिमण्डले॥ ३४॥

इस प्रकार यह कवच दुर्गा का सर्वस्व, सुगोप्य तथा परापर रहस्य से युक्त श्रेयस्कर, मनुमय, रोगनाशक कवचेश्वर है। यह धनप्रद, पुण्यप्रद तथा कलियुग में सिद्धिप्रद कवच है। यह करोड़ों महापातकों को नष्ट करने वाला, सम्मान देने वाला, यशस्कर तथा सहस्र अश्वमेध का फल देकर परमार्थ देने वाला है। हे देवेशि! यह अत्यन्त गोपनीय मन्त्र-सिद्धिदायक कवच है। यह पाठ करने से संसार में सफलता देता है तथा धारण (कण्ठस्थ) करने से मुक्ति देने वाला है। इसे रविवार के दिन भोजपत्र पर लिखकर हे प्रिय! यदि बुद्धिमान् व्यक्ति अपने आह्निक कर्म करने के उपरान्त अष्टगन्ध से श्रीचक्र (श्रीयन्त्र) के आगे बैठकर मन्त्रसिद्धि के लिये लिखता है तथा लिखकर फिर इसे ताबीज के रूप में बाहुओं पर धारण करता है तो ऐसा कौन-सा कार्य है, जो इसकी पुण्यवर्धिनी गुटिका (ताबीज) से सिद्ध न हो सके। इसकी गुटिका (ताबीज) को शिर पर धारण करने से राजाओं को वश में कर सकता है। धनार्थी को इसकी गुटिका को कण्ठ में धारण करना चाहिये तथा पुत्रार्थी को इसे कुक्षिमण्डल (पेट) पर धारण करना चाहिये॥ २७-३४॥

तामेवं धारयेन्मूर्ध्नि लिखित्वा भूर्जपत्रके। श्वेतसूत्रेण संवेष्ट्य लाक्षया परिवेष्टयेत्॥ ३५॥
सुवर्णेनाथ संवेष्ट्य धारयेद्रक्तरज्जुना। गुटिका कामदा देवी देवानामपि दुर्लभा॥ ३६॥
कवचस्यास्य गुटिकां धृत्वा मुक्तिप्रदायिनीम्। कवचस्यास्य देवेशि वर्णितुं नैव शक्यते॥ ३७॥
महिमानं महादेवि जिह्वाकोटिशतैरपि। अदातव्यमिदं वर्म्म मन्त्रगर्भं रहस्यकम्॥ ३८॥
अवक्तव्यं महापुण्यं सर्वसारस्वतप्रदम्। अदीक्षिताय नो दद्यात्कुटिलाय दुरात्मने॥ ३९॥
अन्यशिष्याय दुष्टाय निन्दकाय कुलार्थिनाम्।

उसी गुटिका (ताबीज या ढलनियाँ) में भूर्जपत्र पर लिखे कवच को श्वेत धागे में लपेट कर ऊपर से लाख लपेट कर फिर सोने से मढ़ कर रक्त वर्ण की डोरी में पिरोकर धारण करे। हे देवि! यह गुटिका देवों को भी दुर्लभ है। इस कवच की गुटिका मुक्ति-प्रदायिनी है। हे देवेशि! इस कवच की महिमा का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। यदि करोड़ों लोगों की जीभें भी इसका वर्णन करे तो भी इसकी महिमा का वर्णन नहीं हो सकता। यह गोपनीय मन्त्रकवच किसी को नहीं देना चाहिये। इसे किसी को भी नहीं बताना चाहिये; क्योंकि यह कवच सम्पूर्ण ज्ञान को देने वाला है। इस पवित्र कवच को अदीक्षित (दीक्षारहित) व्यक्ति को तथा दुरात्मा (दुष्ट) व्यक्ति को कदापि नहीं देना चाहिये। अपने शिष्य को छोड़कर किसी अन्य के शिष्य को, दुष्ट शिष्य को, कुलार्थियों (तन्त्रमार्ग पर चलने वालों) की निन्दा करने वाले को भी इसे नहीं देना चाहिये॥ ३५-३९॥

दीक्षिताय कुलीनाय गुरुभक्तिरताय च॥ ४०॥
शान्ताय कुलशक्ताय शान्ताय कुलवासिने। इदं वर्म्म शिवं दद्यात्कुलभागी भवेन्नरः॥ ४१॥
इदं रहस्यं परमं दुर्गाकवचमुत्तमम्। गुह्यं गोप्यतमं गोप्यं गोपनीयं स्वयोनिवत्॥ ४२॥

इदं देवीरहस्यतन्त्रोक्तं श्रीदुर्गाकवचं समाप्तम्।

हे देवि! इस पुण्य-पवित्र कवच को तन्त्रमार्ग में दीक्षित व्यक्ति को जो कुलीन (अच्छे कुल में उत्पन्न तथा कुलधर्म का पालन करने वाला हो) तथा गुरु की भक्ति में निरत हो; शान्त स्वभाव वाला हो, अपने कुल में स्थित हो, कुल में ही शान्त चित्त से निवास करता हो, उसे ही देना चाहिये। इस कवच को शिव जी को अर्पित कर देने से मनुष्य कुल-भागी हो जाता है। यह श्री दुर्गा जी का रहस्यपूर्ण परम पवित्र उत्तम कवच है। यह गोप्य ही नहीं, गोप्यतम है। हे देवि! अपनी योनि के समान गोप्य है (अतः इसे गुप्त ही रखना चाहिये तथा इसके लिये जो सत्पात्र अर्ह व्यक्ति हो, उसे ही इसका ज्ञान देना चाहिये)॥ ४०-४२॥

नवरात्रदुर्गापूजाप्रयोगः

प्रतिपदि प्रातः कृताभ्यङ्गस्नानः नवे वाससी परिधाय चन्दनमृगमदकुङ्कुमैस्त्रिपुण्ड्रं कृत्वा धृतपवित्रो नित्यक्रियां समाप्य दशघटिकामध्येऽभिजिन्मुहूर्ते वा कलशस्थापनार्थं शुद्धमृदा वेदिकां कृत्वा स्वासने प्राङ्मुखो देवीसम्मुखो वा उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य।

नवरात्र में दुर्गापूजा की विधि—नवरात्र में प्रतिपदा के दिन (प्रथम दिन) प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर अभ्यङ्ग एवं स्नान कर नवीन वस्त्र धारण कर चन्दन, कस्तूरी तथा केसर को घिस कर उनका त्रिपुण्ड्र लगाये। हाथ में पवित्री धारण कर अपने नित्य पूजन कर्म करके प्रातःकाल दश घटी के पूर्व (सूर्योदय से चार घण्टे के मध्य) में अथवा अभिजित् मुहूर्त (ठीक मध्याह्न समय) में कलशस्थापना के लिये शुद्ध मृत्तिका की वेदी (चौकोर चबूतरिया=चौंतरिया) बनाकर अपने आसन पर पूर्व की ओर मुख करके बैठे अथवा देवी जी के मन्दिर में उनकी प्रतिमा के सम्मुख बैठकर आचमन तथा प्राणायाम करे।

विमर्श—नवरात्र का अर्थ नौ दिनों से न होकर नौ तिथियों से है। ये नौ तिथियाँ पञ्चाङ्ग की गणना में शुक्ल प्रतिपदा से नवमी-पर्यन्त होती हैं। ये कभी आठ दिन में पूर्ण हो जाती हैं, कभी नौ दिनों में तथा कभी-कभी दस दिन में भी नौ तिथियाँ पूर्ण होती हैं; अतः पञ्चाङ्ग में दिये निर्देशानुसार यह कृत्य उक्त ८-९-१० दिनों में स्थिति के अनुसार प्रतिपदा से लेकर नवमी-पर्यन्त (तिथियों की क्षय-वृद्धि के कारण) सम्पन्न करना चाहिये। जैसा कि मराठी के दाते पञ्चाङ्ग के सम्पादक श्रीधर लक्ष्मण दाते लिखते हैं—'नवरात्र शब्दा चा अर्थ—नवरात्रम्हणजे नऊ दिवस अथवा नऊ माला अशीसमजूत आहे। क्वचित् आठ किंवादहा दिवस येतात। अशावेली असे कसे म्हणून लोकांत चर्चा होते। नऊ दिवस व रात्री चा कुलाचार म्हणजे नवरात्र असाया शब्दा चा अर्थनाही। तर आश्विन शुद्ध प्रतिपदेपासून महानवमीपर्यन्त केले जाणारे कर्म (घटस्थापना, नन्दादीप इत्यादि) म्हणजे नवरात्र असा नवरात्र शब्दा चा अर्थ धर्मसिन्दुकारानी दिला आहे। म्हणून त्यात दिवस किती (८-९-१०) हा प्रश्न नाही।' जिनके परिवारों में नवरात्र में नित्य उपवास रखा जाता हो, वह उपवास महानवमी-पर्यन्त (नवरात्रोत्थापनपर्यन्त) करना चाहिये तथा उसके उपरान्त उसी दिन नवरात्र व्रत की पारणा भी करनी चाहिये। जैसा कि धर्मसिन्धुकार स्पष्ट रूप में निर्दिष्ट करते हैं—'नवरात्रशब्दः आश्विनशुक्लप्रतिपदमारभ्य महानवमीपर्यन्तं क्रियमाणकर्मनामधेयम्। तत्र कर्मणि पूजैव प्रधानम्। उपवासादिकं स्तोत्रजपादिकं चाङ्गम्। तथा च यथा कुलाचारमुपवासैकभक्तनक्तायाचितान्यतमव्रतयुक्तं यथाकुलाचारं सप्तशतीलक्ष्मीहृदयादिस्तोत्रजपसहितं प्रतिपदादिनवम्यन्तं नवतिथ्यधिकरणकपूजाख्यं कर्म नवरात्रशब्दवाच्यम्। पूजाप्राधान्योक्तेरेव। क्वचित् कुले जपोपवासादिनियमस्य व्यतिरेक उपलभ्यते। पूजायास्तु न क्वापि कुले नवरात्रकर्मण्यभावो दृश्यते।' ऊपर जो अनुष्ठानप्रकाश के मूल में 'दशघटिका मध्येऽभिजिन्मुहूर्ते वा' लिखा है, वह पुरुषार्थचिन्तामणि के अनुसार है। उसके अनुसार जिस शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा अमावस्या की समाप्ति पर (अमावस्या वाले दिन) सूर्योदय से चार मुहूर्त (आठ घटी) अथवा पाँच मुहूर्त (दश घटी) के उपरान्त प्रारम्भ हो जाय तथा द्वितीय दिन (अमावस्या के अगले दिन) केवल दो मुहूर्त ही हो तो उसका क्षय होने से पूर्व दिन ही दश घटी के भीतर नवरात्र का आरम्भ (घटस्थापन) करना चाहिये, परन्तु जिस अमावस्या में दश घटी के भीतर प्रतिपदा का प्रवेश न हो तथा प्रतिपदा का क्षय हो तो उसमें अभिजित् मुहूर्त में घटस्थापन करना चाहिये; अन्यथा सूर्योदय के उपरान्त अगले दिन प्रतिपदा यदि तीन मुहूर्त से अधिक हो तो उसका क्षय न मानकर उसी दिन घटस्थापन कर नवरात्रारम्भ करना चाहिये।

मुख्य नवरात्र—चैत्र शुक्ल तथा आश्विन शुक्ल में जो नवरात्र होते हैं, वे मुख्य नवरात्र तथा प्रचलित नवरात्र हैं। आषाढ़ शुक्ल तथा पौष शुक्ल में भी प्रतिपदा से लेकर नवमी तिथि-पर्यन्त नवरात्र होते हैं, उन्हें गुप्त नवरात्र कहा जाता है। इनमें आषाढ़ शुक्ल का नवरात्र तो निर्विवाद है, परन्तु पौष शुक्ल के नवरात्र के स्थान पर प्राचीन काल में ही विकल्प हो गया था; तदनुसार कुछ सम्प्रदाय मार्गशीर्ष मास में गुप्त नवरात्र की पूजा शुक्ल प्रतिपदा से नवमी-पर्यन्त करते रहे हैं था कुछ माघ शुक्ल में प्रतिपदा लेकर नवमी पर्यन्त देवीपूजा करते हैं; शेष पौष शुक्ल में ही गुप्त नवरात्र मानते हैं तथा मेरी सम्मति में वही उचित भी है। प्राचीन रोमन लोग (इटली निवासी) भी आषाढ़ शुक्ल में देवी की पूजा करते थे। वहाँ 'रोम्यूलस' (रामोरस्=जिसके हृदय में राम हों) के इसी महीने में पुत्र का जन्म हुआ तो उसने इसे ज्वाला देवी की कृपा समझ कर उसका नाम ज्वाला केसरी (अर्थात् ज्वाला देवी का वाहन सिंह) रख दिया। आषाढ़ सौरमास का नाम 'ज्वलित' मास भी था, जिसे रोमन में Jullet (जुलेट) लिखा जाता है तथा अंग्रेजी में उसे जूलै (July) कहते हैं। ज्वाला केसरी को ही जूलियस कैसर तथा जूलियससीजर कहा जाता है। इसके जन्म के पूर्व इस मास को क्विंटलिस अर्थात् पाँचवाँ भी कहा जाता था।

मार्गशीर्ष नवरात्र—श्रीमद्भागवत के अनुसार मार्गशीर्ष (हेमन्त के प्रथम मास) में नन्द-व्रज की कुमारियाँ कात्यायनी देवी की पूजा करती थीं—

हेमन्ते प्रथमे मासे नन्दव्रजकुमारिकाः। चेरुर्हविष्यं भुञ्जानः कात्यायन्यर्चितव्रतम्॥ १॥
आप्लुत्यम्भसि कालिन्द्या जलान्ते चोदितेऽरुणे। कृत्वा प्रतिकृतिं देवीं आनूचुर्नृपसैकतीन्॥ २॥
गन्धमाल्यैः सुरभिर्बलिभिर्धूपदीपकैः। उच्चावचैश्चोपहारैः प्रवालफलतण्डुलैः॥ ३॥
(१०, २, १)

माघ नवरात्र—देवीभागवत के अनुसार चैत्र-आषाढ़-आश्विन तथा माघ में चार नवरात्र होते हैं। स्कन्दपुराण में जो देवीभागवत-माहात्म्य लिखा है, उसके अनुसार—

आश्विने मधुमासे वा तपोमासे शुचौ तथा। चतुर्षु नवरात्रेषु विशेषात् फलदायकम्॥

स्पष्टीकरण—मेरे मत में चैत्र शुक्ल एवं आश्विन शुक्ल—ये दो मुख्य नवरात्र हैं। आषाढ़ तथा पौष गुप्त नवरात्र हैं। मार्गशीर्ष तथा माघ में विशेष नवरात्र होते हैं तथा शेष चान्द्रमासों में मलमास को छोड़कर वैशाख-ज्येष्ठ-श्रावण-भाद्र-कार्तिक तथा फाल्गुन में भी सामान्य नवरात्र होते हैं; जिनमें शुक्लपक्ष में प्रतिपदा से नवमी-पर्यन्त देवी-पूजा का अनुष्ठान आवश्यकतानुसार करके मनोरथ पूर्ण करना चाहिये।

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः। लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥ १॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥ २॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥ ३॥

इत्यादिगणपतिस्मरणं कृत्वा आनोभद्रा इत्यादि पूर्वोक्तं शान्तिसूक्तं पठित्वा लक्ष्मीनारायणादिदेवान् प्रणमेत्। ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वपापक्षयपूर्वकदीर्घायुर्विपुलधनपुत्रपौत्राद्य-विच्छिन्नसन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टप्रमुखचतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं संवत्सरसुखप्राप्तिकामः शारदीयनवरात्रे प्रतिपदि विहितं कलशस्थापनं दुर्गापूजां कुमारीपूजादिकर्म करिष्ये, तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतार्थं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं चण्डीसप्तशतीजपाद्यर्थं ब्राह्मणवरणं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणपतिं ध्यायेत्—

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरतरुविमले रत्नसिंहासनस्थम्।
दोर्भिः पाशाङ्कुशेष्टाभयधृतिविशदं चद्रमौलिं त्रिनेत्रं ध्यायेच्छांत्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्॥

इति गणपतिं ध्यात्वा पुष्पाण्यादाय,

हे हेरंब त्वमेह्येहि अम्बिकात्र्यम्बकात्मज। सिद्धिऋद्धिपते त्र्यक्ष लक्षसूर्यसमप्रभ॥
नागास्य नागहार त्वं गणराज चतुर्भुज। भूषितः स्वायुधैर्दिव्यैः पाशाङ्कुशपरश्वधैः॥
आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः। इहागत्य गृहाण त्वं क्रतुं पूजां च रक्ष मे॥

ॐ गणानां त्वागणपतिर्ठ०हवामहेप्रियाणान्त्वाप्रियपतिर्ठ०हवामहेनिधीनान्त्वानिधिपतिर्ठ०हवामहेवसोमम्। आहमजानिगर्भधमात्त्वमजासिगर्भधम्॥१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिऋद्धिसहितमहागणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि इति प्रतिमायामावाह्य ॐ सिद्धिऋद्धिसहितमहागणाधिपतये नमः इति नाममन्त्रेण षोडशोपचारैः सम्पूजयेत्। ततोऽर्घ्यपात्रे गन्धादिकं गृहीत्वा,

ॐ रक्षरक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक। भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वैमातुर कृपासिंधो षाण्मातुरग्रज प्रभो। वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद॥
गृहाणार्घ्यमिदं देव सर्वदेवनमस्कृत। अनेन सफलार्घ्येण फलदोस्तु सदा मम॥

इत्यर्घ्यं दद्यात्।

अथ प्रार्थना—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय सर्वेश्वराय सुखदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते॥
लम्बोदर नमस्तेऽस्तु सततं मोदकप्रिय। अविघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥

इति प्रार्थयेत्।

गणपति का ध्यान—आचमन एवं प्राणायामोपरान्त 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' इत्यादि तीन श्लोकों से श्री गणेश जी का ध्यान करना चाहिये। फिर 'आनो भद्रा क्रतवो यन्तु०' इत्यादि मन्त्रों (भद्र सूक्त) के शान्तिसूक्त को पढ़कर लक्ष्मीनारायणादि देवताओं को नमस्कार करे। फिर देश-कालादि का उच्चारण करके 'अमुकगोत्रोत्पन्न अमुकशर्मेत्यादि अहं ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वपापक्षयपूर्वकं दीर्घायुर्विपुलधनपुत्रपौत्रादि अविच्छिन्न-सन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टप्रमुखचतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं संवत्सरसुखप्राप्तिकामः शारदीय (अथवा वासन्तिक) नवरात्रप्रतिपदि विहितं कलशस्थापनं दुर्गापूजां कुमारीपूजादि कर्म करिष्ये तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतार्थं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं चण्डीसप्तशतीजपाद्यर्थं ब्राह्मणवरणं च करिष्ये' ऐसा कहकर सङ्कल्प करके फिर गणपति का ध्यान करे। ध्यान के लिये मूल में लिखित—'हे हेरम्ब त्वमेहि एहि०' तीन श्लोकों एवं 'गणानान्त्वा०' इत्यादि ऋचा को पढ़कर गणपति का आवाहन करे। फिर 'सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः' इस प्रकार नाममन्त्र से षोडशोपचारों द्वारा पूजन करे। फिर अर्घ्यपात्र में गन्धादि द्रव्य लेकर मूल में लिखित 'रक्ष-रक्ष गणाध्यक्ष०' इत्यादि तीन श्लोकों द्वारा गणपति को अर्घ्य प्रदान करना चाहिये।

गणपति-प्रार्थना—फिर 'विघ्नेश्वराय वरदाय०' इत्यादि तीन श्लोकों द्वारा गणपति की प्रार्थना करनी चाहिये।

पुण्याहवाचनम्

ब्राह्मं पुण्यं महद्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम्। वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः॥ १॥

भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु' इति पठेत् ॐ पुण्याहं ३ त्रिर्विप्रा ब्रूयुः। पुनन्तु मा देवजुनाः॒पुनन्तु मनसा धियः। पुनंतु विश्वा भूतानिजातवेदःपुनीहिमा॥१॥

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्। ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः॥ २॥

भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐ कल्याणम् ३। यथेमांव्वाचङ्कल्याणीमावदानिजनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याँशूद्रायचार्यायचस्वायचारणायच। प्प्रियोदेवानां दक्षिणायै दातुरिहभूयासमयम्मेकामः समृद्ध्य-तामुपमादोनमतु॥१॥

सागरस्य यथा वृद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता। सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः॥ २॥

भो ब्राह्मणा ममास्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐ ऋद्ध्यताम्। ३ ॐ सत्रस्यऽ ऋद्धिरस्यगन्मज्योतिर-मृताऽअभूम। दिवंपृथिव्याऽअध्यारुहामाव्विदामदेवान्त्स्वर्ज्योतिः॥१॥

स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा। विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्ति ब्रुवन्तु नः॥ २॥

भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः स्वस्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐ स्वस्ति ३। ॐ स्वुस्तिनुऽइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वुस्तिनः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वुस्तिनुऽस्ताक्र्ष्योऽअरिष्टनेमिःस्वुस्तिनो बृहुस्पतिर्दधातु॥१॥

समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका। हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियंच ब्रुवन्तु नः॥ २॥

भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्तु श्रीः॥ ३॥ ॐ श्रीश्चतेलुक्ष्मीश्चुपत्न्यावहोरात्रेपार्श्वेनक्षत्राणिरूपमुश्श्विनौव्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्व्वलोकम्मऽइषाण॥१॥ अस्मिन्पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागणपतिप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु। अस्तु परिपूर्ण इति विप्रा ब्रूयुः। इति पुण्याहवाचनम्।

पुण्याहवाचन—यजमान मूल में लिखित 'ब्राह्यं पुण्यं महद्यच्च सृष्टि उत्पादनकारकम्। वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः॥ १॥ भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु' यह पढ़े; तब ब्राह्मण लोग तीन बार 'ॐ पुण्याहं, ॐ पुण्याहं, ॐ पुण्याहं' ऐसा (तीन बार) कहें। फिर यजमान 'पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदो पुनीहि मा॥ १॥ पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्। ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैः तत् कल्याणं ब्रुवन्तु नः॥ २॥ भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः कल्याणं ब्रुवन्तु' इस प्रकार कहे; तब ब्राह्मण लोग 'ॐ कल्याणं, ॐ कल्याणं, ॐ कल्याणं' कहें। फिर यजमान 'यथेमां वाणीं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च। प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयम्मेकामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु॥ १॥ सागरस्य यथावृद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता। सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः' इस प्रकार से ब्राह्मणों से कहे; तब ब्राह्मण लोग 'ॐ ऋद्ध्यताम्, ॐ ऋद्ध्यताम्, ॐ ऋद्ध्यताम्' ऐसा उत्तर में कहें। फिर इसके उपरान्त यजमान ब्राह्मणों से 'ॐ सत्रस्य ऋद्धि०' 'स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या०' इन दो मन्त्रों के साथ 'भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः स्वस्तिं भवन्तो नो ब्रुवन्तु' ऐसा कहे, तब ब्राह्मण लोग 'ॐ स्वस्ति, ॐ स्वस्ति, ॐ स्वस्ति' कहें। फिर यजमान 'स्वस्तिनः इन्द्रः' इत्यादि कहकर 'समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका। हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः॥' तथा भो ब्राह्मणाः ममास्य कर्मणः श्रीरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु' ऐसा कहे, तब ब्राह्मण 'अस्तु श्रीः, अस्तु श्रीः, अस्तु श्रीः' कहें। फिर यजमान 'श्रीश्चते०' इत्यादि कहकर 'अस्मिन् पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टानां ब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागणपतिप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णो अस्तु' ऐसा कहे, तब ब्राह्मण लोग 'अस्तु परिपूर्णम्, अस्तु परिपूर्णम्, अस्तु परिपूर्णम्' ऐसा कहें। इस प्रकार से पुण्याहवाचन करना चाहिये।

ततो ब्राह्मणवरणपक्षे—स्वदक्षिणहस्ते गन्धपुष्पताम्बूलकमण्डलुमुद्रिकासनमालावासांस्यादाय देशकालौ सङ्कीर्त्य अद्यामुकगोत्रोऽमुकशर्माहं चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं संवत्सरसुखप्राप्तिकामो दुर्गाप्रीतिकामो वा अद्यप्रभृतिमहानवमीपर्यन्तं प्रत्यहं वार्षिकशरत्कालीन(वा वासंतीयकालीन)दुर्गामहापूजापूर्वकनवार्णमन्त्रजपसहितचण्डीसप्तशतीपाठकरणार्थमेभिर्गन्धपुष्पताम्बूलकमण्डलुमुद्रिकासनमालावासोभिरमुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणं भवन्तं वृणे—इति ब्राह्मणं वृणुयात्। वृतोऽस्मीति प्रतिवचनम्। ॐ यथाविहितं कर्म्म कुरु इति प्रार्थ्य ॐ यथाज्ञानं करवाणीति प्रतिवचनानन्तरं ब्राह्मणं गन्धादिभिः सम्पूजयेत्। ततो गौरसर्षपान् गृहीत्वा—

ॐ अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ १॥

इति सर्वदिक्षु विकीर्य,

सूर्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपाः। पवनो दिक्पतिर्भूमिराकाशं खेचरामराः॥
ब्रह्मशासनसमास्थाय कुरुध्वमिह सन्निधिम्।

इति भूमिं स्पृष्ट्वा दिग्बन्धं कुर्यात्। ततः आचम्य पञ्चगव्येन भूमिं प्रोक्ष्य ततः पूर्वोक्तमार्गेण भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च कृत्वा नवार्णोक्तैकादशन्यासान्कुर्य्यात्। एवं न्यासविधिं विधाय कलशं स्थापयेत्।

ब्राह्मणों के वरण करने की विधि—यजमान अपने दक्षिणहस्त में गन्ध, पुष्प, ताम्बूल, कमण्डलु, अङ्गूठी, आसन, माला तथा वस्त्रों को लेकर देश-काल का उच्चारण करके 'अद्यामुकगोत्रो शर्माहं (वर्माहम् गुप्ताहं वा) चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं संवत्सरसुखप्राप्तिकामो दुर्गाप्रीतिकामो वा अद्यप्रभृति महानवमीपर्यन्तं प्रत्यहं वार्षिक-शरत्कालीन (वा वासन्तीयकालीन) दुर्गामहापूजापूर्वकं नवार्णमन्त्रजपसहितं चण्डीसप्तशतीपाठकरणार्थं एभिर्गन्ध, पुष्प, ताम्बूल, कमण्डलु, मुद्रिकासनमालावासोभिरमुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणं भवन्तं वृणे' कहकर ब्राह्मण का वरण करे। ब्राह्मण को 'वृतोस्मि' कहकर यजमान को प्रतिवचन देना चाहिये। फिर यजमान ब्राह्मण से या ब्राह्मणों से 'यथाविहितं कर्म कुरु' ऐसा कहे। फिर ब्राह्मण 'यथाज्ञानं करवाणि' ऐसा प्रतिवचन कहे। प्रतिवचन के अनन्तर ब्राह्मण को गन्धादि देकर पूजित करे। फिर हाथ में श्वेत सरसों लेकर 'ॐ अपसर्पन्तु ये भूताः' इत्यादि श्लोक कहकर सब दिशाओं में सरसों बिखेर कर 'सूर्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपाः। पवनो दिक्पतिर्भूमिराकाशं खेचरामराः। ब्रह्मशासनमास्थाय कुरुध्वमिह सन्निधिम्' यह श्लोक बोलकर भूमि का स्पर्श कर दिग्बन्ध करना चाहिये। फिर आचमन कर पञ्चगव्य से भूमि का प्रोक्षण कर पूर्वोक्त विधि से भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृका, बहिर्मातृकान्यास करके नवार्ण मन्त्र के न्यास में बताये गये ग्यारह न्यासों को करे। इस प्रकार न्यासविधि करके कलशस्थापन करे।

तत्र प्रयोगः—महीद्यौरिति भूमिं स्पृष्ट्वा ॐ मुहीद्यौः पृथिवीचनऽइमंय्युज्ञम्मिमिक्षताम्। पिपृतान्नोभरीमभिः॥१॥ इति भूमिं प्रार्थ्य तस्यां भुव्यङ्कुररोपणार्थं शुद्धमृदं प्रक्षिप्य ॐ धान्यमसिधिनुहिदेवान्प्राणायत्वोदानायत्त्वाव्यानायत्त्वादीर्घा-मनुप्रसितिमायुषेधान्देवोवः सविताहिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेणपाणिनाचक्षुषेत्वामहीनांपयोसि॥२॥ इति तस्यां मृदि यवादीन्प्रक्षिप्य ॐ आजिघ्रकलशम्मह्यात्त्वाविशन्त्विन्दवः। पुनरूर्ज्जानिवर्त्तस्वसानःसहस्रन्धुक्ष्वोरुधारापयस्वती पुनर्म्माविशताद्रयिः॥३॥ इति ताम्रकलशं मृन्मयं वा कलशं निधाय वरुणस्योत्तम्भनमसिवरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्थो वरुणस्यऋतसदन्यसिवरुणस्यऽऋतसदनमसिवरुणस्यऽऋतसदनमासीद॥४॥ इति जलेनापूर्य गन्धद्वारेति गन्धं प्रक्षिपेत्। ॐ गन्धद्वारांदुराधर्षांनित्यपुष्टांकरीषिणीम्। ईश्वरींसर्वभूतानान्तामिहोपह्वयेश्रियम्॥५॥ याऽओषधीरिति सर्वौषधीः। ॐ याऽओषधीःपूर्वाजातादेवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा। मनैनुबभ्रूणामहऽशतंधामानिसप्तच॥६॥ काण्डा-त्काण्डादिति दूर्वाः। ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषःपरुषस्परि। एवानोदूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेनच॥७॥ अश्वत्थेवेति पञ्चपल्लवान्। ॐ अश्वत्थेवोनिषदनम्पर्णेवोवसतिष्कृतागोभाजऽइत्किलासथयत्सनवथपूरुषम्॥८॥ स्योनापृथिवीति सप्तमृदः। ॐ स्योनापृथिविनोभवानृक्षरानिवेशनी। यच्छानःशर्मसप्रथाः॥९॥ याः फलिनीरिति फलम्। ॐ याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः। बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुञ्चन्त्वऽहसः॥१०॥ परिवाजेति पञ्चरत्नानि। ॐ परिवाजपतिःकविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद्रत्नानिदाशुषे॥११॥ हिरण्यगर्भेति हिरण्यम्। ॐ हिरण्यगर्भःसमवर्त्त-ताग्रेभूतस्यजातः पतिरेकऽआसीत्। सदाधारपृथिवींद्यामुतेमांकस्मै देवाय हविषाविधेम॥१२॥ युवासुवासा इति रक्तवस्त्रेण सूत्रेण वा वेष्टयेत्। ॐ युवासुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीरासःकवयऽ उन्नयन्तिस्वाध्योमनसादेवयन्तः॥१३॥ पूर्णादर्वीति तण्डुलपूर्णं ताम्रपात्रमुपरि न्यसेत्। ॐ पूर्णादर्व्विपरापत-सुपूर्णापुनरापत। वस्नेवविक्क्रीणावहाऽइषमूर्ज्जऽशतक्रतो॥१४॥ तत्त्वायामीति वरुणमावाह्य तत्त्वायामीति शुनःशेप ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। वरुणो देवता। वरुणावाहने विनियोगः। ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणावंदमानस्तदा-शास्तेयजमानोहविर्भिः। अहेडमानोवरुणेहबोध्युरुशऽसमानऽआयुःप्रमोषीः॥१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ—इत्यावाह्य 'ॐ अपाम्पतिवरुणाय नमः' इति नाममन्त्रेण षोडशोपचारैः सम्पूज्य पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा,

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः॥

इति तीर्थान्यावाहयेत्पूजयेच्च। ततः कलशस्य मुखे विष्णुरित्यादि कलशाभिमन्त्रणं कृत्वा 'देवदानवसंवादे' इत्यादि प्रार्थ्य वरुणं प्रणमेत्। इति कलशस्थापनम्।

कलशस्थापन-प्रयोग—यजमान 'ॐ महीद्यौः०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्रों से पृथ्वी का स्पर्श कर उस पर शुद्ध मिट्टी जवारे बोने के लिये (अङ्कुर-रोपणार्थ) बिछाये। फिर 'ॐ धान्यमसि धिनुहि देवा०' इत्यादि मन्त्र से उस मिट्टी पर जौ या गेहूँ को बिखेर दे। फिर 'ॐ आजिघ्रकलशं०' इत्यादि मन्त्र से ताम्र का या पीतल का या मिट्टी का कलश स्थापित करे (स्टील का कलश रखना दोषपूर्ण है)। फिर 'ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि०' इस मन्त्र से उस कलश में जल डाले। फिर 'ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां०' इत्यादि मन्त्र से गन्ध डाले। 'ॐ या ओषधिपूर्वजाता०' इस मन्त्र से तुलसीदल डाले तथा सर्वौषधि भी डाले। 'ॐ काण्डात्काण्डात् प्ररोहन्ती०' इत्यादि मन्त्र से दूर्वा डाले। 'ॐ अश्वत्थेवो निषूदनं०' मन्त्र से पञ्चपल्लव डाले। 'ॐ स्योनापृथिवी०' मन्त्र पढ़कर कलश में सात प्रकार की मिट्टी डाले। 'ॐ या फलिनीऽफला०' मन्त्र से सुपारी डाले। 'ॐ परिवाजपति०' इत्यादि मन्त्र से पञ्चरत्न डाले। 'ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे०' इत्यादि मन्त्र से दक्षिणा चढ़ाये। 'ॐ युवा सुवासा०' मन्त्र से रक्तवस्त्र या सूत्र से कलश को लपेटे। फिर 'ॐ पूर्णादर्वि परापत०' इस मन्त्र से उस पर पूर्णपात्र रख दे। फिर 'ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा०' मन्त्र बोलकर 'ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ' यह पढ़कर वरुण का आवाहन कलश में करके 'ॐ अपाम्पतिवरुणाय नमः' इस मन्त्र से उनका षोडशोपचार पूजन करे। फिर 'सर्वे समुद्राः' इस श्लोक को पढ़कर कलश में सभी तीर्थों का आवाहन करे। अन्त में 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि श्लोकों से प्रार्थना तथा 'देवदानवसंवादे०' इस श्लोक से प्रणाम करे। यह कलशस्थापन की विधि है।

कलशोपरि देवीस्थापनम्

ततः कलशोपरि सिंहासनं निधाय तत्र सावयवां स्वर्णमयीं दुर्गाप्रतिमामग्न्युत्तारणपूर्वकं संस्थाप्य पट्टवस्त्रैराच्छाद्य पूजयेत्। अग्न्युत्तारणसूक्तस्तु पूर्वमुक्त एव। लेख्यमूर्तिश्चेत्तदा नाभिषेकः। अभिषेकादिकं तत्र न कर्त्तव्यं किं तु तदग्रे पात्रं स्थापयित्वा तस्मिन्नेव कर्तव्यम्।

नवरात्रि कलश पर देवी की स्थापना-विधि—फिर उस कलश के ऊपर सिंहासन (देवी का) रखकर उस पर देवी की सावयव स्वर्णमयी (अथवा पीतल, ताम्र या कांस्य की) प्रतिमा अग्नि उत्तारण करके स्थापित करे तथा उसे वस्त्रों से आच्छादित भी कर दे। अग्न्युत्तारण सूक्त पूर्व (पद्धतिकाण्ड) में दिया जा चुका है। यदि ताम्रपत्र पर लिखित मूर्ति हो तो अभिषेक नहीं करना चाहिये। अभिषेक भी सिंहासन पर न करके मूर्ति को किसी पात्र में स्थापित करके उसी में करना चाहिये।

अथ पूजा—

'ॐ आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदनि। पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शङ्करप्रिये॥
सर्वतीर्थमयं वारि सर्वदेवसमन्वितम्। इमं घटं समागच्छ तिष्ठ देवि गणैः सह॥
दुर्गे देवि समागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय। बलिं पूजां गृहाण त्वमष्टभिः शक्तिभिः सह॥
शङ्खचक्रगदाहस्ते शुभ्रवर्णे शुभासने। मम देवि वरं देहि सर्वैश्वर्यप्रदायिनि॥
एहि दुर्गे महाभागे रक्षार्थं मम सर्वदा। आवाहयाम्यहं देवि सर्वकामार्थसिद्धये॥
अस्यां मूर्तौ समागच्छ स्थितिं मत्कृपया कुरु। रक्षां कुरु सदा भद्रे विश्वेश्वरि नमोऽस्तु ते॥

पूजन—फिर मूल में लिखे छः श्लोकों 'ॐ आगच्छ वरदे देवि०' इत्यादि को पढ़े। उनका भावार्थ इस प्रकार है— हे दैत्यदर्पनिषूदनि! शङ्करप्रिये, वर देने वाली सुमुखि देवि! आओ और इस पूजा को ग्रहण करो;

आपको नमस्कार है। हे दुर्गादेवि! आप आओ और इस कलश के सान्निध्य में रहो, अपनी आठों शक्तियों के साथ मेरी बलि एवं पूजा को स्वीकार करो। हाथ में शङ्ख, चक्र, गदा लिये शुभ्र वर्ण की शुभासन पर विराजमान देवि! मुझे सभी ऐश्वर्य प्राप्त होने का वर दे। हे महाभागे दुर्गा! आकर मेरी सर्वदा रक्षा करो। मैं आपको सब कामनाओं की पूर्ति के लिये बुला रहा हूँ। इस मूर्ति में स्थित होकर मुझपर कृपा करें। हे भद्रे! आप मेरी रक्षा करो। हे विश्वेश्वरि! आपको नमस्कार है।

ॐ हिरण्यवर्णांहरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्। चन्द्रांहिरण्मयींलक्ष्मींजातवेदोमआवह॥१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः भगवति दुर्गे इहागच्छ इह तिष्ठ। इत्यावाहनम्।

नानाप्रभासमाकीर्णं नानावर्णविचित्रितम्। आसनं कल्पितं देवि प्रीत्यर्थं तव गृह्यताम्॥

ॐ तांमआवहजातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यांहिरण्यंविन्देयङ्गामश्वं पुरुषानहम्॥२॥ ॐ दुर्गायै नमः आसनम्।

गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्य आनीतं तोयमुत्तमम्। पाद्यं तेऽहं प्रदास्यामि गृहाण परमेश्वरि॥

ॐ अश्वपूर्वांरथमध्यांहस्तिनादप्रबोधिनीम्। श्रियंदेवीमुपह्वयेश्रीर्मादेवीजुषताम्॥३॥ इति पाद्यम्।

गन्धाक्षतैश्च संयुक्तं फलपुष्पयुतं तव। अर्घ्यं गृहाण दत्तं मे प्रसीद परमेश्वरि॥

ॐ कांसोस्मितांहिरण्यप्राकारामार्द्रांज्वलन्तींतृप्तान्तर्पयन्तीम्। पद्मेस्थितांपद्मवर्णांतामिहोपह्वयेश्रियम्॥४॥ इत्यर्घ्यम्।

गङ्गा गोदावरी चैव यमुना च सरस्वती। ताभ्य आचमनीयार्थमानीतं तोयमुत्तमम्॥

ॐ चन्द्रांप्रभासांयशसाज्वलन्तींश्रियंलोकेदेवजुष्टामुदाराम्। तांपद्मनीमींशरणमहंप्रपद्येऽअलक्ष्मीर्मेनश्यतां-त्वांवृणे॥५॥ इत्याचमनीयम्।

ज्ञानमूर्ते भद्रकालि दिव्यमूर्ते सुरेश्वरि। स्नानं गृहाण देवि त्वं नारायणि नमोऽस्तु ते॥

ॐ आदित्यवर्णेतपसोऽधिजातोवनस्पतिस्तव वृक्षोऽथबिल्वः। तस्यफलानितपसानुदन्तुमायान्तरायाश्चबाह्या-अलक्ष्मीः॥६॥ इति स्नानम्।

पञ्चामृतं मयानीतं पयोदधिसमन्वितम्। घृतं मधु शर्करया प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ पंचनद्यःसरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः। सरस्वतीतुपञ्चधासोदेशेभवत्सरित्॥ इति पञ्चामृतस्नानम्॥७॥ पुनः शुद्धोदकस्नानम्।

कामधेनुसमुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम्। पावनं यज्ञहेतुश्च पयःस्नानार्थमर्पितम्॥

ॐ पयःपृथिव्याम्पयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षेपयोधाः। पयस्वतीःप्रदिशःसन्तुमह्यम्॥८॥ इति पयःस्नानम्।

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्। दध्यानीतं मया देवि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यवाजिनः। सुरभिनोमुखाकरत्प्रणऽआयूंषितारिषत्॥९॥ इति दधिस्नानम्।

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम्। घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ घृतंघृतपावानःपिबतवसांवसापावानःपिबतान्तरिक्षस्यहविरसिस्वाहादिशःप्रदिशऽआदिशोविदिशऽउद्दि-शोदिग्भ्यःस्वाहा॥१०॥ इति घृतस्नानम्।

तरुपुष्पसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु। तेजःपुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ मधुव्वाताऽऋतायतेमधुक्षरन्तिसिन्धवः। माध्वीर्नःसन्त्वोषधीः॥१॥ ॐ मधुनक्तमुतोषसोमधुमत्पार्थिवर्ठ०- रजः। मधुद्यौरस्तुनःपिता॥२॥ ॐ मधुमान्नोव्वनस्पतिर्म्मधुमाँऽअस्तुसूर्यः॥ माध्वीर्गावोभवन्तुनः॥३॥ ॥११॥ इति मधुस्नानम्।

इक्षुसारसमुद्भूता शर्करा पुष्टिकारिका। महापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ अपाᳬंरसमुद्वयसर्ठ०सूर्य्येसन्तᳬंसमाहितम्। अपाᳬंरसस्यर्योरसस्तंव्वोगृह्णाम्म्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्राय- त्वाजुष्टंगृह्णांम्येषतेयोनिरिन्द्रायत्वाजुष्टतमम्॥१२॥ इति शर्करोदकस्नानम्।

मलयाचलसम्भूतं चन्दनागरुसम्भवम्। चन्दनं देवदेवि त्वं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षांनित्यपुष्टांकरीषिणीम्। ईश्वरींसर्वभूतानान्तामिहोपह्वयेश्रियम्॥१३॥ इति गन्धोदकस्नानम्।

नाना सुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम्। उद्वर्त्तनं मया दत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ अहिंरिवभोगैःपर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिम्परिबाधमानः। हस्तग्घ्नोव्विश्वाव्वयुनानिविद्वान्पुमान्पुमांᳬंसम्परि- पातुव्विश्वतः॥१३॥ इत्युद्वर्तनस्नानम्।

ज्ञानमूर्ते भद्रकालि दिव्यमूर्ते सुरेश्वरि। स्नानं गृहाण देवि त्वं नारायणि नमोऽस्तु ते॥

ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसिव्वरुणस्य स्कंभसर्जनीस्थोव्वरुणस्यऽऋतसदन्यसिव्वरुणस्यऽऋतसदनमसिव्वरुणस्यऽ- ऋतसदनमासीद॥१४॥ इति शुद्धस्नानम्॥ स्नानान्ते आचमनीयम्।

निर्मितं तन्तुभिः सूक्ष्मैर्नानावर्णविचित्रितम्। वस्त्रं गृहाण मे देवि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ उपैतुमां देवसखःकीर्तिश्चमणिनासह। प्रादुर्भूतोस्मिराष्ट्रेस्मिन्कीर्त्तिमृद्धिंददातुमे॥१५॥ इति वस्त्रम्। आचमनम्।

कञ्चुकीमुपवस्त्रं च नानारत्नैः समन्वितम्। गृहाण त्वं मया दत्तं शङ्करप्राणवल्लभे॥

अलङ्कारान् महादिव्यान्नानारत्नविनिर्मितान्। गृहाण देवमातस्त्वं प्रसीद परमेश्वरि॥

ॐ क्षुत्पिपासामलांज्येष्ठामलक्ष्मींनाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिंचसर्वांनिर्णुदमेगृहात्॥१६॥ इति कञ्चुकीमा- भूषणं च।

मलयाहिसमुद्भूतं कर्पूरागरुवासितम्। मया निवेदितं भक्त्या चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

केशरागरुसंयुक्तं चन्दनादिसमन्वितम्। कस्तूरिकासमायुक्तं कुङ्कुमं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ गन्धद्वारांदुराधर्षांनित्यपुष्टांकरीषिणीम्। ईश्वरींसर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥१७॥ इति गन्धं कुङ्कुमं च।

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठे कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः। मया निवेदिता भक्त्या प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ अक्षन्नमी मदन्तह्यवप्रियाऽअधूषत। अस्तोषतस्वभानवोविप्प्रानविष्ठयामतीयोजान्विन्द्रतेहरी॥१८॥ इत्यक्षतान्।

मन्दारपारिजातानि पाटलीपङ्कजान्यपि। मयाहृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ मनसःकाममाकूतिंवाचः सत्यमशीमहि। पशूनांरूपमन्नस्यमयिश्रीःश्रयतांयशः॥१९॥' इति पुष्पाणि॥ सौभाग्यद्रव्यम्।

हरिद्रां कुङ्कुमं चैव सिन्दूरादि समन्वितम्। सौभाग्यद्रव्यसंयुक्तं गृहाण परमेश्वरि॥

(ॐ अहिंरिवभोगैरिति सौभाग्यद्रव्यम्॥२०॥) एवं पुष्पान्तपूजां कृत्वा पूर्वोक्तनवार्णं मन्त्रोक्तावरणदेवताः सम्पूज्याङ्गपूजां कुर्यात्।

आवाहन—फिर मूल में लिखित 'ॐ हिरण्यवर्णां०' ऋचा से आवाहन करे। 'ॐ नानाप्रभासमाकीर्णं' तथा 'ॐ तां म आवह जातवेदो०' से आसन प्रदान करे। 'गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्य०' तथा 'ॐ अश्वपूर्वां०' से पाद्य (पैर धोने के लिये जल) दे। फिर 'गन्धाक्षतैश्च संयुक्तं' इत्यादि श्लोक तथा 'ॐ कांसोऽस्मितां हिरण्य०' इत्यादि ऋचा पढ़कर देवी को अर्घ्य (हाथ धुलाने के लिये सुगन्धित जल) प्रदान करे। 'गंगा गोदावरी०' तथा 'ॐ चन्द्रां प्रभासां०' से देवी को आचमनीय (कुल्ले के लिये जल) प्रदान करे। 'पञ्चामृतं मयानीतं०' तथा 'ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती०' मन्त्रों से देवी को पञ्चामृत से स्नान कराये तथा उसके पश्चात् शुद्ध जल से भी स्नान कराना चाहिये। (गोदुग्ध, गोघृत, गोदधि, मधु एवं शर्करा को मिलाने से पञ्चामृत होता है)। फिर 'कामधेनु समुत्पन्ने' तथा 'ॐ पयः पृथिव्यां०' इस मन्त्र से पय (गोदुग्ध) से स्नान कराये। फिर 'पयसस्तु समुद्भूतं०' तथा 'ॐ दधिक्राव्णोऽकारिषं०' इन दोनों से दधि (गाय के दही) में देवी को स्नान कराये। फिर 'नवनीतसमुत्पन्नं०' तथा 'ॐ घृतं घृतपावानः०' इन दोनों से गोघृत में स्नान कराये। तदनन्तर 'तरुपुष्पसमुद्भूतं०' तथा 'ॐ मधुव्वाता ऋतायते०' से देवी को मधुस्नान कराये। फिर 'इक्षुसारसमुद्भूता०' तथा 'ॐ अपाᳫं रस०' द्वारा शर्करा (देशी शक्कर) से स्नान कराये। तत्पश्चात् 'मलयाचलसम्भूतं' तथा 'ॐ गन्धद्वारां०' के द्वारा गन्धोदक (सुगन्धित जल) में स्नान कराये। तदनन्तर 'नानासुगन्धिद्रव्यं च०' तथा 'ॐ अहिरिव भागैः' इत्यादि से देवी को उद्वर्त्तन (उबटन) कराये। तत्पश्चात् 'ज्ञानमूर्ते भद्रकालि' तथा 'ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि०' से शुद्ध स्नान कराकर स्नान के अन्त में आचमनीय भी देना चाहिये (गोदुग्ध इत्यादि द्रव्यों से स्नान करान के पश्चात् प्रत्येक स्नान के उपरान्त शुद्ध जल से स्नान कराते हैं)। स्नानोपरान्त 'निर्मितं तन्तुभिः०' तथा 'ॐ उपैतु मां देवसखा०' से देवी को वस्त्र प्रदान करे तथा वस्त्र देने के उपरान्त आचमन कराये। फिर 'कञ्चुकीमुपवस्त्रं०' तथा 'ॐ क्षुत्पिपासा०' से उपवस्त्र, कञ्चुकी तथा आभूषणादि प्रदान करे। तदनन्तर 'मलयाद्रिसमुद्भूतं०' तथा 'ॐ गन्धद्वारां०' पढ़कर गन्ध एवं कुङ्कुम प्रदान करे। इसके बाद 'अक्षताश्च सुरश्रेष्ठा०' तथा 'ॐ अक्षन्नमीमदन्त०' इत्यादि से अक्षत समर्पित करे। फिर 'मन्दारपारिजातानि' तथा 'ॐ मनसः काममाकूतिं०' से पुष्प चढ़ाये और अन्त में 'हरिद्रां कुङ्कुमं चैव०' तथा 'ॐ अहिरिव भोगैः०' से सौभाग्य द्रव्य चढ़ाये। इस प्रकार पूजा करने के उपरान्त पूर्व में कथित नवार्ण मन्त्रोक्त आवरणदेवताओं की पूजा करके फिर देवी की अङ्गपूजा करे।

अथाङ्गपूजा। ॐ दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि। ॐ महाकाल्यै नमः गुल्फौ पूजयामि। ॐ मङ्गलायै नमः जानुनी पूजयामि। ॐ कात्यायन्यै नमः ऊरू पूजयामि। ॐ भद्रकाल्यै नमः कटिं पूजयामि। ॐ कमलायै नमः नाभिं पूजयामि। ॐ शिवायै नमः उदरं पूजयामि। ॐ क्षमायै नमः हृदयं पूजयामि। ॐ स्कन्दाय नमः कण्ठं पूजयामि। ॐ महिषासुरमर्दिन्यै नमः नेत्रे पूजयामि। ॐ उमायै नमः शिरः पूजयामि। ॐ विन्ध्यनवासिन्यै नमः सर्वाङ्गं पूजयामि नमः। देव्या दक्षिणे सिंहं पूजयामि। वामे महिषं पूजयामि। इत्यङ्गपूजां कुर्यात्।

दशाङ्गं गुग्गुलुं धूपं चन्दनागुरुसंयुतम्। मया निवेदितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि॥

ॐ कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भवकर्दम। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्॥२०॥ इति धूपम्।

आज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया। दीपं गृहाण देवि त्वं त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

ॐ आपः स्रजन्तु स्निग्धानि चिक्लीतवस मे गृहे। निच देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले॥२१॥ इति दीपम्।

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्। भक्ष्यभोज्यसमायुक्तं प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥२२॥ इति नैवेद्यम्। नैवेद्यमध्ये पानीयम् उत्तरापोशनं हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनम् आचमनीयं च समर्पयामि।

मलयाचलसम्भूतं कस्तूर्या च समन्वितम्। करोद्वर्तनकं देवि गृहाण परमेश्वरि॥

इति करोद्वर्तनम्।

इदं फलं मया देवि स्थापितं पुरतस्तव। तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

ॐ आर्द्रां यः करिणीं यष्टींसुवर्णां हेममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो य आवह॥२३॥ इति ऋतुफलम्।

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्ल्या दलैर्युतम्। कर्पूरैलासमायुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ याःफलिनीर्य्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः। ब्बृहस्पतिप्प्रसूतास्तानोमुञ्चन्त्वर्ठ०हसः॥२४॥ इति ताम्बूलम्।

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ॐ तामऽआवहजातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यंप्रभूतंगावोदास्योश्वान् विन्देयंपुरुषाहम्॥२५॥ इति दक्षिणाम्।

कर्पूरार्तिक्यम्—

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम्। आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदा भव॥

ॐ इदर्ठ०हविः प्प्रजननम्मेऽअस्तुदशवीरर्ठ०सर्वगणर्ठ०स्वस्तये। आत्मसनिप्रजासनिपशुसनिलोकसन्न्यभयसनि। अग्निःप्प्रजाम्बहुलाम्मेकरोत्त्वन्नम्पयोरेतोऽअस्म्मासुधत्त॥२६॥ इति कर्पूरार्तिक्यम्।

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदेपदे॥

ॐ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्। सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्॥२७॥ इति प्रदक्षिणा।

नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च। पुष्पाञ्जलि मया दत्तं गृहाण परमेश्वरि॥१॥

ततः श्रीसूक्तं सम्पूर्णं प्राकृतनीराजनार्तिं च यथाचारं पठित्वा पुष्पाञ्जलिं निवेदयेत्॥ २८॥

ततः साष्टाङ्गं प्रणामं कृत्वा प्रार्थयेत्—

ॐ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि। यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे॥
महिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि। यशो देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे॥
जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी। दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते॥
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःखविनाशिनीम्। पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम्॥
भूतप्रेतपिशाचेभ्यो रक्षोभ्यश्च महेश्वरि। देवेभ्यो मानुषेभ्यश्च भयेभ्यो रक्ष मां सदा॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥
रूपं देहि यशो देहि भर्गं भवति देहि मे। पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे॥

इति सम्प्रार्थ्य कुमारीपूजां कुर्यात्। ततः (प्रत्यहं बलिदानपक्षे माषभक्तेन कूष्माण्डेन वा इक्षुदण्डेन बलिदानं कार्यम्। ततः अखण्डदीपकं प्रतिष्ठापयेत्)—

अखण्डदीपके देव्याः प्रीतये नवरात्रकम्। उज्ज्वालयेदहोरात्रमेकचित्तो धृतव्रतः॥

एवं देवीं सम्पूज्य चण्डीपाठं कुर्यात्।

अङ्गपूजा—फिर मूल में लिखित 'ॐ दुर्गायै नमः' इत्यादि मन्त्रों से उनके सामने लिखे पाद, गुल्फ, जानु, ऊरु, कटि, नाभि, उदर, हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिर, सर्वाङ्ग का पूजन करे तथा दक्षिण भाग में सिंह एवं वाम भाग में

महिष-पूजा करनी चाहिये। फिर मूल में लिखित 'दशाङ्गं गुग्गुलुं धूपं' तथा 'ॐ कर्दमेन प्रजाभूता०' से धूप प्रदान करे। इसके बाद 'आज्यं वर्तिसमायुक्तं०' तथा 'आपः सृजन्तु०' से दीप प्रदान करे। तत्पश्चात् 'अन्नं चतुर्विधं०' तथा 'ॐ आर्द्रां पुष्करिणी०' से नैवेद्य अर्पित करना चाहिये। नैवेद्य के मध्य पानीय उत्तरापोशन (उत्तर + आपः + अशन = भोजन के पश्चात् जलपान), हस्तप्रक्षालन, मुखप्रक्षालन तथा आचमनीय भी देना चाहिये। तदनन्तर 'मलयाचलसम्भूतं०' से करोद्वर्त्तन (भोजनोपरान्त हाथ धुलाना) करना चाहिये। इसके बाद 'इदं फलं०' तथा 'ॐ आर्द्रां यः' से ऋतुफल 'पूगीफलं महद्दिव्यं०' तथा 'ॐ या फलिनी०' से ताम्बूल चढ़ाना चाहिये। फिर 'हिरण्यगर्भगर्भस्थं' तथा 'ॐ तां म आवह जातवेदो०' से दक्षिणा देकर 'कदलीगर्भसम्भूतं०' तथा 'ॐ इदं हविः प्रजननं०' से कपूर की आरती करनी चाहिये। तत्पश्चात् 'यानि कानि च पापानि' से प्रदक्षिणा करने के बाद 'नानासुगन्धपुष्पाणि' से पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये। फिर अन्त में श्रीसूक्त का पाठ करके हिन्दी में देवी की आरती गाकर पुष्पाञ्जलि निवेदित कर साष्टाङ्ग प्रणाम कर प्रार्थना करनी चाहिये।

प्रार्थना—'ॐ मन्त्रहीनं' इत्यादि सात श्लोक पढ़कर देवी से प्रार्थना करे। फिर अन्त में कुमारी-पूजा करनी चाहिये। प्रतिदिन बलिदान के लिये उड़द का भात, कुम्हड़ा तथा इक्षुदण्ड (ईख) का बलिदान करना चाहिये एवं अखण्ड दीपक को जलाये रखना चाहिये। नवरात्र में देवी के लिये अखण्ड दीपक जलाना चाहिये। नौ दिनों तक रात-दिन एकाग्रचित्त होकर व्रत रखने वाले को अखण्ड ज्योति जलानी चाहिये। इस प्रकार से प्रतिदिन देवी की पूजा करके चण्डीपाठ भी प्रतिदिन विधिपूर्वक करना चाहिये।

चण्डीपाठप्रकारः

आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा अमुकयजमानेन वृतोऽहं वा (धनकामः पुत्रकामः अमुकरोगनाशकामो वा इत्यादिविशिष्टफलोद्देशमुच्चार्य) श्रीदुर्गाप्रीतिकामो वा मार्कण्डेयपुराणीयम् ॐ सावर्णिः सूर्यतनय इत्यारभ्य सावर्णिर्भविता मनुरित्यन्तं चण्डीसप्तशतीपाठं कवचार्गलाकीलकनवार्णमन्त्रजपसहितं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य आसनं विधाय आधारे अन्यहस्तलिखितं पुस्तकं संस्थाप्य पूजयेत्। ततोऽष्टोत्तरशतं नवार्णमन्त्रजपं कृत्वा ॐ नारायणाय नमः ॥ १ ॥ ॐ नराय नमः ॥ २ ॥ ॐ नरोत्तमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ देव्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ सरस्वत्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ व्यासाय नमः ॥ ६ ॥ इति नमस्कृत्य प्रणवमुच्चार्य कवचार्गलाकीलकानि पठित्वा मार्कण्डेयपुराणोक्त-चण्डीसप्तशतीस्तवपाठं कुर्यात्।

दुर्गासप्तशती (चण्डी) पाठं-विधि—सर्वप्रथम आचमन तथा प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण कर 'अमुकगोत्रोऽमुकोऽहं' कहकर अथवा यदि साधक स्वयं न करके ब्राह्मण द्वारा पाठ कराये तो आचार्य 'अमुक यजमानेन व्रतं' कहकर आगे 'धनकामः / स्त्रीकामः / पुत्रकामः / अमुकरोगनाशकामो (इनमें जो भी कामना हो, उसका उल्लेख करे) मार्कण्डेयपुराणीयम् ॐ सावर्णिः सूर्यतनयो इत्यारभ्य सावर्णिर्भवितामनुरित्यन्तं चण्डीसप्तशतीपाठं कवचार्गलाकीलकनवार्णमन्त्रजपसहितं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प कर आसन पर बैठकर आधार (चौकी या रहल) पर श्रीदुर्गासप्तशती की पुस्तक स्थापित कर उसकी पूजा करे। फिर १०८ नवार्ण मन्त्र जप करके 'ॐ नारायणाय नमः, ॐ नराय नमः, ॐ नरोत्तमाय नमः, ॐ देव्यै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ व्यासाय नमः' कहकर नमस्कार कर ॐ का उच्चारण कर कवचार्गला-कीलक पढ़कर मार्कण्डेय पुराणोक्त चण्डीसप्तशती का पाठ करे।

तत्र तावत्पुस्तकवाचने नियमाः—हस्ते पुस्तकं न धार्यम्। स्वयं ब्राह्मणभिन्नेन च लिखितं विफलम्। अध्यायं समाप्य विरमेन्न तु मध्ये कदाचन। कृते विरामे मध्ये तु अध्यायादि पठेत्पुनः। ग्रन्थार्थं बुध्यमानः स्पष्टाक्षरं नातिशीघ्रं नातिमन्दं रसभावस्वरयुतं वाचयेत्।

पुस्तकपाठ के नियम—हाथ में उठाकर पुस्तक नहीं पढ़ना चाहिये। यदि ब्राह्मणेत्तर व्यक्ति द्वारा लिखित पुस्तक हो तो उसका पाठ विफल होता है (यदि छपी पुस्तक हो तो उसका पाठ ब्राह्मण द्वारा कराये अथवा ब्राह्मणेतर यजमान आचार्य का वरण कर उसके निर्देशानुसार शुद्ध पाठ करे तथा पूजनादि एवं हवन आचार्य से ही कराये)। अध्याय समाप्त होने पर ही विराम लेना चाहिये; मध्य में विराम नहीं करना चाहिये। यदि किसी कारणवश बीच में विराम लेना पड़े तो उस अध्याय को प्रारम्भ से अन्त तक पुनः पढ़ना चाहिये। पाठ करते समय श्लोकों का अर्थ समझते हुए अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण करते हुए नातिशीघ्र नातिमन्द रसभाव-स्वरयुक्त वाचन करना चाहिये।

अथ पाठविधानम्—'एषां श्रीचण्डीसप्तशत्याः प्रथममध्यमोत्तमचरित्राणां ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छंदांसि महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः। ऐंह्रींक्लीं बीजानि। अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि। धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं सप्तशतीपाठे विनियोगः।' ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे॥ २॥ ॐ महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः हृदये॥ ३॥ ॐ ऐंह्रींक्लींबीजेभ्यो नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ अग्निवायुसूर्यतत्त्वेभ्यो नमः हृदये॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ चं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ डिं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ कां कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ यैं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ चण्डिकायै अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः।

अथ चक्रन्यासः—ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रां नन्दायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रीं रक्तदन्तिकायै तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रूं शाकम्भर्यै मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रैं दुर्गायै अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रौं भीमायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रः भ्रामर्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥

अथ हृदयादिन्यासः—ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रां नन्दायै हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रीं रक्तदन्तिकायै शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके शाकम्भर्य्यै शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रैं दुर्गायै कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रौं भीमायै नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ शम्भुतेजोज्वलज्ज्वालामालिनि पावके ह्रः भ्रामर्यै अस्त्राय फट्॥ ६॥

अथाङ्गन्यासः—ॐ वाराह्यै नमः पादयोः॥ १॥ ॐ नारसिंह्यै नमः नितम्बे॥ २॥ ॐ चामुण्डायै नमः नाभौ॥ ३॥ ॐ माहेन्द्र्यै नमः कण्ठे॥ ४॥ ॐ ब्राह्म्यै नमः पृष्ठे॥ ५॥ ॐ वैष्णव्यै नमः दक्षिणभुजे॥ ६॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः वामभुजे॥ ७॥ ॐ कौमार्यै नमः स्कन्धयोः॥ ८॥ ॐ कात्यायन्यै नमः मुखे॥ ९॥ ॐ शिवदूत्यै नमः शिरसि॥ १०॥ ॐ शिवायै नमः हृदि॥ ११॥ ॐ काल्यै नमः दक्षकुक्षौ॥ १२॥ ॐ रक्तदन्तिकायै नमः वामकुक्षौ॥ १३॥ ॐ शताक्ष्यै नमः पृष्ठवंशे॥ १४॥ ॐ शाकम्भर्यै नमः भ्रुवोः॥ १५॥ इत्यङ्गन्यासः।

अथ खड्गिन्यादिन्यासः—

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा। शङ्खिनी चापिनी बाण भुशुण्डी परिघायुधेति शिरसि॥ १॥
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन चेति मुखे॥ २॥
ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरीति कण्ठे॥ ३॥
ॐ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते। यानि चात्यर्थघोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवमिति बाह्वोः॥ ४॥

ॐ खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके। करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः इति हृदये॥ ५॥
ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते। भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते इत्युदरे॥ ६॥
ॐ एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्। पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते इति नाभौ॥ ७॥
ॐ ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्। त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते इत्यूर्वोः॥ ८॥
ॐ हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्। सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्यो नः सुतानिवेति जान्वोः॥ ९॥
ॐ असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्वलः। शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयमिति पादयोः॥ १०॥

एवं न्यस्तशरीरः साधकः सच्चिदानन्दरूपिणीं महालक्ष्मीं ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

अक्षस्त्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने चदधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य कृताञ्जलिः सन् गुरुदेवात्मैक्यं विभाव्य स्तवस्यार्थानुसन्धानपूर्वकं नातिशीघ्रं नातिमन्दं मध्यमस्वरेण स्पष्टपदाक्षरं चण्डीस्तवं पठेत्। ततः स्तवपाठोत्तरम्—ॐ ह्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ चं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ डिं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ कां कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ यैं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ह्रीं चण्डिकायै अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा नवार्णमन्त्रमष्टोत्तरशतं जप्त्वा अहंरुद्रेभिरिति वैदिकं देवीसूक्तं च नमो देव्यै महादेव्यै इति देवीसूक्तं च पठित्वा रहस्यत्रयं पठेत्। तत्र प्राधानिकं रहस्यं सार्द्धत्रिंशच्छ्लोकात्मकम्। वैकृति-रहस्यमेकोनचत्वारिंशच्छ्लोकात्मकम्। मूर्तिरहस्यं पञ्चविंशतिश्लोकात्मकं गुरुचरणैः संशोधितं ग्राह्यमिति। ततः पूर्वोक्तं षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यात्वा भगवतीं प्रार्थयेत्—

अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत्। यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः॥
सापराधोऽस्मि शरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके। इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु॥
अज्ञानाद्विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम्। तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि॥
कामेश्वरि जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे। गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि॥
गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

इति मन्त्रेण देव्या दक्षिणकरे जपं समर्प्य यथासुखं विहरेत्।

मन्त्रमहोदधौ—

मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठन्। पुटितं मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वाञ्छितम्॥
आश्विनस्य सिते पक्षे आरभ्याग्नितिथिं सुधीः। अष्टम्यन्तं जपेल्लक्षं दशांशं होममाचरेत्॥
प्रत्यहं पूजयेद्देवीं पठेत्सप्तशतीमपि। विप्रानाराध्य मन्त्रा स्वमिष्टार्थं लभतेऽचिरात्॥
एवं यः कुरुते स्तोत्रं नावसीदति जातुचित्। चण्डिकां प्रभजन्मर्त्यो धनैर्धान्यैर्यशश्चयैः॥
पुत्रैः पौत्रैर्धनारोग्यैर्युक्तो जीवेद्बहूः समाः॥

इति संक्षेपतो नवरात्रदुर्गाविधानं समाप्तम्।

पाठारम्भ की विधि—सर्वप्रथम 'एषां श्रीचण्डीसप्तशत्याः प्रथममध्यमोत्तमचरित्राणां ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः गायत्री उष्णिक् अनुष्टुभ् छन्दांसि, महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वत्यो देवताः। ऐं ह्रीं क्लीं, बीजानि। अग्निवायुः

सूर्यस्तत्वानि। धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं सप्तशतीपाठे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। तदनन्तर मूल में लिखित 'ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में ऋष्यादिन्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ ह्रीं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में हृदयादि न्यास करे। फिर आगे मूल में लिखित 'ॐ शम्भुतेजोज्ज्वल०' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः अङ्गुष्ठों, तर्जनियों, मध्यमाओं, अनामिकाओं, कनिष्ठिकाओं तथा करतलपृष्ठों में चक्रन्यास करना चाहिये। यह चक्र से करन्यास होता है।

चक्र से हृदयादिन्यास—फिर 'ॐ शम्भुतेज०' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों से क्रमशः हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्रत्रय तथा अस्त्राय फट् न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ वाराह्यै नमः' इत्यादि पन्द्रह मन्त्रों से उनमें उल्लिखित अङ्गों में न्यास करना चाहिये।

खड्गिन्यादि न्यास—फिर उसके आगे मूल में लिखित 'ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा' इत्यादि १० मन्त्रों के द्वारा निर्दिष्ट शरीर में निर्दिष्ट अङ्गों में न्यास करना चाहिये। इसके बाद 'अक्षस्त्रक्परशुं गदेषु कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां' मन्त्र से देवी का ध्यान करे। फिर मानसोपचारों से पूजन करके हाथ जोड़कर गुरु में तथा देवता में एकता का विश्वास कर सप्तशतीस्तव के अर्थ को समझते हुए नातिशीघ्र तथा नातिमन्द स्वर को त्याग कर मध्यम स्वर में चण्डीपाठ करना चाहिये। फिर पाठ के उपरान्त 'ॐ ह्रीं हृदयाय नमः, ॐ चं शिरसे स्वाहा, ॐ डिं शिखायै वषट्, ॐ कां कवचाय हुम्, ॐ यैं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रीं चण्डिकायै अस्त्राय फट्' इस प्रकार से षडङ्गन्यास करके फिर १०८ बार नवार्ण मन्त्र को जपकर 'अहं रुद्रेभि०' यह वैदिक देवीसूक्त, नमो देव्यै महादेव्यै यह पौराणिक देवीसूक्त पढ़कर फिर तीनों रहस्यों का भी पाठ करना चाहिये। उनमें प्राधानिक रहस्य साढ़े तीस श्लोकों वाला है। वैकृतिक रहस्य उनतालीस श्लोकों में है तथा मूर्तिरहस्य पच्चीस श्लोकों वाला है। फिर पूर्वोक्त षडङ्गन्यास करके भगवती से प्रार्थना करे।

प्रार्थना—मूल में 'अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत्' इत्यादि पाँच श्लोकों का उच्चारण कर प्रार्थना करे तथा देवी के दक्षिणहस्त में जप का अर्पण करे। मन्त्रमहोदधि में लिखा है—मार्कण्डेय पुराण में वर्णित चण्डीस्तव को नित्य मूलमन्त्र से सम्पुटित करके जप करने वाले को वाञ्छित फल मिलता है। आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ करके बुद्धिमान् व्यक्ति अष्टमी-पर्यन्त एक लक्ष मन्त्रजप करे एवं उसका दशांश होम करे। प्रतिदिन देवी की पूजा तथा सप्तशती का पाठ भी करे। ब्राह्मणों को पूजित करे तो जापक को अभीष्ट फल की शीघ्र प्राप्ति होती है। इस प्रकार से जो स्तोत्रपाठ करता है, वह कभी खिन्न नहीं होता है। चण्डिका का भजन करने वाला मनुष्य धन-धान्य, यश, ऐश्वर्य, पुत्र तथा पौत्रों के साथ अनेक वर्षों तक सुखपूर्वक जीवन-यापन करता है।

कुमारीपूजनम्

तच्च प्रत्यहं यथाशक्ति एकद्व्यादिक्रमेण कार्यम्। तत्र प्रयोगः—मण्डपाभ्यन्तरे कुङ्कुमादिभिरष्टदलं विरच्य तदुपरि स्थापितपीठे कन्यामुपवेश्य स्वयं तत्सम्मुखः स्वासने उपविश्य आचम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'भगवतीदुर्गाप्रसन्नतार्थं कुमारीपूजां करिष्ये' इति कुमारीणां पादौ प्रक्षाल्य तैलाभ्यङ्गवस्त्रगन्धपुष्पस्त्रग्भिः सम्पूज्य खण्डलड्डुगुडसर्पिर्दधि-क्षीरनारिकेलखण्डादियाचितं भोजनं पानीयं च दत्त्वा तासु तृप्तासु स्वयमाचमनं ताभ्यो दद्यात्। ततः आचम्य क्षन्तव्यमिति प्रार्थ्य कन्यादत्ताक्षतान्स्वशिरसि धृत्वा दक्षिणादानपूर्वकं विसृजेत् इति सङ्क्षेपतः कुमारीपूजा।

कुमारियों का पूजन—प्रतिदिन एक कन्या का पूजन करे अथवा शक्ति के अनुसार प्रथम दिन एक, द्वितीय दिन दो तथा तृतीय दिन तीन—इस प्रकार वृद्धिक्रम से भी पूजन कर सकते हैं।

उसके लिये मण्डप (पूजामण्डप) के भीतर कुङ्कुमादि के द्वारा अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर स्थापित पीठ पर कन्या को बैठाये। स्वयं यजमान उसके सम्मुख आसन पर बैठे। आचमन कर देश-काल का उच्चारण कर 'भगवतीदुर्गाप्रीत्यर्थं कुमारीपूजां करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके उसके पैरों को धोकर उनमें तैलाभ्यङ्ग एवं गन्धादि लगाये। फिर उसे खण्ड (बूरा-पेड़ा-मिश्री), लड्डू, घी, दही, दूध, नारियल की ताजी गिरी बूरा मिलाकर तथा उसके द्वारा चाहा गया भोजन पानीय आदि दे। उसके तृप्त हो जाने पर फिर साधक उन्हें अपने हाथों से आचमन दे। फिर उससे प्रार्थना कर उसके हाथ से दिये गये अक्षतों को अपने शिर पर धारण कर दक्षिणा देकर उसको विदा कर दे (घर भेज दे)।

अथ प्रत्येककुमार्यादिपूजनप्रकारः—

ॐ मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृकारूपधारिणीम्। नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावहयाम्यहम्॥

इत्यावाह्य आसनं पाद्यं चोष्णोदकेन पादौ प्रक्षाल्यार्घ्याचमनीयस्नानवस्त्रकञ्चुकालङ्कारादियथाशक्ति दत्त्वा सुगन्धतैलेनानुलिप्य हरिद्राकुङ्कुमसिन्दूरालक्तकाञ्जनपुष्पमालाधूपदीपादिभिरभ्यर्च्य पायसलड्डुगुडदधिक्षीरादिभिर्भोजयेत्। भोजनकाले नवार्णं सप्तशतीं वा पठेत्। ततो भोजनान्ते पानीयनानाफलताम्बूलदक्षिणानीराजनपुष्पाञ्जलीन्निवेदयेत्। एवमन्यापि पूजयेत्। आवाहने मन्त्रभेदाः—

जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि। पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोऽस्तु ते॥

इति प्रथमां द्विवर्षां पूजयेत्।

त्रिपुरां त्रिगुणाधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम्। त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम्॥

इति त्रिवर्षाम्।

कलात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम्। कल्याणजननीं नित्यं कल्याणीं पूजयाम्यहम्॥

इति चतुर्वर्षाम्।

अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम्। अनन्तभेदां तां तारां रोहिणीं पूजयाम्यहम्॥

इति पञ्चवर्षाम्।

कामचारीं शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम्। कामदां करुणोदारां कालीं सम्पूजयाम्यहम्॥

इति षड्वर्षाम्।

चण्डवीर्यां चण्डमयीं चण्डमुण्डप्रभञ्जनीम्। ब्रह्मेशविष्णुनमितां चण्डिकां पूजयाम्यहम्॥

इति सप्तवर्षाम्।

सुखानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम्। सर्वभूतात्मिकां देवीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम्॥

इत्यष्टवर्षाम्।

दुर्गमे दुस्तरे युद्धे भयदुःखविनाशिनीम्। पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गतिनाशिनीम्॥

इति नववर्षाम्।

सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम्। सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम्॥

इति दशवर्षां नवमीं पूजयेत्। (यथोक्तवर्षालाभे द्विवर्षाद्यामपि पूजयेत्)।

एतैर्मन्त्रैर्द्विवर्षकन्यामारभ्य दशवर्षावधिकुमारीं क्रमेण स्वस्वमन्त्रेण सम्पूज्य नमस्कारं कुर्यात्। एवं कन्यादक्षिणभागे वटुमेकं वामे चैकं तथैकं पुरतः एवं वटुत्रयमपि पूजयेत्।

कन्यापूजामाहात्म्यं देवीपुराणे—

न तथा तुष्यते शक्र होमदानजपेन तु। कुमारीभोजनेनात्र यथा देवी प्रसीदति॥
पितरो वसवो रुद्रा आदित्या गणलोकपाः। सर्वे ते पूजितास्तेन कुमारी येन पूजिता॥

इति कुमारीपूजाविधानम्।

कुमारीपूजन की विशेष विधि—'ॐ मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृकारूपधारिणीम्। नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम्' इस मन्त्र से आवाहन करके कन्या को आसन, पाद्य, उष्णोदक से पादप्रक्षालन, अर्घ्य-आचमनीय, स्नान, वस्त्र, कञ्चुक तथा अलङ्कारादि यथाशक्ति देकर इत्र लगाकर हरिद्रा, कुङ्कुम, सिन्दूर, अलक्तक (महावर), अञ्जन, पुष्पमाला, धूप, दीप आदि से पूजा करके फिर खीर, लड्डू, गुड़, दही, दूध आदि का भोजन प्रदान करे। जब कन्या या कन्यायें भोजन करें तो उस समय साधक नवार्ण मन्त्र का जप करे अथवा सप्तशती का पाठ करता रहे। भोजनोपरान्त कन्याओं को पानीय, फल, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन, पुष्पाञ्जलि आदि निवेदित करे। इसी प्रकार अन्य कन्याओं का भी पूजन करे।

आवाहन में मन्त्रभेद—(१) प्रथम दिन—'जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि। पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोस्तु ते' इस मन्त्र से आवाहन कर प्रथम दिन दो वर्ष की कन्या का पूजन करना चाहिये। यह 'कुमारी' नाम से कही गई है।

(२) द्वितीय दिवस—नवरात्र के द्वितीय दिवस में—'त्रिपुरां त्रिगुणाधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम्। त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम्' इस मन्त्र से आवाहन कर तीन वर्ष की कन्या का पूजन करना चाहिये। इसका नाम 'त्रिमूर्ति' कहा गया है।

(३) तृतीय दिवस—तृतीया तिथि में चार वर्ष की कन्या का आवाहन—'कलात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम्। कल्याणजननीं नित्यं कल्याणीं पूजयाम्यहम्' इस मन्त्र से करके उसका पूजन करे। इसे 'कल्याणी' कहा गया है।

(४) चतुर्थ दिवस—नवरात्र के चौथे दिन पाँच वर्ष की कन्या को—'अणिमादिगुणाधारां अकाराद्यक्षरात्मिकाम्। अनन्तभेदां तां तारां रोहिणीं पूजयाम्यहम्' इस मन्त्र से आवाहित कर पूजन करे। इसको 'रोहिणी' कहा गया है।

(५) पञ्चम दिवस—पाँचवें दिन छः वर्ष की कन्या का आवाहन—'कामचारीं शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम्। कामदां करुणोदारां कालीं सम्पूजयामाम्यहम्॥' इस मन्त्र से करना चाहिये तथा पूजन करे। यह 'काली' कहलाती है।

(६) षष्ठ दिवस—छठे दिन सात वर्ष की कन्या का 'चण्डवीर्यां चण्डमयीं चण्डमुण्डप्रभञ्जनीम्। ब्रह्मेश-विष्णुनमितां चण्डिकां पूजयाम्यहम्' इस मन्त्र से आवाहन-पूजन करना चाहिये। यह 'चण्डिका' कही जाती है।

(७) सातवें दिन—आठ वर्ष की कन्या का पूजन सातवें दिन 'सुखानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम्। सर्वभूतात्मिकां देवीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम्' इस मन्त्र से आवाहन कर करना चाहिये। इसको 'शाम्भवी' कहते हैं।

(८) आठवें दिन—आठवीं तिथि में नव वर्ष की कन्या को 'दुर्गमे दुस्तरे युद्धे भयदुःखविनाशिनीम्। पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गतिनाशिनीम्' इस मन्त्र से आवाहित कर पूजना चाहिये।

(९) नवें दिन—नवमी तिथि में दश वर्ष की कन्या का आवाहन-पूजन 'सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्य-दायिनीम्। सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम्' इस मन्त्र से करना चाहिये। इसे 'सुभद्रा' कहा जाता है।

इस प्रकार के आयुवर्ग की कन्यायें न मिलने पर कन्यापूजन-हेतु दो वर्ष से दश वर्ष तक की कुमारी का चयन करना चाहिये। इस प्रकार प्रत्येक दिन के लिये वर्णित मंत्र से कुमारियों का पूजन कर उन्हें प्रणाम करने के

साथ ही प्रत्येक कन्या के वाम भाग में एक वटुक, दक्षिण भाग में दूसरा वटुक तथा कुमारी के आगे तीसरा बटुक (दो वर्ष से दस वर्ष तक का बालक) बैठाकर उसका भी पूजन करना चाहिये।

देवीपुराण के अनुसार कन्यापूजन का माहात्म्य—हे इन्द्र! जितनी प्रसन्नता देवी को कुमारी-पूजन से होती है, उतनी प्रसन्नता उन्हें होम-दान तथा जप से नहीं होती है। जिसके द्वारा कुमारी का पूजन होता है, उससे सभी देवता तथा पितर प्रसन्न हो जाते हैं।

कामनापरत्वेन चण्डीपाठसङ्ख्या

वाराहीतन्त्रे—

शिव उवाच—

चण्डीपाठफलं देवि शृणुध्व गदतो मम। एकावृत्त्यादिपाठानां यथावत्कथयामि ते॥
उपसर्गोपशान्त्यर्थं त्रिरावृत्तिं पठेन्नरः। ग्रहोपशान्तौ कर्तव्या पञ्चावृत्तिर्वरानने॥
महाभये समुत्पन्ने सप्तावृत्तिमुदीरयेत्। नवावृत्तौ भवेच्छान्तिर्वाजपेयफलं लभेत्॥
राजवश्याय भूत्यै च रुद्रावृत्तिमुदीरयेत्। अर्कावृत्त्या कामसिद्धिर्वैरिहानिश्च जायते॥
मन्वावृत्त्या रिपुर्वश्यस्तथा स्त्री वशतामियात्। सौख्यं पञ्चदशावृत्त्या श्रियमाप्नोति मानवः॥
कल्पावृत्त्या पुत्रपौत्रधनधान्यागमं विदुः। राजभीतिविनाशाय विपक्षोच्चाटनाय च॥
कुर्यात्सप्तदशावृत्तीस्तथाष्टादशकं प्रिये। महाऋणविमोक्षाय विंशावृत्तिं पठेन्नरः॥
पञ्चविंशावर्तनाद्धि भवेद्बन्धविमोक्षणम्। सङ्कटे समनुप्राप्ते दुश्चिकित्स्यागमे सदा॥
जातिध्वंसे कुलोच्छेदे आयुषो नाशमागते। वैरिवृद्धौ व्याधिवृद्धौ धननाशे तथा क्षये॥
तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवातिपातके। कुर्याद्यत्नाच्छतावृत्तिं ततः सम्पद्यते शुभम्॥
विपदस्तस्य नश्यन्ति अन्ते याति परां गतिम्। जयवृद्धौ शतावृत्त्या राज्यवृद्धौ सदा पठेत्॥
मनसा चिन्तितं देवि सिद्धिरष्टोत्तराच्छतात्। शताश्वमेधयज्ञानां फलमाप्नोति सुव्रते॥
सहस्रावर्तनाल्लक्ष्मीरावृणोति स्वयं स्थिरा। भुक्त्वा कामान्यथाकामं नरो मोक्षमवाप्नुयात्॥
यथाश्वमेधः क्रतुषु देवानां च यथा हरिः। स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशतीस्तवः॥
नानःपरतरं स्तोत्रं किञ्चिदस्ति वरानने। भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं पावनानां च पावनम्॥

कामनाभेद से चण्डीपाठ की सङ्ख्या (वाराही तन्त्र में)—श्री शिवजी बोले—हे देवि! मुझसे देवीपाठ (चण्डीपाठ) का फल सुनो; अब मैं एकावृत्ति आदि पाठों के भेद कहता हूँ। उपसर्ग की शान्ति के लिये मनुष्य को चण्डीपाठ की तीन आवृत्तियाँ पढ़नी चाहिये। हे वरानने! ग्रहों की शान्ति के लिये पाँच आवृत्तियाँ करनी चाहिये। जब महाभय उत्पन्न हो तो उस समय सात आवृत्तियाँ पढ़नी चाहिये। यदि नौ आवृत्ति का पाठ हो तो वाजपेय का फल प्राप्त होता है। राजा को वश में करने तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये एकादश आवृत्तियाँ तथा बारह आवृत्ति के पाठ से कामना की पूर्ति तथा वैरियों का नाश हो जाता है। चौदह आवृत्ति पाठ से शत्रु तथा स्त्री वश में हो जाते हैं। पन्द्रह आवृत्ति से सौख्य तथा लक्ष्मी की प्राप्ति साधक को हो जाती है। सोलह आवृत्तियों से पुत्र-पौत्र, धन-धान्य का आगम जानना चाहिये। राजभय के विनाश के लिये सत्रह आवृत्ति तथा विपक्ष के उच्चाटन के लिये अट्ठारह आवृत्ति पाठ करना चाहिये। हे प्रिये! महाऋण से विमोक्ष के लिये मनुष्य को बीस आवृत्तियाँ पढ़नी चाहिये। पच्चीस आवृत्तियों से बन्धमोक्ष हो जाता है। जब घोर सङ्कट उपस्थित हो, जिसका उपाय अति कठिन हो;

स्वजाति का ध्वंस हो रहा हो, आयु का नाश हो रहा हो (मारकेश लगा हो), शत्रुओं की वृद्धि हो, रोग की वृद्धि हो, धननाश हो, अचल सम्पत्ति का क्षय उपस्थित हो, जब त्रिविध उत्पात (दिव्य, अन्तरिक्ष, भौम) उत्पन्न हों अथवा घोर पातक लग गया हो तो यत्नपूर्वक एक सौ आवृत्ति चण्डीपाठ करने से शुभ हो जाता है। उसकी विपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं तथा उसे परमगति प्राप्त होती है। जय की वृद्धि के लिये तथा राज्यवृद्धि के लिये सदैव शतावृत्ति पाठ करना चाहिये। हे देवि! एक सौ आठ आवृत्तियों के पाठ से मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति होती है तथा उसे एक सौ अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है। एक सहस्र पाठ से लक्ष्मी आकर साधक का स्वयं वरण करती है तथा स्थिर हो जाती है एवं मनुष्य भोगों को भोगकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। जिस प्रकार यज्ञों में अश्वमेध यज्ञ है तथा देवों श्री विष्णु भगवान् हैं, स्तोत्रों में उसी प्रकार से श्रीदुर्गासप्तशतीस्तव है। हे वरानने! इससे बढ़कर अन्य कोई दूसरा स्तोत्र नहीं है, जैसा कि सप्तशतीस्तोत्र है।

हरगौरीतन्त्रे—

श्रीकामः पुत्रकामो वा सृष्टिमार्गक्रमेण तु। सावर्णिः सूर्यतनयः सावर्णिर्भविता मनुः॥
जपेच्छक्रादिमारभ्य शुम्भदैत्यवधावपि। आद्यमारभ्य प्रजपेत्पश्चाच्छेषं समापयेत्॥
शान्त्यादिकामः सर्वत्र स्थितिमार्गक्रमेण तु। स्थितिपाठः सर्वकामे मुक्तिकामे च संहृतिः॥
संहारे चान्त्यमारभ्य पश्चादादि समापयेत्।

हरगौरी तन्त्र के अनुसार सप्तशती का महत्त्व—लक्ष्मी की कामना वाला तथा पुत्र की इच्छा वाला साधक सृष्टिमार्गक्रम से 'सावर्णिः सूर्यतनयो' से लेकर 'सावर्णिर्भविता मनुः' पर्यन्त; फिर 'शक्रादयः सुरगणाः (चतुर्थाध्याय) से आरम्भ कर 'शुम्भदैत्यवधश्च' पर्यन्त (दशमाध्यायान्त) पाठ करे। फिर शेष पाठ को समाप्त करे। शान्ति आदि की इच्छा से स्थितिमार्गक्रम से पाठ करना चाहिये। स्थितिपाठ सभी कामनाओं के लिये तथा मुक्ति की कामना के लिये संहृति (संहार) पाठ करना चाहिये। संहार पाठ (संहृतिपाठ) में अन्त्य से आरम्भ कर अन्त में समाप्त करना चाहिये।

विमर्श—यहाँ कामनाभेद से तीन प्रकार का पाठ कहा गया है; उसका स्पष्टीकरण आवश्यक होने से यहाँ दिया जा रहा है—

(१) सृष्टिमार्ग से पाठ—इसमें प्रथम अध्याय के प्रथम श्लोक से प्रारम्भ कर तेरहवें अध्याय के अन्तिम श्लोक तक क्रम से पाठ करते हैं। यह पुत्र एवं लक्ष्मी की कामना से करना चाहिये।

(२) स्थितिमार्ग या स्थितिक्रम पाठ—इसमें पहिले पञ्चमाध्याय (पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपते) से प्रारम्भ करके और तेरहवें अध्याय के अन्तिम श्लोक तक कुल नौ अध्यायों का पाठ करने के उपरान्त प्रथमाध्याय से चतुर्थाध्याय (शक्रादि स्तुति अध्याय) तक पाठ करना चाहिये। यह शान्तिकामी के लिये होता है।

(३) संहृतिमार्ग (संहारक्रम)—इसमें सर्वप्रथम त्रयोदशाध्याय के अन्तिम श्लोक 'एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः। सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः॥' से आरम्भ कर संहारक्रम (विलोमक्रम से) प्रथमाध्याय के 'सावर्णिः सूर्यतनयो०' श्लोक (प्रथम श्लोक) तक पढ़े। यह संहारक्रम है, जिसे मुक्तिकामी को अपनाना चाहिये। 'दुर्गोपासनाकल्पद्रुम' ग्रन्थ के सङ्कलनकर्त्ता श्रीहरिकृष्ण शर्मा ने हरगौरी तन्त्र से उद्धृत इन श्लोकों की संस्कृत टीका में यह बात लिखी है।

आवृत्तिभेदेन दक्षिणापि तत्रैव—

पञ्चस्वर्णाः शतावृत्तौ पक्षावृत्तौ तु तत्त्रयम्। पञ्चावृत्तौ स्वर्णमेकं त्रिरावृत्तौ तदर्धकम्॥
एकावृत्तौ पादमेकं दद्याद्वा शक्तितो बुधः॥

आवृत्ति के भेद से दक्षिणा—एक सौ आवृत्ति पाठ पर पाँच स्वर्ण दक्षिणा देनी चाहिये। पन्द्रह आवृत्तियों पर तीन स्वर्ण तथा पाँच आवृत्ति पर एक स्वर्ण, तीन आवृत्ति पर आधा स्वर्ण तथा एक आवृत्ति पर चतुर्थांश स्वर्ण दक्षिणा देनी चाहिये। अथवा समझदार यजमान को अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा देनी चाहिये।

अथ सम्पुटितहोमे मन्त्रसङ्ख्या—

मन्त्रपुटं बीजपुटं दुर्गास्तोत्रं पठेत्सदा। मन्त्रबीजपुटा दुर्गा कामनासिद्धिदा सदा॥
होमकाले सदा मन्त्रं दुर्गामन्त्रं पृथक् हुनेत्। कामनाबीजसंयोगो दुर्गामन्त्रेण संहुनेत्॥
दुर्गास्तवनमन्त्राणां सङ्ख्या सप्तशतं भवेत्। कामनामन्त्रसङ्ख्या च शतं चैव चतुर्दश॥
मध्ये मन्त्रान् सप्तशतं होमकाले तु योजयेत्। पाठे मन्त्रपुटं वाच्यं होममन्त्राः पृथक्पृथक्॥
होमसङ्ख्या च मन्त्राणां शतं वै चैकविंशतिः। पाठे बीजपुटं वाच्यं होमे बीजपुटं हुनेत्॥

सम्पुटित होम में मन्त्रसङ्ख्या—सप्तशती पाठ को मन्त्रपुट (लौकिक या वैदिक मन्त्र) तथा बीजपुट (ऐं ह्रीं क्लीं इत्यादि) से पुटित करके करना चाहिये। मन्त्र एवं बीज से पुटित दुर्गासप्तशती सदैव कामनाओं को सफल करती है। होम के समय सदैव बीज के संयोग से युक्त मन्त्र से ही होम करना चाहिये तथा सप्तशती के मन्त्रों से पृथक् होम करना चाहिये। इस प्रकार उनकी आहुतियों की सङ्ख्या ७००+७००= १४०० हो जाती है। यह सङ्ख्या कामनापूर्वक होम के लिये होती है। पाठमन्त्र तथा होममन्त्रों की सङ्ख्या पृथक्-पृथक् होती है।

अथ कवचाहुतिनिषेधः तन्त्रान्तरे—

चण्डीस्तवे प्रतिश्लोकमेकाहुतिरिहेष्यते। रक्षाकवचगैर्मन्त्रैर्होमं तत्र न कारयेत्॥
मौर्ख्यात्कवचगैर्मन्त्रैः प्रतिश्लोकं जुहोति यः। स्याद्देहपतनं तस्य नरकं प्रतिपद्यते॥
अन्धकाख्यो महादैत्यो दुर्गाहोमपरायणः। कवचाहुतिजात्पापान्महेशेन निपातितः॥

अत्र रक्षाकवचगैर्मन्त्रैरित्यनेन शूलेन पाहि नो देवीत्यादिचतुर्मन्त्रैर्होमं न कारयेदिति ज्ञातव्यम्। केचित्कवचादित्रयस्य रहस्यत्रयस्य चापि होमं वर्जयन्ति।

कवचाहुति का निषेध (तन्त्रान्तर से)—चण्डीस्तव में प्रत्येक श्लोक से एक-एक आहुति होम करना चाहिये; परन्तु रक्षाकवच के 'शूलेन पाहि नो देवी०' इत्यादि चार मन्त्रों से होम नहीं करना चाहिये। जो मूर्खतापूर्वक कवच के प्रत्येक मन्त्र से हवन करता है, वह मरने के पश्चात् अवश्य ही नरक को जाता है; क्योंकि अन्धक नामक दैत्य ने दुर्गाहोम करते समय कवच के मन्त्रों (श्लोकों) से आहुति दी थी। इसी कारण वह भगवान् शिव के हाथों मारा गया था। यहाँ कुछ का मत है कि कवच के साथ तीनों रहस्यों के श्लोकों से भी होम नहीं करना चाहिये।

अथ कामनाभेदेन दुर्गापाठे सम्पुटिमन्त्रप्रयोगः कात्यायनीतन्त्रे—

प्रतिश्लोकमाद्यन्तयोः प्रणवेन जपेन्मन्त्रसिद्धिः॥ १॥ प्रणवं व्याहृतित्रयं च श्लोकादौ पठित्वा जपेन्मन्त्रसिद्धिः॥ २॥ सप्रणवां सव्याहृतिकां गायत्रीमादावन्ते वा कृत्वा श्लोकं जपेत्तदा महाफलम्॥ ३॥ प्रतिश्लोकमादावन्ते 'जातवेदसे' इति ऋचं जपेत् सर्वकामसिद्धिः॥ ४॥ अपमृत्युवारणाय रोगारिक्षयमृत्यून्मूलनमभीप्सितो सर्वापद्विनिवारणाय च शताक्षरत्र्यम्बकमन्त्रेण सम्पुटीकृत्य श्लोकं पठेत्(गायत्री० जातवेदसे० त्र्यम्बकेतिमन्त्र त्रयमिलितः शताक्षरः)॥ ५॥ प्रतिश्लोकं 'शरणागतदीनार्त्त'—इति श्लोकं पठेत्सर्वकार्यसिद्धिः॥ ६॥ प्रतिश्लोकम् 'करोतु सा नः शुभ०', इत्यर्धं पठेत्सर्वकामाप्तिः॥ ७॥ स्वाभीष्टवरप्राप्त्यै 'एवं देव्या वरं लब्ध्वा' इति श्लोकं पठेत्॥ ८॥ सर्वापत्तिवारणाय प्रतिश्लोकम् 'दुर्गे स्मृता' इति पठेत्। अस्य केवलस्यापि श्लोकस्य कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः॥ ९॥ 'सर्वा बाधा'

इत्यस्य लक्षजपेऽपि पूर्वोक्तं फलम्॥ १०॥ 'इत्थं यदा यदा बाधा' इति श्लोकस्य लक्षजपे महामारीशान्तिः॥ ११॥ 'कांसोस्मि' इत्यृचः प्रतिश्लोकं पठेल्लक्ष्मीप्राप्तिः॥ १२॥ 'रोगानशेषान्' इति श्लोकस्य प्रतिश्लोकं पाठे सकलरोगनाशः तनमन्त्रजपेऽपि सः॥ १३॥ 'इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरा' इति प्रतिश्लोकं पाठे पृथग्जपे वा विद्याप्राप्तिर्वाग्-वैकृतनाशश्च॥ १४॥ 'भगवत्या कृतं सर्वम्०' इत्यादिद्वादशोत्तरशताक्षरीमन्त्रः सर्वकामदः सर्वापन्निवारणश्च॥ १५॥ 'देवि प्रपन्नार्तिहरे' इति श्लोकस्य यथाकार्यं लक्षायुतसहस्रशतान्यतमे जपे प्रतिश्लोकं पाठे वा सर्वापन्निवृत्तिः सर्वकार्ये सिद्धिः॥ १६॥ एषु प्रयोगेषु प्रतिश्लोकं दीपाग्रे केवलमेव वा नमस्कारकरणे अतिशीघ्रं सिद्धिः॥ १७॥ प्रतिश्लोकं क्लीं कामबीजसम्पुटितस्यैकचत्वारिंशद्दिनं त्रिरावृत्तौ पुत्रप्राप्तिः॥ १८॥ ह्रीं मायाबीजपुटितस्य फट्पल्लवसहितस्य सप्तदिनपर्यन्तं त्रयोदशावृत्तौ उच्चाटनसिद्धिः सर्वोपद्रवनाशश्च॥ १९॥ श्रींलक्ष्मीबीजपुटितस्य एकोन-पञ्चाशद्दिनपर्यन्तं पञ्चदशावृत्तौ लक्ष्मीप्राप्तिः॥ २०॥ ऐं बीजसम्पुटितस्य शतावृत्त्या विद्याप्राप्तिः॥ २१॥

इति कामनापरत्वे सम्पुटितमन्त्रप्रयोगः। ॐ ह्रीं ऐं क्लीं श्रीं जगदम्बिकायै नमः।

कामनाभेद से दुर्गापाठ में सम्पुटित मन्त्र का प्रयोग (कात्यायनी तन्त्र से)—प्रत्येक श्लोक के आदि तथा अन्त में प्रणव (ॐ) जपने से वह सम्पुटयोग्य मन्त्र सिद्ध हो जाता है। श्लोक के आदि में प्रणव तथा तीनों व्याहृति (ॐ भूर्भुवः स्वः) लगाकर जपने से भी मन्त्र सिद्ध होता है। सप्रणव सव्याहृति गायत्री मन्त्र को आदि और अन्त में करके यदि श्लोकों का जप किया जाय तो भी महाफल होता है। प्रति श्लोक के आदि अन्त में 'जातवेदसे०' ऋचा लगाकर जपने से समस्त कामनाओं की सिद्धि होती है। अपमृत्यु को टालने के लिये, रोग तथा शत्रुनाशार्थ, सर्वापद् निवारणार्थ शताक्षर त्र्यम्बक मन्त्र से (गायत्री मन्त्र + जातवेदसे मंत्र + त्र्यम्बक मन्त्र तीनों मिलाकर २०० अक्षर) सम्पुटित पाठ करना चाहिये। प्रतिश्लोक को 'शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे। सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥' इस श्लोक से सम्पुट करने से सर्वकार्यसिद्धि होती है। प्रतिश्लोक 'करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।' इस आधे श्लोक का सम्पुट लगाकर पाठ करने से सर्वकामनाओं की प्राप्ति होती है। अभीष्ट वर की प्राप्ति-हेतु 'एवं देव्या वरं लब्ध्वा०' इस पूरे श्लोक का सम्पुट लगाना चाहिये। सर्वापत्ति के निवारण-हेतु 'दुर्गे स्मृता भीतिमशेषजन्तोः' इत्यादि श्लोक का सम्पुट लगाते हैं अथवा केवल इसी मन्त्र को एक सौ अथवा एक सहस्र अथवा एक अयुत लगाकर पाठ करने से अथवा इसी का एक लाख जप करने से भी पूर्वोक्त फल होता है। 'इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।' इत्यादि श्लोक का सम्पुट अथवा लक्ष जप महामारी-नाशक होता है। 'कांसोऽस्मि०' इस ऋचा का सम्पुट लक्ष्मीदायक है। 'रोगानशेषान्०' इत्यादि श्लोक का सम्पुट सकल रोगनाश के लिये होता है। 'इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरा०' इत्यादि श्लोक का सम्पुट अथवा पृथग्जप 'विद्याप्रपन्नार्तिहरे' इत्यादि श्लोक के सम्पुट अथवा लक्ष जप से सर्वापदाओं को निवृत्ति होती है। इन प्रयोगों में यदि सप्तशती के प्रत्येक श्लोक के अन्त में अखण्ड ज्योति अथवा दीपक को नमस्कार किया जाय तो अतिशीघ्र सिद्धि होती है। यदि सप्तशती के प्रति श्लोक को 'क्लीं' इस कामबीज से सम्पुटित का पाठ किया जाय तथा ४१-४१ दिनों की तीन आवृत्तियाँ हों तो पुत्र की प्राप्ति होती है। यदि 'ह्रीं' मायाबीज से सम्पुटित तथा 'फट्' पल्लवसहित सप्तशतीपाठ की सात दिन-पर्यन्त तेरह आवृत्ति की जाय तो उच्चाटन में सिद्धि होती है तथा सभी उपद्रव नष्ट होते हैं। लक्ष्मीबीज से पुटित सप्तशती का पाठ उनचास (४९) दिनों तक करके उसकी पन्द्रह आवृत्ति करने से लक्ष्मी प्राप्त होती है। यदि 'ऐं' बीज से सम्पुटित एक सौ आवृत्ति सप्तशती पाठ की पढ़ी जाय तो विद्या की प्राप्ति होती है।

शतचण्डीविधानम्

शान्तिसारे रुद्रयामले च—

शतचण्डीविधानं च प्रोच्यमानं शृणुष्व तत्। सर्वोपद्रवनाशार्थं शतचण्डीं समारभेत्॥

षोडशस्तम्भसंयुक्तं मण्डपं पल्लवोज्ज्वलम्। वसुकोणयुतां वेदीं मध्ये कुर्यात्त्रिभागतः॥
पक्वेष्टरचितां रम्यामुच्छ्राये हस्तसम्मिताम्। पञ्चवर्णरजोभिश्च कुर्यान्मण्डलकं शुभम्॥
पञ्चवर्णवितानं च किङ्कणीजालमण्डितम्। आचार्येण समं विप्रान् वरयेद्दश सुव्रतान्॥
ऐशान्यां स्थापयेत्कुम्भं पूर्वोक्तविधिना हरेः। वारुण्यां च प्रकर्त्तव्यं कुण्डं लक्षणलक्षितम्॥
मूर्तिं देव्याः प्रकुर्वीत सुवर्णस्य पलेन वै। तदर्द्धेन तदर्द्धेन तदर्द्धेन महामते॥
अष्टादशभुजां देवीं कुर्याद्वाष्टकरामपि। पट्टकूलयुगच्छन्नां वेदीमध्ये निधापयेत्॥
देवीं सम्पूज्य विधिवज्जपं कुर्युर्दश द्विजाः। शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवार्णकम्॥
चण्डीसप्तशतीमध्ये सम्पुटोऽयमुदाहृतः। एकं द्वे त्रीणि चत्वारि जपेद्दिनचतुष्टयम्।
रूपाणि क्रमशस्तद्वत्पूजनादिकमाचरेत्।
पञ्चमे दिवसे प्रातर्होमं कुर्याद्विधानतः। गुडूचीपायसं दूर्वातिलाञ्छुक्लान्यवानपि॥
चण्डीपाठस्य होमे तु प्रतिश्लोकं दशांशतः। होमं कुर्याद् ग्रहादिभ्यश्चर्वाज्यसमिधः क्रमात्॥
हुत्वा पूर्णाहुतिं दद्याद्द्विजेभ्यो दक्षिणां क्रमात्। कपिलां गां नीलमणिं श्वेताश्वं छत्रचामरम्॥
अभिषेकं ततः कुर्युर्यजमानस्य ऋत्विजः। एवं कृते महेशान सर्वसिद्धिः प्रजायते॥ इति।

शतचण्डी का विधान (शान्तिसार एवं रुद्रयामल के अनुसार)—शतचण्डी का विधान अब कहा जाता है, उसे सुनो। सभी उपद्रवों के नाश के लिये शतचण्डी का आरम्भ करे। इसके लिये सोलह खम्भों का पल्लवों से सुसज्जित मण्डप बनाये, जिसमें भूमि के (नौ) विभाग करके मध्य में आठ कोणों की पकी हुई ईंटों से एक हाथ ऊँची वेदी बनाकर उस सुन्दर वेदी पर पाँच प्रकार के रङ्गों से शुभ मण्डल बनाकर उसके ऊपर पाँच रङ्ग का वितान लगाकर उसे घुँघुरुओं आदि से सजा दे। आचार्य के समान अर्हता वाले दश सदाचारी ब्राह्मणों का वरण करे। वेदी के ईशान कोण में पूर्वोक्त विधि से रुद्रकलश स्थापित करे। मण्डपभूमि के पश्चिम भाग में सुन्दर लक्षणों से युक्त कुण्ड बनाये। देवी की एक पल भार की सुवर्णप्रतिमा बनाये अथवा आधे या चतुर्थांश पलभार की प्रतिमा बनानी चाहिये। देवी की अठारह भुजाओं अथवा आठ भुजाओं की प्रतिमा बनाकर दो रेशमी वस्त्रों से आच्छादित कर वेदी के मध्य में प्रतिष्ठित कराये। देवी की विधिवत् पूजा करके फिर दश ब्राह्मणों को जप करना चाहिये। सप्तशती पाठ के आदि तथा अन्त में एक सौ नवार्ण मन्त्र का जप करना चाहिये। यही सम्पुट कहा गया है। प्रथम दिन प्रत्येक ब्राह्मण एक पाठ, दूसरे दिन दो पाठ, तीसरे दिन तीन पाठ तथा चौथे दिन चार पाठ करे और उसी के अनुसार पूजन भी करे। पाँचवें दिन प्रातःकाल विधिपूर्वक गिलोय, खीर, दूर्वा, काले तिल, चावल तथा जौ का होम करे। चण्डीपाठ के प्रतिश्लोक की जपसङ्ख्या के दशांश होम करना चाहिये। नवग्रहादि के लिये भी चरु, आज्य तथा समिधाओं से होम करना चाहिये। होम के अन्त में पूर्णाहुति होम कर ब्राह्मणों को दक्षिणा देनी चाहिये। कपिला गाय, नीलमणि, श्वेत अश्व, छत्र, चामर आदि का दान कर फिर ऋत्विजों को यजमान का अभिषेक करना चाहिये। ऐसा करने से सर्वसिद्धि मिलती है।

मन्त्रमहोदधौ विशेषः—

शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम्॥
नृपोपद्रव आपन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने। अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये॥
सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते। रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्रसमृद्धयः॥
शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम्। मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्य्यात्सध्वजतोरणम्॥

तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा। स्नात्वा नित्यकृतिं कृत्वा वृणुयाद्दश वाडवान्॥
जितेन्द्रियान्सदाचारान्कुलीनान्सत्यवादिनः। व्युत्पन्नाश्चण्डिकापाठरताँल्लज्जादयावतः॥
मधुपर्कविधानेन वस्त्रस्वर्णादिदानतः। जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम्॥
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः। भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम्॥
मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सुचेतसः। नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं पृथक्॥
यजमानः पूजयेच्च कन्यानां दशकं शुभम्। द्विवर्षाद्या दशाब्दां ताः कुमारीः परिपूजयेत्॥
वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले। घटं संस्थाप्य विधिवत्तत्रावाह्यार्चयेच्छिवाम्॥
तदग्रे कन्यकाश्चापि पूजयेद्ब्राह्मणानपि। उपचारैस्तु विविधैः पूर्वोक्तावरणान्यपि॥
एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चमे होममाचरेत्। पायसान्नैस्त्रिमध्वाक्तैर्द्राक्षारम्भाफलैरपि॥
मातुलिङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलैः पुरैस्तिलैः। जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुरवस्तुभिः॥
सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिश्लोकं हुतं चरेत्। अयुतं च नवार्णेन स्थापिताग्नौ विधानतः॥
कृत्वावरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः। कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग्देवमग्निं विसर्ज्य च॥
अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः। निष्कं सुवर्णमथ वा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत्॥
भोजयेच्च शतं विप्रान्भक्ष्यभोज्यैः पृथग्विधैः। तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्त्वा गृह्णीयादाशिषस्ततः॥
एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः। राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत सः।
एतद्दशगुणं कुर्याच्चण्डीसाहस्रजं विधिः॥

मन्त्रमहोदधि के अनुसार शतचण्डी-विधान—अब मैं मनुष्यों की प्रसन्नता के लिये शतचण्डी का विधान कहता हूँ। जब राजविग्रह, भूकम्प, दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि, अनावृष्टि तथा परचक्र (विदेशी आक्रमण) की स्थिति हो तब इस विधान से शतचण्डी करने पर सभी विघ्न शान्त हो जाते हैं। रोगों एवं शत्रुओं का नाश होता है तथा धन एवं पुत्रों की समृद्धि होती है। शङ्कर अथवा देवीजी के मन्दिर के समीप शुभ वेदी एवं द्वारों से युक्त मण्डप बनाना चाहिये तथा उसे ध्वजों एवं तोरणों से सजाना चाहिये। उस मण्डप के नौ भागों में भूमि पर पूर्व में अथवा पश्चिम में अथवा मध्य में कुण्ड बनाना चाहिये। प्रारम्भ के दिन नित्यकर्म पूजनादि करके दश ब्राह्मणों का वरण करना चाहिये (आचार्य सहित एकादश ब्राह्मण होने चाहिये)। वे ब्राह्मण जितेन्द्रिय, सत्यवादी तथा कुलीन हों। वे लज्जा एवं दया से युक्त होकर चण्डीपाठ में निपुण हों, उनका वरण मधुपर्क, वस्त्र, स्वर्णादि दानपूर्वक करना चाहिये। उन्हें जप-पाठ के लिये आसन, माला तथा भोजन भी देना चाहिये। उन विप्रों को हविष्यान्न का भोजन करते हुए तथा भूमि पर सोते हुए चण्डी का जप-पाठ करना चाहिये। प्रत्येक ब्राह्मण को मार्कण्डेय पुराणोक्त श्रीदुर्गासप्तशती के दश-दश पाठ एवं जप करने चाहिये। नवार्ण मन्त्र का जप पृथक् से करना चाहिये। यजमान को दश कन्याओं का पूजन करना चाहिये। वे कन्याएँ दो वर्ष से लेकर क्रमशः दश वर्ष तक की होनी चाहिये। वेदी में सर्वतोभद्र मण्डल बनाकर घटस्थापन करके उस पर विधिपूर्वक देवी का पूजन करना चाहिये। उसके आगे कन्याओं तथा ब्राह्मणों का भी पूजन करना चाहिये। पूजन विविध उपचारों के साथ करना चाहिये तथा यन्त्र के आवरण की भी पूजा करना चाहिये। इस प्रकार चार दिनों तक करके पाँचवें दिन होम करना चाहिये। खीर, गुड़, शर्करा, मधु मिलाकर द्राक्षा, केला का फल, बिजौरा नीबू, ईख के टुकड़े, नारियल, काले तिल, जायफल, आम्रफल तथा अन्य मधुर पदार्थों से सप्तशती के प्रत्येक श्लोक से दश आवृत्ति होम करना चाहिये। नवार्ण मन्त्र से अयुत (दश सहस्र) होम करना चाहिये। आवरण देवताओं का होम उनके नाममन्त्र से करके पूर्णाहुति सम्पन्न कर अग्नि का विसर्जन करना चाहिये। फिर कलशोदक से ब्राह्मण लोगों को

यजमान का अभिषेक करना चाहिये। फिर प्रत्येक ब्राह्मण को एक निष्क सुवर्ण अथवा यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये। एक सौ ब्राह्मणों को भोजन कराकर उनको भी दक्षिणा देनी चाहिये। फिर ब्राह्मणों का आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिये। ऐसा करने से सभी उपद्रव नष्ट हो जाते हैं तथा संसार वश में हो जाता है। इससे राज्य, धन, पुत्र तथा अभीष्ट की प्राप्ति होती है। सहस्रचण्डी में इससे दशगुना किया जाता है।

क्रोडतन्त्रे तु विशेषः—

यदा यदा सतां हानिरात्मनो ग्लानिरेव च। तदा कार्या शतावृत्ती रिपुघ्ना भूतिवर्धना॥
दुःस्वप्नदर्शने घोरे महामारीसमुद्भवे। पुष्टिप्रदा शतावृत्तिः कार्या चायुःक्षये तथा॥
महाभये छेदयोगे दुर्भिक्षे मरणेऽपि च। कुर्यात्तत्र शतावृत्तिं देवीमाहात्म्यमुत्तमम्॥
अद्भुते च समुत्पन्ने बान्धवानां महोत्सवे। कुर्याच्चण्डीशतावृत्तिं सर्वसम्पत्तिकारणम्॥
शतावृत्त्या भवेदायुः शतावृत्त्या समागमः। वश्या भवन्ति राजानः श्रियमाप्नोति सम्पदा॥
धनार्थी प्राप्नुयादर्थं पुत्रकामो लभेत्सुतम्। विद्यार्थी प्राप्नुयाद्विद्यां रोगी रोगात्प्रमुच्यते॥
चतुर्वर्गफलावाप्तिकारणं रिपुनाशनम्। चण्डीशतावृत्तिफलं नास्ति यज्ञे वरानने॥
विधिमत्र प्रवक्ष्यामि शृणुष्व वरवर्णिनि।

क्रोडतन्त्र के अनुसार शतचण्डी की विशेष विधि—जब सज्जनों को हानि, आत्मग्लानि प्राप्त हो तब शतचण्डी का आयोजन शत्रुनाशक तथा भूतिवर्धक (ऐश्वर्य बढ़ाने वाला) होता है। घोर दुःस्वप्न-दर्शन में, महामारी फैलने पर शतचण्डी का आयोजन पुष्टिप्रद होता है। आयुक्षय में भी इसका आयोजन करना चाहिये। महाभय, मारकाट का भय, दुर्भिक्ष, मरण में श्रीदुर्गासप्तशती की एक सौ आवृत्तियाँ करनी चाहिये। अद्भुत दर्शन होने पर, बान्धवों के महोत्सव में शतचण्डी करने पर सर्वसम्पत्ति प्राप्त होती है। चण्डी की शतावृत्ति से आयु बढ़ती है, बन्धु-बान्धव एवं सम्पत्ति का समागम होता है। राजा लोग वश में हो जाते हैं तथा श्री-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। धनार्थी को धन तथा पुत्रार्थी को पुत्र मिलता है। विद्यार्थी को विद्या प्राप्त होती है तथा रोगी का रोग दूर हो जाता है। शतचण्डी का अनुष्ठान चतुर्वर्ग (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) की प्राप्ति कराता है। हे वरानने! शतचण्डी के समान उत्तम फल किसी अन्य यज्ञ से नहीं मिलता है। अब उसकी विधि को कहता हूँ, उसे सुनो।

निमन्त्रयेत पूर्वेद्युर्विप्रान्विद्यासमन्वितान्॥
अलोलुपानृजूञ्शान्तान्देव्या भक्तिसमन्वितान्। मन्त्रोपतन्त्रतन्त्रज्ञाञ्शतावृत्तौ नियोजयेत्॥
उत्तराशास्थिते हंसे शुक्लपक्षे तथा शुभे। ज्ञार्केन्दुभृगुजीवेषु सुयोगे सुतिथौ तथा॥
पातक्रकचघण्टादिदोषहीने स्थिरोदये। न विदध्याद्धरौ सुते भूकम्पाकालवर्षणे॥
वज्रपाते महोत्पाते गुर्वादित्यादिके तथा। महागुरौ विपन्ने च संवेशे कार्यवस्तुनः॥
शतावृत्त्यादियागं तु न विदध्यात्कदाचन। त्रिपञ्चसप्तभिर्वापि नवैकादशभिस्तथा॥
अदीर्घदिवसैः क्षिप्रं विदध्याच्चण्डिकामखम्। अयुग्मब्राह्मणैः कार्या शतावृत्तिः सुसिद्धये॥
त्रिपञ्चसप्तभिर्वापि विप्रैः पञ्चदशैरपि। देवीमाहात्म्यपठनं युग्मैर्विप्रैः कृतं तु यत्॥
निष्फलं च भवेत्सर्वं भूतिनाशः प्रजायते।

प्रारम्भ के एक दिन पूर्व ही विद्वान्, अलोलुप, ऋजु (ईमानदार), शान्त, देवी की भक्ति से युक्त, मन्त्र-तन्त्र को जानने वाले ब्राह्मणों को निमन्त्रण देकर शतचण्डी-हेतु बुलाकर उन्हें नियुक्त करे। जब सूर्य उत्तरायण में हों तब चान्द्रमास के शुक्लपक्ष में बुधवार-रविवार-सोमवार-शुक्रवार-गुरुवार में से किसी वार के साथ सुतिथि में, सुयोग

में, व्यतिपात, क्रकच, घण्टादि कुयोगों से रहित समय में, स्थिर लग्न में शतचण्डी का प्रारम्भ करना चाहिये। विष्णुशयन, भूकम्प, अकालवृष्टि, वज्रपात (बिजली गिरने महोत्पात, गुर्वादित्य के समय, गुरु-शुक्र के अस्त में शतचण्डी यज्ञानि नहीं करना चाहिये। शतचण्डी की अवधि तीन दिन, अथवा पाँच दिन, अथवा सात दिन अथवा नौ दिन अथवा ग्यारह दिन रखनी चाहये। इससे अधिक दिन न रखें। इसके लिये ब्राह्मणों की सङ्ख्या विषम (पाँच, सात, नौ, ग्यारह) होनी चाहिये अथवा पन्द्रह ब्राह्मण हों। जो समसंख्यक ब्राह्मणों से देवीपाठ कराता है, तो उसका वह कार्य निष्फल हो जाता है तथा उसका ऐश्वर्य नष्ट होता है।

अष्टमी नवमी वापि यदि स्याद्वा चतुर्दशी॥
शतावृत्तिर्नवावृत्तिः पक्षावृत्तिः क्रमेण च। शताश्वमेधगोमेधवाजपेयफलप्रदा ॥
अतः किं बहुनोक्तेन चण्डीपाठफलं प्रिये। प्रत्येकावर्तनं देवि हयमेधेन सम्मितम्॥
इति शतचण्डीविधानम्।

अष्टमी, नवमी अथवा चतुर्दशी तिथियों में क्रमशः शतावृत्ति, नवावृत्ति तथा पञ्चदशावृत्ति करने पर क्रमशः शताश्वमेध, गोमेध तथा वाजपेय यज्ञों का फल मिलता है। हे प्रिये! चण्डीपाठ के सम्बन्ध में अधिक क्या कहा जाय, इसका तो प्रत्येक आवर्त्तन ही अश्वमेध यज्ञ के समान होता है।

विमर्श—यहाँ जो उत्पात क्रकच आदि निषिद्ध लिखे हैं, उनको जानने का कोष्ठक तथा उनके परिहार का कोष्ठक दिया जा रहा है—

卐 तिथिवारनक्षत्रादिषु शुभाऽशुभयोगाः कोष्ठकम् 卐

योग	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	क्रम
चर. क्रकच दग्ध.	पू.भा. १२ ति. १२ ति.	भरणी ११ ११	आर्द्रा १० ५	मघा ९ ३	चित्रा ८ ६	ज्येष्ठा ७ ८	अभि. ६ ९	१ २ ३
मृत्युदा.	१ ६ ११	२ ७ १२	१ ६ ११	३ ८ १३	४ ९ १४	२ ७ १२	५ १० १५	४
सिद्धि	०	०	३ ८ १३	२ ७ १३	५ १० १५	१ ६ ११	४ ९ १४	५
उत्पात मृत्यु काण. सिद्धिः	विशा. अनु. ज्ये. मूल	पू.षा. उत्त.षा. अभि. श्रव.	धनि. शत. पू.भा. उ.भा.	रेव. अश्वि. भर. कृति.	रोहि. मृग. आर्द्रा पुन.	पुष्य. आश्ले. मघा पू.फा.	उ.फा. हस्त चित्रा स्वाति	६ ७ ८ ९
यमदष्ट	मघा धनि.	मूल विशा.	कृति. रोहि.	पू.षा. पुन.	उत्तराषा. अश्वि.	रोहि. अनु.	श्रव. शत.	१०
यमघण्ट मूसल. दग्ध अमृसि.	मघा अभि. भरणी हस्त	विशा. पू.भा. चित्रा मृग.	आर्द्रा भर. उत्त.षा. अश्वि	मूल आर्द्रा धनि. अनु.	कृति. मघा उत्त.फा. पुष्य	रोहि. चित्रा ज्ये. रेव.	हस्त ज्येष्ठा रेवती रोहि.	११ १२ १३ १४

॥ दोष समूह एवं कुयोगनाशक रवियोग चक्र ॥

सूर्य नक्षत्र	दैनिक चन्द्रनक्षत्र गणनाक्रम			रवियोग कोष्ठ रचना		
अश्विनी	रोहिणी	आर्द्रा	आश्लेषा	मघा	हस्त	पूर्वा षा.
भरणी	मृगशिरा	पुनर्वसु	मघा	पूर्वा.फा.	चित्रा	उत्त.षा.
कृत्तिका	आर्द्रा	पुष्य	पूर्वा फा.	उत्त.फा.	स्वाति	श्रवण
रोहिणी	पुनर्वसु	आश्लेषा	उत्त.फा.	हस्त	विशाखा	धनिष्ठा
मृगशिरा	पुष्य	मघा	हस्त	चित्रा	अनुराधा	शतभिषा
आर्द्रा	आश्लेषा	पूर्वा.फा.	चित्रा	स्वाति	ज्येष्ठा	पूर्वा. भा.
पुनर्वसु	मघा	उत्त.फा.	स्वाति	विशाखा	मूल	उत्त.भा.

सूर्य नक्षत्र	दैनिक चन्द्रनक्षत्र गणनाक्रम			रवियोग कोष्ठ रचना		
पुष्य	पूर्वा.फा.	हस्त	विशाखा	अनुराधा	पूर्वा षा.	रेवती
आश्लेषा	उत्त.फा.	चित्रा	अनुराधा	ज्येष्ठा	उत्त.षा.	अश्विनी
मघा	हस्त	स्वाति	ज्येष्ठा	मूल	श्रवण	भरणी
पूर्वा.फा.	चित्रा	विशाखा	मूल	पूर्वा षा.	धनिष्ठा	कृत्तिका
उत्त. फा.	स्वाति	अनुराधा	पूर्वा षा.	उत्त. षा.	शतभिषा	रोहिणी
हस्त	विशाखा	ज्येष्ठा	उत्त.षा.	श्रवण	पूर्वा.भा.	मृगशिरा
चित्रा	अनुराधा	मूल	श्रवण	धनिष्ठा	उत्त.भा.	आर्द्रा
स्वाति	ज्येष्ठा	पूर्वा षा.	धनिष्ठा	शतभिषा	रेवती	पुनर्वसु
विशाखा	मूल	उत्त.षा.	शतभिषा	पूर्वा.भा.	अश्विनी	पुष्य
अनुराधा	पूर्वा षा.	श्रवण	पूर्वा भा.	उत्त. भा.	भरणी	आश्लेषा
ज्येष्ठा	उत्त.षा.	धनिष्ठा	उत्त.भा.	रेवती	कृत्तिका	मघा
मूल	श्रवण	शतभिषा	रेवती	अश्विनी	रोहिणी	पूर्वा.फा.
पूर्वा षा.	धनिष्ठा	पूर्वा भा.	अश्विनी	भरणी	मृगशिरा	उत्त.फा.
उत्त.षा.	शतभिषा	उत्त.भा.	भरणी	कृत्तिका	आर्द्रा	हस्त
श्रवण	पूर्वा भा.	रेवती	कृत्तिका	रोहणी	पुनर्वसु	चित्रा
धनिष्ठा	उत्त.भा.	अश्विनी	रोहिणी	मृगशिरा	पुष्य	स्वाति
शतभिषा	रेवती	भरणी	मृगशिरा	आर्द्रा	आश्लेषा	विशाखा
पूर्वा.भा.	अश्विनी	कृत्तिका	आर्द्रा	पुनर्वसु	मघा	अनुराधा
उत्त.भा.	भरणी	रोहिणी	पुनर्वसु	पुष्य	पूर्वा.फा.	ज्येष्ठा
रेवती	कृत्तिका	मृगशिरा	पुष्य	आश्लेषा	उत्त.फा.	मूल

सहस्त्रचण्डीविधानम्

रुद्रयामले—

सहस्त्रचण्डी विधिवच्छृणु विष्णो महामते।
राज्यभ्रंशो ह्यकस्माच्चेज्जनमारे महाभये। गजमारेऽश्वमारे च परचक्रभये तथा॥
इत्यादिविविधे दुःखे क्षयरोगादिजे भये। सहस्त्रं चण्डिकापाठान्कुर्याद्वा कारयेत्तथा॥
जापकास्तु शतं प्रोक्ताः विंशद्धस्तश्च मण्डपः। भोज्याः सहस्त्रं विप्रेन्द्रा गोशतं दक्षिणां दिशेत्॥
गुरवे द्विगुणं देयं शय्यादानं तथैव च। सप्तधान्यं च भूदानं श्वेताश्वं च मनोहरम्॥
पञ्चनिष्कमिता मूर्तिः कर्तव्या वर्धमानतः। अष्टादशभुजा देवी सर्वायुधविभूषिता॥
अन्नं वारि च दातव्यं सहस्त्रं प्रत्यहं विभो। शतं वा नियताहारः प्रायो मानेन वर्तयेत्॥
एवं यश्चण्डिकापाठं सहस्त्रं तु समाचरेत्। तस्य स्यात्कार्यसिद्धिस्तु नात्र कार्या विचारणा॥

इति सहस्त्रचण्डीविधानम्।

सहस्त्रचण्डी-विधान (रुद्रयामल से)—हे महामति विष्णु! सहस्त्रचण्डी विधि को सुनो। यदि अकस्मात् राज्यभ्रंश हो जाय, जनमार (गृहयुद्ध या आतङ्कवाद) फैल जाय। गजमार, अश्वमार या परचक्र का भय हो; विविध रोगों का भय, क्षयरोगादि का भय आदि उत्पन्न हो तो सहस्त्रचण्डी का प्रयोग करना चाहिये। सहस्त्रचण्डी में जापक ब्राह्मणों की सङ्ख्या शत (१००) होती है। इसमें बीस हाथ का मण्डप होता है। एक सहस्त्र ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता है तथा एक सौ गायों की दक्षिणा देनी चाहिये। आचार्य को दुगुनी दक्षिणा तथा शय्यादान करना चाहिये। सप्तधान्य का दान, भूदान, श्वेताश्वदान भी करना चाहिये। पाँच भार सोने की अठारह भुजा वाली देवी की मूर्ति बनवानी चाहिये, जिसके हाथों में सभी आयुध हों। प्रतिदिन सहस्त्र ब्राह्मणों को अन्न एवं जल देना चाहिये। अथवा प्रतिदिन एक सौ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। इस प्रकार जो व्यक्ति सहस्त्रचण्डी का पाठ कराता है, उसके सभी कार्य सफल होते हैं; इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

अथ शतचण्डीसहस्त्रचण्डीप्रयोगः—तत्र यजमानः पूर्वोक्तचन्द्रतारादिबलान्विते सुमुहूर्त्ते शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादसमीपे सुसमे स्वाभीष्टमामानां भूमिं स्वीकृत्य खननसम्प्लावनमार्जनसंलेपनादिभिः संशोध्य तत्र मण्डपं चिकीर्षुः गणेशकूर्मानन्तवसुधाद्विजान् सम्पूज्य पञ्चगव्येन सम्प्रोक्ष्य श्वेतसर्षपान् विकीर्य भूम्यै अर्घ्यं दद्यात्। ततः शतचण्ड्यां षोडशहस्तम् (सहस्त्रचण्ड्यां विंशतिहस्तात्मकम्) चतुर्द्वारतोरणपताकादियुतं निर्वातं मण्डपं विधाय तन्मध्ये मण्डपतृतीयांशेन चतुर्हस्तां वा अष्टकोणयुतां वा चतुरस्त्रां पक्वेष्टकरचितां रम्यां हस्तोच्छ्रितां वेदिं कृत्वा तत्पश्चिमे शतचण्ड्यां द्विहस्तं सहस्त्रचण्ड्यां चतुर्हस्तं कुण्डं पद्माकृतिं चतुरस्त्रं वा मेखलायोनिकण्ठनाभिनालयुतं कुर्यात् (ग्रहमखपक्षे तदीशान्यां हस्तमात्रां द्वयङ्गुलवप्रां ग्रहवेदिमपि कुर्यात्)। एवं कुण्डग्रन्थोक्तविधिना मण्डपादि रचयित्वा शतचण्ड्यां पलसुवर्णेन सहस्त्रचण्ड्यां पलपञ्चकेन मूर्त्यध्यायप्रतिपादितां महिषमर्दिनीप्रतिमां सावयवां कुर्यात्। एतत्सर्वमधिवासनदिनात्पूर्वं विधेयम्।

शतचण्डी एवं सहस्त्रचण्डी की प्रयोग-विधि—यजमान पूर्वोक्त चन्द्र-ताराबलान्वित सुमुहूर्त में शिवजी या देवी के मन्दिर के समीप समतल भूमि पर अपने हाथों से भूमि के नाप को निर्धारित करके खनन, संप्लावन, मार्जन, संलेपन आदि क्रियाओं से भूमि को शुद्ध करे। फिर उस शुद्ध भूमि पर मण्डप बनाकर श्रीगणेश जी, कूर्म, पृथ्वी तथा ब्राह्मणों का पूजन करके पञ्चगव्य से प्रोक्षण करे। फिर उस प्रोक्षित (लिपी हुई) भूमि पर श्वेत सरसों बिखेरकर भूमि को अर्घ्य दे। शतचण्डी में सोलह हाथ का मण्डप तथा सहस्त्रचण्डी में बीस हाथ का मण्डप बनाना चाहिये; जो कि चार द्वारों, तोरणों, पताका आदि से युक्त तथा निर्वात हो। उसके मध्य भाग में मण्डपभूमि के

तृतीयांश में अथवा चार हाथ प्रमाण में अष्टकोण अथवा चौकोर एवं हाथ भर ऊँची वेदी पक्की ईंटों द्वारा बनवानी चाहिये। उस वेदी के पश्चिम भाग में शतचण्डी में दो हाथ का तथा सहस्रचण्डी में चार हाथ का पद्माकृति अथवा चतुरस्र कुण्ड मेखला, कण्ठ, नाभि नाल तथा योनि से युक्त बनवाना चाहिये (नवग्रहों के लिये ईशानकोण में एक हाथ प्रमाण तथा दो अङ्गुल वप्र की ग्रहवेदी भी बनानी चाहिये)। इस प्रकार कुण्डग्रन्थों (कुण्डार्क, कुण्डरत्नावली, मण्डपकुण्डसिद्धि आदि) के अनुसार मण्डप की रचना करके शतचण्डी में एक पल सुवर्ण की तथा सहस्रचण्डी में पाँच पल सुवर्ण की सावयव महिषमर्दिनी देवी की प्रतिमा बनवानी चाहिये। यह सब कार्य अधिवासन दिन के पूर्व ही हो जाना चाहिये।

अथानुष्ठानारम्भदिनकृत्यम्—प्रारम्भदिने सुमुहूर्त्ते सपत्नीको यजमानः प्रातस्तिलतैलाभ्यङ्गपूर्वकमुष्णोदकेन मङ्गलस्नानं कृत्वा शुक्लधौतवासांसि परिधाय यथायोग्यालङ्कृतो धृतकुङ्कुमकेशरान्यतममङ्गलत्रिपुण्ड्रतिलकः सम्पूर्णकलशहस्तः 'ॐ भद्रं कर्णेभिरि'ति मण्डपं प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमद्वारेण प्रविश्य स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य दक्षिणपार्श्वे सम्भारान् संस्थाप्य पत्न्या समारब्धः आचम्य प्राणानायम्य 'ॐ आनोभद्रा' इति शान्तिपाठं पठित्वा लक्ष्मीनारायणादिस्मरणं च कुर्यात्। ततस्ताम्रपात्रे कुशजलगन्धपुष्पाणि कृत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं ममामुककामनासिद्ध्यर्थं सनवग्रहमखां शतचण्डीं (सहस्रचण्डीं वा) ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये, तदङ्गतया विहितं गणेशपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यादिवरणं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य सुमुखश्चैकदन्तश्चेत्यादि स्मरणपूर्वकं गणपतिपूजनपुण्याहवाचननान्दीश्राद्धानि पूर्ववत्कृत्वाचार्यादिवरणं कुर्यात्।

अनुष्ठान दिन का कृत्य—अनुष्ठान आरम्भ के दिन सुमुहूर्त में सपत्नीक यजमान को प्रातःकाल काले तिलों के तेल से शरीर में अभ्यङ्ग (मालिश) कर फिर गर्म (गुनगुने) जल से मङ्गलस्नान करके श्वेत धुले हुए वस्त्र धारण कर यथायोग्य अलङ्कृत होकर कुङ्कुम, केशर आदि का त्रिपुण्ड्र तिलक लगाकर हाथ में सम्पूर्ण कलश लेकर 'ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा०' इत्यादि सूक्त का पाठ करते हुए मण्डप की प्रदक्षिणा करके पश्चिमी द्वार से मण्डप में प्रवेश करना चाहिये। फिर अपने आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर अपने दाहिनी ओर सामग्री को रखकर पत्नी के साथ आचमन, प्राणायाम करके 'ॐ आनोभद्रा०' इत्यादि शान्तिपाठ करके लक्ष्मी-नारायणादि का स्मरण करना चाहिये। फिर ताम्रपात्र में कुश, जल, गन्ध एवं पुष्पों को रखकर देश-काल का उच्चारण करके 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं ममामुककामनासिद्ध्यर्थं सनवग्रहमखां शतचण्डीं (सहस्रचण्डीं वा) ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये; तदङ्गतया विहितं गणेशपूजनं, पुण्याहवाचनं, मातृकापूजनं, नान्दीश्राद्धम् आचार्यादिवरणं च करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके 'सुमुखश्चैकदन्तश्च०' इत्यादि स्मरणपूर्वक गणपतिपूजन, पुण्याहवाचन, नान्दीश्राद्ध आदि कर्मों को पूर्ववत् करके फिर आचार्यादि-वरण करना चाहिये।

विमर्श—यहाँ पर शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी के लिये सामान्य सङ्कल्प दिया गया है। मनुष्य की कामनाएँ अनेकों प्रकार की होने से उनके लिये सङ्कल्प भी भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं; अतः इस प्रकार के अलग-अलग सङ्कल्प नीचे लिखे जा रहे हैं। विद्वान् आचार्य को उनमें से जो प्रयोजनीय हो, उसका उपगोग विवेकपूर्वक करना चाहिये—

अथ कामनाभेदेन पृथक्पृथक् सङ्कल्पाः—ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वापच्छान्तिपूर्वकदीर्घायुर्विपुलधनधान्य-पुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्नसन्ततिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टसिद्ध्यर्थं दुर्गाप्रीतिकामो वा अनावृष्ट्यादिदुरित-शान्त्यर्थं वा नृपोपद्रवशान्त्यर्थं वा दुर्भिक्षनिवारणार्थं वा भूमिकम्पदोषनिवृत्त्यर्थं वा परचक्रभयराज्यभ्रंशादिभयविनाशार्थं वा विषूचिकाकालस्फोटकालज्वराद्यमुकजनमारमहारोगोपशान्त्यर्थं वा नानाकेतूदयोल्कापातादिदोषनिवृत्त्यर्थं वा मम जीवच्छशरीराऽविरोधेनामुकरोगस्य समूलनाशनेनापमृत्युनिवारणद्वारा क्षिप्रारोग्यार्थं वा अमुकराजकीयाभियोग-

निवृत्त्यर्थं वा मम जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद्गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्टस्थानस्थिताऽमुकग्रहसूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीयैकादशशुभस्थानस्थितबहुतमफलप्राप्त्यर्थमथवा अमुकमारकग्रहदशान्तर्दशातत्सम्बन्धिदशा चोपदशादिनदशा वा षष्ठाष्टमद्वादशादिनिषिद्धभावाधिपतिदशाजनितपीडाल्पायुराधिदैवाधिभौतिकाध्यात्मजनितक्लेशनिवृत्त्यर्थम्, आयुरारोग्यप्राप्त्यर्थं मदमुत्रत्वभार्यावन्ध्यत्वदोषनिवृत्तिपूर्वकसत्पुत्रप्राप्त्यर्थं शतचण्डीविधानं ब्राह्मणद्वारा करिष्ये।

आचार्यादिवरणप्रयोगः

तत्र तावत् आचार्यादीनुदङ्मुखानासनेषूपवेश्य स्वयं प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य आचार्यस्य पादप्रक्षालनं कृत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुककार्यसिद्ध्यर्थं करिष्यमाणशतचण्डीविधानयज्ञकर्मणि अमुकगोत्रोत्पन्नममुकवेदशाखाध्यायिनममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीयकासनमालाकमण्डलुवासोभिराचार्यत्वेन त्वामहं वृणे' इति वृत्वा ॐ वृतोऽस्मीति प्रतिवचनानन्तरमाचार्यहस्ते यज्ञकङ्कणं बद्ध्वा गन्धादिभिः सम्पूज्य,

ॐ आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पतिः। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत॥ १॥

इति प्रार्थयेत्।

आचार्यादि वरण-प्रयोग—आचार्यादि को उत्तर की ओर मुख करके बिठाना चाहिये तथा यजमान को स्वयं पूर्वाभिमुख होकर बैठना चाहिये। फिर यजमान आचमन एवं प्राणायाम करके आचार्य के चरण धोये। फिर देश-काल का स्मरण करके 'अमुककार्यसिद्ध्यर्थं करिष्यमाणशतचण्डीविधानयज्ञकर्मणि अमुकगोत्रोत्पन्न अमुकवेदशाखाध्यायिनं अमुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीयकासनमालाकमण्डलुवासोभिराचार्यत्वेन त्वामहं वृणे' ऐसा कहकर आचार्य का वरण करे। तब आचार्य 'ॐ वृतोऽस्मि' ऐसा कहकर यजमान को प्रतिवचन दे। फिर यजमान आचार्य के हाथ में यज्ञकङ्कण (कलावा) बाँधकर गन्धादि से उसकी पूजा करे और 'जिस प्रकार से स्वर्ग में शक्रादि के आचार्य बृहस्पति थे, उसी प्रकार मैं भी इस यज्ञ में आचार्य के रूप में आपका वरण करता हूँ' ऐसा कहकर आचार्य की प्रार्थना करे।

ततो नवऋत्विग्वरणमेकतन्त्रेण पृथक् वा कुर्यात्। तद्यथा—सर्वेषां पादप्रक्षालनं कृत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अद्य करिष्यमाणशतचण्डीविधानकर्मणि अमुकामुकगोत्रोत्पन्नानमुकामुकशर्मणो नव विप्रानेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीयकासनमालाकमण्डलुवासोभिराचार्येण सह नवार्णमन्त्रजपपूर्वकं मार्कण्डेयपुराणोक्तचण्डीसप्तशतीस्तवशतसङ्ख्यापरिमितपाठकरणार्थम् ऋत्विक्त्वेन युष्मानहं वृणे' इति वृत्वा 'वृताः स्म' इति तैरुक्ते प्रत्येकहस्ते वरणद्रव्याणि समर्प्य यज्ञकङ्कणं बद्ध्वा गन्धादिभिः सम्पूज्य,

ॐ ऋत्विजश्च यथापूर्वं शक्रादीनां मखेऽभवन्। यूयं तथा मे भवितुमृत्विजोऽर्हथ सत्तमाः॥
अस्य यागस्य निष्पत्तौ भवन्तोऽभ्यर्थिता मया। सुप्रसन्नैः प्रकर्त्तव्यं शान्तिकं विधिपूर्वकम्॥
पावनाः सर्ववर्णानां ब्राह्मणा ब्रह्मरूपिणः। अनुगृह्णन्तु मामद्य शतचण्ड्याख्यकर्मणि॥
शतचण्डीजपे पूज्याः सन्तु मे नियमान्विताः। अक्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः॥
चण्डीध्यानरता नित्यं प्रसन्नमनसः सदा। मालीकभाषिणः सन्तु मा सन्तु परनिन्दकाः॥
ममापि नियमा ह्येते भवन्तु भवतामपि।

इति प्रार्थ्यार्घ्यं निवेदयेत्। (एवं शतचण्डीजपे ऋत्विजो नव ९ आचार्यो दशमः १०; सहस्रचण्ड्यां शतमृत्विजः अष्टौ द्वारपालाश्च)।

ऋत्विजों का वरण—फिर शेष नौ ऋत्विजों का वरण एकतन्त्र से अथवा पृथक् से करे। फिर सभी ऋत्विजों के पैर धोकर देश-काल का उच्चारण कर 'अद्य करिष्यमाणशतचण्डीविधानकर्मणि अमुकामुकगोत्रोत्पन्नान् अमुकशर्मणो (वर्मा वा गुप्ता वा) नव विप्रानेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीयकासनमालाकमण्डलुवासोभिराचार्येण सह नवार्णमन्त्रजपपूर्वकं मार्कण्डेयपुराणोक्तसप्तशतीस्तवशतसङ्ख्यापरिमितपाठकरणार्थं ऋत्विक्त्वेन युष्मानहं वृणे' ऐसा कहकर उनका वरण करे। ऋत्विक् 'वृताः स्मः' कहकर यजमान को प्रतिवचन दे। तब यजमान प्रत्येक ब्राह्मण के हाथ में वरण सामग्री देकर यज्ञकङ्कण बाँधकर गंधादि से उनकी पूजा कर—'ॐ ऋत्विजश्च यथापूर्वं शक्रादीनां मखेऽभवन्। यूयं तथा मे भवितुमृत्विजोऽर्हथ सत्तमाः।' इत्यादि मूल में लिखित छः श्लोकों को पढ़कर ऋत्विजों से प्रार्थना करे (श्लोकों का भावार्थ—जिस प्रकार से प्राचीन काल में इन्द्रादि देवताओं के यज्ञ में ऋत्विज होते थे, उसी प्रकार आप सब लोग मेरे इस यज्ञ में ऋत्विज बनें। इस यज्ञ की निष्पत्ति के लिये मैं आप सबकी अभ्यर्थना करता हूँ। आप इस कार्य को सुप्रसन्न मन से विधिपूर्वक करें। सभी वर्णों में ब्राह्मण वर्ण ब्रह्मरूपी होने से पवित्र होते हैं। इस शतचण्डी नामक यज्ञ में आप सब मुझपर अनुग्रह करें। शतचण्डी यज्ञ में मेरे द्वारा पूजित होकर आप लोग नियमपरायण, अक्रोधन, शौचपरायण, सतत् ब्रह्मचर्यपरायण, चण्डीध्यानरत, नित्य प्रसन्न मन, सत्यवादी तथा परनिन्दा से रहित होकर कार्य करें। मेरे लिये भी ये नियम रहेंगे तथा आप भी इन नियमों का पालन करें।' इस प्रकार से प्रार्थना कर ब्राह्मणों को अर्घ्य दे। (इस प्रकार से प्रार्थना कर ब्राह्मणों को अर्घ्य दे। (इस प्रकार शतचण्डी जप में ९ ऋत्विज तथा दशवाँ आचार्य होता है एवं सहस्रचण्डी में एक सौ ऋत्विज तथा आठ द्वारपाल सहित कुल १०८ ब्राह्मण होते हैं)।

तत आचार्यादीनां सर्वेषां मधुपर्कपूजां कृत्वा प्रत्येकं वस्त्रद्वयम्, आसनम्, अर्घ्यपात्रम्, आचमनपात्रं, जलपात्रं, सुवर्णाङ्गुलीयककर्णभूषणरुद्राक्षमालादि च यथाशक्ति दद्यात्। आचार्याय द्विगुणं देयम्। तत आचार्यो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'यजमानेन वृतोऽहमाचार्यकर्म करिष्ये' इति सङ्कल्प्य,

ॐ यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वतः। स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु॥
भूतप्रेतपिशाचाद्या ह्यपक्रामन्तु राक्षसाः। स्थानादस्माद्व्रजन्यत्वन्त्स्वीकरोमि भुवं त्विमाम्॥

इत्युक्त्वा ईशानादिसर्वदिक्षु गौरसर्षपान् विकीर्य आचमनं कृत्वा पञ्चगव्येन कुशैः पावमानसूक्तेन 'आपोहिष्ठा मयोभुव' इति त्र्यृचेन च मण्डपं सर्वत्र प्रोक्ष्य कृताञ्जलिः 'स्वस्तिनऽइन्द्र' इति मन्त्रं वारत्रयं पठेत् (ततो मण्डपपक्षे मण्डपदेवतापूजां ध्वजपताकोच्छ्रयणं च कुर्यात्)।

मधुपर्कादि—फिर आचार्य एवं ऋत्विजों की मधुपर्क से पूजा करके प्रत्येक को दो वस्त्र, आसन, अर्घ्यपात्र, आचमन पात्र, जलपात्र, सोने की अङ्गूठी, कर्णभूषण, रुद्राक्षमाला आदि यथाशक्ति दे। आचार्य को द्विगुण देना चाहिये। फिर आचार्य देश-काल का उच्चारण करके 'यजमानेन वृतोऽहं यज्ञकर्म करिष्ये' कहकर भूतापसारण करे; उसके लिये मूल में लिखित 'ॐ यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा। स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु॥ भूतप्रेतपिशाचाद्या ह्यपक्रमन्तु राक्षसाः। स्थानादस्माद् व्रजन्तु अन्यत् स्वीकरोमि भुवं त्विमाम्॥' इन दो श्लोकों को पढ़कर ईशानादि दसों दिशाओं में गौरसर्षप बिखेर दे। फिर आचमन करके पञ्चगव्य एवं कुश लेकर 'पावमान सूक्त' का पाठ करते हुए मण्डप का प्रोक्षण (छिड़काव) करे। तदनन्तर हाथ जोड़कर तीन बार 'ॐ स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः' इत्यादि मन्त्र पढ़े। फिर देवताओं के ध्वजा-पताका मण्डप पर लगाये।

ततो मध्यवेद्याः पश्चिमतः सुखासने प्राङ्मुख उपविश्य,

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥

इति भूमि प्रार्थ्य 'ॐ पृथ्वीकूर्मानन्तदेवताभ्यो नमः' इति सम्पूज्य भूमिं वामपादाघातत्रयं कृत्वा यथोपदेशं विस्तरतः संक्षेपेण वा भूतशुद्ध्यादि कलामातृकान्यासान्तं पूर्ववत् कृत्वा नवार्णविध्युक्तैकादशन्यासान् कुर्यात् अथवा एकादशमेवैकं न्यासं कुर्यात् (ते च न्यासाः पूर्वे द्रष्टव्याः)। ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्य श्रीमहालक्ष्मीं ध्यायेत्—

श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला। रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा॥
सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा। चित्रानुलेपना कान्तिरूपसौभाग्यशालिनी॥
अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती। आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधःकरक्रमात्॥
अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा। चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः॥
शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः॥

इति ध्यानं कृत्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पात्रासादनं कुर्यात्।

पृथ्वी-पूजनादि—फिर मध्यवेदी के पश्चिम की ओर बैठकर 'ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोका०' इस मन्त्र को पढ़कर भूमि की पूजा कर भूमि पर यजमान अपना बाँयाँ पैर तीन बार पटक कर विस्तार या संक्षेप में भूतशुद्धि कला-मातृका न्यास-पर्यन्त कर्म पूर्व की भाँति करके नवार्ण मन्त्र की विधि में वर्णित ग्यारह प्रकार के न्यासों को करे अथवा केवल ग्यारहवें न्यास को ही करे। फिर योनिमुद्रा प्रदर्शित करके महालक्ष्मी का ध्यान मूल में लिखित साढ़े चार श्लोकों से करे।

ध्यान का भावार्थ—श्वेतानना, नील भुजाओं वाली, कान्तिमती, रूपमती, सौभाग्यशालिनी, अठारह भुजाओं वाली होकर वही सती सहस्र भुजाओं वाली भी है। उसके जघन सुचित्रयुक्त हैं। वह चित्र, माला, अम्बर तथा विभूषणादि से युक्त है। विचित्र अनुलेपन से युक्त है। उसका मध्य भाग तथा चरण रक्तवर्ण हैं; उसके दक्षिण हाथों में क्रम से अक्षमाला, कमल, बाण, असि, वज्र, गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शङ्ख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, चर्म, पानपात्र तथा कमण्डलु हैं।

इस ध्यान को करके मानसोपचारों से देवी की पूजा करके पात्रासादन करे।

ततो मध्यवेद्यां सर्वतोभद्रं तन्मध्यकोष्ठेषु अष्टदलं च लिखित्वा तत्र ब्रह्मादिमण्डलदेवताः स्वस्वमन्त्रेण संस्थाप्य षोडशोपचारैः सम्पूज्य तन्मध्ये पीठपूजां कुर्यात्। तद्यथा—'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' इति पीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिषु ॐ जयायै नमः॥ १॥ विजयायै नमः॥ २॥ अजितायै नमः॥ ३॥ अपराजितायै नमः॥ ४॥ नित्यायै नमः॥ ५॥ विलासिन्यै नमः॥ ६॥ दोग्ध्र्यै नमः॥ ७॥ घोरायै नमः॥ ८॥ मध्ये मङ्गलायै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। 'ॐ ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय सर्वात्मसंसर्गयोगपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिनासनं दत्त्वा तत्र महीद्यौ इत्यादिपूर्वोक्तमन्त्रैर्बृहत्ताम्रकलशं संस्थाप्य तस्मिन् गन्धपुष्पफलसर्वौषधीदूर्वापञ्चपल्लवपञ्चरत्नसुवर्णसप्त-मृत्तिकादीनि तत्तन्मन्त्रेण निक्षिप्य कौशेयवस्त्रद्वयेन संवेष्ट्य तदुपरि ताम्रपूर्णपात्रं निधाय कलशे 'तत्त्वायामीति' वरुणमावाह्य सम्पूज्य कलशदेवताः स्मृत्वा 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यभिमन्त्र्य 'देवदानवसंवादे' इत्यादि प्रार्थयेत्। ततः कलशोपरिस्थपूर्णपात्रे रक्तवस्त्रेऽष्टगन्धेन यन्त्रं लिखेत् (अथवा) ताम्रपात्रे लिखितं यन्त्रं स्थापयेत्।

फिर मध्यवेदी में सर्वतोभद्र तथा उसके मध्य कोष्ठ में अष्टदल में ब्रह्मादि देवताओं को उनके नाममन्त्रों से स्थापित करके षोडशोपचारों से पूजकर पीठपूजा करे। 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' कहकर उनकी पूजा करके फिर पूर्वादि दिशाओं में क्रम से मध्य-पर्यन्त 'ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ दोग्ध्र्यै नमः, ॐ घोरायै नमः तथा मध्य में ॐ मङ्गलायै नमः' इस प्रकार नौ पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर 'ॐ ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय

सर्वात्मसंसर्गयोगपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि देकर वहाँ 'ॐ महीद्यौ०' इत्यादि मन्त्रों से कलशस्थापन करे। कलश में गन्ध, पुष्प, फल, सर्वौषधि, दूर्वा, पञ्चपल्लव, पञ्चरत्न, सुवर्ण, सप्तमृत्तिका आदि को उनके मन्त्रों से डालकर दो रेशमी वस्त्रों से लपेट कर उसके ऊपर ताम्र का पूर्णपात्र रखकर कलश में 'ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा०' इत्यादि मन्त्रों से वरुण को आवाहित तथा पूजित करे। फिर कलश के देवताओं का स्मरण करते हुए 'ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि मन्त्रों से कलश का अभिमन्त्रण कर 'देवदानवसंवादे' इत्यादि श्लोकों से कलश की प्रार्थना करे। तदुपरान्त कलश के ऊपर स्थित पूर्णपात्र पर रक्त वस्त्र के ऊपर अष्टगन्ध से चण्डिकायन्त्र लिखे अथवा ताम्रपत्र पर लिखे हुए यन्त्र को उस पर स्थापित कर दे।

यन्त्रप्रकारः—मध्ये त्रिकोणं तद्बहिः षट्कोणं तद्बाह्ये वृत्तं तद्बाह्येऽष्टौ दलानि तद्बाह्ये चतुर्विंशतिदलानि तद्बाह्ये चतुर्द्वारं चतुरस्त्रत्रयमिति यन्त्रं विलिख्य तत्र सिंहासने शतचण्ड्यां पलसुवर्णेन (सहस्रचण्ड्यां पञ्चपलेन) तदर्धेन तदर्धार्धेन वाष्टादशभुजाम् अष्टभुजां वा सिंहारूढां पूर्वोक्तध्यानयुतां देवीमूर्तिं कारयित्वा अग्न्युत्तारणपूर्वकं संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा पूजयेत् (प्राणप्रतिष्ठामन्त्राः पूर्वमुक्ता एव)।
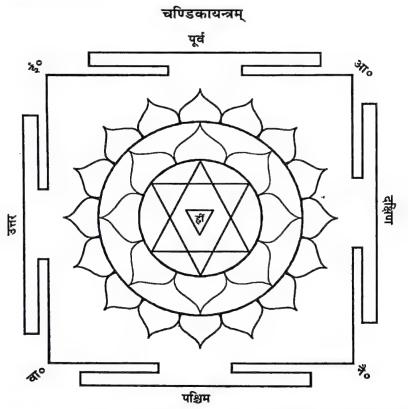
चण्डिकायन्त्रम्

यन्त्रोद्धार—चण्डिका यन्त्र के मध्य में त्रिकोण, उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर अष्टदल, अष्टदलों के बाहर, चौबीस दल बनाये। फिर उसके बाहर चार द्वार बनाकर उस यन्त्र पर सिंहासन के ऊपर शतचण्डी हो तो एक पल सुवर्ण की अथवा सहस्रचण्डी हो तो पाँच पल सुवर्ण की मूर्ति अथवा उसके आधे या चौथाई भार की मूर्ति सिंह पर आरूढ़, अष्टादश भुजा वाली अथवा अष्टभुजा वाली पूर्वकथित ध्यानभाव को प्रकट करने वाली बनवाकर अग्नि उत्तारणपूर्वक स्थापित कर प्राणप्रतिष्ठा करे। प्राणप्रतिष्ठा-विधि पूर्व में कही जा चुकी है।

अथ पूजनप्रकारः—स्ववामे कर्पूरादियुतगङ्गाजलपूर्णं कलशं निधाय सम्पूज्य 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि पठित्वा कलशमुद्रां प्रदर्श्य दक्षिणतः शङ्खं सम्पूज्य शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य शङ्खोदकेनात्मानं पूजाद्रव्याणि च प्रोक्ष्य नवरात्रोक्तविधानवत् मूलेन श्रीसूक्तेन वा आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः भगवतीं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

पूजन-प्रकार—अपने वाम भाग में कर्पूरादि से युक्त गङ्गाजल से भरा कलश रखकर उसे पूजकर 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि पढ़कर कलशमुद्रा को प्रदर्शित कर उसके दक्षिण में नवरात्रोक्त विधान की भाँति मूल मन्त्र से अथवा श्रीसूक्त से आवाहनादि से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचारों से भगवती को पूजकर फिर आवरणपूजा करनी चाहिये।

आवरणपूजा

पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीं प्रकल्प्य प्रदक्षिणक्रमेण पूजयेत्। तद्यथा—त्रिकोणमध्ये मूलमन्त्रेण देवीं गन्धादिभिः सम्पूज्य त्रिकोणस्य (पूर्वकोणे) ॐ सरस्वतीसहिताय ब्रह्मणे नमः॥ १॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ श्रीसहिताय विष्णवे नमः॥ २॥ (वायव्याम्) ॐ उमासहिताय शिवाय नमः॥ ३॥ (उत्तरे) ॐ सिंहाय नमः॥ ४॥ (दक्षिणे) ॐ महिषाय नमः॥ ५॥ (इति त्रिकोणदेवताः पूजयेत्)। (षट्कोणमण्डले) पूर्वादिषट्कोणे वामक्रमेण ॐ नं नन्दजायै नमः॥ १॥ ॐ रं रक्तदन्तिकायै नमः॥ २॥ ॐ शां शाकम्भर्यै नमः॥ ३॥ ॐ दुं दुर्गायै नमः॥ ४॥ ॐ भीं भीमायै नमः॥ ५॥ ॐ भ्रां भ्रामर्य्यै नमः॥ ६॥ (अष्टदले वाममार्गक्रमेण) ॐ ब्रां ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ मां माहेश्वर्य्यै नमः॥ २॥ ॐ कौं कौमार्यै नमः॥ ३॥ ॐ वैं वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ वां वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ नां नारसिंह्यै नमः॥ ६॥ ॐ ऐं ऐन्द्र्यै नमः॥ ७॥ ॐ चां चामुण्डायै नमः॥ ८॥ (ततश्चतुर्विंशतिदलेष्वपि तेनैव क्रमेण) ॐ विं विष्णुमायायै नमः॥ १॥ ॐ चें चेतनायै नमः॥ २॥ ॐ बुं बुद्ध्यै नमः॥ ३॥ ॐ निं निद्रायै नमः॥ ४॥ ॐ क्षुं क्षुधायै नमः॥ ५॥ ॐ छां छायायै नमः॥ ६॥ ॐ शं शक्त्यै नमः॥ ७॥ ॐ तृं तृष्णायै नमः॥ ८॥ ॐ श्रं श्रद्धायै नमः॥ ९॥ ॐ जां जात्यै नमः॥ १०॥ ॐ लं लज्जायै नमः॥ ११॥ ॐ शां शान्त्यै नमः॥ १२॥ ॐ श्रं श्रद्धायै नमः॥ १३॥ ॐ कां कान्त्यै नमः॥ १४॥ ॐ लं लक्ष्म्यै नमः॥ १५॥ ॐ धृं धृत्यै नमः॥ १६॥ ॐ वृं वृत्त्यै नमः॥ १७॥ ॐ श्रुं श्रुत्यै नमः॥ १८॥ ॐ स्मृं स्मृत्यै नमः॥ १९॥ ॐ तुं तुष्ट्यै नमः॥ २०॥ ॐ पुं पुष्ट्यै नमः॥ २१॥ ॐ दं दयायै नमः॥ २२॥ ॐ मां मात्रे नमः॥ २३॥ ॐ भ्रां भ्रान्त्यै नमः॥ २४॥ ततो बहिर्भूगृहचतुष्कोणेषु (ईशान्याम्) ॐ गं गणपतये नमः॥ १॥ (आग्नेय्याम्) ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः॥ २॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ बं वटुकाय नमः॥ ३॥ (वायव्याम्) ॐ यों योगिनीभ्यो नमः॥ ४॥ पुनः (पूर्वादिषु) प्रदक्षिणक्रमेण ॐ लं इन्द्राय नमः॥ १॥ ॐ रं अग्नये नमः॥ २॥ ॐ मं यमाय नमः॥ ३॥ ॐ क्षं निर्ऋतये नमः॥ ४॥ ॐ वं वरुणाय नमः॥ ५॥ ॐ यं वायवे नमः॥ ६॥ ॐ सों सोमाय नमः॥ ७॥ ॐ हं रुद्राय नमः॥ ८॥ ॐ ब्रं ब्रह्मणे नमः॥ ९॥ (अधः) ॐ अं अनन्ताय नमः इति पूजयेत्। तद्बाह्ये ॐ वज्राय नमः॥ १॥ शक्तये नमः॥ २॥ दण्डाय नमः॥ ३॥ खड्गाय नमः॥ ४॥ पाशाय नमः॥ ५॥ अङ्कुशाय नमः॥ ६॥ गदायै नमः॥ ७॥ त्रिशूलाय नमः॥ ८॥ पद्माय नमः॥ ९॥ चक्राय नमः॥ १०॥ इत्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा देव्यै हरिद्राकुङ्कुमसिन्दूररक्तचन्दनालक्तकपरिमलद्रव्याणि समर्पयेत्।

यन्त्र में आवरण की पूजा—पूज्य-पूजक के मध्य प्राची दिशा की कल्पना करके त्रिकोण के पूर्व कोण में 'ॐ सरस्वतीसहिताय श्रीब्रह्मणे नमः' इस मन्त्र से पूजन करे। फिर त्रिकोण के दूसरे कोण नैर्ऋत्य में 'ॐ श्रीसहिताय विष्णवे नमः' कहकर पूजन करे। फिर वायव्य में 'ॐ उमासहिताय शिवाय नमः' कहकर पूजन करे। फिर उत्तर दिशा में 'ॐ सिंहाय नमः' तथा दक्षिण में 'ॐ महिषाय नमः' कहकर पूजन करे। यह मध्यवर्ती त्रिकोण का पूजन होता है।

फिर पूर्वादि षट्कोणों में वाम क्रम से 'ॐ नं नन्दजायै नमः' इत्यादि छः मन्त्रों में षट्कोण का पूजन करे। फिर षट्कोण के बाहर के अष्टकोण के आठों कोनों में वामक्रम से 'ॐ ब्रां ब्राह्मयै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर उसके बाहर चौबीस दलों में उसी क्रम से (वामक्रम से) 'ॐ विं विष्णुमायायै नमः' इत्यादि चौबीस मन्त्रों से पूजन करना चाहिये। फिर उसके बाहर भूगृह के चारो कोणों में ईशान से लेकर वायव्य-पर्यन्त 'ॐ गं गणपतये नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से इनमें निर्दिष्ट दिशाओं में पूजन करे। फिर उसी भूगृह के पूर्वादि दिशाओं में निर्दिष्ट दश दिशाओं में दिक्पालों का पूजन करे। फिर उनके बाहर पुनः पूर्वादि दश दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करे। इस प्रकार आवरण पूजा करके देवी को हरिद्रा, रोली, सिन्दूर, लालचन्दन, अलक्तक (महावर) तथा परिमल द्रव्यों को समर्पित करे।

अथाङ्गपूजा। ॐ दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि। ॐ गिरिजायै नमः गुल्फौ पूजयामि। ॐ अपर्णायै नमः जानुनी पूजयामि। ॐ हरिप्रियायै नमः ऊरू०। ॐ पार्वत्यै० कटिं पू०। ॐ आर्यायै नमः नाभिं०। ॐ जगन्मात्रे० उदरं०। ॐ मङ्गलायै० कुक्षिं०। ॐ शिवायै० हृदयं०। ॐ माहेश्वर्य्यै० कण्ठं०। ॐ विश्ववन्द्यायै० स्कन्धौ०। ॐ काल्यै० बाहू०। ॐ आद्यायै० हस्तौ०। ॐ वरदायै० मुखं०। ॐ ण्यै० नासिकां०। ॐ कमलाक्ष्यै० नेत्रे०। ॐ अम्बिकायै० शिरः०। ॐ देव्यै० सर्वाङ्गं पूजयामि। इत्यङ्गपूजां कृत्वा ततः पूर्वोक्तमन्त्रैर्धूपदीपनानाविधनैवेद्यताम्बूलपूगीफलदक्षिणादि-मन्त्रपुष्पान्तपूजां कृत्वा राजोपचारान्निवेद्य शतवर्तिकाभिर्दशभिर्वा कर्पूरगर्भिताभिर्महानीराजनं प्रदक्षिणामेकां नमस्कारांश्च कृत्वा 'नमो देव्यै महादेव्यै' इत्यादिमन्त्रैः स्तुतिं कृत्वा यथासम्भवं छत्रचामरव्यजनघण्टागीतनृत्य-वाद्यादि समर्प्य कूष्माण्डनारीकेलकदलीफलेक्षुदण्डादिबलिं दत्त्वा अखण्डदीपकं प्रतिष्ठापयेत्। ततो योगिनीक्षेत्रपालपूजां कुर्यात्।

देवी की अंगपूजा—फिर मूल में उसके आगे 'ॐ दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि' कहकर देवी के पैर पूजे। इसी प्रकार से मूल में लिखित मन्त्रों से देवी के अङ्गों तथा सर्वाङ्ग की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार अङ्गपूजा करके फिर पूर्वोक्त मन्त्रों से धूप-दीप, नानाविध नैवेद्य, ताम्बूल, पूगीफल, दक्षिणादि मन्त्र-पुष्पान्त पूजा करके राजोपचारों को निवेदित करके एक सौ बत्तियों अथवा दश बत्तियों के दीपक से अथवा कपूर की बत्ती जलाकर महानीराजन तथा एक प्रदक्षिणा करके नमस्कार करे। फिर 'नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः' इत्यादि मन्त्रों (दुर्गासप्तशती अध्याय पाँच) के द्वारा स्तुति करके देवी को यथासम्भव छत्र, चामर, व्यजन, घण्टा, गीत, नृत्य, वाद्यादि समर्पित करके कूष्माण्ड (कुम्हेड़ा), नारियल, केले का फल, ईख का दण्ड इत्यादि की बलि देकर अखण्ड दीपक की प्रतिष्ठा करे। अखण्ड दीपक जलाने के उपरान्त फिर योगिनी तथा क्षेत्रपाल की पूजा करनी चाहिये।

अथ चतुःषष्टियोगिनीपूजा—देव्यग्रे रक्तवस्त्रोपरि तण्डुलान्नेन गोधूमैर्वा अष्टौ पङ्क्तिरूपेण चतुःषष्टिकोष्ठानि कृत्वा तत्र क्रमेण ॐ जये इहागच्छ इहतिष्ठ इत्यावाहयेत्॥ १॥ एवं ॐ विजये इहागच्छ इहतिष्ठ॥ २॥ ॐ जयन्ति इहा०॥ ३॥ ॐ अपराजिते इहा०॥ ४॥ ॐ दिव्ययोगिनि०॥ ५॥ ॐ महायोगिनि०॥ ६॥ ॐ सिद्धयोगिनि०॥ ७॥ ॐ गणेश्वरि०॥ ८॥ (इति प्रथमाष्टकम्) ॐ प्रेतासनि इहा०॥ ९॥ ॐ डाकिनि इहा०॥ १०॥ ॐ कालि इहा०॥ ११॥ ॐ कालरात्रि इहा०॥ १२॥ ॐ निशाचरि इहा०॥ १३॥ ॐ टङ्कारिणि इहा०॥ १४॥ ॐ रुद्रवेतालिनि इहा०॥ १५॥ ॐ हुङ्कारिणि इहा०॥ १६॥ (इति द्वितीयाष्टकम्) ॐ ऊर्ध्वकेशि इहा०॥ १७॥ ॐ विरूपाक्षि इहा०॥ १८॥ ॐ शुक्लाङ्गि इहा०॥ १९॥ ॐ नरभोजिनि इहा०॥ २०॥ ॐ फट्कारिणि इहा०॥ २१॥ ॐ वीरभद्रे इहा०॥ २२॥ ॐ धूमाङ्गि इहा०॥ २३॥ ॐ कलहप्रिये इहा०॥ २४॥ (इति तृतीयाष्टकम्) ॐ राक्षसि इहा०॥ २५॥ ॐ रक्ताक्षि इहा०॥ २६॥ ॐ विश्वरूपे इहा०॥ २७॥ ॐ भयङ्करि इहा०॥ २८॥ ॐ वीरकौमारि इहा०॥ २९॥ ॐ चण्डिके

इहा० ॥ ३० ॥ ॐ वाराहि इहा० ॥ ३१ ॥ ॐ मुण्डधारिणि इहा० ॥ ३२ ॥ (इति चतुर्थाष्टकम्) ॐ भैरवि इहा० ॥ ३३ ॥ ॐ ध्वाङ्क्षिणि इहा० ॥ ३४ ॥ ॐ धूम्राङ्गि इहा० ॥ ३५ ॥ ॐ प्रेतवाराहि इहा० ॥ ३६ ॥ ॐ खड्गिनि इहा० ॥ ३७ ॥ ॐ दीर्घलम्बोष्ठि इहा० ॥ ३८ ॥ ॐ मालिनि इहा० ॥ ३९ ॥ ॐ मन्त्रयोगिनि इहा० ॥ ४० ॥ (इति पञ्चमाष्टकम्) ॐ कालिनि इहा० ॥ ४१ ॥ ॐ चक्रिणि इहा० ॥ ४२ ॥ ॐ कङ्कालि इहा० ॥ ४३ ॥ ॐ भुवनेश्वरि इहा० ॥ ४४ ॥ ॐ शटकि इहा० ॥ ४५ ॥ ॐ महामारि इहा० ॥ ४६ ॥ ॐ यमदूति इहा० ॥ ४७ ॥ ॐ करालिनि इहा० ॥ ४८ ॥ (इति षष्ठाष्टकम्) ॐ केशिनि इहा० ॥ ४९ ॥ ॐ मर्दिनि इहा० ॥ ५० ॥ ॐ रोमजङ्घे इहा० ॥ ५१ ॥ ॐ निवारिणि इहा० ॥ ५२ ॥ ॐ विशालिनि इहा० ॥ ५३ ॥ ॐ कार्मुकि इहा० ॥ ५४ ॥ ॐ लोलि० इहा० ॥ ५५ ॥ ॐ अधोमुखि इहा० ॥ ५६ ॥ (इति सप्तमाष्टकम्) ॐ मुण्डाग्रधारिणी इहा० ॥ ५७ ॥ ॐ व्याघ्रि इहा० ॥ ५८ ॥ ॐ काङ्क्षिणी इहा० ॥ ५९ ॥ ॐ प्रेतरूपिणि इहा० ॥ ६० ॥ ॐ धूर्जटि इहा० ॥ ६१ ॥ ॐ घोरि इहा० ॥ ६२ ॥ ॐ करालि इहा० ॥ ६३ ॥ ॐ विषलम्बिनि इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ६४ ॥ (इत्यष्टमाष्टकम्) एवमावाह्य ॐ मनोजूतिरिति प्रतिष्ठाप्य 'ॐ चतुःषष्टियोगिनीभ्यो नमः' इति नाममन्त्रेण षोडशोपचारैः सम्पूज्य पायसबलिं दद्यात्। ततस्तत्रैव एकदेशे ॐ बं वटुकाय नमः। ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः। इति सम्पूज्य 'ॐ बं वटुकाय पिङ्गलभासुरनेत्राय बलिं गृहाण गृहाण भक्ष भक्ष कन्दन कन्दन ह्रीं ह्रूं स्वाहा' इति मन्त्रेण बटुकाय क्षेत्रपालाय पायसादिनानाद्रव्यबलिं दत्त्वा हस्तौ प्रक्षाल्याचामेत्। ततः अनेन पूजनेन श्रीमहाकाली-महालक्ष्मीमहासरस्वत्यः प्रीयन्तामिति देवीदक्षिणतो जलमुत्सृज्य देव्यग्रे कुमारीपूजां कुर्यात्। तद्यथा—देशकालौ सङ्कीर्त्य 'शतचण्डीजपाङ्गत्वेन कुमारीपूजां करिष्ये' इति सङ्कल्प्य। नवार्णमन्त्रेण पूर्वोक्तं षडङ्गन्यासं कृत्वा।

ॐ मन्त्राक्षरमयीं देवीं मातॄणां रूपधारिणीम्। नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम्॥

इत्यावाह्य पूर्वोक्तनवरात्रविधिना यथासम्भवं पूजयेत्। कुमार्यश्च प्रत्यहं शतं नव वा यथाशक्ति वा पूज्याः प्रत्यहमेकवृद्ध्या वा पूजयेत्।

ततो ब्राह्मणसुवासिनीपूजा—एवं देवीकुमार्यादिपूजा प्रत्यहं कार्या। द्वितीयदिने द्विगुणा २ तृतीये त्रिगुणा ३ चतुर्थे च चतुर्गुणा ४ विधेया। इति पूजाप्रयोगः।

चौंसठ योगिनी की पूजा—फिर मूल पाठ में निर्दिष्ट चौंसठ योगिनियों की पूजा प्रथमादि आठ अष्टकों में क्रमानुसार उनके नाममन्त्रों से आवाहनपूर्वक करनी चाहिये। पूजा करके उन्हें खीर की बलि देनी चाहिये। बलि से पूर्व मनोजूति मन्त्र से उन्हें प्रतिष्ठित करना चाहिये।

क्षेत्रपाल-पूजन—फिर उसी पीठ पर (अथवा अलग से क्षेत्रपाल पीठ पर) एक स्थान पर 'ॐ बं वटुकाय नमः' तथा 'ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः' कहकर पूजन कर 'ॐ बं वटुकाय पिङ्गलभासुरनेत्राय बलिं गृहाण गृहाण, भक्ष भक्ष, कन्दन कन्दन ह्रीं ह्रूं स्वाहा' इस मन्त्र से वटुक एवं क्षेत्रपाल को बलि दे। फिर हाथ धोकर आचमन करे। फिर 'अनेन पूजनेन श्रीमहाकाली महालक्ष्मीमहासरस्वत्यः प्रीयन्तां' ऐसा कहकर देवी के दक्षिण भाग में जल छोड़कर फिर देवी के आगे कुमारी-पूजा करे।

कुमारी-पूजा—इसके लिये देश-काल का उच्चारण करके 'शतचण्डीजपाङ्गत्वेन कुमारीपूजां करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प कर फिर नवार्ण मन्त्र से पूर्वोक्त विधि से षडङ्गन्यास करके मन-वाणी को समाहित करके 'ॐ मन्त्राक्षरमयीं देवीं मातॄणां रूपधारिणीम्। नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम्॥' इस मन्त्र से आवाहन करके पूर्वोक्त नवरात्र विधि से यथासम्भव कुमारियों की पूजा करे। प्रतिदिन एक सौ अथवा नौ कुमारियों का पूजन अथवा प्रतिदिन एक-एक बढ़ाकर पूजन करना चाहिये।

ब्राह्मण सुवासिनी-पूजा—कुमारी-पूजा के उपरान्त फिर ब्राह्मण सुवासिनी-पूजा भी करनी चाहिये। इस प्रकार प्रतिदिन कुमारीरूप में तथा ब्राह्मण सुवासिनी के रूप में देवीपूजा करनी चाहिये। सुवासिनी पूजा प्रथम दिन

जितनी सङ्ख्या में हो, उससे दुगुनी सङ्ख्या में द्वितीय दिन, तिगुनी सङ्ख्या में तृतीय दिन, चौगुनी सङ्ख्या में चौथे दिन करनी चाहिये।

अथ पाठक्रमः—तावत् दुर्गापुरतो मृद्वासनेषूपविष्टाः सर्वे विप्राः पूर्वोक्तनवार्णमन्त्रकृताङ्गन्यासाः समाहितमनसो वाग्यताः भगवतीं स्मरन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः कवचार्गलाकीलकानि सकृज्जप्त्वा प्रत्येकं शतं नवार्णमन्त्रं च जप्त्वा ग्रन्थार्थं बुध्यमानाः स्पष्टाक्षरं नातिशीघ्रं नातिमन्दं रसभावस्वरयुतं मार्कण्डेयपुराणोक्तं सप्तशतीस्तवं जपेयुः। ततो जपान्ते रहस्यत्रयं पुनर्नवार्णमन्त्रशतं रहस्यत्रयं च जपेयुः। एकस्मिन्दिने अनेकावृत्तौ तु कवचादीनां प्रत्यावृत्तौ नावृत्तिः। एवं प्रथमदिने एकावृत्तिः, द्वितीये द्वे तृतीये तिस्रः चतुर्थे चतस्रः रूपाणीत्येवं जपं कुर्युः। यजमानसहिताः सर्वे भूमौ शयानाः नित्यं क्षीरान्नभोजनाः अशक्तौ हविष्यमश्नन्तः सन्तुष्टास्त्यक्तमत्सरा ब्रह्मचर्यास्पृश्यास्पर्शादिनियमांश्चरेयुः। एवं शतसहस्त्रावृत्तयः सम्पद्यन्ते (क्रोडतन्त्रे त्रिपञ्चसप्तनवभिर्दिनैः पक्षेण वा पुनः। अदीर्घदिवसैः क्षिप्रं विदध्याच्चण्डिकामखमित्यपि लिखितम्)। प्रत्यहं सहस्त्रं शतं दश वा ब्राह्मणान् भोजयेत्। प्रत्यहं रात्रौ जागरणं कर्यम्। ततः पञ्चमेऽह्नि होमः। नवरात्रे तु नवम्यामेव होमः। चतुर्दश्यष्टमीनवम्यन्यतमदिने समाप्तिः कार्या।

पाठक्रम—श्रीदुर्गाजी के समक्ष अपने आसन पर बैठकर सभी जापक (पाठक) ब्राह्मणगण पूर्वोक्त नवार्ण मन्त्रकृत अङ्गन्यास करके समाहित मन तथा वाणी से भगवती का स्मरण करते हुए मन्त्रार्थ को समझते हुए एक बार कवच-कीलक तथा अर्गला का जप करके प्रतिपाठ एक सौ नवार्ण मन्त्रों का जप करें। ग्रन्थ के अभिप्राय को समझते हुए स्पष्टाक्षरों में नातिशीघ्र, नातिमन्द, रसभाव-स्वरयुक्त मार्कण्डेय पुराणोक्त सप्तशतीस्तव का पाठ करें। जप के अन्त में तीनों रहस्य का पाठ तथा नवार्ण मन्त्र का जप करके पुनः रहस्यत्रय (प्राधानिक-वैकृतिक तथा मूर्तिरहस्य) को जपें। यदि एक ही दिन में सप्तशती पाठ की अनेक आवृत्तियाँ हों तो कवचादि का पाठ प्रति आवृत्ति पर न करें। इस प्रकार प्रथम दिन एक आवृत्ति करें। दूसरे दिन दो आवृत्ति, तीसरे दिन तीन आवृत्ति, चौथे दिन चार आवृत्तियों में पाठ होना चाहिये। यजमान-सहित सभी ब्राह्मणों को भूमि पर शयन, नित्य क्षीरान्न भोजन करना चाहिये। अशक्ति में हविष्यान्न का भोजन करें। ब्राह्मण सन्तुष्ट, मत्सरहीन होकर ब्रह्मचर्य का पालन करें तथा स्पर्श-अस्पर्श के नियमों का ध्यान रखें। इस प्रकार शत या सहस्त्र आवृत्तियों का सम्पादन करना चाहिये। (क्रोडतन्त्र में विशेष लिखा है कि तीन या पाँच या सात दिन अथवा नौ दिन अथवा एक पक्ष में शत/सहस्त्र आवृत्तियों को करना चाहिये। इससे अधिक अवधि नहीं लगानी चाहिये, जितने कम दिनों में सम्पन्न हो जाय, उतना ही अच्छा है।) प्रतिदिन सहस्त्र अथवा शत अथवा दश ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। प्रतिदिन रात्रि में जागरण करना चाहिये। फिर पाँचवें दिन हवन करे। नवरात्र की नवचण्डी में नवमी के दिन ही होम करना चाहिये। अन्य समय में अष्टमी, नवमी या चतुर्दशी में से किसी भी तिथि में होम करना चाहिये।

अथ होमप्रयोगः—देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मया ब्राह्मणद्वारा कृतस्य शतचण्डीजपस्य तत्सम्पूर्णतासिद्ध्यर्थं जपदशांशेन तिलादिमिश्रपायसद्रव्येण होमं करिष्ये, तदङ्गत्वेन कुण्डसंस्कारपूर्वकमग्निप्रतिष्ठापनं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य सामान्यतो गणपतिपूजनं विधाय कुण्डे स्थण्डिले वा पञ्चभूसंस्कारान् कृत्वा तत्र शतनामानमग्निं प्रतिष्ठाप्य सुसमिध्य ध्यायेत् [अत्र केचित्तु पुण्याहवाचनं तथा नान्दीश्राद्धं सर्वतोभद्रादिमण्डलपूजनं च कुर्वन्ति]। तत ईशान्यां दिशि ग्रहवेद्यां तत्तन्मन्त्रेण सूर्यादिग्रहान्संस्थाप्य सम्पूज्य तदीशान्यां पूर्ववत्कलशं स्थापयेत्। ततः पूर्ववत् यन्त्रावरणदेवतापूजां देवीपूजां च कृत्वा ततोऽग्निसमीपमागत्य कुशकुण्डिकां कृत्वा आघारावाज्यभागौ हुत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य क्रियमाणे शतचण्डीजपाङ्गहोमे इदं हवनीयद्रव्यं यथादैवतमस्तु न मम इति त्यागं कृत्वा। सूर्यादिग्रहेभ्योऽर्कादिसमिच्चरुतिलाज्यद्रव्यैरष्टाविंशति-सङ्ख्याकाभिराहुतिभिस्तैरेव द्रव्यैरधिप्रत्यधिदेवताभ्यश्चतुश्चतुःसङ्ख्याकाभिः विनायकादिदिक्पालान्तक्रतुसंरक्षक-देवताभ्यश्च द्विद्विसङ्ख्याकाभिश्च जुहुयात्। ततः सर्वतोभद्रमण्डलस्थदेवताहोमं कृत्वा प्रधानदेवतामहाकालीमहालक्ष्मी-

महासरस्वतीभ्यो गुडूचीपायसदूर्वातिलपलाशपुष्पसर्षपपूगीफललाजायवबिल्वफलरक्तचन्दनगुग्गुलुद्राक्षारम्भाफलद्रव्यै-स्त्रिमध्वक्तैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलशकलैर्जातीफलैर्मातुलुङ्गैरन्यैर्मधुरवस्तुभिश्च तिलमिश्रघृताक्तपायसेन वा (शूलेन पाहि नो देवि इत्यादि चतुर्मन्त्रवर्जसप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिश्लोकं जुहुयुः) तैरेव द्रव्यैर्नवार्णमन्त्रजपदशांशेनापि जुहुयुः।

होम प्रयोग—देश-काल का उच्चारण करके 'मया ब्राह्मणद्वारा कृतस्य शतचण्डीजपस्य, तत्सम्पूर्णतासिद्ध्यर्थं जपदशांशेन तिलादिमिश्रपायसद्रव्येण होमं करिष्ये। तदङ्गत्वेन कुण्डसंस्कारपूर्वकं अग्निप्रतिष्ठापनञ्च करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके सामान्यतः गणपति-पूजन कर कुण्ड अथवा स्थण्डिल पर पञ्चभू संस्कार करके वहाँ 'शतनामा' नामक अग्नि को प्रतिष्ठित कर समिधा-सहित अग्नि का ध्यान करे। (यहाँ कुछ लोग इस अवसर पर पुण्याहवाचन, नान्दीश्राद्ध तथा सर्वतोभद्रमण्डल का पूजन भी करते हैं)। फिर ईशान दिशा में ग्रहवेदी पर उनके मन्त्रों से सूर्यादि ग्रहों को स्थापित-पूजित करके उसके ईशान में पूर्ववत्कलश की स्थापना करनी चाहिये। फिर पूर्ववत् यन्त्रावरणदेवताओं तथा देवी की पूजा करके अग्नि के समीप आ करके कुशकण्डिका करके आधार में आज्याहुति करके देश-काल का उच्चारण कर 'क्रियमाणे शतचण्डीजपाङ्गहोमे इदं हवनीयद्रव्यं यथादैवतमस्तु न मम' कहकर त्याग करके सूर्यादि नवग्रहों के लिये अर्कादि की समिधा के साथ चरु, तिल, घृत द्रव्यों से २८ आहुतियाँ दे तथा उन्हीं होमद्रव्यों से नवग्रहों के अधिदेवताओं तथा प्रत्यधिदेवताओं को भी आहुतियाँ देनी चाहिये, उन्हें चार-चार आहुतियाँ दे। विनायकादि से लेकर दिक्पालों तक जो यज्ञसंरक्षक देवता हैं, उन्हें दो-दो आहुतियाँ दे। फिर सर्वतोभद्रमण्डल में स्थित देवताओं को होम करके प्रधान देवता महाकाली, महालक्ष्मी तथा महासरस्वती को गुडूची (गिलोय), खीर, दूब, तिल, पलाशपुष्प, सरसों, पूगीफल, लाजा, यव, बेलफल, रक्तचन्दन, गुग्गुलु, द्राक्षा, केलाफल, मधुलिप्त ईख के टुकड़ों, नारियल के टुकड़ों, जायफलों, नींबू के फलों तथा अन्य मधुर द्रव्यों से अथवा काले तिल-मिश्रित घृताक्त पायस से ('शूलेन पाहि नो देवि०' इत्यादि चार श्लोकों को छोड़कर सप्तशती के शेष श्लोकों से) दश आवृत्तियों में होम करना चाहिये। उन्हीं द्रव्यों से ही नवार्ण मन्त्र जपसङ्ख्या के दशांश का भी होम करनी चाहिये।

अध्यायसमाप्तौ उवाचस्थले च पत्रपुष्पैर्होमः कार्यः। एवं प्रधानदेवहोमं कृत्वा पूर्वोक्तजयादिपीठशक्तिभ्यो यन्त्रावरणदेवताभ्यश्च योगिनीभ्यश्च एकैकयाहुत्या साज्यं पायसं च जुहुयात्। ततः स्विष्टकृदादिप्रायश्चित्तहोमान्तं कृत्वा इन्द्रादिलोकपालेभ्यः सूर्यादिग्रहेभ्यः क्षेत्रपालादिभ्यश्च माषभक्तबलींस्तत्तन्मन्त्रैर्दद्यात्। ततो हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याचम्य 'समुद्रादूर्मिः' इत्यादिमन्त्रैः नवार्णमन्त्रेण 'नमो देव्यै महादेव्यै' इत्यादिमन्त्रैश्च पूर्णाहुतिं दत्त्वा प्रणीताविमोकादिकर्म्मशेषं समाप्य होमान्ते जले चण्डिकां सम्पूज्य मूलमन्त्रेण होमदशांशेन दुग्धमिश्रजलेन ॐ देवीं चण्डिकां तर्पयामीत्युक्त्वा तर्पणं कार्यम्। ततस्तर्पणदशांशेन मूलमन्त्रान्ते 'आत्मानमभिषिञ्चामि नमः' इति यजमानमूर्ध्न्यभिषेकः कार्यः। ततो यजमानः आचार्यादीन् वस्त्राद्यैः सम्पूज्य तेभ्यो निष्कं सुवर्णं वा गोमिथुनानि च प्रत्येकं दक्षिणां दद्यात्। आचार्याय द्विगुणं देयम्। सति सम्भवे कपिलगोनीलमणिश्वेताश्वच्छत्रचामरभूमिशय्यासप्तधान्यानि यथासम्भवं दद्यात्। तत आचार्यादयः कलशोदकेन सपत्नीकं सकुटुम्बं यजमानं वेदमन्त्रैः 'सुरास्त्वा०' इत्यादिपौराणिकैर्ग्रहमन्त्रैश्चाभिषिञ्चेयुः। ततो यजमानो ग्रहाणामुत्तरपूजां कृत्वा ग्रहाग्निं विसृज्य देवीं पञ्चोपचारैः सम्पूज्य महाबलिं दद्यात्।

अध्याय की समाप्ति पर पत्रों-पुष्पों से होम करना चाहिये। इस प्रकार प्रधानहोम करके फिर पूर्वोक्त जयादि पीठशक्तियों, यन्त्रावरण देवताओं, योगिनियों को भी घृत एवं पायस सहित एक-एक आहुति दे। फिर 'स्विष्टकृत्' से लेकर प्रायश्चित्त होम तक के सभी होम सम्पन्न करके इन्द्रादि लोकपालों, सूर्यादि ग्रहों तथा क्षेत्रपालादि के लिये माषभक्त (उबले उड़द) की बलि उनके मन्त्रों से दे। फिर हाथ-पैर धोकर आचमन करके समुद्रादूर्मि इत्यादि

मन्त्रों से अथवा नवार्ण मन्त्र से तथा 'नमो देव्यै महादेव्यै०' इत्यादि मन्त्रों से पूर्णाहुति करके प्रणीता विमोक-पर्यन्त कर्मों को समाप्त कर होम के अन्त में जल में चण्डिका की पूजा करके मूल मन्त्र के द्वारा होमसङ्ख्या का दशांश तर्पण दुग्धमिश्रित जल से 'ॐ चण्डिकादेवीं तर्पयामि' यह कहकर करना चाहिये। फिर मूल मन्त्र में ही तर्पणसङ्ख्या का दशांश 'आत्मानमभिषिञ्चामि' जोड़कर मार्जन यजमान अपने सिर पर करे।

फिर यजमान आचार्यादि को वस्त्रादि से पूजित करके उनको निष्क सुवर्ण अथवा गोमिथुन दक्षिणा के रूप में दे। आचार्य को द्विगुणित दक्षिणा देनी चाहिये। कपिलागाय, नीलमणि, श्वेताश्व, छत्र, चामर, शय्या, भूमि तथा सप्तधान्य भी यथासम्भव देना चाहिये। फिर आचार्यादि ब्राह्मण कलशोदक से सपत्नीक-सकुटुम्ब यजमान का 'सुरास्त्वामभिषिञ्चामि' इत्यादि वेदमन्त्रों एवं पौराणिक मन्त्रों से अभिषेक करे। फिर यजमान ग्रहों की उत्तरपूजा करके ग्रहाग्नि का विसर्जन कर देवी की पञ्चोपचारों से पूजा कर महाबलि प्रदान करे।

(तत्र क्षत्रियादिनाऽश्वमेषच्छागमहिषाणामन्यतरो देयः)। विप्रेण तु कूष्माण्डबिल्वफलमिक्षवश्च देयाः। तद्यथा— देवीं द्रोणपुष्पबिल्वपत्राम्रदलजातीचम्पकैः सम्पूज्य कर्ता उदङ्मुखः पूर्वमुखं देव्यभिमुखं वा बलिं गन्धादिनाभ्यर्च्य,

पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः। प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम्॥
चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्विनाशनम्। चामुण्डाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमोऽस्तु मे॥
यज्ञार्थं बलयः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा। अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः॥

इति बलिमभिमन्त्र्य 'ॐ ह्रीं श्रीं' इति मन्त्रपुष्पं क्षिप्त्वा 'रसना त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः, 'ॐ ह्रां ह्रीं खड्ग आं हुं फट्' इति खड्गमन्यद्वा शस्त्रं सम्पूज्य 'ॐ कालिकालि यज्ञेश्वरि लोहदण्डायै नमः' इति बलिं छेदयित्वा 'ॐ ऐं ह्रीं कौशिकि रुधिरेणाप्यायताम्' इति देव्यै निवेद्य ततो माषपिष्टमयं शत्रुं कृत्वा खड्गेन च्छेदयित्वा स्कन्दाय विशिखाय च दत्त्वा बलिशेषं रक्षोभ्यो हरेत्। मन्त्रस्तु 'ॐ ह्रीं स्फुरस्फुर कुम्भ २ सूनु २ गुलु २ धुनु २ मारय २ विद्रावय २ विदारय २ कम्पय २ कम्पातय २ पूरय २ ॐ ह्रीं ॐ हुं फट् हुं मर्दय २ हुम्।' ततः शेषबलिं बहिर्दद्यात्।

बलिं गृह्णन्त्विमं देवा आदित्या वसवस्तथा। मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगाः खगाः॥
असुरा यातुधानश्च पिशाचोरगराक्षसाः। डाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवाः॥
जृम्भकाः सिद्धगन्धर्वा नागा विद्याधरा नगाः। दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः॥
जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः। मा विघ्नं मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः॥
सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूतप्रेताः सुखावहाः॥

इति मन्त्रान् पठेत्।

अयं बलिः शूद्रेण दुर्ब्राह्मणेन वा नेयः। ततः स्नात्वा तिलकं धृत्वा देवीं प्रार्थयेत्। तत्र मन्त्राः—'खड्गिनी शूलिनी घोरा०॥ १॥ शूलेन पाहि नो देवि०॥ ४॥ नमो देव्यै महादेव्यै०॥ ५॥ रूपं देहि यशो देहि भर्गं भगवति देहि मे। पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे॥ ६॥ महिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि। आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देवि नमोऽस्तु ते॥ ७॥ इति देवीं सम्प्रार्थ्य,

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि प्रसादात्तव सुन्दरि॥

इति देव्यै जपं निवेद्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'कृतस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं कुमारीर्ब्राह्मणसुवासिनीर्भोजयिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूजापूर्वकं ब्राह्मणशतं नानाभक्ष्यभोज्यैः सम्भोज्य तेभ्यो भूयसीं दक्षिणां दत्त्वा प्रदक्षिणां कृत्वा आशिषो गृह्णीयात्। ततो मूलमन्त्रेण पुष्पेण देवीमुद्वास्य तेनैव षडङ्गं कृत्वा 'उत्तिष्ठ ब्रह्मण०॥ १॥ उत्तिष्ठ देवि चण्डेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च। कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह॥ २॥' इति विसृज्य प्रतिमामाचार्याय दत्त्वा मन्त्रं पठेत्।

त्रैलोक्यमातर्देवि त्वं सर्वभूतदयान्विते। दानेनानेन सन्तुष्टः सुप्रीताः वरदा भव॥

ततः यस्य स्मृत्या०॥ १॥ प्रमादात्कुर्वतां०॥ २॥' इत्यादि पठित्वा कर्मेश्वरार्पणं कृत्वा सुहृद्युक्तो भुञ्जीत। एतद्दशगुणो विधिः सहस्रचण्ड्यां तद्दशगुणो विधिरयुतचण्ड्यां च ज्ञेयः। शेषं शतचण्डीवत्।

एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः। राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत सः॥

इति पण्डितश्रीचतुर्थीलालगौडविरचितेऽनुष्ठानप्रकाशे शतचण्डीविधानप्रयोगः। श्रीचण्डिकार्पणमस्तु।

बलिदान—क्षत्रियादि को मेष, छाग, महिष आदि में किसी की बलि देनी चाहिये; परन्तु ब्राह्मण को कूष्माण्डफल (कुम्हड़ा—पेठा), बेलफल अथवा ईख की बलि देनी चाहिये। उसका विधान इस प्रकार है—देवी का द्रोणपुष्प (दोना के फूल), बिल्वपत्र, आम्रपत्र, जायफल, चम्पा आदि से पूजन करके यजमान उत्तर या पूर्व की ओर मुख करके बलि को गन्धादि से पूजित कर 'पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः। प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम्॥ १॥ चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापद् विनाशनम्। चामुण्डाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमोस्तु मे॥ २॥ यज्ञार्थं बलयः सृष्टाः स्वयमेव स्वयंभुवा। अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः॥ ३॥' इन श्लोकों को पढ़ते हुए बलि को अभिमन्त्रित कर उसपर 'ॐ ह्रीं श्रीं' कहकर पुष्प छोड़े। फिर 'रसनां त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः' तथा 'ॐ ह्रां ह्रीं खड्ग आं फट्' इन मन्त्रों से खड्ग (तलवार) या अन्य शस्त्र (गँड़ासा आदि) को पूजकर 'ॐ कलिकालि यज्ञेश्वरि लोहदण्डायै नमः' ऐसा कहकर बलि को काट दे। फिर 'ॐ ह्रीं कौशिकि रुधिरेणाप्यायताम्' कहकर बलि देवी को निवेदित करके उस बलि पदार्थ की शत्रु की मूर्ति बनाकर खड्ग से काटकर स्कन्द के लिये, विशाख के लिये देकर शेष बलि को राक्षसों को दे दे। उसका मन्त्र है—ॐ ह्रीं स्फुर-स्फुर, कुम्भ-कुम्भ, सूनु-सूनु, गुलु-गुलु, धुनु-धुनु, मारय-मारय, विद्रावय-विद्रावय, विदारय-विदारय, कम्पय-कम्पय, कम्पातय-कम्पातय, पूरय-पूरय, ॐ ह्रीं, ॐ हुं फट्, हुं मर्दय-मर्दय हुम्। शेष बलि देवीमूर्ति के बाहर (अलग) दे। उस बलिहेतु मूल में लिखित 'बलिं गृह्णन्त्विमं देवा आदित्या वसवस्तथा। मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगाः खगाः॥ १॥ असुरा यातुधानाश्च पिशाचोरगराक्षसाः। डाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवाः॥ २॥ जृम्भकाः सिद्धगन्धर्वाः नागा विद्याधराः खगाः। दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः॥ ३॥ जगतां शान्तिकर्त्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः। मा विघ्नं मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः॥ ४॥ सौम्याः भवन्तु तृप्ताश्च भूतप्रेतसुखावहाः॥' इन मन्त्रों को पढ़े। यह बलि शूद्र या दुर्ब्राह्मण को उठाकर ले जानी चाहिये। फिर यजमान को स्नान करके तिलक लगाकर देवी की प्रार्थना मूलपाठ में लिखे 'खड्गिनी शूलिनी घोरा' इत्यादि सात मन्त्रों से करनी चाहिये। फिर 'गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत् प्रसादात् महेश्वरि॥' कहकर देवी के दक्षिण कर में जप का निवेदन करनी चाहिये।

फिर देश-काल का उच्चारण कर 'कृतस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं कुमारीर्ब्राह्मणसुवासिनीर्भोजयिष्ये' कहकर सङ्कल्प करे। फिर सम्मानपूर्वक कुमारियों, ब्राह्मणों तथा सुवासिनों को भोजन कराये। उन्हें भूयसी दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद ग्रहण करे। फिर मूल मन्त्र पढ़कर पुष्प के द्वारा देवी का उद्वासन करे। मूल मन्त्र से ही षडङ्ग करके 'उत्तिष्ठ देवि चण्डेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च। कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह॥' कहकर देवी का विसर्जन कर दे तथा उनकी प्रतिमा को आचार्य को दे दे। 'त्रैलोक्यमातर्देवि त्वं सर्वभूतदयान्विते। दानेनानेन सन्तुष्टा सुप्रीता वरदा भव। यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तथा प्रमादात् कुर्वतां कर्म' इन तीन मन्त्रों को पढ़कर कर्म को ईश्वरार्पण कर दे। फिर यजमान स्वयं अपने बन्धु-बान्धवों एवं इष्टमित्रों सहित भोजन करे।

इस विधि का दशगुना सहस्रचण्डी में तथा सहस्रचण्डी से दशगुना विधि अयुत चण्डी में करना चाहिये। शेष सब विधि शतचण्डी की भाँति ही सहस्रचण्डी तथा लक्षचण्डी में होती है। ऐसा करने से सभी उपद्रव नष्ट होते हैं और कर्त्ता राज्य, धन, यश, पुत्र तथा अभीष्ट को प्राप्त करता है।

देव्यथर्वशीर्षम्

ॐ सर्वे देवा वै देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवी सा ब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगच्छून्यं चाशून्यं च अहमानन्दानानन्दौ अहं विज्ञानाविज्ञाने अहं ब्रह्माब्रह्मणी द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये॥ १-२॥ इति वाथर्वणश्रुतिः। अहं पञ्चभूतानि अहं पञ्चतन्मात्राणि अहमखिलं जगत् वेदोऽहमवेदोऽहं विद्याहमविद्याहम् अजाहमनजाहम् अधश्चोर्ध्वं च तिर्यञ्चाहम् अहꣳरुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि अहमादित्ये ऋत विश्वेदेवैः महं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ अहꣳसोमन्त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुतप्रजापतिं दधामि अहं दधामि द्रविण ꣳ हविष्मतेसुप्राव्ये यजमानाय सुव्रते अहꣳराज्ञीसङ्गमनीवसूनाचिकितुषीप्रथमायज्ञियानाम् अहꣳसुवे पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरस्वात् समुद्रे य एवं वेद स दैवीꣳ सम्पदमाप्नोति ते देवा अब्रुवन्—

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥
तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टां। दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः॥
देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति। सानोमन्देषमूर्जंदुहानाधेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु ॥

कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम्। सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः। पावनां शिवाम्।

महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि। तन्नो देवीप्रचोदयात्। अदितिर्ह्यजनिष्टं दक्षयादुहितातव। तान्देवाअन्वजायन्ते भद्राअमृततबन्धवः कामेयोनिः कमलावज्रपाणिगुहाहं सामातलिश्चाभ्रमिन्द्रः पुनर्गुहा सकलामायया चापृथक् क्लेशाविश्वमातादिविद्याः। एषात्मशक्तिः एषा विश्वमोहिनीपाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा। एषा श्रीमहाविद्या। य एवं वेद स शोकं तरति। नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः। सैषा वैष्णवा वसवः सैवैकादशरुद्राः सैषा द्वादशादित्याः सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचयक्षसिद्धाः सैषा सत्त्वरजस्तमांसि सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतिष्कलाकाष्ठादिविश्वरूपिणी तामहं प्रणौमि नित्यम्।

पापापहारिणी देवी भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी। अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां सर्वदा शिवाम्॥
वियदाकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम्। अर्द्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम्॥
एवमेकाक्षरं मन्त्रं यतयः शुद्धचेतसः। ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः॥
वाङ्मयाब्रह्मभूस्तस्मात् षष्ठवक्त्रसमन्वितम्। सूर्योवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्ताष्टतृतीयकम् ॥
नारायणेन सम्मिश्रो वायुश्चाधारयुक्तयः। विच्चे नवार्णकोणस्य महानानन्ददायकः॥
हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम्। पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तिकाम्॥
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुहं भजे। भजामि त्वां महादेवि महाभयविनाशिनि॥
महादारिद्र्यशमनि महाकारुण्यरूपिणि॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया। यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यतेऽनन्ता। यस्या लक्षं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या। यस्या जननं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अजा। एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका। एकैवं विश्वरूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका। अत एवोच्यतेऽज्ञेयानन्तालक्ष्याजैकानेकामन्त्राणां मातृकादेवीशब्दानां ज्ञानरूपिणी ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यसाक्षिणी। यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता। तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम्॥ नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम्॥

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षफलमाप्नोति। इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां ॐ स्थापयति। शतलक्षं प्रजप्त्वापि नार्चाशुद्धिं च विन्दति। शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः॥ दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापात्प्रमुच्यते। महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायंप्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। निशीथे तुरीयसन्ध्यायां जप्तुर्वाक्सिद्धिर्भवति। नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति। भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति। स महामृत्युं तरति। य एवं वेद। इत्युपनिषत्। इति देव्यथर्वशीर्षं समाप्तम्।

देवी अथर्वशीर्ष—ॐ सभी देवता देवी के निकट गये तथा पूछने लगे—हे महादेवि! आप कौन हैं ? वह बोली—मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ तथा मुझसे प्रकृति-पुरुषात्मक (सद-असद् रूप) जगत उत्पन्न हुआ है। मैं आनन्द तथा अनानन्द रूप वाली हूँ। मैं विज्ञान तथा अविज्ञान स्वरूपिणी हूँ। मैं जानने योग्य ब्रह्म तथा अब्रह्म हूँ। मैं पञ्चभूत तथा अपञ्चभूत हूँ। मैं सम्पूर्ण जगत् हूँ। वेद तथा अवेद हूँ। मैं विद्या तथा अविद्या हूँ। मैं अजा तथा अनजा (प्रकृति तथा उससे भिन्न) हूँ। मैं नीचे, ऊपर तथा तिर्यक् (अगल-बगल) हूँ। मैं रुद्रों एवं वसुओं के रूप में सञ्चरित होती हूँ। मैं आदित्यों एवं विश्वेदेवों के रूपों में फिरा करती हूँ। मैं मित्र तथा वरुण दोनों का, इन्द्र एवं अग्नि का एवं अश्विनीद्वय का पोषण करती हूँ। मैं सोम, त्वष्टा, पूषा तथा भग को धारण करती हूँ। तीनों लोकों को अपने पादक्षेप से आक्रान्त करने वाले विष्णु को तथा ब्रह्मा एवं प्रजापति को मैं ही धारण करती हूँ। मैं देवताओं को हवि पहुँचाने वाले तथा सोमरस निकालने वाले यजमान के लिये हविर्द्रव्यों से युक्त धन को धारण करती हूँ। मैं सम्पूर्ण संसार की ईश्वरी, उपासकों को धन प्रदान करने वाली, ब्रह्मस्वरूपा तथा यजन करने योग्य देवों में प्रथमा हूँ। मैं आत्मस्वरूप पर आकाश आदि का निर्माण करती हूँ। मैं आत्मस्वरूप को धारण करने वाली बुद्धिवृत्ति में स्थित रहती हूँ। जो इस बात को जानता है, दैवी सम्पदा को प्राप्त होता है।

वे देवता बोले—देवी को प्रणाम है, बड़ों-बड़ों को भी स्वकर्त्तव्य मार्ग पर आरूढ़ करने वाली कल्याणी को प्रणाम है। उन अग्नि के समान चमक वाली, तप से जलने वाली वैरोचनी देवी की शरण में हम देवता लोग जाते हैं। उन असुरों को नष्ट करने वाली देवी को नमस्कार है। प्राणस्वरूप देवताओं ने जिस भास्वर वैखरी वाणि का प्रदान किया, उसे अनेक प्रकार के प्राणी बोलते हैं। वह कामधेनु के समान आनन्ददायक, अन्न तथा बलदायक, वाणीरूप भगवती उत्तम स्तुति से सन्तुष्ट होकर हमारे समीप पधारने की कृपा करे। काल की नाशक, वेदों द्वारा स्तुत, विष्णुशक्ति, स्कन्दमाता (शिवशक्ति), देवमाता (अदिति), सरस्वती (ब्रह्मशक्ति), दक्षकन्या (सती), पापनाशिनी कल्याणकारिणी देवी को हम (देवगण) प्रणाम करते हैं। हम महालक्ष्मी को जानते हैं। हम उन शक्तिस्वरूपिणी का ही ध्यान करते हैं। वह देवी हमें ज्ञान में प्रवृत्त करे।

हे दक्ष! आपकी पुत्री अदिति से देव उत्पन्न हुए हैं। काम (क), योनि (ए), कमला (ई), वज्रपाणि इन्द्र ('लं' बीज), गुहा (ह्रीं बीज), सकल वर्ण तथा माया बीज (ह्रीं)—यह सर्वात्मिका जगन्माता की मूल विद्या है तथा वह ब्रह्मस्वरूपिणी है। ये परात्म शक्ति हैं। ये विश्वमोहिनी हैं; जो पाश, अङ्कुश, धनुष, बाण को धारण करने वाली हैं। ये श्री महाविद्या हैं। जो इस बात को जानता है, वह व्यक्ति सभी शोक से पार हो जाता है। हे भगवति! आपको नमस्कार है। हे माता! आप हम देवों की रक्षा करें।

(मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने कहा)—वही यातुधान है; वही असुर, राक्षस, पिशाच, यक्ष तथा सिद्ध हैं; वही सत्व-रज-तम हैं। वही ब्रह्म-विष्णु-रुद्रस्वरूपिणी है। वही प्रजापति, इन्द्र एवं मन है। वही देवी इन ग्रह, नक्षत्र, तारों, कला, काष्ठा आदि के रूप में प्रकट है। वह पापनाशक, भोग-मोक्षप्रद, अन्तरहित, विजयाधिष्ठात्री, दोषरहित,

शरण्या, कल्याणदात्री तथा मङ्गलरूपिणी है; उसे हम प्रणाम करते हैं। आकाश (ह) तथा 'ई' वर्ण से युक्त जो वीतिहोत्र (अग्नि='रं' बीज) युक्त अर्धचन्द्र से अलंकृत देवीबीज है, वह सभी मनोरथों को पूरा करना है। इस एकाक्षर ब्रह्म (ह्रीं) को शुद्ध चित्त वाले साधक ज्ञान के सागर होकर ध्याते हैं। हे चित्स्वरूपिणी महासरस्वती, हे सद्रूपिणी महालक्ष्मी, हे आनन्दरूपिणी महाकाली! ब्रह्मविद्या पाने के लिये हम प्रत्येक समय आपका ध्यान करते हैं। आपको नमस्कार है। आप अविद्या रज्जु की हृद्ग्रन्थि को खोलकर मुझे मुक्त करो।

हृत्कमल के मध्य में रहने वाली, प्रातःकालीन सूर्य जैसी कान्ति से युक्त, पाशाङ्कुशधारिणी, मनोहर-स्वरूपिणी, वरद एवं अभयमुद्राधारिणी, त्रिनेत्रा, रक्तवस्त्रधारिणी तथा कामधेनु के समान भक्तों के मनोरथ को पूर्ण करने वाली देवी को मैं भजता हूँ। महाभयनाशिनी, महासङ्कट को शान्त करने वाली, करुणामयी देवीमूर्ति! आपको नमस्कार है। जिस देवी का स्वरूप ब्रह्मादि देवता भी नहीं जानते हैं, इसलिये वह अज्ञेया कहलाती है। अन्त न मिलने से वह अनन्ता है। लक्ष्य न दिखने से वह अलक्ष्या है। जन्म का पता नहीं होने से वह अजा है। वह अकेली है, सर्वव्याप्त है। अतः एका है; किन्तु वही विश्व में नाना रूपों में दिखती है; अतः नैका है। इसीलिये वह देवी अज्ञेया, अनन्ता, अलक्ष्या, अजा, एका तथा नैका कहलाती है। सब देवों में मातृका (मूलाक्षर) रूप में, शब्दों में ज्ञान के रूप में, ज्ञानों में चिन्मयातीता के रूप में, शून्यों में शून्यसाक्षिणी के रूप में वह देवी रहती है। अतः उस दुर्गा के नाम से प्रसिद्ध देवी के समान अन्य कोई श्रेष्ठ नहीं है। अतः उन दुर्विज्ञेया, दुराचारनाशिनी, संसारतारिणी दुर्गा को मैं संसारभय से भीत होकर नमस्कार करता हूँ।

इस अथर्वशीर्ष का जो अध्ययन करता है, उसे पाँच अथर्वशीर्षों के जप का फल प्राप्त होता है। इस अथर्वशीर्ष को बिना जाने जो देवी की प्रतिमा का स्थापन करता है, उसे सैकड़ों लाख जप करने पर भी देवी-पूजा का फल नहीं मिलता है। अष्टोत्तर (१०८) जप इसकी पुरश्चरण विधि है। जो इसका दस बार पाठ करता है, वह उसी समय पापों से छुटकारा पा जाता है। जो सायङ्काल इसका पाठ करता है, वह दिन में किये गये पापों को नष्ट कर लेता है। प्रातःकाल में जो इसका अध्ययन करता है, उसके रात में किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं। दोनों सन्ध्याओं में इसको पढ़ने वाला निष्पाप रहता है। जो इसका मध्यरात्रि में तुरीय सन्ध्या के समय जप करता है, उसे वाक्सिद्धि प्राप्त होती है। नयी प्रतिमा पर (प्रतिष्ठा के समय) किया गया जप देवी का सान्निध्य प्राप्त कराता है। प्राणप्रतिष्ठा के समय इसका जप करने से प्राणों की प्रतिष्ठा होती है। भौमवार में अश्विनी नक्षत्र के योग से बने अमृतसिद्धि योग में इसका जप महादेवी के सान्निध्य में करने पर महामृत्यु से तर जाता है (मुक्त हो जाता है)। जो इस प्रकार से जानता है, वह महामृत्यु से तर जाता है। इस प्रकार यह (देव्यथर्वशीर्ष) अविद्यानाशिनी ब्रह्मविद्या है।

विमर्श—सामान्यतः दैनिक कृत्य में त्रिकाल सन्ध्या करने का विधान है, जिसके अनुसार प्रातः, मध्याह्न तथा सूर्यास्त समय—इन तीन कालों में सन्ध्या करने का नियम है; परन्तु तन्त्रमार्ग में जो श्रीविद्या के साधक होते हैं, वे चार समय सन्ध्योपासना करते हैं, इनमें चौथी सन्ध्या निशीथ काल (अर्धरात्रि के समय) में की जाती है। इसी का नाम तुरीय सन्ध्या है।

लक्ष्मीमन्त्रानुष्ठानम्

श्रीगणेशाय नमः। अथ लक्ष्मीमन्त्रानुष्ठानविधानं शारदातिलके—

अथ वक्ष्ये श्रियो मन्त्रान् श्रीसौभाग्यफलप्रदान्। यस्याः कटाक्षमात्रेण त्रैलोक्यमपि वर्द्धते॥ १॥

तत्र तावल्लक्ष्म्या एकाक्षरमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः। मन्त्रस्वरूपं यथा 'श्रीं' इत्येकाक्षरो बीजमन्त्रः॥ १॥ ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं इति चतुर्बीजात्मको मन्त्रः॥ २॥ अस्य लक्ष्मीबीजमन्त्रस्य भृगुर्ऋषिः निचृच्छन्दः श्रीलक्ष्मीः देवता। शं बीजम्। ईं शक्तिः। रं कीलकम्। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ भृगुऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ निचृच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ शं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ईं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ रं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ श्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ श्रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ श्रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ श्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ श्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

एकाक्षरमन्त्रध्यानम्—

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजैर्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम्।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललसितां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

अथ चतुरक्षरमन्त्रध्यानम्—

माणिक्यप्रतिमप्रभाहिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजैर्हस्ताग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां मुदा।
हस्ताब्जैर्वरदानमम्बुजयुगाभीतीर्दधानां हरेः कान्तां काङ्क्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजासनाम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्।

एकाक्षर तथा चतुरक्षर लक्ष्मी मन्त्र-प्रयोग (शारदातिलक में)—अब मैं श्री लक्ष्मी जी के सर्वसौभाग्यप्रद मन्त्रों को बता रहा हूँ, जिसके कटाक्षमात्र से तीनों लोक वृद्धि को प्राप्त होते हैं। अब प्रथम लक्ष्मी के एकाक्षर एवं चतुरक्षर मन्त्रों के प्रयोग को कहता हूँ। 'श्रीं' यह एकाक्षर मन्त्र है तथा 'ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं' यह चतुर्बीजात्मक (चार अक्षरों का) मन्त्र है।

विनियोग—'ॐ अस्य श्रीलक्ष्मीबीजमन्त्रस्य भृगुर्ऋषिः निचृच्छन्दः श्रीलक्ष्मीः देवता शं बीजं ईं शक्तिः रं कीलकम् सर्वेष्टसिद्धिजपे विनियोगः' कहकर विनियोग करे। फिर मूल में लिखे 'ॐ भृगुऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में ऋष्यादिन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।' इत्यादि छः मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में करन्यास करे। तदनन्तर 'ॐ श्रां हृदयाय नमः, ॐ श्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ श्रूं शिखायै वषट्, ॐ श्रैं कवचाय हुम्, ॐ श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् तथा ॐ श्रः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादिन्यास करना चाहिये (फिर ध्यान करे)। एकाक्षर मन्त्र का ध्यान इस प्रकार है—

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजैर्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम्।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां क्षौमाबद्धनितम्बविंबलसितां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

चतुरक्षर मन्त्र का ध्यान इस प्रकार है—

माणिक्यप्रतिमप्रभाहिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजैर्हस्ताग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां मुदा।
हस्ताब्जैर्वरदानमम्बुजयुगाभीतीर्दधानां हरेः कान्तां काङ्क्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजासनाम्॥

इस प्रकार से जिस मन्त्र का अनुष्ठान करना हो, उसका ध्यान करे। फिर मानसोपचार से श्री लक्ष्मी जी की पूजा करके पीठपूजा करे।

ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः इति पीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिषु ॐ विभूत्यै नमः॥ १॥ ॐ उन्नत्यै नमः॥ २॥ ॐ कान्त्यै नमः॥ ३॥ ॐ सृष्ट्यै नमः॥ ४॥ ॐ कीर्त्यै नमः॥ ५॥ ॐ सन्नत्यै नमः॥ ६॥ ॐ पुष्ट्यै नमः॥ ७॥

ॐ उत्कृष्ट्यै नमः ॥ ८ ॥ (मध्ये) ॐ ऋद्ध्यै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। तदुपरि श्रीकमलासनाय नमः इत्यासनं दत्त्वा मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

पीठपूजा—'ॐ मण्डूकादिपरतत्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' कहकर पीठदेवताओं को पूजकर मूल में लिखित पूर्वादि आठ दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ विभूत्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से क्रमशः पूजन करे, फिर पीठ के मध्य भाग में 'ॐ ऋद्ध्यै नमः' कहकर नौ पीठशक्तियों का पूजन सम्पन्न करना चाहिये। फिर उस पीठ पर 'श्रीकमलासनाय नमः' कहकर लक्ष्मी जी को आसन दे। फिर मूल मन्त्र से लक्ष्मी जी की मूर्ति की कल्पना करके पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूजन कर फिर आवरणपूजा करनी चाहिये।

(षट्कोणे) आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ श्रां हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रीं शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ श्रूं शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ श्रैं कवचाय हुँ ॥ ४ ॥ ॐ श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ श्रः अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। तद्बहिरष्टदले पूर्वादिचतुर्दिक्षु क्रमेण ॐ वासुदेवाय नमः ॥ १ ॥ ॐ सङ्कर्षणाय नमः ॥ २ ॥ ॐ प्रद्युम्नाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ अनिरुद्धाय नमः ॥ ४ ॥ (कोणदलेषु) ॐ दमकाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ सलिलाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गुग्गुलाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ कुरुण्डकाय नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। (ततो देवीदक्षिणभागे) ॐ शङ्खनिधये नमः ॥ १ ॥ ॐ वसुधायै नमः ॥ २ ॥ (देवीवामे) ॐ पद्मनिधये नमः ॥ १ ॥ ॐ वसुमत्यै नमः ॥ २ ॥ इति पूजयेत्। (ततोऽष्टदलाग्रेषु पूर्वादिक्रमेण) ॐ बलाक्यै नमः ॥ १ ॥ ॐ विमलायै नमः ॥ २ ॥ ॐ कमलायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ नवमालिकायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ विभीषिकायै नमः ॥ ५ ॥ ॐ भालिकायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ शाङ्कर्य्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सुमालिकायै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। तद्बाह्ये इन्द्रादीन् दशदिक्पालान् पूजयेत्। तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तं सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

आवरण-पूजा—सर्वप्रथम षट्कोण में आग्नेयादि कोण, केसरों के मध्य तथा दिशाओं में 'ॐ श्रां हृदयाय नमः' इत्यादि मूल में लिखित छः मन्त्रों से पूजन करे। इस प्रकार षडङ्ग पूजन करने के पश्चात् बाहर अष्टदलों में मूलोक्त 'ॐ वासुदेवाय नमः' इन चार मन्त्रों से मुख्य दिशाओं में फिर 'ॐ दमकाय नमः' इत्यादि शेष चार मन्त्रों से चारो कोणों (विदिशाओं) के दलों में पूजन करे। फिर देवी के दक्षिण भाग में 'ॐ शङ्खनिधये नमः तथा ॐ वसुधायै नमः' से पूजन करे। फिर उनके वामभाग में 'ॐ पद्मनिधये नमः तथा ॐ वसुमत्यै नमः' से पूजन करे। फिर आठो दलों में क्रम से 'ॐ बलाक्यै नमः' इत्यादि मूलोक्त आठ मन्त्रों से पूजन करना चाहिये। फिर उसके बाहर दश दिक्पालों तथा उनके बाहर उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार से आवरण-पूजा करके धूपादि नमस्कारान्त पूजित कर लक्ष्मीस्तव (आगे दिये गये हैं) से स्तुति कर मन्त्र (एकाक्षरी मन्त्र अथवा चतुरक्षरी मन्त्र) का जप करना चाहिये। इन मन्त्रों का पुरश्चरण बारह लाख जप करने से होता है। अन्य सब पूर्ववत् करना चाहिये।

तथा च—

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः। श्रियमभ्यर्चयेन्नित्यं सुगन्धिकुसुमादिभिः ॥
तत्सहस्रं प्रजुहुयात्कमलैर्मधुरोक्षितैः। जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुराप्लुतैः ॥
बैल्वैः फलैर्वा जुहुयात्त्रिभिर्वा साधकोत्तमः। इत्थं यो भजते देवीं विधिना साधकोत्तमः ॥
धनधान्यसमृद्धिः स्याच्छ्रियमाप्नोत्यनिन्दिताम् ॥
वक्षःप्रमाणे सलिले स्थित्वा मन्त्रमिमं जपेत्। त्रिलक्षं संयतो मन्त्री देवीं ध्यात्वार्कमण्डले ॥
स भवेदल्पकालेन रमाया वसतिः स्थिरा। विष्णुगेहस्थबिल्वस्य मूलमास्थाय मन्त्रवित् ॥

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं वाञ्छितं लभते धनम्। अशोकवह्नौ जुहुयात्तण्डुलैराज्यलोलितैः॥
वशयत्यचिरादेव त्रैलोक्यमपि मन्त्रवित्। जुहुयात्तण्डुलैः शुद्धैरर्काग्नौ नियुतं वशी॥
राज्यश्रियमवाप्नोति राजपुत्रो महीयसीम्। जुहुयात्खादिरे वह्नौ तण्डुलैर्मधुरोक्षितैः॥
राजा वश्यो भवेच्छीघ्रं महालक्ष्मीश्च वर्द्धते। बिल्वछायामधिवसन्बिल्वमिश्रहविष्यभुक् ॥
संवत्सरद्वयं हुत्वा तत्फलैरथवाम्बुजैः। साधकेन्द्रो महालक्ष्मीं चक्षुषा पश्यति ध्रुवम्॥
हविषा घृतसिक्तेन पायसेन ससर्पिषा। हुत्वा श्रियमवाप्नोति नियुतं मन्त्रवित्तमः॥
मधुराक्तारुणाम्भोजैर्जुहुयाल्लक्षमादरात् । न मुञ्चति रमा तस्य वंशमाभूतसम्प्लवम्॥
इत्येकाक्षरचतुरक्षरलक्ष्मीमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः।

पुरश्चरण की फलश्रुति—दीक्षा लेकर जितेन्द्रिय होकर बारह लाख जप करते हुए प्रतिदिन लक्ष्मी का पूजन सुगन्ध कुङ्कुमादि से करे। जप का दशांश मधुरत्रय (घी, दूध तथा मधु—ये तीन मधुरत्रय हैं) से आप्लावित कर कमलों से अथवा मधुर-प्लावित तिलों से अथवा बेलफलों के तीन टुकड़े करके साधक को हवन करना चाहिये। जो इस प्रकार से देवी को भजता है, उसके धन-धान्य की समृद्धि होती है तथा उसे नित्य ही लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यदि आवक्ष गहरे जल में खड़े होकर इस मन्त्र को तीन लाख की सङ्ख्या में जपे तथा सूर्यमण्डल में देवी का ध्यान करे तो उसके यहाँ एक कल्प समय तक लक्ष्मी स्थिर रहती है। भगवान् विष्णु के मन्दिर प्राङ्गण में लगे बेलवृक्ष की जड़ में बैठकर यदि इस मन्त्र का जप किया जाय तो वाञ्छित धन की प्राप्ति होती है। यदि अशोक की समिधा की अग्नि में घृताक्त चावलों से हवन किया जाय तो तीनों लोक शीघ्र ही वश में हो जाते हैं। यदि आक की समिधा की अग्नि में हवन करे तो उस राजपुत्र को राज्यलक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यदि खैर की समिधाओं की अग्नि में मधुर-मिश्रित तण्डुल से हवन करे तो उसके वश में राजा हो जाता है और उसकी लक्ष्मी बढ़ती है। यदि बेलवृक्ष की छाया में बैठकर बेलफल-मिश्रित हविष्य का भोजन करते हुये दो वर्ष तक बेलफलों अथवा कमलों से हवन करे तो वह अपने नेत्रों से निश्चित ही लक्ष्मी के दर्शन करता है। यदि घी मिश्रित पायस से हवन करे तो लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। मधुराक्त लाल कमल के फूलों से एक लाख हवन भक्तिपूर्वक करे तो लक्ष्मी उसके वंश को छोड़कर नहीं जाती है। इस प्रकार यह एकाक्षर तथा चतुरक्षर लक्ष्मी मन्त्र की प्रयोगविधि समाप्त हुई।

दक्षाक्षरलक्ष्मीमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'नमः कमलवासिन्यै स्वाहा' इति दशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य दक्षऋषिः। विराट् छन्दः। लक्ष्मीर्देवता। इष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ दक्षऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ लक्ष्मीदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ देव्यै नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ पद्मिन्यै नमः तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ विष्णुपत्न्यै नमः मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ वरदायै नमः अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ कमलरूपायै नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। एवं नेत्रहीनं हृदयादिपञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। ध्यानम्—

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती दानं पद्मयुगाभये च वपुषा सौदामिनीसन्निभा।
मुक्तादामविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासनी पायान्नः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्ती हरिम्॥
इति ध्यात्वा पूर्वोक्तावरणपूजां कृत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षणजपः।

दशाक्षर लक्ष्मी मन्त्र-प्रयोग—'नमः कमलवासिन्यै स्वाहा' यह दशाक्षरों वाली लक्ष्मी मन्त्र है। विनियोग-हेतु 'ॐ अस्य दशाक्षरलक्ष्मीमन्त्रस्य दक्षऋषिः विराट्छन्दः। लक्ष्मीर्देवता। इष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर जल

छोड़े। फिर 'ॐ दक्षऋषये नमः शिरसि, ॐ विराट् छन्दसे नमः मुखे तथा ॐ लक्ष्मीदेवतायै नमः हृदि' कहकर ऋष्यादि न्यास क्रमशः शिर-मुख तथा हृदय में करे। तत्पश्चात् 'ॐ देव्यै नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ पद्मिन्यै नमः तर्जनीभ्यां नमः, ॐ विष्णुपत्न्यै नमः मध्यमाभ्यां नमः, ॐ वरदायै नमः अनामिकाभ्यां नमः, ॐ कमलरूपायै नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः' इन पाँच मन्त्रों से करन्यास करे। फिर नेत्रों को छोड़कर शेष पाँच अङ्गों का न्यास इन्हीं मन्त्रों से इस प्रकार करे—'ॐ देव्यै नमः हृदयाय नमः, ॐ पद्मिन्यै नमः शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णुपत्न्यै नमः शिखायै वषट्, ॐ वरदायै नमः कवचाय हुम्, ॐ कमलरूपायै नमः अस्त्राय फट्।' फिर लक्ष्मी जी का ध्यान मूल में लिखित—'आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी' इत्यादि से करे। (भावार्थ—कमल पर विराजमान, प्रसन्न मुख वाली, हाथों में दान अभयमुद्रा तथा दो कमल लिये, बिजली के समान चमक वाली मोतियों की झालरों से सुसज्जित पीन उत्तुङ्ग स्तनों से सुशोभित लक्ष्मी जी भगवान् विष्णु को आनन्दित करती हुई मेरी रक्षा करे। इस प्रकार ध्यान करके पूर्व के एकाक्षर-चतुरक्षर मन्त्र में कथित आवरण-पूजा की विधि से पीठपूजा तथा यन्त्रावरण पूजा करे (लक्ष्मी यन्त्र आगे दिया जा रहा है)। फिर इस दशाक्षर लक्ष्मी मन्त्र का दश लाख की सङ्ख्या में जप करके पुरश्चरण सम्पन्न करे।

तथा च—

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः। दशांशं जुहुयान्मन्त्री मधुराक्तैः सरोरुहैः॥
समुद्रगायां सरिति कण्ठमात्रे जले स्थितः। त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्री साक्षाद्वैश्रवणो भवेत्॥
आराध्योत्तरनक्षत्रे देवीं स्त्रक्चन्दनादिभिः। नन्द्यावर्तभवैः पुष्पैः सहस्त्रं जुहुयात्ततः॥
पौर्णमास्यां फलैर्बैल्वैर्जुहुयान्मधुराप्लुतैः। पञ्चम्यां विंशदाम्भोजैः शुक्रवारे सुगन्धिभिः॥
अन्यैर्वा विशदैः पुष्पैः प्रतिमासं विशालधीः। स भवेदब्दमात्रेण सर्वदा सम्पदां निधिः॥

इति दशाक्षरलक्ष्मीमन्त्रप्रयोगः समाप्तः।

पुरश्चरण-विधि—साधक जितेन्द्रिय होकर इस मन्त्र का दश लाख जप करे तथा जप का दशांश (एक लाख) हवन मधुराक्त (घी-दूध-मधु) कमलों से करे। समुद्र में जाने वाली नदी में कण्ठमात्र जल में स्थित होकर यदि साधक इस मन्त्र (नमः कमलवासिन्यै स्वाहा) का जप करे तो वह कुबेर के समान हो जाता है। उत्तरा नक्षत्र में लक्ष्मी की लाल चन्दन आदि से पूजा करके नन्द्यावर्त्त के फूलों की एक सहस्र आहुतियाँ दे तथा पूर्णिमा के दिन मधुराप्लुत बेलपत्रों की आहुतियाँ दे। पञ्चमी को निर्मल कमलों की तथा शुक्रवार को सुगन्धि की आहुति दे। अथवा अन्य विशद् पुष्पों से प्रतिमास की पूर्णिमा पर इस दशाक्षर मन्त्र से एक वर्ष तक आहुति देता रहे तो वह बुद्धिमान् मनुष्य एक वर्ष के उपरान्त ही सम्पूर्ण सम्पदाओं का स्वामी हो जाता है।

महालक्ष्मीमन्त्रपुरश्चरणम्

मन्त्रो यथा—'ॐ ऐं ह्रीँ श्रीँ क्लीं सौं जगत्प्रसूत्यै नमः' इति द्वादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। महालक्ष्मीर्देवता। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ महालक्ष्मीदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ततो मूलेन हस्तौ संशोध्य ॐ ऐं नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं नमः तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ श्रीं नमः मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ क्लीं नमः अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ सौं नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ जगत्प्रसूत्यै नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ ॐ ऐं ह्रीँ श्रीँ क्लीँ सौं जगत्प्रसूत्यै नमः इति मूर्द्धादिचरणान्तं व्यापकं न्यसेत्॥ ७॥ इति करन्यासः। ॐ ऐं नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ ह्रीं नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीँ नमः वक्षसि॥ ३॥ ॐ क्लीं नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ सौं नमः पादयोः। इति पञ्चबीजानि विन्यसेत्। ॐ जं नमः त्वचि॥ १॥ ॐ गं नमः रक्ते॥ २॥ ॐ त्रं नमः मांसे॥ ३॥ ॐ सूं नमः मेदसि॥ ४॥ ॐ त्यैं नमः अस्थिन॥ ५॥ ॐ नं नमः मज्जायाम्॥ ६॥ ॐ मं नमः शुक्रे॥ ७॥ इति सप्तवर्णान् सप्तधातुषु हृदये न्यसेत्। ॐ ऐं ज्ञानाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं ऐश्वर्य्याय

तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ श्रीं शक्तये मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ क्लीं बलाय अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ सौं वीर्याय कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ॐ जगत्प्रसूत्यै तेजसे नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

महालक्ष्मी मन्त्र (द्वादशाक्षर लक्ष्मी मन्त्र) **का पुरश्चरण**—'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौं जगत्प्रसूत्यै नमः' यह द्वादशाक्षर लक्ष्मी-मन्त्र है। सर्वप्रथम 'अस्य द्वादशाक्षरलक्ष्मीमन्त्रस्य ब्रह्मात्रृषिः। गायत्रीछन्दः। महालक्ष्मीर्देवता। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से जल छोड़कर विनियोग करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ ब्रह्मर्षये नमः शिरसि, ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे तथा ॐ महालक्ष्मीदेवतायै नमो हृदि' इन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल मन्त्र से हाथों को शुद्ध कर मूल पाठ में लिखित 'ॐ ऐं नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि सात मन्त्रों से निर्दिष्ट अङ्गों में करन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ऐं नमः मूर्ध्नि' इत्यादि सात मन्त्रों का उनके साथ निर्दिष्ट शरीर की सात धातुओं में न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ ऐं ज्ञानाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पुनः करन्यास करे।

पुनः हृदयादि न्यास ॐ ऐं ज्ञानाय हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं ऐश्वर्याय शिरसे स्वाहा, ॐ श्रीं शक्तये शिखायै वषट्, ॐ क्लीं बलाय कवचाय हुम्, ॐ सौं वीर्याय नेत्रत्रयाय वौषट् तथा ॐ जगत् प्रसूत्यै तेजसे नमः अस्त्राय फट् मन्त्रों से करे।

श्रीमहालक्ष्मीयन्त्रम्
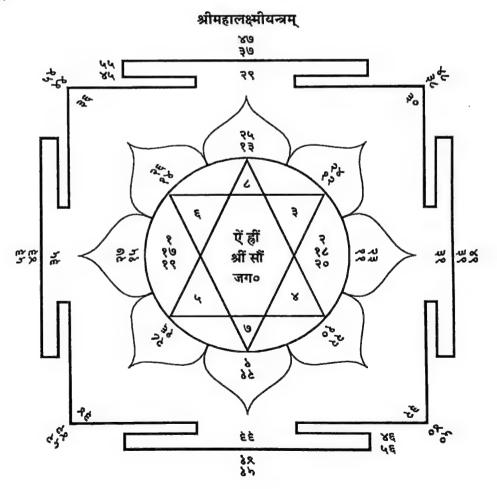
तत्रादावुद्यानस्मरणम्—

चम्पकाशोकपुन्नागपाटलैरुपशोभितम् । लवङ्गमालतीबिल्वदेवदारुनमेरुभिः ॥
मन्दारपारिजाताद्यैः कल्पवृक्षैः सुपुष्पितैः । चन्दनैः कर्णिकारैश्च मातुलुङ्गैश्च वञ्जुलैः ॥
दाडिमीलकुचाङ्कोलैः पूगैः कुरवकैरपि । कदलीकुन्दमन्दारनारिकेरैरलङ्कृतैः ॥
अन्यैः सुगन्धिपुष्पाद्यैर्वृक्षसङ्घैश्च मण्डितम् । मालतीमल्लिकाजातीकेतकीशतपत्रकैः ॥
पारन्तीतुलसीनन्द्यावर्तैर्दमनकैरपि । सर्वर्तुकुसुमोपेतैर्नमद्भिरुपशोभितम् ॥
मन्दमारुतसम्भिन्नकुसुमामोदिदिङ्मुखम् । तस्य मध्ये सदोत्फुल्लैः कुमुदोत्पलपङ्कजैः ॥
सौगन्धिकैश्च कह्लारैर्नवैः कुवलयैरपि । हंससारसकारण्डभ्रमरैश्चक्रनामभिः ॥
अन्यैः कलकलारावैर्विहङ्गैरुपशोभितम् । महासरसि तन्मध्ये पुलिनेऽतिमनोहरे ॥
परितः पारिजाताद्यं मण्डपं मणिकुट्टिमम् । उद्यदादित्यसङ्काशं भास्वरं शशिशीतलम् ॥
चतुर्द्वारसमायुक्तं हैमप्राकारशोभितम् । रत्नापक्लृप्तिसंशोभि कपाटाष्टकसंयुतम् ॥
नवरत्नसमाक्लृप्तं तुङ्गगोपुरतोरणम् । हेमदण्डि समालम्बि ध्वजावलिपरिष्कृतम् ॥
नवरत्नसमाबद्धस्तम्भराजिविराजितम् । सहस्रदीपसंयुक्तदीपं दण्डविराजितम् ॥
तप्तहाटकसंक्लृप्तवातायनमनोहरम् । नानावर्णांशुकोद्बद्धसुवर्णशतकोटिभिः ॥
किङ्किणीमल्लिकायुक्तपताकाभिरलङ्कृतम् । जातरूपमयै रत्नविचित्रैरतिविस्तृतैः ॥
माणिक्यरत्नैर्वैडूर्य्यस्वर्णमालावलीयुतैः । अन्तरान्तरसम्बद्धरत्नैर्दृष्टिमनोहरैः ॥
विचित्रैश्चित्रवर्णैश्च वितानैरुपशोभितम् । सर्वरत्नसमायुक्तं हेमकुट्टिममुज्ज्वलम् ॥
केतकीमालतीजातीचम्पकोत्पलकेसरैः । मल्लिकातुलसीजातीनन्द्यावर्तकदम्बकैः ॥
एतैरन्यैश्च कुसुमैरलङ्कृतमहीतलम् । अम्बुकाश्मीरकस्तूरीमृगनाभितमालकैः ॥
चन्दनागरुकर्पूरैरामोदितदिगन्तरम् । एवं सञ्चिन्त्य मनसा मण्डपं सुमनोहरम् ॥
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् । तस्याधस्तात्स्मरेन्मन्त्री रत्नसिंहासनं शुभम् ॥
तस्मिन्सञ्चिन्तयेद्देवीं महालक्ष्मीं मनोरमाम् ।

उद्यान-स्मरण—चम्पा, अशोक, पुन्नाग, पाटला से सुशोभित; लौंग, मालती, बेल, देवदारु, नमेरु, मन्दार, पारिजात आदि कल्पवृक्षों से सुशोभित; चन्दन, कर्णिकार, बिजौरा नीबू, वञ्जुल, अनार, बड़हर, अङ्कोल (ढेरा या अकोला), सुपारी, कुरवक, केला, कुन्द, मन्दार, नारियल से अलंकृत; अन्य सुगन्धित पुष्पादि वृक्षों से मण्डित; मालती, मल्लिका, चमेली, केतकी, शतपत्रक (गुलाब), पारन्ती, तुलसी, नन्द्यावर्त, दौना, सभी ऋतुओं में खिलने वाले फूलों से सुशोभित; मन्द-मन्द पवन से झरते हुए फूलों से सभी दिशाओं में सुगन्ध फूट रही है। उन सबके मध्य में सदैव खिलने वाले कमलों, सौगन्धिक कल्हारों, नवीन कुवलयों, हंस, सारस, कारण्ड, भ्रमर, चक्रनाम तथा अन्य पक्षियों के कलरव से सुशोभित एक महान् सरोवर है; उसके मध्य में अत्यन्त मनोहर तट पर चारो ओर से पारिजात एवं मणियों से निर्मित कुटी मण्डप है, जो कि उदित होते हुए सूर्य के समान चमकदार तथा चन्द्रमा के समान शीतल है, जिसमें चार द्वार हैं। स्वर्ण का परकोटा शोभायमान है। रत्नजटित आठ कपाटों से संयुक्त, नवरत्नयुक्त, ऊँचे गोपुर तथा तोरणों से युक्त, स्वर्णदण्डों पर फहराने वाले ध्वजों से युक्त, नवरत्नजटित खम्भों से सुशोभित, सहस्र दीपों से युक्त दीपदण्डों से विराजित, तप्त सुवर्ण से निर्मित मनोहर वातायनों से युक्त, अनेक वर्णों

के अंशुक वस्त्रों से बँधे सैकड़ों सुवर्ण, किङ्किणियों, मल्लिकाओं की पताकाओं से अलंकृत, स्वर्ण-माणिक्य आदि से निर्मित मनोहर वितानों से उपशोभित, समस्त रत्नों से युक्त कुटे हुए सुवर्ण के समान उज्ज्वल केतकी, मालती, नन्द्यावर्त्त-कदम्बक तथा अन्य पुष्पों से जहाँ पृथ्वी मण्डित है, जिसमें कस्तूरी, तमाल, चन्दन, अगरु, कपूर से दिशाएँ आमोदित हैं—ऐसा महालक्ष्मी का मण्डप है; उसमें देवी विराजमान हैं—ऐसा ध्यान करना चाहिये।

अथ ध्यानम्—

बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत्कोटीरहारोज्ज्वलां रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शालैः करैर्मञ्जरीम्।
पद्मं कौस्तुभरत्नमप्यविरतं सम्बिभ्रतीं सस्मितां फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत्परां देवताम्॥
सिञ्जन्मञ्जीरसंशोभिपदाम्भोजविराजिताम्। नवरत्नगणाकीर्णां काञ्चीदामविभूषिताम्॥
मुक्तामाणिक्यवैदूर्यसम्बद्धोदरबन्धनाम्। बिभ्राजमानां मध्येन बलित्रितयशोभिताम्॥
जाह्नवीसरिदावर्तशोभिनाभिविभूषिताम्। पाटीरपङ्ककर्पूरकुङ्कुमालङ्कृतस्तनीम्॥
वारिवाहविनिर्मुक्तमुक्तादामगरीयसीम्। वहन्तीमुत्तरासङ्गं दुकूलपरिकल्पिताम्॥
तप्तकाञ्चनसन्नद्धवैदूर्याङ्गदभूषणाम्। पद्मरागस्फुरद्वर्णकङ्कणाढ्यकराम्बुजाम्॥
माणिक्यशकलाबद्धमुद्रिकाभिरलङ्कृताम्। तप्तहाटकसंक्लृप्तमालग्रैवेयशोभिताम्॥
विचित्रविविधाकल्पकम्बुसङ्काशकन्धराम्। उद्यद्दिनकराकारमणिताटङ्कमण्डिताम्॥
रत्नाङ्कितलसत्स्वर्णकर्णपूरोपशोभिताम्। जपाविद्रुमलावण्यललिताधरपल्लवाम्॥
दाडिमीफलबीजाभदन्तपङ्क्तिविभूषिताम्। कलङ्ककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चन्द्रनिभाननाम्॥
पुण्डरीकदलाकारनयनत्रयसुन्दरीम्। भ्रूलताजितकन्दर्पकरकार्मुकबिभ्रमाम्॥
विलसत्तिलपुष्पश्रीविजयोद्यतनासिकाम्। ललाटकान्तिविभवविजितार्द्धसुधाकराम्॥
सान्द्रसौरभसम्पन्नकस्तूरीतिलकाङ्किताम्। मत्तालिमालाविलसदलकाढ्यमुखाम्बुजाम्॥
पारिजातप्रसूनश्रीवाहिधम्मिल्लबन्धनाम्। अनर्घ्यरत्नघटितमुकुटाङ्कितमस्तकाम्॥
सर्वलावण्यवसतिं भवनं विभ्रमश्रियः। तेजसां जन्मभूमिं तां महालक्ष्मीं मनोहराम्॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्ते श्रीबीजोदिते पीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्यापाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्यावरणपूजां कुर्यात्।

महालक्ष्मी का ध्यान—मूल पाठ में लिखित 'बालार्कद्युति' इत्यादि १५ श्लोकों में ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—जिनके सिर पर बने जूड़े (कोटीर) पर बालसूर्य के समान चन्द्रखण्ड तथा हार सुशोभित हैं। जिनके कुच रत्नाभूषणों से नत हैं, शाल जैसे हाथों में मञ्जरी सुशोभित है। कमल, कौस्तुभमणि धारण कर मुस्कराती हुई खिले कमल जैसे तीन नेत्रों वाली परा देवता का ध्यान करना चाहिये। जिनके चरणकमल नूपुरों की झङ्कार से सुशोभित हैं। नवरत्नों से जिनकी करधनी भूषित है। उदरबन्धन में माणिक्य, वैदूर्य आदि बँधे हैं। उदरमध्य में त्रिवलियाँ सुशोभित हैं। जो गङ्गाजी की धार में पड़ने वाले आवर्त्तों की भाँति वाली नाभि से सुशोभित हैं। जिनकी स्तनी (चोली) कमल-केसर-कर्पूर-पङ्क से अलंकृत है, मेघमाला के सदृश मुक्तादाम से भी श्रेष्ठ है। दुकुल परिकल्पित उत्तरीय को धारण किये हैं, जिनकी भुजाओं में तप्त स्वर्ण में वैदूर्य-जटित आभूषण हैं। जिनके करकमलों में लाल माणिक्य के समान वर्ण के कङ्कण चमक रहे हैं। माणिक्य के टुकड़ों से जड़ी अङ्गूठियाँ पहिने हैं। तप्त सुवर्ण से निर्मित कण्ठीमाला शोभित है। शङ्ख के समान विचित्र ग्रीवा है। उगते हुए सूर्य के समान

मणिताटङ्क (कान की बाली) शोभित हैं; रत्नाङ्कित, स्वर्ण के कर्णपूरों से सुशोभित हैं। जिनके अधर गुड़हल, मूँगा के समान हैं; अनारदाना के समान जिनकी दन्तपंक्ति है। जिनका आनन्द निर्मल पूर्ण चन्द्रमा के समान है। जो कमल पत्राकार तीन नेत्रों वाली सुन्दरी हैं। जिनकी भौंहें कामदेव के धनुष के समान हैं। जिनकी नाक तिलपुष्प के समान शोभित है। जिनके ललाट की कान्ति अर्धचन्द्र के कारण विभवयुक्त है। जिस ललाट पर सान्द्र सौरभ से सम्पन्न कस्तूरी का तिलक है। मुखकमल पर मतवाले भौरों की माला विराजमान है। पीछे की चोटी (जूड़े) में पारिजातपुष्पों का बन्धन है। मस्तक पर बहुमूल्य रत्नों का मुकुट है। इस प्रकार सम्पूर्ण सौन्दर्य से युक्त मनोहर महालक्ष्मी सभी तेजसों की जन्मभूमि हैं—इस भाव से महालक्ष्मी का ध्यान करे। पूजा करके पूर्वोक्त श्री बीज में कथित पीठ पर मूल मन्त्र (द्वादशाक्षरी) लक्ष्मीमन्त्र से महालक्ष्मी की मूर्ति रखकर या कल्पित करके पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूजन कर फिर आवरण-पूजा करे।

तद्यथा (लक्ष्म्या दक्षभागे) ॐ शङ्करनन्दनाय नमः ॥ १ ॥ (वामभागे) ॐ पुष्पधन्वने नमः ॥ २ ॥ ततः षड्दले (पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीं प्रकल्प्य) आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ ऐं ज्ञानाय नमः हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं ऐश्वर्याय नमः शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ श्रीं शक्त्यै नमः शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ क्लीं बलाय नमः कवचाय हुं ॥ ४ ॥ ॐ सौं वीर्याय नमः नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ जगत्प्रसूत्यै नमः अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्।

ततोऽष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ उमायै नमः ॥ १ ॥ ॐ श्रियै नमः ॥ २ ॥ ॐ सरस्वत्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ दुर्गायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ धरिण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ गायत्र्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ देव्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ उषायै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। (दक्षिणे) ॐ जाह्नव्यै नमः ॥ १ ॥ (वामे) ॐ यमुनायै नमः ॥ २ ॥ इति सम्पूज्य (पुनर्दक्षिणपार्श्वे) ॐ शङ्खनिधये नमः ॥ १ ॥ (वामपार्श्वे) ॐ पद्मनिधये नमः ॥ २ ॥ (पश्चिमे) ॐ वरुणाय नमः ॥ ३ ॥ इति पूजयेत्।

तद्बहिर्द्वादशदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ मेषाय नमः ॥ १ ॥ ॐ वृषाय नमः ॥ २ ॥ ॐ मिथुनाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ कर्काय नमः ॥ ४ ॥ ॐ सिंहाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ कन्यायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ तुलायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ वृश्चिकाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ धनुषे नमः ॥ ९ ॥ ॐ मकराय नमः ॥ १० ॥ ॐ कुम्भाय नमः ॥ ११ ॥ ॐ मीनाय नमः ॥ १२ ॥ इति राशीन् पूजयेत्।

तद्बहिः—ॐ सूर्याय नमः ॥ १ ॥ ॐ चन्द्रमसे नमः ॥ २ ॥ ॐ मङ्गलाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ बुधाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ बृहस्पतये नमः ॥ ५ ॥ ॐ शुक्राय नमः ॥ ६ ॥ ॐ शनैश्चराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ राहवे नमः ॥ ८ ॥ ॐ केतवे नमः ॥ ९ ॥ इति ग्रहान् पूजयेत्।

तद्बाह्ये—ॐ ऐरावताय नमः ॥ १ ॥ ॐ पुण्डरीकाय नमः ॥ २ ॥ ॐ वामनाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ कुमुदाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ अञ्जनाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ पुष्पदन्ताय नमः ॥ ६ ॥ ॐ सार्वभौमाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ सुप्रतीकाय नमः ॥ ८ ॥ इत्यष्टौ दिग्गजान्पूजयेत्।

तद्बहिः भूपुरे पूर्वादिदिक्षु—ॐ इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ वायवे नमः ॥ ६ ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ (ऊर्ध्वम्) ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ (अधः) ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति दशदिक्पालान् पूजयेत्।

तद्बाह्ये—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इत्यायुधानि पूजयेत्। एवं सप्तावरणपूजां कृत्वा धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणादिभिर्भगवतीं सम्पूज्य नीराजनं कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य स्तोत्रैः स्तुत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। जपान्ते दशांशेन घृतपद्मबिल्वफलैर्होमं कृत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्यात्।

आवरणपूजा—महालक्ष्मी यन्त्र के आवरण की पूजा इस प्रकार करे। लक्ष्मी के दक्षिण भाग में 'ॐ शङ्कराय नमः' कहकर पूजन करे। फिर वामभाग में मूल पाठ में लिखित 'ॐ पुष्पधन्वने नमः' से पूजा करे। फिर यन्त्र के षड्दल कमल में (पूज्य-पूजक के मध्य में प्राची की कल्पना करके) मूलोक्त 'ॐ ऐं ज्ञानाय हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अग्निकोण से आरम्भ कर फिर मध्य में तथा दिशाओं में षडङ्गों की पूजा करे। फिर उसके बाहर अष्टदल में पूर्वादि क्रम से मूलोक्त 'ॐ उमायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से निर्देशानुसार पूजा करे। फिर दक्षिण में 'ॐ जाह्नव्यै नमः' तथा वामभाग में 'ॐ यमुनायै नमः' कहकर पूजे। पुनः दक्षिण पार्श्व में 'ॐ शङ्खनिधये नमः' तथा वामपार्श्व में 'ॐ पद्मनिधये नमः' कहकर पूजे। पश्चिम में 'ॐ वरुणाय नमः' कहकर पूजना चाहिये। फिर उसके बाहर बारह दलों में क्रमशः पूर्वादि क्रम से 'ॐ मेषाय नमः, ॐ वृषाय नमः, ॐ मिथुनाय नमः, ॐ कर्काय नमः' इस क्रम से चारो दिशाओं में राशियों की पूजा करे। फिर 'ॐ सिंहाय नमः, ॐ कन्यायै नमः, ॐ तुलायै नमः' तथा 'ॐ वृश्चिकायै नमः' इन मन्त्रों से प्रदक्षिणक्रम से पुनः पूर्वादि दिशाओं में पूजा करे। फिर तीसरी आवृत्ति में 'ॐ धनुषे नमः, ॐ मकराय नमः, ॐ कुम्भाय नमः' तथा 'ॐ मीनाय नमः' इन शेष चार राशियों की पूजा पूर्वादिक्रम से करे (चारो राशियों की दिशायें राशियों में इसी क्रम से मान्य हैं)। फिर उसके बाहर 'ॐ सूर्याय नमः' इत्यादि मूलोक्त नौ मन्त्रों से नवग्रहों की पूजा करे। फिर उनके बाहर पूर्व से (दिशाओं विदिशाओं में) प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ ऐरावताय नमः, ॐ पुण्डरीकाय नमः, ॐ वामनाय नमः, ॐ कुमुदाय नमः, ॐ अञ्जनाय नमः, ॐ पुष्पदन्ताय नमः, ॐ सार्वभौमाय नमः, ॐ सुप्रतीकाय नमः' इन आठ दिशाओं की पूजा करे। फिर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादि आठ दिशाओं में 'ॐ इन्द्राय नमः, ॐ अग्नये नमः, ॐ यमाय नमः, ॐ निर्ऋतये नमः, ॐ वरुणाय नमः, ॐ वायवे नमः, ॐ कुबेराय नमः, ॐ ईशानाय नमः' कहकर पूजन करे। फिर ऊर्ध्व में 'ॐ ब्रह्मणे नमः' तथा अधः में 'ॐ अनन्ताय नमः' कहकर पूजन करे। ये दश दिक्पाल हैं। इन दिक्पालों के बाहर 'ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अङ्कुशाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ त्रिशूलाय नमः, ॐ पद्माय नमः' तथा 'ॐ चक्राय नमः' इन मन्त्रों से उन दश दिक्पालों के आयुधों का पूजन करे। इस प्रकार यन्त्र के सातों आवरणों की पूजा करके धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल एवं दक्षिणा द्वारा भगवती महालक्ष्मी का पूजन कर आरती करके साष्टाङ्ग प्रणाम कर उनके स्तोत्र (आगे दिये गये हैं) का पाठ कर मन्त्रजप करे। बारह लाख मन्त्रजप से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता है। जप के अन्त में जप का दशांश होम घी, कमल, बेलफल से करे। उसका दशांश तर्पण, फिर उसका दशांश मार्जन तथा उसका दशांश ब्राह्मणभोजन कराये।

तथा च शारदातिलके—

एवं सञ्चिन्त्य यो देवीं हविष्याशी जितेन्द्रियः। भानुलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः॥
जुहुयाच्छ्रीफलैः पद्मैः प्रत्येकमयुतं ततः। तर्पयेत्सलिलैः शुद्धैः सुगन्धिरयुतद्वयम्॥
आगमोक्तेन विधिना सुगन्धैः सुमनोहरैः। पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैर्देवीमन्वहमादरात्॥
दूर्वाभिराज्यसिक्ताभिर्जुहुयादायुषे नरः। दशरात्रे समिद्धेऽग्नौ अष्टोत्तरसहस्रकम्॥
गुडूचीमाज्यसंसिक्तां जुहुयात्सप्तवासरम्। अष्टोत्तरसहस्रं यः स जीवेच्छरदां शतम्॥
हुत्वा तिलान्घृताभ्यक्तान्दीर्घमायुरवाप्नुयात्। आरभ्यार्कदिनं मन्त्री दशरात्रं दिने-दिने॥
आज्याक्तार्कसमिद्धोमादारोग्यं लभते ध्रुवम्। कण्ठमात्रोदके स्थित्वा ध्यात्वा देवीं दिवाकरे॥
ऊर्ध्वबाहुर्दशशतमष्टोत्तरमिमं हुनेत्। आरोग्यं लभते सद्यो वाञ्छितान्यपि मन्त्रवित्॥

शालिभिर्जुह्वतो नित्यमष्टोत्तरसहस्रकम्। अचिरादेव महती लक्ष्मीः सञ्जायते ध्रुवम्॥
प्रसूनैर्जुहुयान्मन्त्री लक्ष्मीवल्लीसमुद्भवैः। नन्द्यावर्तसमुत्थैश्च सिद्धार्थैश्च घृतप्लुतैः॥
महतीं श्रियमाप्नोति मान्यते सर्वजन्तुभिः। मरीचजीरकोन्मिश्रैर्नारिकेलरजःप्लुतैः ॥
सगुडैराज्यसम्पक्वैरपूपैराज्यलोलितैः । जुहुयात्पयआहारो मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः॥
अष्टोत्तरशतं नित्यं मण्डलाद्धनदो भवेत्। हविषा गुडमिश्रेण जुहुयादर्थवान्भवेत्॥
जपापुष्पाणि जुहुयादष्टोत्तरसहस्रकम्। गृहीत्वा प्रजपेद्भस्म नागवल्लीसमन्वितम्॥
तिलकं तनुयात्तेन सर्ववश्यकरं भवेत्। ब्रह्मवृक्षसमित्पुष्पैर्ब्राह्मणान्वशयेद्वशी ॥
जातीपुष्पैश्च राजानं वैश्यान् रक्तोत्पलैः शुभैः। शूद्रान्नीलोत्पलैर्हुत्वा वशयेन्मन्त्रविन्नरः॥
पुष्पैर्मधूकजैर्हुत्वा वशमानयति स्त्रियः।

शारदातिलक के अनुसार द्वादशाक्षर मन्त्र के पुरश्चरण का फल—इस प्रकार से जो साधक हविष्यान्न का भोजन कर जितेन्द्रिय रहते हुए देवी का पूजन एवं ध्यान करके बारह लाख जप द्वादशाक्षर मन्त्र का करता है, वह उसका दशांश (एक लाख बीस सहस्र) संख्या में घृत से आप्लावित कर होम करे एवं दस सहस्र श्रीफल (नारियल) का होम करे। फिर दश सहस्र कमलपुष्प या कमलगट्टा से हवन करे। शुद्ध सुगन्धियुक्त जल से दो अयुत (बीस सहस्र) तर्पण करे। आगमोक्त विधि से विविध प्रकार की मनोहर सुगन्ध तथा गन्ध-पुष्पादि से श्रद्धापूर्वक देवी का पूजन करे। आयु की प्राप्ति के लिये घृत में डुबोकर दूर्वा का हवन करना चाहिये। दश रात्रियों में समिधा की अग्नि में एक सहस्र आठ होम करे। जो सात दिनों तक गिलोय के टुकड़ों को घृत से सींचकर १००८ हवन करता है, वह सौ वर्षों तक जीवित रहता है। जो घृताभ्यक्त काले तिलों का रविवार से आरम्भ कर द्वादशाक्षर मन्त्र से (लक्ष्मी मन्त्र से) दश दिनों तक होम करता है, उसे दीर्घायु प्राप्त होती है। जो घृताक्त आक की समिधाओं से महालक्ष्मी मन्त्र से आहुतियाँ देता है, उसे शीघ्र आरोग्य की प्राप्ति होती है। जो कण्ठ-पर्यन्त जल में स्थित होकर सूर्य में देवी का ध्यान करके आक की समिधाओं से होम करता है, वह साधक शीघ्र ही आरोग्य तथा वाञ्छित अर्थ प्राप्त करता है। जो साधक शालि चावलों से नित्य अष्टोत्तर सहस्र (१००८) हवन करता है, उसको शीघ्र ही विपुल लक्ष्मी प्राप्त हो जाती है। जो साधक लक्ष्मीवल्ली (लवङ्गलता के फूल=लौंग) के फूलों से, नन्द्यावर्त्त के फूलों से तथा सफेद सरसों को घृत में सानकर हवन करता है, उसे बहुत लक्ष्मी प्राप्त होती है तथा वह सभी जन्तुओं से मानित होता है अर्थात् उसे कोई भी प्राणी पीड़ा नहीं देता है। काली मिर्च, जीरा, नारियल का चूरा, गुड़—इनको मिलाकर घी में पका ले, फिर घी के साथ इनसे हवन करे। केवल दूध के आहार पर रहे। जितेन्द्रिय रहकर साधक नित्य चालीस दिन तक महालक्ष्मी मन्त्र से हवन करे तो धनवान हो जाता है। यदि ऐसा साधक गुड़ एवं हवि-मिश्रित हवन करे तो भी धनवान हो जाता है। जवाकुसुम से एक सहस्र आठ (१००८) हवन करे तथा उसका भस्म लगाकर महालक्ष्मी मन्त्र का जप करे एवं उसी भस्म को पान के रस में घोंटकर तिलक लगाये तो वह साधक सबको वश में कर लेता है। यदि महालक्ष्मी मन्त्र से पलाश की समिधा एवं पुष्पों से (घृताक्त करके) होम किया जाय तो साधक ब्राह्मणों को वश में कर लेता है। चमेली के पुष्पों का होम राजाओं को तथा लालकमल के फूलों के होम से वैश्यों को वश में कर लेता है। नीलकमल के होम से शूद्र वश में हो जाते हैं। महुआ के फूलों से होम करने पर स्त्रियाँ वश में हो जाती हैं।

होम किया जाय तो साधक ब्राह्मणों को वश में कर लेता है। चमेली के पुष्पों का होम राजाओं को तथा लालकमल के फूलों के होम से वैश्यों को वश में कर लेता है। नीलकमल के होम से शूद्र वश में हो जाते हैं। महुआ के फूलों से होम करने पर स्त्रियाँ वश में हो जाती हैं।

कृत्वा नवपदात्मानं मण्डलं यन्त्रभूषितम्॥
अभिषेकं प्रकुर्वीत विधिना सर्वसिद्धये। कलशान् स्थापयेत्तेषु पदेषु शुभलक्षणान्॥
चन्दनालिप्तसर्वाङ्गान् दूर्वाशतसमन्वितान्। दुकूलवेष्टितानेतान् पूरयेत्तीर्थवारिणा॥
नवरत्नसमाबद्धं कर्षकाञ्चनकल्पितम्। मध्यकुम्भे क्षिपेत्पद्मं यन्त्राढ्यं देशकोत्तमः॥
चन्दनोशीरकर्पूरजातीकं कोलकुङ्कुमम्। कुष्ठागरुतमालैलायुतं सम्पिष्य भागतः॥
विलोड्य सर्वकुम्भेषु रत्नान्यपि विनिक्षिपेत्। लक्ष्मीदूर्वासहाभद्रासहदेवीमधुव्रताः ॥
मुशलीं शक्रवल्लीं च क्रान्तापामार्गपत्रकान्। प्रियङ्गुमुद्गगोधूमव्रीहींश्च सतिलान्यवान्॥
शालितण्डुलमाषांश्च प्रक्षाल्यैतेषु निक्षिपेत्। धात्रीलकुचबिल्वानां कदलीनारिकेलयोः॥
फलान्यपि विनिक्षिप्य पुष्पाण्येतानि निक्षिपेत्। पद्मसौगन्धिकं जातिं मल्लिकां बकुलं तथा॥
चम्पकाशोकपुन्नागतुलसीकेतकोद्भवम् । पल्लवानि वटाश्वत्थप्लक्षोदुम्बरशाखिनाम्॥
ब्रह्मकूर्चं विनिक्षिप्य चषकैः सुफलान्वितैः। पिधाय कुम्भवक्त्राणि क्षौमैराच्छादयेत्ततः॥
आवाह्य कलशमध्ये महालक्ष्मीं प्रपूजयेत्। यजेदुमाद्याः शिष्टेषु कलशेष्वष्टसु क्रमात्॥
गन्धैर्मनोहरैः पुष्पैर्धूपदीपसमन्वितैः। निवेद्य भक्ष्यभोज्यानि तान्स्पृष्ट्वा प्रजपेन्मनुम्॥
त्रिसहस्रं जपस्यान्ते साध्यमानीय संयुतम्। संस्थाप्य स्थण्डिले पीठं तस्मिंस्तं विनिवेशयेत्॥
रम्यैरावरणैर्वस्त्रैरलङ्कृत्य तमादरात्। सुमङ्गलाभिर्नारीभिः क्षिप्तपुष्पाक्षतान्वितम्॥
अर्चितानां द्विजातीनामाशीर्वादपुरःसरम्। नदत्सु पञ्चवाद्येषु मुहूर्ते शोभने सुधीः॥
मध्यस्थं कुम्भमुत्सृज्य महालक्ष्मीमनुस्मरन्। अभिषिञ्चेत्क्रमादन्यैः कलशैरपि देशिकः॥
करेणास्य शिरः स्पृष्ट्वा प्रयुञ्जीताशिषं गुरुः ।
भद्रमस्तु शिवं चास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु॥
रक्षन्तु त्वां सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा।

नवपदमण्डल

१ कलश	२ कलश	३ कलश
८ कलश	महालक्ष्मी ९ कलश	४ कलश
७ कलश	६ कलश	५ कलश

अभिषेक—नव पदों का यन्त्र अपने लिये बनाकर विधिपूर्वक अभिषेक करे तो सभी प्रकार की सफलता मिलती है। उन नौ पदों के मण्डल में शुभ लक्षणों वाले कलशों को स्थापित करे। कलशों की संख्या ९ होगी। उन कलशों के सर्वाङ्ग में चन्दन का लेप हो तथा प्रत्येक कलश में एक सौ दूर्वाङ्कुर हों। उन सभी कलशों में तीर्थ जल भरा होना चाहिये। बीच वाले कुम्भ में यन्त्र तथा कमल डाल दे। चन्दन, उशीर, चमेली, कङ्कोल, कुङ्कुम, कूठ, अगुरु, तमाल, इलायची—इनमें से प्रत्येक समान भाग लेकर पीसकर मिलाकर सभी कलशों में डाल दे। तुलसी, दूर्वा, सहदेवी, भद्रा (कठूमर = कठवर), सहा (माषपर्णी = मखवन = जङ्गली उड़द = मासा), मधुव्रता (मीठा बिजौरा नींबू), मूसली, शक्रवल्ली (इन्द्रायण),

पीपल, पाकर तथा गूलर के पत्ते—इनको डालकर उन कलशों को प्यालों से ढँककर बन्द कर दे तथा अलसी के वस्त्र से उन्हें ढँक दे। महालक्ष्मी का आवाहन मध्य के कलश पर करके उनका पूजन करे। शेष कलशों पर ईशान से उमा आदि आठ शक्तियों का पूजन करे। मनोहर गन्ध, पुष्प, दीप, धूप तथा नैवेद्य भक्ष्य-भोज्य आदि का निवेदन महालक्ष्मी से करके फिर उस कलश का स्पर्श कर महालक्ष्मी मन्त्र का जप करना चाहिये। तीन सहस्र जप की समाप्ति पर साध्य (राज्याभिषेक योग्य व्यक्ति) को स्थण्डिल पीठ (चौकी) पर बिठाकर रमणीय वस्त्रों से आदरपूर्वक अलंकृत कर सुमङ्गली स्त्रियों द्वारा पुष्पादि की वृष्टि कराकर द्विजों की पूजा कर उनसे आशीर्वाद ग्रहण कराये। सुमुहूर्त में इस कार्य को कराते हुए पञ्चवाद्य बजवाये। फिर बीच के प्रधान कलश को उठाकर महालक्ष्मी का स्मरण करता हुआ देशिक (पुरोहित=गुरु=आचार्य) साध्य व्यक्ति का शिर अपने हाथ से स्पर्श कर आशीर्वाद देते हुए कल्याण हो, शिव हो, महालक्ष्मी प्रसन्न हों, देवता तुम्हारी सदैव रक्षा करें तथा सदैव सम्पदा बनी रहे, इस प्रकार सभी कुम्भों के जल से अभिषेक कर दे।

अथोत्थायाभिषिक्तः सन् वाससी परिधाय च॥

यथाविधि समाचम्य दण्डवत्प्रणमेद्गुरुम्। वस्त्रैराभरणैर्धान्यैर्धनैर्गोमहिषादिभिः॥
दासीदासैश्च विधिवत्तोषयेद्देवताधिया। ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाद्दीनान्धकृपणैः सह॥
महान्तमुत्सवं कुर्याद्भवने बन्धुभिः सह। तदा कृतार्थमात्मानं मन्यते मनुजोत्तमः॥
अभिषिक्तो नरपतिः परान्विजयतेऽचिरात्। पदेच्छुः पदमाप्नोति राजपुत्रो न संशयः॥
अभिषिक्ता सती वन्ध्या सूते पुत्रं महामतिम्। महारोगेषु जातेषु कृत्याद्रोहेषु देशिकः॥
भूतेषु दुर्निमित्तादौ विदध्यादभिषेचनम्। सर्वसम्पत्करं पुंसां सर्वसौभाग्यसिद्धिदम्॥
सर्वरोगप्रशमनं सर्वापद्विनिवारणम्। गर्भरक्षाकरं स्त्रीणां दीर्घायुर्जनकं परम्॥
प्रसूतानामपि स्त्रीणां सूतिकागाररक्षकम्। प्रनष्टपुष्पगर्भाणां पुष्पगर्भाभिरक्षणम्॥
आसन्नशत्रुभीतीनां नाशनं च महीभृताम्। अभिषेकमिमं प्राहुरागमार्थविशारदाः॥
सर्वदुःखप्रशमनं सर्वापद्विनिवारणम्। बहुना किमिहोक्तेन परमस्मान्न विद्यते॥

इति श्रीशारदातिलके महालक्ष्मीमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

फिर अभिषिक्त व्यक्ति उठकर नये वस्त्रों को पहिनकर यथाविधि आचमन करके अपने गुरु को दण्डवत् प्रणाम करे तथा वस्त्राभूषण, गाय, भैंस, दास-दासियों से विधिपूर्वक अपने गुरु में देवता मानकर उनका पूजन करे। फिर ब्राह्मणों, दीनों, अन्धों एवं विकलाङ्गों को भोजन कराये। बन्धु-बान्धवों सहित महान् उत्सव अपने भवन में आयोजित करे। फिर वह अभिषिक्त व्यक्ति स्वयं को धन्य माने। ऐसा अभिषिक्त राजा अन्य राजाओं को शीघ्र ही जीत लेता है। जिस पद की इच्छा करता है, उसे वह पद प्राप्त हो जाता है। राजपुत्र को वह पद अवश्य ही मिलता है, इसमें सन्देह नहीं है। जिस वन्ध्या पतिव्रता स्त्री का अभिषेक इस प्रकार की विधि से किया जाता है, उसे महान् बुद्धिशाली पुत्र प्राप्त होता है। महारोग (कुष्ठादि) उत्पन्न होने पर, प्राणियों के दुर्निमित्त (अपशकुन; यथा—काकस्पर्श, छिपकली का गिरना, काकमैथुन देखना आदि) इस प्रकार का अभिषेक आयोजित करना चाहिये। यह अभिषेक पुरुषों को सभी प्रकार की सम्पत्ति देने वाला, सभी प्रकार का सौभाग्य देने वाला तथा सभी प्रकार की सफलता देने वाला है। यह अभिषेक सभी रोगों को नष्ट करने वाला तथा सभी आपदाओं का निवारण करने वाला है। यह गर्भिणी स्त्रियों के गर्भ की रक्षा करने वाला तथा दीर्घायु देने वाला है। यह प्रसूता स्त्रियों की तथा

सूतिकागार की रक्षा करता है। यह अभिषेक जिन स्त्रियों का पुष्प (मासिक धर्म तथा डिम्ब का उत्पादन) नष्ट हो गया है, उसे पुनः प्रारम्भ करता है तथा जिनका गर्भ शुष्क हो जाता है, उसे फिर से हरा-भरा चैतन्य कर देता है। यह राजा लोगों के लिये जो शत्रुओं का भय उत्पन्न हो जाता है, उसे दूर कर शत्रु का नाश कर देता है। विजययात्रा के पूर्व भी विद्वानों ने इस अभिषेक को प्रशस्त कहा है। यह सभी दुःखों का नाश करने वाला तथा सभी प्रकार की आपदाओं (दैहिक, दैविक, भौतिक) का निवारण करने वाला है। अधिक क्या कहा जाय; इस अभिषेक से बढ़कर अन्य कोई दूसरा उपाय नहीं है।

सप्तविंशतिवर्णात्मकमहालक्ष्मीमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'ॐ श्रींह्रींश्रीं कमले कमलामये प्रसीद प्रसीद श्री ह्रीं श्रीमहालक्ष्म्यै नमः' इति सप्तविंशत्यक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य दक्षऋषिः। विराट् छन्दः। महालक्ष्मीर्देवता। सर्वेष्टसिद्धये विनियोगः। ॐ दक्षऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ महालक्ष्मीदेवतायै नमः हृदि। इति ऋष्यादिन्यासः। श्रींह्रींश्रींप्रसीदकमलेश्रींह्रींश्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ श्रींह्रींश्रींप्रसीदकमलेश्रींह्रींश्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ श्रीह्रींश्रींप्रसीदकमले श्रीह्रींश्रींमध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ श्रींह्रींश्रींप्रसीदकमलेश्रींह्रींश्रीं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ श्रींह्रींश्रींप्रसीदकमले श्रीं ह्रीं श्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। एवं नेत्रहीनं पञ्चाङ्गहृदयादिन्यासं कुर्यात्। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्।

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतिं सौन्दर्यवारान्निधिं कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम्।
हस्ताब्जैर्वसुपत्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्ती परामावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत्प्रियां शार्ङ्गिणः॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्ते श्रीबीजपीठे पुष्पान्तैरुपचारैः महालक्ष्मीं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

सप्तविंशति अक्षर वाले महालक्ष्मी मन्त्र का प्रयोग—'ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलामये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं महालक्ष्म्यै नमः' यह सत्ताईस अक्षरों वाला महालक्ष्मी मन्त्र है। सर्वप्रथम 'अस्य मन्त्रस्य दक्षऋषिः। विराट् छन्दः। महालक्ष्मीर्देवता। सर्वेष्टसिध्यर्थे विनियोगः' यह मन्त्र पढ़कर विनियोग का जल छोड़े। तदनन्तर 'ॐ दक्षऋषये नमः शिरसि, ॐ विराट् छन्दसे नमः मुखे, ॐ महालक्ष्म्यै देवतायै नमः हृदि' कहकर ऋष्यादिन्यास करे। फिर मूल में मुद्रित 'श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद कमले श्रीं ह्रीं श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करे। तत्पश्चात् करन्यास के मन्त्रों से ही क्रमशः हृदयाय नमः, शिरसे स्वाहा, शिखायै वषट्, कवचाय हुं तथा अस्त्राय फट् कहते हुए हृदयादि न्यास सम्पन्न करे। जैसे—'श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः' कहकर हृदय में दाहिने हाथ की अङ्गुलियों का स्पर्श कर न्यास करे। इसी प्रकार अन्य अङ्गों का भी करे। केवल पञ्चाङ्ग न्यास ही करे, षडङ्ग नहीं।

फिर मूल में लिखित 'सिन्दूरारुणकान्तिमब्ज०' इत्यादि श्लोकानुसार लक्ष्मीजी का ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा कर पूर्व में कथित श्रीबीजपीठ (महालक्ष्मी यन्त्र) पर पुष्पान्त उपचारों से श्री महालक्ष्मी की पूजा कर आवरणपूजा करे।

षट्कोणकेसरेषु दिक्षु च श्रीं ह्रींश्रींप्रसीद कमले श्रीह्रींश्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद कमले श्रीं ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीदकमले श्रीं ह्रीं श्रीं शिखायै वषट्॥ ३॥ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीदकमले श्रींह्रींश्रीं कवचाय हुं॥ ४॥ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद कमले श्रीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गानि पूजयेत्।

तद्वहिरष्टदलमूले पूर्वादिक्रमेण—ॐ श्रीधराय नमः॥ १॥ ॐ हृषीकेशाय नमः॥ २॥ ॐ वैकुण्ठाय नमः॥ ३॥ ॐ विश्वरूपाय नमः॥ ४॥ ॐ वासुदेवाय नमः॥ ५॥ ॐ सङ्कर्षणाय नमः॥ ६॥ ॐ प्रद्युम्नाय नमः॥ ७॥ ॐ अनिरुद्धाय नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततः पूर्वादिदिग्दलमध्येषु ॐ भारत्यै नमः॥ १॥ ॐ पार्वत्यै नमः॥ २॥ ॐ चान्द्र्यै नमः॥ ३॥ ॐ शच्यै नमः॥ ४॥ विदिग्दलमध्ये—ॐ दमकाय नमः॥ ५॥ ॐ सलिलाय नमः॥ ६॥ ॐ गुग्गुलवे नमः॥ ७॥ ॐ कुरुण्टकाय नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्।

ततो दलाग्रेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ अनुरागाय नमः॥ १॥ ॐ संवादाय नमः॥ २॥ ॐ विजयाय नमः॥ ३॥ ॐ वल्लभाय नमः॥ ४॥ ॐ मदाय नमः॥ ५॥ ॐ हर्षाय नमः॥ ६॥ ॐ बलाय नमः॥ ७॥ ॐ तेजसे नमः॥ ८॥ इति महालक्ष्मीबाणान् पूजयेत्। ततो भूपुरे इन्द्रादीन् दशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनं सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः।

आवरण पूजा—यन्त्र में षट्कोण में तथा केसरों में एवं दिशाओं में मूल में लिखित मन्त्रों से पञ्चाङ्ग पूजन करे। फिर षट्कोण के बाहर अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से मूल में लिखित आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर पूर्वादि दिशाओं के दलों के मध्यभागों मूल में लिखित 'ॐ भारत्यै नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से, तत्पश्चात् विदिशाओं में भी पाँचवें मन्त्र 'ॐ दमकाय नमः' से लेकर शेष और तीन मन्त्रों से क्रमशः पूजन करे। फिर दलाग्रों में पूर्वादिक्रम से 'ॐ अनुरागाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से महालक्ष्मी के बाणों का पूजन करे। फिर भूपुर में इन्द्र आदि दश दिक्पालों को तथा उनके बाहर वज्रादि आयुधों का भी पूजन करे जैसे—इन्द्राय नमः, अग्नये नमः, इत्यादि। इस प्रकार आवरणपूजा करके धूपादि नीराजनान्त पूजा करके एक लाख जप का पुरश्चरण करे।

तथा च शारदायाम्—

लक्षं जपेत्फलैर्बैल्वैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः। दशांशं संस्कृतं वह्नौ प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना॥
अनेन विधिना देवीं महालक्ष्मीमुपासते। ये तेषु निवसेल्लक्ष्मीरस्मरन्ती निजालयम्॥
उत्पलैर्जुहुयाल्लक्षं चन्द्रमाम्भसि लोलितैः। शत्रूणां लभते राज्यं विना युद्धेन पार्थिवः॥
जपन् राजसभां गच्छेत्सम्भाष्येत तथा नरः। दूर्वा देवी महालक्ष्मीर्विष्णुक्रान्ता मधुव्रता॥
मुसली शक्रवल्ली च सदा भद्राञ्जलिप्रिया। हरिचन्दनकर्पूरचन्दनाकोलरोचना ॥
मालूककेसरौ कुष्ठं सर्वं पिष्ट्वा निशारसैः। अष्टोत्तरसहस्रं तु जपित्वा तिलकक्रियाम्॥
कुर्वतो मन्त्रिणः सर्वे वशे तिष्ठन्त्यहर्निशम्। श्रियो मन्त्रं भजेन्मन्त्री श्रीसूक्तान्यपि संयजेत्॥

शारदातिलक के अनुसार इस मन्त्रजप की फलश्रुति—एक लाख जप करके उसका दशमांश बेलफल में मधुर पदार्थ मिलाकर संस्कृताग्नि में पूर्वकथित विधि से होम करे। जो इस विधि से महालक्ष्मी देवी की उपासना करते हैं, उनके घरों में लक्ष्मी अपने घर को भूलकर निवास करती है। एक लाख कुमुदिनी-पुष्पों से बिना युद्ध के राजा के शत्रुओं का राज्य प्राप्त हो जाता है। वह इस मन्त्र को जपता हुआ राजसभा में जाय तो उसको सभा में सम्मान मिलता है। दूब, देवी (लिङ्गिनी लता), महालक्ष्मी, विष्णुक्रान्ता, मधुव्रता, मूसली, इन्द्रायण, भद्रमोथा, लाजवन्ती, पीला चन्दन, कपूर, गोरोचन, लाल चन्दन, अङ्कोल, मालूक, केसर तथा कूठ—इन सबको कच्ची हल्दी के रस में पीसकर फिर एक सौ आठ बार इस २७ अक्षरों वाले सिद्ध मन्त्र को जपकर रस का तिलक अपने माथे पर करे तो उस साधक के सब कोई वश में हो जाता है। साधक को श्रीमन्त्र का जप तथा श्रीसूक्त का भी जप करना चाहिये।

भूयसीं श्रियमाकांक्षन्सत्यवादी भवेत्सदा। प्रत्यगाशामुखोऽश्नीयात्स्थितपूर्वप्रियं वदेत्॥
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैरात्मानं नियतः शुचिः। शयीत शुद्धशय्यायां तरुण्या सह नान्यथा॥
नग्नो नावतरेदम्भस्तैलाभ्यक्तो न भक्षयेत्। हरिद्रां न मुखे लिम्पेन्न स्वपेदशुचिः क्वचित्॥
न वृथा विलिखेद्भूमिं न बिल्वं द्रोणमम्बुजम्। धारयेन्मूर्ध्नि नैवाद्याल्लोणतैलं च केवलम्॥
मलिनो न भवेज्जातु कुत्सितान्नं न भक्षयेत्। द्रोणपङ्कजबिल्वानि पद्भ्यां जातु न लङ्घयेत्॥

महदेवीमिन्द्रवल्लीं श्रीवल्लीं विष्णुवल्लभाम्। कन्याम्बुजप्रवालं च धारयेन्मूर्ध्नि सर्वदा॥
इत्याचारपरो नित्यं विष्णुभक्तो दृढव्रतः। श्रियमाप्नोति महतीं देवानामपि दुर्लभाम्॥

इति सप्तविंशत्यक्षरलक्ष्मीमन्त्रप्रयोगः।

लक्ष्मी की अधिक चाह वाले के लिये पालनीय नियम—(१) सदा सत्यवादी रहे। (२) पश्चिम की ओर मुख करके भोजन करे। (३) प्रतिदिन स्वच्छ पवित्र होकर सुगन्ध-पुष्पादि धारण करे। (४) शुद्ध शय्या पर तरुणी के साथ शयन करे। (५) नग्न होकर स्नान न करे। (६) तेल-मालिश कर भोजन न करे। (७) मुख में हल्दी न लगाये। (८) कभी भी अपवित्र स्थिति में शयन न करे। (९) व्यर्थ में भूमि न खरोंचे। (१०) व्यर्थ में बिल्व-फल-पत्र, दोनाफूल तथा कमल को न तोड़े। (११) शिर में कच्ची घानी का तेल न लगाये। (१२) मलीन न रहे तथा कुत्सितान्न का भोजन न करे। (१३) दोना, कमल तथा बेलपत्र-फल को पैरों से न लाँघे। (१४) सहदेवी, इन्द्रायण, लौंग आदि को शिर पर धारण करे। (१५) इस प्रकार का आचरण करते हुए सदैव विष्णु का भक्त बना रहे तो देवों को भी दुर्लभ महती श्री की प्राप्ति होती है।

लक्ष्मीस्तोत्रम्

अथ लक्ष्मीस्तोत्रप्रारम्भः—

सिंहासनगतः शक्रः सम्प्राप्य त्रिदिवं पुनः। देवराज्ये स्थितो देवीं तुष्टावाब्जकरां ततः॥ १॥

श्री विष्णुपुराणोक्त लक्ष्मी स्तोत्र—(लक्ष्मीजी के मन्त्रों के अनुष्ठान में लक्ष्मीस्तव के पाठ का निर्देश है। वह लक्ष्मी-स्तोत्र के लिये ही है। स्तोत्रपाठ के उपरान्त ही प्रतिदिन मन्त्रजप आरम्भ करना चाहिये।)

जब देवराज इन्द्र को स्वर्ग के राज्य का सिंहासन पुनः प्राप्त हो गया तब उन्होंने महालक्ष्मी को तुष्ट करने का कार्य किया॥ १॥

इन्द्र उवाच—

नमस्ये सर्वभूतानां जननीमब्जसम्भवाम्। श्रियमुन्निद्रपद्माक्षीं विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम्॥ २॥
पद्मालयां पद्मकरां पद्मपत्रनिभेक्षणाम्। वन्दे पद्ममुखीं देवीं पद्मनाभप्रियामहम्॥ ३॥
त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा सुधा त्वं लोकपावनी। सन्ध्या रात्रिः प्रभा भूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती॥ ४॥
यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने। आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी॥ ५॥
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च। सौम्या सौम्यैर्जगद्रूपैस्त्वयैतद्देवि पूरितम्॥ ६॥
का त्वन्या त्वामृते देवि सर्वयज्ञमयं वपुः। अध्यास्ते देवदेवस्य योगचिन्त्यं गदाभृतः॥ ७॥
त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम्। विनष्टप्रायमभवत्त्वयेदानीं समेधितम्॥ ८॥
दाराः पुत्रास्तथाऽगारं सुहृद्धान्यं धनादिकम्। भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम्॥ ९॥
शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम्। देवि त्वद्दृष्टिदृष्टानां पुरुषाणां न दुर्लभम्॥ १०॥
त्वम्बा सर्वभूतानां देवदेवी हरिः पिता। त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद्व्याप्तं चराचरम्॥ ११॥
मा नः कोशं तथा कोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम्। मा शरीरं कलत्रं च त्यजेथाः सर्वपावनि॥ १२॥
मा पुत्रान्मा सुहृद्वर्गान्मा पशून्मा विभूषणम्। त्यजेथा मम देवस्य विष्णोर्वक्षःस्थलाश्रये॥ १३॥

इन्द्र बोले—हे सभी प्राणियों को जन्म देने वाली कमलसम्भवा देवि! आपको नमस्कार है। आप लक्ष्मी हैं, जिनके नेत्र उन्निद्र हैं तथा कमल के समान है और विष्णु के वक्षःस्थल में जो बैठी हुई हैं। कमलों में निवास करने

वाली, कमलों के समान हाथों वाली, कमलपत्र के समान दृष्टि वाली, कमलमुखी, विष्णु भगवान् की प्रिया लक्ष्मी की मैं वन्दना करता हूँ। हे देवि! आप सिद्धि हैं। आप ही स्वधा, स्वाहा तथा लोकपावनी हैं। आप ही सन्ध्या, रात्रि, प्रभा, मेधा, श्रद्धा, सरस्वती, यज्ञविद्या, महाविद्या, गुह्यविद्या तथा शोभना हैं। हे देवि! आप ही मोक्षदायिनी आत्मविद्या हैं। आप सौम्या हैं तथा आपने ही सौम्य रूपों से इस जगत् को भर दिया है। हे अमृते देवि! आपके अतिरिक्त अन्य दूसरा यज्ञमय शरीर है; आप जगदाधार योगचिन्त्य देवदेव श्रीविष्णु भगवान् में विराजती हैं। तुम्हारे द्वारा त्याग दिये जाने पर सम्पूर्ण त्रिलोक विनष्टप्राय हो जाते हैं, आप ही इनको जीवित रखती हैं। हे महाभागे! मनुष्यों पर आपकी कृपादृष्टि से ही पत्नी, पुत्र, आवास, मित्र तथा धन-धान्य प्राप्त होता है। शरीर, आरोग्य, ऐश्वर्य, शत्रुपक्ष का नाश, सुख—ये सब हे देवि! जिन लोगों पर आपकी दृष्टि है, उनके लिये दुर्लभ नहीं हैं। हे देवि! आप सम्पूर्ण प्राणियों की माता तथा भगवान् विष्णु पिता हैं। आप एवं विष्णु से ही यह चराचर जगद् व्याप्त है। हे सर्वपावनी! मुझे कोश, कोष्ठ, गृह, परिच्छद, शरीर, कलत्र, पुत्र, मित्र, पशु, विभूषण न त्यागें। आप मेरे देव विष्णु के वक्षःस्थल में विराजमान बनी रहें॥ २-१३॥

सत्त्वेन सत्यशौचाभ्यां तथा शान्त्यादिभिर्गुणैः। त्यज्यन्ते ते नराः सद्यः सन्त्यक्ता ये त्वयाऽमले॥ १४॥
त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलैर्गुणैः। कुलैश्वर्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि॥ १५॥
स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान्। स शूरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः॥ १६॥
सद्यो वैगुण्यमायान्ति शीलाद्याः सकला गुणाः। पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णुवल्लभे॥ १७॥
न ते वर्णयितुं शक्ता गुणाञ्जिह्वाऽपि वेधसः। प्रसीद देवि पद्माक्षि माऽस्मांस्त्याक्षीः कदाचन॥ १८॥

सत्त्व, सत्य, शौच, शान्ति आदि गुणों को जो लोग त्याग देते हैं, वे हे अमले! आपके द्वारा त्याग दिये जाते हैं। आपकी दृष्टिमात्र से शीघ्र ही निर्गुणी लोग शीलादि सम्पूर्ण गुणों, कुल तथा ऐश्वर्य से युक्त हो जाते हैं। हे देवि! जिस पर आपकी दृष्टि हो जाती है, वह व्यक्ति प्रशंसनीय, गुणी, धन्य, कुलीन, बुद्धिमान, शूर तथा विक्रान्त हो जाता है। हे जगद्धात्री देवि! जिस व्यक्ति से आप पराङ्मुखी हो जाती हैं, वह व्यक्ति शीघ्र ही शीलादि सम्पूर्ण गुणों से रहित हो जाता है। आप विष्णुप्रिया हैं। आपकी महिमा का वर्णन तो ब्रह्माजी भी अपनी जिह्वा से नहीं कर सकते हैं। हे देवि! आप मुझपर प्रसन्न हों तथा मुझे कभी न त्यागें॥ १४-१८॥

पराशर उवाच—

एवं श्रीः संस्तुता सम्यक्प्राह हृष्टा शतक्रतुम्। शृण्वतां सर्वदेवानां सर्वभूतस्थिता द्विज॥ १९॥

पराशर जी बोले—इन्द्र के द्वारा इस प्रकार स्तुति किये जाने पर प्रसन्न होकर इन्द्र से सब देवताओं को सुनाते हुए सब प्राणियों के हितार्थ बोलीं॥ १९॥

श्रीरुवाच—

परितुष्टास्मि देवेश स्तोत्रेणानेन ते हरे। वरं वृणीष्व यस्त्विष्टो वरदाऽहं तवागता॥ २०॥

श्री देवी बोलीं—हे देवेश! आपके द्वारा की गई हरि की स्तुति से मैं प्रसन्न हूँ। अब तुम्हें जो इच्छा हो, वह वर माँगो। मैं तुम्हें वर देने के लिये आई हूँ॥ २०॥

इन्द्र उवाच—

वरदा यदि मे देवि वरार्हो यदि वाऽप्यहम्। त्रैलोक्यं न त्वया त्याज्यमेष मेऽस्तु वरः परः॥ २१॥
स्तोत्रेण यस्तवैतेन त्वां स्तोष्यत्यब्धिसम्भवे। स त्वया न परित्याज्यो द्वितीयोऽस्तु वरो मम॥ २२॥

इन्द्र बोले—हे देवि! यदि मैं वर पाने योग्य हूँ और आप मुझे वर दे रही हैं तो आप तीनों लोकों को कभी न त्यागें। यह मेरा प्रथम वर है, जिसकी मैं याचना कर रहा हूँ। मेरा दूसरा अभीष्ट वर यह है कि इस स्तोत्र से जो भी आपकी स्तुति करे, उसे आप कभी न त्यागना॥ २१-२२॥

श्रीरुवाच—

त्रैलोक्यं त्रिदशश्रेष्ठ न सन्त्यक्ष्यामि वासव। दत्तो वरो मयाऽयं ते स्तोत्राराधनतुष्टया॥ २३॥

यश्च सायं तथा प्रातः स्तोत्रेणानेन मानवः। मां स्तोष्यति न तस्याहं भविष्यामि पराङ्मुखी॥ २४॥

श्री बोलीं—हे त्रिदशश्रेष्ठ! मैं तीनों लोकों को नहीं त्यागूँगी—यह वर मैं तुम्हें इस स्तोत्र से आशान्वित होकर, सन्तुष्ट होकर दे रही हूँ। जो प्रातः तथा सायंकाल इस स्तोत्र से मेरी स्तुति करेगा, उस मनुष्य से मैं कभी पराङ्मुख नहीं होऊँगी॥ २३-२४॥

पराशर उवाच—

एवं वरं ददौ देवी देवराजाय वै पुरा। मैत्रेय श्रीर्महाभागा स्तोत्राराधनतोषिता॥ २५॥

भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना श्रीः पूर्वमुदधेः पुनः। देवदानवयत्नेन प्रसूताऽमृतमन्थने॥ २६॥

एवं यथा जगत्स्वामी देवराजो जनार्दनः। अवतारं करोत्येषा तथा श्रीस्तत्सहायिनी॥ २७॥

पुनश्च पद्मा सम्भूता यदाऽऽदित्योऽभवद्धरिः। यदा च भार्गवो रामस्तदाऽभूद्धरणी त्वियम्॥ २८॥

राघवत्वेऽभवत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनि। अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेषाऽनपायिनी॥ २९॥

देवत्वे देवदेहेयं मानुषत्वे च मानुषी। विष्णोर्देहानुरूपं वै करोत्येषाऽऽत्मनस्तनुम्॥ ३०॥

यश्चैवं शृणुयाज्जन्म लक्ष्म्या यश्च पठेन्नरः। श्रियो न विच्युतिस्तस्य गृहे यावत्कुलत्रयम्॥ ३१॥

पठ्यते येषु चैवैष गृहेषु श्रीस्तवो मुने। अलक्ष्मीः कलहाधारा न तेष्वास्ते कदाचन॥ ३२॥

एतत्ते कथितं ब्रह्मन् यन्मां त्वं परिपृच्छसि। क्षीराब्धौ श्रीर्यथा जाता पूर्वं भृगुसुता सती॥ ३३॥

इति सकलविभूत्यवाप्तिहेतुः स्तुतिरियमिन्द्रमुखोद्गता हि लक्ष्म्या।
अनुदिनमिह पठ्यते नृभिर्यैर्वसति न तेषु कदाचिदप्यलक्ष्मीः॥ ३४॥

इति श्रीविष्णुपुराणे लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम्।

पराशर जी बोले—हे महाभाग मैत्रेय जी! प्राचीन काल में इस स्तोत्र से परितुष्ट होकर श्रीदेवी ने देवराज इन्द्र को वर दिया था। पूर्व में भृगु की ख्याति से लक्ष्मी समुद्र से उत्पन्न हुई थी, फिर वह देव-दानवों के समुद्र-मन्थन से पुनः उत्पन्न हुई थी। जिस प्रकार जगत् के स्वामी भगवान् जनार्दन हैं, उनकी ही सहायता के लिये यह लक्ष्मी भी अवतार धारण करती हैं। फिर जब विष्णु आदित्य हुए तब यह पद्मा के रूप में अवतरित हुईं। जब परशुराम के रूप में विष्णु प्रकट हुये, तब यह 'धरणी' होकर प्रकट हुईं। जब राम का अवतार हुआ तब यह 'सीता' हुईं। कृष्णजन्म में यह रुक्मिणी होकर प्रकट हुईं। अन्य अवतारों से भी यह विष्णु के साथ अनपायिनी होकर रही हैं। यह देवावतार में देवरूप से तथा मानुषावतार में मनुष्यरूप से उत्पन्न होती हैं। यह विष्णु के शरीर के अनुरूप ही अपना शरीर धारण करती हैं। जो मनुष्य लक्ष्मी के इन जन्मों को सुनता तथा पढ़ता है, उसकी तीन पीढ़ियों तक लक्ष्मी उसे नहीं त्यागती हैं। हे मुनि! जिन घरों में इस श्रीस्तव का पाठ होता है, उनमें कलह का आधार अलक्ष्मी (दरिद्रता) कभी नहीं फटकती। आपने मुझसे जो पूछा, हे ब्रह्मन्! वह मैंने आपको बता दिया। क्षीरसागर में पूर्व में जिस प्रकार भृगुपुत्री के रूप में लक्ष्मी जन्मी, वह सब बताया। इन्द्र के मुख से की गई यह लक्ष्मी की स्तुति सम्पूर्ण

विभूतियों को प्राप्त कराती है। जिन मनुष्यों के द्वारा इस स्तुति को प्रतिदिन पढ़ा जाता है, उनके यहाँ अलक्ष्मी कभी नहीं आती है॥ २५-३४॥

द्वादशनामात्मकं लक्ष्मीस्तोत्रम्

त्रैलोक्यपूजिते देवि कमले विष्णुवल्लभे। यथा त्वमचला कृष्णे तथा भव मयि स्थिरा॥ १॥
कमला चञ्चला लक्ष्मीश्चला भूतिर्हरिप्रिया। पद्मा पद्मालया सम्पदुच्चैः श्री पद्मधारिणी॥ २॥
द्वादशैतानि नामानि लक्ष्मीं सम्पूज्य यः पठेत्। स्थिरा लक्ष्मीर्भवेत्तस्य पुत्रदारादिभिः सह॥ ३॥
इति लक्ष्मीस्तोत्रं द्वितीयम्।

लक्ष्मीद्वादश नाम स्तोत्र—हे विष्णुप्रिया कमले! आप तीनों लोकों द्वारा पूजित हैं। जिस प्रकार हे कृष्णे! आप अचला हैं, उसी प्रकार आप मेरे घर में स्थिर होकर रहें। (१) कमला, (२) चञ्चला, (३) लक्ष्मी, (४) चला, (५) भूति, (६) हरिप्रिया, (७) पद्मा, (८) पद्मालया, (९) सम्पद्, (१०) उच्चैः, (११) श्रीः तथा (१२) पद्मधारिणी—ये लक्ष्मी के बारह नाम हैं। जो इन द्वादश नामों को पढ़कर लक्ष्मी की पूजा करता है, उसके घर में लक्ष्मी पुत्र-दारा आदि के साथ विराजती है॥ १-३॥

लक्ष्मीकवचम्

अथ लक्ष्मीकवचप्रारम्भः—

अथ वक्ष्ये महेशानि कवचं सर्वकामदम्। यस्य विज्ञानमात्रेण भवेत्साक्षात्सदाशिवः॥ १॥
नार्चनं तस्य देवेशि मन्त्रमात्रं जपेन्नरः। स भवेत्पार्वतीपुत्रः सर्वशास्त्रपुरस्कृतः॥ २॥
विद्यार्थिना सदा सेव्या विशेषे विष्णुवल्लभा।

ॐ अस्याश्चतुरक्षरविष्णुवनितायाः कवचस्य श्रीभगवान् शिव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। वाग्भवा देवता। वाग्भवं वीजम्। लज्जा शक्तिः। रमा कीलकम्। कामबीजात्मकं कवचं मम सुकवित्वपाण्डित्यसमृद्धिसिद्धये विनियोगः।

ऐङ्कारो मस्तके पातु वाग्भवा सर्वसिद्धिदा॥ ३॥
ह्रीं पातु चक्षुषोर्मध्ये चक्षुर्युग्मे च शाङ्करी। जिह्वायां मुखवृत्ते च कर्णयोर्दन्तयोर्नसि॥ ४॥
ओष्ठाधारे दन्तपङ्क्तौ तालुमूले हनौ पुनः। पातु मां विष्णुवनिता लक्ष्मीः श्रीवर्णरूपिणी॥ ५॥

लक्ष्मीकवच—हे महेशानि! अब मैं सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला कवच कहता हूँ, जिसके जानने मात्र से साधक साक्षात् शिव हो जाता है। हे देवेशि! उसके लिये किसी प्रकार का अर्चन नहीं है, वह केवल मन्त्रमात्र का जप करे तो वह सर्वशास्त्रों में पुरस्कृत साक्षात् पार्वतीपुत्र (गणेश) ही हो जाता है। विद्यार्थियों के द्वारा विष्णुवल्लभा (लक्ष्मी) की सदा सेवा करनी चाहिये। ऐङ्कार मस्तक की रक्षा करें, वाग्भवा सर्वसिद्धियों को दे। नेत्रों के मध्यभाग की रक्षा ह्रीं करे। दोनों नेत्रों की रक्षा शाङ्करी करे। जीभ, मुखवृत्त, कान, दाँत, नाक, ओष्ठाधार, दन्तपङ्क्ति, तालुमूल तथा हनु की रक्षा विष्णुवनिता लक्ष्मी श्रीकर्णरूपिणी करे॥ १-५॥

कर्णयुग्मे भुजद्वन्द्वे स्तनद्वन्द्वे च पार्वती। हृदये मणिबन्धे च ग्रीवायां पार्श्वयोर्द्वयोः॥ ६॥
पृष्ठदेशे तथा गुह्ये वामे च दक्षिणे तथा। उपस्थे च नितम्बे च नाभौ जङ्घाद्वये पुनः॥ ७॥
जानुचक्रे पदद्वन्द्वे घुटिकाङ्गुलिमूलके। सधातुप्राणशक्त्या वा सीमन्त्यां मस्तके तथा॥ ८॥
सर्वाङ्गे पातु कामेशी महादेवी समुन्नतिः।पुष्टिः पातु महामाया उत्कृष्टिः सर्वदावतु॥ ९॥

ऋद्धिः पातु सदा देवी सर्वत्र शम्भुवल्लभा। वाग्भवी सर्वदा पातु पातु मां हरगेहिनी॥ १०॥

रमा पातु महादेवी पातु माया स्वराट् स्वयम्। सर्वाङ्गे पातु मां लक्ष्मीर्विष्णुमाया सरस्वती॥ ११॥

दोनों कान, दोनों भुजा, दोनों स्तनों की रक्षा पार्वती करें। हृदय, मणिबन्ध, ग्रीवा, दोनों पार्श्व, पृष्ठदेश, गुह्य, वाम दक्षिण, उपस्थ, नितम्ब, नाभि, दोनों जङ्घा, जानुचक्र, चरणद्वय, घुटिका, अङ्गुलिमूलक, धातु, प्राण, शक्ति, सीमन्त (माँग), मस्तक तथा सर्वाङ्ग की रक्षा कामेशी महादेवी करें। पुष्टि, उत्कृष्टि की रक्षा सदैव महामाया करें। सर्वत्र शम्भुवल्लभा देवी ऋद्धि की रक्षा करें। वाग्भवी सर्वदा रक्षा करें। हरगेहिनी मेरी रक्षा करें। महादेवी लक्ष्मी की रक्षा करें। स्वयं माया अपने राज्य की रक्षा करें। विष्णुमाया, लक्ष्मी एवं सरस्वती मेरे सर्वाङ्ग की रक्षा करें॥ ६-११॥

विजया पातु भवने जया पातु सदा मम। शिवदूती सदा पातु सुन्दरी पातु सर्वदा॥ १२॥

भैरवी पातु सर्वत्र भेरुण्डा सर्वदावतु। त्वरिता मां पातु नित्यमुग्रतारा सदावतु॥ १३॥

पातु मां कालिका नित्यं कालरात्रिः सदावतु। नव दुर्गाः सदा पान्तु कामाख्या सर्वदावतु॥ १४॥

योगिन्यः सर्वदा पान्तु मुद्राः पान्तु सदा मम। मात्राः पान्तु सदा देव्यश्चक्रस्थो योगिनीगणः॥ १५॥

सर्वत्र सर्वकार्येषु सर्वकर्मसु सर्वदा। पातु मां देवदेवी च लक्ष्मीः सर्वसमृद्धिदा॥ १६॥

इति ते कथितं दिव्यं कवचं सर्वसिद्धये। यत्र तत्र न वक्तव्यं यदीच्छेदात्मनो हितम्॥ १७॥

शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरि। न्यूनाङ्गे ह्यतिरिक्ताङ्गे दर्शयेन्न कदाचन॥ १८॥

न स्तवं दर्शयेद्दिव्यं सन्दर्श्य शिवहा भवेत्। कुलीनाय महेशाय दुर्गाभक्तिरताय च॥ १९॥

वैष्णवाय विशुद्धाय दद्यात्कवचमुत्तमम्। निजशिष्याय शान्ताय धनिने कुलिने तथा॥ २०॥

दद्यात्कवचमित्युक्तं सर्वतन्त्रसमन्वितम्। शनौ मङ्गलवारे च रक्तचन्दनकैस्तथा॥ २१॥

सुतिथौ शुभयोगे च श्रवणायां रवेर्दिने। विलिखेत्प्रपठेत्स्तोत्रं शून्यागारे सुरालये॥ २२॥

कुमारीं पूजयित्वा च यजेद्देवीं सनातनीम्। घृताद्यैः सोपकरणैः पुष्पधूपैर्विशेषतः॥ २३॥

ब्राह्मणान्भोजयित्वा च पूजयेत्परमेश्वरीम्। आखेटकमुपाख्यानं तत्र कुर्याद्दिनत्रयम्॥ २४॥

तदा धरेन्महारक्षां शङ्करेण प्रभाषिताम्। मारणद्वेषणादीनि लभते नात्र संशयः॥ २५॥

स भवेत्पार्वतीपुत्रः सर्वशास्त्रपुरस्कृतः। गुरुर्देवो हरः साक्षात्पत्नी तस्य हरिप्रिया।
अभेदेन यजेद्यस्तु तस्य सिद्धिरदूरतः॥ २६॥

पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा जपफलमनुवेलं लप्स्यते यद्विशेषम्।
स भवति पदमुच्चैः सम्पदां पादनम्रक्षितिपमुकुटलक्ष्मीर्लक्षणानां चिराय॥ २७॥

इति विश्वसारे श्रीलक्ष्मीकवचं समाप्तम्। श्रीमहालक्ष्म्यै नमः। शम्।

विजया भवन में रक्षा करें। जया सदा मेरी रक्षा करें। शिवदूती सदा मेरी रक्षा करें। सुन्दरी मेरी सदैव रक्षा करे। भैरवी सर्वत्र रक्षा करें तथा भेरुण्डा सर्वदा रक्षा करें। त्वरिता मेरी नित्य रक्षा करें तथा उग्रतारा सदा रक्षा करें। कालिका मेरी नित्य रक्षा करें। कालरात्रि सदैव रक्षा करें। नवदुर्गा तथा कामाख्या सदैव रक्षा करें। योगिनियाँ तथा मुद्रायें मेरी सदैव रक्षा करें। देवी के चक्र में स्थित योगिनीगण सदैव मेरी मात्रा की रक्षा करें। सर्वत्र समस्त कार्यों में सर्वसिद्धिदा देवदेवी लक्ष्मी मेरी रक्षा करें। यह आपसे सर्वसिद्धि देने वाला कवच कहा गया है, जिसे अपना हित चाहने वाले किसी ऐरे-गैरे को नहीं देना चाहिये। न इस स्तव को किसी को दिखाना चाहिये, अन्यथा वह

शिवहा (अपने कल्याण का नाशक) होता है। इस कवच को कुलीन व्यक्ति को, जो शिवभक्त तथा दुर्गाभक्त हो अथवा विशुद्ध वैष्णव हो, उसको ही यह उत्तम कवच देना चाहिये। जो शान्त, कुलीन तथा धनी अपना शिष्य हो, उसे ही यह सर्वतन्त्रसमन्वित कवच देना चाहिये। इस कवच को शनिवार, मङ्गलवार के दिन अथवा सुतिथि, सुयोग में रविवार को श्रवण नक्षत्र में लालचन्दन से निर्जन स्थान में या शिवालय में एकान्त में लिखकर तथा पढ़कर देना चाहिये। कुमारी की पूजा कर सनातनी आद्याशक्ति की पूजा करे। घी, उपकरण, धूप आदि से पूजा करके फिर ब्राह्मणों को भोजन कराये। तीन दिन तक आखेटक उपाख्यान करे। तब देवी महारक्षा करती हैं, यह शङ्कर जी का कथन है। साधक को फिर मारण एवं द्वेषणों का भय नहीं रहता, वह साक्षात् पार्वतीपुत्र हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं है। गुरुदेव साक्षात् शिव हैं तथा उनकी पत्नी साक्षात् पार्वती हैं, इस प्रकार की अभेद भावना से जो पूजा करता है, उसको शीघ्र ही सफलता मिलती है। जो मनुष्य अन्तरात्मा से आर्द्र होकर इस कवच को पढ़ता है, उसे विशेष फल प्राप्त होता है। उसे उच्च पद एवं सम्पदाओं की प्राप्ति होती है तथा लक्ष्मी के लक्षणों से उसे राजमुकुट की प्राप्ति चिरकाल तक रहती है॥ १२-२७॥

विमर्श—मूल पाठ में तीसरे श्लोक के पूर्वार्ध के उपरान्त इस कवच का विनियोग दिया गया है, उसका उपयोग करना चाहिये।

श्रीसूक्तविधानम्

ऋग्विधाने—

य इच्छेद्वरदां देवीं श्रियं नित्यं कुले स्थिताम्। स शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्॥
श्रियः पञ्चदशर्च्चं च श्रीकामः सततं जपेत्। आवाहयेच्छ्रियं पद्मे पञ्चभिः कनकेन वा॥
उपहारानुपहरेच्छुक्लान् भक्ष्यान् पयो दधि। स्थालीपाकं च शालीनां पयसा सम्प्रकल्पयेत्॥
चान्द्रायणकृतात्मा तु प्रपद्येत्प्रयतः श्रियै। सर्वौषधीभिः पाठाभिः स्नात्वाऽद्भिः पावनैरपि॥
श्रीसूक्तं यो जपेद्भक्त्या तस्याऽलक्ष्मीर्विनश्यति। जुहुयाद्यश्च धर्म्मज्ञो हविष्येण विशेषतः॥

श्रीसूक्त के जप की विधि (ऋग्विधान के अनुसार)—जो व्यक्ति यह चाहता है कि उसके कुल में नित्य ही लक्ष्मी का वास बना रहे, वह पवित्र होकर प्रतिदिन घृत की आहुति के साथ श्रीसूक्त की पन्द्रह ऋचाओं से जप करे। श्रीलक्ष्मी का आवाहन करके पाँच स्वर्णमुद्राओं के उपहार एवं दूध-दही से पूजा करे। शालि चावलों का स्थालीपाक दूध के साथ बनाकर भोग लगाये। प्रथम चान्द्रायण व्रत करके फिर सर्वौषधि के जल से स्नान करके पूजा करके फिर श्रीसूक्त का पाठ करे। जो भक्तिपूर्वक श्रीसूक्त का जप करता है, उसकी अलक्ष्मी नष्ट हो जाती है। जो धर्मज्ञ विशेषतः हविष्य से आहुति देता है, उसका कल्याण होता है।

अथ प्रयोगः—तत्रादौ चान्द्रायणादिद्वारा प्रायश्चित्तं सम्पाद्य पूर्वदिने अयुतगायत्रीजपं कृत्वा प्रारम्भदिने प्रातर्नद्यादौ स्नात्वा सन्ध्यादिनित्यकर्म्म समाप्य सर्वौषधियुक्तैरुष्णोदकैर्मङ्गलस्नानं कृत्वा नवे शुक्लवाससी परिधाय यथायोग्यालङ्कृतो देवालयादिषु विविक्ते देशे जपस्थानं प्रकल्पयेत्। ततः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य सपवित्रकरः आचम्य प्राणानायम्य ॐ 'सुमुखश्च०' इत्यादिगणपतिस्मरणं कुर्य्यात्। ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम अनन्ताव्यवच्छिन्नशाश्वतलक्ष्मीप्राप्तिद्वारा सुखसम्पदायुरारोग्यप्राप्त्यर्थं श्रीमहालक्ष्मीदेवताप्रीत्यर्थं च अमुकसङ्ख्यया श्रीसूक्तजपं करिष्ये, तदङ्गत्वेन न्यासध्यानादिकर्म्म करिष्ये' इति च सङ्कल्प्य न्यासं कुर्य्यात्। तद्यथा—अस्य हिरण्यवर्णामित्यादिपञ्चदशर्चस्य श्रीसूक्तस्य आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुता ऋषयः आद्यानां तिसृणामनुष्टुप्छन्दः चतुर्थ्याः प्रस्तारपङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमीषष्ठ्योस्त्रिष्टुप्छन्दः। ततोऽष्टानामनुष्टुप्छन्दः। अन्त्यायाः प्रस्तारपङ्क्तिश्छन्दः। श्रीविश्वावसुर्देवता स्थिरलक्ष्मीप्राप्तये

न्यासे जपे विनियोगः। ॐ आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुतऋषिभ्यो नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्प्रस्तारपङ्क्ति-त्रिष्टुबनुष्टुप्प्रस्तारपङ्क्तिच्छन्दोभ्यो नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीविश्वावसुदेवताभ्यां नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। अथ सूक्तन्यासः। ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीम्० इति शिरसि॥१॥ ॐ तांमआव ह० नेत्रयोः॥२॥ ॐ अश्वपूर्वामिति कर्णयोः॥३॥ ॐ कांसोस्मितामिति नासिकयोः॥४॥ ॐ चन्द्रांप्रभासामिति मुखे॥५॥ ॐ आदित्यवर्णे इति गले॥६॥ ॐ उपैतुमामिति बाह्वोः॥७॥ ॐ क्षुत्पिपासेति हृदि॥८॥ ॐ गन्धद्वारामिति नाभौ॥९॥ ॐ मनसःकाममिति गुह्ये॥१०॥ ॐ कर्दमेनेति गुदे॥११॥ ॐ आपःसृजंत्विति ऊर्वोः॥१२॥ ॐ आर्द्रां पुष्करिणीमिति जानुनोः॥१३॥ ॐ आर्द्रां यस्करिणीमिति जङ्घयोः॥१४॥ ॐ ताम्मआवह इति पादयोः॥१५॥ एवमेताः प्रणवादिनमोऽन्ता विन्यस्य ध्यायेत्—

या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी गम्भीरावर्तनाभिस्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया।
या लक्ष्मीर्दिव्यरूपैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भे सा नित्यं पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमाङ्गल्ययुक्ता॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूजयेत्। ततः स्वपुरतः पीठे चतुर्द्वारचतुरस्त्रत्रयावृतमष्टदलं कमलं विधाय 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' इति पीठदेवताः सम्पूज्य ॐ विभूत्यै नमः॥ १॥ ॐ उन्नत्यै नमः॥ २॥ ॐ कान्त्यै नमः॥ ३॥ ॐ सृष्ट्यै नमः॥ ४॥ ॐ कीर्त्यै नमः॥ ५॥ ॐ सन्नत्यै नमः॥ ६॥ ॐ पुष्ट्यै नमः॥ ७॥ ॐ उत्कृष्ट्यै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ ऋद्ध्यै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः सम्पूजयेत्। तत 'ॐ श्रीं कमलासनाय नमः' इत्यासनं दत्त्वा तत्र स्वर्णमयीं महालक्ष्मीप्रतिमां सावयवां संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा ॐ हिरण्यवर्णामित्यादिश्रीसूक्तेनावाहनादिश्वेत-पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्तैकाक्षरप्रयोगवदावरणपूजां कृत्वा धूपदीपशुक्लभक्ष्यान् पयो दधि शुक्लानुपहारांश्च निवेद्य नीराजनान्तं कृत्वा पूर्वोक्तस्तवेन स्तुत्वा सूक्तं पठेत्।

प्रयोगविधि—प्रथम चान्द्रायणादि द्वारा प्रायश्चित्त करके पूर्व दिन अयुत सङ्ख्या में जप करके प्रारम्भ के दिन में प्रातः नदी आदि में स्नान करके सन्ध्यादि नित्यकर्म समाप्त कर सर्वौषधि-युक्त उष्णोदक से मङ्गलस्नान कर शुक्ल वस्त्र धारण कर यथायोग्य अलंकृत होकर देवालय इत्यादि एकान्त स्थान में जप करे। अपने आसन पर पूर्व की ओर मुख करके बैठे। पवित्री धारण कर आचमन, प्राणायाम कर 'ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च०' इत्यादि से गणपति का स्मरण करके देश-काल का सङ्कीर्तन कर 'मम अनन्ताव्यवच्छिन्नशाश्वतलक्ष्मीप्राप्तिद्वारा सुखसम्पदायुरा-रोग्यप्राप्त्यर्थं च अमुकसङ्ख्यया श्रीसूक्तजपं करिष्ये, तदङ्गत्वेन न्यासध्यानादिकर्म्म करिष्ये' ऐसा कहकर सङ्कल्प करे। फिर न्यासादि करे। 'अस्य हिरण्यवर्णामित्यादिपञ्चदशर्चस्य श्रीसूक्तस्य आनन्द, कर्दम, चिक्लीत इन्दिरासुता ऋषयः आद्यानान्तिसृणां अनुष्टुप् छन्दः। चतुर्थ्याः प्रस्तारपङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमीषष्ठ्योस्त्रिष्टुप् छन्दः। ततोऽष्टानामनुष्टुप् छन्दः। अन्त्यायाः प्रस्तारपङ्क्तिश्च्छन्दः। श्रीविश्वावसुर्देवता। स्थिरलक्ष्मीप्राप्तये न्यासे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करे। तदनन्तर मूलपाठ में लिखित 'ॐ आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुतऋषिभ्यो नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीम्०' इत्यादि पन्द्रह ऋचाओं से श्रीसूक्त का न्यास प्रणव से आरम्भ कर नमः अन्त में लगाकर करना चाहिये।

फिर मूल में लिखित 'या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी०' इत्यादि श्लोक से ध्यान करे। ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—जो पद्मासन पर स्थित, विपुल कटितटी, कमलपत्र के समान नेत्रों वाली, गम्भीर आवर्त्तों वाली नाभि से युक्त, स्तनों के भार से झुकी हुई, शुभ्र वस्त्र का उत्तरीय धारण की हुई लक्ष्मी दिव्य रूप वाले मणिगणों से शोभित, स्वर्णकुम्भों से स्नापित, पद्महस्ता है, वह नित्य ही मेरे घर में निवास करे।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करे। फिर अपने सम्मुख रखे पीठ (चौकी) पर चार द्वार, तीन चतुरस्रों से आवृत अष्टदलकमल बनाकर 'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताभ्यो नमः' कहकर उस पीठ के देवताओं को पूजकर मूलोक्त 'ॐ विभूत्यै नमः' इत्यादि ९ मन्त्रों से नौ पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर 'ॐ कमलासनाय नमः' कहकर लक्ष्मीजी को आसन देकर स्वर्ण-निर्मित लक्ष्मी की सावयव प्रतिमा को स्थापित करके प्राणप्रतिष्ठा करके 'ॐ हिरण्यवर्णां०' इत्यादि श्रीसूक्त से आवाहनादि श्वेत पुष्पान्त उपचारों के द्वारा पूजकर पूर्वोक्त एकाक्षर मन्त्रप्रयोग की भाँति आवरणपूजा करके धूप-दीप, शुक्ल भक्ष्य, दूध-दही, शुक्ल उपहारों का नैवेद्य देकर नीराजनान्त करके पूर्वोक्त महालक्ष्मी स्तोत्र से स्तुति कर (अथवा लक्ष्मीद्वादशनाम स्तोत्र से स्तुति कर) फिर श्रीसूक्त पढ़े। श्रीसूक्त का मूलपाठ आगे दिया जा रहा है।

श्रीसूक्तम्

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणींसुवर्णरजतस्रजाम्। चन्द्रांहिरण्मयींलक्ष्मींजातवेदोमआवह॥१॥ ताम्म आवहजातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यांहिरण्यंविन्देयंगामश्वंपुरुषानहम्॥२॥ अश्वपूर्वांरथमध्यांहस्तिनादप्रबोधिनीम्। श्रियंदेवीमुपह्वयेश्रीर्मादेवीजुषताम्॥३॥ कांसोस्मितांहिरण्यप्राकारामार्द्रांज्वलन्तींतृप्तांतर्प्पयन्तीम्। पद्मेस्थितांपद्मवर्णांतामिहोपह्वयेश्रियम्॥४॥ चन्द्रांप्रभासांयशसाज्वलंतींश्रियंलोकेदेवजुष्टामुदाराम्। तांपद्मिनीमींशरणमहंप्रपद्येऽलक्ष्मीर्मेनश्यतांत्वांवृणे॥५॥ आदित्यवर्णेतपसोऽधिजातोवनस्पतिस्तववृक्षोऽथबिल्वः। तस्यफलानितपसानुदन्तुमान्तरायाश्चबाह्याअलक्ष्मीः॥६॥ उपैतुमांदेवसखः कीर्तिश्चमणिनासह। प्रादुर्भूतोसुराष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिमृद्धिन्ददातुमे॥७॥ क्षुत्पिपासामलाज्येष्ठामलक्ष्मींनाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिंचसर्वांनिर्णुदमेगृहात्॥८॥ गन्धद्वारांदुराधर्षांनित्यपुष्टांकरीषिणीम्। ईश्वरींसर्वभूतानान्तामिहोपह्वयेश्रियम्॥९॥ मनसःकाममाकूतिंवाचः सत्यमशीमहि। पशूनांरूपमन्नस्यमयिश्रीः श्रयतांयशः॥१०॥ कर्दमेनप्रजाभूतामयिसम्भवकर्दम। श्रियंवासयमेकुलेमातरंपद्ममालिनीम्॥११॥ आपः सृजन्तुस्निग्धानिचिक्लीतवसमेगृहे। निचदेवींमातरंश्रियंवासयमेकुले॥१२॥ आर्द्रांपुष्करिणींपुष्टिंपिङ्गलांपद्ममालिनीम्। चन्द्रांहिरण्मयींलक्ष्मींजातवेदोमआवह॥१३॥ आर्द्रांयःकरिणींयष्टिंसुवर्णांहेममालिनीम्। सूर्यांहिरण्मयींलक्ष्मींजातवेदोमआवह॥१४॥ तांमऽआवहजातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यांहिरण्यंप्रभूतंगावोदास्योऽश्वान् विन्देयंपुरुषानहम्॥१५॥ यः शुचिः प्रयतोभूत्वाजुहुयादाज्यमन्वहम्। श्रियः पञ्चदशर्चञ्चश्रीकामः सततंजपेत्॥१६॥ इति श्रीसूक्तम्।

इस श्रीसूक्त का मूल पाठ वैदिक ब्राह्मणों द्वारा ही किया जाना चाहिये। पाठ में उच्चारण में त्रुटि न हो, तभी फल की प्राप्ति होगी। यथासङ्कल्पित संख्या में सूक्तपाठ करके प्रतिदिन उतनी ही संख्या में घृत एवं समिधा से होम करके भगवती महालक्ष्मी से प्रार्थना करनी चाहिये।

एवं यथासङ्कल्पितसङ्ख्यया सूक्तं पठित्वा प्रत्यहं तत्सङ्ख्यया वा समिद्धेऽग्नौ घृतहोमं कृत्वा भगवतीं प्रार्थयेत्—

सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशुभ्रे।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम्॥

धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः। धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणं धनमश्विनौ॥
वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा। सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः॥
न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः। भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां जाप्यसूक्तके॥
पद्मानने पद्म ऊरू पद्माक्षि पद्मसम्भवे। तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्॥

विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम्। विष्णुप्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम्॥
महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि। तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्॥
पद्मानने पद्मिनि पद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि। विश्वप्रिये विश्वमनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व॥
आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः। ऋषयः श्रियपुत्राश्च मयि श्रीर्देवीदेवता॥
ऋणरोगादिदारिद्र्यं पापञ्च अपमृत्यवः। भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा॥
श्रीवर्च्चस्यमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते। धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः॥

इति प्रार्थना।

प्रार्थना—हे कमल के घर में निवास करने वाली, हाथों में कमल धारण करने वाली, धवलतर वस्त्र-गन्ध-माल्य धारण करने वाली, शुभ्रवर्णा भगवती, हरिवल्लभे, मनोज्ञे, तीनों लोकों को ऐश्वर्य देने वाली मुझपर प्रसन्न हो। अग्नि धन है, वायु धन है, सूर्य धन है, वसु धन है। इन्द्र धन है, धन बृहस्पति है, वरुण धन है, धन अश्विनीकुमार है। हे वैनतेय! सोम पियो। हे वृत्रहा! सोमपान करो। सोम धन का सोमिन है। सोमिनः मुझे दो। मुझे न क्रोध आये, न मात्सर्य आये, न लोभ हो और न मेरी बुद्धि विकृत हो। यह सब इस सूक्त के जपने वाले कृतपुण्य लोगों को प्राप्त हो। कमल के समान आनन वाली, कमल के समान ऊरुओं वाली, कमल के समान नेत्रों वाली, कमल से उत्पन्न लक्ष्मी मेरे ऊपर ऐसी कृपा करो, जिससे मुझे सुख प्राप्त हो। मैं विष्णु की पत्नी, क्षमा देवी, माधवी, माधवप्रिया, विष्णु की प्रिय सखी, अच्युतवल्लभा को प्रणाम करता हूँ। मैं महालक्ष्मी को जानता हूँ। विष्णुपत्नी का ध्यान करता हूँ, वह लक्ष्मी मेरी उन्नति करे। हे पद्मानने, पद्मिनी, पद्मपत्रे, पद्मप्रिये, पद्म के पत्रों के समान नेत्रों वाली, विश्वप्रिये, विश्वमनोनुकूले! आपके चरणकमलों में मेरी भक्ति बनी रहे। आपके आनन्द, कर्दम, श्रीद तथा चिक्लीत—ये पुत्र प्रसिद्ध हैं। ये मेरे ऋषिगण श्रीपुत्र हैं। श्रीदेवी मेरी देवता हैं। ऋण, रोगादि, दरिद्रता, पाप, अपमृत्यु, भय, शोक, मनस्ताप—ये सब मेरे शरीर-घर एवं कुल से सर्वदा के लिये नष्ट हो जायँ। लक्ष्मी, वर्चस्व, आरोग्य तथा पवित्रता को प्राप्त कर मैं महिमान हो जाऊँ। धन-धान्य, पशु, बहुत से योग्य पुत्र तथा सौ वर्ष की दीर्घायु मुझे प्राप्त हो।

श्रीसूक्तस्य फलश्रुतिः

ऋग्विधाने—

चन्द्रामिति तु पद्मानि जुहुयात्सर्पिषा द्विजः। आदित्यवर्णे इत्यनया बिल्वहोमो विधीयते॥
बिल्वमध्य एवाग्निः स्यात्स्थालीपाके हुनेद्द्विजः। दशसाहस्त्रिको होमः श्रीकामः प्रथमो विधिः॥
हुत्वा तु प्रयुतं सम्यगनन्तं विन्दते श्रियम्। अयुतं शतकृत्वस्तु हुत्वा शुक्लानि सर्पिषा॥
अनन्तामध्यवच्छिन्नां शाश्वतीं विन्दते श्रियम्। अशक्तौ जप एवोक्तो दशसाहस्त्रिको वरः॥
जप्त्वा तु प्रयुतं सम्यगनन्तं विन्दते श्रियम्। अयुतं शतकृत्वस्तु जप्त्वा श्रियमुपाश्नुते॥
अप्स्वेव जुहुयान्नित्यं पद्मान्ययुतशो निशि। दृष्ट्वा श्रियं तूपरमेत्किलासत्त्वाद्विभेतवे॥
बिल्वाशी बिल्वनिलये जुह्वद्बिल्वानि सर्पिषा। एकविंशतिरात्रेण परां सिद्धिं नियच्छति॥
येन येन च कामेन जुहोति प्रयतः श्रिये। पद्मान्यथापि बिल्वानि स स कामः समृध्यति॥
न जातु कृपणोऽर्थाय श्रियमावाहयेत्क्वचित्। न च किञ्चन कामेन होमः कार्यः कथञ्चन॥
महद्वा प्रार्थ्यमानेन राज्यकामेण वा पुनः। वाचः परं प्रार्थयिता यत्नाद्युक्तः श्रियं जपेत्॥

ऋग्विधान के अनुसार श्रीसूक्त की फलश्रुति—'चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं०' इत्यादि ऋचा से द्विज को कमलों की आहुति देनी चाहिये। 'आदित्यवर्णे०' इत्यादि ऋचा से बिल्वफल का होम करना चाहिये। बिल्वहोम के मध्य में ही स्थालीपाक से होम करे। दश सहस्र की संख्या में होम करना चाहिये। यह श्रीकामी व्यक्ति के लिये प्रथम विधि है। जो प्रयुत संख्या (दश लाख) आहुति श्रीसूक्त से देता है, उसे महान् लक्ष्मी प्राप्त होती है। सौ अयुत संख्या में श्वेत कमल की घृत से आहुति देने पर अनन्ता, अबाधिता, शाश्वती श्री प्राप्त होती है। अशक्ति में दश सहस्र जप करना श्रेष्ठ है। प्रयुत संख्या में जप करके अनन्त श्री प्राप्त होती है। अयुत जप करने से श्री प्राप्त होती है। रात्रि में जल में ही यदि अयुत संख्या में कमलों का होम करे तो उसे देखकर लक्ष्मी घर में रम जाती है। जो बिल्वफल का आहार करके बिल्व के नीचे रहकर घृत में डुबोकर श्रीसूक्त से बिल्वफलों का हवन इक्कीस रात्रियों तक नित्य करता है, उसे परा सिद्धि प्राप्त होती है। जिस-जिस कामना से लक्ष्मी के लिये हवन कमलों अथवा बिल्वफलों से किया जाता है, वह कामना सिद्ध होती है। कृपण व्यक्ति को अर्थ या काम के लिये कदापि श्री का आवाहन तथा होम नहीं करना चाहिये। अधिक प्रार्थना राज्यकामी व्यक्ति को ही करनी चाहिये।

विष्णुधर्मोत्तरेऽपि—

श्रीसूक्तं यो जपेद्भक्त्या तस्याऽलक्ष्मीर्विनश्यति। जुहुयाद्यश्च धर्मज्ञो हविष्येण विशेषतः॥
श्रीसूक्तेन तु पद्मानां घृताक्तानां भृगूत्तम। अयुतं होमयेद्यस्तु वह्नौ भक्तियुतो नरः॥
पद्महस्तद्वयालाभे भजन्तमुपतिष्ठति। दशायुतं तु पद्मानां जुहुयाद्यस्तथा जले॥
नापैति तत्कुलाल्लक्ष्मीर्विष्णोर्वक्षोगता यथा। घृताक्तानां तु बिल्वानां हुत्वा रामायुतं तथा॥
बहुवित्तमवाप्नोति स यावन्मनसेच्छति। बिल्वानां लक्षहोमेन कुले लक्ष्मीमुपाश्नुते॥
पद्मानामथ बिल्वानां कोटिहोमं समाचरेत्। सत्यलोकमवाप्नोति देवेन्द्रत्वमपि ध्रुवम्॥
सम्पूज्य देवीं वरदां यथावत्पद्मैः सितैर्वा कुसुमैस्तथान्यैः। क्षीरेण धूपैः परमान्नभक्ष्यैर्लक्ष्मीमवाप्नोति विधानतश्च॥

इति लक्ष्मीसूक्तविधानं समाप्तम्।

विष्णुधर्मोत्तर के अनुसार श्रीसूक्त अनुष्ठान का फल—जो भक्तिपूर्वक श्रीसूक्त जपता है, उसकी अलक्ष्मी नष्ट हो जाती है। विशेष कर हवन करने से विशेष रूप से लाभ मिलता है। हे भृगूत्तम! श्रीसूक्त से कमलों का हवन घृताक्त करके करने से लक्ष्मी देर तक टिकती है। दशायुत कमलों का जल में हवन करने से अपार लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। घृताक्त बेलफलों के तीन अयुत होम से बहुत धन प्राप्त होता है। एक लाख बिल्वहोम से कुल में लक्ष्मी स्थिर हो जाती है। कमलों अथवा बिल्वों का कोटि होम सत्यलोक की प्राप्ति कराता है।

सरस्वतीमन्त्रानुष्ठानम्

तत्र तावद्दशाक्षरात्मकवागीश्वरीमन्त्रप्रयोगः। भूतशुद्ध्यादिनिवृत्त्यादिकलामातृकान्यासान्तं पूर्ववत्कर्त्तव्यम्। मन्त्रो यथा—'ॐ वदवदवाग्वादिनि स्वाहा' इति दशाक्षरी मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य कण्वः ऋषिः। विराट् छन्दः। वाग्देवता। विद्याप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ कण्वऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ वागीश्वरीसरस्वतीदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ वं नमः शिरसि॥ १॥ ॐ दं नमः दक्षश्रवणे॥ २॥ ॐ वं नमः वामश्रवणे॥ ३॥ ॐ दं नमः दक्षिणनेत्रे॥ ४॥ ॐ वां नमः वामनेत्रे॥ ५॥ ॐ ग्वां नमः दक्षिणनासायाम्॥ ६॥ ॐ दिं नमः वामनासायाम्॥ ७॥ ॐ निं नमः मुखे॥ ८॥ ॐ स्वां नमः लिङ्गे॥ ९॥ ॐ ह्रां नमो गुदे॥ १०॥ इति मन्त्रवर्णन्यासः। ॐ अंकंखंगंघंङंआं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ इंचंछंजंझंञंईं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ उंटंठंडंढंणंऊं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ एंतंथंदंधंनंऐं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ओंपंफंबंभंमंऔं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ अंयंरंलंवंअः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्यात्।

दशाक्षरात्मक वागीश्वरी मन्त्र-प्रयोग—पूर्व की भाँति भूतशुद्ध्यादि, कलामातृकान्यास-पर्यन्त करना चाहिये। मन्त्र है—ॐ वदवदवाग्वादिनि स्वाहा। यह दशाक्षरी सरस्वती-मन्त्र है। इसका 'अस्य मन्त्रस्य कण्वऋषिः। विराट्छन्दः, वाग्देवता। विद्याप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करना चाहिये। तदनन्तर मूल में लिखित 'ॐ कण्वऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ वं नमः शिरसि' इत्यादि दस मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में मन्त्र के वर्णों का (एक-एक कर दश वर्णों का न्यास) करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा करतल में न्यास करे। फिर 'ॐ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः, ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः शिरसे स्वाहा, ॐ उँ टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्, ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम्, ॐ ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ अं यं रं लं वं अः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करे। फिर सरस्वती का ध्यान करे।

अथ ध्यानम्—

तरुणशकलमिन्दोर्बिभ्रती शुभ्रकान्तिः कुचभरनमिताङ्गी सन्निषण्णां सिताब्जे।
निजकरकमलोद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठे आधारशक्त्यादि परतत्त्वान्तपीठदेवताः पूर्ववत् सम्पूज्य पीठशक्तीः पूजयेत्।

ध्यान—'तरुणशकल०' इत्यादि मूल में लिखित मन्त्र से सरस्वती का ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—पूर्ण चन्द्रमा की भाँति शुभ्र कान्ति वाली है, कुचों के भार से जिनका अङ्ग नत है, जो श्वेत कमल पर विराजमान हैं, जो अपने करकमल में लेखनी तथा पुस्तक धारण किये हैं, वह सरस्वती हमें सम्पूर्ण प्रकार का वैभव देकर हमारी रक्षा करें। इस प्रकार ध्यान करके फिर मानसोपचारों से पूजा करे। फिर पीठ पर आधारशक्त्यादि परतत्त्वान्त पीठदेवताओं को पूर्ववत् पूजकर पीठशक्तियों की पूजा करे।

तद्यथा—प्राचीक्रमेण ॐ मेधायै नमः॥ १॥ ॐ प्रज्ञायै नमः॥ २॥ ॐ प्रभायै नमः॥ ३॥ ॐ विद्यायै नमः॥ ४॥ ॐ श्रियै नमः॥ ५॥ ॐ धृत्यै नमः॥ ६॥ ॐ स्मृत्यै नमः॥ ७॥ ॐ बुद्ध्यै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ विद्येश्वर्यै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः सम्पूज्य वर्णाब्जेनासनं दत्त्वा मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्यावरणपूजां कुर्यात्।

तत्र षट्कोणे—आग्नेयादिकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ अंकंखंगंघंङंआं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ इंचंछंजंझंञंईं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ उंटंठंडंढंणंऊं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ एंतंथंदंधंनंऐं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ ओंपंफंबंभंमंऔं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ अंयंरंलंवंअः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इत्यङ्गानि पूजयेत्।

तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ योगायै नमः॥ १॥ ॐ सत्यायै नमः॥ २॥ ॐ विमलायै नमः॥ ३॥ ॐ ज्ञानायै नमः॥ ४॥ ॐ बुद्ध्यै नमः॥ ५॥ ॐ स्मृत्यै नमः॥ ६॥ ॐ मेधायै नमः॥ ७॥ ॐ प्रज्ञायै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्।

ततो दलाग्रेषु ॐ ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः॥ २॥ ॐ कौमार्यै नमः॥ ३॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥ ६॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥ ७॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्।

तद्बाह्ये चतुरस्त्रे भूपुरे पूर्वादिषु इन्द्रादिदशदिक्पालान् सम्पूज्य तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तपूजां समाप्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः।

पीठशक्ति-पूजा—मूल में लिखित 'ॐ मेधायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से क्रमशः (१) पूर्व, (२) आग्नेय, (३) दक्षिण, (४) नैर्ऋत्य, (५) पश्चिम, (६) वायव्य, (७) उत्तर, (८) ईशान तथा (९) मध्यभाग में पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर वर्णाब्ज से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर आवाहनादि पुष्पान्त उपचारों से पूजा करके

आवरणपूजा करे। षट्कोण में आग्नेयादि केसरों, मध्य में तथा दिशाओं में मूल में लिखित 'ॐ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजन करे। फिर उसके बाहर अष्टदलों में 'ॐ योगायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर दलाग्रों में 'ॐ ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर चौकोर भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में क्रमशः इन्द्रादि दिक्पालों का पूजन कर उसके बाहर उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार से आवरण-पूजा करके धूपादि नीराजनान्त पूजा को समाप्त कर सरस्वती स्तोत्र से स्तुति कर इस दशाक्षरी मन्त्र का जप करे। इसका पुरश्चरण दश लक्ष संख्या में जप करने से होता है। (सरस्वती स्तोत्र आगे दिया है)

तथा च शारदायाम्—

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः। पुण्डरीकैः पयोभ्यक्तैस्तिलैर्वा मधुराप्लुतैः॥
एवं सम्पूजयेन्मन्त्री जपहोमादितत्परः। ब्रह्मचर्यरतः शुद्धः शुद्धदन्तनखादिकः॥
संस्मरन्सर्ववनिताः सततं देवताधिया। कवित्वं लभते धीमान् मासैर्द्वादशभिर्ध्रुवम्॥
कृत्वा तन्मन्त्रितं तोयं सहस्रं प्रत्यहं पिबेत्। महाकविर्भवेन्मन्त्री वत्सरेण न संशयः॥
उरोमात्रे जले स्थित्वा ध्यायेन्मार्तण्डमण्डले। स्थितां देवीं प्रतिदिनं त्रिसहस्रं जपेन्मनुम्॥
लभते मण्डलात्सिद्धिं वाचमप्रतिमां भुवि। पलाशबिल्वकुसुमैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः॥
समिद्भिर्वा तदुत्थाभिर्यशः प्राप्नोति वाक्पतेः। होमोऽयं सर्वसौभाग्यलक्ष्मीवश्यप्रदो भवेत्॥
राजवृक्षसमुद्भूतैः प्रसूनैर्मधुराप्लुतैः। तत्समिद्भिश्च जुहुयात्कवित्वमतुलं भवेत्॥
इत्थं दशाक्षरः प्रोक्तः सिद्धये वाचमिच्छताम्।

इति दशाक्षरसरस्वतीमन्त्रप्रयोगः।

शारदातिलक में दशाक्षरी सरस्वती मन्त्र की फलश्रुति—दश लाख मन्त्र का जप कर उसके दशांश (एक लाख) की संख्या में दूध में भिगोये कमलों से अथवा मधुराप्लुत काले तिलों से हवन करना चाहिये। इस प्रकार साधक जप-होमादि के लिये ब्रह्मचर्य पालन कर शुद्ध होकर, दन्त-नख आदि को शुद्ध कर, सभी स्त्रियों में देवता की भावना कर बारह मास की साधना से कवित्वशक्ति को प्राप्त कर लेता है। इस दशाक्षरी मन्त्र से अभिमन्त्रित किया हुआ जल प्रतिदिन पान करे। एक सहस्र जप से उस जल को अभिमन्त्रित करना चाहिये। इससे एक वर्ष में साधक महाकवि हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। छाती-छाती गहरे जल में खड़े होकर सूर्यमण्डल में सरस्वती का ध्यान कर प्रतिदिन तीन सहस्र जप करे तो चालीस दिन में अप्रतिम वाक्सिद्धि हो जाती है। पलाश एवं बिल्व के फूलों से मधुर मिश्रित कर तथा उसी की समिधा से हवन करने से वाक्पति होकर यश प्राप्त करता है। यह होम सर्वसौभाग्यदायक तथा लक्ष्मी को वश में करने वाला है। खिरनी के वृक्ष के फलों को मधुराप्लुत करके तथा उसी की समिधा से हवन करने से अतुल कवित्व प्राप्त होता है। यह दशाक्षर सरस्वती मन्त्र वाक्सिद्धि के लिये कहा गया है।

षोडशवर्णात्मकसरस्वतीमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'ऐं नमो भगवति वद वद वाग्देवि स्वाहा' इति षोडशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य कण्व ऋषिः। विराट् छन्दः। सरस्वती देवता। ऐं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ कण्वऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सरस्वतीदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ ऐं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नमस्तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ भगवति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ वदवद अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ वाग्देवि कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः।
बिभ्राणां कमलासनां कुचनतां वाग्देवतां सुस्मितां वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्ते पीठे पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। (षट्कोणे) आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ नमः शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ भगवति शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ वदवद कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ वाग्देवि नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् इति षडङ्गानि पूजयेत्। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्ष जपः। तथा च—

हविष्याशी जपेत्सम्यग्वसुलक्षमनन्यधीः। दशांशं जुहुयादन्ते तिलैराज्यपरिप्लुतैः॥
पिबेत्तन्मन्त्रितं तोयं प्रातःकाले दिने-दिने। विद्वान्वत्सरतो मन्त्री भवेन्नास्ति विचारणा॥
अभिषिञ्चेज्जलैर्जप्तैरात्मानं स्नानकर्मणि। तर्पयेत्तां जलैः शुद्धैरतिमेधामवाप्नुयात्॥
पुष्पगन्धादिकं जप्तं सर्वं तद्धारयेत्सुधीः। सभायां पूज्यते सद्भिर्वादे च विजयी भवेत्॥

इति षोडशाक्षरात्मकमन्त्रप्रयोगः।

श्रीसरस्वतीयन्त्रम्
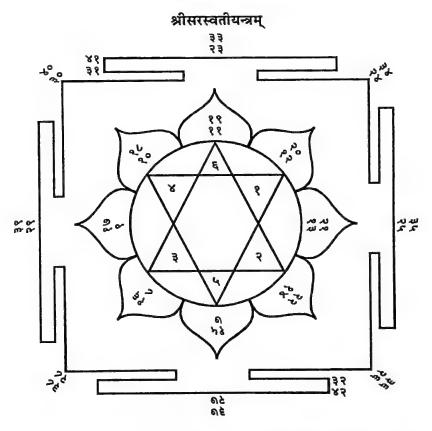
षोडशाक्षरी सरस्वती मन्त्र-प्रयोग—'ॐ ऐं नमो भगवति वद-वद वाग्देवि स्वाहा' यह षोडशाक्षर मन्त्र है। 'अस्य मन्त्रस्य कण्व ऋषिः। विराट् छन्दः। सरस्वती देवता। ऐं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग करे। फिर मूलोक्त 'ॐ कण्वऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गुष्ठादि में क्रमशः करन्यास करे। फिर

'ॐ ऐं हृदयाय नमः, ॐ नमः शिरसे स्वाहा, ॐ भगवति शिखायै नमः, ॐ वदवद शिखायै वषट्, ॐ वाग्देवि कवचाय हुम्, ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। षट्कोण में आग्नेयादि दिशाओं में (दिये गये अङ्कों के अनुसार) पूजन करे। पूजन के लिये छः मन्त्र मूल में लिखे हैं। अन्य समस्त पूजन पूर्व के मन्त्रप्रयोग में दिये गये हैं; उन्हें करना चाहिये। इसका पुरश्चरण आठ लाख जप करने पर होता है। जैसाकि कहा भी गया है—धनलक्ष्मी का जप अनन्य बुद्धि से हविष्याशी होकर करना चाहिये। जपान्त में उसका दशांश तिल एवं घृत का होम करना चाहिये। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल को प्रतिदिन पीने से एक वर्ष में साधक विद्वान् हो जाता है। स्नान में उसी जल से अपना अभिषेक करने तथा इसी जल से सरस्वती का तर्पण करने से बुद्धि शुद्ध हो जाती है। इसी मन्त्र से अभिमन्त्रित पुष्प-गन्धादि भी धारण करे तो सभा में पूजित तथा विजयी होता है।

एकादशाक्षरसरस्वतीमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'ॐ ह्रींऐंह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः' इत्येकादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य कण्व ऋषिः। विराट् छन्दः। सरस्वती देवता। ऐं बीजम्। नमः शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ कण्वऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट् छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सरस्वती देवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ ऐं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ॐ नमो ब्रह्मरन्ध्रे॥ १॥ ॐ ह्रीं नमो भ्रूमध्ये॥ २॥ ॐ ऐं नमः दक्षिणनेत्रे॥ ३॥ ॐ ह्रीं नमः वामनेत्रे॥ ४॥ ॐ ॐ नमः दक्षिणनासिकायाम्॥ ५॥ ॐ सं नमः वामनासायाम्॥ ६॥ ॐ रं नमः दक्षिणकर्णे॥ ७॥ ॐ स्वं नमः वामकर्णे॥ ८॥ ॐ त्यैं नमः मुखे॥ ९॥ ॐ नं नमः लिङ्गे॥ १०॥ ॐ मं नमः गुदे॥ ११॥ इति मन्त्रवर्णन्यासः। ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ऐं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ऐं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ऐं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ऐं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां चन्द्रार्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः सम्बिभ्रतीमादरात्।
वीणामक्षगुणां सुधाढ्यकलशं विद्यां च तुङ्गस्तनीं दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हसाधिरूढां भजे॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्ते पीठे मूर्तिं प्रकल्प्य आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्॥

एकादशाक्षर सरस्वतीमन्त्र-प्रयोग—'ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः' यह ग्यारह अक्षरों का मन्त्र है। इस मन्त्र के कण्व ऋषि, विराट् छन्द, सरस्वती देवता, ऐं बीज, नमः शक्ति तथा सर्वेष्ट-सिद्ध्यर्थ जप में विनियोग है। विनियोग के उपरान्त 'ॐ कण्व ऋषये नमः शिरसि' इन मूलोक्त पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर आगे लिखे 'ॐ ॐ ब्रह्मरन्ध्रे' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से मन्त्र के वर्णों का न्यास करे। फिर 'ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। इसके बाद 'ॐ ऐं हृदयाय नमः, ॐ ऐं शिरसे स्वाहा, ॐ ऐं शिखायै नमः. ॐ ऐं कवचाय हुम्, ॐ ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ऐं अस्त्राय फट्' कहकर हृदयादि अङ्गों का स्पर्श करते हुए हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। फिर मूलोक्त 'वाणीं पूर्णनिशाकरो०' इत्यादि मन्त्र के अनुसार सरस्वती का ध्यान करे।

(भावार्थ—पूर्ण चन्द्र के समान उज्ज्वल मुख वाली, कर्पूर एवं कुन्दपुष्प के समान प्रभा वाली, मस्तक पर अर्धचन्द्र धारण किये हुए, अपने हाथों में आदरपूर्वक वीणा, अक्षमाला, विद्या तथा अमृतकलश को धारण करने वाली, तुङ्गस्तनी, दिव्य आभरणों से विभूषित शरीर वाली हंसाधिरूढ़ वाणी (सरस्वती) को भजे। ऐसा ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा कर पूर्वोक्त पीठ पर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके आवरणपूजा करे।

तद्यथा—देव्याः (दक्षिणपार्श्वे) ॐ संस्कृतायै वाङ्मय्यै नमः ॥ १ ॥ (वामपार्श्वे) ॐ प्राकृतायै वाङ्मय्यै नमः ॥ २ ॥ इति सम्पूज्य षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ऐं हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ऐं शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ऐं शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ऐं कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ ऐं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ऐं अस्त्राय फट् ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। तद्बहिरष्टदले पूर्वादिक्रमेण—ॐ प्रज्ञायै नमः ॥ १ ॥ ॐ मेधायै नमः ॥ २ ॥ ॐ श्रुत्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ शक्त्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ स्मृत्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ वागीश्वर्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ मत्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ स्वस्त्यै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। ततो दलाग्रेषु—ॐ ब्राह्म्यै नमः ॥ १ ॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ कौमार्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ वैष्णव्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ वाराह्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ चामुण्डायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवम् आवरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तं सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः।

आवरणपूजा—देवी के दक्षिण पार्श्व में 'ॐ संस्कृतायै वाङ्मय्यै नमः' से तथा वामपार्श्व में 'ॐ प्राकृतायै वाङ्मय्यै नमः' से पूजन करके फिर यन्त्र के मध्य षट्कोण में आग्नेयादि कोण केसरों में 'ऐं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजन करे। फिर उसके बाहर अष्टदल में पूर्वादि क्रम से 'ॐ प्रज्ञायै नमः' इत्यादि मूलोक्त आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर दलाग्रों में 'ॐ ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादि क्रम से प्रथम इन्द्रादि दश दिक्पालों को पूजकर फिर उनके बाहर समीप में उसके पूजादि आयुधों को पूजना चाहिये। इस प्रकार आवरणपूजा करके धूप-दीपादि नीराजनान्त पूजन कर जप करे। इसका पुरश्चरण बारह लाख जप से सम्पन्न होता है।

तथा च—

जपेद्द्वादशलक्षाणि तत्सहस्रं सिताम्बुजैः। नागचम्पकपुष्पैर्वा जुहुयात्साधकोत्तमः ॥
इति सम्पूजयेद्देवीं साक्षाद्वाग्वल्लभो भवेत्। दशाक्षरसमुक्तानि कर्म्माण्यत्रापि साधकः ॥
एवमुक्तेषु मन्त्रेषु दीक्षितो यतमानसः। एवं यो भजते भक्त्या स भवेद्भुक्तिमुक्तिभाक् ॥
सुसितैर्गन्धकुसुमैः पूजा सारस्वते विधौ। दूर्वां बीजाङ्कुरं पुष्पं राजवृक्षसमुद्भवम् ॥
उत्पलानि प्रशस्तानि सिन्दुवाराङ्कुराणि च। भजन्सारस्वतीं नित्यमेतानि परिवर्जयेत् ॥
आम्रातं गृञ्जनं बिल्वं कलञ्जं लशुनं तथा। तैलं पलाण्डुं पिण्याकं शार्ङ्गाष्टमपि भोजने ॥
सर्वं पर्युषितं त्याज्यं सदा सारस्वतार्थिनाम्। नाचरेन्निशि ताम्बूलं स्त्रियं गच्छेद्दिवा न च ॥
न सन्ध्ययोः स्वपेज्जातु नाशुचिः किञ्चिदुच्चरेत्। प्रदीपेषु भवेन्मौनी दिग्वस्त्रां न विलोकयेत् ॥
न पुष्पितां स्त्रियं गच्छेन्न निन्देद्वामलोचनाम्। न मृषावचनं ब्रूयान्नाक्रमेत्पुस्तकं सुधीः ॥
अक्षराढ्यानि पत्राणि नोपेक्षेत न लङ्घयेत्। चतुर्दश्यष्टमीपर्वप्रतिपद्ग्रहणेषु च ॥
सङ्क्रमेषु च सर्वेषु विद्यां नैव पठेद्द्विजः। व्याख्याने सन्त्यजेन्निद्रामालस्यं जृम्भणं बुधः ॥
क्रोधं निष्ठीवनं तद्वन्नीचाङ्गस्पर्शनं तथा। मनुष्यसर्पमार्जारमण्डूकनकुलादयः ॥
अन्तरा यदि गच्छेयुस्तदा व्याख्यां परित्यजेत्। निशासु दीपध्वंसेषु पाठं सद्यः परित्यजेत् ॥
ज्ञात्वा दोषानिमान्सम्यग्भक्त्या यो भारतीं यजेत्। वाचं सिद्धिमवाप्नोति वाचस्पतिरिवापरः ॥

इति शारदातिलके सरस्वतीमन्त्रानुष्ठानप्रयोगः समाप्तः।

कहा भी गया है—बारह लाख का जप करके फिर बारह सहस्र (अथवा एक लाख बीस सहस्र) हवन श्वेत कमल अथवा नागचम्पा के फूलों से करे। इस प्रकार सरस्वती देवी की पूजा करने से साधक साक्षात् वाग्वल्लभ हो जाता है। दशाक्षर मन्त्र-प्रयोग में जो कर्म वर्णित हैं, उनको यहाँ भी करना चाहिये। इस प्रकार कहे गये मन्त्रों को जो साधक दीक्षित होकर संयमित मन से जप करता है, वह भुक्ति एवं मुक्ति का अधिकारी हो जाता है। श्वेत वर्ण के सुगन्धित फूलों से सरस्वती एवं ब्रह्माजी की पूजा करे। दूर्वा, बीजाङ्कुर (जवारे), गजवृक्ष (अमलतास) के फूल, कमल, सिन्दुवार (निर्गुण्डी) के अङ्कुर (कोमल जड़ों)—इनसे नित्य ही सरस्वती की पूजा करनी चाहिये तथा सरस्वती की पूजा में निम्न कार्य त्याज्य हैं—

अमाड़ा, गाजर, बेलफल, कलञ्ज, लहसन, प्याज, तेल, पीना (खली) तथा करञ्जफल—इनको भोजन में त्याग दे। सभी बासी भोज्य तथा पेय त्यागना चाहिये। रात में ताम्बूल-भक्षण, मैथुन त्याग दे तथा दिन में एवं दोनों सन्ध्याओं में शयन न करे। अपवित्र वाणी न बोले। प्रदोषकाल में मौन रहना चाहिये। नग्न स्त्री को न देखे। मासिक धर्म वाली स्त्री के समीप न जाय। न स्त्रियों की निन्दा करे। झूठ न बोले, पुस्तकों को न लाँघे। जिन कागजों पर अक्षर लिखे हों, उनकी उपेक्षा न करे और न उनको लाँघे। ४-८-१५-३०-१ तिथियों एवं ग्रहण के समय में भी विद्या न पढ़े। संक्रान्तियों के संक्रमणकाल में भी विद्या न पढ़े। व्याख्यान कर्म में निद्रा, आलस्य तथा जँभाई को त्याग दे। क्रोध, थूकना, गुप्ताङ्गों एवं कमर से नीचे के अङ्गों का स्पर्श न करे। मनुष्य, सर्प, बिल्ली, मेढक, नकुल यदि व्याख्यान के बीच से निकल जायँ तो व्याख्यान को त्याग दे। रात में दीप बुझ जाने पर पाठ तुरन्त त्याग दे। इन दोषों को जानकर भक्तिपूर्वक जो सरस्वती की पूजा करता है, वह वाणी की सिद्धि को प्राप्त कर साक्षात् ब्रह्माजी की भाँति हो जाता है।

सरस्वतीस्तोत्रम्

अस्य श्रीवाग्वदिनीशारदामन्त्रस्य मार्कण्डेय आश्वलायन ऋषिः। स्रग्धरानुष्टुप्छन्दांसि। श्रीसरस्वतीदेवता-श्रीसरस्वतीप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

अथ ध्यानम्—

शुक्लां ब्रह्मविचासारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम्।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्॥ १॥

ब्रह्मोवाच—

ह्रींह्रींहृद्यैकविद्ये शशिरुचिकमलाकल्पविस्पष्टशोभे भव्ये भावानुकूले कुमतिवनमहे विश्ववन्द्यांघ्रिपद्मे।
पद्मे पद्मोपविष्टे प्रणतजनमनोमोदसम्पादयित्रि प्रोत्प्लुष्टाज्ञानकूटे हरिनिजदयिते देवि संसारसारे॥ १॥
ऐंऐंऐं इष्टमन्त्रे कमलभवमुखाम्भोजरूपे स्वरूपे रूपारूपप्रकाशे सकलगुणमये निर्गुणे निर्विकारे।
न स्थूले नैव सूक्ष्मेऽप्यविदितविषये नापि विज्ञाततत्त्वे विश्वे विश्वान्तराले सुरवरनमिते निष्कले नित्यशुद्धे॥ २॥
ह्रीह्रींह्रीं जाप्यतुष्टे हिमरुचिमुकुटे वल्लकीव्यग्रहस्ते मातर्मातर्नमस्ते दहदह जडतां देहि बुद्धिं प्रशस्ताम्।
विद्ये वेदान्तगीते श्रुतिपरिपठिते मोक्षदे मुक्तिमार्गे मार्गातीतप्रभावे भव मम वरदा शारदे शुभ्रहारे॥ ३॥
धींधींधीं धारणाख्ये धृतिमतिनुतिभिर्नामभिः कीर्त्तनीये नित्येनित्ये निमित्ते मुनिगणनमिते नूतने वै पुराणे।
पुण्ये पुण्यप्रभावे हरिहरनमिते वर्णशुद्धे सुवर्णे मात्रे मात्रार्थतत्त्वे मतिमतिमतिदे माधवप्रीतिनादे॥ ४॥
ह्रीं क्ष्रीं धीं ह्रीं स्वरूपे दहदह दुरितं पुस्तकव्यग्रहस्ते सन्तुष्टाकारचित्ते स्मितमुखि सुभगे जृम्भणिस्तम्भविद्ये।
मोहे मुग्धप्रबोधे मम कुरु सुमतिं ध्वान्तविध्वंसिनित्ये गीर्वाग्गौर्भारति त्वं कविवृषरसनासिद्धिदा सिद्धिसाध्या॥ ५॥

सौंसौंसौं शक्तिबीजे कमलभवमुखाम्भोजभूतस्वरूपे रूपारूपप्रकाशे सकलगुणमये निर्गुणे निर्विकारे।
न स्थूले नैव सूक्ष्मेऽप्यविदितविभवे जाप्यविज्ञानतत्त्वे विश्वे विश्वान्तराले सुरगणनमिते निष्कले नित्यशुद्धे॥ ६॥

सरस्वतीस्तोत्र—स्तोत्रपाठ करने के पूर्व 'अस्य श्रीवाग्वादिनीशारदामन्त्रस्य मार्कण्डेय-आश्वलायन ऋषिः। स्रग्धरानुष्टुप् छन्दांसि। श्रीसरस्वती देवता। श्रीसरस्वतीप्रसादसिद्धयर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से स्तोत्रपाठ का विनियोग करे। फिर मूल में लिखित 'शुक्लां ब्रह्मविचारसार०' इत्यादि मन्त्र के अनुसार ध्यान करे।

मूल स्तोत्र का भावार्थ—श्री ब्रह्माजी बोले—'ह्रीं ह्रीं हृद्यैकविद्ये!!' आप चन्द्र के समान शुभ्र कान्ति वाली, लक्ष्मी के समान शोभा वाली, भव्य भावानुकूल, कुमतिरूपी वन में सर्प के समान विश्ववन्दित कर-चरण वाली हैं। हे पद्मे! आप कमल पर बैठी हैं, प्रणतजनों के मन को प्रसन्न करने वाली हैं। अज्ञान के समूह को दग्ध करने वाली हैं। आप संसार की सार तथा ब्रह्माजी की निजपुत्री हैं। हे ऐं ऐं ऐं इष्ट मन्त्र वाली, कमल भवमुखाम्भोजरूपे, स्वरूपे, रूपारूपप्रकाशे, सकलगुणमये, निर्गुणे, निर्विकारे! आप न स्थूल हैं न सूक्ष्म हैं, न आप अविदित विषय हैं और न ही आप विज्ञाततत्त्वा हैं। हे विश्वे! आप इस विश्वान्तराल में, देवश्रेष्ठों द्वारा नामित, निष्कल तथा नित्य शुद्ध हैं। हे ह्रीं ह्रीं ह्रीं जाप्यतुष्टे! हिम के समान धवल मुकुट वाली, हाथ में वीणा धारण किये मातर्माते! आपको नमस्कार है। आप मेरी बौद्धिक जड़ता को नष्ट कर प्रशस्त बुद्धि प्रदान करें। हे वेदान्त गायन करने वाली गीते, वेदपरिपठिते, मोक्षदायिनी, मुक्तिमार्गे, मार्गातीतप्रभावे शुभ्रहार वाली शारदे! मुझे वर प्रदान करो॥ ३॥ हे ध्रीं, ध्रीं ध्रीं धारणा नाम वाली, धृतिमति देवि! आप प्रणाम एवं नामों के द्वारा कीर्तनीया हैं, नित्यनित्या, मुनिगणों के नमन-निमित्त से पुरानी होकर भी नूतना हैं। हे पुण्ये, पुण्यप्रभावे, विष्णु एवं शिव से प्रणमित सरस्वति! आप शुद्धवर्ण वाली, सुवर्णमात्रा हैं; आप मात्रार्थतत्त्व भी हैं, मतिमति, मतिदायिनी माधव की प्रसन्नता के लिये नादस्वरूपा हैं। हे ह्रीं, क्ष्रीं, धीं ह्रीं स्वरूप वाली सरस्वति! आप पुस्तक व्यग्र हाथ वाली, सन्तुष्टाकार चित्त वाली, स्मितमुखी, सुभगे! जृम्भणमात्र से विद्या को स्तम्भित कर देने वाली हैं, आप मेरे पापों को जला दें। हे मोहे, मुग्धप्रबोधे! आप मुझे सुमति प्रदान करें। हे ध्वंसविध्वंसि, नित्ये, गीर्वाग्गौ भारति! आप कविश्रेष्ठों की रसना को सिद्धि देने वाली सिद्धिसाध्या हैं। हे सौं सौं सौं शक्तिबीजे, ब्रह्माजी के मुखकमल से उत्पन्न स्वरूप वाली, रूपारूपप्रकाशे, सकलगुणमयी, निर्गुण, निर्विकार, न स्थूल, न सूक्ष्म होने पर भी अविदित विभव वाली, अजा होने पर भी अविज्ञ तत्त्व वाली विश्वे! आप इस विश्वान्तराल में सुरगणों द्वारा नमित, निष्कल तथा शुद्ध हैं॥ १-६॥

स्तौमि त्वां त्वां च वन्दे भज मम रसनां मा कदाचित्त्यजेथा मा मे बुद्धिर्विरुद्धा भवतु न च मनो देवि मे यातु पापम्।
मा मे दुःखं कदाचिद्विपदि च समयेऽप्यस्तु मे नाकुलत्वं शास्त्रे वादे कवित्वे प्रसरतु मम धीर्मास्तु कुण्ठा कदाचित्॥ ७॥
इत्येतैः श्लोकमुख्यैः प्रतिदिनमुषसि स्तौति यो भक्तिनम्रो वाण्या वाचस्पतेरप्यतिमतिविभवो वाक्पटुर्नष्टपङ्कः।
स स्यादिष्टार्थलाभः सुतमिव सततं पाति तं सा च देवी सौभाग्यं तस्य लोके प्रसरति कविता विघ्नमस्तं प्रयाति॥ ८॥
ब्रह्मचारी व्रती मौनी त्रयोदश्यां निरामिषः। सारस्वतो नरः पाठात्स स्यादिष्टार्थलाभवान्॥ ९॥
पक्षद्वयेऽपि यो भक्त्या त्रयोदश्येकविंशतिः। अविच्छेदं पठेद्धीमान्ध्यात्वा देवीं सरस्वतीम्॥ १०॥
शुक्लाम्बरधरां देवीं शुक्लाभरणभूषिताम्। वाञ्छितं फलमाप्नोति स लोके नात्र संशयः॥ ११॥
इति ब्रह्मा स्वयं प्राह सरस्वत्याः स्तवं शुभम्। प्रयत्नेन पठेन्नित्यं सोऽमृतत्वं प्रयच्छति॥ १२॥

इति ब्रह्मपुराणे ब्रह्मणा कृतं सरस्वत्याः स्तोत्रम्।

मैं आपकी स्तुति तथा वन्दना करता हूँ। आप मेरी जीभ पर बैठें, उसे छोड़कर कहीं अन्यत्र न जायँ। मेरी बुद्धि को आप विपरीत न करें। मेरा मन कभी पापों में न जाय। मुझे कभी दुःख एवं विपत्तियाँ प्राप्त न हों। मुझे शास्त्र पढ़ने में, बाद में कभी भी आकुलता न हो। मेरी बुद्धि कवित्व में प्रसरित हो, कभी कुण्ठित न हो। इन मुख्य श्लोकों से जो व्यक्ति प्रतिदिन प्रातःकाल में भक्तिपूर्वक नम्रभाव से सरस्वती की स्तुति करता है, वह ब्रह्माजी के समान वाग्वैभव तथा वाक्पटु होकर पापरहित हो जाता है। उसे इष्टार्थ-लाभ प्राप्त होता है तथा वह देवी उसकी रक्षा पुत्र की भाँति करती हैं, उसे सौभाग्य मिलता है तथा उसकी कविता लोक में प्रसरित होती है, विघ्न समाप्त हो जाते हैं। जो मनुष्य ब्रह्मचारी, व्रती तथा मौनी होकर त्रयोदशी तिथि को निरामिषभोजी होकर इस स्तोत्र को पढ़ता है, उसे इष्टलाभ की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति दोनों पक्षों की त्रयोदशी में भक्तिपूर्वक इसके इक्कीस पाठ अविच्छिन्न रूप में करता है तथा जो शुक्लाम्बरधरा शुक्लाभरणभूषिता का ध्यान करता है, उसे इस लोक में वाञ्छित फल की प्राप्ति होती है। इस प्रकार के इस सरस्वती स्तव को ब्रह्माजी ने स्वयं अपने मुख से कहा है। इसे प्रयत्नपूर्वक नित्य पढ़ने से अमरत्व की प्राप्ति होती है॥ ७-१२॥

अन्नपूर्णामन्त्रप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ—

अन्नपूर्णेश्वरीमन्त्रं वक्ष्येऽभीष्टप्रदायकम्। कुबेरो यामुपास्याशु लब्धवान्निधिनाथताम्॥ १॥
शम्भोः सख्यं दिगीशत्वं कैलासाधीशतामपि।

अथ प्रयोगः; मन्त्रो यथा—'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमः भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा' इति विंशतिवर्णो मन्त्रः। अस्य अन्नपूर्णामन्त्रस्य द्रुहिणः ऋषिः। कृतिः छन्दः। अन्नपूर्णेशी देवता। ह्रीँ बीजम्। स्वाहा शक्तिः। ममाखिलसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ द्रुहिणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ कृतिच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ अन्नपूर्णादेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहाशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ह्रुं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्य्यात्। ॐ नमः मुखे॥ १॥ ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनासिकायाम्॥ २॥ ॐ श्रीं नमः वामनासिकायाम्॥ ३॥ ॐ क्रीं नमः दक्षिणनेत्रे॥ ४॥ ॐ नमो नमः वामनेत्रे॥ ५॥ ॐ भगवति नमः दक्षिणकर्णे॥ ६॥ ॐ माहेश्वरि नमः वामकर्णे॥ ७॥ ॐ अन्नपूर्णे नमः लिङ्गे॥ ८॥ ॐ स्वाहा नमः गुदे॥ ९॥ इति मन्त्रन्यासः। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

तप्तस्वर्णनिभा शशाङ्कमुकुटा रत्नप्रभाभासुरा नानावस्त्रविराजिता त्रिनयना भूमीरमाभ्यां युता।
दर्वीहाटकभाजनं च दधती रम्भोच्चपीनस्तनी नृत्यन्तं शिवमाकलय्य मुदिता ध्येयान्नपूर्णेश्वरी॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्। तद्यथा—मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिक्रमेण ॐ जयायै नमः॥ १॥ ॐ विजयायै नमः॥ २॥ ॐ अजितायै नमः॥ ३॥ ॐ अपराजितायै नमः॥ ४॥ ॐ नित्यायै नमः॥ ५॥ ॐ विलासिन्यै नमः॥ ६॥ ॐ दोग्ध्र्यै नमः॥ ७॥ ॐ अघोरायै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ मङ्गलायै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। 'ॐ ह्रीं अन्नपूर्णात्मने नमः' इत्यासनं दत्त्वा मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पाद्यादिपुष्पान्तै-रुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

श्रीअन्नपूर्णापूजायन्त्रम्

अन्नपूर्णा मन्त्रप्रयोग (मन्त्रमहोदधि के अनुसार)—अब मैं अभीष्ट-प्रदायक अन्नपूर्णेश्वरी मन्त्र को कहता हूँ जिसकी उपासना करने से कुबेर को निधिनाथता प्राप्त हुई थी तथा भगवान् शङ्कर की मित्रता, दिक्पालपद एवं कैलाश का भी अधीश्वरत्व प्राप्त हुआ था। मन्त्र है—'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमः भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।' यह बीस अक्षरों का मन्त्र है। सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्री अन्नपूर्णामन्त्रस्य द्रुहिणऋषिः। कृतिः छन्दः। अन्नपूर्णेश्वरी देवता। ह्रीं बीजम् स्वाहा शक्तिः। ममाखिलसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' इसको कहकर मन्त्र का विनियोग करे। तदनन्तर 'ॐ द्रुहिणऋषये नमः शिरसि' इत्यादि मूल में लिखित पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर प्रणवपूर्वक मूल में लिखित छः मन्त्रों 'ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि से करन्यास करे। फिर 'ॐ ह्रां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं कवचाय हुम्, ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ नमः मुखे' इत्यादि नौ मन्त्रों से शरीर के निर्दिष्ट अङ्गों में मन्त्रन्यास करना चाहिये। मूलोक्त 'तप्तस्वर्णनिभा०' इत्यादि मन्त्र से अन्नपूर्णा का ध्यान करे। ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—तपे हुए सोने के समान चन्द्रमा का मुकुट धारण किये रत्नों की कान्ति से चमकयुक्त अनेक वस्त्रों से सुशोभित, त्रिनेत्र, भूमि तथा रमा (लक्ष्मी) से युक्त, दक्षिण हस्त में दर्वी—चमचा तथा वामहस्त में सोने का कटोरा धारण किये, केला के समान ऊँची, पुष्ट स्तनों वाली, नाचते हुए शिव को देखकर मुदित हो रही अन्नपूर्णा का ध्यान करे। इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करके फिर पीठपूजा करे। एतदर्थ मण्डूकादि परतत्त्वान्त पीठदेवताओं को पूजकर फिर पूर्वादि क्रम से मूलोक्त 'ॐ जयायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से (पूर्व-आग्नेय-दक्षिण-नैर्ऋत्य-

पश्चिम-वायव्य-उत्तर-ईशान तथा मध्य में) पीठशक्तियों को पूजे। फिर 'ॐ ह्रीं अन्नपूर्णात्मने नमः' इस मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके पाद्य से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचारों से पूजा करके फिर आवरणपूजा करे।

तद्यथा—'त्रिकोणवेदपत्राष्टपत्रषोडशपत्रके। भूपुरेण युते यन्त्रे प्रदद्यान्माययासनम्'। आग्नेयादिकोणत्रितये क्रमेण 'ॐ हौं नमः शिवाय' इति मन्त्रेण शिवं पूजयेत्॥ १॥ ततो द्वितीयकोणे 'ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवः स्वः पतये भूपतित्वं मे देहि दापय स्वाहा' इति त्रयस्त्रिंशद्वर्णात्मकमन्त्रेण वराहं पूजयेत्॥ २॥ तृतीयकोणे 'ॐ नमो नारायणाय' इति माधवं पूजयेत्॥ ३॥ तद्बाह्ये ॐ ह्रां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ह्रूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ह्रैं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ह्रः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। ततो देव्या वामे 'ग्लौं अन्नं मह्यन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा ग्लौं' इति धरां पूजयेत्। ततो दक्षभागे 'श्रीं अन्नं मह्यन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं' इति लक्ष्मीं पूजयेत्॥ २॥ ततश्चतुर्दले पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीं प्रकल्प्य प्राच्यादिक्रमेण ॐ परायै नमः॥ १॥ ह्रीं भुवनेश्वर्य्यै नमः॥ २॥ श्रीं कमलायै नमः॥ ३॥ क्लीं सुभगायै नमः॥ ४॥ इति पूजयेत्। तद्बहिरष्टदले प्राच्यादिक्रमेण ॐ ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ माहेश्वर्य्यै नमः॥ २॥ ॐ कौमार्य्यै नमः॥ ३॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥ ६॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥ ७॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। तद्बाह्ये षोडशदले तेनैव क्रमेण 'नं अमृतायै नमः॥ १॥ मं मानदायै नमः॥ २॥ भं तुष्ट्यै नमः॥ ३॥ गं पुष्ट्यै नमः॥ ४॥ वं प्रीत्यै नमः॥ ५॥ तीं रत्यै नमः॥ ६॥ मां ह्रियै नमः॥ ७॥ हें श्रियै नमः॥ ८॥ श्वं स्वधायै नमः॥ ९॥ रिं स्वाहायै नमः॥ १०॥ अं ज्योत्स्नायै नमः॥ ११॥ भं हैमवत्यै नमः॥ १२॥ पूं छायायै नमः॥ १३॥ णं पूर्णिमायै नमः॥ १४॥ स्वां नित्यायै नमः॥ १५॥ हां अमावास्यायै नमः॥ १६॥' इति पूजयेत्। तद्बहिः पूर्वादिदशदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणार्चनं कृत्वा धूपदीपनैवेद्याचमनीयताम्बूल-दक्षिणानीराजनैर्भगवतीं मूलेन सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। घृतसहितेन चरुणा दशांशहोमः। तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनं च कार्य्यम्।

इत्थं जपादिभिः सिद्धे मन्त्रेऽस्मिन्धनसञ्चयैः। कुबेरसदृशो मन्त्री जायते जनवन्दितः॥

इत्यन्नपूर्णामन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

आवरण-पूजा—(यहाँ दिये गये) त्रिकोण, चतुर्दल, अष्टदल तथा षोडश दलात्मक भूपुरयुक्त यन्त्र में आसन देकर आग्नेयादि तीन कोणों में क्रम से 'ॐ ह्रौं नमः शिवाय' इस मन्त्र से शिवजी की पूजा करे। फिर द्वितीय कोण में 'ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवः स्वःपतये भूपतित्वं मे देहि दापय स्वाहा' इस मन्त्र से वराह की पूजा करे। फिर तृतीय कोण में 'ॐ नमो नारायणाय' से माधव की पूजा करे। फिर उसके बाहर मूल में लिखित 'ॐ ह्रां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट षडङ्गों की पूजा करे। फिर देवी के वाम भाग में तथा दक्षिण भाग में क्रमशः 'ग्लौं०' इत्यादि तथा 'श्रीं' इत्यादि मन्त्रों से पूजा करके फिर चतुर्दल में पूज्य-पूजक के मध्य में प्राची दिशा की कल्पना करके पूर्वादिक्रम से 'ॐ परायै नमः' इत्यादि मूलोक्त चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर अष्टदल में मूलोक्त 'ॐ ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर षोडशदल में उसी क्रम से (प्राच्यादि क्रम से) 'नं अमृतायै नमः' इत्यादि सोलह मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर पूर्वादि दश दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से प्रथम इन्द्र आदि दश दिक्पालों को पूजकर फिर उन्हीं स्थानों में उनके आयुधों की भी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार आवरण का अर्चन करके धूप, दीप, नैवेद्य, आचमनीय, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन

आदि के द्वारा भगवती अन्नपूर्णा का पूजन उनके मूल मन्त्र (बीस अक्षरी) से करके अन्नपूर्णा स्तोत्र का पाठ करके (जो आगे दिया गया है) मूल मन्त्र (ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमः भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा) का जप करे। एक लाख जप करने से इस मन्त्र का पुरश्चरण हो जाता है। घृतसहित खीर के द्वारा इसका दशांश (दस सहस्र) हवन करना चाहिये। उसका दशांश (एक सहस्र) तर्पण करे। फिर उसका दशांश (एक सौ) मार्जन करे। फिर उसका दशांश (दस) ब्राह्मणों को भोजन कराये। इस प्रकार की विधि से जो साधक अन्नपूर्णेश्वरी मन्त्र को सिद्ध कर लेता है तो फिर उसके जप करते रहने से वह साधक (अपने पुरुषार्थ से) कुबेर के समान धन-सम्पत्ति एवं वैभव से सम्पन्न हो जाता है तथा जनता के द्वारा पूजित होता है।

अन्नपूर्णाकवचम्

देव्युवाच—

कथिता अन्नपूर्णाया या या विद्याः सुदुर्लभाः। कृपया कथिताः सर्वाः श्रुताश्चाधिगता मया॥ १॥
साम्प्रतं श्रोतुमिच्छामि कवचं मन्त्रविग्रहम्।

अन्नपूर्णा कवच—देवी ने कहा—आपने मुझसे देवी की दुर्लभ विद्या कही, उसे मैंने सुनी और समझी। अब मैं उनके मन्त्रविग्रहस्वरूप कवच को सुनने की इच्छा करती हूँ॥ १॥

ईश्वर उवाच—

शृणु पार्वति वक्ष्यामि सावधानावधारय॥ २॥
ब्रह्मविद्यास्वरूपं च महदैश्वर्यदायकम्। पठनाद्धारणान्मर्त्यस्त्रैलोक्यैश्वर्यभाग्भवेत्॥ ३॥
त्रैलोक्यरक्षणस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः। छन्दो विराट् देवता च अन्नपूर्णासमृद्धिदा॥ ४॥
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः। ह्रीं नमो भगवत्यन्ते माहेश्वरिपदं ततः॥ ५॥
अन्नपूर्णे ततः स्वाहा चैषा सप्तदशाक्षरी। पातु मामन्नपूर्णा सा या ख्याता भुवनत्रये॥ ६॥
विमायाप्रणवाद्यैषा तथा सप्तदशाक्षरी। या त्वन्नपूर्णा सर्वाङ्गे रत्नकुम्भान्नपात्रदा॥ ७॥
श्रीबीजाद्या तथैवेषा द्विरन्धार्णा तथा मुखम्। प्रणवाद्या भ्रुवौ पातु कण्ठं वाग्बीजपूर्विका॥ ८॥
कामबीजादिका चैषा हृदयं तु महेश्वरी। ऐंश्रींह्रीं च नमोऽन्ते च भगवतिपदं ततः॥ ९॥
माहेश्वरिपदं चान्नपूर्णे स्वाहेति पातु मे। नाभिमेकोनविंशार्णा पायान्माहेश्वरी सदा॥ १०॥
तारं मायारमाकामः षोडशार्णा ततः परम्। शिरःस्था सर्वदा पातु विंशत्यर्णात्मिका परा॥ ११॥
अन्नपूर्णा महाविद्या ह्रीं पातु भुवनेश्वरी। शिरः श्रींह्रीं तथा क्रीं च त्रिपुटा पातु मे गुदम्॥ १२॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गानि पुनन्तु माम्। इन्द्रो मां पातु पूर्वे च वह्निकोणेनलोऽवतु॥ १३॥
यमो मां दक्षिणे पातु नैर्ऋत्यां नैर्ऋतिश्च माम्। पश्चिमे वरुणः पातु वायव्यां पवनोऽवतु॥ १४॥
कुबेरश्चोत्तरे पातु ऐशान्यां शङ्करोऽवतु। ऊर्ध्वाधः पातु सततं ब्रह्मानन्तो यथाक्रमात्॥ १५॥
वज्राद्याश्चायुधाः पान्तु दशदिक्षु यथाक्रमात्।

श्री महादेवजी बोले—हे पार्वति! अब मैं कहता हूँ, उसे सावधानी से धारण करे। इस ब्रह्मविद्या का स्वरूप विपुल ऐश्वर्य देने वाला है। इसके पढ़ने तथा समझने से व्यक्ति तीनों लोकों के ऐश्वर्य को प्राप्त कर लेता है। इस

त्रैलोक्यरक्षणकर्त्ता कवच के शिव ऋषि हैं, विराट् छन्द है तथा समृद्धिदा अन्नपूर्णा इसकी देवता हैं। धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष के हेतु इसका विनियोग कहा गया है। 'ॐ ह्रीं नमः भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा' इस प्रकार यह सत्रह अक्षरों वाली विद्या (मन्त्र) है। जो अन्नपूर्णा तीनों लोकों में प्रसिद्ध है, वह मेरी रक्षा करें। जो मायाबीज-रहित सप्तदशाक्षरी तथा जिसके आरम्भ में प्रणव (ॐ) है, वह रत्नकुम्भ एवं अन्नपात्र प्रदान करने वाली अन्नपूर्णा मेरी रक्षा करें। जिसके आदि में श्रीबीज है, द्विरन्ध्रवर्ण तथा मुखयुक्त है। प्रणवाद्या मेरी भ्रू की रक्षा करें। वाग्बीज-पूर्विका मेरे कण्ठ की रक्षा करें। वह कामबीजादिका माहेश्वरी हृदय की रक्षा करें। फिर ऐंश्रींह्रीं नमोऽन्त भगवती पद माहेश्वरी पद, तथा अन्नपूर्णे स्वाहा मेरी रक्षा करें। २१ वर्णों वाली माहेश्वरी मेरी सदैव रक्षा करें। तार मायाबीज, लक्ष्मीबीज, कामबीज तथा सोलह वर्णों वाली विद्या मेरी रक्षा करें। मेरे शिर की बीस वर्णों वाली पराविद्या रक्षा करें। अन्नपूर्णा महाविद्या ह्रीं भुवनेश्वरी रक्षा करें। श्रीं, ह्रीं, क्रीं मेरे शिर की तथा त्रिपुटा गुद की रक्षा करें। मेरे छः अङ्गों को षड्दीर्घभाजा बीज से पवित्र करे। इन्द्र पूर्व में मेरी रक्षा करें तथा आग्नेय में अग्नि रक्षा करें। यम दक्षिण में मेरी रक्षा करें तथा नैर्ऋत्य में निर्ऋति मेरी रक्षा करें। पश्चिम में वरुण मेरी रक्षा करें। वायव्य में वायु रक्षा करें। कुबेर उत्तर में रक्षा करें तथा ईशान में श्री शङ्कर रक्षा करें। ऊर्ध्व में ब्रह्मा तथा अधः में अनन्त रक्षा करें। उन इन्द्रादि दिक्पालों के वज्रादि आयुध भी यथाक्रम से पूर्वादि दश दिशाओं में रक्षा करें॥ २-१५॥

इति ते कथितं पुण्यं त्रैलोक्यरक्षणं परम्॥ १६॥
यद्धृत्वा पठनाद्देवा सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः। ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च धारणात्पठनाद्यतः॥ १७॥
सृजत्यवति हन्त्येव कल्पे-कल्पे पृथक्पृथक्। पुष्पाञ्जल्यष्टकं देव्यै मूलेनैव पठेत्ततः॥ १८॥
युगायुतकृतायास्तु पूजायाः फलमाप्नुयात्। वाणी वक्त्रे वसेत्तस्य सत्यं सत्यं न संशयः॥ १९॥
अष्टोत्तरशतं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः। भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि॥ २०॥
कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि पुण्यवतां वरः। ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि सद्गात्र प्राप्य पार्वति।
माल्यानि कुसुमान्येव सुखदानि भवन्ति हि॥ २१॥

इति भैरवतन्त्रेऽन्नपूर्णाकवचं समाप्तम्।

इस प्रकार तुमसे मैंने त्रैलोक्यरक्षक कवच कहा है। जिसको पढ़कर तथा धारण कर देवों ने सभी ऐश्वर्य प्राप्त किये। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र इस कवच के धारण एवं पठन करने से सृष्टि, पालन तथा संहार का कार्य करते हैं। फिर आठ मूल मन्त्रों को पढ़कर पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये। इसके पाठ से चारो युगों की पूजा का फल मिलता है। उसके मुख से निकली वाणी निस्सन्देह सत्य होती है। इसका पुरश्चरण एक सौ आठ बार जप का है। यदि भूर्जपत्र पर लिखकर स्वर्णगुटिका (ताबीज या ढुलनियाँ) में कण्ठ या दक्षिण भुजा में धारण करे तो ब्रह्मास्त्र भी उसके शरीर को पीड़ित नहीं करता तथा शस्त्र माला की भाँति सुखदाई होते हैं॥ १६-२१॥

अन्नपूर्णास्तोत्रम्

ॐ नमः कल्याणदे देवि नमः शङ्करवल्लभे। नमो भुक्तिप्रदे देवि अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ १॥
नमो मायागृहीताङ्गि नमः शङ्करवल्लभे। माहेश्वरि नमस्तुभ्यमन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ २॥
अन्नपूर्णे हव्यवाहपत्नीरूपे हरप्रिये। कलाकाष्ठास्वरूपे च अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ३॥
उद्यद्भानुसहस्राभे नयनत्रयभूषिते। चन्द्रचूडे महादेवि अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ४॥
विचित्रवसने देवि अन्नदानरतेऽनघे। शिवनृत्यकृतामोदे अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ५॥

षट्कोणपद्ममध्यस्थे षडङ्गयुवतीमये। ब्रह्मण्यादिस्वरूपे च अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ६॥
देवि चन्द्रकृता पीठे सर्वसाम्राज्यदायिनि। सर्वानन्दकरे देवि अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ७॥
साधकाभीष्टदे देवि भवदुःखविनाशिनि। कुचभारनते देवि अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ८॥
इन्द्राद्यर्चितपादाब्जे रुद्रादिरूपधारिणि। सर्वसम्पत्प्रदे देवि अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते॥ ९॥

अन्नपूर्णा स्तोत्र—हे कल्याणदे देवि! आपको नमस्कार है। हे शङ्करवल्लभे! आपको नमस्कार है। हे अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है। मायागृहीताङ्गी शङ्करवल्लभे! आपको नमस्कार है। माहेश्वरि! आपको नमस्कार है। अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है। हे अन्नपूर्णे, अग्नि की पत्नीरूप हरप्रिये! कलाकाष्ठास्वरूपे अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है। हे तीन नेत्रों से शोभित सहस्रों बालसूर्यों की आभा वाली चन्द्रपूर्णे, चन्द्रचूडे महादेवि! आपको नमस्कार है। हे विचित्र वस्त्रधारिणी, अन्नदान में रत, निष्पाप तथा शिव के नृत्य से प्रमुदित होने वाली देवी अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है। हे षट्कोण कमल के मध्य में स्थित षडङ्ग युवतियों से युक्त ब्रह्माणी आदि के स्वरूप वाली अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है। हे चन्द्रकृत पीठ पर विराजमान सर्वसाम्राज्यदायिनी, सर्वानन्दकरी अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है। साधकों को अभीष्ट देने वाली, भवदुःखों का नाश करने वाली, कुचों के भार से नत अन्नपूर्णे देवि! आपको नमस्कार है। हे इन्द्रादि द्वारा अर्चित चरणकमलों वाली रुद्रादि रूपधारिणी, सर्वसम्पत् प्रदे अन्नपूर्णे! आपको नमस्कार है॥ १-९॥

पूजाकाले पठेद्यस्तु स्तोत्रमेतत्समाहितः। तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मीर्जायते नात्र संशयः॥ १०॥
प्रातःकाले पठेद्यस्तु मन्त्रजापपुरःसरम्। तस्यैवान्नसमृद्धिः स्याद्वर्द्धमाना दिनेदिने॥ ११॥
यस्मै कस्मै न दातव्यं न प्रकाश्यं कदाचन। प्रकाशात्सिद्धिहानिः स्यात्तस्माद्यत्नेन गोपयेत्॥ १२॥

इत्यन्नपूर्णास्तोत्रं समाप्तम्।

जो पूजा-समय में समाहित मन से इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसके घर में लक्ष्मी स्थिर होकर निवास करती है, इसमें सन्देह नहीं है। जो अन्नपूर्णा के मन्त्र के जप के उपरान्त इस स्तोत्र का नित्य प्रातःकाल पाठ करता है, उसकी अन्नसमृद्धि दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती है। इस स्तोत्र को हर किसी को नहीं देना चाहिये और न ही बताना चाहिये। इसके प्रकट करने से सिद्धि की हानि होती है; अतः इसे गुप्त रखना चाहिये॥ १०-१२॥

गङ्गामन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै स्वाहा' इति विंशतिवर्णात्मको मन्त्रः। 'अस्य श्रीगङ्गामन्त्रस्य वेदव्यास ऋषिः। कृतिश्छन्दः। गङ्गा देवता। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।' ॐ वेदव्यासऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ कृतिच्छन्दसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ गङ्गादेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ शिवायै तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ नारायण्यै मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ दशहरायै अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ गङ्गायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

उत्फुल्लामलपुण्डरीकरुचिरा कृष्णेशविन्ध्यात्मिका कुम्भेष्टाभयतोयजानि दधती श्वेताम्बरालङ्कृता।
हृष्टास्या शशिशेखराखिलनदीशोणादिभिः सेविता ध्येया पापविनाशिनी मकरगा भागीरथी साधकैः॥
इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्।

गङ्गायन्त्रम्
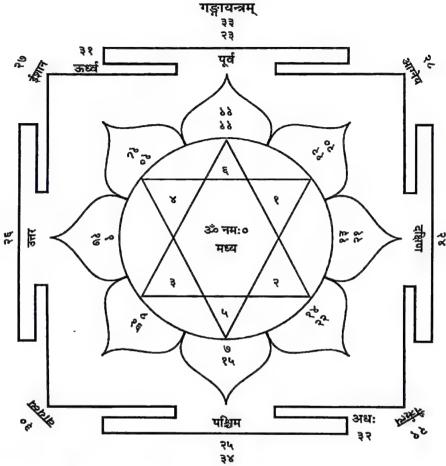
गङ्गामन्त्र पुरश्चरण-प्रयोग—'ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै स्वाहा' यह बीस अक्षरों का मन्त्र है। इस गङ्गामन्त्र के वेदव्यास ऋषि हैं। कृति छन्द है। गङ्गा देवता हैं। मेरे अभीष्ट-सिद्धिहेतु किये गये जपार्थ विनयोग है। 'ॐ वेदव्यासऋषये नमः शिरसि, ॐ कृतिच्छन्दसे नमः मुखे तथा ॐ गङ्गादेवतायै नमः हृदये' इन तीन मन्त्रों से ऋष्यादिन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः अङ्गूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा करतल में न्यास करे। इसी प्रकार हृदयादि षडङ्गन्यास भी करे; जैसे—ॐ नमः हृदयाय नमः, ॐ शिवायै शिरसे स्वाहा, ॐ नारायण्यै शिखायै वषट्, ॐ दशहरायै कवचाय हुम्, ॐ गङ्गायै नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्। फिर मूल में लिखित 'उत्फुल्लामलपुण्डरीक०' इत्यादि श्लोक से ध्यान करे। ध्यान का भावार्थ है—'खिले हुए निर्मल कमल की भाँति शोभित, कृष्णेशविन्ध्यात्मिका, कुम्भ, इष्टमुद्रा, अभयमुद्रा तथा कमलों को धारण किये, श्वेत वस्त्रों से अलंकृत, प्रसन्नमुख, सम्पूर्ण शोणादि नदियों के द्वारा सेवित, शिवजी की जटाओं में स्थित पापविनाशिनी भागीरथी (गङ्गा) जो कि मकर पर सवार हैं, उनका ध्यान साधकों को करना चाहिये।' ऐसा ध्यान करके मानस पूजा करने के उपरान्त पीठपूजा करे।

ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताभ्यो नमः इति पूर्ववत् पीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिषु ॐ जयायै नमः॥ १॥ ॐ विजयायै नमः॥ २॥ ॐ अजितायै नमः॥ ३॥ ॐ अपराजितायै नमः॥ ४॥ ॐ नित्यायै नमः॥ ५॥ ॐ विलासिन्यै

नमः ॥ ६ ॥ ॐ दोग्ध्र्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ अघोरायै नमः ॥ ८ ॥ (मध्ये) ॐ मङ्गलायै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। ततो मूर्तिं प्रकल्प्य आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैर्गङ्गां सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। षट्कोणे आग्नेयादिकेसरेषु ॐ नमः हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ शिवायै शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ नारायण्यै शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ दशहरायै कवचाय हुं ॥ ४ ॥ ॐ गङ्गायै नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। तद्बहिरष्टदलेषु प्राचीक्रमेण ॐ रुद्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ हरये नमः ॥ २ ॥ ॐ विधये नमः ॥ ३ ॥ ॐ सूर्य्याय नमः ॥ ४ ॥ ॐ हिमाचलाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ मेनायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ भगीरथाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ अपांपतये नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। ततो दलाग्रेषु ॐ मीनाय नमः ॥ १ ॥ ॐ कूर्माय नमः ॥ २ ॥ ॐ मण्डूकाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ मकराय नमः ॥ ४ ॥ ॐ हंसेभ्यो नमः ॥ ५ ॥ ॐ कारण्डवेभ्यो नमः ॥ ६ ॥ ॐ वकेभ्यो नमः ॥ ७ ॥ ॐ सारसकेभ्यो नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। तद्बाह्ये चतुरस्रे भूपुरे पूर्वादिदशदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बहिर्वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा धूपदीपादि-नमस्कारान्तैरुपचारैः सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षं जपेद्दशांशेन जुहुयात्सघृतैस्तिलैः। एवं संसाधितो मन्त्रोऽभीष्टं यच्छति मन्त्रिणाम् ॥
ज्येष्ठशुक्लदशम्यां तां विशेषेण भजेद्बुधः। दद्याद्दशभ्यो विप्रेभ्यो दशप्रस्थमितांस्तिलान् ॥
जप्त्वा सहस्रं हुत्वा चोपोष्य तत्र विकल्मषः। सर्वभोगसमायुक्तो जायते मानवो भुवि ॥

इति विंशतिवर्णात्मकश्रीगङ्गामन्त्रप्रयोगः।

पीठपूजा—'ॐ मण्डूकादि परतत्त्वान्तदेवताभ्यो नमः' कहकर पीठपूजा करे। फिर उस पीठ की शक्तियों की पूजा मूल में लिखित 'ॐ जयायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से पूर्वादि आठ दिशाओं में तथा मध्य में करना चाहिये। फिर मूर्ति की कल्पना करके आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त पूजा करके श्रीगङ्गायन्त्र के आवरणों की पूजा करे। प्रथम षट्कोण की केसरों में मूलोक्त 'ॐ नमः हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से आग्नेयादि क्रम से (यन्त्र के रेखाचित्र के अनुसार) पूजा करे। फिर उसके बाहर के अष्टदल में प्राची क्रम से 'ॐ रुद्राय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उन्हीं आठ दलों के अग्रभागों में मूलोक्त 'ॐ मीनाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से उसी क्रम से पूजा करनी चाहिये। फिर उन दलाग्रों के बाहर बने भूपुर में (जो कि चौकोर होता है) पूर्वादि दश दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा (इन्द्राय नमः इत्यादि मन्त्रों से) करे तदुपरान्त उन्हीं स्थानों में 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि कहकर उनके आयुधों की भी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार आवरण पूजा कर चुकने के पश्चात् धूप-दीप-नमस्कारान्त उपचारों से पूजा करके गङ्गास्तोत्र से स्तुति करने के उपरान्त जप करना चाहिये। इसका पुरश्चरण एक लाख मन्त्रजप से होता है। कहा भी गया है—जप के दशांश तिल एवं घृत से हवन करे। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध होकर साधक को सफलता देता है। ज्येष्ठ शुक्ल दशमी को इसका जप विशेष रूप से करना चाहिये। दश ब्राह्मणों को दश प्रस्थ (दस किलो) काले तिल का दान करना चाहिये। फिर जपकर होम करने के उपरान्त साधक पापरहित होकर सभी भोगों से युक्त हो जाता है।

दशहरागङ्गास्तोत्रम्

स्कान्दे काशीखण्डे च तत्रादौ स्नानार्चनविधिं विधाय पश्चाज्जलान्तरे स्थित्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम दशविधपाप-प्रणाशनार्थं श्रीभगवतीगङ्गाप्रीत्यर्थं च ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे प्रतिपदमारभ्य दशमीपर्यन्तं प्रतिदिनमुत्तरोत्तरवृद्ध्या दशहरास्तोत्रजपमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पठेत्।

दशहरा गङ्गा स्तोत्र—सर्वप्रथम स्नान एवं पूजा को समाप्त कर जल के भीतर स्थित होकर देश-काल का संकीर्तन कर 'मम दशविधपापप्रणाशनार्थं श्रीभगवतीगङ्गाप्रीत्यर्थं च ज्येष्ठमासि सिते पक्षे प्रतिपदमारभ्य दशमीपर्यन्तं प्रतिदिनमुत्तरोत्तरवृद्ध्या दशहरास्तोत्रजपमहं करिष्ये' यह सङ्कल्प करके (ज्येष्ठ मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गङ्गादशहरा-पर्यन्त प्रतिदिन) यह स्तोत्रपाठ प्रारम्भ करना चाहिये अथवा मन्त्रसिद्ध्यर्थ अन्य समय में भी करा सकते हैं।

ब्रह्मोवाच—

नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः। नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमो नमः॥ १॥
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्य्यै ते नमो नमः। सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥ २॥
सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्छ्रेष्ठ्यै नमो नमः। स्थाणुजङ्गमसम्भूते विषहन्त्र्यै नमो नमः॥ ३॥
भोगोपभोगदायिन्यै भोगवत्यै नमो नमः। मन्दाकिन्यै नमस्तेऽस्तु स्वर्गदायै नमो नमः॥ ४॥
नमस्त्रैलोक्यभूषायै जगद्धात्र्यै नमो नमः। नमस्त्रिशुक्लसंस्थायै तेजोवत्यै नमो नमः॥ ५॥
नन्दायै लिङ्गधारिण्यै नारायण्यै नमो नमः। नमस्ते विश्वमुख्यायै रेवत्यै ते नमो नमः॥ ६॥
बृहत्यै ते नमस्तुभ्यं लोकधात्र्यै नमो नमः। नमस्ते विश्वमित्रायै नन्दिन्यै ते नमो नमः॥ ७॥
पृथ्व्यै शिवामृतायै च सुवृषायै नमो नमः। शान्तायै च वशिष्ठायै वरदायै नमो नमः॥ ८॥
उस्रायै सुखदोग्ध्र्यै च सञ्जीविन्यै नमो नमः। ब्रह्मिष्ठायै ब्रह्मदायै दुरितघ्न्यै नमो नमः॥ ९॥
प्रणतार्तिप्रभञ्जिन्यै जगन्मात्रे नमोऽस्तु ते। सर्वापत्प्रतिपक्षायै मङ्गलायै नमो नमः॥ १०॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे। सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ११॥
निर्लेपायै दुर्गहन्त्र्यै दक्षायै ते नमो नमः। परात्परतरे तुभ्यं नमस्ते मोक्षदे सदा॥ १२॥
गङ्गे ममाग्रतो भूया गङ्गे मे देवि पृष्ठतः। गङ्गे मे पार्श्वयोरेहि त्वयि गङ्गेऽस्तु मे स्थितिः॥ १३॥
आदौ त्वमन्ते मध्ये च सर्वं त्वं गां गते शिवे। त्वमेव मूलप्रकृतिस्त्वं हि नारायणः परः॥ १४॥
गङ्गे त्वं परमात्मा च शिवस्तुभ्यं नमः शिवे।

ब्रह्माजी बोले—शिवा गङ्गा, शिवदा के लिये नमो नमः। विष्णुरूपिणी को नमस्ते। ब्रह्ममूर्ति को नमो नमः। रुद्ररूपिणी को नमस्ते। शाङ्करी को नमो नमः। सर्वदेवस्वरूपिणी को नमस्ते, भेषजमूर्ति को नमो नमः। सबकी सब व्याधियों के लिये भिषक्श्रेष्ठी को नमो नमः। स्थावर-जङ्गम से उत्पन्न विषों की नाशक, आपको नमो नमः। भोगोप-भोगदायिनी तथा भोगवती को नमो नमः। मन्दाकिनी को नमस्ते, स्वर्गदायिनी को नमो नमः। त्रैलोक्यभूषा जगद्धात्री को नमो नमः। त्रिशुक्लसंस्था, तेजोवती को नमो नमः। नन्दा, नारायणी तथा लिङ्गधारिणी को नमो नमः। विश्वमुख्या, रेवती! आपको नमो नमः। हे बृहती, लोकधात्री, विश्वमित्रा, नन्दिनी! आपको नमो नमः। हे पृथ्वी, शिवा, अमृता, सुवृषा, शान्ता, वशिष्ठा, वरदा तुझे नमस्कार है। उस्रा, सुखदा, दोग्ध्री, सञ्जीवनी को नमो नमः। ब्रह्मिष्ठा, ब्रह्मदा, दुरितघ्नी को नमो नमः। प्रणतार्ति प्रभञ्जनी, जगन्माता, सर्वापत्प्रतिपक्षा, मङ्गला को नमो नमः। शरणागत-दीनार्त-परित्राण परायणा, सबकी पीड़ा हरने वाली को नमस्कार है। निर्लेपा, दुर्गहन्त्री, दक्षा, परात्परतरा, मोक्षदा! तुझे सदैव नमस्कार है। हे गङ्गे! आप मेरे पीछे, आगे तथा पार्श्व में रहें। आपमें मेरी स्थिति रहे। आप ही आदि-अन्त-मध्य में सबकी गतिस्वरूपा शिवा हैं। आप ही मूल प्रकृति तथा नारायण हैं। हे गङ्गे! आप ही परमात्मा, शिव तथा शिवा हैं॥ १-१४॥

य इदं पठति स्तोत्रं भक्त्या नित्यं नरोऽपि यः॥ १५॥

शृणुयाच्छ्रद्धया युक्तः कायवाक्चित्तसम्भवैः। दशधा संस्थितैर्दोषैः सर्वैरेव प्रमुच्यते॥ १६॥

सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य ब्रह्मणि लीयते। ज्येष्ठमासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता॥ १७॥

तस्यां दशम्यामेतच्च स्तोत्रं गङ्गाजले स्थितः। यः पठेद्दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि चाक्षमः।

सोऽपि तत्फलमाप्नोति गङ्गां सम्पूज्य यत्नतः॥ १८॥

अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः। परदारोपसेवा च कायिकं त्रिविधं स्मृतम्॥ १९॥

पारुष्यमनृतं चैव पैशून्यं चापि सर्वशः। असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥ २०॥

परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्। वितथाभिनिवेशश्च मानसं त्रिविधं स्मृतम्॥ २१॥

एतानि दश पापानि हर त्वं मम जाह्नवि। दशपापहरा यस्मात्तस्माद्दशहरा स्मृता॥ २२॥

त्रयस्त्रिंशच्छतं पूर्वान्पितृनथ पितामहान्। उद्धरत्येव संसारान्मन्त्रेणानेन पूजिता॥ २३॥

जो मनुष्य नित्य भक्तिपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करता है, मन-वाणी-चित्त को एकाग्र कर सुनता है, वह दश प्रकार के पापों एवं सभी पापों से मुक्त हो जाता है। उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण होकर मरने पर वह ब्रह्मलीन हो जाता है। ज्येष्ठ शुक्ल दशमी में हस्त नक्षत्र के संयोग में इस स्तोत्र को गंगाजल में स्थित होकर जो दश बार पढ़ता है, वह भले ही दरिद्र एवं अक्षम हो, वह भी गङ्गा को पूजकर उस फल को प्राप्त होता है। अदत्तानामुपादानं, अनावश्यक हिंसा, परदारागमन, कठोरता, मिथ्या वाणी, चुगली, असम्बद्ध प्रलाप, पराए द्रव्य पर मन लगाना, मन से बुरा सोचना, दम्भ—इन (कायिक, वाचिक, मानसिक) दश पापों को हे गङ्गे! हरण करो। आप दश पाप हरण करने वाली होने से दशहरा कही जाती हैं। आप इस मन्त्र से आराधित होकर मेरे पूर्व की ३३०० पीढ़ियों के पूर्वजों का उद्धार कर दें॥ १५-२३॥

ॐ नमो भगवत्यै दशपापहरायै गङ्गायै नारायण्यै रेवत्यै।
शिवायै दक्षायै अमृतायै विश्वरूपिण्यै नन्दिन्यै ते नमो नमः॥ २४॥

सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां करधृतकलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम्।
विधिहरिहररूपां सेन्दुकोकीरजुष्टां कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि॥ २५॥

आदावादिपितामहस्य निगमव्यापारपात्रे जलं पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम्।
भूयः शम्भुजटाविभूषणमणिर्जह्नोर्महर्षेरियं कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते॥ २६॥

गङ्गागङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि। मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥ २७॥

इति गङ्गास्तोत्रं समाप्तम्।

ॐ भगवती, दशपापहरा, गङ्गा, नारायणी, रेवती, शिवा, दक्षा, अमृता, विश्वरूपिणी नन्दिनी! आपको नमो नमः। श्वेत मगर पर बैठी, शुभ्र वर्ण की, त्रिनेत्रा, हाथ में कलश, कमल, अति अभीष्ट वरमुद्रा-धारिणी ब्रह्मा-विष्णु-रुद्रस्वरूपिणी, चन्द्र-शुकयुक्त, सुन्दर किनारों से युक्त जाह्नवी को प्रणाम करता हूँ। प्रथम पितामह के कमण्डलु से निकलकर फिर विष्णु के चरणों का पादोदक बनकर शम्भु की जटाओं का विभूषण बनी यह जह्नु की श्रेष्ठ कन्या पापनाशिनी, भगवती, भागीरथी दिख रही है। जो सैकड़ों लोगों के साथ मिलकर गङ्गा-गङ्गा कहता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक को जाता है॥ २४-२७॥

शीतलामन्त्रप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'ॐ ह्रीं श्रीं शीतलायै नमः' इति नवाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य उपमन्युर्ऋषिः। बृहती छन्दः। शीतला देवता। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ उपमन्युऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ बृहतीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ शीतलादेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ह्राँ श्राँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ह्रूं श्रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ह्रैं श्रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ श्रौं ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ह्रः श्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

दिग्वाससं मार्जनिकां च शूर्पं करद्वये सन्दधतीं घनाभाम्। श्रीशीतलां सर्वरुजार्तिनष्टौ रक्ताङ्गरागस्त्रजमर्चयामि॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य अथवा स्वपुरतः प्रतिमायां भगवतीं शीतलां शीतजलेन पाद्यादिषोडशोपचारैः सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणमयुतजपः। तथा च—

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं पायसेन सहस्त्रकम्। जुहुयात्पूर्ववत्पीठे स्फोटानां नाशिनी त्वियम्॥
नाभिमात्रे जले स्थित्वा यः सहस्त्रं जपेन्मनुम्। तेन सम्मार्जितास्तीव्राः स्फोटा नश्यन्ति तत्क्षणात्॥

इति शीतलामन्त्रप्रयोगः।

शीतलामन्त्र-प्रयोग (मन्त्र महोदधि के अनुसार)—'ॐ ह्रीं श्रीं शीतलायै नमः' यह नौ अक्षरों का मन्त्र है। इस मन्त्र के उपमन्यु ऋषि, बृहती छन्द तथा शीतला देवता हैं। अभीष्ट सफलताहेतु इसका जप में विनियोग है। इस भाव को व्यक्त करने वाला मन्त्र मूल से पढ़कर विनियोग का जल छोड़े। फिर मूलोक्त 'ॐ उपमन्युऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ ह्रां श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर हृदयादि न्यास कर ध्यान करे। 'ॐ ह्रां श्रां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं श्रूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं श्रैं कवचाय हुम, ॐ ह्रौं श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रः श्रः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि न्यास करे। 'दिगम्बर, अपने दोनों हाथों में मार्जनी तथा शूर्प लिये काले मेघ के समान आभायुक्त शीतला को अपनी सब पीड़ा के नाश-हेतु लाल रङ्ग के अङ्गराग से अर्चित करता हूँ।' ऐसा मूलोक्त ध्यान करके नाभिमात्र जल में खड़े होकर एक सहस्त्र जप करे, उसके मार्जन (झाड़ा) करने से शीतला के तीव्र विस्फोट शीघ्र शान्त हो जाते हैं।

शीतलास्तोत्रम्

ॐ अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। शीतला देवता। लक्ष्मीर्बीजम्। भवानी शक्तिः। सर्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः।

शीतला स्तोत्र—मूल में लिखित 'ॐ अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य०' इत्यादि के द्वारा विनियोग का जल छोड़कर मूल में लिखित स्तोत्र का जप प्रारम्भ करना चाहिये।

ईश्वर उवाच—

वन्देऽहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम्। मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालङ्कृतमस्तकाम्॥ १॥
वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम्। यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत्॥ २॥
शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः। विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य प्रणस्यति॥ ३॥
यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः। विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥ ४॥
शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगन्धयुतस्य च। प्रनष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जीवनौषधम्॥ ५॥
शीतले तनुजान्रोगान्नृणां हरसि दुस्त्यजान्। विस्फोटकविजीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी॥ ६॥

गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम्। त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यान्ति संक्षयम्॥ ७॥
न मन्त्रो नौषधं तस्य पापरोगस्य विद्यते। त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम्॥ ८॥

श्री शंकरजी बोले—मैं गधे पर स्थित दिगम्बर शीतला, देवी, जो मार्जनी (बुहारी) तथा कलश अपने हाथों में लिये हैं एवं जिनके माथे पर सूप शोभित है, उनकी वन्दना करता हूँ। मैं सर्वरोग-भय को दूर करने वाली शीतला देवी की वन्दना करता हूँ, जिनके द्वारा विस्फोटकों का महाभय नष्ट हो जाता है। जो दाहपीड़ित व्यक्ति शीतले-शीतले कहता है, उसका विस्फोटकों का घोर भय शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। जो आपको जल में स्थित होकर पूजता है, उसके घर में विस्फोटकों का भय नहीं होता है। हे शीतले! आप ज्वर से दग्ध, दुर्गन्धित एवं प्रनष्ट नेत्रों वाले रोगी के लिये जीवनीय औषध कहलाती हो। हे शीतले! आप मनुष्यों के शरीर के कठिन शारीरिक रोगों को हरती हो। विस्फोटकों से विजीर्ण (विदीर्ण) शरीर वालों के लिये आप एकमात्र अमृतवर्षा करने वाली हो। गलगण्ड तथा अन्य जो दारुण रोग हैं, वे सब आपके अनुध्यानमात्र से हे शीतले! संक्षय को प्राप्त हो जाते हैं। उस पापरोग (गलगण्ड-गण्डमाला) की आपके अतिरिक्त अन्य कोई औषधि नहीं है, आप जैसी माता मुझे इस संसार में दिखाई नहीं देती है॥ १-८॥

मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम्। यस्त्वां सञ्चिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते॥ ९॥
अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः प्रपठेत्सदा। विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥ १०॥
श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः। उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत्॥ ११॥
शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता। शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः॥ १२॥
रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनन्दनः। शीतलावाहनश्चैव दूर्वाकन्दनिकृन्तनः॥ १३॥
एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत्। तस्य गेहे शिशूनां च शीतलारुङ् न जायते॥ १४॥
शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्य कस्यचित्। दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धाभक्तियुताय वै॥ १५॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे शीतलास्तोत्रं सम्पूर्णम्। श्रीशीतलाभगवत्यै नमः।

हे देवि! मृणाल तन्तु के समान आपका ध्यान नाभि एवं हृदय के मध्य में जो करता है, उसकी मृत्यु नहीं होती है। यह शीतलाष्टक जो भी पढ़ता है, उससे स्तोत्रपाठक के घर में घोर विस्फोटकों का भय नहीं होता है। भक्ति एवं श्रद्धा के साथ इसे पढ़ना तथा सुनना चाहिये। यह संक्रामक रोगों के लिये महान् स्वस्त्ययन है। हे शीतले! आप जगन्माता तथा जगत्पिता हो, आप ही जगद्धात्री हो, आपको नमो नमः। रासभ, गर्दभ, खर, वैशाखनन्दन, शीतलावाहन, दूर्वाकन्द-निकृन्तन—ये गधे के (छः) नाम जो शीतला के आगे पढ़ता है, उसके घर में बालकों को शीतला रोग नहीं होता है। यह शीतलाष्टक है, जिसे हर किसी को नहीं देना चाहिये। इसे केवल श्रद्धा-भक्तियुक्त मनुष्य को ही देना चाहिये॥ ९-१५॥

पृथ्वीमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

शारदातिलके मन्त्रो यथा—'ॐ नमो भगवत्यै धरिण्यै धरणिधरे धरे स्वाहा' इत्येकोनविंशतिवर्णात्मको मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य वराह ऋषिः। निचृच्छन्दः। पृथ्वी देवता। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ वराहऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ निचृच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ पृथ्वीदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहाशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ नमः हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ भगवत्यै शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ धरिण्यै शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ धरणिधरे कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ धरे नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ एवं षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

श्यामां विचित्रांशुकरत्नभूषणां पद्मासनां तुङ्गपयोधराननाम्।
इन्दीवरे द्वे नवशालिमञ्जरीं शुकं दधानां वसुधां यजामहे॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते विष्णोः पीठे भगवतीं पृथ्वीं पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च पूर्ववत् षडङ्गानि पूजयेत्। तद्बहिरष्टदले प्राचीक्रमेण चतुर्दिग्दलेषु ॐ भूम्यै नमः॥ १॥ ॐ अग्नये नमः॥ २॥ ॐ अद्भ्यो नमः॥ ३॥ ॐ वायवे नमः॥ ४॥ इति पूजयेत्। तत आग्नेयादिकोणदलेषु तत्तत्कलां यजेत्। तद्यथा—ॐ निवृत्त्यै नमः॥ १॥ ॐ प्रतिष्ठायै नमः॥ २॥ ॐ विद्यायै नमः॥ ३॥ ॐ शान्त्यै नमः॥ ४॥ ॐ शान्त्यतीतायै नमः॥ ५॥ इति भूम्यादिकलां पूजयेत्। तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तं सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः।

पृथ्वी मन्त्रपुरश्चरण-प्रयोग—'ॐ नमो भगवत्यै धरिण्यै धरणिधरे धरे स्वाहा' यह उन्नीस अक्षरों वाला मन्त्र है। इसके वराह ऋषि, निचृत् छन्द, पृथ्वी देवता, सर्वेष्ट सिद्ध्यर्थ जप में विनियोग है। इस भाव के मूलोक्त मन्त्र से विनियोग का जल पृथ्वी पर छोड़कर फिर मूलोक्त 'ॐ वराहऋषये नमः शिरसि, ॐ निचृच्छन्दसे नमः मुखे, ॐ पृथ्वीदेवतायै नमः हृदये' इन ५ मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास कर फिर मूलोक्त 'ॐ हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से षडङ्गन्यास करके फिर 'श्यामां विचित्रांशुक०' इत्यादि श्लोक के अनुसार पृथ्वी का ध्यान करे। फिर पूर्वोक्त विष्णु मन्त्रपीठ पर भगवती पृथ्वी की पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचारों से पूजा करके आवरणपूजा करे।

षट्कोण में षडङ्गों को (हृदयादि न्यासोक्त मन्त्रों से) पूजकर उसके बाहर अष्टदल पर पूर्वादि क्रम से चारो दिशाओं के दलों में 'ॐ भूम्यै नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर आग्नेयादि कोणों के दलों में 'ॐ निवृत्त्यै नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पूजा करे। फिर बाहर भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में क्रमशः इन्द्रादि दस दिक्पालों की पूजा कर फिर उन्हीं स्थानों में उनके आयुधों की भी पूजा क्रमशः करनी चाहिये। इस प्रकार यन्त्र की आवरणपूजा करके धूपादि नीराजनान्त पूजा करने के उपरान्त पृथ्वीमन्त्र का जप करना चाहिये। एक लाख की संख्या में इस मन्त्र का जप करने से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता है।

तथा च—

लक्षमेनं जपेन्मन्त्री धराहृदयमादरात्। ससर्पिषा पायसेन जुहुयात्तद्दशांशतः॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री साधयेत्स्वमनोरथान्। मधुत्रितयसंयुक्तैर्जुहुयादरुणोत्पलैः॥
सहस्रं भूसमृद्धिः स्यात्तथा नीलोत्पलैर्भवेत्। प्रियङ्गुपुष्पैर्मध्वक्तैर्धनधान्यमहाश्रियः॥
मञ्जरीशालिसम्भूतां मधुरत्रयलोलिताम्। जुहुयात्साधिते वह्नौ मण्डलात्स्याद्धरापतिः॥
शुक्रवारे दिनमुखे गृहीत्वा साध्यभूमृदम्। तामम्भसि विनिःक्षिप्य शोधितेऽत्र चरुं पचेत्॥
पयोघृताभ्यां सहितं जुहुयात्तं हुताशने। षण्मासं शुक्रवारेषु हुत्वैवं प्राप्नुयाद्धराम्॥
धरामेवं जपेन्मन्त्री पशुरत्नधरादिभिः। धराया वल्लभः स स्यान्नात्र कार्या विचारणा॥

इति पृथ्वीमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

पुरश्चरण का फल—पृथ्वी का हृदय से आदर करते हुए इस मन्त्र का जप करे तथा घृतसहित पायस से उसका दशमांश हवन करे। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। फिर इस सिद्ध मन्त्र से साधक को अपने मनोरथों को पूर्ण करना चाहिये। लाल कमलों को मधु, घृत एवं दूध के साथ हवन करे तो उसके पास भूसमृद्धि (भूमि, कृषि उत्पादन, पशुधन आदि) सहस्र गुनी हो जाती है। प्रियङ्गु के पुष्पों का मधु के साथ होम करने से धन-धान्य

महाश्री की प्राप्ति होती है। शालिमञ्जरी (धान की बाली) को मधुरत्रय (दूध-घी-मधु) में सानकर होम करने से साधक धरापति होता है। शुक्रवार के दिन प्रातः अभीष्ट खेत की मिट्टी लाकर उसे जल में घोलकर छानकर उससे खीर पकाये; उस खीर का घृत एवं दूध के साथ अग्नि में होम करे। प्रति शुक्रवार को छः मास तक करे तो वह खेत साधक को प्राप्त हो जाते हैं। इस पृथ्वी मन्त्र के जप से भूमि एवं कृषि के साथ समृद्धि प्राप्त होती है।

देवीभागवतोक्तं पृथ्वीस्तोत्रम्

श्रीनारायण उवाच—

जये जये जलाधारे जलशीले जयप्रदे। यज्ञसूकरजाये च जयं देहि जयावहे॥ १॥
मङ्गले मङ्गलाधारे माङ्गल्ये मङ्गलप्रदे। मङ्गलार्थं मङ्गलेशे मङ्गलं देहि मे भवे॥ २॥
सर्वाधारे च सर्वज्ञे सर्वशक्तिसमन्विते। सर्वकामप्रदे देवि सर्वेष्टं देहि मे भवे॥ ३॥
पुण्यस्वरूपे पुण्यानां बीजरूपे सनातनि। पुण्याश्रये पुण्यवतामालये पुण्यदे भवे॥ ४॥
सर्वसस्यालये सर्वसस्याढ्ये सर्वसस्यदे। सर्वसस्यहरे काले सर्वसस्यात्मिके भवे॥ ५॥
भूमे भूमिपसर्वस्वे भूमिपालपरायणे। भूमिपानां सुखकरे भूमिं देहि च भूमिदे॥ ६॥
इदं स्तोत्रं महापुण्यं प्रातरुत्थाय यः पठेत्। कोटिजन्मसु स भवेद्बलवान्भूमिपेश्वरः॥ ७॥
भूमिदानकृतं पुण्यं लभ्यते पठनाज्जनैः। भूमिदानहरात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः॥ ८॥
अम्बुवाचीभूकरणपापात्स मुच्यते ध्रुवम्। अन्यकूपे कूपखननपापत्स मुच्यते ध्रुवम्॥ ९॥
परभूमिहरात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः। भूमौ वीर्यत्यागपापाद्भूमौ दीपादिस्थापनात्॥ १०॥
पापेन मुच्यते सोऽपि स्तोत्रस्य पठनान्मुने। अश्वमेधशतं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥ ११॥
भूमिदेव्या महास्तोत्रं सर्वकल्याणकारकम्॥ १२॥

इति भूमिस्तोत्रम्।

पृथ्वी स्तोत्र—(देवीभागवत में)—श्री नारायण बोले—हे मङ्गले, मङ्गलाधारे, माङ्गल्ये, मङ्गलप्रदे, मङ्गल के लिये मङ्गलेश्वरी देवी पृथ्वी मुझे मङ्गल प्रदान करो। हे जये, अजये, जलाधारे, जलशीले जलप्रदे, यज्ञशूकर की पत्नी, जय देने वाली पृथ्वी मुझे जय प्रदान करो। हे सबकी आधारभूत सर्वज्ञे, सर्वशक्तियों से युक्त, सभी कामनाओं को पूरा करने वाली पृथिवी देवी मेरी सभी कामनाएँ पूरी करो। हे पुण्यदायिनी पृथिवी! आप पुण्यस्वरूपा, पुण्यों की बीजरूपा, सनातनी, पुण्यों का आश्रय तथा पुण्यों का घर हो। आप सभी सस्यों (फसलों) का आलय हो, सभी सस्यों से युक्त हो, सभी सस्यों का समयविशेष पर हरण करके पुनः आप सर्वसस्यात्मक हो जाती हैं। हे भूमि! आप भूपतियों का सर्वस्व हो, भूमिपालपरायणा हो, आप भूमिपालों के लिये सुखदायिनी तथा भूमिदायिनी हैं, आप मुझे कृषिभूमि प्रदान करें।

इस महापुण्यशाली स्तोत्र को जो प्रात:काल उठकर पढ़ता है, वह करोड़ों जन्म तक भूमिस्वामी रहता है (इस जन्म की तो बात ही क्या है)। इस स्तोत्र का पाठ करने से लोगों को भूमिदान का पुण्य मिलता है तथा भूमिदान-हरण के पाप से भी वह मुक्त हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। वह पराई भूमि हरण करने के पाप से निश्चित ही मुक्त हो जाता है। भूमि पर वीर्यत्याग के पाप से मुक्त हो जाता है, वह भूमि पर प्रज्वलित दीप रखने के पाप से भी मुक्त हो जाता है। इस स्तोत्र को पढ़ने से हे मुनि! वह पाप से मुक्त होकर एक सौ अश्वमेध का पुण्यफल प्राप्त करता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। यह भूमि देवी का महास्तोत्र सर्वकल्याणकारक है॥ १-१२॥

भूमौ शङ्खादिस्थापने दोषाः

देवीभागवते (स्कं० ९ अ० ९ श्लो० ३९)—

वसुधोवाच—

मुक्तां शुक्तिं हरेरर्चां शिवलिङ्गं शिवां तथा। शङ्खं प्रदीपं यन्त्रं च माणिक्यं हीरकं तथा॥
यज्ञसूत्रं च पुष्पं च पुस्तकं तुलसीदलम्। जपमालां पुष्पमालां कर्पूरं च सुवर्णकम्॥
गोरोचनं चन्दनं च शालग्रामजलं तथा। एतान् वोढुमशक्ताहं क्लिष्टा च भगवञ्छृणु॥

धरती पर शंखादि स्थापित करने के दोष (देवी भागवत स्कन्ध ९, अध्याय ९)—पृथिवी बोली—मोती, मोती की सीप, विष्णु की मूर्ति, शिवलिङ्ग, पार्वती की मूर्ति, शङ्ख, दीपक, यन्त्र, माणिक्य, हीरा, जनेऊ, पुष्प, पुस्तक, तुलसीदल, जप की माला, पुष्पमाला, कपूर, स्वर्ण, गोरोचन, चन्दन, शालिग्राम का जल—इन वस्तुओं का भार सहन करने में मैं असमर्थ हूँ। हे भगवन्! सुनो, यह सब सहन करना मेरे लिये कष्टप्रद है।

श्रीभगवानुवाच—

द्रव्याण्येतानि ये मूढा अर्पयिष्यन्ति सुन्दरि। यास्यन्ति कालसूत्रं ते दिव्यं वर्षशतं त्वयि॥

श्री भगवान् बोले—हे सुन्दरि! जो मूर्ख इन पदार्थों को तुझे अर्पित करते हैं, वे कालसूत्र नरक में एक सौ दिव्य वर्षों तक रहते हैं।

तत्रैव (अ० १० श्लो० १३)—

कामी भूमौ च रहसि वीर्यत्यागं करोति यः। भूमिरेणुप्रमाणं च वर्षं तिष्ठति रौरवे॥
भूमौ दीपं योऽर्पयति स चान्धः सप्तजन्मसु। भूमौ शङ्खं च संस्थाप्य कुष्ठं जन्मान्तरं लभेत्॥
मुक्तं माणिक्यहीरौ च सुवर्णं च मणिं तथा। पञ्च संस्थापयेद्भूमौ स चान्धः सप्तजन्मसु॥
शिवलिङ्गं शिवामर्चां यश्चार्पयति भूतले। शतमन्वन्तरं यावत् कृमिभक्षः स तिष्ठति॥
शङ्खं यन्त्रं शिलातोयं पुष्पं च तुलसीदलम्। यश्चार्पयति भूमौ च स तिष्ठेन्नरके ध्रुवम्॥
जपमालां पुष्पमालां कर्पूरं रोचनं तथा। यो मूढश्चार्पयेद्भूमौ स याति नरकं ध्रुवम्॥
भूमौ चन्दनकाष्ठं च रुद्राक्षं कुशमूलकम्। संस्थाप्य भूमौ नरके वसेन्मन्वन्तरावधि॥
पुस्तकं यज्ञसूत्रं च भूमौ संस्थापयेन्नरः। न भवेद्विप्रयोनौ च तस्य जन्मान्तरे जनिः॥

देवीभागवत में ही अध्याय १० श्लोक १३ में कहा गया है कि जो कामी भूमि पर वीर्यत्याग करता है, वह उतनी भूमि के रेणुतुल्य वर्षों तक नरक में रहता है। जो भूमि पर दीप जलाता है, वह सात जन्मों तक अन्धा होता है। भूमि पर शङ्ख रखने वाला जन्मान्तर में कुष्ठरोगी होता है। मुक्ता, माणिक्य, हीरा, सुवर्ण तथा मणि—इन पाँच को जो भूमि पर रखता है, वह सात जन्मों तक अन्धा रहता है। शिवलिङ्ग, शिव की पूजा को जो धरती पर स्थापित करता है, वह एक सौ मन्वन्तरों तक कृमिभक्षक होकर रहता है। शङ्ख, यन्त्र, शालिग्राम शिला के जल, पुष्प तथा तुलसीपत्रों को जो भूमि पर रखता है, वह निश्चित नरक में रहता है। जपमाला, पुष्पमाला, कर्पूर तथा गोरोचन को जो मूढ़ धरती पर चढ़ाता है या रखता है, वह निश्चित ही नरक को जाता है। जो व्यक्ति भूमि पर चन्दन, काष्ठ, रुद्राक्ष, कुश की जड़ स्थापित करता है, वह एक मन्वन्तर-पर्यन्त नरक में वास करता है। जो पुस्तक तथा जनेऊ को धरती पर रखता है, वह अनेकों जन्मों तक ब्राह्मण की योनि में जन्म नहीं लेता है।

गायत्रीपुरश्चरणप्रयोगः

अथो वक्ष्यामि गायत्रीं तत्त्वरूपां त्रयीमयीम्। यथा प्रकाश्यते ब्रह्म सच्चिदानन्दलक्षमम्॥

तत्र चन्द्रतारादिबलान्विते पूर्वोक्ते सुमुहूर्ते शिवालयादिपवित्रस्थले जपस्थानं प्रकल्प्य गोमयोपलेपनादिभिः संशोध्य तत्रासनभूमौ कूर्मशोधनं दीपस्थानशोधनं च कृत्वा अनुष्ठानारम्भं कुर्यात्।

तद्यथा—कर्ता प्रारम्भात्पूर्वदिने ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय नद्यादौ स्नात्वा प्रातःसन्ध्यादिनित्यकर्म समाप्य आचार्यमाहूय सम्पूज्य तदनुज्ञया स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य सपवित्रकरः आचम्य प्राणानायम्य सामान्यतो गणपत्यादिस्मरणं कृत्वा देहशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं कुर्यात्। देशकालौ सङ्कीर्त्य 'करिष्यमाणगायत्रीपुरश्चरणेऽधिकारसिद्ध्यर्थे कृच्छ्रत्रयममुक-प्रत्याम्नायेनाहमाचरिष्ये' इति सङ्कल्प्य धेनुदानतिलहोमसुवर्णादिप्रत्याम्नायद्वारा कृच्छ्राणि सम्पाद्य कृताञ्जलिः अमुकशर्मणो मम गायत्रीपुरश्चरणे अनेन कृच्छ्रत्रयानुष्ठानेनाधिकारसिद्धिरस्त्विति विप्रान् वदेत्। विप्रा अधिकारसिद्धिरस्त्विति ब्रूयुः। पुनर्देशकालौ सङ्कीर्त्य 'करिष्यमाणपुरश्चरणाङ्गत्वेन मन्त्रसिद्ध्यर्थं गायत्र्या अयुतजपं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य स्वयं विप्रद्वारा वा कुर्यात्। एवं सप्रणवव्याहृतिगायत्र्ययुतं जप्त्वा तर्पणं कुयात्। तद्यथा—ॐ तत्सवितुरित्यस्याऽऽचार्यं ऋषिं विश्वामित्रं तर्पयामि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसं तर्पयामि॥ २॥ ॐ सवितारं देवं तर्पयामि॥ ३॥ इति तर्पणं कृत्वा रुद्रं नमस्कृत्य कद्रुदायेत्यादीनि रुद्रसूक्तानि सकृज्जपेत्। इति पूर्वदिनकृत्यम्।

गायत्रीपुरश्चरण प्रयोग—अब मैं तत्त्वरूपा त्रयीमयी गायत्री को कहता हूँ, जिसके द्वारा सच्चिदानन्द परब्रह्म के दर्शन होते हैं। इसका अनुष्ठान शुभ मुहूर्त में चन्द्र-ताराबलान्वित सुमुहूर्त में शिवालय इत्यादि पवित्र स्थान में करना चाहिये। स्थान को गोबर आदि से लीप कर, आसन भूमि के कूर्म का शोधन कर दीपस्थान का शोधन करके ही अनुष्ठान करना चाहिये।

पूर्वदिन का कृत्य—कर्त्ता साधक अथवा यजमान अनुष्ठानमुहूर्त के प्रारम्भ दिन से एक दिन पूर्व ब्राह्म मुहूर्त में उठकर नदी आदि में स्नान करके प्रातः के सन्ध्यादि नित्य कर्मों को सम्पन्न कर आचार्य को बुलाकर पूज कर उसकी अनुज्ञा से अपने आसन पर पूर्व की ओर मुख करके बैठे तथा पवित्री धारण कर आचमन एवं प्राणायाम करके सामान्य रूप से गणेशजी का स्मरण कर देहशुद्धि के लिये प्रायश्चित्त करे।

प्रायश्चित्त-विधि—देश काल का स्मरण करके 'करिष्यमाणगायत्रीपुरश्चरणे अधिकारसिद्ध्यर्थं कृच्छ्रत्रयममुक-प्रत्याम्नायेनाहमाचरिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके गोदान, तिलहोम, सुवर्ण आदि प्रत्याम्नाय द्वारा तीनों कृच्छ्रों को सम्पादित करके हाथ जोड़कर 'अमुकनाम शर्मा (वर्मा इत्यादि की) अपने गायत्री पुरश्चरण में इस कृच्छ्रत्रय के अनुष्ठान से अधिकार सिद्ध हों' ऐसा ब्राह्मणों से कहे। तब ब्राह्मण लोग 'अधिकारसिद्धिः अस्तु' ऐसा कहें। पुनः देश-काल का उच्चारण करके 'करिष्यमाणपुरश्चरणाङ्गत्वेन मन्त्रसिद्ध्यर्थं गायत्र्या अयुतजपं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प साधक स्वयं अथवा ब्राह्मण द्वारा (आचार्य द्वारा) करे। फिर सप्रणव व्याहृतियों सहित अयुत संख्या में गायत्री जपकर तर्पण करना चाहिये।

गायत्री-तर्पणविधि—'ॐ तत्सवितुरित्यस्याऽऽचार्यऋषिं विश्वामित्रं तर्पयामि, ॐ गायत्री छन्दसं तर्पयामि, ॐ सवितारं देवं तर्पयामि' इस प्रकार तर्पण करके रुद्र को नमस्कार कर 'कद्रुदाय' इत्यादि रुद्रसूक्तों का एक बार जप करे। यह पूर्व दिन का कृत्य होता है।

ततो जपप्रारम्भदिने सुमुहूर्ते सपत्नीको यजमानः सुगन्धतैलाभ्यङ्गपूर्वकमुष्णोदकेन मङ्गलस्नानं कृत्वा शुक्लधौतवासांसि परिधाय यथायोग्यालङ्कृतो धृतकुङ्कुमादित्रिपुण्ड्रतिलकः सपवित्रोपग्रहः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम इह जन्मनि जन्मान्तरेषु च कृतकायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकसमस्तपापक्षयार्थं

पुत्रपौत्रधनधान्याभिवृद्ध्यर्थं चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सप्रणवव्याहृतिपूर्वकचतुर्विंशतिलक्ष-जपात्मकगायत्रीपुरश्चरणं (स्वयं) विप्रद्वारा वा करिष्ये, तदङ्गत्वेन गणेशपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यजपकर्तृवरणं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणेशपूजनादिनान्दीश्राद्धान्तं पूर्ववत् कृत्वा नान्दीश्राद्धान्ते सविता प्रीयतामिति पठित्वा आचार्यजपकर्तृवरणं कुर्यात्।

जपप्रारम्भ के दिन का कृत्य—जप-प्रारम्भ के दिन यजमान सपत्नीक सुगन्धित तैल लगाकर उष्णोदक से स्नान करे। फिर श्वेत वस्त्र धारण कर अपने आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर आचमन कर देश-काल का उच्चारण करके 'मम इह जन्मनि जन्मान्तरेषु च कृतकायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकसमस्तपापक्षयार्थं पुत्रपौत्र-धनधान्याभिवृद्ध्यर्थं चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सप्रणव्याहृतिपूर्वकचतुर्विंशलक्षजपात्मक-गायत्रीपुरश्चरणं (स्वयं) विप्रद्वारा वा करिष्ये, तदङ्गत्वेन गणेशपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यजपकर्तृवरणं च करिष्ये' कहकर सङ्कल्प करे। फिर गणेशपूजनादि नान्दीश्राद्धान्त सभी कर्म पूर्ववत् करके नान्दीश्राद्ध के अन्त में 'सविता प्रीयताम्' कहकर आचार्य तथा जपकर्ताओं का वरण करे।

तद्यथा—आचार्यं जपकर्तॄंश्चोदङ्मुखानासनेषूपवेश्य स्वयं प्राङ्मुख उपविश्य सर्वेषां पादप्रक्षालनं कृत्वा दक्षिणहस्ते वरणद्रव्याणि गृहीत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं करिष्यमाणगायत्रीजपपुरश्चरण-कर्मणि अमुकगोत्रोत्पन्नममुकवेदशाखाध्यायिनममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्गन्धाक्षतताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीयकासनमाला-कमण्डलुयुग्मवासोभिर्जपकरणार्थमाचार्यत्वेन त्वामहं वृणे' इत्याचार्यं वृत्वा 'ॐ वृतोऽस्मीति' प्रतिवचनानन्तरं हस्ते यज्ञकङ्कणं बद्ध्वा गन्धपुष्पादिभिः पूजां कुर्यात्। ततो जापकवरणं देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं करिष्यमाणगायत्रीपुरश्चरणकर्मणि नानागोत्रोत्पन्नानमुकाऽमुकशर्मणो विप्रानेभिर्गन्धाक्षतताम्बूल-स्वर्णाङ्गुलीयकासनमालाकमण्डलुवासोभिर्विहितजपकरणार्थं जापकत्वेन युष्मानहं वृणे'—'ॐ वृताः स्म' इति प्रति-वचनानन्तरं पृथक्पृथक् हस्ते यज्ञकङ्कणं बद्ध्वा गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत्—

ॐ अस्य यागस्य निष्पत्तौ भवन्तोऽभ्यर्थिता मया। सुप्रसन्नैः प्रकर्त्तव्यो मद्यागो विधिपूर्वकम्॥
अङ्गीकुर्वन्तु कर्मैतत्कल्पद्रुमसमाशिषः। यथोक्तनियमैर्युक्ता जपार्थे स्थिरबुद्धयः॥
अस्मिन्यज्ञे मया पूज्याः सन्तु मे नियमान्विताः। अक्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः॥
जपध्यानरता नित्यं प्रसन्नमनसः सदा। अदुष्टभाषणाः सन्तु मा सन्तु परनिन्दकाः॥
ममापि नियमा ह्येते भवन्तु भवतामपि॥

इति प्रार्थ्य मधुपर्कपूजां कृत्वा प्रत्येकं वस्त्रद्वयमासनमर्घ्यपात्रमाचमनपात्रं जलपात्रं सुवर्णाङ्गुलीयकं मालां च दद्यात्। (अत्र जापकास्त्वेकविंशतिः न्यूनाधिका वा कार्याः)। ततः सर्वे जापका आचम्य प्राणानायम्य,

ॐ सूर्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपा। पवमानो दिक्पतिर्भूराकाशं खेचरामराः॥
ब्रह्मशासनमास्थायकल्पध्वमिह सन्निधिम्।

इति प्रार्थयेयुः। ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'ममामुकशर्मणो यजमानस्य वा सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् (यजमानानुज्ञया) गायत्रीपुरश्चरणान्तर्गतामुकसहस्रसंख्यापरिमितिविहितगायत्रीजपं करिष्ये, तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं प्राण-प्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डमार्गेण भूतशुद्ध्यादिबहिर्मातृकान्यासान्तं कृत्वा गायत्रीन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। परमात्मा देवता। शरीरशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ परमात्मदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति प्रणवन्यासः। सप्तव्याहृतीनां जमदग्निभारद्वाजात्रिगौतमकश्यपविश्वामित्रवसिष्ठाः ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्ति-

त्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि। अग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः। न्यासे जपे च विनियोगः। ॐ जमदग्नि-भारद्वाजात्रिगौतमकश्यपविश्वामित्रवसिष्ठऋषिभ्यो नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगती-छन्दोभ्यो नमः मुखे॥ २॥ ॐ अग्निवायूसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवदेवताभ्यो नमः हृदये॥ ३॥ इति व्याहृति-ऋष्यादिन्यासः। ॐ गायत्र्या विश्वामित्रऋषिः। गायत्री छन्दः। सविता देवता। न्यासे जपे च विनियोगः। ॐ विश्वामित्रऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्री छन्दसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ सवितृदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति गायत्र्या ऋष्यादिन्यासः। ॐ शिरसः प्रजापतिः ऋषिः ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः। यजुश्छन्दः। प्राणायामे विनियोगः। ॐ प्रजापतिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ यजुश्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ ब्रह्माग्निवायुसूर्यदेवताभ्यो नमः हृदये॥ १॥ इति शिरस ऋष्यादिन्यासः। ॐ भूः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ भुवः तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ स्वः मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम् अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ भर्गोदेवस्य धीमहि कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ धियो यो नः प्रचोदयात् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कुर्यात्। ततः ॐ भूः नमः हृदये॥ १॥ ॐ भुवः नमो मुखे॥ २॥ ॐ स्वः नमो दक्षांसे॥ ३॥ ॐ महः नमो वासांसे॥ ४॥ ॐ जनः नमो दक्षिणोरौ॥ ५॥ ॐ तपः नमो वामोरौ॥ ६॥ ॐ सत्यं नमः जठरे॥ ७॥ इति व्याहृतिन्यासः।

आचार्यादि वरण-विधि—आचार्य तथा जपकर्ता अपने आसनों पर उत्तराभिमुख होकर बैठें तथा यजमान (साधक) स्वयं पूर्वाभिमुख होकर बैठकर आचार्यादि सब ब्राह्मणों के पैर धोकर दाहिने हाथ में वरणद्रव्यों को लेकर देश-काल का उच्चारण कर 'मम सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं करिष्यमाणगायत्रीजपपुरश्चरणकर्मणि अमुकगोत्रोत्पन्नममुकवेदशाखाध्यायिनममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्गन्धाक्षतताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीयकासनमालाकमण्डलु-युग्मवासोभिर्जपकरणार्थमाचार्यत्वेन त्वामहं वृणे' ऐसा कहकर आचार्य-वरण करे। आचार्य 'ॐ वृतोऽस्मि' ऐसा प्रतिवचन कहे। फिर यजमान आचार्य के हाथ में यज्ञकङ्कण बाँधकर गन्धादि के द्वारा उसकी पूजा करे। फिर जापकों के वरण के लिये देश-काल का उच्चारण करके 'मम सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं करिष्यमाणगायत्रीपुरश्चरणकर्मणि नानागोत्रोत्पन्नानमुकाऽमुकशर्मणो विप्रानेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णाङ्गुलीय-कासनमालाकमण्डलुवासोभिर्विहितजपकरणार्थं जापकत्वेन युष्मानहं वृणे' कहकर जापकों का वरण करे। जापक 'ॐ वृताः स्मः' कहकर प्रतिवचन दें। फिर यजमान उन जापकों के हाथ में पृथक्-पृथक् कङ्कण बाँधे तथा गन्धादि से उनकी पूजा कर मूलोक्त 'अस्य यागस्य०' इत्यादि पाँच श्लोकों को कहकर जापकों से प्रार्थना करे, जिसका भावार्थ इस प्रकार है—ॐ इस यज्ञ की सम्पूर्णताहेतु मैं आप सबसे प्रार्थना करता हूँ। आप प्रसन्न होकर विधिपूर्वक मेरे इस याग को सम्पन्न करें। मेरे इस कार्य को अङ्गीकार कर आप मुझे कल्पवृक्ष के समान आशीर्वाद प्रदान करें। आप यथोक्त नियमों का पालन करते हुए स्थिर बुद्धि होकर रहें। इस यज्ञ में आप मेरे द्वारा पूजित होकर अक्रोधन, शौच-परायण, सतत ब्रह्मचारी, जप-ध्यानपरायण, नित्य प्रसन्न मानस, अदुष्ट भाषण होकर रहें। पराई निन्दा न करें। मेरे लिये भी यही नियम पालनीय रहेंगे, आपके लिये भी यही पालनीय होंगे।

ऐसी प्रार्थना करके मधुपर्क से उनकी पूजा करके प्रत्येक जापक को दो वस्त्र, आसन, अर्घ्यपात्र, आचमनपात्र, जलपात्र, सोने की अङ्गूठी तथा माला दे (यहाँ जापकों की संख्या इक्कीस अथवा आवश्यकतानुसार न्यूनाधिक रखनी चाहिये)। फिर सभी जापक आचमन तथा प्राणायाम करके 'ॐ सूर्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपा। पवमानो दिक्पतिर्भूराकाशं खेचरामराः। ब्रह्मशासनमास्थाय कल्पध्वमिह सन्निधिम्।' ऐसा कहकर प्रार्थना करे। फिर प्रत्येक जापक देश-काल का उच्चारण करके 'ममामुकशर्मणो०' इत्यादि वाक्य के द्वारा सङ्कल्प करे।

फिर पूर्वोक्त पद्धतिकाण्ड में बताई रीति से भूतशुद्धि इत्यादि बलिर्मातृका न्यासान्त कर्मों को करके गायत्रीन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ प्रणवस्य ब्रह्मात्रऋषिः' इत्यादि मन्त्र से विनियोग करके 'ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्र से प्रणवन्यास करे। फिर मूलोक्त 'सप्त व्याहृतीनां जमदग्नि०' इत्यादि कहकर व्याहृति-विनियोग करे। फिर 'ॐ जमदग्नि भारद्वाज०' इत्यादि तीन मन्त्रों से व्याहृतियों के लिये ऋष्यादि न्यास करे।

गायत्री न्यासार्थ विनियोग—फिर 'ॐ गायत्र्या विश्वामित्रः ऋषिः' इत्यादि से गायत्री का विनियोग कर 'ॐ विश्वामित्रऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से गायत्री का ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ शिरसः प्रजापतिः' इत्यादि से प्राणायाम का विनियोग करे। फिर 'ॐ प्रजापतये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। पुनः 'ॐ भूः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर 'ॐ भूः हृदयाय नमः, ॐ भुवः शिरसि स्वाहा, ॐ स्वः शिखायै वषट्, ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं कवचाय हुम्, ॐ भर्गो देवस्य धीमहि नेत्रत्रयाय वौषट् तथा ॐ धियो योनः प्रचोदयात् अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। फिर 'ॐ भूः नमः हृदये' इत्यादि सात मन्त्रों से मूल में निर्दिष्ट अङ्गों में सप्त व्याहृतियों का न्यास करना चाहिये।

अथ गायत्रीवर्णन्यासः—ॐ तत् नमः पादद्वयाङ्गुलिमूलयोः॥ १॥ ॐ सं नमः गुल्फयोः॥ २॥ ॐ विं नमः जानुनोः॥ ३॥ ॐ तुं नमः पादमूलयोः॥ ४॥ ॐ वं नमः लिङ्गे॥ ५॥ ॐ रें नमः नाभौ॥ ६॥ ॐ णिं नमः हृदये॥ ७॥ ॐ यं नमः कण्ठे॥ ८॥ ॐ भं नमः हस्तद्वयाङ्गुलीमूलयोः॥ ९॥ ॐ र्गां नमः मणिबन्धयोः॥ १०॥ ॐ दे नमः कूर्परयोः॥ ११॥ ॐ वं नमः बाहुमूलयोः॥ १२॥ ॐ स्यं नमः आस्ये॥ १३॥ ॐ धीं नमः नासापुटयोः॥ १४॥ ॐ मं नमः कपोलयोः॥ १५॥ ॐ हिं नमः नेत्रयोः॥ १६॥ ॐ धिं नमः कर्णयोः॥ १७॥ ॐ यों नमः भ्रूमध्ये॥ १८॥ ॐ यों नमः मस्तके॥ १९॥ ॐ नं नमः पश्चिमवक्त्रे॥ २०॥ ॐ प्रं नमः उत्तरवक्त्रे॥ २१॥ ॐ चों नमः दक्षिणवक्त्रे॥ २२॥ ॐ दं नमः पूर्ववक्त्रे॥ २३॥ ॐ यात् नमः उर्ध्ववक्त्रे॥ २४॥ इति गायत्र्यक्षरन्यासः। ॐ तत् नमः शिरसि॥ १॥ ॐ सवितुर्नमः भ्रुवोर्मध्ये॥ २॥ ॐ वरेण्यं नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ भर्गो नमः मुखे॥ ४॥ ॐ देवस्य नमः कण्ठे॥ ५॥ ॐ धीमहि नमः हृदये॥ ६॥ ॐ धियो नमः नाभौ॥ ७॥ ॐ यो नमः गुह्ये॥ ८॥ ॐ नः नमः जानुनोः॥ ९॥ ॐ प्रचोदयात् नमः पादयोः॥ १०॥ ॐ आपोज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोमिति शिरसि॥ ११॥ इति पदन्यासः। ततः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं नमः नाभ्यादिपादाङ्गुलीपर्यन्तम्॥ १॥ ॐ भर्गोदेवस्य धीमहि नमः हृदयादि नाभ्यन्तम्॥ २॥ ॐ धियो यो नः प्रचोदयात् नमः मूर्द्धादिहृदयान्तम्॥ ३॥ इति विन्यस्य षडङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ तत्सवितुर्ब्रह्मणे हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ वरेण्यं विष्णवे शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ भर्गोदेवस्य रुद्राय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ धीमहि ईश्वराय कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ धियो यो नः सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ प्रचोदयात् सर्वात्मने अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम्।
सावित्रीं वरदाभयाङ्कुशकशां पाशं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे॥

इति ध्यात्वा ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि॥ १॥ ॐ हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि॥ २॥ ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि॥ ३॥ ॐ रं तेजआत्मकं दीपं समर्पयामि॥ ४॥ ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि॥ ५॥ ॐ सं सर्वात्मकं मन्त्रपुष्पं समर्पयामि॥ ६॥ इति मानसोपचारैः सम्पूज्य (भेदपक्षे) त्रिकोणपीठपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा—पूर्वादिचतुर्दिक्षु मध्ये च ॐ प्रभूताय नमः॥ १॥ ॐ विमलाय नमः॥ २॥ ॐ साराय नमः॥ ३॥ ॐ समाराध्याय नमः॥ ४॥ (मध्ये) ॐ परमसुखाय नमः॥ ५॥ इति सम्पूज्य तद्बहिः ॐ अं अनन्ताय नमः॥ १॥ ॐ पृं पृथिव्यै नमः॥ २॥ ॐ अं अमृतसागराय नमः॥ ३॥ ॐ रं रत्नद्वीपाय नमः॥ ४॥ ॐ हें हेमगिरये नमः॥ ५॥ ॐ नं

नन्दनोद्यानाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ कं कल्पवृक्षेभ्यो नमः ॥ ७ ॥ ॐ मं मणिभूषितभूतलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ सं सोममण्डलाय नमः ॥ ९ ॥ ॐ अं अग्निमण्डलाय नमः ॥ १० ॥ ॐ सूं सूर्यमण्डलाय नमः ॥ ११ ॥ इति पीठदेवताः सम्पूजयेत्। ततः (पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीं प्रकल्प्य) पूर्वादिक्रमेण ॐ रां दीप्तायै नमः ॥ १ ॥ ॐ रीं सूक्ष्मायै नमः ॥ २ ॥ ॐ रूं जयायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ रें भद्रायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ रैं विभूत्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ रों विमलायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ रौं अमोघायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ रं विद्युतायै नमः ॥ ८ ॥ (मध्ये) ॐ रः सर्वतोमुख्यै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः गन्धपुष्पैः पूजयेत्। तन्मध्ये 'ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिना आसनं दत्त्वा तत्र सर्वतोभद्रमध्ये गायत्रीयन्त्रं विलिख्य तदुपरि 'ॐ महीद्यौः' इत्यादिमन्त्रः पूर्णपात्रान्तं पूर्ववत्ताम्रकलशं संस्थाप्य 'तत्त्वायामि' इति वरुणमावाह्य सम्पूज्य कलशस्य मुखे विष्णु इत्याद्यभिमन्त्र्य देवदानवसंवादे इत्यादि प्रार्थयेत्। ततः तदुपरि पट्टवस्त्रे शक्तिगन्धाष्टकेन यन्त्रं विलिख्य तन्मध्ये मूलमन्त्रेण पलस्वर्णमयीं पूर्वोक्तध्यानप्रतिपादितां भगवत्या गायत्र्याः प्रतिमां सावयवां वा त्रिकोणाकारामग्न्युत्तारणपूर्विकां संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा मूलेन तस्यां भगवतीं वेदमातरं श्रीगायत्रीमावाह्य पुरुषसूक्तेन श्रीसूक्तेन पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणार्चनं कुर्य्यात्।

गायत्री वर्णन्यास—फिर 'ॐ तत्सवितुवरेण्यम् नमः' कहकर नाभि से पैर की अङ्गुलियों तक; 'ॐ भर्गो देवस्य धीमहि नमः' से हृदय से लेकर नाभि तक न्यास करे। फिर 'ॐ धियो योनः प्रचोदयात्' इससे शिर से लेकर हृदय-पर्यन्त न्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करके गायत्री का ध्यान मूलोक्त 'मुक्ताविद्रुमहेमनील०' इत्यादि श्लोक से करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—'मोती, मूंगा, स्वर्ण, नीलमणि के समान धवल छायायुक्त मुख वाली, तीन नेत्रों वाली, चन्द्रमा के सहित रत्नों के मुकुट को धारण किये चौबीस अक्षरों वाली सावित्री, जो कि वरदमुद्रा, अभयमुद्रा, अङ्कुश, पाश, कपाल, रस्सी (सूत्र), शङ्ख, चक्र तथा कमल को धारण करने वाली है, उसे भजें।' फिर मूल में लिखित 'ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि' इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य तथा मन्त्रपुष्प समर्पित कर मानसपूजा करे। तदनन्तर मूल में लिखे 'ॐ प्रभूताय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों पूर्वादि चारो दिशाओं तथा मध्य में पूजा करके फिर बाहर 'ॐ अं अनन्ताय नमः' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से पीठदेवताओं की पूजा करे। फिर पूज्य-पूजक के मध्य में प्राची की कल्पना करके पूर्वादि क्रम से मूलोक्त 'ॐ रां दीप्तायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से पीठशक्तियों की पूजा पूर्वादि आठ दिशाओं तथा मध्य में करे। फिर पीठ के मध्य में 'ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नमः' कहकर पुष्पाञ्जलि से आसन देकर फिर सर्वतोभद्र के मध्य में गायत्री यन्त्र लिखकर उसके ऊपर 'ॐ महीद्यौ०' इत्यादि मन्त्र-लिखित ताम्रकलश पूर्णपात्र-सहित स्थापित करके 'तत्त्वायामि०' इत्यादि वैदिक मन्त्र से वरुण का आवाहन कर पूजकर 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर 'देवदानवसंवादे०' इत्यादि मन्त्रों से प्रार्थना करे।

यन्त्र-लेखन—फिर उस कलश के ऊपर पट्टवस्त्र पर गन्धाष्टक से यन्त्र लिखकर उस यन्त्र के मध्य में एक पल भार की स्वर्णमयी गायत्री-प्रतिमा पूर्व में कथित ध्यान के अनुसार स्वरूप वाली बनवाकर अथवा भगवती गायत्री की प्रतिमा त्रिकोणाकार बनवाकर अग्नि उत्तारणपूर्वक संस्थापित करके प्राणप्रतिष्ठा करके मूल मन्त्र से उन वेदमाता का आवाहन करके पुरुषसूक्त तथा श्रीसूक्त से पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूजकर फिर यन्त्र के आवरण की पूजा करे।

तद्यथा—तत्र त्रिकोणस्य पूर्वकोणे ॐ गायत्र्यै नमः ॥ १ ॥ (निर्ऋतिकोणे) ॐ सावित्र्यै नमः ॥ २ ॥ (वायुकोणे) ॐ सरस्वत्यै नमः ॥ २ ॥ (त्रिकोणान्तरालेषु) ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ १ ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ २ ॥ ॐ रुद्राय नमः ॥ ३ ॥ इति

पूजयेत्। ततो मूलेन पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा विशेषार्घाद्विन्दुं निक्षिप्य 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति प्रथमावरणम्॥ १॥

ततोऽष्टदले पूर्वादिचतुर्दिक्षु ॐ आदित्याय नमः॥ १॥ ॐ भानवे नमः॥ २॥ ॐ भास्कराय नमः॥ ३॥ ॐ रवये नमः॥ ४॥ (आग्नेयादिकेसरेषु) ॐ उषायै नमः॥ १॥ ॐ प्रज्ञायै नमः॥ २॥ ॐ प्रभायै नमः॥ ३॥ ॐ सन्ध्यायै नमः॥ ४॥ इति पूजयेत्। ततो मूलमुच्चरन् 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इत्यादिना पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति द्वितीयावरणम्॥ २॥

ततः षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ ब्रह्मणे हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ विष्णवे शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ रुद्राय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ईश्वराय कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ सर्वात्मने नमः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति तृतीयावरणम्॥ ३॥

ततो वर्तुले प्राचीक्रमेण ॐ प्रह्लादिन्यै नमः॥ १॥ ॐ प्रभायै नमः॥ २॥ ॐ नित्यायै नमः॥ ३॥ ॐ विश्वम्भरायै नमः॥ ४॥ ॐ विशालिन्यै नमः॥ ५॥ ॐ प्रभावत्यै नमः॥ ६॥ ॐ जयायै नमः॥ ७॥ ॐ शान्त्यै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजतास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति चतुर्थावरणम्॥ ४॥

तद्बाह्ये वर्तुले प्राचीक्रमेण ॐ कान्त्यै नमः॥ १॥ ॐ दुर्गायै नमः॥ २॥ ॐ सरस्वत्यै नमः॥ ३॥ ॐ विश्वरूपाय नमः॥ ४॥ ॐ विशालायै नमः॥ ५॥ ॐ ईशायै नमः॥ ६॥ ॐ चापिन्यै नमः॥ ७॥ ॐ विमलायै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति पञ्चमावरणम्॥ ५॥

तद्बाह्येऽष्टदलमूले पूर्वादिक्रमेण ॐ अपहारिण्यै नमः॥ १॥ ॐ सूक्ष्मायै नमः॥ २॥ ॐ विश्वयोन्यै नमः॥ ३॥ ॐ जयावहायै नमः॥ ४॥ ॐ पद्मालयायै नमः॥ ५॥ ॐ परायै नमः॥ ६॥ ॐ शोभायै नमः॥ ७॥ ॐ पद्मरूपायै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति षष्ठावरणम्॥ ६॥

ततोऽष्टदलमध्ये पूर्वादिक्रमेण ॐ आं ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ ईं माहेश्वर्य्यै नमः॥ २॥ ॐ ऊं कौमार्यै नमः॥ ३॥ ॐ ऋं वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ लृं वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ ऐं इन्द्राण्यै नमः॥ ६॥ ॐ ओं चामुण्डायै नमः॥ ७॥ ॐ अः महालक्ष्म्यै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति सप्तमावरणम्॥ ७॥

ततो दलाग्रेषु ॐ सों सोमाय नमः॥ १॥ ॐ भौं भौमाय नमः॥ २॥ ॐ बुं बुधाय नमः॥ ३॥ ॐ बृं बृहस्पतये नमः॥ ४॥ ॐ शुं शुक्राय नमः॥ ५॥ ॐ शं शनैश्चराय नमः॥ ६॥ ॐ रां राहवे नमः॥ ७॥ ॐ कें केतवे नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततो पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इत्यष्टमावरणम्॥ ८॥

ततो भूपुरे पूर्वादिदशदिक्षु ॐ लं इन्द्राय नमः॥ १॥ ॐ रं अग्नये नमः॥ २॥ ॐ मं यमाय नमः॥ ३॥ ॐ क्षं निर्ऋतये नमः॥ ४॥ ॐ वं वरुणाय नमः॥ ५॥ ॐ यं वायवे नमः॥ ६॥ ॐ सं सोमाय नमः॥ ७॥ ॐ ईं ईशानाय नमः॥ ८॥ (ईशानपूर्वयोर्मध्ये) ॐ आं ब्रह्मणे नमः॥ ९॥ (निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये) ॐ अं अनन्ताय नमः॥ १०॥ इति पूजयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति नवमावरणम्॥ ९॥

तद्बहिस्तत्तत्समीपे—ॐ वं वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शं शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दं दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खं खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पं पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अं अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गं गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिं त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पं पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चं चक्राय नमः ॥ १० ॥ इति पूजयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि०' इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' इति वदेत्। इति दशमावरणम् ॥ १० ॥

इत्थमावरणैर्देवी दशभिः परिपूजयेत्। धर्मार्थकाममोक्षाणां भोक्ता स्याद्द्विजसत्तमः ॥

इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तं सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा शापविमोचनं पठित्वा यथाविधि जपं कुर्यात्।

आवरण-पूजा—त्रिकोण के पूर्वादि कोणों में मूलोक्त 'ॐ गायत्र्यै नमः' इत्यादि तीन मन्त्रों से पूजा कर उन तीनों के अन्तरालों (तीनों भुजाओं) में 'ॐ ब्रह्मणे नमः' इत्यादि तीन मन्त्रों से क्रमशः ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र की पूजा करे। फिर मूल गायत्री मन्त्र पढ़कर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्' कहकर पुष्पाञ्जलि देकर विशेष अर्घ्य से विन्दु का निक्षेप कर 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' ऐसा कहे। द्वितीयावरण की पूजा यन्त्र में बने अष्टदल पर पूर्वादि चार दिशाओं में 'ॐ आदित्याय नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से पूजन कर उसके आग्नेयादि केसरों तथा मध्य में 'ॐ उषायै नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पूजा करे; गायत्री मन्त्र का उच्चारण करके 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम् ॥' श्लोक बोलकर पुष्पाञ्जलि दे। तृतीयावरण की पूजा षट्कोण में आग्नेयादि केसरों तथा मध्य के साथ दिशाओं में मूलोक्त 'ॐ ब्रह्मणे हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करने के उपरान्त 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम्' कहकर 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' ऐसा कहे। पुष्पाञ्जलि दे। सन्तर्पण करे।

चतुर्थावरण की पूजा वर्तुल में प्राचीक्रम से 'ॐ प्रह्लादिन्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से करने के उपरान्त 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम्' कहकर पुष्पाञ्जलि देकर 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' ऐसा कहे। यह चतुर्थावरण का पूजन हुआ। पञ्चमावरण की पूजा उस वर्तुल के बाहरी वर्तुल में प्राचीक्रम से 'ॐ कान्त्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से करके पुष्पाञ्जलि लेकर गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम्' कहें तथा पीछे से 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' भी कहे। षष्ठावरण की पूजा उसके बाहर अष्टदल में प्राचीक्रम से 'अपहारिण्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से करने के उपरान्त पुष्पाञ्जलि लेकर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं षष्ठावरणार्चनम्' 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर अर्घ्य के छींटों से तर्पण करे। सप्तमावरण की पूजा में अष्टदलों के मध्य में प्राची आदि क्रम से 'ॐ आं ब्राह्म्यै नमः' आदि मूलोक्त आठ मन्त्रों से पूजा करे तथा 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं सप्तमावरणार्चनम्' कहकर पुष्पाञ्जलि दे। फिर 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर अर्घ्यविन्दु से आवरण देवताओं का तर्पण करना चाहिये। अष्टमावरण की पूजा में दलाग्रों में 'ॐ सों सोमाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा कर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं अष्टमावरणार्चनम्' कहकर पुष्पाञ्जलि देकर फिर अर्घ्यविन्दु से 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर तर्पण करे। नवाँ आवरण भूपुर है; अतः भूपुर में पूर्वादि दिशाओं में कोणों सहित मूलोक्त 'ॐ लं इन्द्राय नमः' इत्यादि मन्त्रों से प्रदक्षिणक्रम से पूजा करके फिर ईशान एवं पूर्व के मध्य में 'ॐ आं ब्रह्मणे नमः' तथा नैर्ऋत्य एवं पश्चिम के मध्य में 'ॐ अं अनन्ताय नमः' कहकर दश दिक्पालों की पूजा करे। फिर पुष्पाञ्जलि लेकर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं नवमावरणार्चनम्' कहकर 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर अर्घ्यविन्दु से तर्पण करे। फिर नवमावरण

के बाहर उन्हीं पूर्वादि दश दिशाओं में 'ॐ वं वज्राय नमः' इत्यादि मूलोक्त दश मन्त्रों से दिक्पालों के शस्त्रों का पूजन करने के बाद पुष्पाञ्जलि लेकर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं दशमावरणार्चनम्॥' कहे। फिर अर्घ्यविन्दु से 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहकर तर्पण करे। इस प्रकार दशों आवरणों की पूजा करनी चाहिये तथा हे द्विजश्रेष्ठ! इससे धर्मार्थकाममोक्ष चारो पुरुषार्थ मिलते हैं। फिर धूपादि नीराजनान्त पूजा करके गायत्री स्तोत्र से स्तवन कर शापविमोचन कर यथाविधि जप करना चाहिये।

तत्र मन्त्रः—'ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्' इति वैदिको मन्त्रः। सर्वेषां समान एव जपो न तु न्यूनाधिकः। (उत्तमजपो द्विसाहस्त्रः मध्यमः सार्द्धद्विसाहस्त्रः अधमस्त्रिसाहस्त्रो ज्ञेयः। अस्य पुरश्चरणं चतुर्विंशतिलक्षजपः)। ततो जपान्ते पूर्वोक्तऋष्यादिन्यासं हृदयादिषडङ्गन्यासं च कृत्वा कवचं पठेयुः। ततो देवीं पुनः पञ्चोपचारैः सम्पूज्य नीराजनं कृत्वा पुष्पाञ्जलिं च दत्त्वा देव्या दक्षिणकरे जपसमर्पणं कुर्युः। ततः सर्वे जापकाः भूमौ शयानाः हविष्यान्नमश्नन्तो ब्रह्मचर्यास्पृश्यास्पर्शादिनियमांश्चरेयुः प्रत्यहम् 'ॐ यज्जाग्रतो' इति शिवसङ्कल्पं त्रिः पठेयुः। ततः पुरश्चरणजपसमाप्तौ होमः।

गायत्री मन्त्र—'ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्' यह वैदिक मन्त्र है। इसका चौबीस लाख जप करने से पुरश्चरण सम्पन्न होता है। सभी जापकों को प्रतिदिन समान संख्या में जप करना चाहिये। न्यूनाधिक जप नहीं करना चाहिये। प्रत्येक ब्राह्मण प्रतिदिन दो सहस्त्र जप करे तो उत्तम है। ढाई सहस्त्र जप मध्यम है तथा तीन सहस्त्र जप अधम होता है। इससे अधिक जप प्रतिदिन प्रतिजापक को नहीं करना चाहिये। प्रतिदिन जपसमाप्ति पर पूर्वोक्त ऋष्यादि न्यास तथा हृदयादि षडङ्ग न्यास करके गायत्री कवच का पाठ करना चाहिये। पुनः पञ्चोपचार से गायत्री देवी की पूजा करके नीराजन तथा पुष्पाञ्जलि देकर देवी के दक्षिण कर में जप का समर्पण करना चाहिये। फिर सभी जापकों को भूमि पर शयन करते हुए, हविष्यान्न भोजन करते हुए, ब्रह्मचर्य तथा स्पृश्य-अस्पृश्य के नियमों का पालन करते हुए प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओं में 'शिवसङ्कल्प सूक्त' पढ़ना चाहिये। पुरश्चरण जप की समाप्ति पर होम करना चाहिये।

तद्यथा—देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अद्य पुरश्चरणसाङ्गतासिद्ध्यर्थं होमविधिं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणपति-पूजनादिनान्दीश्राद्धान्तं पूर्ववत् कुर्यात्। ततः कुण्डे स्थण्डिले वा स्वगृह्योक्तविधिना पञ्चभूसंस्कारपूर्वकमग्निं प्रतिष्ठाप्य ग्रहपीठे सूर्यादिनवग्रहमण्डलदेवानावाह्य सम्पूज्य तदीशान्यां रुद्रकलशं स्थापयेत्। ततो मध्यपीठे सर्वतोभद्रमण्डले ताम्रकलशोपरि स्वर्णप्रतिमायां भगवन्तं सवितारं गायत्रीं च षोडशोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्तावरणदेवतापूजां विधाय गीतवादिभिः सह महानीराजनं कृत्वा सप्त प्रदक्षिणाश्च कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणमेत्। ततः कुशकण्डिकां सम्पाद्य आघारावाज्य-भागौ हुत्वा 'ॐ इदं हवनीयद्रव्यमन्वाधानोक्तदेवताभ्योऽस्तु न मम' इति यजमानो द्रव्यत्यागं कुर्य्यात्। ततः सूर्यादिग्रहेभ्यः अर्कादिसमिच्चर्वाज्यतिलाहुतिभिः प्रत्येकमष्टाविंशतिरष्टौ वा हुत्वा तैरेव द्रव्यैरधिप्रत्यधिदेवताभ्यश्चतुश्चतुः सङ्ख्याकाभिः पञ्चलोकपालदशदिक्पालेभ्यश्च द्विद्विसङ्ख्याकाभिश्च जुहुयात्। ततो बहुजपकर्तृकपक्षे जपदशांशेन पायसादि होमः कार्यः। तथा च देवीभागवते—

जुहुयात्तद्दशांशेन सघृतेन पयोऽन्धसा। तिलैः पत्रैः प्रसूनैश्च यवैश्च मधुरान्वितैः॥

एकजपकर्तृकपक्षे तु शतांशहोमः कार्यः। तथा च शारदातिलके—

तत्त्वसङ्ख्यासहस्त्राणि मन्त्रविज्जुहुयात्तिलैः। सर्वपापविनर्मुक्तो दीर्घमायुः स विन्दति॥

श्रीगायत्रीपूजायन्त्रम्
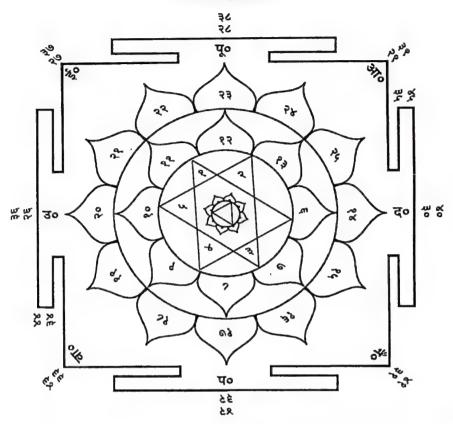
होम विधि—देश-कालोच्चारण करके 'अद्य पुरश्चरणसाङ्गतासिद्ध्यर्थं होमविधिं करिष्ये' कहकर सङ्कल्प करे तथा पूर्व में वर्णित विधि से गणपति-पूजनादि नान्दीश्राद्धान्त कर्म करना चाहिये। फिर कुण्ड में अथवा स्थण्डिल पर अपने गृह्यसूत्र की विधि से पञ्चभूसंस्कारपूर्वक अग्नि को प्रतिष्ठित करके नवग्रह पीठ पर सूर्यादि नवग्रह मण्डल के देवों (अधिदेव तथा प्रत्यधिदेवों सहित) आवाहन करके उनकी पूजा करे। फिर उनके ईशान में रुद्रकलश स्थापित करे। फिर मध्य में रखे सर्वतोभद्र पीठ पर ताम्रकलश के ऊपर भगवान् सविता की स्वर्णप्रतिमा तथा गायत्री का षोडशोपचारों से पूज कर गायत्री पीठ के पूर्वोक्त आवरणदेवताओं की पूजा करे। गीत-वादित्र के साथ महानीराजन करके सात प्रदक्षिणाएँ करके साष्टाङ्ग प्रणाम करे। फिर कुशकण्डिका को सम्पादित कर आघाराहुति आज्यभागाहुति करके 'ॐ इदं हवनीयद्रव्यमन्वाधानोक्तदेवताभ्योऽस्तु न मम' ऐसा कहकर यजमान (साधक) द्रव्यत्याग करे। फिर सूर्यादि नवग्रहों के लिये अर्कादि समिधाओं, चरु, आज्य, तिल की आहुतियाँ प्रत्येक के लिये एक सौ आठ होम करके अथवा उन्हीं द्रव्यों से अधिदेवता, प्रत्यधिदेवताओं के लिये चार-चार आहुतियाँ, पञ्चलोकपालों, दशदिक्पालों के लिये दो-दो आहुतियाँ (प्रत्येक के लिये) समर्पित करे। फिर बहुत जापक होने पर जपसंख्या का दशांश (दो लाख चौबीस सहस्र) पायसादि होम भी करना चाहिये। यह होम गायत्री मन्त्र से होता है।

देवीभागवत में कहा है कि जप के दशांश में सघृत पायस, हविष्यान्न, तिल, पत्र, प्रसून तथा मधुरान्वित यवों से हवन करना चाहिये। एक जापककर्तृपक्ष में जपसंख्या का शतांश (चौबीस सहस्र) हवन करना चाहिये।

शारदातिलक के अनुसार मन्त्रवेत्ता को चौबीस सहस्र होम तिलाहुति से देनी चाहिये । ऐसा करने से वह सभी पापों से मुक्त होकर दीर्घायु को प्राप्त करता है।

शतांशहोमप्रकारः

प्रधानदेवसवित्रे चतुर्विंशतिसहस्रतिलाहुतिभिस्त्रिसहस्रपायसाहुतिभिस्तावतीभिर्घृताहुतिभिर्दूर्वाहुतिभिस्तावतीभिः क्षीरद्रुमसमिधाहुतिभिश्च हुत्वा पूर्वोक्तावरणदेवताभ्यश्चर्वादिद्रव्यैरेकैकाहुतीर्दत्वा शेषेण स्विष्टकृद्धोमं च कृत्वा समापयेत्। होमकाले 'इदं सवित्रे न मम' इति त्यागः।(होमे सप्रणवा व्याहृतिरहिता स्वाहान्ता गायत्रीं दूर्वात्रयस्यैकाहुतिः। दूर्वासमिधां दधिमध्वाज्याक्तानां होमः)। ततो होमान्ते बलिदानम्। यजमानस्याभिषेकश्च कार्य्यः। अभिषेकान्ते तत्समये एव दक्षिणां दद्यात्। अदाने प्रत्यवायी भवति। क्षणे-क्षणे पापभागी भवति। दक्षिणा च प्रतिलक्षं सुवर्णनिष्कत्रयं तदर्धं वा शक्त्या देया। ततो जले सवितारं रक्तचन्दनादिभिः सम्पूज्य होमदशांशेन मूल मन्त्रान्ते 'सवितारं तर्पयामि' इत्युक्त्वा दुग्धमिश्रजलेन तर्पणं कार्य्यम्। ततस्तर्पणदशांशेन गायत्र्यन्ते 'आत्मानमभिषिञ्चामि न मम' इति यजमानमूर्ध्न्यभिषेकः कार्यः। ततः अभिषेक-दशांशसङ्ख्ययाधिकं वा ब्राह्मणभोजनम्।(होमतर्पणाभिषेकानां मध्ये यदेवं न सम्भवति तत्स्थाने तद्‌द्विगुणो जपः कार्य्यः। ततो भूयसी दक्षिणां विप्राशीर्वादश्च। ततः कृताञ्जलिपुटः। 'ॐ चतुर्विंशति लक्षात्मकगायत्रीपुरश्चरणं सम्पूर्णमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्त्विति' विप्रान् प्रार्थ्य ते च—ॐ गायत्रीपुरश्चरणं सम्पूर्णमस्त्विति ब्रूयुः। इति प्रतिवचनानन्तरं कर्म्मपूर्तिकामो विष्णुं स्मरेत्। एवं कृते सर्वपापक्षयो भवति दीर्घायुश्च विन्दति)।

शतांश होमप्रकार कथन—(यहाँ पर गायत्री-पुरश्चरण के लिये शारदातिलकोक्त शतांश होम = चौबीस सहस्र आहुति होम कैसे करे—यह बताया जा रहा है) प्रधानदेव सविता के लिये चौबीस सहस्र आहुतियाँ तिल से तथा तीन सहस्र पायस से, तीन सहस्र घृताहुति, तीन सहस्र दूर्वा की आहुतियों का होम क्षीरीवृक्षों की समिधाओं से करके पूर्वोक्त आवरणदेवताओं के लिये चरु आदि द्रव्यों से एक-एक आहुति देकर शेष से स्विष्टकृद् होम करके होम पूरा करे। होमकाल में 'इति सवित्रे न मम' कहकर त्याग करे (होम में प्रणवसहित, व्याहृतिरहित स्वाहान्त गायत्री की तीन दूर्वा से, एक आहुति दूर्वा की समिधा को दधि, मधु, घृत से आप्लुत करके दे)। फिर होमान्त में बलिदान करे। यजमान का अभिषेक भी करना चाहिये। अभिषेक के अन्त में तत्काल दक्षिणा भी देनी चाहिये। यदि यजमान होम की समाप्ति पर आचार्यादि को तत्काल दक्षिणा नहीं देता है तो प्रत्यवाय (विपरीत परिणाम) होता है। क्षण-क्षण पर वह पापभागी होता है। प्रति एक लाख जप पर तीन निष्क अथवा डेढ़ निष्क अथवा शक्ति के अनुसार दक्षिणा देनी चाहिये। फिर सविता का रक्तचन्दन आदि से पूजन कर होम का दशांश गायत्री मन्त्र के अन्त में 'सवितारं तर्पयामि' जोड़कर दुग्धमिश्रित जल से तर्पण करना चाहिये। फिर उस तर्पण का दशमांश गायत्री मन्त्र के अन्त में 'आत्मानमभिषिञ्चामि न मम' कहकर यजमान के शिर पर (मूर्धाभिषेक) अभिषेक करना चाहिये। अभिषेक की दशांश संख्या में ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। (होम, तर्पण तथा अभिषेक में जो कर्म सम्भव न हो, उसके स्थान पर उस संख्या से द्विगुण जप करना चाहिये। फिर भूयसी दक्षिणा दे तथा ब्राह्मणों का आशीर्वाद प्राप्त करे। फिर हाथ जोड़कर 'चौबीस लाख गायत्री पुरश्चरण पूर्ण हो' ऐसा आप लोग कहें—यह वचन ब्राह्मणों से कहे तब ब्राह्मण 'गायत्रीपुरश्चरणं सम्पूर्णमस्तु' ऐसा प्रतिवचन कहें। इस प्रतिवचन के उपरान्त कर्म-पूर्तिहेतु विष्णु का स्मरण करे। ऐसा करने से सभी पापों का नाश हो जाता है)।

गायत्रीपुरश्चरणफलम्

शारदातिलके—

व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं दीक्षितो यजेत्। तत्त्वलक्षविधानेन भिक्षाशी विजितेन्द्रियः॥

क्षीरौदनतिलान् दूर्वाक्षीरद्रुमसमिद्वरान्। पृथक्सहस्त्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये॥
तत्त्वसङ्ख्यासहस्राणि मन्त्रविज्जुहुयात्तिलैः। सर्वपापविनिर्मुक्तो दीर्घमायुः स विन्दति॥
आयुषे साज्यहविषा केवलेनापि सर्पिषा। दूर्वात्रिकैस्तिलैर्मन्त्री जुहुयात्त्रिसहस्रकम्॥
अरुणाब्जैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयादयुतं ततः। महालक्ष्मीर्भवेत्तस्य षण्मासान्नात्र संशयः॥
ब्रह्मश्रिये प्रजुहुयात्प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः। बहुना किमिहोक्तेन यथावत्साधु साधिता॥
द्विजन्मनामियं विद्या सिद्धा कामदुघा मता॥

गायत्रीपुरश्चरण का फल—शारदातिलक में कहा गया है कि तीन व्याहृतियों से युक्त गायत्री मन्त्र की दीक्षा लेकर चौबीस लाख मन्त्रों का जप विधानपूर्वक करे। जितेन्द्रिय होकर क्षीरौदन, तिल, दूर्वा तथा क्षीरीवृक्षों की श्रेष्ठ समिधाएँ लेकर अलग-अलग तीन-तीन सहस्र आज्यसहित हवि से मन्त्रसिद्धि के लिये होम करना चाहिये। ऐसा करने से वह सर्वपाप-विनिर्मुक्त होकर दीर्घायु को प्राप्त होता है। आयुष्य-प्राप्तिहेतु घृत एवं हविष से अथवा केवल घृत से तीन दूर्वा तथा तिलों से तीन सहस्र हवन करना चाहिये। लाल कमलों को मधु में आप्लुत कर दस लाख की संख्या में हवन करे तो उसको छः मास में महालक्ष्मी की प्राप्ति हो जाती है। ब्रह्मश्री की प्राप्ति के लिये पलाशवृक्ष के फूलों की आहुति देनी चाहिये। अधिक क्या कहा जाय, विधिपूर्वक ब्राह्मण के द्वारा इसकी साधना होने पर यह विद्या साधक के लिये कामधेनु के समान फलप्रद होती है।

गायत्रीपटले—

आदित्यस्योदये स्नात्वा सहस्रं प्रत्यहं जपेत्। आयुरारोग्यमैश्वर्यं धनं च लभते ध्रुवम्॥
त्रिरात्रोपोषितः सम्यग्घृतं हुत्वा सहस्रशः। सहस्रं लाभमाप्नोति हुत्वाग्नौ खादिरेन्धनम्॥
पालाशीभिः समिद्भिश्च घृताक्ताभिर्हुताशने। सहस्रं लाभमाप्नोति राहुसूर्यसमागमे॥
हुत्वा तु खदिरं वह्नौ घृताक्तं रक्तचन्दनम्। हेम्ना सहस्रमाप्नोति राहुचन्द्रसमागमे॥
रक्तचन्दनमिश्रं तु सघृतं हव्यवाहने। हुत्वा गोमयमाप्नोति सहस्रं गोमयं द्विजः॥
जातीचम्पकराजार्ककुसुमानां सहस्रशः। हुत्वा वस्त्रमवाप्नोति घृताक्तानां हुताशने॥
सूर्यमण्डलबिम्बे च हुत्वा तोयं सहस्रशः। सहस्रं प्राप्नुयाद्धेम रौप्यमिन्दुमये हुते॥
अलक्ष्मीपापसंयुक्ते मलव्याधिविनाशने। जाप्यैः सहस्रैर्मुच्येत स्नायाद्यस्तु जलेन वै॥
गोघृतेन सहस्रेण लोध्रेण जुहुयाद्यदि। चौराग्निमारुतोत्थान्यभव्यानि न भवन्ति वै॥
क्षीराहारो जपेल्लक्षमपमृत्युमपोहति। घृताशी प्राप्नुयान्मेधां बहुविज्ञानसञ्चयाम्॥
हुत्वा वेतसपत्राणि घृताक्तानि हुताशने। लक्षाधिपस्य पदवीं सार्वभौमत्वमाप्नुयात्॥

गायत्री पटल के अनुसार हवनविधि—सूर्योदय के समय स्नान करके प्रतिदिन एक सहस्र जप करना चाहिये। इससे आयु-आरोग्य-ऐश्वर्य तथा धन की प्राप्ति निश्चित ही होती है। तीन अहोरात्र उपवास करके सम्यक् रीति से एक सहस्र घृताहुति देकर खदिर की समिधा से होम करने पर साधक सहस्र लाभ प्राप्त करता है। पलाश की घृताक्त समिधाओं का अग्नि में हवन सूर्यग्रहण के समय करने से सहस्र लाभ प्राप्त होता है। रक्तचन्दन तथा घृत को खदिर की समिधाओं की अग्नि में हवन करने से सहस्रों गोधन की प्राप्ति द्विज को होती है। चमेली, चम्पा, राजार्क के फूलों से प्रत्येक की एक सहस्र आहुति घृताक्त कर अग्नि में देने से वस्त्र की प्राप्ति होती है। अञ्जलि से जल की आहुतियाँ सूर्यबिम्ब में एक सहस्र की संख्या में देने से सहस्रों होम प्राप्त होता है। यदि गायत्री

मन्त्र से पूर्ण चन्द्रविम्ब में जल की प्रतिदिन आहुति देना प्रारम्भ कर दे तो सहस्र रौप्य की प्राप्ति होती है। यदि जल में स्नान कर उसी में स्थित रहकर एक सहस्र गायत्री मन्त्र का जप करे तो दरिद्रा, पाप तथा व्याधि का नाश होता है। यदि एक सहस्र आहुति गायत्री मन्त्र द्वारा लोध्र वृक्ष की समिधा से दी जाय तो चौरभय, अग्निभय, वायुभय आदि अभव्य उत्पात नहीं होते हैं। केवल दूध के आहार पर गायत्री मन्त्र का एक लाख जप करने से साधक अपमृत्यु को नष्ट करता है। घृताहार पर निर्भर रहकर एक लाख गायत्री जप करने वाला बहुत ज्ञान-विज्ञान से युक्त मेधा को प्राप्त करता है। यदि सिद्ध किये गये गायत्री मन्त्र से वेतसपत्रों को घृताक्त करके अग्नि में होम किया जाय तो साधक लक्षाधीश की पदवी को प्राप्त होकर सार्वभौमत्व को प्राप्त होता है।

लक्षेण भस्महोमस्य हुत्वा ह्युत्तिष्ठते जलात्। आदित्याभिमुखं स्थित्वा नाभिमात्रजले शुचौ॥
गर्भपातादिप्रदराश्चान्ये स्त्रीणां महारुजः। नाशमेष्यन्ति ते सर्वे मृतवत्सादिदुःखदाः॥
तिलानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने। सर्वकामसमृद्धात्मा परं स्थानमवाप्नुयात्॥
यवानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने। सर्वकामसमृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात्॥
घृतस्याहुतिलक्षेण सर्वान्कामानवाप्नुयात्। पञ्चगव्याशनो लक्षं जपेज्जातिस्मृतिर्भवेत्॥
तदेव ह्यनले हुत्वा प्राप्नोति बहुशो धनम्। अन्नादिहवनान्नित्यमन्नाद्यं च भवेत्सदा॥
जुहुयात्सर्वसाध्यानामाहुत्याऽयुतसङ्ख्यया। रक्तसिद्धार्थकान् हुत्वा सर्वान् साधयते रिपून्॥
लवणं मधुसंयुक्तं हुत्वा सर्ववशी भवेत्। हुत्वा तु करवीराणि रक्तानि ज्वालयेज्ज्वलम्॥
हुत्वा भल्लातकं तैलं देशादेव प्रचालयेत्। हुत्वा तु निम्बपत्राणि विद्वेषशान्तये नृणाम्॥
रक्तानां तण्डुलानां च घृताक्तानां हुताशने। हुत्वा बलमवाप्नोति शत्रुभिर्न स जीयते॥
ब्रह्मचारी जिताहारो यः सहस्रत्रयं जपेत्। संवत्सरेण लभते धनैश्वर्यं न संशयः॥

भस्म (वायबिडङ्ग) का होम करके जल में एक लाख जप करने के पश्चात् यह हवन यदि सूर्याभिमुख होकर किया जाय तो स्त्रियों के गर्भपात, प्रदर आदि महारोग नष्ट होते हैं (हवन के पास रोगपीड़िता को बिठाना चाहिये)। यदि अग्नि में घृताक्त तिलों से एक लाख होम किया जाय तो साधक की सभी कामनाएँ पूरी होती हैं तथा समृद्धि प्राप्त होती है, उसे ऊँचा पद प्राप्त होता है। यदि यवों को घृताक्त करके एक लाख आहुतियाँ अग्नि में दी जायँ तो उसके सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं तथा उसे समस्त सम्पत्ति प्राप्त होती है। एक लाख आहुति घी से देने पर सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। जो केवल पञ्चगव्य का भोजन करते हुए एक लाख जप करता है, उसे अपने पूर्वजन्म की स्मृति हो जाती है। यदि पञ्चगव्य से ही अग्नि में होम किया जाय तो उसे बहुत धन प्राप्त होता है। नित्य ही गायत्री मन्त्र से अन्नादि का हवन करने से नित्य अन्न की प्राप्ति होती है। जितने साध्य शत्रु हों, उनमें से प्रत्येक के लिये सिद्ध मन्त्र की अयुत संख्या (दस सहस्र) में आहुति लाल सरसों की देने से वे सभी शत्रु वश में हो जाते हैं। यदि लवण एवं मधु की आहुति दी जाय तो सर्ववशीकरण होता है। यदि लाल कनेर के पुष्पों से हवन किया जाय तो शत्रुओं का रक्त जल जाता है। यदि भिलावे के तेल से आहुति दी जाय तो शत्रु को देश से निकलना पड़ता है। नीम के पत्तों से गायत्री मन्त्र से हवन करने से मनुष्यों में परस्पर विद्वेष शान्त हो जाता है। घृताक्त लाल चावलों से अग्नि में हवन करने पर साधक को बल की प्राप्ति होती है तथा शत्रु का भय नहीं रहता है। जो ब्रह्मचारी, जिताहारी रहकर तीन सहस्र गायत्री मन्त्र का जप करता है, उसे एक वर्ष के भीतर धन की प्राप्ति होती है।

शमीबिल्वपलाशानामर्कस्य तु विशेषतः। पुष्पाणां समिधश्चैव हुत्वा हेम ह्यवाप्नुयात्॥
आब्रह्मत्र्यम्बकादीनां यस्यायतनमाश्रितः। जपेल्लक्षं निराहारो स तस्य वरदो भवेत्॥

बिल्वानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने। परां श्रियमवाप्नोति यदि न भ्रूणहा भवेत्॥
पद्मानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने। प्राप्नोति राज्यमखिलं सुसम्पन्नमकण्टकम्॥
पञ्चविंशतिलक्षेण दधि क्षीरं हुताशने। स्वदेहे सिद्ध्यते जन्तुः कौशिकस्य मतं तथा॥
एकाहं पञ्चगव्याशी एकाहं मारुताशनः। एकाहं च द्विजोन्नाशी गायत्रीजप उच्यते॥
महारोगा विनश्यन्ति लक्षजप्यानुभावतः। स्नात्वा शतेन गायत्र्याः शतमन्तर्जले जपेत्।
शतेन यस्त्वपः पीत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
गोघ्नः पितृघ्नमातृघ्नौ ब्रह्महा गुरुतल्पगः। स्वर्णहारी तैलहारी यस्तु विप्रः सुरां पिबेत्॥
चन्दनद्वयसंयुक्तं कर्पूरं तण्डुलं यवम्। लवङ्गं सुफलं चाज्यं सिता चाम्रस्य दारुकैः॥
अयं न्यूनविधिः प्रोक्तो गायत्र्याः प्रीतिकारकः। एवं कृते महासौख्यं प्राप्नोति साधको ध्रुवम्॥
अन्नाज्यभोजनं हुत्वा कृत्वा वा कर्म गर्हितम्। न सीदेत्प्रतिगृह्णानो महीमपि ससागराम्॥
ये चास्य उत्थिता लोके ग्रहाः सूर्यादयो भुवि। ते यान्ति सौम्यतां सर्वे शिवे इति न संशयः॥

इति गायत्रीपुरश्चरणं समाप्तम्।

शमीवृक्ष (छेंकुर), पलाश (टेसू) अथवा विशेषकर आक के पुष्पों तथा समिधाओं से हवन करने पर स्वर्ण की प्राप्ति होती है। ब्रह्मा, विष्णु या रुद्र में से जिसके भी मन्दिर में बैठकर गायत्री का एक लाख जप निराहार रहकर किया जाय, वह उसके लिये वरदान देने वाला देव बन जाता है। गायत्री मन्त्र से अग्नि में घृताक्त बेलफलों से एक लाख होम किया जाय, तो यदि वह भ्रूणहा (सन्ततिहीन) न हो तो उसे परासम्पत्ति प्राप्त होती है। कमलों से एक लाख गायत्री होम घृताक्त करके करने पर सुसम्पन्न एवं अकण्टक पूर्णाधिकारयुक्त राज्य (अधिकार) प्राप्त होता है। यदि सिद्ध गायत्री मन्त्र से पच्चीस लाख हवन दधि एवं क्षीर के द्वारा किया जाय तो उस साधक को देहसिद्धि प्राप्त हो जाती है, यह कौशिक का मत है। एक दिन पञ्चगव्य का आहार करके तथा एक दिन केवल वायु का आहार करे, एक दिन ब्राह्मण का अन्न खाये तथा गायत्री मन्त्र का जप करे तो ऐसे एक लाख जप से साधक के बड़े-बड़े कठिन रोग नष्ट हो जाते हैं। एक सौ बार गायत्री मन्त्र से जल में स्नान कर फिर जल में ही स्थित होकर तथा एक सौ बार मन्त्रोच्चार के साथ जलमात्र पीकर जो गायत्री का जप करता है, वह सभी पापों से मुक्त हो जाता है। गोहत्यारा, पितृहत्यारा, मातृहत्यारा, ब्रह्महत्यारा, गुरुपत्नीगमन करने वाला, स्वर्णहारी, तैलहारी व्यक्ति तथा सुरापायी ब्राह्मण—ये सब पूर्वोक्त विधि से जल में गायत्री जप करके फिर श्वेत चन्दन, लाल चन्दन, कर्पूर, चावल, यव, लौंग, अनार, घृत, शर्करा का हवन आम्र की समिधा के साथ करने से पापयुक्त हो जाते हैं। यह संक्षिप्त विधि बताई गई है, जो गायत्री के लिये प्रीतिकारक है। ऐसा करने से साधक को निश्चित ही महासौख्य प्राप्त होता है। अन्नाज्य का भोजन बनाकर उसका होम करने से तथा गर्हित कर्म करने से, प्रतिग्रहग्रहण करने से भी ब्राह्मण दुःख को प्राप्त नहीं होता है। जो भी सूर्यादि ग्रह हैं, वे भी उस (गायत्री जपकर्ता) विप्र के लिये सौम्य तथा शिव हो जाते हैं।

गायत्रीकवचम्

अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः। ऋग्यजुःसामाथर्वाणि च्छन्दांसि। परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवता। भूः बीजम्। भुवः शक्तिः। स्वः कीलकम्। श्रीगायत्रीप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

वर्णास्त्रां कुण्डिकाहस्तां शुद्धनिर्मलज्योतिषीम्। सर्वतत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम्॥ १॥

अथ ध्यानम्—

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशां शूलं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे॥ १॥

गायत्रीकवच—इस गायत्रीकवचस्तोत्र का पाठ जप के पूर्व करना चाहिये। सर्वप्रथम मूल में लिखित 'अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य०' इत्यादि मन्त्र से विनियोग कर 'वर्णास्त्रां कुण्डिकाहस्तां०' इत्यादि श्लोक से गायत्री की वन्दना करनी चाहिये। फिर 'मुक्ताविद्रुम०' इत्यादि से ध्यान करने के उपरान्त 'ॐ गायत्री पूर्वतः पातु०' इत्यादि श्लोक से आरम्भ कर पच्चीस श्लोकों वाले गायत्री कवच का पाठ करना चाहिये।

ॐ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे। ब्रह्मविद्या च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती॥ १॥
पावकीं मे दिशं रक्षेत्पावकोज्ज्वलशालिनी। यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधानगणार्दिनी॥ २॥
पावमानीं दिशं रक्षेत्पवमानविलासिनी। दिशं रौद्रीमवतु मे रुद्राणी रुद्ररूपिणी॥ ३॥
ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा। एवं दशदिशो रक्षेत्सर्वतो भुवनेश्वरी॥ ४॥
ब्रह्मास्त्रस्मरणादेव वाचां सिद्धिः प्रजायते। ब्रह्मदण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रास्त्रभक्षकः॥ ५॥
ब्रह्मशीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वधकारकः। सप्त व्याहृतयः पान्तु स सदाबिन्दुसंयुताः॥ ६॥
वेदमाता च मां पातु सरहस्या सदैवता। देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षरदेवता॥ ७॥
चतुःषष्टिकला विद्या दिव्याद्या पातु देवता। बीजशक्तिश्च मे पातु पातु विक्रमदेवता॥ ८॥

ॐ गायत्री पूर्व की ओर से रक्षा करें। सावित्री दक्षिण में रक्षा करें। ब्रह्मविद्या पश्चिम में मेरी रक्षा करें तथा सरस्वती उत्तर में मुझे रक्षित करे। पावक उज्ज्वलशालिनी पावकी दिशा (अग्निकोण) में मेरी रक्षा करें। यातुधानी दिशा (नैर्ऋत्य कोण) में यातुधानगणार्दिनी मेरी रक्षा करें। वायव्य दिशा में पवमान विलासिनी मेरी रक्षा करें। ईशान दिशा में रुद्ररूपिणी रुद्राणी मेरी रक्षा करें। ऊर्ध्व दिशा की रक्षा ब्रह्माणी करे। अधोदिशा की रक्षा वैष्णवी करे। इस प्रकार भुवनेश्वरी मेरी रक्षा दशों दिशाओं से करे। ब्रह्मास्त्र के स्मरण से ही वाचासिद्धि उत्पन्न हो जाती है। सर्वशस्त्रार्थ का भक्षक ब्रह्मदण्ड मेरी रक्षा करें। शत्रुओं का वधकारक ब्रह्मशीर्ष मेरी रक्षा करें। विन्दुसंयुक्त सप्त व्याहृतियाँ मेरी रक्षा करें। सरहस्य, सदेवता वेदमाता मेरी रक्षा करें। सहस्राक्षर देवता देवीसूक्त सदैव मेरी रक्षा करें। चौंसठ कला, दिव्यादि विद्या-विद्याओं के देवता मेरी रक्षा करें। बीजशक्ति तथा विक्रम देवता मेरी रक्षा करें॥ १-८॥

तत्पदं पातु मे पादौ जङ्घे मे सवितुः पदम्। वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च॥ ९॥
देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा। धियो मे पातु जिह्वायां यः पदं पातु लोचने॥ १०॥
ललाटे नः पदं पातु मूर्द्धानं मे प्रचोदयात्। तद्वर्णः पातु मूर्द्धानं सकारः पातु भालकम्॥ ११॥
चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तु कारकः। नासापुटे वकारो मे रेकारस्तु कपोलयोः॥ १२॥
णिकारस्तूर्ध्व ओष्ठे च यकारस्त्वधरोष्ठके। आस्यमध्ये भकारस्तु गौङ्कारस्तु कपोलयोः॥ १३॥
देकारः कण्ठदेशे च वकारः स्कन्धदेशयोः। स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो वामहस्तकम्॥ १४॥
मकारो हृदयं रक्षेद्धिकारो जठरं तथा। धिकारो नाभिदेशं तु योकारस्तु कटिद्वयम्॥ १५॥
गुह्यं रक्षतु योकार ऊरू मे नः पदाक्षरम्। प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जङ्घदेशयोः॥ १६॥
दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारः पादयुग्मकम्। जातवेदेति गायत्री त्र्यम्बकेति दशाक्षरा॥ १७॥
सर्वतः सर्वदा पातु आपोज्योतीतिषोडशी।

तत्पद मेरे पैरों की रक्षा करें तथा सवितु: पद मेरी जङ्घाओं की रक्षा करें। वरेण्यं पद कटिप्रदेश की रक्षा करें। भर्ग: पद नाभि की रक्षा करें। देवस्य पद मेरे हृदय की तथा धीमहि पद गले की रक्षा करें। धियो: पद मेरी जीभ की रक्षा करें तथा य: पद मेरे नेत्रों की रक्षा करें। ललाट की रक्षा न: पद करे तथा 'वि' अक्षर नेत्रों की एवं 'तु' अक्षर कानों की रक्षा करें। 'व'कार मेरे नासापुटों की रक्षा करें। 'रे'कार कपोलों की रक्षा करें॥ १२॥ 'णि'कार ऊपरी ओंठ की तथा 'य'कार निचले ओंठ की रक्षा करें। मुख के मध्य में 'भ'कार रक्षा करें तथा 'गो:' अक्षर कपोलों की रक्षा करें। 'दे'कार कण्ठदेश की तथा 'व'कार स्कन्धों की रक्षा करें 'स्य'कार दाहिने हाथ की तथा 'धी'कार वाम हस्त की रक्षा करें। मकार हृदय की, 'हि'कार जठर की, 'धि'कार नाभि देश की तथा योकार दोनों कटियों की रक्षा करें। योकार गुह्य की रक्षा करें तथा न: अक्षर ऊरुओं की रक्षा करें। 'प्र' अक्षर घुटनों की तथा 'चो' अक्षर जङ्घाओं की रक्षा करें। दकार गुल्फ (टखनों) की तथा याकार दोनों चरणों की रक्षा करें। जातवेदा गायत्री तथा त्र्यम्बक इत्यादि दशाक्षरा तथा एवं ओर से सब समय 'आपोज्योति०' इत्यादि षोडशी मन्त्र मेरी रक्षा करे॥ ९-१७॥

इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशतविनाशनम्॥ १८॥
चतुःषष्टिकलाविद्यासकलैश्वर्य्यसिद्धिदम्। जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत्॥ १९॥
स्त्रीगोब्राह्मणमित्रादिद्रोहाद्यखिलपातकैः। मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति॥ २०॥
पुष्पाञ्जलिं च गायत्र्या मूलेनैव पठेत्सदा। शतसाहस्रवर्षाणां पूजायाः फलमाप्नुयात्॥ २१॥
भूर्जपत्रे लिखित्वैतत्स्वकण्ठे धारयेद्यदि। शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारयेद्बुधः॥ २२॥
त्रैलोक्यं क्षोभयेत्सर्वं त्रैलोक्यं दहति क्षणात्। पुत्रवाञ्धनवाञ्छ्रीमान्नानाविद्यानिधिर्भवेत्॥ २३॥
ब्रह्मादीनि च सर्वाणि तदङ्गस्पर्शनात्ततः। भवन्ति पुष्पतुल्यानि किमन्यत्कथयामि ते॥ २४॥
अभिमन्त्रितगायत्रीकवचं मानसं पठेत्। तज्जलं पिबतो नित्यं पुरश्चर्य्याफलं भवेत्॥ २५॥

इति गायत्रीकवचं सम्पूर्णम्।

इति श्रीवीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे देवीमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं तृतीयं समाप्तम्।

यह सैकड़ों बाधाओं का विनाशक दिव्य कवच है। चौंसठ कलाएँ तथा विद्याएँ एवं सम्पूर्ण प्रकार के ऐश्वर्य को देने वाला है। गायत्री मन्त्रजप के आरम्भ में हृदय का पाठ तथा जप के अन्त में गायत्रीकवच का पाठ करने वाला स्त्रीवध, गोवध, ब्राह्मणवध, मित्रादिद्रोह आदि सभी पातकों से मुक्त होकर परंब्रह्म को प्राप्त होता है। पुष्पाञ्जलि को सदैव गायत्री के मूल मन्त्र से देना चाहिये। इससे सैकड़ों, सहस्रों वर्षों की पूजा का फल प्राप्त हो जाता है। जो इस कवच को भोजपत्र पर लिखकर अपने कण्ठ में धारण करता है अथवा शिखा में बाँधता है अथवा दाहिनी भुजा में बाँधता है या कण्ठ में पहिनता है वह तीनों लोकों को क्षोभित करता है तथा तीनों लोकों के दहन का सामर्थ्य रखता है। वह पुत्रवान्, धनवान्, श्रीमान् तथा अनेक विद्याओं से सम्पन्न होता है। ब्रह्मादि देव उसके अङ्ग के स्पर्श से पुष्प के तुल्य हो जाते हैं; इससे अधिक क्या कहा जाय। गायत्री-कवच के मानसिक जप से जल को अभिमन्त्रित करके उस जल का साधक पान करे तो उसका पुरश्चरण सफल हो जाता है॥ १८-२५॥

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के तृतीय प्रकरण देवीमन्त्रानुष्ठान प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३॥

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे विष्णुमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं चतुर्थम्॥ ४॥

मङ्गलाचरणम्

उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजं चक्रं बिभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभि पार्श्वद्वयम्।
कोटीराङ्गदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभोद्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिह्नं भजे॥
अथ वक्ष्ये महामन्त्रान् विष्णोः सर्वार्थसाधकान्। येषां संस्मरणात्सन्तो भवाब्धेः पारमाश्रिताः॥

मङ्गलाचरण—जो निरन्तर कोटि सूर्य के समान देदीप्यमान शंख, गदा, कमल एवं चक्र को धारण किये हैं, जिनके दोनों पार्श्वों में लक्ष्मी तथा पृथिवी सुशोभित हैं, जो पीताम्बर एवं कौस्तुभ मणि से दीप्त हैं, जो विश्व को धारण करने वाले हैं, जिनका वक्षःस्थल श्रीवत्सचिह्न से शोभायमान है, उन श्री विष्णु का मैं भजन करता हूँ।

अब मैं विष्णु के समस्त अर्थों को सिद्ध करने वाले महामन्त्रों को कहता हूँ; जिनके स्मरणमात्र से सन्तजन भवसागर के पार कर जाते हैं॥ १-३॥

सर्वविष्णुमन्त्रोपयोगिप्रयोगः

तत्र तावद्विष्णोः सर्वमन्त्रोपयोगिप्रयोगः; पूर्वदिने प्रायश्चित्तमयुतगात्रीजपं च कृत्वा उपवासादि विधाय प्रारम्भदिने उषसि नद्यादौ स्नात्वा प्रातर्नित्याह्निकं समाप्य मङ्गलस्नानान्ते धौतशुक्लवाससी परिधाय यथायोग्यालङ्कृतो द्वादशाङ्गेषु घृतचन्दनकेशरकुङ्कुमान्यतमतिलकः सपवित्रकुशः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य शान्तिपाठं गणपत्यादिदेवतास्मरणं च कुर्य्यात्। ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्तये इह जन्मनि जन्मान्तरे वा कृतकायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकमहापातकोपपातकादिसमस्तपातकनिवृत्तिद्वारा धर्मार्थकाममोक्ष-सिद्ध्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं श्रीविष्णोरमुकमन्त्रपुरश्चरणं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा करिष्ये; तदङ्गत्वेन श्रीगणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यजापकवरणं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डमार्गेण दिग्रक्षणान्तं सर्वं विधाय 'ॐ भद्रं कर्णेभिः' इत्यादिवेदघोषेण जपस्थानसमीपमागत्य पूर्ववत् द्वारपूजां कृत्वा प्रविश्य कूर्म्मसंशोधिते स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य स्ववामे कर्म्मपात्रं यथाविधि संस्थापयेत्। ततः 'ॐ अपवित्र०' इत्यादिप्रोक्षणं विधाय 'पृथ्वि त्वया०' इत्यादिना भूमिं प्रार्थ्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा 'मम (यजमानस्य वा) सर्वविधपातकनिवृत्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं श्रीविष्णोरमुकमन्त्रस्य अमुकसङ्ख्यया जपं करिष्ये; तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं केशवादिकलान्यासं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पद्धतिमार्गोक्तविधिना बहिर्न्यासान्तं कृत्वा केशवादिकलामातृकान्यासं कुर्य्यात्।

विष्णु के समस्त मन्त्रों में उपयोगी प्रयोग—अनुष्ठानारम्भ के एक दिन पूर्व प्रायश्चित्त करके एक अयुत गायत्रीजप करके उपवासादि करे। फिर अनुष्ठान प्रारम्भ के दिन प्रातःकाल नदी आदि में स्नान कर प्रातः के नित्य आह्निक कर्म को समाप्त कर मङ्गलस्नान करने के पश्चात् धुले हुए श्वेत वस्त्र (धोती-उपरना) पहिनकर यथायोग्य अलंकृत होकर शरीर के द्वादश अङ्गों में चन्दन, केसर, कुङ्कुम का तिलक लगाकर हाथ में पवित्री पहिनकर अपने आसन पर पूर्वाभिमुख होकर बैठे तथा मूल मन्त्र से प्राणायाम कर शान्तिपाठ, गणपति इत्यादि देवता का स्मरण करे। फिर देश-कालादि का स्मरण कर 'ममात्मनः इह जन्मनि जन्मान्तरे वा कृतकायिक-वाचिक-मानसिक-सांसर्गिक-महापातकोपपातकादि-समस्त-पातक-निवृत्तिद्वारा धर्मार्थकाममोक्षसिद्ध्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं

श्रीविष्णोरमुकमन्त्रपुरश्चरणं स्वयं वा ब्राह्मणद्वारा करिष्ये; तदङ्गत्वेन श्रीगणपतिपूजनं, पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धमाचार्यजापकवरणं च करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करे। फिर पूर्वोक्त पद्धतिकाण्ड में बताई गई विधि से दिग्-रक्षण-पर्यन्त सभी पूर्वकर्मों को करके 'ॐ भद्रं कर्णेभिः' इत्यादि वैदिक मन्त्रों (भद्रसूक्त) का पाठ करते हुए जपस्थान के समीप आकर पूर्व की भाँति द्वारपूजा करके भीतर प्रविष्ट होकर कूर्म-संशोधित स्वासन पर पूर्वमुख अथवा उत्तरमुख बैठकर अपने वाम भाग में कर्मपात्र को स्थापित कर 'ॐ अपवित्रः पवित्रो वा०' इत्यादि मन्त्र से प्रोक्षण करके 'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका०' इत्यादि मन्त्र से भूमि की प्रार्थना कर मूल मन्त्र (जो भी हो) से आचमन तथा प्राणायाम कर देश-काल का स्मरण करके 'मम (यजमानस्य वा) सर्वपातकनिवृत्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं श्रीविष्णोरमुकमन्त्रस्य अमुकसंख्यया जपं करिष्ये; तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिप्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृका-बहिर्मातृकान्यासं केशवकलान्यासञ्च करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके पद्धतिकाण्ड में वर्णित विधि से बहिर्न्यास करके केशवकलामातृकान्यास करे।

केशवादिकलान्यासः

ॐ केशवादिमातृकान्यासस्य साध्यनारायण ऋषिः। गायत्री छन्दः। लक्ष्मीनारायणो देवता। हलो बीजानि। स्वराः शक्तयः। विष्णोरमुकमन्त्रजपाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः। 'ॐ साध्यनारायणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ लक्ष्मीनारायणदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ हल्बीजेभ्यो नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वरशक्तिभ्यो नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः॥ ॐ ह्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ श्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ क्लीं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ह्रीं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ क्रीं अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

शङ्खचक्रगदापद्मकुम्भाऽऽदर्शाब्जपुस्तकम्। बिभ्रतं मेघचपलावर्णं लक्ष्मीहरिं भजे॥

अथवा—

विद्यारविन्दमुकुरामृतकुम्भपद्मकौमोदकीदरसुदर्शनशोभिहस्तम्।
सौदामिनीमकरकान्ति विभाति लक्ष्मीनारायणात्मकमखण्डितमादिमूर्ति॥

इति ध्यात्वा न्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ ह्रींश्रींक्लीं अंक्लींश्रींह्रीं ॐ केशवकीर्तिभ्यां नमः शिरसि॥ १॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं आँक्लींश्रींह्रीं ॐ नारायणकान्तिभ्यां नमः मुखवृत्ते॥ २॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींइंश्रींह्रींक्लीं ॐ माधवतुष्टिभ्यां नमः दक्षनेत्रे॥ ३॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींईंक्लींश्रींह्रीं ॐ गोविन्दपुष्टिभ्यां नमः वामनेत्रे॥ ४॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं उं क्लींश्रींह्रीं ॐ विष्णुधृतिभ्यां नमः दक्षकर्णे॥ ५॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं ॐ क्लींश्रींह्रीं ॐ मधुसूदनशान्तिभ्यां नमः वामकर्णे॥ ६॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींऋंक्लींश्रींह्रीं ॐ त्रिविक्रमक्रियाभ्यां नमः दक्षनासापुटे॥ ७॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींॠंक्लींश्रींह्रीं ॐ वामनदयाभ्यां नमः वामनासापुटे॥ ८॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींलृंक्लींश्रींह्रीं ॐ श्रीधरमेधाभ्यां नमः दक्षगण्डे॥ ९॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींॡंक्लींश्रींह्रीं ॐ हृषीकेशहर्षाभ्यां नमः वामगण्डे॥ १०॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींएंक्लींश्रींह्रीं ॐ पद्मनाभश्रद्धाभ्यां नमः ऊर्ध्वोष्ठे॥ ११॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींऐंक्लींश्रींह्रीं ॐ दामोदरलज्जाभ्यां नमः अधरोष्ठे॥ १२॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींओंक्लींश्रींह्रीं ॐ वासुदेवलक्ष्मीभ्यां नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ॥ १३॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींऔंक्लींश्रींह्रीं ॐ सङ्कर्षणसरस्वतीभ्यां नमः अधोदन्तपङ्क्तौ॥ १४॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींअंक्लींश्रींह्रीं ॐ प्रद्युम्नप्रीतिभ्यां नमः मूर्ध्नि॥ १५॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींअः क्लींश्रींह्रीं ॐ अनिरुद्धरतिभ्यां नमः मुखे॥ १६॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींकंक्लींश्रींह्रीं ॐ चक्रिजयाभ्यां नमः दक्षबाहुमूले॥ १७॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींखंक्लींश्रींह्रीं ॐ गदिदुर्गाभ्यां नमः दक्षकूर्परे॥ १८॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींगंक्लींश्रींह्रीं ॐ शार्ङ्गिप्रभाभ्यां नमः दक्षमणिबन्धे॥ १९॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींघंक्लींश्रींह्रीं ॐ खड्गिसत्याभ्यां नमः दक्षहस्ताङ्गुलिमूले॥ २०॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींङंक्लींश्रींह्रीं

ॐ शङ्खचण्डाभ्यां नमः दक्षहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ २१॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींचंक्लींश्रींह्रीं ॐ हलिवाणीभ्यां नमः वामबाहुमूले॥ २२॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींछंक्लींश्रींह्रीं ॐ मुसलिविलासिनीभ्यां नमः वामकूर्परे॥ २३॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींजंक्लींश्रींह्रीं ॐ शूलिविजयाभ्यां नमः वाममणिबन्धे॥ २४॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींझंक्लींश्रींह्रीं ॐ पाशविरजाभ्यां नमः वामाङ्गुलिमूले॥ २५॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींञंक्लींश्रींह्रीं ॐ अङ्कुशिविश्वाभ्यां नमः वामाङ्गुल्यग्रे॥ २६॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं-टंक्लींश्रींह्रीं ॐ मुकुन्दविनदाभ्यां नमो दक्षरुमूले॥ २७॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींठंक्लींश्रींह्रीं ॐ नन्दजसुनन्दाभ्यां नमः दक्षजानुनि॥ २८॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींडंक्लींश्रींह्रीं ॐ नन्दिसत्याभ्यां नमः दक्षगुल्फे॥ २९॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींढंक्लींश्रींह्रीं ॐ नरऋद्धिभ्यां नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले॥ ३०॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींणंक्लींश्रींह्रीं ॐ नरकजित्समृद्धिभ्यां नमः दक्षपादाङ्गु-ल्यग्रे॥ ३१॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींतंक्लींश्रींह्रीं ॐ हरिशुद्धिभ्यां नमः वामोरुमूले॥ ३२॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींथंक्लींश्रींह्रीं ॐ कृष्णबुद्धिभ्यां नमः वामजानुनि॥ ३३॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींदंक्लींश्रींह्रीं ॐ सत्यभुक्तिभ्यां नमः वामगुल्फे॥ ३४॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींधंक्लींश्रींह्रीं ॐ सात्वतमतिभ्यां नमः वामपादाङ्गुलिमूले॥ ३५॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींनंक्लींश्रींह्रीं ॐ सौरिक्षमाभ्यां नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे॥ ३६॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींपंक्लींश्रींह्रीं ॐ शूररमाभ्यां नमः दक्षपार्श्वे॥ ३७॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं-फंक्लींश्रींह्रीं ॐ जनार्द्दनोमाभ्यां नमः वामपार्श्वे॥ ३८॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींबंक्लींश्रींह्रीं ॐ भूधरक्लेदिनीभ्यां नमः पृष्ठे॥ ३९॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींभंक्लींश्रींह्रीं ॐ विश्वमूर्तिक्लिन्नाभ्यां नमः नाभौ॥ ४०॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींमंक्लींश्रींह्रीं ॐ वैकुण्ठसुधाभ्यां नमः जठरे॥ ४१॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींयंक्लींश्रींह्रीं ॐ त्वगात्मभ्यां पुरुषोत्तमवसुधाभ्यां नमः हृदये॥ ४२॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं-रंक्लींश्रींह्रीं ॐ असृगात्मभ्यां बलीपराभ्यां नमः दक्षांसे॥ ४३॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींलंक्लींश्रींह्रीं ॐ मांसात्मभ्यां बलानुजपरायणाभ्यां नमः ककुदि॥ ४४॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींवंक्लींश्रींह्रीं ॐ मेदात्मभ्यां बालसूक्ष्माभ्यां नमः वामांसे॥ ४५॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींशंक्लींश्रींह्रीं ॐ अस्थ्यात्मभ्यां वृषघ्नसन्ध्याभ्यां नमः हृदयादिदक्षकराग्रपर्यन्तम्॥ ४६॥ ॐ ह्रींश्रींक्लीं-षंक्लींश्रींह्रीं ॐ मज्जात्मभ्यां वृषप्रज्ञाभ्यां नमः हृदयादिवामकराग्र पर्यन्तम्॥ ४७॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींसंक्लींश्रींह्रीं ॐ शुक्रात्मभ्यां हंसप्रभाभ्यां नमः हृदयादिदक्षपादाग्रपर्यन्तम्॥ ४८॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींहंक्लींश्रींह्रीं ॐ प्राणात्मभ्यां वराहनिशाभ्यां नमः हृदयादिवामपादाग्रपर्यन्तम्॥ ४९॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींळंक्लींश्रींह्रीं ॐ शक्त्यात्मभ्यां विलमेधाभ्यां नमः हृदादिनाभ्यन्तम्॥ ५०॥ ॐ ह्रींश्रींक्लींक्षंक्लींश्रींह्रीं ॐ परमात्मभ्यां नृसिंहविद्युताभ्यां नमः हृदादिमूर्धान्तं॥ ५१॥ च न्यसेत्। इति केशवादिकलामातृकान्यासः (अयं न्यासः विष्णोः सर्वमन्त्रेष्वादौ ज्ञेयः)। एवं न्यासं कृत्वा मूलमन्त्रन्यासं कुर्य्यात्।

केशवादि कला न्यास—'ॐ केशवादिमातृकान्यासस्य साध्यनारायण ऋषिः। गायत्री छन्दः। लक्ष्मीनारायणो देवता। हलो बीजानि। स्वराः शक्तयः। विष्णोरमुकमन्त्रजपाङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः' कहकर विनियोग करे। फिर मूल में लिखे हुए 'ॐ साध्यनारायणः ऋषिः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से क्रमशः शिर आदि में ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखे 'ॐ ह्रीं हृदयाय नमः' आदि मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये। तदनन्तर मूलोक्त 'शङ्खचक्रगदापद्मकुम्भादर्शाब्जपुस्तकम्। विभ्रतं मेघचपलावर्णं लक्ष्मीं हरिं भजे॥' मन्त्र से ध्यान करना चाहिये, जिसका भावार्थ इस प्रकार है—शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, कुम्भ, दर्पण, कमल तथा पुस्तक धारण किये हुए मेघ की बिजली के समान लक्ष्मीनारायण को भजे।

अथवा दूसरे ध्यान मन्त्र—'विद्यारविन्दमुकुरामृतकुम्भपद्मकौमोदकीदरसुदर्शनशोभिहस्तम्। सौदामिनीमकर-कान्ति विभाति लक्ष्मीनारायणात्मकमखण्डितमादिमूर्तिः॥' से ध्यान करना चाहिये, जिसका भावार्थ इस प्रकार है—विद्या (पुस्तक), पद्म, कुमुदिनी, शङ्ख तथा सुदर्शन चक्र से शोभित हाथों वाले श्रीलक्ष्मीनारायण की अखण्डित आदि मूर्ति का ध्यान करे।

मुख्य न्यास (केशवकला न्यास के लिये मूल में 'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अं क्लीं श्रीं ह्रीं ॐ केशवकीर्तिभ्यां नमः शिरसि' इत्यादि मन्त्रों से शिर आदि अङ्गों में उन मन्त्रों के निर्देशानुसार अङ्गस्पर्श की भावना के साथ न्यास करना

चाहिये। यह केशवादि कलामातृकान्यास सभी विष्णुमन्त्रों के अनुष्ठान में प्रयुक्त करना चाहिये। इस न्यास को करने के उपरान्त पुनः मूल मन्त्र का भी न्यास करना चाहिये।

विष्णोरष्टाक्षरमन्त्रप्रयोगः

अथ तावद्विष्णोरष्टाक्षरमन्त्रप्रयोगः शारदातिलके—मूल मन्त्रो यथा 'ॐ नमो नरायणाय' इति अष्टाक्षरो मन्त्रः। अस्य श्रीविष्णोरष्टाक्षरमन्त्रस्य साध्यो नारायण ऋषिः। गायत्री छन्दः। विष्णुर्देवता। धर्मार्थकाममोक्षसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। 'ॐ साध्यनारायणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ विष्णुर्देवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ क्रुद्धोल्काय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ महोल्काय तर्ज्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ वीरोल्काय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ द्युल्काय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ सहस्त्रोल्काय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिनेत्रहीनपञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा मन्त्राङ्गन्यासं कुर्यात्। तत्र क्रमः—ॐ नमः हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ नं नमः शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ मों नमः शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ नां नमः कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ रां नमः नेत्राभ्यां वौषट्॥ ५॥ ॐ यं नमः अस्त्राय फट्॥ ६॥ ॐ णं नमः कुक्षौ॥ ७॥ ॐ यं नमः पृष्ठे॥ ८॥ ॐ नमः सुदर्शनायास्त्राय फडिति मन्त्रेण दिग्बन्धं कुर्यात्॥ ९॥ इति प्रथमो न्यासः॥ १॥ ॐ नमः मूलाधारे॥ १॥ ॐ नं नमः हृदये॥ २॥ ॐ मों नमः वक्त्रे॥ ३॥ ॐ नां नमः दक्षिणबाहुमूले॥ ४॥ ॐ रां नमः वामबाहुमूले॥ ५॥ ॐ यं नमः दक्षपादमूले॥ ६॥ ॐ णां नमः वामपादमूले॥ ७॥ ॐ यं नमः नाभौ॥ ८॥ इति द्वितीयो न्यासः॥ २॥ ॐ नमः कण्ठे॥ १॥ ॐ नं नमः नाभौ॥ २॥ ॐ मों नमः हृदये॥ ३॥ ॐ नां नमः दक्षस्तने॥ ४॥ ॐ रां नमः वामस्तने॥ ५॥ ॐ यं नमः दक्षपार्श्वे॥ ६॥ ॐ णां नमः वामपार्श्वे॥ ७॥ ॐ यं नमः पृष्ठे॥ ८॥ इति तृतीयो न्यासः॥ ३॥ ॐ नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ नं नमः मुखे॥ २॥ ॐ मों नमः दक्षनेत्रे॥ ३॥ ॐ नां नमः वामनेत्रे॥ ४॥ ॐ रां नमः दक्षकर्णे॥ ५॥ ॐ यं नमः वामकर्णे॥ ६॥ ॐ णां नमः दक्षिणनासिकायाम्॥ ७॥ ॐ यं नमः वामनासिकायाम्॥ ८॥ इति चतुर्थो न्यासः॥ ४॥ ॐ नमः बाहुमूलयोः॥ १॥ ॐ नं नमः कूर्परयो॥ २॥ ॐ मों नमः मणिबन्धयोः॥ ३॥ ॐ नां नमः हस्ताङ्गुलीषु॥ ४॥ ॐ रां नमः पादमूलयोः॥ ५॥ ॐ यं नमः जानुनोः॥ ६॥ ॐ णां नमः गुल्फयोः॥ ७॥ ॐ यं नमः पादाङ्गुलीषु॥ ८॥ इति पञ्चमो न्यासः॥ ५॥ ॐ नमः त्वचि॥ १॥ ॐ नं नमः रक्ते॥ २॥ ॐ मों नमः मांसे॥ ३॥ ॐ नां नमः मेदसि॥ ४॥ ॐ रां नमः अस्थि॥ ५॥ ॐ यं नमः मज्जायाम्॥ ६॥ ॐ णां नमः शुक्रे॥ ७॥ इति सप्तधातून् हृदये न्यस्य 'ॐ यं नमः प्राणेषु' इति गले न्यसेत्॥ ८॥ इति षष्ठो न्यासः॥ ६॥ ॐ नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ न नमः नेत्रयोः॥ २॥ ॐ मों नमः मुखे॥ ३॥ ॐ नां नमः हृदये॥ ४॥ ॐ रां नमः कुक्षिद्वये॥ ५॥ ॐ यं नमः ऊरुद्वये॥ ६॥ ॐ णां नमः जङ्घाद्वये॥ ७॥ ॐ यं नमः पादद्वये॥ ८॥ इति सप्तमो न्यासः॥ ७॥ ॐ नमः दक्षगण्डे॥ १॥ ॐ नं नमः वामगण्डे॥ २॥ ॐ मों नमः दक्षांसे॥ ३॥ ॐ नां नमः वामांसे॥ ४॥ ॐ रां नमः दक्षोरौ॥ ५॥ ॐ यं नमः वामोरौ॥ ६॥ ॐ णां नमः दक्षपादे॥ ७॥ ॐ यं नमः वामपादे॥ ८॥ इत्यष्टमो न्यासः॥ ८॥ एवं मूल मन्त्रवर्णन्यासं कृत्वा द्वादशमूर्तिपञ्जरन्यासं कुर्यात्।

विष्णु अष्टाक्षर मन्त्र-प्रयोग—'ॐ नमः नारायणाय' यह शारदातिलक के अनुसार अष्टाक्षर विष्णुमन्त्र है। (इस प्रसङ्ग में इसे ही मूल मन्त्र कहा जायेगा)। इस अष्टाक्षरी विष्णु मन्त्र के नारायण ऋषि, गायत्री छन्द, विष्णु देवता, धर्मार्थ-काम-मोक्ष-सिद्ध्यर्थ जप में विनियोग है। विनियोग के उपरान्त 'ॐ साध्यनारायणऋषये नमः शिरसि, ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे तथा ॐ विष्णुर्देवतायै नमः हृदि—इन तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। फिर मूल में लिखित 'ॐ क्रुद्धोल्काय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः, ॐ महोल्काय शिरसे स्वाहा, ॐ वीरोल्काय शिखायै वषट्, ॐ द्युल्काय कवचाय हुम्, ॐ सहस्त्रोल्काय अस्त्राय फट्' इन पाँच मन्त्रों से हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास (नेत्रन्यास छोड़कर) करना चाहिये। इसके पश्चात् आठ प्रकार से मन्त्राङ्ग न्यास करना चाहिये। वह इस प्रकार है—

मूल में लिखित 'ॐ नमः हृदयाय नमः' से लेकर 'ॐ नमः सुदर्शनाय फट्' से दिग्बन्ध-पर्यन्त मन्त्रों से निर्दिष्ट इत्यादि अङ्गों में प्रथम न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ नमः मूलाधारे' इत्यादि आठ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट शरीराङ्गों में द्वितीय न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ नमः कण्ठे' इत्यादि आठ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में तीसरे प्रकार का न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ नमः मूर्ध्नि' इत्यादि आठ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में चतुर्थ न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ नमः बाहुमूलयोः' इत्यादि आठ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में पञ्चम न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ नमः त्वचि' इत्यादि आठ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट सप्तधातुओं तथा गले में षष्ठ न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ नमः मूर्ध्नि' इत्यादि आठ मन्त्रों के द्वारा निर्दिष्ट शरीराङ्गों में सातवाँ न्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् मूलोक्त 'ॐ नमः दक्षगण्डे' इत्यादि आठ मन्त्रों से उन-उनमें निर्दिष्ट शरीराङ्गों में आठवाँ न्यास करना चाहिये। इस प्रकार मूल मन्त्र के वर्णों का न्यास करके द्वादशमूर्तिपञ्जर न्यास करना चाहिये।

द्वादशमूर्तिपञ्जरन्यासः

ॐ अँ धातुसहिताय केशवाय नमः ललाटे॥ १॥ ॐ नं आँ अर्यमसहिताय नारायणाय नमः कुक्षौ॥ २॥ ॐ मों इं मित्रसहिताय माधवाय नमः हृदये॥ ३॥ ॐ भं ईं वरुणसहिताय गोविन्दाय नमः कण्ठे॥ ४॥ ॐ गं उँ अंशुमत्सहिताय विष्णवे नमः दक्षिणपार्श्वे॥ ५॥ ॐ वं ऊं भगसहिताय मधुसूदनाय नमः दक्षिणांसे॥ ६॥ ॐ तें एँ विवस्वत्सहिताय त्रिविक्रमाय नमः गले॥ ७॥ ॐ वां ऐं मित्रसहिताय वामनाय नमः दक्षांसे॥ ८॥ ॐ सुं ओं पूषसहिताय श्रीधराय नमः वामांसे॥ ९॥ ॐ दे आँ पर्जन्यसहिताय हृषीकेशाय नमः गले॥ १०॥ ॐ वां अँ त्वष्टसहिताय पद्मनाभाय नमः पृष्ठे॥ ११॥ ॐ यँ अः विष्णुसहिताय दामोदराय नमः ककुदि॥ १२॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय मूर्ध्नि॥ १३॥ ॐ किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलशङ्खचक्रगदाम्भोजहस्ताय पीताम्बरधराय श्रीवत्साङ्कितवक्षस्थलाय श्रीभूमिसहिताय स्वात्मज्योतिर्द्वयदीप्तिकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः॥ १४॥ इति व्यापकं च विन्यस्य नारायणं ध्यायेत्।

द्वादश मूर्तिपञ्जर न्यासविधि—मूल में लिखित 'ॐ अं धातुसहिताय केशवाय नमः ललाटे' इत्यादि चौदह मन्त्रों से द्वादश मूर्तिपञ्जर न्यास तथा उसके बाद व्यापक करना चाहिये। व्यापक का मन्त्र—'ॐ किरीटकेयूरहार-मकरकुण्डलशङ्खचक्रगदाम्भोजहस्ताय०' इत्यादि है।

नारायणध्यानम्

अथ ध्यानम्—

उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजं चक्रं बिभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभि पार्श्वद्वयम्।
कोटीराङ्गदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभोद्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिह्नं भजे॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य।

पीठपूजा

तत्रादौ पूर्ववत् मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताः सम्पूज्य (पूर्वादिषु केसरेषु) 'ॐ विमलायै नमः॥ १॥ ॐ उत्कर्षिण्यै नमः॥ २॥ ॐ ज्ञानायै नमः॥ ३॥ ॐ क्रियायै नमः॥ ४॥ ॐ योगायै नमः॥ ५॥ ॐ प्रह्व्यै नमः॥ ६॥ ॐ सत्यायै नमः॥ ७॥ ॐ ईशानायै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ अनुग्रहायै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। ततः 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिनाऽऽसनं दत्त्वा तत्र मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य (अथवा स्वर्णादिनिर्मितं यन्त्रं प्रतिमां वा संस्थाप्य) पूर्ववत् पाद्याद्यैः पुष्पान्तैरुपचारैः पुरुषसूक्तेन मूलमन्त्रेण च सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

तद्यथा—आग्नेयादिकोणेषु दिक्षु च—ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ महोल्काय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वीरोल्काय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ द्युल्काय कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ हस्तोल्काय अस्त्राय फट्॥ ५॥ इति प्रथमा-वरणम्॥ १॥

तद्बाह्ये केसरेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ नमः ॥ १ ॥ ॐ नं नमः ॥ २ ॥ ॐ मों नमः ॥ ३ ॥ ॐ नां नमः ॥ ४ ॥ ॐ रां नमः ॥ ५ ॥ ॐ यं नमः ॥ ६ ॥ ॐ णां नमः ॥ ७ ॥ ॐ यं नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। इति द्वितीयावरणम् ॥ २ ॥

तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादिचतुर्दिक्षु—ॐ वासुदेवाय नमः ॥ १ ॥ ॐ सङ्कर्षणाय नमः ॥ २ ॥ ॐ प्रद्युम्नाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ अनिरुद्धाय नमः ॥ ४ ॥ (आग्नेयादिकोणेषु)—ॐ शान्त्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ श्रियै नमः ॥ ६ ॥ ॐ सरस्वत्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ रत्यै नमः ॥ ८ ॥ इति तृतीयावरणम् ॥ ३ ॥

ततो दलाग्रेषु—ॐ शङ्खाय नमः ॥ १ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ २ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ४ ॥ ॐ कौस्तुभाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ मुशलाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ वनमालायै नमः ॥ ८ ॥ इति चतुर्था-वरणम् ॥ ४ ॥

तद्बहिरग्रे—ॐ गरुडाय नमः ॥ १ ॥ (दक्षिणे) ॐ शङ्खनिधये नमः ॥ २ ॥ (वामे) ॐ पद्मनिधये नमः ॥ ३ ॥ (पश्चिमे) ॐ ध्वजाय नमः ॥ ४ ॥ (अग्निकोणे) ॐ विघ्नाय नमः ॥ ५ ॥ (निर्ऋतिकोणे) ॐ आर्याय नमः ॥ ६ ॥ (वायुकोणे) ॐ दुर्गायै नमः ॥ ७ ॥ (ऐशान्याम्) ॐ सेनान्यै नमः ॥ ८ ॥ इति पञ्चमावरणम् ॥ ५ ॥

ततस्तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण—ॐ इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ वायवे नमः ॥ ६ ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ (ईशानपूर्वयोमध्ये) ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ (निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये) ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति षष्ठावरणम् ॥ ६ ॥

पुनः पूर्वादिक्रमेण—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इत्यायुधानि च पूजयेत्। इति सप्तमावरणम् ॥ ७ ॥

इत्यावरणपूजां कृत्वा मूलमन्त्रेण पुरुषसूक्तेन च धूपदीपनैवेद्याचमनीयताम्बूलदक्षिणानीराजनैर्नारायणं सम्पूज्य 'ॐ जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन। सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज॥' इत्यादिमहा-पुरुषस्तवेन पूर्वोक्तेन स्तुत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य यथाविधिजपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं षोडशलक्षात्मकम्। ततो जपान्ते मधुराप्लुतैः कमलैर्दशांशहोमं कृत्वा तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणांश्च भोजयेत्। तथा च शारदातिलके—

विकारलक्षं प्रजपेन्मनुमेनं समाहितः। तद्दशांशं सरसिजैर्जुहुयान्मधुराप्लुतैः॥
एवं सम्पूजयेद्विष्णुं प्रोक्तैरावरणैः सह। धर्मार्थकामाँल्लब्ध्वा वै विष्णोः सायुज्यमाप्नुयात्॥

इतिश्रीविष्णोरष्टाक्षरनारायणमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः॥

ध्यान—मूलोक्त 'उद्यत्कोटिदिवाकर०' इत्यादि मन्त्र से श्री विष्णु का ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचारों से उनका पूजन कर पीठपूजा (यन्त्रपूजा) करनी चाहिये।

नारायण यन्त्रपीठ पूजा—सर्वप्रथम पूर्व की भाँति मण्डूकादिपरतत्त्वान्त देवताओं का पूजन कर फिर यन्त्रपूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् मूल में लिखित 'ॐ विमलायै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूर्वादि केसरों में प्रदक्षिणक्रम से पीठ की पूजा कर मध्य में नवें मन्त्र 'ॐ अनुग्रहायै नमः' से पूजा करे। फिर 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि द्वारा आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके (अथवा स्वर्णादि-निर्मित यन्त्र-प्रतिमा को स्थापित करके) पूर्व की भाँति पाद्य से लेकर पुष्पसमर्पण-पर्यन्त पूजोपचारों के द्वारा पुरुषसूक्त के मन्त्रों अथवा मूल मन्त्र से पूजन सम्पन्न कर आवरणपूजा करनी चाहिये।

आवरणपूजा—यन्त्र के भीतर (क्रमांक १ से प्रारम्भ कर) आग्नेयादि कोणों तथा दिशाओं में 'ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से प्रथम आवरण की पूजा करे। फिर प्रथम आवरण के बाहर केसरों में पूर्वादि क्रम से 'ॐ नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से द्वितीय आवरण की पूजा करे। फिर उसके बाहर अष्टदलों में पूर्वादि चार दिशाओं में प्रथम चार मन्त्रों 'ॐ वासुदेवाय नमः' इत्यादि से पूजन कर आग्नेयादि कोणों में 'ॐ शान्त्यै नमः' इत्यादि पाँचवें मन्त्र से आठवें मन्त्र तक क्रमशः पूजन करे। यह तृतीयावरण की पूजा हुई। फिर उसके बाहर दलाग्रों में 'ॐ शङ्खाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से चतुर्थावरण की पूजा करे। फिर उसके बाहर अग्रभाग में 'ॐ गरुडाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट दिशाओं में पूजन करे। फिर उसके बाहर (छठे आवरण में) भूपुर में पूर्वादि क्रम से 'ॐ इन्द्राय नमः' इन दश मन्त्रों से दश दिक्पालों की पूजा करे। फिर उनके बाहर 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दस मन्त्रों से दिक्पालों के आयुधों की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार आवरण पूजा करके मूल मन्त्र तथा पुरुषसूक्त से धूप, दीप, नैवेद्य तथा आचमनीय, ताम्बूल, दक्षिणा तथा नीराजन से नारायण की पूजा कर 'ॐ जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन। सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुषपूर्वज॥' इस महापुरुष स्तवन से स्मरण करके साष्टाङ्ग-प्रणाम करे यथाविधि अष्टाक्षर मन्त्र का जप करना चाहिये। इसका पुरश्चरण सोलह लाख मन्त्रजप से होता है। जप के अन्त में मधुराप्लुत कमलों से दशांश होम करके उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन तथा उसका दशांश कमलों को मधुराप्लुत कर आवरणों सहित विष्णु की पूजा तथा होम करे तो धर्मार्थ-काम को प्राप्त कर विष्णु का सायुज्य प्राप्त करता है।

श्रीनारायणमन्त्रानुष्ठानपूजायन्त्रम्
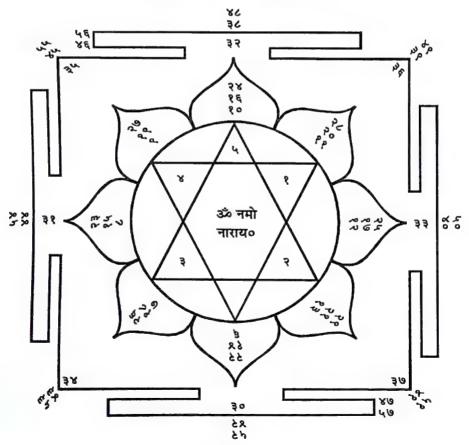
विष्णोर्द्वादशाक्षरमन्त्रप्रयोगः

मूल मन्त्रो यथा—'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इति द्वादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य प्रजापतिः ऋषिः। गायत्री छन्दः। वासुदेवो देवता। धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः। ॐ प्रजापतिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ वासुदेवदेवतायै नमः हृदये॥ २॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नमो तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ भगवते मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिनेत्रवर्जपञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा मन्त्रन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ नं नमः ललाटे॥ २॥ ॐ मों नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ भं नमः मुखे॥ ४॥ ॐ गं नमः गले॥ ५॥ ॐ वं नमः बाह्वोः॥ ६॥ ॐ तें नमः हृदये॥ ७॥ ॐ वां नमः कुक्षौ॥ ८॥ ॐ सुं नमः नाभौ॥ ९॥ ॐ दे नमः लिङ्गे॥ १०॥ ॐ वां नमः जानुनोः॥ ११॥ ॐ यं नमः पादयोः॥ १२॥ इति मन्त्रन्यासः।

अथ मूर्तिपञ्जरन्यासः—ॐ अं केशवाय धात्रे नमः ललाटे॥ १॥ ॐ नं आं नारायणाय अर्यम्णे नमः कुक्षौ॥ २॥ ॐ मां इं माधवाय मित्राय नमः हृदि॥ ३॥ ॐ भं ईं गोविन्दाय वरुणाय नमः कण्ठे॥ ४॥ ॐ गं उं विष्णवे अंशवे नमः कण्ठदक्षपार्श्वे॥ ५॥ ॐ यं ऊं मधुसूदनाय भगाय नमो दक्षिणांसे॥ ६॥ ॐ तें एं त्रिविक्रमाय विवस्वते नमः दक्षगले॥ ७॥ ॐ वां ऐं वामनाय मित्राय नमः कण्ठवामपार्श्वे॥ ८॥ ॐ सुं ओं श्रीधराय पूष्णे नमः वामांसे॥ ९॥ ॐ दे औं हृषीकेशाय पर्जन्याय नमः वामगले॥ १०॥ ॐ वां अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नमः पृष्ठे॥ ११॥ ॐ यं अः दामोदराय विष्णवे नमः ककुदि॥ १२॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः शिरसि॥ १३॥ इति पञ्जरन्यासः। 'ॐ किरीटकेयूरहारमकरकुण्डल-धरशङ्खचक्रगदाम्भोजपीताम्बरश्रीधरश्रीवत्साङ्कितवक्षःस्थलश्रीभूमिसहितआत्मज्योतिर्द्वयदीप्तकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः' इति मन्त्रेण व्यापकं विन्यस्य ध्यायेत्। अथ ध्यानम्—

विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदामम्भोजं दधतं सिताब्जनिलयं कान्त्या जगन्मोहनम्।
आबद्धाङ्गदहारकुण्डलमहामौलिं स्फुरत्कङ्कणं श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम्॥

इति ध्यात्वा पीठपूजां कुर्य्यात्। तत्रादौ पीठे पूर्वोक्तमण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिषु ॐ विमलायै नमः॥ १॥ ॐ उत्कर्षिण्यै नमः॥ २॥ ॐ ज्ञानायै नमः॥ ३॥ ॐ क्रियायै नमः॥ ४॥ ॐ योगायै नमः॥ ५॥ ॐ प्रह्वयै नमः॥ ६॥ ॐ सत्यायै नमः॥ ७॥ ॐ ईशानायै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ अनुग्रहायै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः सम्पूज्य 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नमः' इत्यासनं दत्त्वा तत्र मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य (अथवा स्वर्णादिनिर्मितं यन्त्रं प्रतिमां वा संस्थाप्य) पूर्ववत् पाद्याद्यैः पुष्पान्तैरुपचारैः पुरुषसूक्तेन मूलमन्त्रेण च सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा आग्नेयादिकोणेषु दिक्षु च—ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ नमः शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ भगवते शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ वासुदेवाय कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अस्त्राय फट्॥ ५॥ इति नेत्रवर्ज-पञ्चाङ्गान्यभ्यर्च्य तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ वासुदेवाय नमः॥ १॥ (दक्षिणे) ॐ सङ्कर्षणाय नमः॥ २॥ (पश्चिमे) ॐ प्रद्युम्नाय नमः॥ ३॥ (उत्तरे) ॐ अनिरुद्धाय नमः॥ ४॥ (अग्निकोणे) ॐ शान्त्यै नमः॥ ५॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ श्रियै नमः॥ ६॥ (वायव्याम्) ॐ सरस्वत्यै नमः॥ ७॥ (ऐशान्याम्) ॐ रत्यै नमः॥ ८॥ ततो दलाग्रेषु—ॐ शङ्खाय नमः॥ १॥ ॐ चक्राय नमः॥ २॥ ॐ गदायै नमः॥ ३॥ ॐ पद्माय नमः॥ ४॥ ॐ कौस्तुभाय नमः॥ ५॥ ॐ मुसलाय नमः॥ ६॥ ॐ खड्गाय नमः॥ ७॥ ॐ वनमालायै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। तद्बहिर्देवाग्रे—ॐ गरुडाय नमः॥ १॥ (दक्षिणे) ॐ शङ्खनिधये नमः॥ २॥ (वामे) ॐ पद्मनिधये नमः॥ ३॥ (पश्चिमे) ॐ ध्वजाय नमः॥ ४॥ (अग्निकोणे) ॐ विघ्नाय नमः॥ ५॥ (नैर्ऋत्याम्) ॐ आर्याय नमः॥ ६॥ (वायव्याम्) ॐ दुर्गायै नमः॥ ७॥ (ऐशान्याम्) ॐ सेनान्यै नमः॥ ८॥ इति सम्पूज्य तद्बहिः भूपुरे पूर्वादिषु पूर्ववत् इन्द्रादिदशदिक्पालान्

पूजयित्वा तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा वासुदेवं धूपादिनीराजनान्तैरुपचारैः सम्पूज्य स्तवेन स्तुत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षात्मकम्। जपान्ते आज्यप्लुतैस्तिलैः पायसेन क्षीरद्रुम-समिद्भिश्च दशांशेन वा शतांशेन होमः। तद्दशांशेन तर्पणम्। तद्दशांशेन मार्ज्जनम्। तद्दशांशेन यथाशक्ति वा ब्राह्मणान् भोजयेत्। तथा च शारदातिलके—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः। तत्सहस्रं प्रजुहुयात्तिलैराज्यपरिप्लुतैः॥
एवं सम्पूजितो विष्णुः प्रदद्यादिष्टमात्मनः। पायसेन घृताक्तेन मन्त्रवर्णसहस्रकम्॥
जुहुयान्मानवः सिद्ध्यै समिद्भिः क्षीरिभूरुहाम्। तत्संख्यया पयोक्ताभिः सर्वपापविमुक्तये॥

इति वासुदेवमन्त्रपुरश्चरणम्।

विष्णु के द्वादशाक्षर मन्त्र का प्रयोग—'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' यह द्वादशाक्षर मूल मन्त्र है। 'ॐ अस्य मन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः। गायत्री छन्दः। वासुदेवो देवता। धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग का जल छोड़े। फिर मूलपाठ में लिखे 'ॐ प्रजापतिऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। इसी प्रकार मूलोक्त 'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करे। पुनः 'ॐ हृदयाय नमः, ॐ नमो शिरसे स्वाहा, ॐ भगवते शिखायै वषट्, ॐ वासुदेवाय कवचाय हुम्, ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास करे।

मन्त्रन्यास—फिर मूलोक्त 'ॐ नमः मूर्ध्नि' इत्यादि बारह मन्त्रों से मन्त्रन्यास करे। फिर उसके आगे लिखे 'ॐ अं केशवाय धात्रे नमः ललाटे' इत्यादि तेरह मन्त्रों से उनमें लिखे अङ्गों में मूर्तिपञ्जर न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ किरीटकेयूरहारमकर०' इत्यादि मन्त्र से व्यापक विन्यास करना चाहिये।

ततपश्चात् मूल में लिखित 'विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं' इत्यादि श्लोक के अनुसार इस प्रकार ध्यान करना चाहिये। करोड़ों शरत् चन्द के सम्पन्न आभा वाले, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म को हाथों में धारण करने वाले क्षीरसागर-निवासी, अपनी कान्ति से सम्पूर्ण विश्व को मोहित करने वाले अङ्गद, हार, कुण्डल महामुकुट तथा कङ्कण से आबद्ध वक्षःस्थल पर श्रीवत्स अङ्कित तथा कौस्तुभ रत्न को धारण मुनिजनों द्वारा स्तुत श्री विष्णु की वन्दना करता हूँ। तदनन्तर सर्वप्रथम पूर्वोक्त मण्डूकादि परतत्त्वान्त देवताओं की पूजा करके फिर मूलोक्त 'ॐ विमलायै नमः' इत्यादि नौ मन्त्रों से पूर्वादि आठ दिशाओं तथा मध्य में पूजा करनी चाहिये। फिर 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नमः' कहकर आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करे अथवा स्वर्णादि प्रतिमा अथवा मन्त्र को स्थापित करे; फिर उस मन्त्र या मूर्ति की पूजा करे।

मूर्ति अथवा यन्त्रपूजा—प्रथमतः पूर्व की भाँति (विष्णुयन्त्र की भाँति) पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों के द्वारा पुरुषसूक्त अथवा मूल मन्त्र से पूजा करके फिर आवरणपूजा करे। आग्नेयादि कोणों तथा दिशाओं में 'ॐ हृदयादि नमः' इत्यादि मूलोक्त पाँच मन्त्रों से नेत्र को छोड़कर पञ्चाङ्गों से अर्चित कर फिर उसके बाहर अष्टदल में पूर्वादि क्रम से 'ॐ वासुदेवाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से प्रथम दिशाओं में, फिर आग्नेयादि कोणों में मूल पाठ में निर्दिष्ट क्रम से पूजा करे। फिर दलाग्रों में 'ॐ शङ्खाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। तत्पश्चात् उसके बाहर 'ॐ गरुडाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से दिशाओं तथा कोणों में मूल में निर्दिष्ट के अनुसार पूजन करे। फिर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में प्रथमतः इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा कर उनके बाहर उसी क्रम से उन दिक्पालों के आयुधों की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार आवरण-पूजा करके वासुदेव की धूपादि नीराजनान्त पूजा कर स्तोत्र (कवच) से स्तुति करके साष्टाङ्ग प्रणाम करके जप आरम्भ करना चाहिये।

इसका पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। जप पूरा हो जाने पर घृताहुति पायस तथा क्षीरी वृक्षों (वट पीपल, ऊमर, पाकर) की समिधाओं से दशांश अथवा शतांश होम करे। उसके दशांश से तर्पण, फिर उसके दशांश से मार्जन तथा उसके दशांश से ब्राह्मणभोजन करना चाहिए। शारदातिलक में कहा भी है—

जितेन्द्रिय तथा दीक्षित होकर बारह लाख जप करके घृताप्लुत तिलों का हवन करे। इस प्रकार सम्पूजित होने पर विष्णु अभीष्ट सिद्धि देते हैं। घृताक्त पायस से बारह सहस्र होम करके क्षीरीवृक्षों की समिधाओं से हवन करे तथा उतनी ही संख्या में पयाक्त समिधाओं से होम करने पर मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

लक्ष्मीनारायणमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

शारदातिलके—भूतशुद्ध्यादिकेशवादिकलामातृकान्यासान्तं पूर्ववत्। मन्त्रस्वरूपं यथा—'ॐ ह्रींह्रींश्रीं-श्रींलक्ष्मीवासुदेवाय नमः' इति चतुर्दशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य प्रजापतिः ऋषिः। गायत्री छन्दः। वासुदेवो देवता। धर्मार्थकाममोक्षसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ प्रजापतिऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ वासुदेवदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति न्यस्य ॐ ह्रींह्रींअङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ श्रींश्रींतर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ लक्ष्मी मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। एवमेव नेत्रवर्जहृदयादिपञ्चाङ्गन्यासं कुर्य्यात्। तद्यथा—ॐ ह्रींह्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ श्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ लक्ष्मीं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ वासुदेवाय कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ नमः अस्त्राय फट्॥ ५॥ एवं हृदयादिपञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

विद्युच्चन्द्रनिभं वपुः कमलजावैकुण्ठयोरेकतां प्राप्तं स्नेहवशेन रत्नविलसद्भूषाभरालङ्कृतम्।
विद्यापङ्कजदर्पणान्मणिमयं कुम्भं सरोजं गदां शङ्खं चक्रममूनि बिभ्रदमितां दिश्याच्छ्रियं वः सदा॥

इति ध्यानं कृत्वा पूर्वोक्तद्वादशाक्षरमन्त्रवत् पीठपूजामावरणपूजां च कृत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्दशलक्षात्मकम् ; तथा च—

वर्णलक्षं जपेदेनं तत्सहस्रं सरोरुहः। होमं कुयाद्विकसितैर्मधुरत्रयसंयुतैः॥
पूजा स्याद्वैष्णवे पीठे द्वादशाक्षरवर्त्मना। पायसेन कृतो होमो लक्ष्मीवश्यप्रदायकः॥
मधुराक्तैस्तिलैर्हुत्वा सर्वकार्याणि साधयेत्॥

इति लक्ष्मीनारायणमन्त्रपुरश्चरणम्।

लक्ष्मीनारायण मन्त्र-प्रयोग—इस मन्त्र के अनुष्ठान में भी सर्वप्रथम भूतशुद्धि तथा केशवादि कलान्यासन्त कर्म पूर्वकथित विधि से करना चाहिये। मन्त्र है—'ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीलक्ष्मीवासुदेवाय नमः।' यह चौदह अक्षरों वाला मन्त्र है। मूलोक्त 'ॐ अस्य मन्त्रस्य प्रजापति ऋषिः। गायत्री छन्दः, वासुदेवो देवता, धर्मार्थकाममोक्ष सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर इसका विनियोग करना चाहिये। तदनन्तर मूलोक्त 'ॐ प्रजापतये नमः शिरसि०' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करने के उपरान्त 'ॐ ह्रींह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् 'ॐ ह्रींह्रीं हृदयाय नमः, ॐ श्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ लक्ष्मीं शिखायै वषट्, ॐ वासुदेवाय कवचाय हुम्, ॐ नमः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि पञ्चाङ्गन्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'विद्युच्चन्द्रनिभं वपुः' इत्यादि श्लोक के अनुसार इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—चन्द्रमा की विद्युत् की भाँति कान्ति वाले, लक्ष्मी तथा वैकुण्ठ की एकता को प्राप्त, स्नेहवश रत्नजटित भूषा से अलंकृत, कमल, दर्पण, मणिमय कुम्भ, सरोज, गदा, शङ्ख, चक्र को धारण किये (विष्णु) सदैव लक्ष्मी प्रदान करे। इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्र की भाँति आवरणपूजा करके जप करना चाहिये।

पुरश्चरण—इस लक्ष्मीनारायण मन्त्र का पुरश्चरण चौदह लाख मन्त्रों से होता है। जैसाकि कहा भी गया है—इसका चौदह लाख जप करे; फिर चौदह सहस्र हवन कमलपुष्प तथा मधुत्रय (घी, दूध, मधु) से आप्लुत कर करना चाहिये। द्वादशाक्षर मन्त्र से विष्णुयन्त्र (पीठ) पर पूजा करनी चाहिये। पायस (खीर) से किया गया होम लक्ष्मी-प्रदायक होता है। मधुराक्त तिलों से होम करने पर सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

दधिवामनमन्त्रप्रयोगः

अथ दधिवामनाख्यचमत्कारिप्रयोगः; भूतशुद्ध्यादिकेशवादिकलामातृकान्यासान्तं पूर्ववत्। मन्त्रो यथा शारदायाम्—'ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा' इत्यष्टादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य इन्दुः ऋषिः। विराट् छन्दः। दधिवामनो देवता। सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः। ॐ इन्दुऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ दधिवामनदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ नमो तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ विष्णवे मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सुरपतये अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ महाबलाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्यात्। ततः ॐ नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ नं नमः भाले॥ २॥ ॐ मों नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ विं नमः कर्णयोः॥ ४॥ ॐ ष्णां नमः नासिकयोः॥ ५॥ ॐ वें नमः ओष्ठयोः॥ ६॥ ॐ सुं नमः तालुके॥ ७॥ ॐ रं नमः कण्ठे॥ ८॥ ॐ पं नमः बाहुद्वये॥ ९॥ ॐ तं नमः पृष्ठे॥ १०॥ ॐ यें नमः हृदये॥ ११॥ ॐ मं नमः उदरे॥ १२॥ ॐ हां नमः नाभौ॥ १३॥ ॐ वं नमः गुह्ये॥ १४॥ ॐ लां नमः ऊरुद्वये॥ १५॥ ॐ यं नमः जानुद्वये॥ १६॥ ॐ स्वां नमः जङ्घयोः॥ १७॥ ॐ हां नमः पादयोः॥ १८॥ इति मन्त्रन्यासः। इति न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

मुक्तागौरं नवमणिलसद्भूषणं चन्द्रसंस्थं भृङ्गाकारैरलकनिकरैः शोभि वक्त्रारविन्दम्।
हस्ताब्जाभ्यां कनककलशं शुद्धतोयैस्सुपूर्णं दध्यान्नाढ्यं कनकचषकं धारयन्तं भजामः॥

इति ध्यात्वा पीठे मण्डूकादिचन्द्रमण्डलान्तपीठदेवताः पूर्ववत् सम्पूज्य द्वादशाक्षरमन्त्रोदितविमलादिनवपीठशक्तीः सम्पूजयेत्। 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपदपीठात्मने नमः' इत्यासनं दत्त्वा मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ इत्यादि षडङ्गान्यभ्यर्च्य तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण पूर्ववत् वासुदेवादीन् शक्तिसहितान् पूजयेत्। ततो दलाग्रेषु ॐ केशवाय नमः॥ १॥ ॐ नारायणाय नमः॥ २॥ ॐ माधवाय नमः॥ ३॥ ॐ गोविन्दाय नमः॥ ४॥ ॐ विष्णवे नमः॥ ५॥ ॐ मधुसूदनाय नमः॥ ६॥ ॐ त्रिविक्रमाय नमः॥ ७॥ ॐ वामनाय नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। तद्बाह्ये ध्वजादीन् तद्बहिः भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदिक्पालान् सायुधांश्च सम्पूज्य तद्बहिः ॐ ऐरावताय नमः॥ १॥ ॐ पुण्डरीकाय नमः॥ २॥ ॐ वामनाय नमः॥ ३॥ ॐ कुमुदाय नमः॥ ४॥ ॐ अञ्जनाय नमः॥ ५॥ ॐ पुष्पदन्ताय नमः॥ ६॥ ॐ सार्वभौमाय नमः॥ ७॥ ॐ सुप्रतीकाय नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ गजान् पूजयेत्। एवं सप्तावरणपूजां कृत्वा धूपदीपादिनीराजनान्तैरुपचारैर्देवं सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षत्रयात्मकम्। तथा च—

गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतैः। पायसान्नैः प्रजुहुयाद्दध्यन्नैर्वा यथाविधि॥
विधानमेतद्देवस्य कीर्तितं सुरपूजितम्। पायसाज्येन जुहुयात्सहस्रं श्रियमाप्नुयात्॥
धान्यहोमेन धान्याप्तिः शतपुष्पासमुद्भवैः। बीजैः सहस्रसङ्ख्याकैर्होमो भयविनाशनः॥
दध्योदनेन शुद्धेन हुत्वा मुच्येत दुर्गतेः। स्मृत्वा त्रैविक्रमं रूपं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः॥
मुक्तो बन्धाद्भवेत्सद्यो नात्र कार्या विचारणा। पटे सम्पाद्य देवेशं भित्तौ वा पूजयेत्सुधीः॥
सुगन्धकुसुमैर्नित्यं महतीं श्रियमश्नुते॥

इति दधिवामनमन्त्रप्रयोगः।

दधिवामन मन्त्रप्रयोग—इस प्रयोग में भूतशुद्धि तथा केशवादि कलान्यास पूर्व की भाँति मातृकान्यास-पर्यन्त करना चाहिये। मन्त्र है—'ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा' इस मन्त्र का विराट् छन्द, दधिवामन देवता तथा सर्वार्थ-सिद्धिहेतु जप में विनियोग है। 'ॐ इन्दु ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये।

हृदयादि षडङ्ग न्यास 'ॐ हृदयाय नमः, ॐ नमो शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णवे शिखायै वषट्, ॐ सुरपतये कवचाय हुम्, ॐ महाबलाय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्' मन्त्रों से करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ नमः मूर्ध्नि' इत्यादि अठारह मन्त्रों से मन्त्रन्यास उन-उन निर्दिष्ट अङ्गों में करना चाहिये।

फिर मूलोक्त 'मुक्तागौरं नवमणि०' इत्यादि श्लोक के अनुसार ध्यान करना चाहिये। इसका भावार्थ इस प्रकार है—मोती के समान गौरवर्ण नवीन मणियों से शोभित चन्द्रमा पर भृङ्गाकार अलकों से जिनका मुखारविन्द शोभित है, जिनके करकमलों में शुद्ध जलपूर्ण स्वर्णकलश तथा दधि-अन्नयुक्त स्वर्ण चषक (प्याला) धारित है। उन (दधिवामन) को मैं भजता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करके यन्त्रपीठ पर मण्डूकादि चन्द्रमण्डलान्त देवताओं को पूजन 'ॐ मं मण्डलान्तं पीठदेवताभ्यो नमः' कहकर करना चाहिये। फिर पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्रोक्त पीठशक्तियों का पूजन इस प्रकार करना चाहिये—पूर्वादि क्रम से 'ॐ विमलायै नमः, ॐ उत्कर्षितायै नमः, ॐ ज्ञानायै नमः, ॐ क्रियायै नमः, ॐ योगायै नमः, ॐ प्रह्वयै नमः, ॐ सत्यायै नमः, ॐ ईशानायै नमः' इन मन्त्रों से क्रमशः पूर्व से लेकर ईशान-पर्यन्त आठ दिशा की पीठशक्तियों का पूजन कर 'ॐ अनुग्रहायै नमः' कहकर पीठमध्य में पूजन करना चाहिये। फिर 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपदपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके अथवा यन्त्र में पुष्पान्त उपचार से पूजन कर आवरणपूजा करनी चाहिये। (आगे आवरण-पूजा की विस्तृत विधि मन्त्रमहार्णव के अनुसार दी जा रही है)।

आवरण पूजा—आग्नेयादि कोणों दिशाओं तथा मध्य में 'ॐ हृदयाय नमः हृदयश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ॐ नमः शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णवे शिखायै वषट्, ॐ सुरपतये कवचाय हुम्, ॐ महाबलाय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्' इस प्रकार से षट्कोण केसरों में षडङ्गों की पूजा करे। यह प्रथमावरण की पूजा होती है। इसके बाद पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये।

द्वितीयावरण—फिर अष्टदल में पूज्य-पूजक के अन्तराल में प्राची दिशा की कल्पना करके तदनुसार क्रम से अन्य दिशाओं की कल्पना करके प्राच्यादि चार दिशाओं में 'ॐ वासुदेवाय नमः वासुदेवश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ॐ सङ्कर्षणाय नमः सङ्कर्षणश्रीपादुका०, ॐ प्रद्युम्नाय नमः०, ॐ अनिरुद्धाय नमः०, से पूजा करे। फिर आग्नेयादि चार कोणों में 'ॐ शान्त्यै नमः, ॐ श्रियै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ रत्यै नमः' इस प्रकार पूजन कर पुष्पाञ्जलि दे।

तृतीयावरण—अष्टदल के अग्रों में पूर्वादि चारो दिशाओं में 'ॐ ध्वजाय नमः, ॐ वैनतेयाय नमः, ॐ कौस्तुभाय नमः, ॐ वनमालिकायै नमः' फिर आग्नेयादि चारो कोणों में प्रदक्षिणाक्रम से 'ॐ शङ्खाय नमः, ॐ चक्राय नमः, ॐ गदायै नमः तथा ॐ शार्ङ्गाय नमः' से पूजन कर पुष्पाञ्जलि दे।

चतुर्थावरण—द्वादश दल में पूर्वादि क्रम से (यन्त्र के अङ्कानुसार)—'ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः, ॐ गोविन्दाय नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः, ॐ वामनाय नमः, ॐ श्री धराय नमः, ॐ हृषीकेशाय नमः, ॐ पद्मनाभाय नमः तथा ॐ दामोदराय नमः' से पूजन करे। ये नारायण की द्वादश मूर्तियाँ हैं, इनका पूजन कर पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये।

पञ्चमावरण की पूजा—फिर भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूर्वादि दश दिशाओं में पूजा करे तथा उसके पश्चात् उनके आयुधों की भी उसी क्रम से पूजा करनी चाहिये तथा पुष्पाञ्जलि दे। यह ५-६ आवरणों की पूजा है।

पुष्पाञ्जलि मन्त्र—'ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा। ॐ अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥' इस मन्त्र से प्रथमावरण की पुष्पाञ्जलि दे तथा इसी मन्त्र से शेष आवरणों में प्रथम के स्थान पर द्वितीय इत्यादि का उच्चारण कर पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये।

सप्तमावरण पूजा—'ॐ ऐरावताय नमः, ॐ पुण्डरीकाय नमः, ॐ वामनाय नमः, ॐ कुमुदाय नमः, ॐ अञ्जनाय नमः, ॐ पुष्पदन्ताय नमः, ॐ सार्वभौमाय नमः तथा ॐ सुप्रतीकाय नमः' इन आठ दिशाओं की पूजा भी पूर्वादि आठ दिशाओं में षष्ठावरण के बाहर इन्द्रादि के आयुधों के समीप करनी चाहिये। फिर धूप, दीप, नीराजनान्त पूजा करके मन्त्र-जप प्रारम्भ करना चाहिये।

पुरश्चरण—इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख जप से पूरा होता है। जैसा कि कहा गया है—तीन लाख मन्त्रों का जप करे तथा उसका दशांश (तीस सहस्र) हवन पायसान्न अथवा दध्यन्न (दही भात) से यथाविधि करे। यह इन सुरपूजित वामनदेव का विधान है। पायस तथा घृत से होम करने पर सहस्रगुनी लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। धान्य के होम से धान्य की प्राप्ति होती है। सौंफ के बीजों से एक सहस्र होम करने से भय का नाश होता है। दही-भात का होम करने से साधक दुर्गति से मुक्त होता है। त्रिविक्रम देव के रूप का अनन्य भाव से स्मरण करने से बन्धन से शीघ्र मुक्त होता है; इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है। किसी वस्त्र पर देव की मूर्ति बनाकर देव का पूजन करे अथवा भित्ति पर पूजन करे। यह पूजा नित्य ही सुगन्धित फूलों से होनी चाहिये।

षडक्षररामममन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'ॐ रां रामाय नमः' इति षडक्षरो मन्त्रः। अयं मन्त्रः षड्विधः। तथा च तन्त्रसारे—

स्वकामशक्तिवाग्लक्ष्मीतारााद्यः पञ्चवर्णकः। षडक्षरः षड्विधः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदः॥
ब्रह्मासम्मोहनः शक्तिर्दक्षिणामूर्तिरव्ययः। अगस्तिः श्रीशिवः प्रोक्तो मुनयोऽत्र क्रमादिमे॥

अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीरामो देवता सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीरामदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कुर्यात्॥

अथ मन्त्रन्यासः—ॐ रां नमः ब्रह्मरन्ध्रे॥ १॥ ॐ रां नमः भ्रुवोर्मध्ये॥ २॥ ॐ मां नमः हृदि॥ ३॥ यं नमः नाभौ॥ ४॥ ॐ नं नमः लिङ्गे॥ ५॥ ॐ मं नमः पादयोः इति न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं पश्यन्तीं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पज्ज्वलाङ्गं भजे॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते द्वादशाक्षरे वैष्णवे पीठे पीठपूजां कृत्वा मूलेन मूर्त्तिं प्रकल्प्य पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्यावरणपूजां कुर्यात्।

तद्यथा (देववामपार्श्वे) श्रीं सीतायै नमः॥ १॥ (अग्रे) ॐ शार्ङ्गाय नमः॥ २॥ (दक्षपार्श्वे) ॐ सरेभ्यो नमः॥ ३॥ (वामपार्श्वे) ॐ चापाय नमः॥ ४॥ इति पूजयेत्। इति प्रथमावरणम्॥ १॥ तद्बहिः केसरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ इत्यङ्गानि पूर्ववत्सम्पूजयेत्। इति द्वितीयावरणम्॥ २॥ ततोऽष्टदलेषु पूर्वादिदिक्षु—ॐ हनुमते

नमः ॥ १ ॥ ॐ सुग्रीवाय नमः ॥ २ ॥ ॐ भरताय नमः ॥ ३ ॥ ॐ विभीषणाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ लक्ष्मणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्गदाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ शत्रुघ्नाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ जाम्बवते नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। इति तृतीयावरणम् ॥ ३ ॥ ततो दलाग्रेषु—ॐ सृष्टये नमः ॥ १ ॥ ॐ जयन्ताय नमः ॥ २ ॥ ॐ विजयाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ सुराष्ट्राय नमः ॥ ४ ॥ ॐ राष्ट्रवर्धनाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अकोपाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ धर्म्मपालाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ सुमताय नमः ॥ ८ ॥ इति चतुर्थावरणम् ॥ ४ ॥ ततो भूपुरे पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान्सायुधांश्च सम्पूज्य धूपादिनीराजनान्तैरुपचारैः श्रीरामं समर्च्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षात्मकम्। तथा च शारदायाम्—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं सरोरुहैः। जुहुयादर्चिते वह्नौ ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥
एवं पूजादिभिः सिद्धे मनौ कर्म्माणि साधयेत्। जातीप्रसूनैर्जुहुयाच्चन्दनाम्भःसमुक्षितैः ॥
राज्यवश्याय कमलैर्धनधान्यादिसम्पदे। नीलोत्पलानां होमेन वशयेदखिलं जगत् ॥
बिल्वप्रमाणैर्जुहुयादिन्दिरावाप्तये नरः। दूर्वाहोमेन दीर्घायुर्भवेन्मन्त्री निरामयः ॥
रक्तोत्पलहुतान्मन्त्री धनमाप्नोति वाञ्छितम्। मेधाकामेन होतव्यं पालाशकुसुमैर्नवैः ॥
तज्जप्तमम्भः प्रपिबेत्कविर्भवति वत्सरात्। तन्मन्त्रितान्नं भुञ्जीत महदारोग्यमाप्नुयात् ॥

इति षडक्षरश्रीराममन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

श्रीरामयन्त्रम्
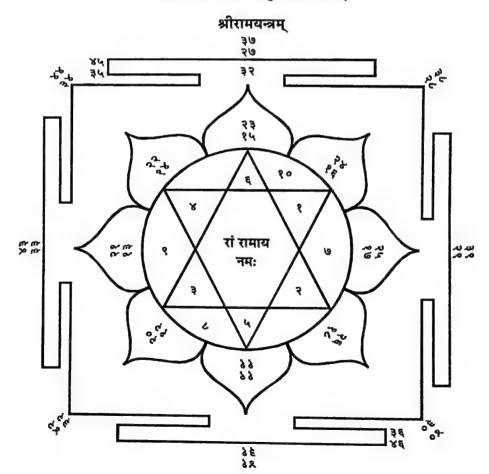
षडक्षर राममन्त्र पुरश्चरण—'ॐ रां रामाय नमः' यह षडक्षर राममन्त्र है। यह मन्त्र छः प्रकार का होता है, जिसमें 'रामाय नमः' इन पाँच अक्षरों के पूर्व काम, शक्ति, वाक्, लक्ष्मी तथा तार (ॐ) लगाकर बनाया जाता है। इन छहों के क्रमशः ब्रह्मा, सम्मोहन (विश्वामित्र), शक्ति, दक्षिणामूर्ति, अगस्ति, शिव—ये ऋषि होते हैं।

प्रथम मन्त्र (रां रामाय नमः) का विनियोग—'ॐ अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा, ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीरामो देवता, सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः (इसी प्रकार अन्य षडक्षर राममन्त्र के ऋषि छन्द एवं देवता पार्श्व में दिये गये चक्रानुसार देखकर उनका विनियोग करना चाहिये। तदनन्तर ॐ ब्रह्मर्षये नमः शिरसि, गायत्री छन्दसे नमः गुह्ये, ॐ श्रीरामो देवतायै नमः हृदि—इन तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर 'ॐ रां हृदयाय नमः, ॐ रीं शिरसे स्वाहा, ॐ रूं शिखायै वषट्, ॐ रैं कवचाय हुम्, ॐ रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ रः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये। फिर मूल में लिखे हुए 'ॐ रां नमः ब्रह्मरन्ध्रे' इत्यादि पाँच मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में मन्त्रन्यास करना चाहिये।

षड्विध षडक्षरी राम मन्त्र के ऋषि आदि का द्योतक-चक्र

क्र०	षडाक्षरी राम मन्त्र के छः भेद	ऋषि	छन्द	देवता
१.	रां रामाय नमः	ब्रह्मा	गायत्री	श्रीराम
२.	क्लीं रामाय नमः	सम्मोहन-विश्वामित्र	गायत्री	श्रीराम
३.	ह्रीं रामाय नमः	शक्ति	गायत्री	श्रीराम
४.	ऐं रामाय नमः	दक्षिणा मूर्ति	गायत्री	श्रीराम
५.	श्रीं रामाय नमः	अगस्ति	गायत्री	श्रीराम
६.	ॐ रामाय नमः	शिव	गायत्री	श्रीराम

फिर मूलोक्त 'कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं०' इत्यादि श्लोक से ध्यान करने के उपरान्त पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्र से वैष्णवपीठ में पूजा करके मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके पुष्पान्त उपचार से पूजित करके आवरणपूजा करनी चाहिये। प्रथमावरण में मूल में लिखित मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट वामपार्श्वादि पाँच स्थानों में 'श्रीं सीतायै नमः' इत्यादि मन्त्रों से पूजा करे। फिर द्वितीयावरण में उसके बाहर केसरों में आग्नेयादि दिशाओं में मध्य में तथा मुख्य दिशाओं में क्रम से 'ॐ रां हृदयाय नमः' इत्यादि चार-चार मन्त्रों से पुनः पुनः पूजन करे। तृतीयावरण में अष्टदल में पूर्वादि दिशाओं में 'ॐ हनुमते नमः' इत्यादि मूलोक्त मन्त्रों से पूजन करे। चतुर्थावरण—'ॐ सृष्टये नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से अष्टदल के अग्रों में पूजा करे। पञ्चमावरण में भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करे। षष्ठावरण में वज्रादि दश आयुधों का पूजन करे। फिर पुष्पाञ्जलि देकर धूपादि से लेकर नमस्कार-पर्यन्त उपचारों से पूजा करके जप प्रारम्भ करे। इसका पुरश्चरण छः लाख जप से होता है। जैसाकि शारदातिलक में लिखा है—जितने मन्त्र में अक्षर हैं, उतने ही लाख जप करे तथा उसका दशांश हवन कमल के फूलों से करके फिर उसका दशांश ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार के पूजादि से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। फिर उस सिद्ध मन्त्र का प्रयोग करे। चमेली के फूलों को चन्दन के जल (अर्क=अर्घ्य) में आप्लुत कर हवन करे तो सब काम सिद्ध होते हैं। राजवश्य के लिये कमलों से तथा धन-धान्यादि के लिये नीलकमल से, बिल्वफलों से लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये, दीर्घायु तथा निरोगता के लिये दूर्वा से होम करे। लालकमल से धन, पलाशफूलों से बुद्धि प्राप्त होती है, इसके जप से अभिमन्त्रित जल तथा अन्न एक वर्ष में कवित्व देता है तथा आरोग्य की प्राप्ति कराता है।

दशाक्षररामम‍न्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'ॐ जानकीवल्लभाय स्वाहा हुं' इति दशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिः। विराट् छन्दः। जानकीवल्लभो रामो देवता। रां बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सर्वेष्टसिद्धये विनियोगः। ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि॥ १॥

ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे ॥ २ ॥ ॐ रामदेवतायै नमः हृदि ॥ ३ ॥ ॐ रां बीजाय नमः गुह्ये ॥ ४ ॥ स्वाहाशक्तये नमः पादयोः ॥ ५ ॥ इति ऋष्यादिन्यासः ॥ १ ॥ ॐ क्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ क्लीं अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ इति करन्यासः ॥ २ ॥ एवं हृदयादिन्यासं कुर्यात् ॥ ३ ॥ ततः ॐ जां शिरसि ॥ १ ॥ ॐ नं ललाटे ॥ २ ॥ ॐ कीं भ्रुवोः ॥ ३ ॥ ॐ वं ताल्वोः ॥ ४ ॥ ॐ ल्लं कण्ठे ॥ ५ ॥ ॐ भां हृदि ॥ ६ ॥ ॐ यं नाभौ ॥ ७ ॥ ॐ स्वां ऊर्वोः ॥ ८ ॥ ॐ हां जानुनोः ॥ ९ ॥ ॐ हुं पादयोः ॥ १० ॥ इति न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नसौन्दर्य्यमण्डपे। मन्दारपुष्पैराबद्धवितानतोरणाञ्चिते ॥
सिंहासनसमारूढं पुष्पकोपरिराघवम्। रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः ॥
संस्तूयमानमुनिभिः सर्वतः परिसेवितम्। सीतालङ्कृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपशोभितम् ॥
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम् ॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्तमन्त्रवत् पीठपूजादिकं कृत्वा जपं कुर्यात्। तथा च—ध्यायेद्देवं जपेन्मन्त्रं वर्णलक्षमनन्यधीः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। इति दशाक्षररामममन्त्रप्रयोगः।

दशाक्षर राममन्त्र-प्रयोग—'ॐ जानकीवल्लभाय स्वाहा हुम्' यह दशाक्षर मन्त्र है। इसके वसिष्ठ ऋषि, विराट् छन्द, जानकीवल्लभ राम देवता, रां बीज, स्वाहा शक्ति तथा सर्वार्थसिद्धि के लिये विनियोग है। मूल में लिखे 'ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ क्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करे। फिर इन्हीं मन्त्रों से नेत्रत्रयाय वौषट् को छोड़कर हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ जां शिरसि' इत्यादि दश मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में न्यास करे। तदनन्तर मूल में लिखित 'अयोध्यानगरे०' इत्यादि साढ़े तीन श्लोकों के अनुसार श्रीरामजी का ध्यान करे। फिर ध्यानोपरान्त पूर्व की भाँति पीठपूजादि करके जप आरम्भ करे। इसका पुरश्चरण दश लाख मन्त्रजप अनन्य भाव से करने पर सम्पन्न हो जाता है। अन्य सब क्रियाएँ पूर्व में कथित (षडक्षर राममन्त्र में वर्णित) विधि से करनी चाहिये।

नरसिंहमन्त्रप्रयोगः

शारदायां मन्त्रो यथा—

ॐ उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम् ॥

इति द्वात्रिंशद्वर्णात्मको मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीनरसिंहो देवता। हं बीजम्। ईं शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि ॥ १ ॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे ॥ २ ॥ ॐ श्रीनृसिंहदेवतायै नमः हृदि ॥ ३ ॥ ॐ हं बीजाय नमः गुह्ये ॥ ४ ॥ ॐ ईं शक्तये नमः पादयोः ॥ ५ ॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ उग्रं वीरम् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ महाविष्णुं तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ ज्वलन्तं सर्वतोमुखं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ नृसिंहं भीषणम् अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ भद्रं मृत्युमृत्युं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ॐ नमाम्यहं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्य्यात्। ॐ उं नमः शिरसि ॥ १ ॥ ॐ ग्रं नमः ललाटे ॥ २ ॥ ॐ वीं नमः नेत्रयोः ॥ ३ ॥ ॐ रं नमः मुखे ॥ ४ ॥ ॐ मं नमः दक्षिणबाहुमूले ॥ ५ ॥ ॐ हां नमः दक्षकूर्परे ॥ ६ ॥ ॐ विं नमः दक्षिणमणिबन्धे ॥ ७ ॥ ॐ ष्णुं नमः दक्षहस्ताङ्गुलिमूले ॥ ८ ॥ ॐ ज्वं नमः दक्षहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ ९ ॥ ॐ लं नमः वामबाहुमूले ॥ १० ॥ ॐ तं नमः वामकूर्परे ॥ ११ ॥ ॐ सं नमः वाममणिबन्धे ॥ १२ ॥ ॐ वं नमः वामहस्ताङ्गुलि-मूले ॥ १३ ॥ ॐ तों नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे ॥ १४ ॥ ॐ में नमः दक्षपादमूले ॥ १५ ॥ ॐ स्वं नमः दक्षजानुनि ॥ १६ ॥ ॐ नृं

नमः दक्षगुल्फे ॥ १७ ॥ ॐ सिं नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले ॥ १८ ॥ ॐ हं नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रे ॥ १९ ॥ ॐ भीं नमः वामपादमूले ॥ २० ॥ ॐ षं नमः वामजानुनि ॥ २१ ॥ ॐ णं नमः वामगुल्फे ॥ २२ ॥ ॐ भं नमः वामपादाङ्गुलिमूले ॥ २३ ॥ ॐ द्रं नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे ॥ २४ ॥ ॐ मृं नमः दक्षिणकुक्षौ ॥ २५ ॥ ॐ त्युं नमः वामकुक्षौ ॥ २६ ॥ ॐ मृं नमः हृदि ॥ २७ ॥ ॐ त्युं नमः गले ॥ २८ ॥ ॐ नं नमः दक्षिणपार्श्वे ॥ २९ ॥ ॐ मां नमः वामपार्श्वे ॥ ३० ॥ ॐ म्यं नमः लिङ्गे ॥ ३१ ॥ ॐ हं नमः ककुदि ॥ ३२ ॥ इति मन्त्रन्यासः । इति न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

माणिक्याद्रिसमप्रभं निजरुचा सन्त्रस्तरक्षोगणं जानुन्यस्तकराम्बुजं त्रिनयनं रत्नोल्लसद्भूषणम्।
बाहुभ्यां धृतशङ्खचक्रमनिशं दंष्ट्राग्रवक्त्रोल्लसज्ज्वालाजिह्वमुदग्रकेशनिचयं वन्दे नृसिंहं विभुम्॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्तविष्णोः पीठपूजादि कृत्वा मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पुष्पान्तैरुपचारैः नृसिंहं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। (अग्न्यादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च) ॐ उग्रं वीरं हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ महाविष्णुं शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ ज्वलन्तं सर्वतोमुखं शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ नृसिंहं भीषणं कवचाय हुं ॥ ४ ॥ ॐ भद्रं मृत्युमृत्युं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ नमाम्यहम् अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इत्यङ्गानि सम्पूजयेत्। ततोऽष्टदलेषु पूर्वादिचतुर्दिक्षु ॐ पक्षीन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शङ्कराय नमः ॥ २ ॥ ॐ शेषाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ४ ॥ (आग्नेयादिकोणेषु) ॐ श्रियै नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रियै नमः ॥ ६ ॥ ॐ धृत्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ पुष्ट्यै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्॥ भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादीन् दशदिक्पालान् सम्पूज्य तदुपरि वज्राद्यस्त्राणि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तपूजां समाप्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वात्रिंशल्लक्षात्मकम्।

श्रीनृसिंहयन्त्रम्
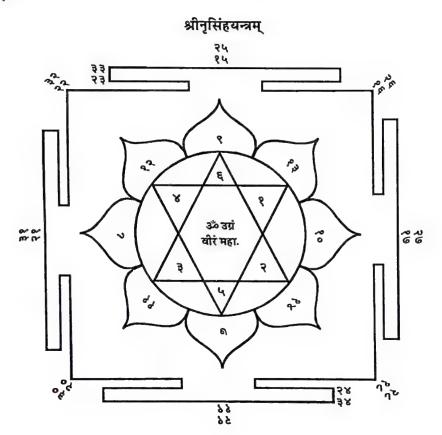
नृसिंह मन्त्रप्रयोग-विधि—'ॐ उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्' यह बत्तीस अक्षरों का मन्त्र है। इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, श्रीनृसिंह देवता, हं बीज, ईं शक्ति है तथा सर्वेष्टसिद्धिहेतु जप में विनियोग होता है।

प्रथमत: मूल में लिखित 'ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर आगे लिखे 'ॐ उग्रं वीरं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गुष्ठादि करन्यास करे। 'ॐ उग्रं वीरं हृदयाय नमः, ॐ महाविष्णुं शिरसे स्वाहा, ॐ ज्वलन्तं सर्वतोमुखं शिखायै वषट्, ॐ नृसिंहं भीषणं कवचाय हुम्, ॐ भद्रं मृत्युमृत्युं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ नमाम्यहं अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास करे।

फिर मूलोक्त 'ॐ उं नमः शिरसि' आदि बत्तीस मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में मन्त्राक्षरों का न्यास करना चाहिये। मन्त्रन्यासोपरान्त देव का ध्यान 'माणिक्याद्रिसमप्रभं निजरुचा०' इत्यादि श्लोक के अनुसार करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—अपनी रुचा (कान्ति) से माणिक्यादि प्रभा के द्वारा राक्षसगणों को सन्त्रस्त करने वाले, अपने जानुओं पर करकमलों को रखे हुए, त्रिनेत्र, रत्नों से शोभित भूषणों को धारण किये हुए, अपनी भुजाओं में सदैव शङ्ख-चक्र धारण किये, दंष्ट्राग्र से जिनका मुख शोभित है, जिह्वा से उदग्र ज्वालाएँ निकल रही हैं, केशों से युक्त विभु नृसिंह की मैं वन्दना करता हूँ। इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त विष्णुपीठ के अनुसार पूजा करके मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके उसकी पूजा पुष्पान्त उपचारों से करके आवरण-पूजा करनी चाहिये।

आवरण-पूजा—प्रथम आग्नेयादि कोण, केसरों में, मध्य में तथा दिशाओं 'ॐ उग्रं वीरं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करे। फिर अष्टदल में पूर्वादि दिशाओं में पूर्वादि चारो दिशाओं में 'ॐ पक्षीन्द्राय नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके आग्नेयादि कोणों में 'ॐ श्रियै नमः' इत्यादि ५ से ८ क्रम के चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्वादि क्रम से इन्द्रादि दश दिक्पालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करे। इस प्रकार आवरण-पूजा करके धूपादि नमस्कारान्त पूजा को समाप्त कर जप करे। इसका पुरश्चरण बत्तीस लाख जप से होता है।

तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रं घृतप्लुतैः। पायसान्नैः प्रजुहुयाद्विधिवत्पूजितेऽनले॥
एवं कृते भवेन्मन्त्री सिद्धमन्त्रः प्रतापवान्। श्रीपुष्ट्यै जुहुयान्मन्त्री बिल्वकाष्ठैर्धितेऽनले॥
सहस्रं श्रियमाप्नोति पत्रैर्वा बिल्वसम्भवैः। प्रसूनैर्वा फलैस्तद्वद्दूर्वाहोमादरोगताम्॥
मन्त्रजप्तां वचां श्वेतां भक्षयेत्प्रातरन्वहम्। वाक्सिद्धिं लभते मन्त्री वाचस्पतिरिवापरः॥
सलिले देवमभ्यर्च्य गन्धपुष्पादिभिः शुभैः। दूर्वाभिस्तत्र जुहुयान्नित्यमष्टोत्तरं शतम्॥
उपसर्गा विनश्यन्ति क्षुद्रभूतज्वरादिभिः। दुःस्वप्ने निशि सञ्जाते स्नात्वा मन्त्रमिमं जपेत्॥
अनिद्रो मन्त्रवित्पश्चात्सुस्वप्नस्तस्य जायते। व्याघ्रचौरमृगादिभ्यो महारण्ये भयाकुले॥
रक्षेन्मनुरयं जप्तो भयेष्वन्येषु मन्त्रिणम्। अनेन मन्त्रितं भस्म विषग्रहमहामयान्॥
नाशयेदचिरादेवं मन्त्रस्यास्य प्रभावतः।

पुरश्चरण के विविध फल—घृताप्लुत पायसान्न से बत्तीस सहस्र नृसिंह मन्त्र को जप करने के उपरान्त बत्तीस सहस्र होम विधिवत् पूजित अग्नि में करे। ऐसा करने से साधक सिद्ध मन्त्र से युक्त प्रतापी हो जाता है। पुष्टि के हेतु बेल की समिधा से प्रज्वलित अग्नि में हवन करे अथवा बिल्वपत्रों से हवन करे तो उसे सहस्रगुनी लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार बिल्व के फूलों तथा दूर्वाहोम का भी फल प्राप्त होता है। इस नृसिंह मन्त्र को जप

कर श्वेत वचा को प्रातःकाल प्रतिदिन खाने से साधक दूसरे ब्रह्माजी के समान वाक्सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। जल में नृसिंह देव की पवित्र गन्ध-पुष्पादि से पूजा करके फिर नित्य १०८ हवन उसी मन्त्र से करे। तो उसके भूतज्वरादि क्षुद्र रोग नष्ट होते हैं। यदि रात में डरावने स्वप्न आते हों तो उसे शयन के पूर्व स्नान करके इस मन्त्र को जपना चाहिये, मन्त्रजप के समय नींद नहीं आनी चाहिये। जप के उपरान्त शयन करने से उसको बुरे स्वप्न नहीं आते हैं; अपितु सुस्वप्न आते हैं। इस मन्त्र का जप मनुष्य को व्याघ्र, चोर (डाकू-आतङ्कवादी) से युक्त घोर जङ्गल में सुरक्षित रखता है। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म विषविकार, भूत-प्रेत आदि विकार को शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

घोराभिचारे सोन्मादे महोत्पाते महाभये॥
जपेन्मन्त्रं स्मरन्देवं दुःखान्मुक्तो भवेन्नरः। सिंहरूपं महाभीमं महादंष्ट्रादिभीषणम्॥
स्मृत्वात्मानं रिपुं पश्चाद्ध्यायन्मृगशिशुं रिपुम्। गृहीत्वा गलदेशे तं पुनर्दिक्षु क्षिपेद्द्रुतम्॥
पुत्रमित्रकलत्राद्यैरुच्चाटो जायते रिपोः। पूर्वमृत्युपदे साध्यनाम कृत्वा स्वयं हरिः॥
निशितैर्नखदंष्ट्राद्यैः खण्ड्यमानं रिपुं स्मरन्। नित्यमष्टोत्तरशतं जपन्मन्त्रमतन्द्रितः॥
जायते मण्डलादर्वाक् शत्रुर्वैवस्वतप्रियः।

पागलपन में, घोर अभिचार कर्म (मूठ, चौकीखोर-खुरागर) आदि के प्रभाव में, महान् उत्पात प्रकट होने पर, महाभय के अवसर पर श्री नृसिंह देवता का स्मरण करते हुए इस बत्तीस अक्षर के सिद्धनृसिंह मन्त्र का जप करे तो मनुष्य दुःखरहित हो जाता है। सिंह के समान महा भयङ्कर रूपधारी, महान् भीषण दंष्ट्रा वाले को स्मरण करके अपने शत्रु का स्मरण करके अपने शत्रु के मृगशिशुतुल्य मुख का ध्यान करके उसके कण्ठ को पकड़कर शीघ्रता से फेंक दे। यदि शत्रु के द्वारा पुत्र मित्र-कलत्रादि के लिये उच्चाटन का प्रयोग कर दिया गया हो तो उस साध्य व्यक्ति का नाम लिखकर नृसिंह रूप कल्पित करके 'उस शत्रु को नखदंष्ट्रा से भगवान् विदीर्ण कर रहे हैं' ऐसा सोचे तथा नित्य एक सौ आठ मन्त्र आलस्यरहित होकर जप करे। इस प्रयोग से चालीस दिन के भीतर ही शत्रु यमराज को प्राप्त हो जाता है।

यन्त्रं कुर्वन्ति विधिवच्छत्रुसेनानिवारणे॥
विभीतकाष्ठैर्ज्वलिते पावके रिपुमर्दनम्। विचिन्त्य देवं नृहरिं सम्पूज्य कुसुमादिभिः॥
समूलचूलैर्जुहुयाच्छरैर्दशशतं पृथक्। रिपुं खादन्निव जपेत् त्रीन् भिन्नदिवसान् क्षिपेत्॥
हुत्वा सप्तदिनं सेनामिष्टां मन्त्री महीपतेः। प्रस्थापयेच्छुभे लग्ने परराष्ट्रजयेच्छया॥
तस्याः पुरस्तान्नृहरिं निघ्नन्तं रिपुमण्डलम्। ध्यात्वा प्रयोगं कुर्वीत यावदायाति सा पुनः॥
विजित्य निखिलाञ्छत्रून्सेह वीरश्रिया सुखम्। आगत्य विजयी राजा ग्रामक्षेत्रधनादिभिः॥
प्रीणयेन्मन्त्रिणं सम्यक् विभवैः प्रीतमानसः। मन्त्री यदि न सन्तुष्येदनर्थः स्यान्महीपतेः॥

इति नृसिंहस्य द्वात्रिंशद्वर्णमन्त्रप्रयोगः।

शत्रुसेना के निवारण के लिये विधिपूर्वक श्री नृसिंहयन्त्र का निर्माण कर 'बहेड़े की लकड़ी की प्रज्ज्वलित अग्नि में शत्रु जल रहा है' ऐसा स्मरण करते हुए नृसिंह देव का पूजन पुष्पादि से करे तथा दशशत (एक सहस्र) सरकण्डों से हवन करे। इस प्रकार सात दिनों तक हवन कर फिर अपनी सेना से शुभ दिन में शत्रुसेना पर आक्रमण कराये तो उसकी सेना के आगे-आगे स्वय भगवान् नृसिंह देव शत्रुमण्डल का नाश करते हुए चलते हैं।

इस प्रकार इस प्रयोग को करने से शत्रुसेना को परास्त करके वह वीर राजा सुखपूर्वक राज्यलक्ष्मी को प्राप्त कर लेता है। ऐसा राजा शत्रु पर आक्रमण करने के पश्चात् ग्राम, क्षेत्र, धनादि को जीतकर अपने अधिकार में कर लेता है और विपुल लक्ष्मी एवं कीर्ति के साथ वापस अपनी राजधानी में लौटता है।

यहाँ यह ध्यान रखना चाहिये कि जिस मन्त्री (तान्त्रिक) के सहयोग से यह शत्रुविनाश का कार्य सम्पन्न हो, उसे सन्तुष्ट करना चाहिये, उसे सम्यक् दक्षिणा आदि से वैभव सम्पन्न कर देना चाहिये; अन्यथा उसके असन्तुष्ट होने पर राजा का भयङ्कर अनिष्ट होता है।

लक्ष्मीनृसिंहप्रयोगः

मूल मन्त्रो यथा—'ॐ श्रींह्रीं जयलक्ष्मीप्रियाय नित्यप्रमुदितचेतसे लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय श्रींह्रीं नमः' इत्येकत्रिंशद्वर्णो मन्त्रः। अस्य लक्ष्मीनृसिंहमन्त्रस्य पद्मभवो ऋषिः। अतिजगती छन्दः। श्रीनरकेसरी देवता। श्रीं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ पद्मभवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अतिजगतीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ श्रीनरकेसरिदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ श्रीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ श्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ श्रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ श्रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ श्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ श्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कुर्यात्। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

क्षीराब्धौ वसुमुख्यदेवनिकरैरग्रादिसंवेष्टितः शङ्खं चक्रगदाम्बुजं निजकरैर्बिभ्रत्त्रिनेत्रः सितः।
सर्पाधीशफणातपत्रलसितः पीताम्बरालङ्कृतो लक्ष्म्याश्लिष्टकलेवरो नरहरिस्तान्नीलकण्ठो मुदे॥ १॥

एवं ध्यात्वा पूर्वोक्ते विष्णोः पीठे मूलेन मूर्त्तिं प्रकल्प्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्। (षट्कोणे) ॐ श्रां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ श्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ श्रूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ श्रैं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ श्रः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति प्रथमावरणम्। ततोऽष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ भास्वत्यै नमः॥ १॥ ॐ भास्कर्यै नमः॥ १॥ ॐ चिन्तायै नमः॥ ३॥ ॐ द्युतये नमः॥ ४॥ ॐ उन्मीलिन्यै नमः॥ ५॥ ॐ रमायै नमः॥ ६॥ ॐ कान्त्यै नमः॥ ७॥ ॐ रुचये नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ शक्तीः पूजयेत्। ततो भूपुरे पूर्वादिषु इन्द्रादिदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तैरुपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं षष्टिसहस्राधिकलक्षत्रयम्। तथा च—

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षत्रयं षष्टिसहस्रकम्। मध्वक्तैर्मल्लिकापुष्पैर्जुहुयाज्जातवेदसि ॥
(षट्शतं त्रिसहस्राणि आहुतीर्दद्यात्)।
इत्थं सिद्धे मनौ मन्त्री निग्रहानुग्रहक्षमः। मल्लिकाकुसुमैर्होमादिष्टसिद्धिमवाप्नुयात् ॥

लक्ष्मीनृसिंहमन्त्र की प्रयोग-विधि—'ॐ श्रीं ह्रीं जयलक्ष्मीप्रियाय नित्यप्रमुदितचेतसे लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय श्रीं ह्रीं नमः' यह इकतीस अक्षरों का मूल मन्त्र होता है। 'इस लक्ष्मीनृसिंह मन्त्र के पद्मभव ऋषि हैं। अति जगती छन्द है। श्री नरकेसरी देवता हैं। श्रीं बीज तथा ह्रीं शक्ति है। मेरे अभीष्ट की सिद्धि के लिये विनियोग है।' इस अभिप्राय का मूलोक्त मंत्र विनियोग के लिये बोलकर जल छोड़ना चाहिये।

तदनन्तर 'ॐ पद्मभवऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करके मूलोक्त 'ॐ श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ श्रां हृदयाय नमः, ॐ श्रीं शिरसे स्वाहा,

ॐ श्रूं शिखायै वषट्, ॐ श्रैं कवचाय हुम्, श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ श्रः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करके न्यासोपरान्त मूल में लिखित 'क्षीराब्धौ वसुमुख्यदेवनिकरै०' इत्यादि श्लोक के अनुसार इस प्रकार ध्यान करना चाहिये। क्षीरसागर में धन के प्रमुख देवताओं से जिनका अग्र संवेष्टित है, जो अपने हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा तथा पद्म का धारण किये हैं, जो त्रिनेत्र वाले तथा श्वेत वर्ण के सर्प के फण के छाते से युक्त हैं, पीताम्बर से अलंकृत तथा लक्ष्मी से आश्लिष्ट शरीर वाले हैं, वे नीलकण्ठ नृसिंह देव प्रसन्न हों' इस प्रकार से ध्यान करने के उपरान्त पाद्यादि पुष्पान्त से नृसिंह मूर्ति की पूजा कर अथवा मूल मन्त्र से कल्पित मूर्ति की पूजा करके फिर आवरणपूजा करे। सर्वप्रथम मण्डूकपरतत्त्वान्त देवों का पूजन करे।

आवरण-पूजा—प्रथमावरण में मध्य में बने षट्कोण में 'ॐ श्रां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करनी चाहिये। द्वितीयावरण में उसके बाहर अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से 'ॐ भास्वत्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ शक्तियों की पूजा करना चाहिये। तृतीयावरण में भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करना चाहिये। चतुर्थावरण में दिक्पालों के बाहर की ओर उनके समीप आयुधों की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार आवरण-पूजा करके धूपादि नमस्कारान्त उपचार करके जप करना चाहिये। इस जप का पुरश्चरण तीन लाख साठ सहस्र जप से सम्पन्न होता है।

पुरश्चरण—इस प्रकार लक्ष्मीनृसिंह की पूजा एवं ध्यान करके उनके इकतीस अक्षरों वाले मूल मन्त्र का तीन लाख साठ सहस्र की संख्या में विधिपूर्वक जप करना चाहिये तथा जप पूर्ण हो जाने के उपरान्त मधु से आप्लुत करके मल्लिका के फूलों की तीन सहस्र छः सौ आहुतियाँ अग्नि में देकर हवन करना चाहिये। इस प्रकार से साधक को मन्त्र सिद्ध हो जाता है। यह सिद्ध मन्त्र प्राप्त करके साधक निग्रह तथा अनुग्रह में सक्षम हो जाता है। मल्लिका के पुष्पों के द्वारा हवन करने से सिद्धि प्राप्त होती है। इस प्रकार लक्ष्मी नृसिंह मन्त्र की प्रयोग विधि समाप्त हुई।

षडक्षरनृसिंहमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'ॐ आं ह्रीं क्ष्रौं क्रौं हुं फट्' इति षडक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। नरसिंहो देवता। सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिश्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ नरसिंह-देवतायै नमः हृदि॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ क्ष्रौं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ क्रौं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ हुं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्यात्। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

कोपादालोलजिह्वं विवृतनिजमुखं सोमसूर्याग्निनेत्रं पादादानाभिरक्तप्रभमुपरि सितं भिन्नदैत्येन्द्रगात्रम्।
शङ्खं चक्रासिपाशाङ्कुशकुलिशगदादोरणान्युद्वहन्तं भीमं तीक्ष्णोग्रदंष्ट्रं मणिमयविविधाकल्पमीडे नृसिंहम्॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

षट्कोणे आग्नेयादि केसरेषु मध्ये दिक्षु च—ॐ आं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ क्ष्रौं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ क्रौं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ हुं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ फट् अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति पूजयेत्। तद्बहिः अष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ चक्राय नमः॥ १॥ ॐ शङ्खाय नमः॥ २॥ ॐ पाशाय नमः॥ ३॥ ॐ अङ्कुशाय नमः॥ ४॥ ॐ वज्राय नमः॥ ५॥ ॐ कौमोदक्यै नमः॥ ६॥ ॐ खड्गाय नमः॥ ७॥ ॐ खेटाय नमः॥ ८॥ इति सम्पूजयेत्। ततो भूपुरे इन्द्रादीन् दिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तैरुपचारैरभ्यर्च्य जपं कुर्यात्। तथा च अस्य पुरश्चरणं षट्लक्षम्।

ऋतुलक्षं जपेदेनं घृतेन जुहुयान्नरः। तत्सहस्रं समिद्धेऽग्नौ तोषयेद्द्रविणैर्गुरुम्॥
एवं कृत्वा पुरश्चर्यां मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्। प्रयोगान्कल्पनिर्दिष्टान्कुर्यात्स्वस्य परस्य वा॥
रक्तोत्पलैस्त्रिमध्वक्तैः सहस्रं जुहुयान्नवैः। नित्यं मासाद्भवेदिष्टं वत्सराद्धनधान्यवान्॥
रक्तैस्त्रिमधुरोपेतैः पद्मैर्भानुसहस्रकम्। जुहुयान्महतीं लक्ष्मीमायुर्वश्यमवाप्नुयात्॥
लाजांस्त्रिमधुरोपेतान्प्रातःकालेषु जुह्वतः। कन्यासिद्धिर्भवेत्पक्षात्कन्यायाः सद्वरो भवेत्॥
दूर्वापयोघृताभ्यक्ता अष्टोत्तरशतं सुधीः। अन्वहं जुहुयात्सम्यग्दीर्घमायुरवाप्नुयात्॥
तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहादिभिः सह॥
सपञ्चगव्यं जुहुयादपामार्गस्य मञ्जरीम्। नित्यं सहस्रमानेन सप्ताहं विजितेन्द्रियः॥
होमोऽयं सर्वथा भूतकृत्यारोगान्प्रणाशयेत्। पयोक्तैरमृताखण्डैस्त्रिसहस्रं चतुर्दिनम्॥
अनेन विहितो होमो भ्रमज्वरविनाशनः। समो नास्ति मनुः कश्चिच्छायानुग्रहसाधनः॥

इति षडक्षरनृसिंहमन्त्रप्रयोगः।

षडक्षर नृसिंहमन्त्र प्रयोग-विधि—'ॐ आं ह्रीं क्ष्रौं क्रौं हुं फट्' यह छः अक्षरों का नृसिंह मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द पङ्क्ति, नृसिंह देवता हैं तथा सर्वेष्टसिद्धि में विनियोग है। मूलोक्त 'ॐ ब्रह्मर्षये नमः शिरसि:' इत्यादि तीन मन्त्रों से इसका ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों को पढ़कर करन्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ आं हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्ष्रौं शिखायै वषट्, ॐ क्रौं कवचाय हुम्, ॐ हुं नेत्रत्रयाय वौषट्,ॐ फट् अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे।

न्यासोपरान्त मूल में लिखित 'कोपादालोलजिह्वं विवृतनिजमुखं' इत्यादि श्लोक से ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—'क्रोध से जिनकी जीभ लप-लपा रही है तथा मुख खुला हुआ है; जिनके चन्द्र, सूर्य तथा अग्नि—ये तीन नेत्र हैं, जो पैरों से लेकर नाभिपर्यन्त शरीर वाले तथा उसके ऊपर शुभ गात्र वाले हैं तथा जो दैत्येन्द्र (हिरण्यकशिपु) के गात्र को विदीर्ण कर रहे हैं। शङ्ख, चक्र, गदा, तलवार, पाश, अङ्कुश, वज्र, गदा, तोरण (धागा) को अपने हाथों में धारण किये हैं, जिनके भयङ्कर तीक्ष्ण उग्र दंष्ट्रा है, उन नृसिंह को मणिमय विविध कल्पों से पूजता हूँ'। इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त षडक्षर मूल मन्त्र से पीठ की कल्पना करके पुष्पान्त उपचारों के द्वारा पूजन कर फिर आवरण-पूजा करनी चाहिये।

आवरण-पूजा—षट्कोण में आग्नेयादि केसरों, मध्य तथा दिशाओं में 'ॐ आं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजन करना चाहिये। फिर उस षट्कोण के बाहर अष्टदल के दलों में पूर्वादि क्रम से 'ॐ चक्राय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करके तदुपरान्त उनके बाहर समीप ही उनके वज्रादि दश आयुधों का भी क्रमशः पूजन करे। फिर धूपादि नमस्कारान्त पूजा करके जप प्रारम्भ करे। इस पुरश्चरण छः लाख मन्त्रजप से पूर्ण होता है; जैसा कि कहा भी गया है—

छः लाख मन्त्रों का जप करके फिर छः सहस्र आहुतियाँ समिधाओं की अग्नि में देकर अपने गुरु (आचार्य) को धन-दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करे। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र का विविध कल्पों में प्रयोग करना चाहिये। लालकमल को मधुरत्रय के साथ एक सहस्र आहुति प्रतिदिन देने से एक मास से एक वर्ष के भीतर धन-धान्यसम्पन्न हो जाता है। लालकमल को फूलों से मधुरत्रय (दूध-शक्कर-मधु) के साथ बारह सहस्र आहुति देने से विपुल लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। धान की खील के साथ मधुरत्रय सानकर प्रातःकाल हवन करने से एक पक्ष में कन्या की प्राप्ति होती

है तथा कन्या के लिये श्रेष्ठ वर मिल जाता है। दूब-दूध-घी—इनसे एक सौ आठ आहुति प्रतिदिन इस षडक्षर नृसिंह मन्त्र से देने पर दीर्घायु प्राप्त होती है। उसके रोग, दोष, कृत्या (मूठ-खोट) आदि भी नष्ट हो जाते हैं। यदि पञ्चगव्य के साथ अपामार्ग (अज्झाझारा) की मञ्जरी (बाल) का प्रतिदिन एक सहस्र होम किया जाय तो एक सप्ताह में भूत, प्रेत, कृत्या (मूठ)—इनके दुष्प्रभाव को वह निश्चित ही नष्ट करता है। जिसको पुराना ज्वर हो, उसे इस मन्त्र से अमृताखण्ड (गिलोय) के चार-चार अङ्गुल के टुकड़ों से तीन सहस्र हवन प्रतिदिन करना चाहिये; इससे चार दिन में उसका ज्वर नष्ट हो जाता है। इस मन्त्र के समान अनुग्रहकारक दूसरा कोई मन्त्र नहीं है।

गोपालमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ—भूतशुद्ध्यादिकेशवादिकलामातृकान्यासान्तं पूर्ववत्। मूल मन्त्रो यथा—'ॐ गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' इति दशाक्षरो मन्त्रः। अस्य श्रीगोपालमन्त्रस्य नारदः ऋषिः। विराट् छन्दः। कृष्णो देवता। क्लीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ नारदऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ कृष्णदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ क्लीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ आचक्राय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ विचक्राय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सुचक्राय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ असुरान्तकचक्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। ॐ आचक्राय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ विचक्राय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ सुचक्राय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ असुरान्तकचक्राय अस्त्राय फट्॥ ५॥ इति हृदयादिपञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा मूलेन व्यापकं न्यस्य वर्णन्यासं कुर्य्यात्। 'ॐ गों ॐ नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पीं ॐ नमः नेत्रयोः॥ २॥ ॐ जं ॐ नमः श्रोत्रयोः॥ ३॥ ॐ नं ॐ नमः नासिकयोः॥ ४॥ ॐ वं ॐ नमः वक्त्रे॥ ५॥ ॐ लं ॐ नमः हृदये॥ ६॥ ॐ भां ॐ नमः जठरे॥ ७॥ ॐ यं ॐ नमः लिङ्गे॥ ८॥ ॐ स्वां ॐ नमः जानुनोः॥ ९॥ ॐ हां ॐ नमः पादयोः॥ १०॥ इति वर्णन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

वृन्दारण्यगकल्पपादपतले सद्रत्नपीठेऽम्बुजे शोणाभे वसुपत्रके स्थितमजं पीताम्बरालङ्कृतम्।
जीमूताभमनेकभूषणयुतं गोगोपगोपीवृतं गोविन्दं स्मरसुन्दरं मुनियुतं वेणुं रणन्तं स्मरेत्॥

तन्त्रसारे तु—

फुल्लेदीवरकान्तिमिन्दुवदनं वर्हावतंसप्रियं श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसङ्घावृतं गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा—पीठे पूर्वोक्तमण्डूकादिपरतत्त्वान्तदेवताः सम्पूज्य तत्र अष्टदलं कृत्वा तेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ विमलायै नमः॥ १॥ ॐ उत्कर्षिण्यै नमः॥ २॥ ॐ ज्ञानायै नमः॥ ३॥ ॐ क्रियायै नमः॥ ४॥ ॐ योगायै नमः॥ ५॥ ॐ प्रह्व्यै नमः॥ ६॥ ॐ सत्यायै नमः॥ ७॥ ॐ ईशानायै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ अनुग्रहायै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः पूजयेत्। ततो मध्ये 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिनासनं दत्त्वा तत्र मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः मूलेन सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—(षट्कोणे) आग्नेयादिचतुःकोणेषु दिक्षु च ॐ आचक्राय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ विचक्राय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ सुचक्राय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय कवचाय हुम्॥ ४॥ (दिक्षु) ॐ असुरान्तकचक्राय अस्त्राय फट्॥ ५॥ इति नेत्रवर्जं पञ्चाङ्गानि सम्पूजयेत्। इति प्रथमावरणम्। तद्बहिरष्टदलेषु प्राचीक्रमेण (पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राची) ॐ रुक्मिण्यै

नमः ॥ १ ॥ ॐ सत्यभामायै नमः ॥ २ ॥ ॐ नागनजित्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ कालिन्द्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ मित्रविन्दायै नमः ॥ ५ ॥ ॐ लक्ष्मणायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ जाम्बवत्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सत्यायै नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। इति द्वितीयावरणम्। ततो दलाग्रेषु तेनैव क्रमेण—ॐ वसुदेवाय नमः ॥ १ ॥ ॐ देवक्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ नन्दाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ यशोदायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ बलभद्राय नमः ॥ ५ ॥ ॐ सुभद्रायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ गोपेभ्यो नमः ॥ ७ ॥ ॐ गोपिकाभ्यो नमः ॥ ८ ॥ इति तृतीयावरणम्। तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिषु—ॐ इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ (ईशानपूर्वयोर्मध्ये) ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ (निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये) ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति दश दिक्पालान् पूजयेत्। इति चतुर्थावरणम्। तद्बहिः पूर्वादिषु—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इत्यायुधानि पूजयेत्। इति पञ्चमावरणम्। एवमावरणपूजां कृत्वा पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा धूपदीपनैवेद्यताम्बूल-दक्षिणानीराजनैः साङ्गं श्रीकृष्णं सम्पूज्य साष्टाङ्गं प्रणम्य जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षमन्त्रात्मकम्। तथा च—

**एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं दशांशं सरसीरुहैः। जुहुयात्पूजयेत्पीठे वैष्णवे नन्दनन्दनम्॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री साधयेत्स्वमनीषितम्। गुडूचीशकलैरग्नौ जुहुयाज्ज्वरशान्तये॥
कृष्णद्वेषं प्रकुर्वन्तं बलदेवस्य रुक्मिणः। द्यूतासक्तस्य सञ्चिन्त्य गोमयोद्भवगोलकान्॥
जुहुयाद्द्वेषसिद्ध्यर्थं नरयोः सुहृदोर्मिथः। पिचुमन्दफलोत्पन्नतैलाभ्यक्तैः समिद्वरैः॥
अक्षतैर्जुहुयाद्रात्रावयुतं शत्रुशान्तये। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रमात्मानं संस्मरन् हरिम्॥
मञ्चस्त्रस्तगतप्राणाकृष्टकंसं रिपुं सुधीः। शत्रुजन्मर्क्षवृक्षोत्थसमिद्भिरयुतं निशि॥
जुहुयादित्थमुग्रोऽपि सपत्नो निधनं व्रजेत्। पलाशकुसुमैर्लक्षं विद्यासिद्ध्यै जुहोतु ना॥
तण्डुलैः सितपुष्पाद्यैराज्याक्तैः प्रत्यहं नरः। हुत्वा सप्तदिनान्तं तद्भस्म भाले च मूर्द्धनि॥
धारयन्वशयेत्सद्यो यौवनं तच्च पूरुषान्। पुष्पं वासोऽञ्जनं वापि ताम्बूलमथ चन्दनम्॥
सहस्रं मनुना जप्तं दद्याद्यस्मै नराय सः। वशयेत्यचिरादेव सपुत्रपशुबान्धवः॥
वृन्दावनस्थं गायन्तं गोपीभिः संस्मरन्हरिम्। अपामार्गसमिद्भिर्यो जुहुयाद्वशयेज्जगत्॥
रासक्रीडागतं कृष्णं ध्यायन्योऽयुतमाजपेत्। षण्मासाद्वाञ्छितां कन्यामुद्वहेद्भक्तितत्परः॥
जपेत्सहस्रं ध्यायन्ती यावदेव स्थितं हरिम्। कन्यकावाञ्छितं नाथं मण्डलान्तर्लभेत सा॥
पत्रैः फलैः समिद्भिर्वा बिल्वोत्थैर्मधुसंयुतैः। कमलैः शर्करायुक्तैर्होमाल्लक्ष्मीपतिर्भवेत्॥
बहुना किमिहोक्तेन कृष्णः सर्वार्थदो नृणाम्॥**

इति दशाक्षरो गोपालकृष्णमन्त्रपुरश्चरणम्।

गोपालमन्त्र पुरश्चरण-प्रयोग—प्रथमतः पूर्व में निर्दिष्ट विधि से भूतशुद्धि आदि से लेकर केशवादि कलामातृका- न्यास-पर्यन्त कर्म सम्पादित करे। 'ॐ गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' यह दश अक्षरों का मूल मन्त्र है। इस गोपालमन्त्र के नारद ऋषि, विराट् छन्द, कृष्ण देवता, क्लीं बीज, स्वाहा शक्ति है। अपने अभीष्ट-सिद्धि के लिये जप में इसका विनियोग होता है। विनियोग के उपरान्त मूल में लिखित 'ॐ नारदऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करके उसके आगे लिखे 'ॐ आचक्राय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ आचक्राय हृदयाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से नेत्रवर्जित हृदयादि

पञ्चाङ्ग न्यास सम्पन्न कर मूल मन्त्र से व्यापक करके मूलोक्त 'ॐ गों नमः शिरसि' इत्यादि दश मन्त्रों से मंत्र के वर्णों का न्यास उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में करने के उपरान्त मूलोक्त 'वृन्दारण्यग-कल्पपादपतले०' इत्यादि श्लोकानुसार देव का ध्यान करना चाहिये, जिसका भावार्थ यह है—'वृन्दावन में स्थित कल्पवृक्ष के नीचे श्रेष्ठ रत्नों से निर्मित रक्ताभ अष्टदल कमल पर स्थित अजन्मा, पीताम्बर से अलंकृत, मेघ के समान श्यामल शरीर पर अनेक आभूषणों को पहिने, गायों एवं गोपीवृन्दों से घिरे हुए, कामदेव के समान सुन्दर मुनिजनों के साथ बाँसुरी बजाते हुए गोविन्द का स्मरण करे।' अथवा तन्त्रसार में कथित 'फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंस-प्रियं०' इत्यादि श्लोक के अनुसार ध्यान करना चाहिये। इस प्रकार से ध्यानोपरान्त मानसोपचारों से उनका पूजन कर फिर पीठपूजा करनी चाहिये।

श्रीगोपालयन्त्रम्
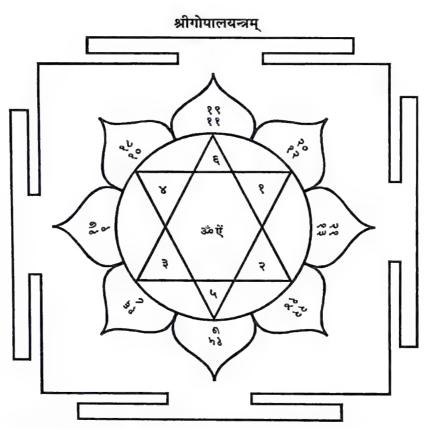
पीठपूजा—सर्वप्रथम पीठ के ऊपर पूर्वोक्त मण्डूकादि परतत्त्वान्त देवताओं का पूजन कर फिर उस पीठ पर अष्टदल कमल की रचना कर उस पर पूर्वादि क्रम से मूलोक्त 'ॐ विमलायै नमः' इत्यादि नौ शक्तियों की पूजा करके मध्य में 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवायसर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि द्वारा आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके आवाहनादि पुष्पान्त उपचारों से पूजा करके फिर यन्त्र के अथवा मूर्ति के आवरणों की पूजा करनी चाहिये।

आवरण-पूजा—यन्त्र के मध्य में जो षट्कोण बना है, वह प्रथम आवरण है। उसमें मूलोक्त 'ॐ आचक्राय हृदयाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से आग्नेयादि चारों कोणों तथा दिशाओं में पूजन करे। द्वितीयावरण में प्रथमावरण

के बाहर अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से (पूज्य-पूजक के मध्य में प्राची मानकर) 'ॐ रुक्मिण्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। तृतीयावरण में दलाग्रों में उसी क्रम से 'ॐ वासुदेवाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। चतुर्थावरण में उसके बाहर भूपुर में 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से पूर्वादि दशों दिशाओं में दश दिक्पालों की पूजा करे। फिर उसके बाहर उन्हीं पूर्वादि दश दिशाओं में उन दिक्पालों के आयुधों की पूजा पञ्चमावरण में 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि मन्त्रों से करे। इस प्रकार पाँचों आवरणों की पूजा करके पुष्पाञ्जलि देकर धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजनादि उपचारों के द्वारा साङ्ग श्रीकृष्ण का पूजन कर स्तुति करके साष्टाङ्ग प्रणाम कर जप प्रारम्भ करना चाहिये। इसका पुरश्चरण एक लाख मन्त्रजप करने से पूर्ण होता है।

पुरश्चरण-विधि—इस प्रकार से ध्यान करके एक लाख जप करने के उपरान्त उसका दशांश (दस सहस्र एक अयुत) आहुति कमलों के द्वारा देकर नन्दनन्दन श्रीकृष्ण की पूजा करनी चाहिये। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। तब साधक इस सिद्ध मन्त्र से अपना अभीष्ट मनोरथ सिद्ध करे। ज्वर की शान्ति के लिये गिलोय के टुकड़ों के द्वारा हवन करना चाहिये। मित्रों में द्वेष को उत्पन्न करने के लिये कृष्ण से द्वेष करते हुए बलदेव ज़ी के रुक्मी के साथ द्यूतक्रीड़ा में संलग्नता का चिन्तन करते हुए गोमय (गाय के गोबर के पिण्ड) के गोलों से अग्नि में होम करना चाहिये, इससे उन दोनों मित्रों में (बल्देव एवं रुक्मी की भाँति) द्वेष उत्पन्न हो जाता है। नीम के फल (निबौली या निबौरी) से उत्पन्न तेल में समिधाओं को डुबोकर चावलों के द्वारा दस सहस्र होम करने से शत्रु शान्त हो जाता है। स्वयं ऐसा चिन्तन करे कि 'मैं हरि हूँ तथा मेरा शत्रु कंस के समान है; अतः उसके सिंहासन पर जाकर उसके केश खींचकर पटक रहा हूँ' और इस विचार के साथ शत्रु के जन्मनक्षत्र का जो वृक्ष हो, उसकी समिधा से रात्रि में अयुत संख्या में होम करने से उग्र शत्रु भी मर जाता है। पलाश के फूलों की एक लाख आहुति देने से विद्या में सिद्धि प्राप्त होती है। श्वेत पुष्पों एवं श्वेत चावलों को घृत में (गोघृत में) सानकर प्रतिदिन इस दशाक्षर गोपाल मन्त्र से आहुति देने पर एक सप्ताह के उपरान्त वह हवन का भस्म अपने माथे पर लगाने से पुरुषों को सद्यः यौवन की प्राप्ति होती है। यदि साधक उस भस्म को धारण कर अपने हाथ से पुष्प, वस्त्र, अञ्जन, ताम्बूल अथवा चन्दन इत्यादि सामग्री जिस किसी को भी इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके देता है, वह व्यक्ति पुत्र, पौत्र, पशु एवं बान्धवों के साथ ही साधक के वश में हो जाता है। जो साधक वृन्दावन में स्थित हरि को गोपियों के साथ गान करते हुए स्मरण करके अपामार्ग की समिधाओं के साथ इस मन्त्र के द्वारा हवन करता है, वह संसार को अपने वश में कर लेता है।

रासक्रीड़ा करते हुए श्रीकृष्ण का ध्यान करते हुए जो अयुत (दश सहस्र) संख्या में इस मन्त्र का जप करता है, वह छः मास के भीतर कन्या से विवाह बन्धन में बँध जाता है। यदि कोई कन्या इस सिद्ध मन्त्र का जप करती हुई कृष्ण का ध्यान करती है, तो उसे चालीस दिन (मण्डल) के भीतर श्रेष्ठ मनोवाञ्छित वर की प्राप्ति होती है। जो बिल्व (बेल) के पत्रों, पुष्पों तथा समिधाओं को मधु से आप्लुत कमलपुष्पों के साथ हवन करता है, वह लक्ष्मीपति हो जाता है। अधिक क्या कहा जाय; कृष्ण तो मनुष्यों को सर्वार्थसिद्धि देने वाले हैं।

अष्टादशवर्णात्मकश्रीकृष्णमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' इति १८ अष्टादशाक्षरः। तन्त्रसारे त्वयं विंशत्यर्णोऽपि लिखितः; स च 'ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' इति २० विंशत्यक्षरः। अस्य मन्त्रस्य नारद ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीकृष्णो देवता। क्लीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ नारदऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीकृष्णदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ क्लीं

बीजाय नमः गुह्ये ॥ ४ ॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः ॥ ५ ॥' इति ऋष्यादिन्यासः । ॐ क्लीं कृष्णाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ गोविन्दाय तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ गोपीजन मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ वल्लभाय अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ इति करन्यासः । एवमेव हृदयादिनेत्रवर्जं पञ्चाङ्गन्यासं कुर्य्यात्।

अथ मन्त्रवर्णन्यासः—ॐ नमः शिरसि ॥ १ ॥ ॐ क्लीं नमः ललाटे ॥ २ ॥ ॐ कृं नमः भ्रूमध्ये ॥ ३ ॥ ॐ ष्णां नमः दक्षिणकर्णे ॥ ४ ॥ ॐ यं नमः वामकर्णे ॥ ५ ॥ ॐ गों नमः दक्षनेत्रे ॥ ६ ॥ ॐ विं नमः वामनेत्रे ॥ ७ ॥ ॐ दां नमः दक्षनासिकायाम् ॥ ८ ॥ ॐ यं नमः वामनासिकायाम् ॥ ९ ॥ ॐ गों नमः मुखे ॥ १० ॥ ॐ पीं नमः ग्रीवायाम् ॥ ११ ॥ ॐ जं नमः हृदये ॥ १२ ॥ ॐ नं नमः नाभौ ॥ १३ ॥ ॐ वं नमः कट्याम् ॥ १४ ॥ ॐ ल्लं नमः लिङ्गे ॥ १५ ॥ ॐ भां नमः दक्षिणजानुनि ॥ १६ ॥ ॐ यं नमः वामजानुनि ॥ १७ ॥ ॐ स्वां नमः दक्षपादे ॥ १८ ॥ ॐ हां नमः वामपादे ॥ १९ ॥ इति वर्णन्यासः ।

अथ पदन्यासः—ॐ क्लीं नमः नेत्रयोः ॥ १ ॥ ॐ कृष्णाय मुखे ॥ २ ॥ ॐ गोविन्दाय हृदये ॥ ३ ॥ ॐ गोपीजनवल्लभाय गुह्ये ॥ ४ ॥ ॐ स्वाहा पादयोः ॥ ५ ॥ एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

स्मरेद्वृन्दावने रम्ये मोहयन्तमनारतम् । गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं गोपकन्यासहस्त्रशः ॥
आत्मनो वदनाम्भोजप्रेषिताक्षिमधुव्रताः । पीडिताः कामबाणेन चिरमाश्लेषणोत्सुकाः ॥
मुक्ताहारलसत्पीनतुङ्गस्तनभरानताः । स्त्रस्तधम्मिल्लवसना मदस्खलितभाषणाः ॥
दन्तपङ्क्तिप्रभोद्भासिस्पन्दमानाधराञ्चिताः । विलोभयन्तीर्विविधैर्विभ्रमैर्भावगर्वितैः ॥

अथ ध्यानम्—

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियं श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसङ्घावृतं गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे ॥

एवं ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः श्रीकृष्णं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्। षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु दिक्षु च ॐ क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ गोविन्दाय शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ गोपीजनशिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ वल्लभाय कवचाय हुं ॥ ४ ॥ (दिक्षु) ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ॥ ५ ॥ इति पञ्चाङ्गानि सम्पूज्ययेत् । इति प्रथमावरणम् ।

तद्बहिरष्टदलेषु—ॐ कालिन्द्यै नमः ॥ १ ॥ ॐ नाग्नजित्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ मित्रविन्दाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ चारुहासिन्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ रोहिण्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ जाम्बवत्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ रुक्मिण्यै नमः ॥ ७ ॥ ॐ सत्यायै नमः ॥ ८ ॥ इत्यष्टौ प्रियाः पूजनीयाः । इति द्वितीयावरणम् ।

तद्बाह्ये पूर्वादि—ॐ ऐरावताय नमः ॥ १ ॥ ॐ पुण्डरीकाय नमः ॥ २ ॥ ॐ वामनाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ कुमुदाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ अञ्जनाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ पुष्पदन्ताय नमः ॥ ६ ॥ ॐ सार्वभौमाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ सुप्रतीकाय नमः ॥ ८ ॥ इत्यष्टौ गजान्पूजयेत् । इति तृतीयावरणम् । तद्बहिर्भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान्सम्पूज्य तद्बहिः वज्राद्यायुधानि च पूजयेत् । इत्यावरणपूजां कृत्वा देवं धूपादिनीराजनान्तैरभ्यर्च्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्य्यात् । अस्य पुरश्चरणमयुतद्वयम् । तथा चोक्तम्—

मन्त्रमेनं यथान्यायमयुतद्वितयं जपेत् । जुहुयादरुणाम्भोजैर्दशांशं सुसमाहितः ॥
इति सम्पूज्य देवेशं गोविन्दं जगतां पतिम् । कुर्वीत कल्पनिर्दिष्टान्प्रयोगान्निजवाञ्छितान् ॥
लक्ष्मीप्रसूनैर्जुहुयाच्छ्रियमिच्छन्ननिन्दिताम् । साज्येनान्नेन जुहुयादाज्यान्नस्य समृद्धये ॥
अरुणैः कुसुमैर्विप्राञ्जातीभिः पृथिवीपतीन् । प्रसूनैरसितैर्वैश्याञ्शूद्रान्नीलोत्पलैर्नवैः ॥

वशयेल्लवणैः सर्वान्पङ्कजैर्वनिताजनान्। गोशालासु कृतो होमः पासयेन ससर्पिषा॥
गवां शान्तिं करोत्याशु गोविन्दो गोकुलप्रियः। शिशुवेषधरं देवं किङ्किणीदामशोभितम्॥
स्मृत्वा प्रतर्पयेन्मन्त्री दुग्धबुद्ध्या शुभैर्जलैः। धनधान्यांशुकादीनि प्रीतस्तस्मै ददाति सः॥

इत्यष्टादशाक्षरकृष्णमन्त्रप्रयोगः समाप्तः।

श्रीकृष्णमन्त्र-प्रयोग—'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' यह अष्टादशाक्षर मूल मन्त्र है। यही मन्त्र तन्त्रसार में बीस अक्षरों वाला भी लिखा गया है। वह इस प्रकार है—

बीस अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मन्त्र—'ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' इस प्रकार है। (दोनों में से किसी एक का प्रयोग कर सकते हैं)।

विनियोग—इस मन्त्र के नारद ऋषि, गायत्री छन्द, श्रीकृष्ण देवता, क्लीं बीज, स्वाहा शक्ति है तथा सर्वेष्ट-सिद्ध्यर्थ जप में विनियोग है (बीस अक्षरों वाले मन्त्र के विनियोग में 'ह्रीं क्लीं श्रीं' इति बीजानि ऐसा कहना चाहिये)। मूलोक्त संस्कृत का विनियोग मन्त्र पढ़ना चाहिये।

तदनन्तर मूलोक्त 'ॐ नारदऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्र पढ़कर ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। फिर उसके आगे लिखे 'ॐ क्लीं कृष्णाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः, ॐ गोविन्दाय शिरसे स्वाहा, ॐ गोपीजनशिखायै वषट्, ॐ वल्लभाय कवचाय हुम् तथा ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से नेत्रविहीन हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास सम्पादित करने के उपरान्त मूल में लिखित 'ॐ नमः शिरसि' इत्यादि १९ मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में मन्त्र के वर्णों का न्यास करना चाहिये। फिर उसके आगे लिखित 'ॐ क्लीं नमः नेत्रयोः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से मन्त्र के पाँच पदों का न्यास उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में करने के पश्चात् 'वृन्दावन में अनारत को मोहित करने वाले सहस्रों गोपकन्याओं के साथ विराजित गोविन्द श्रीकृष्ण का स्मरण करता हूँ, जो कि अपने नेत्रादि के कटाक्ष से कामबाण से पीड़ित होने के कारण उन पुण्डरीकाक्ष के साथ चिरकाल तक आश्लेषण की उत्सुक हो रही हैं, उनके मोतियों के हार तथा पीन तुङ्गस्तन नत हैं; उनके जूड़े पर से वस्त्र खिसक गये हैं तथा काममद से स्खलित वाणी में बोल रही हैं। उनकी दन्तपङ्क्ति की प्रभा के साथ होठ फड़क रहे हैं। इस प्रकार की अनेक प्रकार की भावभङ्गिमाओं से वे श्रीकृष्ण को विलोभित कर रही हैं।' ऐसा चिन्तन करते हुए मूलोक्त 'फुल्लेन्दीवरकान्ति०' इत्यादि श्लोक के अनुसार ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—'चन्द्रमा के समान जिनके मुखकमल की कान्ति है, जिन्हें मोरमुकुट प्रिय है, वक्ष पर श्रीवत्स चिह्न एवं कौस्तुभ मणि है तथा सुन्दर पीताम्बर पहिने हैं। जिनका शरीर गोपियों के नेत्रकमलों से अर्चित है, ऐसे गो-गोप-गोपियों के संघ से आवृत गोविन्द जो कि वंशीवादन में तत्पर हैं, ऐसे दिव्याङ्ग भूषाधारी को भजता हूँ।' इस प्रकार ध्यान कर पूर्व में कथित पीठ पर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके पाद्य से लेकर पुष्पान्त पूजन सम्पन्न कर श्रीकृष्ण को पूजकर फिर आवरण-पूजा करे।

आवरण-पूजा—षट्कोण में आग्नेयादि कोण तथा दिशा में 'ॐ क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पूजन करे। यह प्रथमावरण की पूजा हुई। द्वितीयावरण में उसके बाहर अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से 'ॐ कालिन्द्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से श्रीकृष्ण के आठ पटरानियों का पूजन करे। तृतीयावरण में अष्टदलों के किनारे पर 'ॐ ऐरावताय नमः' इत्यादि मूलोक्त मन्त्रों से आठ दिग्गजों की पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् भूपुर में पूर्वादि क्रम से इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन चतुर्थावरण में करे। फिर दिक्पालों के बाहर उन्हीं पूर्वादि दश दिशाओं में उनके वज्रादि आयुधों की पूजा पञ्चमावरण में करे। इस प्रकार आवरण-पूजा करके देव को धूपादि

नीराजन-पर्यन्त पूजकर स्तोत्र से स्तुति कर मन्त्रजप प्रारम्भ करना चाहिये। इसका पुरश्चरण दो अयुत (बीस सहस्र) संख्या का होता है।

पुरश्चरण-विधि—इस मन्त्र को विधिपूर्वक दो अयुत की संख्या में जप करना चाहिये। फिर उसका दशांश (दो सहस्र) लाल कमलों से विधिपूर्वक हवन करना चाहिये। इस प्रकार देव-देव जगत्पति की पूजा करके कल्प में निर्दिष्ट विधि से अपने वाञ्छित प्रयोगों को सम्पन्न करना चाहिये। लक्ष्मी के फूलों (स्थलकमल) से होम करने से इच्छित अनिन्दित लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। धन एवं घी-दूध की वृद्धि के लिये घृत एवं अन्न से होम करना चाहिये। लाल फूलों से ब्राह्मणों को तथा चमेली के फूलों से क्षत्रियों को, काले फूलों के हवन से वैश्यों को तथा नीले कमलों के हवन से शूद्रों को वश में किया जाता है। लवण के कमलों का होम करने से सभी वनिताजनों को वश में कर लिया जाता है। गोशाला में इस मन्त्र के द्वारा होम करने से गायों के प्रिय श्रीकृष्ण गायों की शान्ति (उनके उपद्रवों की शान्ति) कर देते हैं। दूध की वृद्धि के लिये शिशु वेषधारी किङ्किणी एवं दाम से शोभित कृष्ण का स्मरण करते हुए शुभ जल से गायों का तर्पण करे तो श्रीकृष्ण धन-धान्य, अंशुक आदि प्रेमपूर्वक प्रदान करते हैं।

अष्टाक्षरत्रैलोक्यमोहनमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रस्वरूपं यथा—'क्लीं हृषीकेशाय नमः' इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः (मन्त्रमहोदधौ)।'अस्य मन्त्रस्य सम्मोहन नारद ऋषिः। गायत्री छन्दः। त्रैलोक्यमोहनो देवता। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ सम्मोहननारदऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ त्रैलोक्यमोहनदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ क्लाँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ क्लूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ क्लैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ क्लौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

कल्पानोरुहमूलसंस्थितवयोराजोन्नतांसस्थितं पौषं बाणमथेक्षुचापकमले पाशाङ्कुशे बिभ्रतम्।
चक्रं शङ्खगदे करैरुदधिजासंश्लिष्टदेहं हरिं नानाभूषणरक्तलेपकुसुमं पीताम्बरं संस्मरेत्॥

एवं ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—ॐ पक्षिराजाय स्वाहा इति सम्मुखे गरुडं पूजयेत्॥ १॥ शिरसि ॐ मुकुटाय नमः॥ २॥ कर्णे ॐ कुण्डलाय नमः॥ ३॥ करे ॐ चक्राद्यस्त्राय नमः॥ ४॥ हृदये ॐ श्रीवत्साय नमः॥ ५॥ कण्ठे ॐ कौस्तुभाय नमः॥ ६॥ गले ॐ वनमालायै नमः॥ ७॥ नितम्बे ॐ पीताम्बराय नमः॥ ८॥ वामाङ्गे ॐ श्रीलक्ष्म्यै नमः॥ ९॥ इति पूजयेत्।

ततः केसरेषु अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च—ॐ क्लां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ क्लूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ क्लैं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ क्लः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति पूजयेत्।

ततः पूर्वादिदिक्षु—ॐ द्रां नमः॥ १॥ ॐ द्रीं नमः॥ २॥ ॐ द्रूं नमः॥ ३॥ ॐ द्रैं नमः॥ ४॥ इति सम्पूज्य कोणेषु ॐ द्रौं नमः॥ ५॥ इति पञ्चबाणान् पूजयेत्।

तद्बहिरष्टलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ लक्ष्म्यै नमः॥ १॥ ॐ सरस्वत्यै नमः॥ २॥ ॐ रत्यै नमः॥ ३॥ ॐ प्रीत्यै नमः॥ ४॥ ॐ कीर्त्यै नमः॥ ५॥ ॐ कान्त्यै नमः॥ ६॥ ॐ तुष्ट्यै नमः॥ ७॥ ॐ पुष्ट्यै नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ शक्तीः पूजयेत्। तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तं सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

एवं ध्यात्वा जपेत्सूर्यलक्षं त्रिमधुरप्लुतैः। पालाशपुष्पैर्जुहुयात्तत्सहस्रं हुताशने॥
विजयापुष्पसंयुक्तैर्जलैः सन्तर्पयेच्छतम्। प्रातः प्रत्यहमेतस्य वाञ्छितं मासतो भवेत्॥
अयुतं तु घृतेनाग्नौ हुत्वा सम्पातजं घृतम्। तावज्जप्तं प्रियाकान्तं भोजयेद्वशमेति सः॥
कामबीजेऽपि विज्ञेया परिचर्य्योक्तमन्त्रवत्। विशेषात्कामिनीवर्गमोहको मनुनायकः॥

इति त्रैलोक्यमोहनकृष्णमन्त्रपुरश्चरणम्।

त्रैलोक्यमोहन मन्त्र-प्रयोग—मन्त्र का स्वरूप है—'क्लीं हृषीकेशाय नमः।' यह आठ अक्षरों का मूल मन्त्र है। इसके सम्मोहन नारद ऋषि हैं। गायत्री छन्द है। त्रैलोक्य मोहन देवता हैं तथा मेरे अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग है।

'ॐ सम्मोहन नारदऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्र पढ़कर ऋष्यादिन्यास करे। फिर ॐ क्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर 'ॐ क्लां हृदयाय नमः, ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्लूं शिखायै वषट्, ॐ क्लैं कवचाय हुम्, ॐ क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ क्लः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये।

फिर मूल में लिखित 'कल्पानोरुहमूलसंस्थित०' इत्यादि श्लोक से ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—'कल्पवृक्ष के मूल में स्थित वयोराज (पक्षिराज गरुड) के ऊँचे कन्धों पर स्थित पौष (?) बाण, इक्षु, धनुष, कमल, पाश, अङ्कुश से शोभित, चक्र, शङ्ख, गदा से युक्त, लक्ष्मी से संश्लिष्ट देह वाले नानाभूषण, रक्तलेप, रक्तकुसुम तथा पीताम्बरधारी विष्णु का स्मरण करे।' इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त पीठ पर मूल से मूर्ति की कल्पना कर पुष्पान्त उपचारों से पूजन कर आवरण-पूजा करे।

आवरण-पूजा—सर्वप्रथम 'पक्षिराजाय स्वाहा' कहकर सम्मुख स्थित गरुड़ का पूजन करे; फिर शेष २ से लेकर ९ तक के मन्त्रों द्वारा उन मन्त्रों में निर्दिष्ट अङ्गों का पूजन करना चाहिये। फिर षट्कोण के केसरों में आग्नेयादि कोणों के मध्य तथा दिशाओं में 'ॐ क्लां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करे। फिर पूर्वादि दिशाओं में 'ॐ द्रां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से देव के पाँच बाणों की पूजा करे। फिर उसके बाहर अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से 'ॐ लक्ष्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ शक्तियों की पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों को पूजकर उन्हीं के समीप बाहर की ओर उनके दश आयुधों को भी पूजना चाहिये। इस प्रकार आवरण-पूजा करके धूपादि नमस्कारान्त यथाविधि पूजा सम्पन्न कर आगे त्रैलोक्यमोहन मन्त्र का जप प्रारम्भ करे। इसका पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है।

पुरश्चरण के प्रयोग—इस प्रकार ध्यान-पूजा करके मन्त्र का बारह लाख जप करके मधुरत्रय (दूध, मधु, घृत, शर्करा) में आप्लुत कर पलाश के पुष्पों की बारह सहस्र आहुतियाँ दे। एक सौ तर्पण भाँगमिश्रित जल से करे। प्रतिदिन प्रातः ऐसा करने से एक मास में वाञ्छित मनोरथ की पूर्ति होती है। इससे अयुत संख्या (दस सहस्र) में घृत से होम करे; फिर मन्त्र जप करते हैं तो प्रिया अपने पति या प्रेमी के वश में हो जाती है। कामबीज (क्लीं) से भी जप होम इसी मन्त्र के समान करने पर भी स्त्रीवर्ग मोहित हो जाता है।

पुत्रप्रदसन्तानगोपालमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

तत्र तावत् पूर्वदिने नद्यादौ स्नात्वा प्रातर्नित्यावश्यकं समाप्य विदुषामुपदेशानुसारेण पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डरीत्या प्रायश्चित्तं कृत्वा स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा अयुतगायत्रीजपं च कृत्वा तद्दिने उपवासं नक्तव्रतं वा सम्पाद्य रात्रौ दम्पती शुद्धासनयोर्भूमावेव स्वपेताम्। ततः आरम्भदिने उषसि स्नात्वा नित्यकर्म कृत्वा मङ्गलस्नानं विधाय यथायोग्यालङ्कृतः सपवित्रकरः सपत्नीकः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य शान्तिपाठं पठित्वा श्रीगणेशादिस्मरणं कुर्य्यात्।

ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम सभार्यस्यैतज्जन्मजन्मान्तरार्जिताऽनपत्यत्वादिकारणीभूतबालघातविप्ररत्नापहारादिजन्य-दुरितसमूलप्रशमनार्थं दीर्घायुष्मद्बहुपुत्रादिसन्ततिप्राप्त्यर्थे मन्त्रसिद्धिपूर्वकश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं च सन्तानगोपाललक्षमन्त्र-जपात्मकं पुरश्चरणं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वाहं करिष्ये; तदङ्गत्वेन गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजां नान्दीश्राद्धमा-चार्यजापकवरणं च करिष्ये' इति च सङ्कल्प्य गणेशपूजनादि जापकवरणान्तं पद्धतिकाण्डोक्तमार्गेण सर्वं कुर्यात्। ततः 'ॐ भद्रं कर्णेभिः' इति वेदघोषेण जपस्थानसमीपमागत्य द्वारपूजां कृत्वा प्रविश्य कूर्मसंशोधिते स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम सभार्यस्य (यजमानस्य) जन्मान्तरार्जिताऽपत्यत्वादि-निदानभूतबालघातादिजन्यदुरितशमनार्थं दीर्घायुष्मद्बहुपुत्रादिसन्ततिप्राप्त्यर्थं मन्त्रसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सन्तान-गोपालमन्त्रजपं यथासंख्यं करिष्ये; तदङ्गत्वेनादौ भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं केशवादि-कलामातृकान्यासं च करिष्ये' इति प्रत्याहिकं सङ्कल्प्य पूर्ववत् भूतशुद्ध्यादिबहिर्मातृकान्यासान्तं कृत्वा विष्णोरष्टाक्षरोक्त-क्रमेण केशवादिकलामातृकान्यासं च कुर्यात्।

अथ मूलमन्त्रन्यासादि; मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥' इति ३२ द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य नारदऋषिः अनुष्टुप्छन्दः। सुतप्रदकृष्णो देवता। मम पुत्रप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः।' ॐ नारदऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सुतप्रदकृष्णदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ देवकीसुत गोविन्द इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ वासुदेव जगत्पते इति तर्ज्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण इति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ त्वामहं शरणं गतः इत्यनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। ॐ देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः अस्त्राय फट्॥ ५॥ इति नेत्रहीनं पञ्चाङ्गन्यासं कुर्यात्।

अथ ध्यानम्—

विजयेन युतो रथस्थितः प्रसभानीय समुद्रमध्यतः। प्रददत्तनयान् द्विजन्मने स्मरणीयो वसुदेवनन्दनः॥

इति ध्यात्वा पीठपूजां कुर्यात्। तद्यथा—'ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' इति पीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिदिक्षु—ॐ विमलायै नमः॥ १॥ ॐ उत्कर्षिण्यै नमः॥ २॥ ॐ ज्ञानायै नमः॥ ३॥ ॐ क्रियायै नमः॥ ४॥ ॐ योगायै नमः॥ ५॥ ॐ प्रह्वयै नमः॥ ६॥ ॐ सत्यायै नमः॥ ७॥ ॐ ईशानायै नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ अनुग्रहायै नमः॥ ९॥ इति पीठशक्तीः सम्पूजयेत्। ततः 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपदपीठात्मने नमः' इत्यासनं दत्त्वा तत्र मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य (अथवा स्वर्णमूर्तिं यन्त्रं वा संस्थाप्य) मूलमन्त्रेण पुरुषसूक्तेन च पाद्याद्यैः पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

तद्यथा षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु दिक्षु च—ॐ देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः अस्त्राय फट्॥ ५॥ इति पूजयेत्।

तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ रुक्मिण्यै नमः॥ १॥ ॐ सत्यभामायै नमः॥ २॥ ॐ नाग्नजित्यै नमः॥ ३॥ ॐ कालिन्द्यै नमः॥ ४॥ ॐ मित्रविन्दायै नमः॥ ५॥ ॐ लक्ष्मणायै नमः॥ ६॥ ॐ जाम्बवत्यै नमः॥ ७॥ ॐ सत्यायै नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ महिषीः पूजयेत्।

ततो दलाग्रेषु—ॐ वासुदेवाय नमः॥ १॥ ॐ देवक्यै नमः॥ २॥ ॐ नन्दगोपाय नमः॥ ३॥ ॐ यशोदायै नमः॥ ४॥ ॐ बलभद्रायै नमः॥ ५॥ ॐ सुभद्रायै नमः॥ ६॥ ॐ गोपेभ्यो नमः॥ ७॥ ॐ गोपिकाभ्यो नमः॥ ८॥ इति सम्पूजयेत्।

तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिदिक्षु—ॐ इन्द्राय नमः॥ १॥ ॐ अग्नये नमः॥ २॥ ॐ यमाय नमः॥ ३॥ ॐ निर्ऋतये नमः॥ ४॥ ॐ वरुणाय नमः॥ ५॥ ॐ वायवे नमः॥ ६॥ ॐ कुबेराय नमः॥ ७॥ ॐ ईशानाय नमः॥ ८॥ ईशानपूर्वयोर्मध्ये ॐ ब्रह्मणे नमः॥ ९॥ निर्ऋतिवरुणोर्मध्ये ॐ अनन्ताय नमः॥ १०॥ इति दशदिक्पालान् पूजयेत्।

तद्बाह्ये—ॐ वज्राय नमः॥ १॥ ॐ शक्तये नमः॥ २॥ ॐ दण्डाय नमः॥ ३॥ ॐ खड्गाय नमः॥ ४॥ ॐ पाशाय नमः॥ ५॥ ॐ अङ्कुशाय नमः॥ ६॥ ॐ गदायै नमः॥ ७॥ ॐ त्रिशूलाय नमः॥ ८॥ ॐ पद्माय नमः॥ ९॥ ॐ चक्राय नमः॥ १०॥ इति पूजयेत्।

इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तां यथाविधि पूजां विधाय वक्ष्यमाणसन्तानगोपालस्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षमन्त्रात्मकम्। जपान्ते दशांशेन मधुशर्कराघृतमिश्रितैस्तिलैर्होमं कृत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्यात्। एवं कृते सिद्धमन्त्रो भवति। ततः प्रयोगान् साधयेत्। तथा च—

लक्षं जपोऽयुतं होमस्तिलैर्मधुरसंयुतैः। अर्चा पूर्वोदिता चैवं मन्त्रः पुत्रप्रदो नृणाम्॥ १॥

इति मन्त्रमहोदधिप्रोक्तसन्तानगोपालप्रयोगः समाप्तः।

श्रीसन्तानगोपालमन्त्रपूजायन्त्रम्
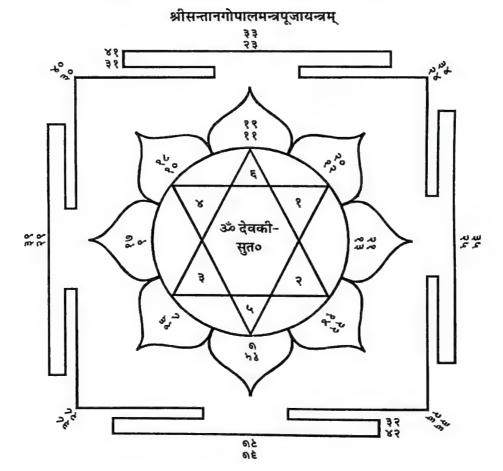
मन्त्रमहोदधि के अनुसार सन्तानगोपाल मन्त्र-प्रयोग—मन्त्र-पुरश्चरण प्रयोग आरम्भहेतु जो मुहूर्त दिवस निश्चित किया गया हो, उसके एक दिन पूर्व विद्वानों के उपदेशानुसार पूर्वोक्त पद्धतिकाण्ड की रीति से प्रायश्चित्त करके फिर स्वयं अथवा ब्राह्मण द्वारा अयुत (दस सहस्र) गायत्री मन्त्र का जप करके उस दिन उपवास अथवा नक्तव्रत का आचरण कर रात्रि में पति-पत्नी को शुद्ध आसन भूमि पर ही बिछाकर शयन करना चाहिये।

आरम्भ दिन-कृत्य—फिर आरम्भ के दिन प्रात:काल अरुणोदय में स्नान कर नित्यकर्म से निपटकर मङ्गलस्नान करके यथायोग्य अलङ्कार धारण करके हाथों में पवित्री धारण कर सपत्नीक यजमान अपने आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर आचमन तथा प्राणायाम करके शान्तिपाठ पढ़कर गणेशादि का स्मरण करे।

सङ्कल्प—फिर देश-काल का उच्चारण कर मूलोक्त 'मम सभार्यस्यैतज्जन्मजन्मन्तरार्जिता ---------------- नान्दीश्राद्धं आचार्यजापकवरणञ्च करिष्ये' पर्यन्त पढ़कर सङ्कल्प करे। फिर सङ्कल्पोपरान्त गणपति पूजन से लेकर जापकवरण कर्म-पर्यन्त पद्धतिकाण्ड में दिये गये विधान के अनुसार करे। फिर 'ॐ भद्रं कर्णेभि: शृणुयाम देवा०' इत्यादि वेदमन्त्रों से जपस्थान के समीप आकर द्वारपूजा करके जपस्थान में प्रविष्ट होकर आचमन कर प्राणायाम कर देश-काल का उच्चारण कर पुन: मूलोक्त 'मम सभार्यस्य (यजमानस्य वा) जन्मान्तरार्जिताऽनपत्यत्यादि ------------- केशवादिकलामातृकान्यासञ्च करिष्ये' ऐसा प्रतिदिन का सङ्कल्प करना चाहिये। फिर पूर्व की भाँति भूतशुद्धि आदि बहिर्मातृकान्यासान्त कर्म करके विष्णु के अष्टाक्षर मन्त्र में बताई गई विधि से केशवादि कलामातृका न्यास करना चाहिये।

मूल मन्त्र के न्यासादि (मन्त्रमहोदधि के अनुसार)—'ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गत:' यह बत्तीस अक्षरों का मूल मन्त्र है। 'अस्य मन्त्रस्य नारदऋषि:, अनुष्टुप् छन्द:, सुतप्रदो कृष्णो देवता। मम पुत्रप्राप्त्यर्थं जपे विनियोग:' कहकर विनियोग करे। फिर मूलोक्त 'ॐ नारद ऋषये नम: शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ देवकीसुत गोविन्द अङ्गुष्ठाभ्यां नम:' इत्यादि पाँच मन्त्रों से करन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ देवकीसुत गोविन्द हृदयाभ्यां नम:' इत्यादि पाँच मन्त्रों से हृदयादि पञ्चाङ्ग-न्यास करे।

तदनन्तर मूल में लिखित 'विजयेन युतौ ----------- वसुदेवनन्दन:।' इस मन्त्र से ध्यान करे। ध्यान का भावार्थ है—'विजय प्राप्त करके रथ पर बैठे हुए समुद्र के मध्य से बलपूर्वक (लक्ष्मी को) लाकर ब्राह्मणों को दान देने वाले वसुदेवनन्दन स्मरणीय हैं। इस प्रकार ध्यान करके 'मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नम:' कहकर पीठपूजा करनी चाहिये। फिर मूल मन्त्र के द्वारा मूर्ति की कल्पना करके पुरुषसूक्त से पाद्यादि से पुष्पान्त तक पूजन कर आवरण-पूजा करे। (अथवा यन्त्र में पूजा करे)।

आवरण-पूजा—प्रथम षट्कोण में (यन्त्र में) आग्नेयादि कोणों, मध्य तथा दिशाओं में 'ॐ देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नम:' इत्यादि पाँच मन्त्रों से हृदयादि पाँच अङ्गों का पूजन करे। फिर षट्कोण के बाहर अष्टदलों में 'ॐ रुक्मिण्यै नम:' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ महीषियों का पूजन पूर्वादि दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से करे। फिर अष्टदलों के अग्रभागों में 'ॐ वासुदेवाय नम:' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूर्वादि दिशाओं में पूजा करे। फिर उसके बाहर भूपुर में 'ॐ इन्द्राय नम:' इत्यादि दश मन्त्रों से पूर्वादि दश दिशाओं में दश दिक्पालों का पूजन करे। फिर उनके बाहर 'ॐ वज्राय नम:' इत्यादि दश मन्त्रों से उनके आयुधों का पूजन करे। इस प्रकार आवरण-पूजा करके धूपादि नमस्कारान्त यथाविधि पूजा को सम्पर्क कर आगे कहे गये 'सन्तानगोपालस्तोत्र' का पाठ करके जप प्रारम्भ करे। इसका पुरश्चरण एक लाख मन्त्रों का है। जप की समाप्ति पर दशांश (दस सहस्र) होम मधु, शर्करा,

घृत तथा तिलों से मिश्रित करके उसका दशांश क्रमशः तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मणभोजन कराये। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। जैसा कि कहा भी गया है—एक लाख जप, अयुत होम तिल एवं मधुरयुक्त करे तथा पूर्वकथित मन्त्रों से पूजा करे तो यह मन्त्र लोगों को पुत्रप्रद होता है।

ग्रन्थान्तरे सन्तानगोपालमन्त्रप्रयोगः; मूलमन्त्रो यथा—ॐ क्लींश्रींह्रींजीं ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ जींह्रींश्रींक्लीं ॐ' इति चतुः-पञ्चाशद्वर्णात्मको मन्त्रः। ॐ अस्य श्रीसन्तानगोपालमन्त्रस्य नारायणऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीगोपालो देवता। क्लीं बीजम्। श्रींह्रीं शक्तिः। जीं कीलकम्। सन्तानगोपालप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।' ॐ नारायणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीगोपालदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ क्लीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐश्रीं ह्रीं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ जीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ देवकीसुत गोविन्द अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ वासुदेव जगत्पते तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ त्वामहं शरणं गतः अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ देवकीसुत गोविन्द देवदेव जगत्पते कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

ॐ वैकुण्ठतेजसा दीप्तमर्जुनेन समन्वितम्। समर्पयन्तं विप्राय नष्टानानीय बालकान्॥

इति ध्यात्वा जपं कुर्यात्। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। इति ग्रन्थान्तरोक्तं सन्तानगोपालविधानम्।

द्वितीय सन्तानगोपाल मन्त्र—यह सन्तानप्राप्ति-हेतु दूसरा मन्त्र है। इनमें कुल चौवन अक्षर होते हैं। मूल मन्त्र है—'ॐ क्लीं श्रीं ह्रीं जीं ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ देवकीसुतगोविन्द वासुदेव जगत्पते देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ जीं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ।' इस श्रीसन्तानगोपाल मन्त्र के नारायण ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, श्रीगोपाल देवता, क्लीं बीज, श्रीं ह्रीं शक्ति, जीं कीलक है तथा सन्तानगोपाल की प्रसन्नता-प्राप्ति हेतु जप में विनियोग है। इसके बाद मूल में लिखे 'ॐ नारायणऋषये नमः शिरसि' इन छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ देवकीसुत गोविन्द अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। 'ॐ देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नमः, ॐ वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा, ॐ देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्, ॐ त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुम्, ॐ देवकीसुत गोविन्द देवदेव जगत्पते नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ वैकुण्ठतेजसा दीप्त०' इत्यादि मूल में लिखित श्लोक के अनुसार ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—'वैकुण्ठ के तेज से दीप्त श्रीकृष्ण से युक्त अर्जुन मृत बालकों को लाकर विप्र को समर्पित कर रहे हैं।' इस प्रकार से ध्यान कर जप आरम्भ करना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ पूर्व के मन्त्र की भाँति करे। (इस मन्त्र का जप मृतवत्सा तथा गर्भपात वाली स्त्रियों में विशेष रूप से करना चाहिये)।

सन्तानगोपालस्तोत्रम्

श्रीशं कमलपत्राक्षं देवकीनन्दनं हरिम्। सुतसम्प्राप्तये कृष्णं नमामि मधुसूदनम्॥ १॥
नमाम्यहं वासुदेवं सुतसम्प्राप्तये हरिम्। यशोदाङ्कगतं बालं गोपालं नन्दनन्दनम्॥ २॥
अस्माकं पुत्रलाभाय गोविन्दं मुनिवन्दितम्। नमाम्यहं वासुदेवं देवकीनन्दनं सदा॥ ३॥
गोपालं डिम्भकं वन्दे कमलापतिमच्युतम्। पुत्रसम्प्राप्तये कृष्णं नमामि यदुपुङ्गवम्॥ ४॥
पुत्रकामेष्टिफलदं कञ्जाक्षं कमलापतिम्। देवकीनन्दनं वन्दे सुतसम्प्राप्तये मम॥ ५॥

पद्मापते पद्मनेत्र पद्मनाभ जनार्दन। देहि मे तनयं श्रीश वासुदेव जगत्पते॥ ६॥
यशोदाङ्कगतं बालं गोविन्दं मुनिवन्दितम्। अस्माकं पुत्रलाभाय नमामि श्रीशमच्युतम्॥ ७॥
श्रीपते देवदेवेश दीनार्तिहरणाच्युत। गोविन्द मे सुतं देहि नमामि त्वां जनार्दन॥ ८॥
भक्तकामद गोविन्द भक्तरक्ष शुभप्रद। देहि मे तनयं कृष्ण रुक्मिणीवल्लभ प्रभो॥ ९॥
रुक्मिणीनाथ सर्वेश देहि मे तनयं सदा। भक्तमन्दार पद्माक्ष त्वामहं शरणं गतः॥ १०॥

सन्तानगोपालस्तोत्र—पुत्र की प्राप्ति के लिये मैं लक्ष्मीपति, कमलपत्राक्ष, देवकीनन्दन, हरि, मधुसूदन, कृष्ण को नमस्कार करता हूँ। मैं पुत्रप्राप्तिहेतु वासुदेव, हरि, यशोदा के अङ्क में विराजित नन्दनन्दन को प्रणाम करता हूँ। अपने पुत्र की प्राप्ति-हेतु मैं मुन्विरों के द्वारा वन्दित गोविन्द, वासुदेव देवकीनन्दन की सदैव वन्दना करता हूँ। मैं शिशुगोपाल तथा कमलापति अच्युत की वन्दना करता हूँ। पुत्र-प्राप्तिहेतु मैं यदुपुङ्गव कृष्ण की वन्दना करता हूँ। पुत्रकामेष्टि का फल देने वाले कमलनेत्र देवकीनन्दन की स्वपुत्र-प्राप्तिहेतु वन्दना करता हूँ। हे पद्मपति, पद्मनेत्र, पद्मनाभ, जनार्दन, हे श्रीश, जगत्पति वासुदेव! मुझे पुत्र प्रदान करो। यशोदा की गोद में बैठे, बालगोविन्द, जो कि मुनिगणों द्वारा वन्दित हैं, मैं उन श्रीश, अच्युत की वन्दना अपने पुत्रलाभार्थ करता हूँ। हे श्रीपति, देवदेवेश, दीनों की आर्ति हरने वाले अच्युत, गोविन्द! मुझे पुत्र प्रदान करो, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ। हे भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले गोविन्द, भक्तरक्षक, शुभप्रद, रुक्मिणीवल्लभ प्रभु! आप मुझे पुत्र प्रदान करे। हे रुक्मिणीनाथ सर्वेश! मुझे पुत्र प्रदान करे। हे भक्तमन्दार, पद्माक्ष! मैं आपकी शरण ग्रहण करता हूँ॥ १-१०॥

देवकीसुत गोविन्द देवदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ ११॥
वासुदेव जगद्वन्द्य श्रीपते पुरुषोत्तम। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ १२॥
कञ्जाक्ष कमलानाथ परकारुणिकोत्तम। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ १३॥
लक्ष्मीपते पद्मनाभ मुकुन्द मुनिवन्दित। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ १४॥
कार्यकारणरूपाय वासुदेवाय ते सदा। नमोऽस्तु पुत्रलाभार्थं सुखदाय बुधाय ते॥ १५॥
राजीवनेत्र श्रीराम रावणारे हरे कवे। तुभ्यं नमोऽस्तु देवेश तनयं देहि मे हरे॥ १६॥
अस्माकं पुत्रलाभाय भजामि त्वां जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण वासुदेव रमापते॥ १७॥
श्रीमानिनीमानचोर गोपीवस्त्रापहारक। देहि मे तनयं कृष्ण वासुदेव जगत्पते॥ १८॥
अस्माकं पुत्रसम्प्राप्तिं कुरुष्व यदुनन्दन। रमापते वासुदेव मुकुन्द मुनिवन्दित॥ १९॥
वासुदेव सुतं देहि तनयं देहि माधव। पुत्रं मे देहि श्रीकृष्ण वत्सं देहि महाप्रभो॥ २०॥

हे देवकीपुत्र गोविन्द! देवदेव, जगदीश्वर! मुझे आप पुत्र प्रदान करे, मैं आपकी शरण में हूँ। हे जगद्वन्द्य, वासुदेव, पुरुषोत्तम, श्रीपति! मुझे पुत्र प्रदान करो, मैं आपकी शरण में जाता हूँ। हे कञ्जाक्ष, हे कमलनाथ परकारुणिकोत्तम! मुझे पुत्र प्रदान करो, मैं आपकी शरण में आया हूँ। हे लक्ष्मीपति, पद्मनाभ, मुकुन्द, मुनिवन्दित! मुझे पुत्र प्रदान करो, मैं आपकी शरण में हूँ। हे कार्यकारण रूप वासुदेव! आपके लिये सुखदायक बुद्धिमान् पुत्र के लिये सदैव प्रणाम है। हे राजीवनेत्र, रावणारि, श्रीराम, हरि कवि हे देवेश! आपको नमस्कार है, आप मुझे पुत्र प्रदान करें। हे जगत् के स्वामी! मैं आपको अपने पुत्र की प्राप्ति-हेतु भजता हूँ। हे रमापति वासुदेव! आप मुझे पुत्र दीजिये। हे श्रीमानिनीमान को चुरानेवाले! गोपियों के वस्त्र का हरण करने वाले, जगत्पति वासुदेव! मुझे पुत्र दीजिये। हे यदुनन्दन रमापति वासुदेव! मुनिवन्दित मुकुन्द! आप हमको पुत्रप्राप्ति करायें। हे वासुदेव, हे माधव! मुझे पुत्र दो। हे श्रीकृष्ण! मुझे पुत्र दो, हे श्रीकृष्ण! मुझे पुत्र दो॥ ११-२०॥

डिम्भकं देहि श्रीकृष्ण ह्यात्मजं देहि राघव। भक्तमन्दार मे देहि तनयं नन्दनन्दन॥ २१॥
नन्दनं देहि मे कृष्ण वासुदेव जगत्पते। कमलानाथ गोविन्द मुकुन्दमुनिवन्दित॥ २२॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम। सुतं देहि श्रियं देहि श्रियं पुत्रं प्रदेहि मे॥ २३॥
यशोदास्तन्यपानज्ञं पिबन्तं यदुनन्दनम्। वन्देऽहं पुत्रलाभार्थं कपिलाक्षं हरिं सदा॥ २४॥
नन्दनन्दन देवेश नन्दनं देहि मे प्रभो। रमापते वासुदेव श्रियं पुत्रं जगत्पते॥ २५॥
पुत्रं श्रियं श्रियं पुत्रं पुत्रं मे देहि माधव। अस्माकं दीनवाक्यानि ह्यवधारय श्रीपते॥ २६॥
गोपालडिम्भ गोविन्द वासुदेव रमापते। अस्मभ्यं डिम्भकं देहि श्रियं देहि जगत्पते॥ २७॥
मद्वाञ्छितफलं देहि देवकीनन्दनाच्युत। मां च पुत्रार्थिनं धन्यं कुरुष्व यदुनन्दन॥ २८॥
याचेऽहं त्वां श्रियं पुत्रं देहि मे पुत्रसम्पदम्। भक्तचिन्तामणे राम कल्पवृक्ष महाप्रभो॥ २९॥
आत्मजं नन्दनं पुत्रं कुमारं डिम्भकं सुतम्। अर्भकं तनयं देहि मे सदा रघुनन्दन॥ ३०॥

हे श्रीकृष्ण! मुझे बच्चा दो। हे राघव! मुझे आत्मज दो। हे नन्दनन्दन भक्तमन्दार! मुझे तनय दो। हे वासुदेव जगत्पति! मुझे नन्दन दीजिये। हे कमलनाथ गोविन्द! मुकुन्द मुनिवन्दित! मेरे लिये अन्य कोई शरण नहीं है, आप ही मेरी शरण हैं, आप मुझे पुत्र दें, लक्ष्मी दें, लक्ष्मी दें, पुत्र दें। यशोदा के स्तन्यपान को जानने वाले, उसे पीते हुए यदुनन्दन कपिलाक्ष हरि की मैं पुत्रलाभार्थ सदैव वन्दना करता हूँ। हे नन्दनन्दन देवेश! रमापति, वासुदेव, जगत्पति! आप मुझे आनन्दित करने वाला पुत्र, लक्ष्मीपुत्र प्रदान करे। हे श्रीपति माधव! हमारे दीन वचनों को सुन लो और पुत्र को-लक्ष्मी को, लक्ष्मी को-पुत्र को मुझे दीजिये। हे गोपालडिम्भ, गोविन्द, वासुदेव, रमापति, जगत्पति! हमको पुत्र-लक्ष्मी प्रदान करो। हे देवकीनन्दन, अच्युत! मुझे वाञ्छित फल दीजिये। हे यदुनन्दन! मुझ पुत्रार्थी को धन्य कीजिये। आपसे लक्ष्मी-पुत्र माँगता हूँ, मुझे सम्पत्ति प्रदान करो। हे प्रभु! आप भक्तचिन्तामणि कल्पवृक्ष राम हैं। हे रघुनन्दन! आप सदैव मुझे आत्मज, नन्दन, पुत्र, कुमार, डिम्भक, सुत, अर्भक तथा तनय प्रदान करें॥ २१-३०॥

वन्दे सन्तानगोपालमाधवं भक्तकामदम्। अस्माकं पुत्रसम्प्राप्त्यै सदा गोविन्दमच्युतम्॥ ३१॥
अकारयुक्तं गोपालं श्रीयुक्तं यदुनन्दनम्। क्लींयुक्तं देवकीपुत्रं नमामि यदुनायकम्॥ ३२॥
वासुदेव मुकुन्देश गोविन्द माधवाच्युत। देहि मे तनयं कृष्ण रमानाथ महाप्रभो॥ ३३॥
राजीवनेत्र गोविन्द कपिलाक्ष हरे प्रभो। समस्तकाम्यवरद देहि मे तनयं सदा॥ ३४॥
अब्जपद्मनभः पद्मवृन्दरूप जगत्पते। देहि मे वरसत्पुत्रं रमानायक माधव॥ ३५॥
नन्दपाल धरापाल गोविन्द यदुनन्दन। देहि मे तनयं कृष्ण रुक्मिणीवल्लभ प्रभो॥ ३६॥
दासमन्दार गोविन्द मुकुन्द माधवाच्युत। गोपाल पुण्डरीकाक्ष देहि मे तनयं श्रियम्॥ ३७॥
यदुनायक पद्मेश नन्दगोपवधूसुत। देहि मे तनयं कृष्ण श्रीधर प्राणनायक॥ ३८॥
अस्माकं वाञ्छितं देहि देहि पुत्रं रमापते। भगवन्कृष्ण सर्वेश वासुदेव जगत्पते॥ ३९॥
रमाहृदयसम्भार सत्यभामामनःप्रिय। देहि मे तनयं कृष्ण रुक्मिणीवल्लभ प्रभो॥ ४०॥

हमारे यहाँ पुत्रप्राप्ति के लिये सदैव भक्तकामद, सन्तानगोपाल, माधव, गोविन्द अच्युत की वन्दना है। गोपाल अकार से युक्त हैं। यदुनन्दन श्रीं-युक्त हैं। देवकीनन्दन क्लीं-युक्त हैं, उन यदुनायक को नमस्कार करता हूँ। हे वासुदेव, मुकुन्देश, गोविन्द, माधव, अच्युत, रमानाथ, महाप्रभु! मुझे तनय दीजिये। हे राजीवनेत्र, गोविन्द, कपिलाक्ष, हरि, समस्त कामनाओं का वर देने वाले प्रभो! मुझे सदैव तनय दीजिये। हे रमानाथ, माधव, अब्ज,

पद्मनाभ, पद्मवृन्दरूप जगत्पति! मुझे श्रेष्ठ पुत्रप्राप्ति का वर दीजिये। हे रुक्मिणीवल्लभ, नन्दपाल, धरापाल, गोविन्द, यदुनन्दन, प्रभो कृष्ण! मुझे तनय दीजिये। हे दासमन्दार, गम्भीर, शङ्कर, अच्युत, माधव, गोपाल, पुण्डरीकाक्ष! मुझे पुत्र तथा लक्ष्मी दें। हे यदुनायक, पद्मेश, नन्द-गोपवधूसुत, श्रीधर, प्राणनायक कृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान करें। हे भगवान् कृष्ण, वासुदेव जगत्पते रमापति! हमारे लिये वाञ्छित पुत्र प्रदान करें। हे उमाहृदयसम्भार, सत्यभामा के मन को प्रिय, रुक्मिणीवल्लभ प्रभो कृष्ण! मुझे पुत्र दीजिये॥ ३१-४०॥

चन्द्रसूर्याक्ष गोविन्द पुण्डरीकाक्ष माधव। अस्माकं भाग्यसत्पुत्रं देहि देव जगत्पते॥ ४१॥
कारुण्यरूप पद्माक्ष पद्मनाभ समर्चित। देहि मे तनयं कृष्ण देवकीनन्दनन्दन॥ ४२॥
देवकीसुत श्रीनाथ वासुदेव जगत्पते। समस्तकामफलद देहि मे तनयं सदा॥ ४३॥
भक्तमन्दार गम्भीर शङ्कराच्युत माधव। देहि मे तनयं गोपबाल वत्सक श्रीपते॥ ४४॥
श्रीपते वासुदेवेश देवकीप्रियनन्दन। भक्तमन्दार मे देहि तनयं जगतां प्रभो॥ ४५॥
जगन्नाथ रमानाथ भूमिनाथ दयानिधे। वामदेवेश सर्वेश देहि मे तनयं प्रभो॥ ४६॥
श्रीनाथ कञ्जपत्राक्ष वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ ४७॥
दासमन्दार गोविन्द भक्तचिन्तामणे प्रभो। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ ४८॥
गोविन्द पुण्डरीकाक्ष रमानाथ महाप्रभो। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ ४९॥
श्रीनाथ कमलपत्राक्ष गोविन्द मधुसूदन। मत्पुत्रफलसिद्ध्यर्थं भजामि त्वां जनार्दनः॥ ५०॥

हे चन्द्र-सूर्य-नक्षत्र, गोविन्द, पुण्डरीकाक्ष माधव, जगत्पतिदेव! हमें सत्पुत्र प्रदान कीजिये। हे कारुण्यरूप, पद्माक्ष, पद्मनाभ-समर्चित देवकीनन्दन कृष्ण! मुझे पुत्र दीजिये। हे देवकीपुत्र, श्रीनाथ, जगत्पति, समस्त कामफलद! मुझे सदैव पुत्र प्रदान करो। हे भक्तमन्दार गम्भीर, शङ्कर, अच्युत, माधव, श्रीगोपबालवत्सक श्रीपते! मुझे पुत्र दो। हे श्रीपति वासुदेवेश! देवकी के प्रिय पुत्र, भक्तमन्दार जगत् के प्रभो! मुझे पुत्र दीजिये। हे जगन्नाथ, रमानाथ, भूमिनाथ, दयानिधि, वासुदेवेश, सर्वेश प्रभो! मुझे पुत्र दीजिये। हे श्रीनाथ, वासुदेव, कञ्जपत्राक्ष वासुदेव, जगत्पति कृष्ण! मुझे पुत्र दीजिये। मैं आपकी शरण में हूँ। हे दासमन्दार (दासों के लिये मूँगे के समान या कल्पवृक्ष के समान) गोविन्द भक्तचिन्तामणि कृष्ण प्रभो! आप मुझे पुत्र दें। मैं आपकी शरण में हूँ। हे गोविन्द पुण्डरीकाक्ष, रमानाथ, महाप्रभु कृष्ण! मैं आपकी शरण में हूँ, आप मुझे पुत्र दें। हे श्रीनाथ कमलपत्राक्ष, गोविन्द मधुसूदन! मैं अपने पुत्ररूपी फल को प्राप्त करने के लिये हे जनार्दन! आपको भजता हूँ॥ ४१-५०॥

स्तन्यं पिबन्तं जननीमुखाम्बुजं विलोक्य मन्दस्मितमुज्ज्वलाङ्गम्।
स्पृशन्तमन्यस्तनमङ्गुलीभिर्वन्दे यशोदाङ्कगतं मुकुन्दम्॥ ५१॥

याचेऽहं पुत्रसन्तानं भवन्तं पद्मलोचन। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ ५२॥
अहं तु पुत्रसम्पत्तिं चिन्तयामि जगत्पते। शीघ्रं मे देहि दातव्यं भवता मुनिवन्दित॥ ५३॥
वासुदेव जगन्नाथ श्रीपते पुरुषोत्तम। कुरु मां दत्तपुत्रं च कृष्ण देवेन्द्रपूजित॥ ५४॥
कुरु मां दत्तपुत्रं च यशोदाप्रियनन्दन। मह्यं वै पुत्रसन्तानो दातव्यो भवता हरे॥ ५५॥
वासुदेव जगन्नाथ गोविन्द देवकीसुत। देहि मे तनयं राम कौशल्याप्रियनन्दन॥ ५६॥
पद्मपत्राक्ष गोविन्द विष्णो वामन माधव। देहि मे तनयं सीताप्राणनायक राघव॥ ५७॥
कञ्जाक्ष कृष्ण देवेन्द्रमण्डित मुनिवन्दित। लक्ष्मणाग्रज श्रीराम देहि मे तनयं सदा॥ ५८॥

देहि मे तनयं राम दशरथप्रियनन्दन। सीतानायक कञ्जाक्ष मुचुकुन्दवरप्रद॥ ५९॥

विभीषणस्य या लङ्का भवता दीयते पुरा। अस्माकं तत्प्रकारेण तनयं देहि माधव॥ ६०॥

माता यशोदा दूध पीते हुए बाल कृष्ण को देखकर मन्द-मन्द मुस्काती है। उन मुकुन्द को जो यशोदा के गोद में बैठे अङ्गुलियों से माता के स्तनों का स्पर्श कर रहे हैं, मैं प्रणाम करता हूँ। हे पद्मलोचन! मैं आपसे पुत्रसन्तान की कामना करता हूँ, आप मुझ शरणागत को पुत्र दीजिये। हे जगत्पति! मैं पुत्र सम्पत्ति की चिन्ता करता हूँ। हे मुनिवन्दित! आप वह मुझे शीघ्र दीजिये। आपको देना ही चाहिये। हे देवेन्द्रपूजित कृष्ण, वासुदेव, जगन्नाथ, श्रीपति पुरुषोत्तम! मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। हे यशोदाप्रिय नन्दन! मुझे पुत्रयुक्त कर दीजिये। हे हरि! आपके द्वारा मुझे पुत्र सन्तान प्राप्त होना चाहिये। हे वासुदेव जगन्नाथ, गोविन्द, देवकीपुत्र, कौशल्या के प्रिय पुत्र राम! मुझे पुत्र दें। हे पद्मपद्माक्ष गोविन्द, विष्णु, वामन, राघव सीताप्राणनायक! मुझे पुत्र दें। हे कञ्जाक्ष कृष्ण, देवेन्द्रमण्डित, मुनिवन्दित, लक्ष्मण के ज्येष्ठ भ्राता श्रीराम! मुझे सर्वदा पुत्र प्रदान करें। हे दशरथप्रियनन्दन राम, सीतानायक, कञ्जाक्ष, मुचुकुन्द को वर देने वाले! मुझे पुत्र दीजिये। आपने पूर्वकाल में विभीषण को लङ्का प्रदान की थी, उसी प्रकार आप मुझे पुत्र प्रदान करे॥ ५१-६०॥

भवदीयपदाम्भोजे चिन्तयामि निरन्तरम्। देहि मे तनयं सीताप्राणवल्लभ राघव॥ ६१॥

राम मत्काम्यवरद पुत्रोत्पत्तिफलप्रद। देहि मे तनयं श्रीश कमलासनवन्दित॥ ६२॥

राम राघव सीतेश लक्ष्मणानुज देहि मे। भाग्यमत्पुत्रसन्तानं दशरथात्मज श्रीपते॥ ६३॥

देवकीगर्भसञ्जात यशोदाप्रियनन्दन। देहि मे तनयं राम कृष्ण गोपाल माधव॥ ६४॥

कृष्ण माधव गोविन्द वामनाच्युत शङ्कर। देहिं मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ६५॥

गोपबाल महाधन्य गोविन्दाच्युत माधव। देहि मे तनयं कृष्ण वासुदेव जगत्पते॥ ६६॥

दिशतु दिशतु पुत्रं देवकीनन्दनोऽयं दिशतु दिशतु शीघ्रं भाग्यवत्पुत्रलाभम्।
दिशतु दिशतु श्रीशो राघवो रामभद्रो दिशतु दिशतु पुत्रं वंशविस्तारहेतोः॥ ६७॥

दीयतां वासुदेवेन तनयो मत्प्रियः सुतः। कुमारो नन्दनो सीतानायकेन सदा मम॥ ६८॥

राम राघव गोविन्द देवकीसुत माधव। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ६९॥

वंशविस्तारकं पुत्रं देहि मे मधुसूदन। सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः॥ ७०॥

हे सीता के प्राणवल्लभ राघव! मैं सदैव आपके चरणकमलों का ही चिन्तन करता हूँ; आप मुझे पुत्र दीजिये। हे कमलासनवन्दित राम! मेरे काम्य वर को पुत्रोत्पत्ति के रूप में फलित करने वाले श्रीश! मुझे पुत्र दीजिये। हे दशरथात्मज, श्रीपति, लक्ष्मणानुज, राम, राघव, सीतेश! मुझे भाग्यशाली पुत्र सन्तान प्रदान कीजिये। हे देवकी के गर्भ में उत्पन्न, यशोदा के प्रिय, राम, कृष्ण, गोपाल, माधव! मुझे पुत्र दीजिये। हे कृष्ण, हे माधव, हे गोविन्द, वामन, अच्युत, शङ्कर, श्रीश, गोपबालक नायक! मुझे पुत्र दीजिये। हे महाधन्य गोपबाल, गोविन्द, अच्युत, माधव, जगत्पति, वासुदेव कृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान करिये। हे देवकीनन्दन! मुझे शीघ्र ही पुत्र प्राप्त करायें, मुझे शीघ्र ही भाग्यशाली पुत्र का लाभ करायें। श्रीरामभद्र, राघव! मेरे वंशविस्तारहेतु शीघ्र ही मेरे लिये पुत्र की व्यवस्था करें, पुत्र की व्यवस्था करें। मुझे सदैव वासुदेव के द्वारा प्रिय पुत्र दिया जाय। सीतानायक के द्वारा सदैव मुझे आनन्दित करने वाला पुत्र दिया जाय। हे राम, राघव, गोविन्द, देवकीपुत्र माधव, हे श्रीश, हे गोपबालनायक! मुझे शीघ्र पुत्र प्रदान करें। हे मधुसूदन! हमें वंश का विस्तार करने वाला पुत्र दीजिये। मुझे पुत्र दीजिये, पुत्र दीजिये। मैं आपकी शरण में हूँ॥ ६१-७०॥

ममाभीष्टसुतं देहि कंसारे माधवाच्युत। सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः॥ ७१॥
चन्द्रार्ककल्पपर्यन्तं तनयं देहि माधव। सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः॥ ७२॥
विद्यावन्तं बुद्धिमन्तं श्रीमन्तं तनयं सदा। देहि मे तनयं कृष्ण देवकीनन्दनः सदा॥ ७३॥
नमामि त्वां पद्मनेत्र सुतलाभाय कामदम्। मुकुन्दं पुण्डरीकाक्षं गोविन्दं मधुसूदनम्॥ ७४॥
भगवन्कृष्ण गोविन्द सर्वकामफलप्रद। देहि मे तनयं स्वामिंस्त्वामहं शरणं गतः॥ ७५॥
स्वामिंस्त्वं भगवन्नाम कृष्ण माधव कामद। देहि मे तनयं नित्यं त्वामहं शरणं गतः॥ ७६॥
तनयं देहि गोविन्द कञ्जाक्ष कमलापते। सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः॥ ७७॥
पद्मापते पद्मनेत्र प्रद्युम्नजनक माधव। सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः॥ ७८॥
शङ्खचक्रगदाखड्गशार्ङ्गपाणे रमापते। देहि मे तनयं नित्यं त्वामहं शरणं गतः॥ ७९॥
नारायण रमानाथ राजीवपत्रलोचन। सुतं मे देहि मे देहि पद्मसद्मानुवन्दित॥ ८०॥

हे कंस के शत्रु माधव, अच्युत! मुझे अभीष्ट पुत्र दीजिये, मैं आपकी शरण में आया हूँ। मुझे पुत्र दो, पुत्र दो। हे माधव! मुझे जब तक सूर्य एवं चन्द्रमा रहें, तब तक पुत्र देते रहें। मुझे पुत्र दें, पुत्र दें, मैं आपका शरणागत हूँ। मुझे हे देवकीनन्दन कृष्ण! सदैव विद्यावान्, बुद्धिमान्, श्रीमन्त पुत्र दीजिये। हे देवकीनन्दन! मुझे पुत्र दीजिये। हे कमलनयन! पुत्रलाभ के लिये हे कामद, मुकुन्द, पुण्डरीकाक्ष गोविन्द, मधुसूदन! आपको नमस्कार करता हूँ। हे सर्वकामफलप्रद भगवान् कृष्ण गोविन्द स्वामी! आप मुझे पुत्र दीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ। हे भगवान् राम, कृष्ण, माधव, कामद! आप स्वामी हैं, मुझे पुत्र प्रदान करें। मैं नित्य आपकी शरण में हूँ। हे कञ्जाक्ष, कमलापति गोविन्द! मुझे पुत्र दे, मुझे पुत्र दें, मुझे पुत्र दें, मैं आपकी शरण में हूँ। हे पद्मापति, पद्मनेत्र, प्रद्युम्न के पिता, माधव! मुझे पुत्र दो, पुत्र दो, मैं आपकी शरण में हूँ। हे हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा, कमल, तलवार तथा धनुष धारण करने वाले रमापति कृष्ण! आप मुझे पुत्र दीजिये। मैं आपकी शरण में हूँ। हे नारायण, हे रमानाथ, हे राजीवपत्रलोचन, हे पद्मसद्मानुवन्दित! मुझे पुत्र दीजिये, पुत्र दीजिये॥ ७१-८०॥

राम राघव गोविन्द देवकीवरनन्दन। रुक्मिणीनाथ सर्वेश नारदादिसुरार्चित॥ ८१॥
देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८२॥
मुनिवन्दित गोविन्द रुक्मिणीवल्लभ प्रभो। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८३॥
गोपिकार्चित पङ्केजमकरन्दासक्तमानस। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८४॥
रामाहृदयपङ्केजलोल माधव कामद। ममाभीष्टसुतं देहि त्वामहं शरणं गतः॥ ८५॥
वासुदेव रमानाथ दासानां मङ्गलप्रद। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८६॥
कल्याणप्रद गोविन्द मुरारे मुनिवन्दित। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८७॥
पुत्रप्रद मुकुन्देश रुक्मिणीवल्लभ प्रभो। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८८॥
पुण्डरीकाक्ष गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ८९॥
दयानिधे वासुदेव मुकुन्द मुनिवन्दित। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ९०॥

हे राम, राघव, गोविन्द, देवकीवरनन्दन, रुक्मिणीनाथ, सर्वेश, नारदादि देवर्षियों एवं देवों द्वारा अर्चित, देवकीपुत्र, गोविन्द वासुदेव, जगत्पति, श्री गोपाल नायक! मुझे पुत्र प्रदान करें। हे मुनिवन्दित गोविन्द, रुक्मिणीवल्लभ, प्रभु! मुझे पुत्र प्रदान करें, मैं आपकी शरण में हूँ। हे गोपिकाओं के द्वारा अर्चित कमलमकरन्दासक्त

मानस कृष्ण! मुझे पुत्र दीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ। हे स्त्रियों के हृदयकमल पर लोलुप, कामद माधव! मुझे अभीष्ट पुत्र प्रदान करो, मैं आपकी शरण में हूँ। हे दासों को मङ्गलदायक रमानाथ वासुदेव! मुझे पुत्र दीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ। हे मुनिवन्दित, कल्याणप्रद गोविन्द मुरारे! मुझे पुत्र दें, मैं आपकी शरण में हूँ। हे पुत्रप्रद मुकुन्देश रुक्मिणीवल्लभ प्रभु! मुझे पुत्र दें, मैं आपकी शरण में हूँ। हे पुण्डरीकाक्ष, जगत्पति वासुदेव गोविन्द! मुझे पुत्र दीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ। हे दयानिधे वासुदेव मुनिवन्दित मुकुन्द! मुझे पुत्र प्रदान करो, मैं आपकी शरण में हूँ॥ ८१-९०॥

पुत्रसम्पत्प्रदातारं गोविन्दं देवपूजितम्। वन्दामहे सदा कृष्णं पुत्रलाभप्रदायकम्॥ ९१॥
कारुण्यनिधये गोपीवल्लभाय मुरारये। नमोऽस्तु पुत्रलाभार्थं देहि मे तनयं विभो॥ ९२॥
नमस्तस्मै रमेशाय रुक्मिणीवल्लभाय ते। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालनायक॥ ९३॥
नमस्ते वासुदेवाय नित्यश्रीकामुकाय च। पुत्रदाय च शेषेन्द्रशायिने रङ्गशायिने॥ ९४॥
रङ्गशायिन्रमानाथ मङ्गलप्रद माधव। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ९५॥
दासाय मे सुतं देहि दीनमन्दार राघव। सुतं देहि सुतं देहि पुत्रं देहि रमापते॥ ९६॥
नमोऽस्तु ते ममाभीष्टपुत्रदानकृते सदा। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ९७॥
मदिष्टदेव गोविन्द वासुदेव जनार्दन। देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥ ९८॥
नीतिमान्धनवान्पुत्रो विद्यावांश्च सुजायते। भगवंस्त्वत्कृपायाश्च वासुदेवेन्द्रपूजित॥ ९९॥
यः पठेत्पुत्रशतकं सोऽपि सत्पुत्रवान्भवेत्। श्रीवासुदेवकथितं स्तोत्ररत्नं सुखाय च॥ १००॥
जपकाले पठेन्नित्यं पुत्रलाभं धनं श्रियम्। ऐश्वर्यं राजसम्मानं सद्यो याति न संशयः॥ १०१॥

इति लक्ष्मीकेशवसंवादे सन्तानगोपालस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

हे पुत्रसम्पत्ति देनेवाले देवपूजित गोविन्द कृष्ण! आपकी सदैव वन्दना करते हैं, आप पुत्रलाभ देनेवाले हैं। हे करुणानिधि गोपीवल्लभ रमेश! आपके लिये नमस्कार है, हे श्रीश गोपबालक नायक! आप मुझे पुत्र प्रदान करें। नित्य श्री के लिये कामुक वासुदेव, पुत्रदायक, शेष पर शयन करनेवाले, रङ्गशायी के लिये नमस्कार है। हे रङ्गशायी, रमानाथ, मङ्गलप्रद, माधव, श्रीश गोपबालनायक! आप मुझे पुत्र दीजिये। मुझ दास को हे दीनमन्दार राघव! पुत्र दीजिये। हे रमापति! पुत्र दो, पुत्र दो, पुत्र दो। मुझे सदैव पुत्रदान करने वाले के लिये नमस्कार है। हे कृष्ण! मुझे पुत्र दो, मैं आपकी शरण में हूँ। मेरे इष्टदेव गोविन्द, वासुदेव, जनार्दन, कृष्ण! मुझे पुत्र दीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ। हे वासुदेव, इन्द्रपूजित भगवान्! आपकी कृपा से मुझे नीतिमान्, धनवान् तथा विद्यावान् पुत्र उत्पन्न हो। जो इस पुत्रशतक (सन्तानगोपाल स्तोत्र) को पढ़ता है, वह पुत्रवान् होता है। यह श्री वासुदेव-कथित स्तोत्ररत्न सुखकारी है। इसका पाठ सन्तानगोपाल मन्त्र के जप के पूर्व नित्य ही करने से पुत्र का लाभ, धन, लक्ष्मी, ऐश्वर्य तथा राजसम्मान की शीघ्र प्राप्ति होती है। इसमें सन्देह नहीं है॥ ९१-१०१॥

सन्तानोपायान्यन्यविधानानि

अथ विष्णोः प्रसङ्गादन्यान्यपि सन्तानोपायविधानानि लिख्यन्ते; महार्णवे कौस्तुभे च—

अरुण उवाच—

वृथा धनं गृहं धान्यमपुत्रं जन्म निष्फलम्। ममोपरि दयां कृत्वा प्रायश्चित्तं वदस्व मे॥

श्रीसूर्य उवाच—

तीर्थयात्रा प्रकर्तव्या रेवातापीसमुद्भवा। एकेनापि हि वस्त्रेण दम्पतीस्नानमुत्तमम्॥

श्रवणं हरिवंशस्य ब्राह्मणोद्वाहनं खग। अष्टोत्तरशतान्विप्रान् मिष्टान्नेन तु तर्पयेत्॥
ईशान इति मन्त्रेण जपं कुर्य्यात्सहस्रकम्। दशांशहोमसंयुक्तं कुर्याच्च विधिवत्ततः॥
पद्मैस्तु लक्षसङ्ख्याकैः शिवं सम्पूज्य यत्नतः। स्वर्णधेनुः प्रदातव्या सवत्सा सुरभिस्तथा॥
घृतकुम्भं वैनतेय ब्राह्मणाय निवेदयेत्। एवं कृतेन वै तस्य ह्यपत्यं जायते कलौ॥

महार्णवेऽपि—

सुवर्णबालकं कृत्वा दद्याद्दोलासमन्वितम्। अथवा वृषभं दद्याद्विप्रोद्वाहनमेव वा॥
महारुद्रजपो वापि लक्षपद्मैः शिवार्चनम्॥

गारुडे—

हरिवंशकथां श्रुत्वा शतचण्डीविधानतः। भक्त्या श्रीशिवमाराध्य पुत्रमुत्पादयेत्सुधीः॥

शातातपः—

विप्ररत्नापहारी च सोऽनपत्यः प्रजायते। तेन कार्यं विशुद्ध्यर्थं महारुद्रजपादिकम्॥

पद्मपुराणे—

सन्तानगोपालमन्त्री महारुद्रजपस्तथा। पूजनं पार्थिवस्यैव गणनाथमनुं जपेत्॥

मृतपुत्रत्वहरोपायमपि महार्णवे—

बालघाती च पुरुषो मृतवत्सः प्रजायते। ब्राह्मणोद्वाहनं चैव कर्तव्यं तेन शुद्ध्यति॥
श्रवणं हरिवंशस्य कर्तव्यं च यथाविधि। महारुद्रजपं चैव कारयेच्च यथाविधि॥
जुहुयाच्च दशांशेन दूर्वामाज्यपरिप्लुताम्। एकादशस्वर्णनिष्कं प्रदातव्याश्च दक्षिणाः॥
एकादशपशूंश्चैव दद्याद्वित्तानुसारतः। अन्येभ्योऽपि यथाशक्ति द्विजेभ्यो दक्षिणां दिशेत्॥
स्नापयेद्दम्पती पश्चान्मन्त्रैर्वरुणदैवतैः। आचार्याय प्रदेयानि वस्त्रालङ्करणानि च॥

इति अन्यानि सन्तानोपाय विधानानि।

सन्तानप्राप्ति के अन्य उपाय—महार्णव में अरुण ने कहा—जिसके घर में धन-धान्य तथा पुत्र नहीं है, उसका जन्म निष्फल होता है। अतः मेरे ऊपर दया करके प्रायश्चित्त बताइये।

श्री सूर्य ने कहा—रेवा (नर्मदा) तथा तापी के उद्गम की तीर्थयात्रा करनी चाहिये। एक ही वस्त्र से वहाँ दम्पति द्वारा स्नान करना उत्तम है। हे खग! हरिवंश का श्रवण तथा ब्राह्मण का विवाह कर एक सौ आठ ब्राह्मणों को मिष्टान्न-भोजन से तृप्त करना चाहिये। 'ईशानः' इत्यादि ऋचाओं का एक सहस्र जप करना चाहिये। फिर विधिपूर्वक उसी ईशान मन्त्र से दशांश (एक सौ) होम करना चाहिये। फिर एक लाख कमलों से शिवजी का पूजन करके सवत्सा गाय तथा सुवर्ण धेनु का दान करना चाहिये। हे गरुड़! ब्राह्मण को घृतकुम्भ दान करना चाहिये। ऐसा करने से इस कलियुग में उसके पुत्र उत्पन्न हो जाता है।

महार्णव ग्रन्थ में भी कहा गया है—स्वर्णमयी बालक की मूर्ति बनवाकर अथवा स्वर्णमयी बैल की मूर्ति बनवाकर ब्राह्मण को दान करना चाहिये अथवा ब्राह्मण का विवाह करना चाहिये (इससे पुत्र उत्पन्न हो जाता है)। अथवा महारुद्र का जप अथवा एक लाख शिवार्चन करना चाहिये।

गरुड़पुराण में भी कहा है—बुद्धिमान् पुरुष को हरिवंश-श्रवण करके, विधिपूर्वक शतचण्डी का अनुष्ठान करके तथा भक्तिपूर्वक शिवजी की आराधना (रुद्राभिषेक) करके पुत्र उत्पन्न करना चाहिये।

शातातपस्मृति में भी कहा है—जो ब्राह्मणों के धन (रत्न) का अपहरण करता है, वह पुत्रहीन होता है; अतः उसकी विशुद्धि के लिये महारुद्र का जप आदि करना चाहिये।

पद्मपुराण में इस प्रकार लिखा है—सन्तानगोपाल मन्त्र का जप तथा महारुद्र का जप, श्री शिव का पार्थिव-पूजन एवं श्रीगणेश जी का पूजन करना चाहिये।

महार्णव में मृत्पुत्रहर उपाय इस प्रकार बताया गया है—जो पुरुष बच्चों की हत्या करता है, उसके बच्चे मर जाते हैं। उसे ब्राह्मण का विवाह करना चाहिये, जिससे वह पाप से शुद्ध (रहित) हो जाता है। विधिपूर्वक हरिवंश पुराण का श्रवण करना चाहिये। उसी प्रकार विधिपूर्वक महारुद्र का जप भी करना चाहिये। उसके दशांश से आज्य परिप्लुत दूर्वा से होम करना चाहिये तथा ग्यारह निष्क दक्षिणा भी देनी चाहिये। वित्त के अनुसार ग्यारह पशु भी दान में देना चाहिये। अन्य ब्राह्मणों को भी यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये। दम्पति को स्नान हवन के पश्चात् वारुण मन्त्रों से होना चाहिये। आचार्य को वस्त्रालङ्कार भी देना चाहिये।

हरिवंशश्रवणविधानम्

तत्र तावत्पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डोक्तप्रायश्चित्तविधिना प्राजापत्यचान्द्रायणादीनि कृत्वा तदशक्तौ तत्प्रतिनिधिरूपधेनु-दानादिद्वारा वा प्रायश्चित्तं विधाय सूर्यारुणसंवादमहार्णवादिकर्मविपाकग्रन्थोक्तहरिवंशश्रवणादि कर्म्म कुर्य्यात्। तद्यथा—दम्पत्योरनुकूले सुदिने प्रातः कृतनित्यक्रियो देवालयादिपुण्यस्थले स्वगृहे वा शुभं मण्डपं विधाय गोमयोपलिप्ते देशे पीठे सर्वतोभद्रं विरच्य सपत्नीकः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्राऽमुकशर्माहं ममानेकजन्मार्जिताऽनपत्यत्वादिनिदानभूतबालघातनिक्षेपहरणविप्ररत्नापहरणादिजन्यदुरित-समूलनाशद्वारा दीर्घायुष्मद्बहुपुत्रादिसन्ततिप्राप्तिकामो हरिवंशश्रवणं करिष्ये; तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतार्थं साङ्गतासिद्ध्यर्थं च गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये' इति च सङ्कल्प्य गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्तं पूर्ववत् कुर्य्यात्। ततः श्रुताध्ययनसम्पन्नं ब्राह्मणमासने उदङ्मुखमुपवेश्य स्वयं प्राङ्मुख उपविश्य विप्रस्य पादप्रक्षालनं कृत्वा गन्धादिभिः सम्पूजयेत्। ततो विभवानुसारेण वरणद्रव्याणि गृहीत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम दीर्घायुष्मत्पुत्रप्राप्तये अमुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णमुद्रिकाकुण्डलकमण्डलुवासोभिर्हरिवंशश्रवणार्थं वाच-कत्वेन श्रावयितारं त्वामहं वृणे' इति वृत्वा 'ॐ वृतोऽस्मीति' प्रतिवचनानन्तरं वस्त्रालङ्कारादिभिः सम्पूजयेत्। ततः कथाभङ्गनिवृत्तये साङ्गतासिद्धये च विष्णोर्द्वादशाक्षरसन्तानगोपालमहारुद्रजपपार्थिवपूजागणेशमन्त्रजपकरणार्थं पञ्च ब्राह्मणान् वृणुयात्। तथा च पाद्मे—

वरणं पञ्चविप्राणां कथाभङ्गनिवृत्तये। कर्तव्यं तैर्हरेर्जाप्यं द्वादशाक्षरविद्यया॥
सन्तानगोपालमन्त्रो महारुद्रजपस्तथा। पूजनं पार्थिवस्यैव गणनाथमनुं जपन्॥
आसूर्योदयमारभ्य सार्धं त्रिप्रहरार्धकम्। वाचनीया कथा सम्यग्धीरकण्ठं सुधीमता॥
कथाविरामः कर्तव्यो मध्याह्ने घटिकाद्वयम्। नवरात्रं यथाशक्त्या उपोष्य शृणुयात्तदा॥

(द्वादशाक्षरमन्त्रादीनि तत्तद्देवानुष्ठानप्रकरणे द्रष्टव्यानि)। ततो वाचयित्वा प्रतिदिनम् ॐ नारायणाय नमः॥ १॥ ॐ नराय नमः॥ २॥ ॐ नरोत्तमाय नमः॥ ३॥ ॐ देव्यै नमः॥ ४॥ ॐ सरस्वत्यै नमः॥ ५॥ ॐ व्यासाय नमः॥ ६॥

ॐ नमस्ते भगवन् व्यास सर्वशास्त्रार्थकोविद। ब्रह्मविष्णुमहेशानमूर्ते सत्यवतीसुत॥

इति नमस्कृत्य स्वगुरून्प्रणम्य स्पष्टपदाक्षरं सार्थकं वाचयेत्। श्रोता प्रतिदिनं शालिग्रामप्रतिमादौ श्रीविष्णुं पुरुषसूक्तेन षोडशोपचारैः सम्पूज्य वाचकं पुस्तकं च गन्धपुष्पादिभिः पूजयेत्। दम्पती प्रतिदिनम् 'ॐ त्रायन्ताम्' इत्यादिवैदिकैर्मन्त्रैः 'सुरास्त्वाम्' इत्यादिपौराणमन्त्रैश्च सुस्नानावलङ्कृतौ कृतविश्वासौ आस्तिकौ तदेकचित्तौ शृणुयाताम्।

तैलताम्बूलक्षौरमैथुनखट्वाशयनानि यावत्समाप्ति वर्जयन्तौ हविष्यं भुञ्जीयाताम्। वाचकादीनपि प्रत्यहं पायसादिना भोजयेताम्। ग्रन्थसमाप्तौ वाचकाय स्वलङ्कृतां गां पयस्विनीं सवत्सां सोपस्करां सुवर्णाभरणादिदक्षिणां च दत्त्वा गायत्रीमन्त्रेण सहस्त्रं तिलाज्यं हुत्वा न्यूनं सम्पूर्णतां वाचयित्वा शतं विप्रान् चतुर्विंशतिमिथुनानि च पायसान्नेन भोजयेताम्। इति हरिवंशश्रवणप्रयोगः।

हरिवंशपुराण-श्रवण विधान—सर्वप्रथम पूर्वोक्त पद्धतिकाण्ड में वर्णित प्रायश्चित्त विधि, प्राजापत्य चान्द्रायण आदि सम्पन्न करे। उसकी अशक्ति में उसी के प्रतिनिधिरूप गोदानादि द्वारा प्रायश्चित्त सम्पादित करके सूर्यारुण-संवाद, महार्णवादि कर्मविपाक ग्रन्थों में वर्णित हरिवंश-श्रवणादि कर्म करे।

मण्डपादि-निर्माण—दम्पति के लिये अनुकूल शुभ मुहूर्त वाले दिन प्रातःकाल नित्यक्रिया से निपटकर किसी देवालय अथवा शुभ पुण्यस्थल में अथवा अपने घर में शुभ मण्डप का निर्माण कर उसकी भूमि को गोबर से लीपकर पीठ पर सर्वतोभद्र चक्र (मण्डल) बनाकर सपत्नीक यजमान अपने आसन पर पूर्वमुख बैठे। फिर आचमन तथा प्राणायाम करके देश-काल का सङ्कीर्त्तन करके 'अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकशर्मा(वर्मा वा गुप्ता)हं ममानेकजन्मार्जिताऽनपत्यत्वमृतापत्यत्वादिनिदानभूतबालघातनिक्षेपहरणविप्रस्त्वापहरणादिजन्यदुरितसमूलनाशद्वारा दीर्घायुष्मद्बहुपुत्रादिसन्ततिप्राप्तिकामो हरिवंशश्रवणं करिष्ये; तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतार्थं साङ्गतासिद्ध्यर्थं च गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये' इस प्रकार सङ्कल्प करके, गणपति पूजनादि, नान्दीश्राद्ध-पर्यन्त सभी कर्म पूर्ववत् (पद्धतिकाण्ड के अनुसार) सम्पन्न करना चाहिये।

आचार्यादिवरण—फिर वेदाध्ययन-सम्पन्न ब्राह्मण को आसन पर उत्तर की ओर मुख करके बिठाकर स्वयं यजमान पूर्व की ओर मुख कर अपने आसन पर बैठ जाय। विप्र के पैर धोकर गन्धादि के द्वारा उसकी पूजा करे। फिर अपने वैभव के अनुसार वरण सामग्री लेकर देश-काल का उच्चारण कर 'मम दीर्घायुष्मत्पुत्रप्राप्तये अमुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्गन्धाक्षतपुष्पताम्बूलस्वर्णमुद्रिकाकुण्डलकमण्डलुवासोभिर्हरिवंशश्रवणार्थं वाचकत्वेन श्रावयितारं त्वामहं वृणे' कहकर वरण करे। आचार्य 'वृतोऽस्मि' ऐसा प्रतिवचन दे। फिर उसकी वस्त्रालङ्कार आदि से पूजा करे। फिर कथाभङ्ग की निवृत्ति के लिये साङ्गतासिद्ध्यर्थ विष्णु के द्वादशाक्षर सन्तानगोपाल, महारुद्र पार्थिव-पूजन, गणेश-जप आदि करने के लिये पाँच ब्राह्मणों का वरण करना चाहिये। उनको हरि के द्वादशाक्षर मन्त्र का जप करना चाहिये। सन्तानगोपाल मन्त्र का जप, महारुद्र का जप, शिवपार्थिव-पूजन, गणेशजी का जप उन ब्राह्मणों को प्रतिदिन करना चाहिये। सूर्योदय से प्रारम्भ करके साढ़े तीन प्रहर तक विद्वान् आचार्य को धीर कण्ठ से कथा कहनी चाहिये। मध्याह्न में दो घटी के लिये कथा को विराम देना चाहिये। इस प्रकार नौ दिनों तक कथा उपवासपूर्वक कहनी तथा सुननी चाहिये (द्वादशाक्षर मन्त्रादि उन-उन देवों के अनुष्ठान प्रकरणों में देखना चाहिये)।

फिर कथावाचक प्रतिदिन ॐ नारायणाय नमः, ॐ नराय नमः, ॐ नरोत्तमाय नमः, ॐ देव्यै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः—इन मन्त्रों से नमस्कार कर अपने गुरु को प्रणाम करके स्पष्ट पदाक्षरों के साथ कथावाचन प्रारम्भ करे।

श्रोता यजमान प्रतिदिन शालिग्राम की प्रतिमादि में श्री विष्णु का पुरुषसूक्त की सोलह ऋचाओं से षोडशोपचार पूजन कर वाचक तथा पुस्तक को प्रतिदिन गन्धादि से पूजन करे। दम्पति प्रतिदिन 'ॐ त्रायन्तमाम्' तथा 'सुरास्त्वाम्' इत्यादि वैदिक एवं पौराणिक मन्त्रों से स्नान कर सुवस्त्रालङ्कार धारण करे एवं विश्वास, आस्तिकता तथा एकाग्रचित्त से हरिवंशकथा का श्रवण करे।

श्रोता के नियम—तैल, ताम्बूल, क्षौरकर्म, मैथुन, खाट पर शयन कथा के दिनों में न करे। कथाश्रवण के दिनों में हविष्यान्न का भोजन करे। वाचकादि ब्राह्मणों को भी प्रतिदिन पायस आदि का भोजन कराये। ग्रन्थ-समाप्ति

पर वाचक को स्वयं अलङ्कृत करके दुधारू सवत्सा गाय, उपस्कर तथा सुवर्णाभरणों के साथ दे एवं दक्षिणा भी दे। गायत्री मन्त्र से एक सहस्र तिल एवं घृत की आहुति दे। फिर 'न्यूनं सम्पूर्णतां यातु०' इत्यादि का वाचन कर एक सौ ब्राह्मणों को तथा चौबीस मिथुन (पति-पत्नी) ब्राह्मणों को भोजन कराये।

हरिवंशश्रवणमाहात्म्यम्

पाद्मे—

बालघाती च पुरुषो मृतवत्सः प्रजायते। श्रवणं हरिवंशस्य कर्तव्यं च यथाविधि॥ १॥
गुरुचन्द्राग्निसूर्याणां सम्मुखे मेहते च यः। बीजमुत्सृज्यते तेन त्यक्तरेता नरो भवेत्॥ २॥
योषित्पुष्पफलानां च बालानां घातिनी तथा। फलानां कर्तनकरी मातापितृवियोगिनी॥ ३॥
स्राविणी परगर्भाणां तत्तत्प्रायोपयोषिणी। ईदृग्विधा भविष्यन्ति पञ्चदोषयुताः स्त्रियः॥ ४॥
अपुष्पा मृतवत्सा च काकवन्ध्या तथैव च। कन्याप्रजात्वं च तथा स्रावयुक्ता स्वपातकैः॥ ५॥
तासां दोषापहारार्थं हरिवंशोऽभिगर्जति। तदीयश्रवणात्सद्यो दोषा नश्यन्ति सत्वरम्॥ ६॥
नरः सुवर्णं सर्पिश्च पददानैः समन्वितम्। दशावृत्तीः शृणोत्येवं बीजसाफल्यमाप्नुयात्॥ ७॥
दशावृत्तीरपुष्पार्थं मृतवत्सा तु सप्त वै। पञ्चावृत्तीः स्रवद्गर्भा काकवन्ध्या त्रयं तथा॥ ८॥
कन्याप्रसूश्चैकावृत्तिं श्रुत्वा पुत्रमवाप्नुयात्। जीवितावधिकं श्राव्यं सर्वदोषोपशान्तये॥ ९॥
भविष्यं जन्म सम्प्राप्य न भवेत्तादृशी पुनः। उत्तमं सार्थपाठं च मध्यमं च निरर्थकम्॥ १०॥
विनार्थं शुद्धपाठश्चेदुत्तमेन समं भवेत्। नवाहमुत्तमं प्रोक्तमेकविंशाहं मध्यमम्॥ ११॥
निकृष्टमेकत्रिंशाहं सुखसाध्यं समाचरेत्। बहुभिर्दिवसै राजन् साध्यानां साधनं कलौ॥ १२॥

हरिवंश-श्रवण का फल—पद्मपुराण में कहा है कि जो व्यक्ति अपने पिछले जन्मों में बालघाती (बच्चों की हत्या करने वाला) होता है, वह इस जन्म में मृतवत्स होता है अर्थात् उसके पुत्र मर जाया करते हैं; उसे यथाविधि हरिवंश-श्रवण करना चाहिये। जो व्यक्ति गुरु-चन्द्र-सूर्य आदि के सम्मुख प्रस्राव करता है अथवा वीर्यत्याग करता है, वह वीर्यहीन होता है। जो स्त्री पूर्वजन्म में पुष्पों, फलों एवं शिशुओं का घात करने वाली होती है, फलों को काटती है, माता-पिता से उनके बालकों को छीनती है (अलग करती है), दूसरों के गर्भों को गिराती है—इस प्रकार के पाँच दोषों से युक्त जो स्त्रियाँ होती हैं, वे अपुष्पा, मृतवत्सा, काकवन्ध्या, कन्याप्रसूता, स्रावयुक्ता (यौन रोग से पीड़ित) होती हैं। उनके दोषों के परिहार के लिये हरिवंश पुराण गर्जना करता है—उसके श्रवण से शीघ्र ही दोष नष्ट हो जाते हैं। इन दोषों से पीड़ित व्यक्ति यदि स्वर्णदान, घृतदान, पददान के साथ इस पुराण की (हरिवंश की) दश आवृत्तियाँ सुनता है तो उसका बीज सफल हो जाता है। अपुष्पा (जिसके मासिक धर्म न होता हो तथा डिम्ब = Ovum का अभाव हो) को इसकी दश आवृत्तियाँ सुननी चाहिये। मृतवत्सा स्त्री (जिसके बच्चे उत्पन्न होकर मर जाते हों) को इसे सात बार सुनना चाहिये। गर्भस्राविणी को इसकी पाँच आवृत्ति तथा काकवन्ध्या को तीन आवृत्तियाँ सुननी चाहिये। कन्याप्रसू को एक आवृत्ति सुनने पर पुत्र प्राप्त हो जाता है। सभी दोषों की शान्ति के लिये जीवन भर इसे श्रवण करना चाहिये। इसे सुनकर स्त्रियाँ अगले जन्मों में पुनः इस प्रकार के दोषों से युक्त नहीं होती हैं। अर्थसहित पाठ उत्तम होता है तथा अर्थरहित पाठ मध्यम होता है। विना अर्थ के भी यदि शुद्ध पाठ किया जाय, तो उसका फल भी उत्तम पाठ के समान होता है। नौ दिन का पाठ उत्तम तथा इक्कीस दिन का पाठ मध्यम होता है। इकतीस दिन का पाठ निकृष्ट कहा गया है। अतः इन तीन प्रकार में से जो कर्ता यजमान के लिये सुखसाध्य हो, उतने दिनों का पाठ रखना चाहिये। इससे अधिक दिनों का पाठ तो कलियुग में साध्यों का साधन होता है॥ १-१२॥

तेन पारायणं साध्यं प्रोक्तं नारायणात्मना। नवाहो गर्जति कलौ चैकविंशाहिकस्तथा॥ १३॥
एकत्रिंशाहिको यज्ञो वन्ध्यादोषविनाशकः। गोव्रतं तु स्त्रिया कार्यं पारणं पुरुषेण च॥ १४॥
श्रावणारम्भणे राजन्यथावत्कथयामि ते। अवसायान्तपर्यन्तं कार्यं मासव्रतं शुभम्॥ १५॥
चतुर्थ्यां प्रातरुत्थाय स्त्रिया हृष्टेन चेतसा। गोव्रतं नियतं कार्यं निराहारं निरौदकम्॥ १६॥
सूर्यास्तकालपर्यन्तं यावद्गोरागमो भवेत्। आगतां च सवत्सां हि पूजयित्वा यथाविधि॥ १७॥
यवसं पुष्कलं दत्त्वा यवान्नं कुरुते स्वयम्। एवं मासे चतुर्थ्यां सा शुक्लायां व्रतमाचरेत्॥ १८॥
स्त्रीव्रतं कथितं राजन् पुरुषस्य तथैव च। एवं मासव्रतं कृत्वा सुपुत्रं लभते ध्रुवम्॥ १९॥

इस प्रकार से नारायण के द्वारा साध्य पाठ बताया गया है। कलियुग में नवाह्न तथा इक्कीस दिन का पाठ गर्जन करता है। इक्कीस दिन का पाठ यज्ञ वन्ध्या दोष-विनाशक है। स्त्री एवं पुरुष दोनों को गोव्रत का पालन करके पारण भी करना चाहिये। यह कार्य हे राजन्! हरिवंश-श्रवण के एक मास पूर्व ही आरम्भ करना चाहिये। यह एक मास की अवधि का होता है। शुक्ल चतुर्थी तिथि को प्रातःकाल उठकर स्त्री को प्रसन्न मन से निराहार तथा निर्जल रहकर गोव्रत करना चाहिये। प्रातः सूर्योदय से लेकर जब तक सूर्यास्त समय गायों का चरकर लौटना न हो तब तक व्रत रखे और उन लौटती हुई सवत्सा गायों का पूजन करे। गायों को पुष्कल मात्रा में गेहूँ या जौ का भूसा खिलाकर फिर स्वयं (रात में) यवान्न (जौ का दलिया) खाये। इस प्रकार एक शुक्ल चतुर्थी से दूसरी शुक्ल चतुर्थी तक गोव्रत करना चाहिये। इस प्रकार हे राजन्! यह व्रत स्त्री तथा पुरुष दोनों के लिये कहा गया है। एक मास तक यह व्रत करने से निश्चित ही पुत्र की प्राप्ति होती है॥ १३-१९॥

दरिद्रः क्षयरोगी च निर्भाग्यः पापकर्मवान्। अनपत्यो मोक्षकामः शृणुयात्स कथामिमाम्॥ २०॥
अपुष्पा काकवन्ध्या च वन्ध्या या च मृतार्भका। स्त्रवद्गर्भा च या नारी तया श्राव्या प्रयत्नतः॥ २१॥
सुपुत्रं लभते राजन् व्यासस्य वचनं यथा। सर्वान्कामानवाप्नोति कथां श्रुत्वा हरेरिमाम्॥ २२॥
समाप्तौ विधिवद्वस्त्रं क्षौमं दद्याच्च वाचके। हिरण्यमन्यद्द्रव्यं च दक्षिणां तत्र दापयेत्॥ २३॥
हरिवंशं लिखित्वा यो वाचकाय प्रदापयेत्। यत्फलं भूमिदानस्य तत्फलं लभते हि सः॥ २४॥
राजसूयेन तेनेष्टमश्वमेधेन वै नृप। दत्तानि सर्वदानानि हरिवंशे श्रुतेऽखिले॥ २५॥
राजसूयाश्वमेधाद्या यज्ञाश्चैव युगे युगे। श्रवणं हरिवंशस्य कलौ यज्ञफलप्रदम्॥ २६॥

जो दरिद्र हो, क्षयरोगी हो, भाग्यहीन हो अथवा पापकर्मा हो, इसी प्रकार निःसन्तान तथा मोक्षकामी व्यक्ति को भी यह कथा (हरिवंश) सुननी चाहिये। अपुष्पा, काकवन्ध्या, वन्ध्या, मृतवत्सा, स्त्रवद्गर्भा स्त्री को इसे प्रयत्नपूर्वक सुनना चाहिये। हे राजन्! ऐसा करने से सुपुत्र की प्राप्ति होती है, यह व्यास जी का कथन है। उसकी सभी कल्पनाएँ पूर्ण होती हैं, जो इस हरिकथा को सुनता है। कथा की समाप्ति पर विधिपूर्वक वक्ता को रेशमी वस्त्र, स्वर्णयुक्त द्रव्य तथा दक्षिणा देनी चाहिये। जो हरिवंश को लिखकर (अथवा छपे हुए ग्रन्थ को) वाचक को देता है तो जो फल भूमिदान का होता है, वह फल उसे प्राप्त होता है। हे राजन्! जो फल राजसूय यज्ञ से होता है अथवा जो फल अश्वमेध यज्ञ करने से मिलता है, उससे भी अधिक सर्वदान देने का फल हरिवंश के श्रवण से मिलता है। राजसूय तथा अश्वमेधादि यज्ञ तो युग-युग में होते हैं; परन्तु कलियुग में तो हरिवंश का श्रवण ही यज्ञ का फल देता है॥ २०-२६॥

हवनं च तथा राजन्कर्तव्यं कर्मशान्तये। प्रतिश्लोकं च जुहुयाद्दशांशेनैव वा पुनः॥ २७॥
पायसं मधुसर्पिश्च तिलान्नादिकसंयुतम्। अथवा हवनं कुर्याद्गायत्र्या सुसमाहितः॥ २८॥

होमाशक्तौ बुधो हेमं दद्यात्तत्फलसिद्धये। नानाच्छिद्रनिरोधार्थं न्यूनताधिकताख्ययोः॥ २९॥
दोषयोः प्रशमार्थं च पठेन्नामसहस्रकम्। तेन स्यात्सफलं सर्वं नास्त्यस्मादधिकं यतः॥ ३०॥
भोजयेन्मिथुनान्येव चतुर्विंशतिरादरात्। अनेन विधिना राजन् यः पुराणं समापयेत्॥ ३१॥
तस्य स्त्री लभते गर्भं मासैकेन च भारत। तत्कृत्वा लभते नारी पुत्रं भास्करतेजसम्॥ ३२॥
तथा वन्ध्या लभेद्गर्भं व्यासस्य वचनं यथा॥ ३३॥

इति पद्मपुराणे सन्तानोत्पादकश्रीहरिवंशश्रवणविधानं समाप्तम्।

हे राजन्! कथावाचन पूर्ण होने पर कर्म की शान्ति के लिये या तो उसके प्रतिश्लोक से हवन करे अथवा उनका दशांश हवन गायत्री मन्त्र के द्वारा पायस-मधु-घृत तथा तिलान्नादि मिश्रित कर समाहित मन से करना चाहिये। यदि होम करने की सामर्थ्य न हो तो यजमान को स्वर्णदान करना चाहिये। इससे जो कमियाँ कर्म में रह जाती हैं, वे पूरी हो जाती हैं। और भी दोषों की शान्ति के लिये विष्णुसहस्रनाम का पाठ करना चाहिये। इससे सभी कर्म सफल हो जाता है। इससे अधिक कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। चौबीस ब्राह्मणदम्पतियों को आदरपूर्वक भोजन कराना चाहिये। इस विधि से हे राजन्! जो इस पुराण कथा के श्रवण का समापन करता है, उसकी स्त्री एक मास में ही गर्भवती हो जाती है। ऐसा करके वन्ध्या स्त्री भी गर्भ धारण करती है॥ २७-३३॥

पुत्रोत्पादकविधानान्तराणि

शिवमन्त्रानुष्ठानप्रकरणोक्तां पार्थिवशिवपूजां प्रत्यहं कृत्वा अभिलाषाष्टकजपं संवत्सरं कुर्यात्। अभिलाषाष्टकम्—

विश्वानर उवाच—

एकं ब्रह्मैवाद्वितीयं समस्तं सत्यं सत्यं नेह नानास्ति किञ्चित्।
एको रुद्रो न द्वितीयोऽवतस्थे तस्मादेकं त्वां प्रपद्ये महेशम्॥ १॥
एकः कर्ता त्वं हि विश्वस्य शम्भो नानारूपेष्वेकरूपोऽस्य रूपः।
यद्वत्तपत्यर्क एकोऽपत्यनेकस्तस्मान्नान्यं त्वां दिनेशं प्रपद्ये॥ २॥
रज्जौ सर्पः शुक्तिकायां च रौप्यं नैरे पूरस्तन्मृगाख्ये मरीचौ।
यद्वत्तद्वद्विष्वगेष प्रपञ्चो यस्मिन् ज्ञाते तं प्रपद्ये महेशम्॥ ३॥
तोये शैत्यं दारकत्वं च वह्नौ तापो भानौ शीतभानौ प्रसादः।
पुष्पे गन्धो दुग्धमध्ये च सर्पिर्यत्तच्छंभो त्वं ततस्त्वां प्रपद्ये॥ ४॥
शब्दं गृह्णास्यश्रवास्त्वं हि जिघ्रस्यप्राणस्त्वं व्यंघ्रिरायासि दूरात्।
व्यक्षः पश्येस्त्वं रसज्ञोऽप्यजिह्वः कस्त्वां सम्यग्वेत्यतस्त्वां प्रपद्ये॥ ५॥
नो वेदस्त्वामीश साक्षाद्धि वेद नो वा विष्णुर्नो विधाताखिलस्य।
नो योगीन्द्रा नेन्द्रमुख्याश्च देवा भक्तो वेद त्वामतस्त्वां प्रपद्ये॥ ६॥
नो ते गोत्रं नापि जन्मापि नाख्या नो वा रूपं नैव शीलं न देशः।
इत्थम्भूतोऽपीश्वरस्त्वं त्रिलोक्याः सर्वान्कामान्पूरयेस्तद्भजे त्वाम्॥ ७॥
त्वत्तः सर्वं त्वं हि सर्वं स्मरारे त्वं गौरीशस्त्वं च नग्नोऽतिशान्तः।
त्वं वै वृद्धस्त्वं युवा त्वं च बालस्तत्किं यत्त्वं नास्यतस्त्वां नतोऽस्मि॥ ८॥
स्तुत्वेति भूमौ निपपात विप्रः स दण्डवद्यावदतीव हृष्टः।
तावत्स बालोऽखिलवृद्धवृद्धः प्रोवाच भूदेव वरं वृणीहि॥ ९॥

पुत्रोत्पादक अन्य उपाय—पूर्व में शिवमन्त्रों के अनुष्ठान में कथित पार्थिव शिवपूजन प्रतिदिन करके अभिलाषाष्टक जप (पाठ) एक वर्ष तक निरन्तर करे (इससे पुत्र की प्राप्ति होती है)।

अभिलाषाष्टक स्तोत्र—श्री विश्वानर बोले—इस जगत् में एकमात्र ब्रह्म है, जो अद्वितीय है। यह बात सत्य है, सत्य है। यहाँ ब्रह्म से भिन्न कुछ भी नहीं है। एक ही रुद्र वह ब्रह्म है दूसरा अन्य कोई नहीं है; अतः हे रुद्र! मैं आपकी शरण में आ गया हूँ। हे शम्भो! आप ही इस जगत् के एकमात्र कर्ता हैं, आप नाना रूपों में होकर भी एक ही रूप हो, जैसे कि एक ही सूर्य तपता है; परन्तु वह एक होकर भी (प्रतिबिम्बरूप में) अनेक रूपों में भासता है। अतः आपके अतिरिक्त अन्य कोई सूर्य नहीं है। मैं आपकी शरण में हूँ। जिस प्रकार रज्जु में सर्प, सीप में चाँदी, मरुभूमि की रेत में मृग के लिये मरीचिका में जल का आभास होता है तथैव यह विश्व आपका ही प्रपञ्च है। यह जिनमें स्थित है, उन महेश की शरण में हूँ। जिस प्रकार जल में शीतलता, अग्नि में दाहकत्व, सूर्य में ताप, चन्द्रमा में प्रसन्नता, पुष्प में गन्ध, दूध में घी है; उसी प्रकार से हे शम्भो! आप (इस जगत् में व्याप्त) हैं। अतः मैं आपकी शरण में जाता हूँ। हे शम्भो! आप ही कानों से शब्द सुनते हैं, नाक से सूँघते हैं। आप बिना चरणों के दूर से चले आते हैं, आप बिना नेत्रों के देखते हैं, बिना जीभ के स्वाद लेते हैं, कौन ऐसा है जो आपको सम्यक् रूप से समझ (जान) सकता है, अतः मैं आपकी शरण में हूँ। हे ईश! आप ही साक्षात् वेद हैं, अन्य कोई वेद, ब्रह्मा, विष्णु, योगीन्द्र इन्द्रादि देवता आपको जान सकता है केवल भक्त ही आपको नहीं जान सकता है; अतः मैं आपकी शरण में हूँ। आपका कोई गोत्र नहीं है, न आपका कोई जन्म है, न रूप है, न नाम है, न शील है और न स्थान है। इतने पर भी आप त्रिकोल के स्वामी हैं, अतः सब कामनाओं की पूर्ति के लिये आपको भजता हूँ। हे स्मरारे! आपसे ही सब है, आप ही सर्व हैं, आप ही गौरीश, नग्न तथा अतिशान्त हैं। आप ही वृद्ध, आप ही युवा तथा आप ही बालक हैं; तब वह क्या वस्तु है जो आप नहीं हैं, अतः आपको नमस्कार करता हूँ। इस प्रकार उस ब्राह्मण ने स्तुति करके अत्यन्त प्रसन्न होकर दण्डवत् प्रणाम किया तब वह (शिवरूपी) बालक, जो सभी वृद्धों से भी वृद्ध था, इस प्रकार बोला—हे भूदेव! वर माँगो॥ १-९॥

तत उत्थाय हृष्टात्मा मुनिर्विश्वानरः कृती। प्रत्यब्रवीत्किमज्ञातं सर्वज्ञस्य तव प्रभो॥ १०॥
सर्वान्तरात्मा भगवान् शर्वः सर्वप्रदो भवान्। याञ्चा प्रतिनियुङ्क्ते मामयशोदैन्यकारिणी॥ ११॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य देवो विश्वानरस्य ह। शुचे शुचिव्रतस्याथ शुचिः स्मित्वाब्रवीच्छिवः॥ १२॥

तब वह पुण्यशाली विश्वानर ब्राह्मण प्रसन्न होकर उठकर बोला—'हे प्रभो! आप सर्वज्ञ हैं, मैं आपको क्या बतलाऊँ?' आप भगवान् शर्व सब कुछ देने वाले हैं, मैं आपसे कुछ माँगू, यह मेरी मूर्खता ही होगी। तब उन देव ने उस विश्वानर नामक पवित्र पवित्रव्रती ब्राह्मण की वाणी सुनकर इस प्रकार कहा॥ १०-१२॥

बाल उवाच—

त्वया शुचे शुचिष्मत्यां योऽभिलाषः कृतो हृदि। अचिरेणैव कालेन स भविष्यत्यसंशयः॥ १३॥
तव पुत्रत्वमेष्यामि शुचिष्मत्यां महामते। ख्यातो गृहपतिर्नाम्ना शुचिः सर्वामरप्रियः॥ १४॥
अभिलाषाष्टकं पुण्यं स्तोत्रमेतत्त्वयेरितम्। अब्दं त्रिकालपठनात्कामदं शिवसन्निधौ॥ १५॥
एतत्स्तोत्रस्य पाठं तु पुत्रपौत्रधनप्रदम्। सर्वशान्तिकरं वापि सर्वापत्त्यरिनाशनम्॥ १६॥

बालक बोला—'हे शुचे! तुमने अपनी शुचिष्मती पत्नी में जो अभिलाषा हृदय में की है, शीघ्र ही वह पूरी होगी। इसमें सन्देह नहीं है। हे महामते! मैं तुम्हारी शुचिमती में पुत्र बनकर उत्पन्न होऊँगा; तब मैं गृहपति नाम से सब देवताओं का प्रिय बनूँगा। तुमने यह जो अभिलाषाष्टक नामक पुण्यस्तोत्र कहा है। यह एक वर्ष तक तीनों सन्ध्याओं (प्रातः, मध्याह्न, सायं) शिव के समीप पढ़ने से पुत्र, पौत्र तथा धन देने वाला है। यह सभी प्रकार की शान्ति करने वाला तथा सभी आपत्तियों को नष्ट करने वाला है॥ १३-१६॥

स्वर्गापवर्गसम्पत्तिकारकं नात्र संशयः। प्रातरुत्थाय सुस्नातो लिङ्गमभ्यर्च्य शाम्भवम्॥ १७॥
वर्षं जपन्निदं स्तोत्रमपुत्रः पुत्रवान्भवेत्। वैशाखे कार्त्तिके माघे विशेषनियमैर्युतः॥ १८॥
यः पठेत्स्नानसमये लभते सकलं फलम्। कार्तिकस्य तु मासस्य प्रसादादहमव्ययः॥ १९॥
तव पुत्रत्वमेष्यामि यस्त्वन्यस्तत्पठिष्यति। अभिलाषाष्टकमिदं न देयं यस्य कस्यचित्॥ २०॥
गोपनीयं प्रयत्नेन एवं वन्ध्याप्रसूतिकृत्। स्त्रिया वा पुरुषेणापि नियमाल्लिङ्गसन्निधौ॥ २१॥
अब्दं जप्तमिदं स्तोत्रं पुत्रदं नात्र संशयः। इत्युक्त्वान्तर्दधे बालः सोऽपि विप्रो गृहं गतः॥ २२॥

इति स्कन्दपुराणे काशीखण्डे अभिलाषाष्टकाख्यं विश्वेश्वरस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

इस स्तोत्र का पाठ स्वर्ग, अपवर्ग (मोक्ष) तथा सम्पत्तिकारक है, इसमें सन्देह नहीं है। जो प्रातःकाल ठीक प्रकार से स्नान करके, शिवलिङ्ग का पूजन करके एक वर्ष तक नित्य इस स्तोत्र को जपता है, वह पुत्रवान् होता है। वैशाख मास, कार्तिक मास तथा माघ मास में विशेष नियमों से युक्त होकर जो स्नान-समय में इसे पढ़ता है, उसे सम्पूर्ण फल की प्राप्ति होती है। कार्तिक मास में इसके पढ़ने से प्रसन्न होकर मैं तुम्हारे पुत्र के रूप में आऊँगा। जो अन्य भी इसे पढ़ेगा (उसकी भी इच्छा पूर्ण होगी)। इस अभिलाषाष्टक को जिस किसी को (ऐरे-गैरे को) नहीं बताना चाहिये। वन्ध्या के प्रसव की भाँति इसे गोपनीय रखना चाहिये। इसे नियमपूर्वक स्त्री तथा पुरुष को शिवलिङ्ग के समक्ष एक वर्ष तक जपना चाहिये, तो यह निःसन्देह पुत्रप्रद होता है। ऐसा कहकर वह बालक अन्तर्धान हो गया तथा ब्राह्मण अपने घर चला गया॥ १७-२२॥

अथवा—यथाशक्तिद्रव्येण विप्रस्य विवाहः कार्यस्तेनापि पुत्रो भविता। अथवा रेवातापीयात्रा कर्तव्या तत्र दम्पती एकेनैव वस्त्रेण स्नाताम्। अथवा अष्टोत्तरशतान् विप्रान् पायसान्नादिना भोजयेत्। अथवा—'ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्' इति मन्त्रेण सहस्रमयुतं लक्षं वा जपं कृत्वा तद्दशांशेन तिलपायसान्नैर्होमं कुर्यात्। अथवा—लक्षङ्ख्याकैः कमलैः शिवपञ्चाक्षरेण शिवपूजा कार्या। अथवा—दानकल्पोक्तविधिना स्वर्णधेनुः सवत्सा सुरभिर्वा दातव्या। अथवा—घृतपूर्णं ताम्रकलशं दद्यात्। अथवा—सुवर्णमयं बालकं कृत्वा दोलायां संस्थाप्य यथाविधि दानं कार्यम्। अथवा—वृषभदानमेकादशधेनुदानं च कार्यम्। अथवा—रुद्रानुष्ठानप्रकरणोक्तं महारुद्रजपं कुर्यात्। अथवा—देवीमन्त्रानुष्ठानप्रकरणोक्तं पूर्ववत् शतचण्डीविधानं च कार्यम्। अथवा—गयायात्रा कार्या। अथवा—सूर्याराधनं कुर्यात्। एषामन्यतमेनापि फलाऽप्राप्तौ विष्णुयागं कुर्यात्।

अथवा (द्वितीय उपाय के रूप में) एक सौ आठ ब्राह्मणों को पायसान्नादि (खीर-मालपूआ) का भोजन कराये। अथवा (तीसरे उपाय के रूप में) 'ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम्' इस वैदिक मन्त्र का एक सहस्र अथवा दश सहस्र अथवा लक्ष संख्या में जप करने के उपरान्त जितना मन्त्रजप किया हो, उसका दशांश होम तिल तथा पायसान्न से करना चाहिये। अथवा (चौथे उपाय के रूप में) एक लाख कमलपुष्पों के द्वारा शिव पञ्चाक्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) से शिव की पूजा करे। अथवा (पाँचवें उपाय के रूप में) सुवर्णमय बालक बनवाकर पालने में बिठाकर यथाविधि (ब्राह्मण को) दान करना चाहिये। अथवा (छठा उपाय) दानकल्प ग्रन्थ में बताई गई विधि से स्वर्णनिर्मित सवत्सा धेनु अथवा सवत्सा सुरभि (दुधारू गाय) का दान करना चाहिये। अथवा (सातवाँ उपाय) वृषभदान अथवा (आठवाँ उपाय) एकादश धेनुदान करना चाहिये। अथवा रुद्रानुष्ठान प्रकरण में कथित महारुद्र का जप (नवाँ उपाय) करना चाहिये। अथवा (दसवाँ उपाय) देवीमन्त्रानुष्ठान प्रकरण में वर्णित पूर्ववत् शतचण्डी का अनुष्ठान कराना चाहिये। अथवा (ग्यारहवाँ उपाय) घृतपूर्ण ताम्रकलश दान करना चाहिये। अथवा (बारहवाँ उपाय) गया-यात्रा करनी चाहिये। अथवा (तेरहवाँ उपाय) सूर्याराधन करना चाहिये। अथवा (चौदहवाँ उपाय) जब इन उपायों से फल प्राप्त न हो, तब विष्णुयाग करना चाहिये।

पुत्रार्थं पुरुषसूक्तविधानम्

बृहत्पाराशरे—

अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि विधिं पावनमुत्तमम्। अस्मत्तातप्रभावोऽयं रघुपौत्रस्य धीमतः॥ १॥
अनपत्यस्य पुत्रार्थं चक्रे वैभाण्डकस्तु यम्। सहस्रशीर्षसूक्तस्य विधानं चरुपाककृत्॥ २॥
यैर्यैर्नृपैः कृतः पूर्वमन्यैरपि द्विजोत्तमैः। सिध्यन्ति सर्वमन्त्राणि विधिविद्भिर्द्विजोत्तमैः॥ ३॥
उपासितानि सद्भक्त्या श्रोत्रियैः श्रुतिपारगैः। आत्मविद्भिर्निराहारैर्व्रतिभिर्मन्त्रवित्तमैः॥ ४॥
क्रियमाणाः क्रियाः सर्वाः सिध्यन्ति व्रतचारिभिः। न पाठान्न धनात्स्नानान्नात्मनः प्रतिपादनात्॥ ५॥
प्राक्तनात्कर्मणः पुंसां सर्वाः सिध्यन्ति सिद्धयः। शुक्लपक्षे शुभे वारे शुभनक्षत्रगोचरे॥ ६॥
द्वादश्यां पुत्रकामाय चरुं कुर्वीत वैष्णवम्। दम्पत्योरुपवासः स्यादेकादश्यां सुरालये॥ ७॥
ऋग्भिः षोडशभिः सम्यगर्च्चयित्वा जनार्दनम्। चरुं पुरुषसूक्तेन श्रपयेत्पुत्रकाम्यया।
प्राप्नुयाद्वैष्णवं पुत्रं चिरायुः सन्ततिक्षमम्॥ ८॥

बृहत्पाराशर के अनुसार पुरुषसूक्त-विधान—अब मैं एक उत्तम पवित्र विधि कहता हूँ, जिसके प्रभाव से रघु के बुद्धिमान् पौत्र, जो कि अनपत्य थे, उन वैभाण्डक यम ने पुत्रहेतु सहस्रशीर्षादि पुरुषसूक्त के विधान से चरुपाक किया था। पूर्वकाल में इसे जिन-जिन राजाओं ने तथा विधिज्ञ द्विजोत्तमों ने किया था, निराहार रहकर मन्त्रवेत्ता श्रोत्रियों ने भी भक्तिपूर्वक उपासना की थी। इसके करने से व्रतचारियों की सम्पूर्ण क्रियायें सफल हो जाती हैं, जो कि पाठ, जप, धन, स्नान आदि से भी सिद्ध नहीं होती है। शुक्ल पक्ष में शुभ वार में शुभ गोचर में द्वादशी तिथि के दिन पुत्रकामना की इच्छा से चरुपाक करना चाहिये। दम्पति को देवालय में एकादशी के दिन उपवास करना चाहिये। सोलह ऋचाओं के द्वारा जनार्दन को सम्यक् रीति से पूजन करना चाहिये॥ १-८॥

द्वादश्यां द्वादशचरून्विधिवन्निर्वपेद्द्विजः। यः करोति महायागं विष्णुलोकं स गच्छति॥ ९॥
हुत्वाज्यं विधिवत्पूर्वमृग्भिः षोडशभिस्तथा। समिधोऽश्वत्थवृक्षस्य हुत्वाज्यं जुहुयात्पुनः॥ १०॥
उपस्थानं ततः कुर्याद्ध्यात्वा तु मधुसूदनम्। हविर्होमं ततः कृत्वा दद्यात्पञ्च घृताहुतीः॥ ११॥
कामप्रदं नमस्कृत्य नारी नारायणं प्रति। सम्प्राप्य च हविःशेषं वसेल्लघ्वशनी गृहे॥ १२॥
विधिमेतं ततः कृत्वा कर्त्तव्यं द्विजतर्पणम्। अन्यस्त्रीषु निवर्तेत यावद्गर्भं न विन्दति॥ १३॥
अप्रसूता मृतापत्या या च कन्याप्रसूर्भवेत्। क्षिप्रं सा जनयेत्पुत्रं पाराशरवचो यथा॥ १४॥
होमान्ते दक्षिणां दद्याद्धेम वासस्तिलान्वसु। भूमिं हिरण्यं रत्नानि यथासम्भवमेव च॥ १५॥
यः सिद्धमन्त्रः सततं द्विजेन्द्रः सम्पूज्य विष्णुं विधिवत्सुतार्थी।
इदं विधानं विदधाति सम्यक्स पुत्रमाप्नोति हरिप्रसादात्॥ १६॥

इति बृहत्पाराशरीये पुत्रार्थं पुरुषसूक्तविधानम्।

द्वादशी के दिन द्वादश चरुओं का निवेदन (अर्पण) करना चाहिये। इस महायज्ञ को जो द्विज करता है, वह विष्णु-लोक को जाता है। विधिपूर्वक घृत का हवन सोलह ऋचाओं द्वारा पीपल वृक्ष की समिधाओं से पुनः-पुनः करना चाहिये। फिर खड़े होकर मधुसूदन का ध्यान करके उनकी प्रार्थना करनी चाहिये। फिर हविर्होम करने के पश्चात् पाँच घृताहुति देनी चाहिये। मनोकामना पूर्ण करने वाले नारायण के प्रति स्त्री को नमस्कार करके हविशेष को प्राप्त करके (बची हुई खीर को खाकर) लघुभोजन करते हुए स्वगृह में निवास करना चाहिये। इस विधि को कर लेने के पश्चात् भोजन से द्विजों को तृप्त करना चाहिये। पति को चाहिये कि जब तक अपनी पत्नी में गर्भ

स्थापित न हो जाय, तब तक अन्य स्त्रियों से दूर रहे। पाराशर का वचन है कि इस अनुष्ठान को करने से जो स्त्री अप्रसूता, मृतवत्सा तथा कन्याप्रसूत होती है, वह शीघ्र ही पुत्र को उत्पन्न करती है। होम के अन्त में ब्राह्मणों को स्वर्ण, वस्त्र, तिल, द्रव्य, भूमि, रत्नादि यथासम्भव दान करना चाहिये। जो पुत्रार्थी विधिपूर्वक विष्णु का पूजन कर इस विधान को सम्पन्न करता है, वह हरिकृपा से पुत्र को प्राप्त करता है॥ ९-१६॥

विष्णुयागप्रयोगः

विष्णुयागं चिकीर्षुः पूर्वोक्तविधिना चान्द्रायणधेनुदानादिद्वारा प्रायश्चित्तं सम्पाद्य कृतपापक्षयो मलमासशुक्रास्तादि-वर्जिते कार्त्तिकमार्गशिरमाघान्यतमे मासि पूर्वोक्तमण्डपादिसम्भारान् विधाय शुक्लैकादश्यां प्रातर्नद्यादौ स्नात्वा सन्ध्यादि नित्यकर्म्म कृत्वा चन्द्रतारादिबलान्विते सुमुहूर्त्ते सपत्नीकः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्म्मा मम अनपत्यत्वमृतापत्यत्वदोषनिदानदुरितक्षयद्वारा तथा अस्याश्च भार्य्याश्चतुर्विध-वन्ध्यात्वनिदानदुरितविनाशार्थं बहुदीर्घायुःसुपुत्रप्राप्तिकामनया श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमनया भार्य्यया सह पुरुषसूक्तेन जपपूजाहोमात्मकं स्वयं ब्राह्मणद्वारा वा विष्णुयागं करिष्ये, तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतासिद्धये श्रीगणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणेशपूजनादि नान्दीश्राद्धान्तं सर्व्वं पूर्ववत्कुर्य्यात्। ततः श्रोत्रियं ब्राह्मणमाचार्यत्वेन वृत्वा पुष्पमण्डपे वक्ष्यमाणविधिना न्यासादिपूर्विकां स्तोत्रान्तां च यथाविधि विष्णुपूजां कुर्यात्। तद्यथा—

आत्मनो बहुसद्वृत्तदीर्घायुःपुत्रलब्धये। गर्भदोषापहतये विष्णुयागं समारभे॥

इति पठित्वा व्रतं प्रगृह्य (तद्दिने सुरालये दम्पत्योरुपवासः) देशकालौ स्मृत्वा 'मम सभार्य्यस्य जन्मान्तरार्जित-पापजन्याऽनपत्यत्वदोषविनाशार्थं सत्पुत्रप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं च पुरुषसूक्तेन विष्ण्वाराधनम् (होमं) जपं च करिष्ये, तदङ्गत्वेन न्यासध्यानादि कर्म्म करिष्ये' इति सङ्कल्प्यं कुर्यात्। ॐ सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायणऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। पुरुषो नारायणो देवता। न्यासे पूजायां होमे च विनियोगः। ॐ नारायणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छंदसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ पुरुषपरमात्मदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ सहस्रशीर्षा० इति वामकरे॥१॥ ॐ पुरुषऽएवेद ॐ सर्वमिति दक्षिणकरे॥२॥ ॐ एतावानस्यमहिमेति वामपादे॥३॥ ॐ त्रिपादूर्ध्वमिति दक्षिणपादे॥४॥ ॐ ततोविराडिति वामजानुनि॥५॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत इति दक्षिणजानुनि॥६॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋच इति वामकटौ॥७॥ ॐ तस्मादश्वा इति दक्षिणकटौ॥८॥ ॐ तं यज्ञमिति नाभौ॥९॥ ॐ यत्पुरुषं व्यदधुरिति हृदये॥१०॥ ॐ ब्राह्मणोस्य मुखमिति कण्ठे॥११॥ ॐ चन्द्रमामनस इति वामबाहौ॥१२॥ ॐ नाभ्याऽआसीदिति दक्षिणबाहौ॥१३॥ ॐ यत्पुरुषेणेति मुखे॥१४॥ ॐ सप्तास्यासन्निति अक्ष्णोः॥१५॥ ॐ यज्ञेनयज्ञमिति मूर्ध्नि॥६॥

अथ पञ्चाङ्गन्यासः—ॐ अद्भ्यःसम्भृतमिति हृदये॥१॥ ॐ वेदाहमेतमिति शिरसि॥२॥ ॐ प्रजापतिश्च इति शिखायाम्॥३॥ ॐ योदेवेभ्यऽआतपतीति कवचाय हुं॥४॥ ॐ रुचं ब्राह्ममिति अस्त्राय फट्॥५॥

अथवा—ॐ ब्राह्मणोस्य० हृदयाय नमः॥१॥ ॐ चन्द्रमामनस० शिरसे स्वाहा॥२॥ ॐ नाभ्या आसीत्० शिखायै वषट्॥३॥ ॐ सप्तास्यासन्० कवचाय हुम्॥४॥ ॐ यज्ञेन यज्ञ० अस्त्राय फट्॥५॥ इति पञ्चाङ्गन्यासः। एवं न्यासं मूर्तौ स्वात्मनि च कृत्वा ध्यायेत्।

विष्णुयाग-प्रयोग—विष्णुयाग करने का इच्छुक व्यक्ति पूर्वोक्त विधि से चान्द्रायण व्रत, गोदान आदि के द्वारा प्रायश्चित्त करे। इस प्रकार पापक्षय हो जाने पर मलमास तथा शुक्रास्त-गुर्वस्त के समय को छोड़कर कार्तिक या मार्गशीर्ष या माघ मास में से किसी मास में पूर्वकथित मण्डपादि-निर्माण की सामग्री सञ्चित कर शुक्ल पक्ष की एकादशी में प्रातःकाल नदी आदि में स्नान करके सन्ध्यादि नित्यकर्म करके चन्द्र-तारादि बल से युक्त शुभ मुहूर्त

में सपत्नीक आसन पर पूर्वमुख बैठकर आचमन तथा प्राणायाम कर देशकाल का उच्चारण कर 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा (वर्मा वा) मम अनपत्यत्वमृतापत्यत्वदोषनिदानदुरितक्षयद्वारा तथा अस्याश्च भार्याया-श्चतुर्विधवन्ध्यात्वनिदानदुरितविनाशार्थं बहुदीर्घायुः सुपुत्रप्राप्तिकामनया श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमनया भार्यया सह पुरुषसूक्तेन जपपूजाहोमात्मकं स्वयं वा ब्राह्मणद्वारा विष्णुयागं करिष्ये, तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतासिध्यर्थं श्रीगणपतिपूजनं, पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धञ्च करिष्ये' इस प्रकार का सङ्कल्प करके गणेशपूजन से लेकर नान्दीश्राद्ध-पर्यन्त सर्वकर्म पूर्व की भाँति करे। फिर वेदपाठी ब्राह्मण को आचार्य के रूप में वरण करके पुष्पमण्डप में वक्ष्यमाण विधि से न्यासादि-पूर्वक स्तोत्रपाठ कर यथाविधि विष्णुपूजा करे।

व्रत का प्रग्रहण—'आत्मनो बहुसद्वृत्तदीर्घायुः पुत्रलब्धये। गर्भदोषापहतये विष्णुयागं समारम्भे' यह पढ़कर व्रत को ग्रहण करना चाहिये। (व्रतग्रहण के दिन देवालय में रहकर दम्पति को उपवास करना चाहिये)। फिर देश-काल का स्मरण करके 'मम सभार्यस्य जन्मान्तरार्जितपापजन्याऽनपत्यत्वदोषविनाशार्थं सत्पुत्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थञ्च पुरुषसूक्तेन विष्ण्वाराधनं होमं जपञ्च करिष्ये, तदङ्गत्वेन न्यासध्यानादिकर्म करिष्ये' इस प्रकार का सङ्कल्प करे। फिर 'ॐ सहस्र-शीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायण ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। पुरुषो नारायणो देवता। न्यासे पूजायां होमे च विनियोगः' ऐसा कहकर विनियोग करे।

तदनन्तर मूलोक्त 'ॐ नारायण ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'सहस्रशीर्षा०' से लेकर सोलह मन्त्रों का क्रमशः मूलानुसार निर्दिष्ट शरीर के सोलह अङ्गों में न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ अद्‌भ्यः सम्भृतः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से नेत्रवर्जित हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास करे। अथवा—मूलोक्त 'ब्राह्मणोऽस्य०' इत्यादि पाँच अन्य मन्त्रों से हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास करना चाहिये। इस प्रकार न्यास करके मूर्ति को अपने हृदय में धारण कर ध्यान करे।

नमस्कृत्य महाविष्णुं संस्मरेत्क्षीरसागरम्। क्षीरसागरमध्यस्थं श्वेतद्वीपं विचिन्तयेत्॥
कोटियोजनविस्तीर्णं भानुकोटिसमप्रभम्। तन्मध्यं तु महादिव्यं प्रासादं रत्ननिर्मितम्॥
प्रासादमध्ये चन्द्राभं सिंहासनमनुत्तमम्। तस्योपरि महानागं शेषाख्यं मणिमण्डितम्॥
तदासने महाविष्णुं तत्फणाव्याप्तमस्तकम्। वेदसूक्तैः स्तूयमानं नानारत्नविभूषितम्॥
घननीलतनुं देवमप्सरोगणसेवितम्। तृणादिब्रह्मपर्यन्तं विश्वगं विश्वसाक्षिणम्॥
चराचरगुरुं देवं घनश्यामं चतुर्भुजम्। ब्रह्माद्यैरर्चितं विष्वक् सर्वाभरणभूषितम्॥
एवं ध्यायेन्महाविष्णुं गदाब्जासिसुशङ्खकम्। वामभागे स्थितां देवीं नीलकुञ्चितमूर्द्धजाम्॥
हेमारविन्दप्रतिमां मौक्तिकाभरणोज्ज्वलाम्। दाडिमं सव्यहस्ते तु दक्षिणालिङ्ग्य सन्ततिम्॥
श्रीविष्णवभिमुखां ध्यायेद्भक्ताभीष्टफलप्रदाम्॥

ध्यान 'नमस्कृत्य महाविष्णुं०' इत्यादि ९ श्लोकों के द्वारा करना चाहिये। इन श्लोकों का भावार्थ इस प्रकार है—महाविष्णु को नमस्कार करके क्षीरसागर का स्मरण करे। क्षीरसागर के मध्य में श्वेत द्वीप का चिन्तन करे। वह द्वीप कोटि योजन विस्तीर्ण तथा करोड़ों सूर्यों के समान प्रभा वाला है, जिसके मध्य में रत्नों से निर्मित एक महादिव्य प्रासाद है। उस प्रसाद के मध्य में चन्द्रमा के समान आभा वाला उत्तम सिंहासन रखा है। उस पर एक शेष नामक महानाग मणियों से मण्डित विराजमान है। उस आसन पर महाविष्णु नाग के फण व्याप्त मस्तक के नीचे वेदसूक्तों से स्तूयमान तथा नाना रत्नों से विभूषित होकर बैठे हैं। उनका मेघ के समान नीला शरीर है। अप्सराएँ उनकी सेवा कर रही हैं। वे तृण से लेकर ब्रह्माजी तक सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हैं तथा विश्व के साक्षी हैं। चराचर के गुरु चतुर्भुज घनश्याम देव ब्रह्मादि के द्वारा पूजित तथा सभी आभूषणों से सुसज्जित हैं। इस प्रकार के महाविष्णु, जो

कि गदा, पद्म, असि तथा शङ्ख धारण किये हैं, के वामभाग में देवी बैठी हैं, जिनके नीलकुञ्चित केश हैं। वे सुनहरे कमल की प्रतिमा की भाँति तथा मोतियों के आभूषणों से उज्ज्वल हो रही हैं। उनके वामहस्त में दाडिम है तथा दक्षिण हस्त से सन्तति का आलिङ्गन कर रही हैं।

इति ध्यानं कृत्वा स्ववामे कलशं पुरतः शङ्खं घण्टां च सम्पूज्य शालिग्रामप्रतिमादौ देवं ध्यायन् पूजयेत्। ॐ सुहस्त्रशीर्षा० इत्यावाहनम्॥१॥ पुरुषऽएवेदर्ठ० इत्यासनम्॥ २॥ ॐ एतावानस्य० इति पाद्यम्॥३॥ ॐ त्रिपादूर्ध्व० इत्यर्घ्यम्॥४॥ ॐ ततोविराडजायत० इत्याचमनम्॥५॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्स० इति स्नानम्॥६॥ (स्नानान्ते पुनराचमनम्) तत्तन्मन्त्रैः पञ्चामृतस्नानं कार्य्यं ततः (पुरुषसूक्तेनाऽभिषेकः कार्यः) ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत० इति वस्त्रम्॥७॥ (वस्त्रान्ते आचमनम्) ॐ तस्मादश्वा० इति यज्ञोपवीतम्॥८॥ (आचमनम्) ॐ तं यज्ञंव्बर्हि० इति गन्धम्॥९॥ ॐ यत्पुरुषं० इति पुष्पम्॥१०॥ ॐ ब्राह्मणोस्य० इति धूपम्॥११॥ ॐ चन्द्रमामनसो इति दीपम्॥१२॥ ॐ नाभ्याऽआसीत्० इति नैवेद्यम्॥१३॥ (आचमनम्) ॐ यत्पुरुषेण० इति नमस्कारम्॥१४॥ ॐ सप्तास्या० इति प्रदक्षिणाम्॥१५॥ ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त० इति पुष्पाञ्जलिम्॥१६॥

दद्यात्पुरुषसूक्तेन यः पुष्पाण्यप एव वा। अर्चितं तेन वै सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम्॥

इस प्रकार ध्यान करके फिर अपने वाम भाग में स्थित कलश तथा सामने रखे शङ्ख-घण्टादि का पूजन करके शालिग्राम प्रतिमादि पर देव का ध्यान करके उनका पुरुषसूक्त की सोलह ऋचाओं द्वारा मूल में निर्दिष्ट विधि के अनुसार षोडशोपचार पूजन करना चाहिये। पुरुषसूक्त से जिसने केवल पुष्पादि से ही विष्णु का पूजन कर दिया तो उसके द्वारा तीनों लोकों का पूजन हो जाता है।

द्वादशमासेषु शुक्लैकादश्यां पूजायां विष्णुनामानि

एवं द्वादशमासेषु शुक्लैकादश्यां तत्तद्विष्णुनाम्ना पूजां कुर्य्यात्। प्रतिमासं विष्णुनामानि ऋग्विधाने—

केशवं मार्गशीर्षे तु पौषे नारायणं विदुः। माधवं माघमासे च गोविन्दं फाल्गुने तथा॥
चैत्रे चैव तथा विष्णुं वैशाखे मधुसूदनम्। ज्येष्ठे त्रिविक्रमं विद्यादाषाढे वामनं विदुः॥
श्रवणे श्रीधरं विद्याद्धृषीकेशं ततः परम्। आश्विने पद्मनाभं तु दामोदरं च कार्तिके॥
द्वादशैतानि नामानि प्रतिमासं तु पूजयेत्॥

एवं षोडशोपचारपूजां कृत्वा यथाशक्ति पुरुषसूक्तं जपित्वा देवाय निवेद्य तां रात्रिं देवालये जागरित्वा द्वादश्यां प्रभाते पुरुषसूक्तेन स्नात्वा कृतनित्यक्रियः पूर्वोक्तन्यासादिपूर्वकं विष्णुं सम्पूज्य देवदक्षिणभागे कुण्डे स्थण्डिले वा पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं स्वगृह्योक्तविधिना अग्निं स्थापयेत्।

तद्यथा—'ॐ सुहस्त्रशीर्षा० इति कुण्डं कृत्वोपले पनोल्लेखनान्तं कर्म कुर्य्यात्॥१॥ ॐ पुरुषऽएवेदर्ठ० इति प्रोक्षणम्॥२॥ ॐ एतावानस्य० इत्यग्निस्थापनम्॥३॥ ॐ त्रिपादूर्ध्वम्० इति समित्प्रक्षेपेण समिध्य स्वगृह्योक्तविधिनाऽग्नौ चरुस्थापनान्तं कर्म कृत्वा॥४॥ ॐ ततोविराडिति मन्त्रेणाज्यसंस्कारश्चरुश्रपणं च कुर्य्यात्॥५॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्व० इति वह्नेर्मध्ये पद्मासनकल्पनम्॥६॥ (चिन्तयेत्तत्र देवेशं कालानलसप्रभम्। विवृतास्यं वाहशीर्षं रक्तालोचनम्॥१॥) इति ध्यात्वा ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऋच० इति गन्धम्॥७॥ ॐ तस्मादश्वा इति पुष्पम्॥८॥ ॐ तंयज्ञंबर्हिषि० इति धूपम्०॥९॥ ॐ यत्पुरुषं० इति दीपम्॥१०॥ ॐ ब्राह्मणोस्य० इति नैवेद्यं च दद्यात्॥११॥ एवमग्निं सम्पूज्य पुरुषसूक्तेन प्रार्थयेत्।

द्वादश मासों की शुक्लैकादशी को विष्णुनामों से पूजा—बारहों मासों में प्रत्येक मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को भगवान् विष्णु की पूजा उनके अलग-अलग नामों से करनी चाहिये। प्रत्येक मास के विष्णु नाम अलग-अलग हैं।

१. मार्गशीर्ष मास में केशव नाम से पूजा करे। २. पौषमास में 'नारायण' कहकर पूजा करे। ३. माघमास में माधव नाम से पूजा करे। ४. फाल्गुन में गोविन्द नाम से पूजा करे। ५. चैत्र मास में विष्णु नाम से पूजा करे। ६. वैशाख में मधुसूदन नाम से पूजा करनी चाहिये। ७. ज्येष्ठ मास में त्रिविक्रम नाम से अर्चना अभीष्ट है। ८. आषाढ़ मास में वामन नाम से पूजा करणीय है। ९. श्रावण मास में श्रीधर नाम लेकर पूजा करनी चाहिये। १०. भाद्रपद मास की विष्णुपूजा हृषीकेश नाम से होती है। ११. आश्विन में श्रीभगवान् विष्णु पद्मनाभ नाम से पूजनीय है तथा १२. कार्तिक मास में विष्णुपूजा दामोदर नाम से करनी चाहिये। ये भगवान् विष्णु के बारह नाम हैं; इनसे ही प्रतिमास उनकी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार उनकी षोडशोपचार पूजा करके यथाशक्ति पुरुषसूक्त का जप करके देव के लिये निवेदन कर उस रात्रि में देवालय में जागरण करके द्वादशी को प्रात:काल पुरुषसूक्त से स्नान कर नित्यक्रिया निपटाकर पूर्वोक्त न्यासादि कर्म करके विष्णु को पूजकर देव के दक्षिण भाग में कुण्ड या स्थण्डिल पर पञ्चभू संस्कार करके स्वगृह्यसूत्र की विधि से अग्नि की स्थापना तथा मूलोक्त मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट उपचारों से पूजा करनी चाहिये।

विमर्श—यहाँ पौराणिक चान्द्रमास के अनुसार विष्णुपूजा का निर्देश है। ज्योतिष ग्रन्थों में आर्ष्टिषेण का एक वचन मिलता है—

दर्शान्ते वैदिको मासो राकान्तः स्मार्त उच्यते। पौराणो हरि घस्रान्तः श्रौतोत्पत्तिपूर्वकम्॥

तदनुसार १. वैदिक चान्द्रमास—यह शुक्ल प्रतिपदा से अमावास्या-पर्यन्त होता है (दक्षिण भारत में इसी का प्रचार है)। २. स्मार्त चान्द्रमास—यह कृष्ण प्रतिपदा से शुक्ल पूर्णिमा-पर्यन्त होता है (उत्तर भारत में इसी का प्रचार है)। ३. पौराणिक चान्द्रमास—यह शुक्लपक्ष की द्वादशी से प्रारम्भ होकर शुक्ल पक्ष की एकादशी-पर्यन्त होता है (इसका प्रचार वैष्णव भक्तों के लिये है)। ४. श्रौत चान्द्रमास—यह शुक्लपक्ष के चन्द्रदर्शन से प्रारम्भ होता है तथा अगले चन्द्रदर्शन के पूर्व समाप्त हो जाता है (यह उपनिषदों का मास है। मुसलमानों में धार्मिक कार्यों में इसी का प्रचार है)।

पुरुषसूक्तम्

हरिः ॐ सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। सभूमिंᳬसर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥१॥
पुरुषएवेदᳬसर्वंयद्भूतंयच्चभाव्यम् । उतामृतत्त्वस्येशानोयदन्नेनातिरोहति ॥२॥
एतावानस्यमहिमातोज्ज्यायाँश्चपूरुषः । पादोस्यविश्वाभूतानित्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥३॥
त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः । ततोव्विष्वङ्व्यक्क्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥४॥
ततो व्विराडजायत व्विराजोऽधिपूरुषः। सजातोऽअत्यरिच्च्यत पश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥५॥
तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम् । पशूँस्ताँश्चक्क्रेव्वायव्यानारण्याग्ग्राम्म्याश्चये ॥६॥
तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दाᳬसिजज्ञिरेतस्माद्यजुस्तस्म्मादजायत ॥७॥
तस्मादश्वाऽअजायन्तयेकेचोभयादतः । गावोहजज्ञिरेतस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ॥८॥
तंय्यज्ञम्बर्हिषिप्प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः । तेनदेवाऽअयजन्तसाद्ध्याऽऋषयश्चये ॥९॥
यत्पुरुषंव्यदधुः कतिधाव्यकल्प्पयन् । मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहूकिमूरूपादाऽउच्च्येते ॥१०॥
ब्राह्मणोस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः । ऊरूतदस्ययद्वैश्यः पद्भ्याᳬशूद्रोऽअजायत ॥११॥
चन्द्रमामनसोजातश्चक्षोः सूर्य्योऽअजायत । श्रोत्राद्वायुश्चप्राणश्चमुखादग्निरजायत ॥१२॥
नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षᳬशीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत । पद्भ्याम्भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथालोकाँ२ऽअकल्पयन् ॥१३॥
यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्वत । व्वसन्तोस्यासीदाज्ज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः ॥१४॥

सुप्तास्यासन्परिधयस्त्रिऽसुप्तसमिधःकृताऽ । देवायद्यज्ञन्तन्वानाऽअबध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥१५॥
यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्यासन् । तेहनाकम्महिमानःसचन्तयत्रपूर्व्वेसाद्ध्याऽसन्तिदेवाऽ ॥१६॥

इति पुरुषसूक्तम्। ततो घृते नाघारावाज्यहोमं कृत्वा शुचिः वाग्यतः पूर्ववत् षोडशभिः ऋग्भिः प्रत्यृचं घृताक्ताऽश्वत्थसमिधो हुत्वा तैरेव षोडशभिश्चरुहोमं च कुर्य्यात् इदं जगद्बीजाय पुरुषाय इति त्यागः।

पुरुषसूक्त—जो सहस्र सिर वाले, सहस्रों नेत्र वाले, सहस्रों पैरों वाले विराट् पुरुष हैं, वे सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर भी दश अङ्गुल शेष रहते हैं। जो कुछ भी सृष्टि में बन चुका है तथा बनने वाला है, वह सब यह पुरुष ही है; इस अमर जीवलोक का भी वही स्वामी है। उसकी महिमा विशाल है। उस श्रेष्ठ पुरुष (परमात्मा) के एक चरण में सभी जीव स्थित हैं तथा तीन चरण अन्तरिक्ष में स्थित है। इस प्रकार इस चार भागों से युक्त विराट् पुरुष के एक भाग में ही यह सम्पूर्ण विश्व जड़-चेतनादि रूप में स्थित है तथा शेष तीन चरण अन्तरिक्ष में समाहित हैं। उसी पुरुष से यह ब्रह्माण्ड उत्पन्न है, उसी से यह जीवसृष्टि है. वही देहधारी रूप में प्रकट है तथा सबसे श्रेष्ठ है, जिसने प्रथम इस पृथ्वी को बनाया तथा उसके उपरान्त शरीरधारियों को उत्पन्न किया। उस सर्वहुत यज्ञ से दधिमिश्रित घृत प्राप्त हुआ (जो उस विराट् पुरुष की पूजा के लिये है)। पुरुष ने वायुदेवता के पशु (तेज दौड़ने वाले), आरण्य पशु, तथा ग्राम्य पशु उत्पन्न किये। उन्हीं पुरुष से ऋग्वेद की ऋचायें तथा सामगानों का निर्माण हुआ। उसी ने यजुः को उत्पन्न किया। उसी पुरुष परमात्मा से ऊपर-नीचे दोनों जबड़ों से चबाने वाले अश्व उत्पन्न हुए। गायें, भेड़, बकरियाँ आदि भी उत्पन्न हुए! उस सर्वप्रथम उत्पन्न हुए यज्ञीय विराट् पुरुष को यज्ञ में बर्हि से प्रोक्षण करके मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने तथा देवसाध्यों ने यज्ञकर्म प्रारम्भ किया। ज्ञानी जन उस पुरुष की कल्पना में प्रश्न करते हैं कि उसका मुख क्या है? कौन से बाहू हैं, ऊरु तथा चरण कौन कहे जाते हैं? ब्राह्मण इस यज्ञपुरुष (विराट्) के मुख हैं। क्षत्रिय भुजाएँ हैं। वैश्य ऊरु (घुटनों से ऊपर का भाग) तथा शूद्र चरण हैं। ईश्वर के मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ है, उसके नेत्रों से सूर्य उत्पन्न हुआ है। कानों से वायु तथा प्राण उत्पन्न हुए हैं एवं मुख से अग्नि उत्पन्न हुई है। उसकी नाभि से अन्तरिक्ष उत्पन्न हुआ है, सिर से द्युलोक उत्पन्न है। पैरों से भूमि उत्पन्न हुई है। कानों से दिशाएँ उत्पन्न हुई हैं तथा लोक भी उसके विभिन्न अङ्गों से हैं। जब देवों ने पुरुषरूपी हवि से यज्ञ करना आरम्भ किया, तब वसन्त ऋतु ने घृत का कार्य किया। ग्रीष्म ऋतु ईंधन तथा शरद हविः (हविष्यान्न) हुई थी। इस यज्ञ की सात परिधियाँ तथा त्रिसप्त (७×३=२१) समिधाएँ थीं। देवों ने इस यज्ञ के विस्तार में विराट् पुरुष को पशु (हव्य) रूप की भावना के साथ बाँधा। प्रारम्भ से श्रेष्ठ उन देवों ने उस यज्ञ से परमात्मा का यजन किया, जिसके द्वारा धार्मिक लोग स्वर्गादि लोकों की प्राप्ति करते थे। (यहाँ पुरुष शब्द का अभिप्राय परमब्रह्म ईश्वर से है)। इस प्रकार पुरुषसूक्त से होम करके फिर घृत से आघाराज्याहुति होम करके शुद्ध वाणी से जगद्बीज (परमात्मा) के लिये होम का त्याग करना चाहिये।

ततः पुनराज्यहोमं कृत्वा मधुसूदनं ध्यात्वा प्रार्थयेत्—

जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन। नमस्तेस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज॥
नमो हिरण्यगर्भाय प्रधानव्यक्तरूपिणे। ॐ नमो वासुदेवाय शुद्धज्ञानस्वरूपिणे॥
देवानां दानवानां च सामान्यमधिदैवतम्। सर्वदा चरणद्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव॥
एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा। अध्यक्षश्चानुमन्ता च गुणमायासमावृतः॥
संसारसागरं घोरमनन्तं क्लेशभाजनम्। त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः॥
न ते रूपं न चाकारो नायुधानि न चास्पदम्। तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाशसे॥
नैव किञ्चित्परोक्षं ते प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित्। नैव किञ्चिदसाध्यं ते न च साध्योऽसि कस्यचित्॥
कार्य्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम्। योगिनां परमां सिद्धिं परमं ते परं विदुः॥

प्रार्थना—फिर आज्य होम कर भगवान् मधुसूदन का ध्यान करके मूल में लिखित 'जितं ते पुण्डरीकाक्ष०' इत्यादि पन्द्रह श्लोकों से उनसे प्रार्थना करनी चाहिये। प्रार्थना का भावार्थ यह है—हे कमलनेत्र! आप विजयी को नमस्कार है। विश्वभावन! आपको नमस्कार है। हे पूर्वज! महापुरुष हृषीकेश! आपको नमस्कार है। आप हिरण्यगर्भ, प्रधान, अव्यक्तरूपी को नमस्कार है। शुद्ध प्रणवरूप, ज्ञानरूप वासुदेव को नमस्कार है। आप देवों-दानवों के सामान्य अधिदैवत हैं, मैं सदैव आपके चरणयुगलों की शरण में जाता हूँ। आप ही एकमात्र इस लोक के स्रष्टा तथा संहारकारक हैं। पालक, अनुशासक तथा त्रिगुणात्मक माया से समावृत हैं। इस घोर अनन्त क्लेशभाजन संसारसागर में पार जाने के लिये आपकी शरण को प्राप्त होकर ही मुक्त हो पाते हैं। आपका कोई रूप नहीं है, न आकार है, न आयुध है, न आस्पद (पदवी) है, फिर भी आप भक्तों के लिये पुरुषाकार में प्रकट होते हैं। आप किसी से परोक्ष में नहीं हैं और न ही प्रत्यक्ष में हैं। आपके लिये कुछ भी असाध्य नहीं है और आप भी किसी के लिये साध्य नहीं हैं। आप कार्यों के ही पूर्व कारण हैं तथा वाणियों में उत्तम वाच्य हैं। आप योगियों के लिये परम सिद्धि हैं, आपको विद्वान् भी परम कहते हैं।

अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन्महाभये। त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने शरणं परम्॥
कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु वाच्युत। शरीरेऽपि गतौ चापि वर्त्तते मे महद्भयम्॥
त्वत्पादकमलादन्यन्न मे जन्मान्तरेष्वपि। निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम्॥
विज्ञानं यदिदं प्राप्य यदिदं स्थानमर्जितम्। जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदस्य परिक्षयः॥
दुर्गतावति जातायां त्वं गतिस्त्वं मतिर्मम। यदि नाथश्च विज्ञेयस्तावतास्यां कृती सदा॥
आकामकलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितम्। कामये वैष्णवत्वं च सर्वजन्मसु केवलम्॥
इत्येवमनया स्तुत्या स्तुत्वा देवं दिने दिने। किङ्करोमीति चात्मानं देवायैव निवेदयेत्॥

हे देवेश! इस महाभय पूर्ण संसार में भयभीत हूँ। हे पुण्डरीकाक्ष! आप मुझे इस भय से मुक्त करे। मैं आपकी शरण में हूँ। हे अच्युत! तीनों कालों, सभी दिशाओं, शरीर में भी, उसकी गति में भी मुझे महान् भय लगता है। आपके चरणकमलों को छोड़कर अन्यत्र कहीं मेरी रति जन्मान्तरों में भी न हो। आपके चरणकमल ही सद्गतिदायक हैं। यह आपके चरणकमलों का ज्ञान प्राप्त हो जाय या उनके दर्शन हो जाय तो हे देव! जन्मान्तर में भी मेरी हानि नहीं होगी। दुर्गति में होने पर भी हे नाथ! आप ही मेरी गति एवं मति हैं। मेरा कामनाओं में लगा मन आपके चरणों में स्थित रहे। मैं केवल जन्म-जन्मान्तर में वैष्णवत्व ही प्राप्त करूँ। इस स्तुति के द्वारा देव की प्रतिदिन स्तुति करके फिर मैं क्या करूँ—ऐसा कहकर स्वयं को देव को ही निवेदित कर देना चाहिये।

इत्युपस्थाय प्रदक्षिणानमस्कारौ कृत्वा आज्येन पञ्चवारुणहोमं कृत्वा होमशेषं समाप्य आचार्याय धेनुं भूमिं हिरण्यं च दत्त्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्। ततः कामप्रदं नारायणं नमस्कृत्य वैष्णवचरुशेषमितराऽऽहारपरिहारपूर्वकं दम्पती पवित्रौ भूत्वा भुञ्जीयाताम्। रात्रौ च पत्नी पतिं नारायणरूपतया मनसा ध्यात्वा तेन सह उपसङ्गम्य वामपार्श्वशायिनी भवेत्। पतिश्च यावद्गर्भाधानमन्यां स्वस्त्रियं परिहरेत्। एवं मासि मासि शुक्लद्वादश्यां द्वादशमासपर्य्यन्तं कृत्वा संवत्सरान्ते मासान्ते वा जपदशांशहोमं कुर्य्यात्। एवं कृते निःसन्देहेन पुत्रो भविता। सहस्रसङ्ख्याचरुहोमेन विष्णोः परं पदं प्राप्नुयात्।

इस प्रकार खड़े होकर प्रदक्षिणा तथा नमस्कार करके घृत से पञ्चवारुण होम करके होमशेष को समाप्त करके आचार्य को धेनुदान-दक्षिणादान करके ब्राह्मणों को भोजन कराये। फिर स्वयं भी परिजनों के साथ भोजन करे।

शयन—रात्रि में पति-पत्नी नारायण के रूप का मन से ध्यान करते हुए समागम करे। पत्नी वामशायिनी हो। जब तक गर्भस्थापन न हो, तब तक पति अन्य पत्नी से दूर रहे। इस प्रकार प्रतिमास की द्वादशी में पुत्रकामी व्यक्ति चरु का निर्माण कर संवत्सर के अन्त में अथवा मासान्त में जप के दशांश का होम करे। ऐसा करने से निःसन्देह पुत्र की प्राप्ति होती है। एक सहस्र संख्या के चरुहोम से विष्णु का परम पद प्राप्त होता है।

तथा च महार्णवे ऋग्विधाने—

अथाभिधीयते कर्म पुत्रकामस्य वैष्णवम्। शुक्लपक्षे शुभे वारे सुनक्षत्रे सुगोचरे॥
द्वादश्यां पुत्रकामस्तु चरुं कुर्वीत वैष्णवम्। दम्पत्योरुपवासः स्यादेकादश्यां सुरालये॥
ऋग्भिः षोडशभिः सम्यगर्चयित्वा जनार्दनम्। चरुं पुरुषसूक्तेन श्रपयेत्पुत्रकाम्यया॥
प्राप्नुयाद्वैष्णवं पुत्रमचिरात्सन्ततिक्षमम्। द्वादशद्वादशीष्वेवं पयसा निर्वपेच्चरुम्॥
यः करोति सहस्रं तु याति विष्णोः परं पदम्। हुत्वाग्निं विधिवत्सम्यगृग्भिः षोडशभिर्बुधः॥
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा स्तवं ताभिः प्रयोजयेत्। समिधोऽश्वत्थवृक्षस्य हुत्वाज्यं जुहुयात्पुनः॥
उपस्थानं हुताशस्य ध्यात्वा तु मधुसूदनम्। हविर्होमं ततः कुर्य्यात्प्रत्यृचं वाग्यतः शुचिः॥
सूक्तेन जुहुयादाज्यमादावन्ते च पूर्ववत्। हविःशेषं नमस्कृत्य नारी नारायणं पतिम्॥
भक्षयित्वा हविःशेषं लघ्वाशी संविशेत्क्षणम्। ततः कृत्वा त्विदं कर्म्म कर्त्तव्यं द्विजतर्पणम्॥
द्वितीयां स्त्रीं निवर्तेत यावद्गर्भं न विन्दति। अपुत्रा मृतपुत्रा वा या च कन्या प्रसूयते॥
क्षिप्रं सा जनयेत्पुत्रमृष्यशृङ्गो यथाब्रवीत्।

महार्णव तथा ऋग्विधान में कहा गया है कि पुत्रकामी वैष्णव शुक्ल पक्ष के शुभ वार, शुभ नक्षत्र, शुभ गोचर में सोलह ऋचाओं के द्वारा सम्यग् रीति से जनार्दन भगवान् की अर्चना करे। द्वादशी के दिन चरु बनाकर देवालय में दम्पति को उपवास करना चाहिये, फिर अर्चना करे। पुरुषसूक्त से चरु का श्रपण पुत्रकामना से करना चाहिये। तो ऐसा करने से शीघ्र ही सन्ततिक्षम होकर वैष्णव पुत्र को प्राप्त करता है। इस प्रकार बारह मासों की शुक्ल द्वादशी को चरु का निर्वपन (भोग-हवन) करना चाहिये। जो विद्वान् सोलह ऋचाओं के द्वारा एक सहस्र आहुतियाँ अग्नि में देता है, वह परम पद को प्राप्त होता है। हाथ जोड़कर उन ऋचाओं से स्तुति करते हुए पुनः-पुनः होम करना चाहिये। अग्नि उपस्थान करके श्री मधुसूदन का ध्यान करके प्रति ऋचा का शुद्ध उच्चारण करते हुए होम करना चाहिये। सूक्त के आदि तथा अन्त में पूर्व की भाँति आज्य होम किया जाता है, फिर जो हवि शेष बचे, उसे स्त्री नारायण तथा पति को प्रणाम करके सेवन कर ले तथा लघु भोजन के साथ दिनचर्या रखे। यह कर्म करके फिर ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणादि से तृप्त करना चाहिये। जब तक स्त्री को गर्भ न ठहरे तब तक अपनी दूसरी पत्नी में गमन न करे। इस उपाय को करने से अपुत्रा के पुत्र होता है तथा जिसके केवल कन्याएँ होती हैं, वह भी पुत्रवती हो जाती है। शृङ्गी ऋषि का कथन है कि इस विधि से शीघ्र ही पुत्र की प्राप्ति होती है।

विष्णुयागे होमविधिः

अथ होमात्मकप्रयोगः; पूर्वोक्तचन्द्रताराबलान्विते सुमुहूर्त्ते कृष्णैकादश्यामुपक्रम्य ब्राह्मणद्वारा अयुतपुरुषसूक्तजपं विष्णोः सहस्रनामसहस्रजपं च समाप्य शुक्लैकादश्यां दम्पती उपोष्य द्वादश्यां प्रातर्नद्यादौ स्नात्वा कृतनित्यक्रियो मण्डपमागत्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'ममानपत्यत्वदोषनिवृत्तिद्वारा तथास्या भार्य्यायाश्च चतुर्विधवन्ध्यत्वनिदानदोषदुरित-क्षयद्वारा दीर्घायुष्मत्सत्पुत्रप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं च ब्राह्मणद्वारा कारितजपदशांशसङ्ख्यया पुरुषसूक्तकरणक-होमात्मकं वैष्णवयागं सहस्रमखं विष्णुसहस्रनामशतसङ्ख्यहोमसहितं सनवग्रहमखं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूर्ववत् गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्तं कृत्वा आचार्यादिवरणं दिग्रक्षणं च कुर्य्यात्। ततः कुण्डे स्थण्डिले वा पुत्रप्रदनामानं वैश्वानरं यथाविधि संस्थाप्य तदीशान्यां नवग्रहवेद्यां तत्तन्मन्त्रैः पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डवद्ग्रहमण्डलदेवताः सम्पूज्य तदीशान्यां कलशं संस्थापयेत्। ततो मध्यपीठे सर्वतोभद्रमण्डले ब्रह्मादिदेवानावाह्य पूजयित्वा तन्मध्ये ताम्रकलशम् 'ॐ महीद्यौ०' इत्यादि पूर्ववत्पूर्णपात्रनिधानान्तं संस्थाप्य तत्वायामीति वरुणं सम्पूज्य 'कलशस्य मुखे' इत्याद्यभिमन्त्र्य

'देवदानव०' इति प्रार्थयेत्। ततः कलशोपरि पट्टवस्त्रं प्रसार्य तत्र विष्णोर्गन्धाष्टकेन अष्टदलं विलिख्य तन्मध्ये निष्केण तदर्द्धेन वा सुवर्णेन निर्मितं सगरुडासनं सलक्ष्मीकं विष्णुमग्न्युत्तारणपूर्वकं संस्थाप्य तस्य वामभागे सौवर्णं रुद्रं दक्षिणभागे ब्रह्माणं च स्थापयेत्। ततः पूर्वोक्तप्राणप्रतिष्ठां कृत्वा तेषां पुरतः ईशानादितण्डुलपुञ्जेषु वक्ष्यमाणदेवताः स्थापयेत्। तद्यथा—ॐ ध्रुवाय नमः ॥ १ ॥ ॐ स्कन्दाय नमः ॥ २ ॥ ॐ बलये नमः ॥ ३ ॥ ॐ व्यासाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ स्वयम्भुवे नमः ॥ ५ ॥ ॐ औशनसे नमः ॥ ६ । ॐ क्रतवे नमः ॥ ७ ॥ ॐ दक्षाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ प्रजापतये नमः ॥ ९ ॥ ॐ भीष्माय नमः ॥ १० ॥ ॐ कपिलाय नमः ॥ ११ ॥ ॐ च्यवनाय नमः ॥ १२ ॥ ॐ अर्जुनाय नमः ॥ १३ ॥ ॐ पुलस्त्याय नमः ॥ १४ ॥ ॐ पुलहाय नमः ॥ १५ ॥ ॐ अगस्त्याय नमः ॥ १६ ॥ ॐ वसिष्ठाय नमः ॥ १७ ॥ ॐ आथर्वणाय नमः ॥ १८ ॥ ॐ रुक्माङ्गदाय नमः ॥ १९ ॥ ॐ भरताय नमः ॥ २० ॥ ॐ धौम्याय नमः ॥ २१ ॥ ॐ सुनन्दाय नमः ॥ २२ ॥ ॐ नन्दवर्द्धनाय नमः ॥ २३ ॥ ॐ प्रह्लादाय नमः ॥ २४ ॥ ॐ नारदाय नमः ॥ २५ ॥ ॐ वैन्याय नमः ॥ २६ ॥ ॐ नन्दनाय नमः ॥ २७ ॥ ॐ वायुनन्दनाय नमः ॥ २८ ॥ ॐ विष्वक्सेनाय नमः ॥ २९ ॥ ॐ जयाय नमः ॥ ३० ॥ ॐ भद्राय नमः ॥ ३१ ॥ ॐ सुग्रीवाय नमः ॥ ३२ ॥ ॐ हनुमते नमः ॥ ३३ ॥ ॐ विभीषणाय नमः ॥ ३४ ॥ इति स्थापयेत्। ततः पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान् (पुनरुत्तरस्याम्) ॐ दुर्गायै नमः ॐ क्षेत्रपालाय नमः ॐ गणपतये नमः इति संस्थाप्य विष्णोः पुरतः 'ॐ गरुडाय नमः' इति गरुडं स्थापयेत्। ततः पूर्ववत् पुरुषसूक्तन्यासं ध्यानं च कृत्वा पुरुषसूक्तेन षोडशोपचारैः श्रीविष्णुं सम्पूज्य पायसान्नं निवेद्य ॐ त्र्यम्बकमिति मन्त्रेण रुद्रम् ॐ ब्रह्मयज्ञानमिति ब्रह्माणं चावाह्य पूजयेत्। ततः स्कन्दादिपरिवारदेवतापूजां कृत्वा प्रार्थयेत्—

कृष्णाय गोकुलेशाय वंशरक्षाकराय च। यशोदानन्दभद्राय नमोऽस्तु गुणसिन्धवे ॥
सुतान् देहि सुतान् देहि त्वं पूजाऽक्षयपुण्यतः। वासुदेव जगन्नाथ कृपालो भक्तवत्सल ॥

इति प्रार्थ्य पुरुषसूक्तेन प्रणमेत्।

विष्णुयाग होमविधि—पूर्वकथित चन्द्र-ताराबल से युक्त शुभ मुहूर्त में ब्राह्मण द्वारा अयुत संख्या में विष्णुसहस्रनामसहित पुरुषसूक्त के जप (पाठ) समाप्त कर शुक्ल पक्ष की एकादशी को उपवास कर द्वादशी तिथि में प्रातः नदी आदि में स्नान कर नित्यक्रिया से निपटकर मण्डप में आकर देश-काल का उच्चारण करके फिर 'ममानपत्यत्व' इत्यादि मूलोक्त सङ्कल्प कर पूर्ववत् गणपति पूजनादि नान्दीश्राद्धान्त करके आचार्यादि-वरण तथा दिक्-रक्षण करे। फिर कुण्ड या स्थण्डिल पर पुत्रप्रद वैश्वानर की स्थापना यथाविधि करके उसके ईशान में नवग्रह वेदी पर उनके मन्त्रों से पूर्वोक्त पद्धतिकाण्डानुसार नवग्रह मण्डल देवता का पूजन कर कलश स्थापित करे। फिर मध्य पीठ पर सर्वतोभद्रमण्डल पीठ पर ब्रह्मादि देवताओं का आवाहन-पूजन कर फिर उसके मध्य ताम्रकलश स्थापित करे। कलश पर भगवान् विष्णु की मूर्ति अग्नि-उत्तारणपूर्वक उसके वामभाग में सुवर्ण रुद्र तथा दक्षिण में सौवर्ण ब्रह्मा स्थापित करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ध्रुवाय नमः' इत्यादि ३४ मन्त्रों से देवों को स्थापित करे। फिर विष्णु के आगे गरुड़ को स्थापित कर पूजन करे एवं पुरुषसूक्त से न्यास एवं ध्यान करे। षोडशोपचार विष्णु की पूजा करे, फिर उन्हें पायसान्न निवेदित कर ब्रह्मा का पूजन कर स्कन्दादि को पूजकर 'कृष्णाय गोकुलेशाय नमः' इत्यादि प्रार्थना करके पुरुषसूक्त से प्रणाम करे।

ततः स्थापितह्नौ स्वगृह्योक्तविधिना विष्णुमुद्दिश्य पूर्ववत् पृथक् पयसि वैष्णवं चरुं श्रपयित्वा आज्यभागान्ते अर्कादिसमिच्चरुतिलाज्यद्रव्यैर्ग्रहहोमं कृत्वा सर्वतोभद्रमण्डलदेवताभ्यश्च हुत्वा प्रधानदेवहोमं कुर्य्यात्। तद्यथा—वैष्णवचरुणाश्वत्थवृक्षसमिद्भिस्तिलाज्येन च पूर्वोक्तपुरुषसूक्तेन सहस्रहोमं कुर्य्यात्। होमान्ते 'इदं विश्वरूपाय नारायणाय न मम' इति त्यागः (होमस्तु सकलसूक्तेन एकाहुतिरेवं सहस्रहोम इति महार्णवः)। ततः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे० इति मन्त्रेण रुद्राय ॐ ब्रह्मयज्ञानमिति ब्रह्मणे चाष्टोत्तरशतहोमः कार्य्यः। ततो ध्रुवादीनामपि प्रणवादिस्वाहान्तैर्नाममन्त्रैः यथाशक्ति

होमं कृत्वा विष्णुसहस्रनामभिः शतावृत्त्या पायसं जुहुयात्। 'ॐ विश्वाय स्वाहा' इत्यादिनामभिर्होमः। ततः स्विष्टकृदादिहोमान्तं समाप्य बलिदानं कृत्वा पुरुषसूक्तेन एव पूर्णाहुतिं दत्त्वा तेनैव वैश्वानरं प्रार्थ्य शेषं समापयेत्। तत आचार्याय सवत्सां पयस्विनीं गां दत्त्वा कर्मपूर्णतां वाचयित्वा शतब्राह्मणान् चतुर्विंशतिमिथुनानि च पायसान्नेन भोजयेत्। ततो वैष्णवं चरुशेषं दम्पती पवित्रौ भूत्वा भुञ्जीयाताम्।

यः सिद्धमन्त्रः सततं द्विजेन्द्रः सम्पूज्य विष्णुं विधिवत्सुतार्थी।
इदं विधानं विदधाति सम्यक् स पुत्रमाप्नोति हरिप्रसादात्॥

फिर स्थापित अग्नि में अपने गृह्यसूक्तानुसार विधि से विष्णु के उद्देश्य से पूर्ववत् पृथक्-पृथक् दुग्ध में वैष्णव चरु का श्रपण करे। आज्य भाग के अन्त में अर्कादि की समिधाओं से तिलाज्य द्रव्य से नवग्रह होम करके सर्वतोभद्र मण्डल देवताओं का होम करके फिर प्रधान देवता का होम करे। वह होम वैष्णव के चरु से अश्ववृक्ष की समिधाओं से तिलाज्य द्वारा पुरुषसूक्त से एक सहस्र आहुति द्वारा करना चाहिये। होमान्त में 'इदं विश्वरूपाय नारायणाय न मम' कहकर द्रव्यत्याग करे (महार्णव के अनुसार पुरुषसूक्त की एक आहुति गिने; इस प्रकार से एक सहस्र होम करना चाहिये)। फिर 'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे०' इत्यादि मन्त्र से रुद्र को तथा 'ब्रह्मयज्ञान०' से ब्रह्मा को १०८ आहुति दे। फिर ध्रुव आदि को भी उनके नाम के आदि में प्रणव तथा अन्त में स्वाहा लगाकर यथाशक्ति होम करके स्विष्टकृद् होम करे। उसके पश्चात् बलिदान करके पुरुषसूक्त के द्वारा पूर्णाहुति देकर उसी से वैश्वानर की प्रार्थना करके शेष कार्य समाप्त करे। फिर आचार्य को सवत्सा दुधारु गाय देकर कर्मपूर्णता मन्त्र का वाचन कर एक सौ ब्राह्मणों तथा चौबीस मिथुनों (दम्पतियों) को पायसान्न का भोजन्न कराये। तत्पश्चात् शेष बचे वैष्णव चरु को पवित्र होकर पति-पत्नी खाये। इस प्रकार से जो सिद्धमन्त्र होकर पुत्र की कामना से विष्णु को पूजकर इस विधान को करता है, उसे निश्चित ही विष्णुकृपा से पुत्र प्राप्त होता है।

ऋग्विधाने विशेषः—

पुरुषस्य हरेः सूक्तं स्वर्ग्यं धन्यं यशस्करम्। आत्मज्ञानमिदं पुण्यं योगज्ञानमिदं परम्॥
फलाहारो जपेन्नित्यं पश्यत्यात्मानमात्मनि। फलानि भुक्त्वोपवसेन्मासमद्भिश्च वर्तयेत्॥
अरण्ये निवसेन्नित्यं जपन्निममृषिं सदा। ऋग्भिस्त्रिषवणं काले स्नायादप्सु समाहितः॥
आदित्यमुपतिष्ठेत सूक्तेनानेन नित्यशः। आज्याहुतिरनेनैव हुत्वैवं चिन्तयेदृषिम्॥
ऊर्ध्वं मासात्फलाहारस्त्रिभिर्वर्षैर्जपेदिदम्। तद्भक्तस्तन्मना युक्तो दशवर्षाण्यनन्यभाक्॥
साक्षात्पश्यति तं देवं नारायणमनामयम्। ज्ञानगम्यं परं सूक्ष्मं व्याप्यं सर्वमवस्थितम्॥
ग्राह्यमत्यन्तयत्नेन स्त्रष्टारं जगतोऽव्ययम्। अनायासाद्यमाप्नोति भक्तं न परिहापयेत्॥
भक्तानुकम्पी भगवाञ्जायते पुरुषोत्तमः। येन येन च कामेन जपेत प्रयतः सदा॥
प्राप्तकामः समृद्धः स्याच्छ्रद्दधानस्य कुर्वतः। होमं वाप्यथवा जाप्यमुपहारमथो चरुम्॥
कुर्वीत येन कामेन तत्सिद्धिमुपधारयेत्। ज्ञातिश्रैष्ठ्यं महद्वित्तं यशो लोके परां गतिम्॥
पापेन विप्रमोक्षश्च भवेत्सर्वं न संशयः॥

इति पुरुषसूक्तविधानं समाप्तम्।

ऋग्विधान में विशेष— श्रीविष्णु का पुरुषसूक्त धन्य तथा यशस्कर है। यह पुण्यप्रद, आत्मज्ञान तथा परं योगज्ञान है। इसे नित्य फलाहार पर निर्भर रहकर जप करना चाहिये, नित्य ही वन में निवास करना चाहिये तथा नारायण ऋषि का ध्यान भी करते रहना चाहिये। ऋचाओं को सुनते हुए जल में स्नान करे। इसी सूक्त से नित्य सूर्योपस्थान करे।

आज्याहुति भी प्रतिदिन इसी मन्त्र से देकर ऋषि का चिन्तन करे। इस प्रकार दूसरा मास व्यतीत हो जाने पर फलाहार पर तीन वर्ष तक रहकर इसे जपता रहे। फिर लगातार दश वर्षों तक नारायण का अनन्य भक्त होकर जपे तो वह अनामय नारायण देव के प्रत्यक्ष दर्शन करेगा, जो कि ज्ञानगम्य, परम सूक्ष्म तथा अवस्थित हैं। अत्यन्त यत्न से उन जगत् के रचयिता को ग्रहण करे। वे भक्त को छोड़कर अनायास नहीं जायेंगे। भगवान् पुरुषोत्तम भक्तानुकम्पी हैं। जिस-जिस कामना से प्रयत्नपूर्वक जप किया जायेगा, वह कामना पूर्ण होगी तथा धन-धान्य से समृद्ध होगा। चरु का होम, सूक्तजप अथवा चरु का उपहार जिस कामना से किया जायेगा, वह सफल होगी। अपनी जाति में श्रेष्ठता प्राप्त होगी। बहुत धन, बहुत यश इस लोक में प्राप्त होकर अन्त में परमगति प्राप्त होगी तथा पाप से छुटकारा मिल जायेगा।

गर्भिण्यः गर्भस्त्रावहरणविधानम्

महार्णवे सूर्य्यारुणसंवादे च—

श्रीअरुण उवाच—

स्त्रवद्गर्भा भवेत्सा तु बालकं हन्ति या विषैः। प्रायश्चित्तं कथं स्वामिन् सत्यं वद ममाग्रतः॥

श्रीसूर्य उवाच—

एकवासो विधिं चैव कुर्याच्च विधिवत्ततः। चन्द्रसूर्योपरागे तु स्वर्णधेनुं प्रदापयेत्॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्प्राजापत्यचतुष्टयम्। सारस्वतजपं लक्षं दशांशहोमसंयुतम्॥
श्रवणं हरिवंशस्य एकचित्तेन मानद। शथपत्रैः शिवं पूज्य षण्मासाद्रविवासरे॥
कुम्भस्ताम्रमयश्चैव घृतेन परिपूरितः। दातव्यो ब्राह्मणायैव सर्वकार्यार्थसिद्धये॥
एवं कृते वैनतेय गर्भो निश्चलतां व्रजेत्॥

इति गर्भस्त्रावहरणविधानम्। एवं गर्भस्थैर्येऽपि कन्यानामेवोत्पत्तौ पुत्रार्थे पुत्रकामेष्टिं कुर्यात्। तत्प्रयोगस्तु कौस्तुभादौ ज्ञेयः। इति सन्तानोपायविधानानि समाप्तानि।

गर्भिणी के गर्भपात रोकने का विधान—महार्णव में सूर्यारुण संवाद में—श्री अरुण बोले—जो अपने पूर्व जन्मों में बालकों की हत्या विषादि देकर करती है, उसके इस जन्म में गर्भस्त्राव होते हैं। इस पाप का प्रायश्चित्त क्या है? हे स्वामी! मुझे बताइये।

श्रीसूर्य बोले—एकवस्त्र स्नान विधिपूर्वक करे तथा सूर्यग्रहण अथवा चन्द्रग्रहण के समय स्वर्णधेनु का दान करे। फिर ब्राह्मणों को भोजन कराये। तदुपरान्त चार प्राजापत्य व्रतों को करे। एक लाख सारस्वत जप करे तथा उसका दशांश (दश सहस्त्र) होम भी करे। श्री हरिवंशपुराण की कथा कों विधिपूर्वक श्रवण करे (उसका मूलपाठ भी साथ में अवश्य कराये)। हे मानद! यह श्रवण एकाग्रचित्त से करना चाहिये। एक सौ बिल्वपत्रों से भगवान् शङ्कर की पूजा करे (अथवा गुलाबपुष्पों से पूजा करे)। छः मास तक प्रत्येक रविवार को यह पूजा करनी चाहिये। फिर घी से भरा ताम्रकलश ब्राह्मण को सर्वकार्य-सिद्धिहेतु दान करना चाहिये। हे गरुड! ऐसा करके उस गर्भिणी का गर्भ निश्चल हो जाता है फिर उसका गर्भपात या गर्भस्त्राव नहीं होता है।

इसी प्रकार जिसके केवल कन्याएँ ही उत्पन्न होती हों तथा पुत्र गर्भ आने पर गर्भपात हो जाता हो तो उसके लिये पुत्रकामेष्टि यज्ञ करना चाहिये, जिसका प्रयोग कौस्तुभ आदि ग्रन्थों में देखना चाहिये। (जिस प्रकार भगवान् विष्णु के प्रिय सेवक श्री गरुड़ जी हैं, उसी प्रकार श्री सूर्य भगवान् के सेवक अथवा पुत्र अरुण माने जाते हैं। अरुण श्री सूर्य के सात घोड़ों वाले रथ के सारथी हैं)।

सूर्यारुणसंवादोक्तमेकवस्त्रस्नानम्

अरुण उवाच—

यत्त्वया कथितं स्वामिन्नेकवस्त्राभिषेचनम्। दम्पत्योरनपत्यादिदौर्भाग्यशमनं परम्॥
विधिं तस्याखिलं ब्रूहि यथा श्रुतिनिरूपितम्। कीदृग्वस्त्रं कथं धार्यमुभाभ्यामेव तत्पुनः॥

एकवस्त्र स्नान-विधि—श्री अरुण जी बोले—हे स्वामिन्! आपने दम्पति के लिये जो एकवस्त्र स्नान परमदुर्भाग्य-शामक कहा है, उसकी सम्पूर्ण विधि जैसी कि श्रुति में निरूपित है, उसे बताइये। उसमें वह एक वस्त्र कैसा हो तथा उसे कैसे पहिना जाय? यह सब भी कहिये।

श्रीसूर्य उवाच—

शुभे मासे सिते पक्षे सानुकूले ग्रहे दिने। नदनद्योः समायोगे महानद्योर्द्वयोरपि॥
प्रत्यूषे सिद्धिमास्थाय शरीरस्य यथाविधि। विधिं विविधमाधाय पत्न्या सह ममार्हणम्॥
विधाय श्रद्धया युक्तो मन्त्रमेतमुदीरयेत्। 'कर्मसाक्षिञ्ज् जगन्नाथ यन्मया पूर्वजन्मना॥
पञ्चधापत्यदुःखाख्यं दौर्भाग्यमतुलं भवेत्। प्राप्तं तस्य विनाशाय विधिं वद ममोत्तमम्॥
सह पत्न्या दिवानाथ तत्र सिद्धिं प्रयच्छ मे।'एवमुच्चार्य तद्वस्त्रमहतं द्विदशात्मकम्॥
सार्द्धद्वयकरायामं पञ्चविंशकरोन्मितम्। विततं तन्तुभिः श्लक्ष्णैस्तन्मध्ये तद्भृतं वनैः॥
युवा सुवासा मन्त्रेण मन्त्रितः दैववेदिना। सम्यग्दत्तं तदादाय परिदध्यात्सवस्त्रकम्॥
दृढनीवीरभिन्नानि देशे त्रिद्विगुणीकृतम्। तच्छेषदक्षिणाङ्गस्था सपत्नीकं सुपुत्रिका॥
परिदध्यात्प्रयत्नेन संवृत्तमममस्तका। केशान्सम्मृज्य सङ्गोप्य पतिपृष्ठानुगामिनी॥
उपविश्य जलस्थाने तावुभावपि दम्पती। प्रक्षाल्य पाणिपादौ च स्वाचान्तौ मम सम्मुखौ॥
वैदिकाँल्लौकिकांश्चापि सावधानौ जितेन्द्रियौ।

श्री सूर्य भगवान् बोले—शुभ मास में शुक्ल पक्ष में जिस दिन तिथि वार नक्षत्र योग करण एवं गोचर शुभ हो, उस दिन नद-नदी के समागम स्थान पर अथवा किन्हीं दो बड़ी नदियों के सङ्गमस्थल पर प्रातःकाल शरीर के नित्य कर्मों से निवृत्त होकर पत्नी के साथ मुझ समर्थ से प्रार्थना करते हुए यह मन्त्र कहे।

मन्त्र का भावार्थ है—'हे कर्मसाक्षी जगत् के स्वामी! मेरे द्वारा पूर्व जन्मों के कर्मों के फलस्वरूप पाँच प्रकार का अपत्यदुःख एवं दुर्भाग्य प्राप्त हुआ है, उसके विनाश के लिये मुझे उत्तम विधि बताइये तथा मुझे पत्नी-सहित उसमें सफल करें'। इस प्रकार मन्त्र उच्चारित कर उस लम्बे-चौड़े वस्त्र को, जो कि ढाई हाथ चौड़ा तथा पच्चीस हाथ लम्बा हो, मृदु तन्तुओं से बुना गया हो, उसमें बारह हाथ को 'युवासुवासाः' इत्यादि मन्त्र को पढ़कर आचार्य पति को पहिनने के लिये दे। उसकी गाँठें दृढ़ता से जो छूटे नहीं, ऐसी लगाये। उसमें से जो शेष बचे, उसे पति के दक्षिण भाग में स्थित होकर पत्नी को पहिनने के लिये दे। पत्नी उसको शिर को छोड़कर सम्पूर्ण शरीर में धारण कर ले तथा अपने केशों को स्वच्छ कर उनका जूड़ा बाँधकर पति की पीठ के पीछे खड़ी हो जाय। तब दोनों पति-पत्नी जल में प्रविष्ट होकर हाथ-पैर धोकर आचमन कर मेरे सम्मुख (सूर्य के सम्मुख) होकर खड़े हों। वैदिक तथा लौकिक दोनों विधियों से सावधान तथा जितेन्द्रिय होकर प्रार्थना करें।

आपस्त्वमसि सर्वेषां देवानामग्रणीः प्रभो॥
जीवनं सर्वजन्तूनां गर्भं धेहि मम प्रभो। यानि यानीह पापानि अनपत्यकराणि नौ॥
हत्वा तान्यखिलानीश गर्भं धेहि मम प्रभो। यदावाभ्यां महत्पापं पुरा जन्मनि दुःखकृत्॥

कृतं तन्मे विनिर्धूय गर्भं धेहि मम प्रभो। त्वयैवाधिष्ठिताः सर्वे नदीनदजलाशयाः॥
पुनन्ति पापिनः सर्वान् गर्भं धेहि मम प्रभो। त्वमावाभ्यां प्रयत्नाभ्यां शरणं दुःखशान्तये॥
प्रार्थितः परमेशान गर्भं धेहि मम प्रभो। आशास्महे महाभाग सन्ततिं लोकपावनीम्॥
प्रसन्नाद्भवतः स्वामिन् गर्भं धेहि मम प्रभो। भूतप्रेतपिशाचाद्याये नौ सन्ततिहारकाः॥
पाशेनाहत्य तान्सर्वान्गर्भं धेहि मम प्रभो। एवं सम्प्रार्थ्य ता आपो दम्पती तौ जलाद्बहिः॥
सुनाय्य प्राङ्मुखस्तिष्ठेन्मन्त्रं सुश्रावयेदिति। इमाङ्गिरस आदित्येभ्यो द्वयमिमं शुभम्॥
श्रावयन् भुवि विन्यस्य पात्रं तत्प्रणमेच्च माम्। ततोऽन्ये वाससी शुभ्रे शुचिनी परिधाय तौ॥
उपविश्यासने शुभ्रे पुष्पस्रक्चन्दनान्वितौ। ततः सकनकं सर्पिः स्पृशेत सुरभीं द्विजान्॥
प्रणिपत्य ततः शेषं कर्म सर्वं समापयेत्। आचार्यः स्वविधानेन दैवज्ञेनानुमोदितः॥

'हे प्रभो! आप (जल देवता)!! आप सभी देवताओं में अग्रणी हो। सभी जन्तुओं के जीवन हो। आप मुझे गर्भ प्रदान करें, हम दोनों पति-पत्नी के द्वारा जो भी अनपत्यताकारक पापकर्म हुए हैं, उन सबको नष्ट कर हे प्रभो! गर्भ धारण करायें। पूर्वजन्मों में जो हम दोनों के द्वारा दुःखकारक पापकर्म किये गये हैं, उनको समाप्त कर गर्भधारण करायें। आपके द्वारा ही सभी नदी-नद-जलाशयादि अधिष्ठित है। आप सभी पापियों को पवित्र करते हैं। आप हमको गर्भ प्रदान करें। हम दोनों प्रयत्नपूर्वक दुःखशान्तिहेतु आपकी शरण में हैं। हे प्रभु! हम आपसे प्रार्थना करते हैं, आप मुझे गर्भवती बनायें। हे महाभाग! हमें आपसे सन्तति की आशा है। हे स्वामी! आप अपनी प्रसन्नता से मुझे गर्भ प्रदान कीजिये। जो भी भूत-प्रेत-पिशाच हमारी सन्तति के संहारक हैं, हे वरुणदेव! आप अपने पाश से उन सबको नष्ट कर (बाँधकर) हमें सन्तति प्रदान करें'। इस प्रकार प्रार्थना कर वे दम्पति उस जलाशय से बाहर आकर पूर्व की ओर स्थित होकर आचार्य उनको 'इमाङ्गिर आदित्येभ्यो घृतस्नूः समाद् राजभ्यो जुह्वा जुहोमि। शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो नस्तु विजातो वरुणो दक्षो अंशः' (ऋः २।२७।१) यह मन्त्र सुनाये, फिर जलपात्र को भूमि पर रखकर मुझे प्रणाम कर नये वस्त्र धारण कर वे दोनों चन्दनादि धारण कर आसन पर बैठें। फिर स्वर्ण, घृत तथा ब्राह्मणों का स्पर्श तथा गाय का स्पर्श करें। फिर प्रणाम कर शेषकर्म का समापन करें। आचार्य अपने विधान के द्वारा तथा ज्योतिषी से अनुमोदन करायें।

हस्तमात्रे ततस्तत्र स्थण्डिलेष्टाङ्गुलोच्छ्रये। स्थापयेद्विधिवद्वह्निं निजशाखाविधानतः॥
पायसं निर्वपेत्तत्र वैधेयविधिवत्ततः। तस्मादीशानभागे तु स्थण्डिले कलशं न्यसेत्॥
अव्रणं पयसा पूर्णं स्वर्णपुष्पौषधैर्युतम्। पूर्णपात्रं न्यसेत्तत्र पूर्णं पुष्पफलाक्षतैः॥
स्वस्वमन्त्रैः प्रतिष्ठाप्य महेशमुमया सह। तस्याग्रे प्रजपेयुस्ते ब्राह्मणा मन्त्रकोविदाः॥
पञ्चाङ्गान्विधिवन्मन्त्रान् रुद्रसूक्तैश्च याजुषैः। उद्वास्याथ चरून्सम्यगाचार्यः स्वविधानतः॥
आघ्नारावाज्यभागौ च हुत्वा बाह्यविभावसुम्। दिक्पतीन् परितः पूज्यः स्वस्वमन्त्रैः समाहितः॥
प्रजापते तथाग्नेय्यां गर्भं धेहीति चापराम्। अगां पृष्टां तथा होता इमं मे सप्तवारुणम्॥
ततः स्विष्टकृतं हुत्वा कर्मशेषं समापयेत्। होमान्ते शिवमभ्यर्च्य सशिवां विधिपूर्वकम्॥
जपं होमं निवेद्यास्मै विधिद्द्विजकोविदः। ततो विप्राय विदुषे सुशान्ताय पयस्विनीम्॥
वस्त्रस्रग्दक्षिणोपेतां सवत्सां धेनुमुत्तमाम्। तथालङ्कृतसर्वाङ्गं वृषभं शुभलक्षणम्॥
दत्त्वा तौ दम्पती पश्चाद्दैवज्ञेनानुमोदितौ। मन्त्रमुच्चारयेयातां विधिवद्विहितार्हणैः॥
देवदेव जगन्नाथ सर्वपापौघनाशन। कर्मणानेन दानेन तथा गोयुगलस्य तु॥

सन्तुष्टः सततं भूत्वा सन्ततिं देहि मे प्रभो। ततस्तु वैणवं पात्रं शिवस्याग्रे निवेदयेत्॥
आचार्याय प्रदेयानि दानानि निजशक्तितः। गुरवे वाससी दत्त्वा कर्मशेषं समापयेत्॥
प्रणम्य देवतास्ताश्च विसृज्य च विधानतः। ततः कुम्भाम्भसा विप्रा अभिषिञ्चेयुरादृताः॥
मन्त्रश्च वारुणैः सौरैः शान्तिस्वस्त्ययनादिभिः। पौराणैरागमोक्तैस्तु नानाफलविधायिभिः॥
नान्दीमुखेन विधिना ततः श्राद्धं समारभेत्। नमो व इति मन्त्रेण नमस्कारमुदीरयेत्॥
सप्त ते तान्त्रिका मन्त्राश्छान्दसाः पञ्च वारुणाः। त्वन्नः प्रभृतयो द्वौ च वारुणौ चापरावपि॥

एक हाथ के चौकोर स्थण्डिल पर, जो कि आठ अङ्गुल ऊँचा हो, अपनी शाखा के विधानानुसार अग्नि स्थापित करे। उस पर पायस का निर्वपन करे, उसके ईशान भाग में विधिपूर्वक कलश स्थापित करे। वह कलश अव्रण हो तथा जल से पूर्ण एवं स्वर्ण-पुष्प एवं औषधियों से युक्त हो। उस पर पूर्णपात्र स्थापित कर पुष्प-फल-अक्षत रखकर अपने-अपने मन्त्रों से उमा-महेश्वर को स्थापित करे। उन देव के आगे बैठकर मन्त्रवेत्ता ब्राह्मण जप करें। मन्त्रों को पाँच अङ्गों से युक्त याजुष (यजुर्वेदीय) रुद्रसूक्त जपें। आचार्य अपने विधान से चरु का उद्वासन करके आघार आज्यभाग का होम करके विभावसु का आवाहन करके दशों दिशाओं में दिक्पालों की पूजा उनके मन्त्रों से समाहित चित्त से करके 'प्रजापते०, आग्नेय्यां०, गर्भं धेहि०, अपां पृष्टो०, होताः, इमम्मे सप्तवरुणं' इत्यादि वैदिक मन्त्रों से हवन करें। फिर स्विष्टकत् होम सम्पन्न करके शेषकर्म समाप्त करे। होम के अन्त में शिवा के साथ शिव की पूजा करें। उन्हें जप तथा होम निवेदित कर विद्वान् सुशान्त ब्राह्मण को सवत्सा दुधारू गाय दें। वस्त्र-दक्षिणासहित सवत्सा के साथ ही सजा करके शुभ लक्षणों से युक्त वृषभ कर भी दान करें। इस प्रकार वे पति-पत्नी दान कर अपने आचार्य तथा दैवज्ञ की अनुमति लेकर जाते समय यह मन्त्र उच्चारित करायें। 'देवदेव जगन्नाथ सर्वपापौघनाशन। कर्मणानेन दानेन तथा गोयुगलस्य तु॥ सन्तुष्टः सततं भूत्वा सन्ततिं देहि मे प्रभो।' फिर बाँस की टोकरी को शिव के आगे रखकर निवेदन करें। अपनी शक्ति के अनुसार आचार्य को विविध दान दें। गुरु को वस्त्र देकर शेषकर्म को समाप्त करें। देवताओं को प्रणाम करके उनका विधिपूर्वक विसर्जन करके फिर उस कलश के जल से ब्राह्मण लोग अच्छे मन से आशीर्वाद देते हुए दम्पति का अभिषिञ्चन करें। अभिषेक में वारुण मन्त्रों, सौरमन्त्रों, शान्तिपाठ, स्वस्तिवाचन आदि के साथ पुराण तथा आगम (तन्त्र) के मन्त्रों का, जो नाना प्रकार का फल देने वाले हैं, प्रयोग करें। उनमें सात तान्त्रिक मन्त्र होते हैं तथा पाँच वारुण वैदिक मन्त्र होते हैं। 'त्वन्नः' इत्यादि दो मन्त्र तथा अन्य वारुण मन्त्र होते हैं। नान्दीमुख श्राद्ध के साथ ही नमस्कार भी करें।

एवं तज्जलमामन्त्र्य स्तुत्वा मन्त्रैः प्रणम्य च। निमज्योन्मज्य च पुनस्तत्र स्नानं समाचरेत्॥
प्रयोगं विधिवत्कृत्वा पुत्रकामसमृद्धये। स्नास्यामहे स भगवान् प्रचेता नौ प्रसीदतु॥
स्नायीयातां ततः स्नानं द्रव्यैर्मन्त्राभिमन्त्रितैः। मृत्स्नागोमयगोमूत्रैर्द्रव्यैर्दधिपयोघृतैः ॥
तिलामलकपिष्टैश्च सर्वौषधिकुशोदकैः। निवृत्त्य विधिवत्स्नानं दम्पती तावुभावपि॥
स्नापितैव ततः पत्नी एकैकद्रव्यसञ्चयैः। औदुम्बरं बहुफलं बिभ्रती निजमूर्द्धनि॥
मन्त्रपूर्वं स्वपतिना दत्तां शाखां स्रजान्विताम्। सप्तौषधिसुसम्पूर्णैः कलशैश्चैव सप्तभिः॥
मन्त्रपूतैः स दैवज्ञः स्नापयेत्तां विधानतः। वर्धाकरश्च रास्ना च सहदेवी शतावरी॥
पञ्चैला लक्ष्मणा चेति सप्तौषध्योऽभिषेचने। या ओषध्यनुवाकेन सप्तौषध्यभिषेचने॥
ततस्तु वैणवं पात्रं सप्तधान्योपसम्भृतम्। मुद्गतण्डुलगोधूमयवशालिसमन्वितैः ॥
सकङ्गुसहमाषैश्च धान्यैरिति च सप्तभिः। फलानि विन्यसेत्तत्र याः फलिनीरिति मन्त्रतः॥

नालिकेरं च नारिङ्गं दाडिमं बीजपूरकम्। उत्तथीमथ पूगं च जम्बीरं चात्र सप्तमम्॥
वैदिकैर्लौकिकैर्मन्त्रैः पूर्वोक्तैरेव सप्तभिः। शिरोमेत्यनुवाकेन स्नानं दौर्भाग्यनाशनम्॥
समाप्य विधिवत्पश्चान्मन्त्रमेतमुदीरयेत्। 'शिशुमृत्युकरं यन्मे दौर्भाग्यं प्रागुपस्थितम्॥
पादाङ्गुष्ठादानखाग्रादाकेशान्तं समुत्सृजन्। स्नानेनानेन मे देव तान्सर्वानपसारय॥

इस प्रकार मन्त्रों से उस जल का अभिमन्त्रण कर प्रणाम कर फिर जलाशय में डुबकी लगाकर स्नान करें। इस प्रकार 'पुत्रकामना की पूर्ति के लिये विधिवत् प्रयोग करके हम पति-पत्नी स्नान कर रहे हैं। वह भगवान् प्रचेता हम दोनों पर प्रसन्न हों।' फिर उस जल में मिट्टी, गोबर, गोमूत्र, दही, दूध, घी, तिल की पिट्ठी तथा आँवले की पिट्ठी, सर्वौषधि जल तथा कुशोदक से भी स्नान करें। इन स्नानों से पति एवं पत्नी निवृत्त होकर गूलर तथा बहुफल को अपने शिर पर धारण करें, फिर अपने पति के द्वारा दी हुई सप्तौषधि से सुपूर्ण सात मन्त्रपूरित कलशों के जल से दैवज्ञ के सहयोग से स्नान करें। वर्धाकर, रास्ना, शतावरी, पञ्चैला, लक्ष्मणा—ये सप्त औषधियाँ हैं, जिनका उपयोग औषध्युदक के लिये होता है। फिर बाँस के पात्र में सप्तधान्य—मूंग, चावल, गेहूँ, जौ, शालि, कङ्गु, उड़द, इनको तथा फलों को 'याः फलिनीर्याऽफलाश्च०' इत्यादि मन्त्र से भरकर पूर्ण करें। नारियल, नारङ्गी, दाडिम, बीजपूरक, उत्तथी, सुपारी, जम्बीर—इन सात फलों को भी उस टोकरी में भरें। वैदिक तथा लौकिक मन्त्रों तथा 'शिरो मृत्यु' अनुवाक से स्नान करना दुर्भाग्य का नाशक है। इस प्रकार स्नान को समाप्त कर यह मन्त्र कहें—'शिशुमृत्युकरन्यन्मे दौर्भाग्यं प्रागुपस्थितम्। पादाङ्गुष्ठनखादानखाग्रादाकेशान्तं समुत्सृजन्। स्नानेनानेन मे देव तान्सर्वानपसारय'।

इति विज्ञाप्य वरुणं मां च कर्मादिसाक्षिणम्। एकचित्तः स्मरेद्देवमुमया सहितं शिवम्॥
नान्दीमुखेन विधिना सन्तर्प्य पितृदेवताः। विभ्राडित्यनुवाकेन फलपुष्पाक्षताञ्जलिः॥
उपस्थाय ततः पश्चात्कर्मशेषं समापयेत्। ततस्तद्वैणवं पात्रं शिरस्याधाय योषितः॥
कुशाग्रेण समालभ्य पठेन्मन्त्रान् सुशान्तिकान्। स्वस्त्ययनाय च तथा शान्तये च मुहुर्मुहुः॥
मध्यमं पिण्डमश्नाति पत्नी दैवज्ञनोदिता। आधत्त पितरो गर्भमिति मन्त्रेण मन्त्रितम्॥
आचम्य विधिवत्पश्चात्कर्मशेषं समापयेत्। शतं च भोजयेदन्यान् द्विजान्सन्तोष्य शक्तितः॥
कृतकृत्यौ च तौ स्यातां पुत्रपौत्रसुखान्वितौ।

इति सूर्यारुणसंवादोक्तमेकवस्त्रस्नानविधानम्।

इस प्रकार मुझसे तथा वरुण से निवेदन करके, जो कि कर्मों का साक्षी हूँ, फिर एकाग्र चित्त से शिवपार्वती का स्मरण करें। नान्दीमुख श्राद्ध करके देवताओं तथा पितरों को सन्तुष्ट करें। 'विभ्राड्'—इस अनुवाक् से फूल-पुष्प एवं अक्षत की अञ्जलि अर्पित करें। फिर उठकर शेष कर्म समाप्त करें। फिर उस बाँस के पात्र को स्त्री के शिर पर रखकर कुशाग्र का समालम्भ करते हुए शान्तिमन्त्रों का पाठ करें। इस प्रकार स्वस्ति एवं शान्ति के लिये बारम्बार मन्त्रोच्चारण करके दैवज्ञ की आज्ञा से मध्यम पिण्ड का भक्षण करें। उस समय 'आधत्त पितरो मम०' इत्यादि वैदिक मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये। फिर विधिवत् आचमन करके शेष कर्म को समाप्त करें। फिर अपनी शक्ति के अनुसार एक सौ ब्राह्मणों को भोजन कराकर सन्तर्पित करें। ऐसा करने से वे दोनों पति-पत्नी कृतकृत्य हो जाते हैं।

रुद्रस्नानविधानम्

हेमाद्रौ भविष्योत्तरे—

युधिष्ठिर उवाच—

रुद्रस्नानं विधानेन कथयस्व जनार्दन। सर्व्वदोषोपशमनं सर्व्वशान्तिप्रदं नृणाम्॥

हेमाद्रि तथा भविष्योत्तर के अनुसार रुद्रस्नान का विधान—युधिष्ठिर बोले—हे जनार्दन! सर्वदोषशामक मनुष्यों को शान्तिप्रद रुद्रस्नान की विधि कहिये।

श्रीकृष्ण उवाच—

देवसेनापतिं स्कन्दं रुद्रपुत्रं षडाननम्। अगस्त्यो मुनिशार्दूलः सुखासीनमुवाच ह॥
सर्वज्ञोऽसि कुमार त्वं प्रसादाच्छङ्करस्य वै। स्नानं रुद्रविधानेन ब्रूहि कस्य कथं भवेत्॥

श्रीकृष्ण जी बोले—एक बार शिवजी के षडानन पुत्र देवसेनापति स्वामी कार्तिकेय से मुनि अगस्त्य ने सुखासीन स्थिति में पूछा—हे कुमार! आप सर्वज्ञ हैं; यह गुण आपको श्री शङ्कर जी की कृपा से प्राप्त हुआ है, अतः आप रुद्रस्नान की विधि बताइये कि वह किसका और किस प्रकार से सम्पन्न होता है।

स्कन्द उवाच—

मृतवत्सा तु या नारी दुर्भगा ऋतुवर्जिता। या सूते कन्यकां वन्ध्या स्नानमासां विधीयते॥
अष्टम्यां वा चतुर्दश्यामुपवासपरायणा। ऋतौ शुद्धे चतुर्थेऽह्नि प्राप्ते सूर्यदिनेऽथवा॥
नद्योऽस्तु सङ्गमे कुर्यान्महानद्योर्विशेषतः। शिवालये तथा गोष्ठे विविक्ते वा गृहाङ्गणे॥
आहिताग्निं द्विजं शान्तं धर्मज्ञं सत्यशीलिनम्। स्नानार्थं प्रार्थयेदेनं निपुणं रुद्रकर्मणि॥
ततस्तु मण्डपं कुर्याच्चतुरस्त्रमुदक्प्लवम्। बद्धचन्दनमाल्यं च गोमयेनानुलेपितम्॥
तन्मध्ये श्वेतरजसा सम्पूर्णं पद्ममालिखेत्। मध्ये तस्य महादेवं स्थापयेत्कर्णिकोपरि॥
दद्याद्दलेषु नन्द्यादींश्चतुर्षु विधिपूर्वकम्। इन्द्रादिलोकपालांश्च दलेष्वन्येषु विन्यसेत्॥
देवीं विनायकं चैव स्थापयेत्तत्र पार्थिव। दत्त्वार्घ्यं गन्धपुष्पं च धूपं दीपं गुडौदनम्॥
भक्ष्यान्नानाविधान्दद्यात्फलानि विविधानि च। चतुष्कोणेषु भृङ्गारमश्वत्थदलभूषितम्॥
एकैकं विन्यसेद्ब्रह्मन्सर्वौषधिसमन्वितम्। चतुर्दिक्षु मण्डपस्य दद्याद्भूतबलिं ततः॥
आग्नेय्यां दिशि कर्त्तव्यं मण्डलस्य समीपतः। अग्निकार्ये शुभे कुण्डे पत्रपुष्पैरलङ्कृते॥
लवणं सर्पिषा युक्तं घृतेन मधुना सह। मानस्तोकेन जुहुयात्कृतहोमे नवग्रहे॥

स्कन्द बोले—जो स्त्री मृतवत्सा, दुर्भगा (यौन रोगों से पीड़ित), मासिक धर्मविहीन, कन्याप्रसूता, वन्ध्या-काकवन्ध्या हो, उसको रुद्रस्नान कहा गया है। अष्टमी एवं चतुर्दशी तिथियों में उपवासपरायण रहकर ऋतु की शुद्धि के चौथे दिन सूर्योदय में नदियों के सङ्गम में; विशेष रूप से बड़ी नदियों के सङ्गम में, शिवालय में अथवा शुद्ध गृहाङ्गण में आहिताग्नि शान्त द्विज, जो कि धर्मज्ञ तथा सत्यशाली हो, को इस स्नान को सम्पन्न कराने के लिये प्रार्थनापूर्वक बुलाये। वह ब्राह्मण रुद्रकर्म में निपुण होना चाहिये। वहाँ चौकोर मण्डप, जिसका ढाल उत्तर को हो, बनाये। नीचे गोबर से लीपा जाय तथा चन्दन एवं मालाओं से सजाया जाय। उस मण्डप के मध्य में श्वेत रजःचूर्ण से सम्पूर्ण कमल (अष्टदल) बनाये। उस कमल की कर्णिका के ऊपर श्रीमहादेव जी को स्थापित करे। चारो ओर के दलों में नन्दी आदि को स्थापित करे तथा अन्य दलों में इन्द्रादि लोकपालों को स्थापित करे। वहाँ पर देवी तथा गणेश को भी हे राजन् (युधिष्ठिर)! स्थापित करे। उन्हें अर्घ्य, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप तथा गुडौदन भेंट करे। विविध प्रकार के फल तथा भक्ष्यों को भी देना चाहिये। चारो कोनों पर चार भृङ्गारपात्र (गङ्गासागर=झारी) रखे, जो कि पीपल के पत्तों से युक्त जल एवं सर्वौषधि से युक्त हो। मण्डप के चारो दिशाओं में भूतबलि दे। मण्डप में अग्निकोण में अग्निकार्य-हेतु शुभ कुण्ड बनाकर उसे भी पत्र-पुष्पों से अलंकृत करे। नमक, घृत, मधु के साथ 'मानस्तोके तनये०' इस मन्त्र से प्रथम नवग्रह होम करने के पश्चात् फिर रुद्रहोम करे।

द्वितीयस्याग्निकार्यस्य कर्त्ता च ब्राह्मणो भवेत्। रुद्रजाप्यकृदाचार्यं सितचन्दनचर्च्चितम्॥
सितवस्त्रपरीधानं सितमाल्यविभूषितम्। शोभयेत्कङ्कणैः कण्ठ्यैः कर्णवेष्टाङ्गुलीयकैः॥
मण्डपस्य समीपस्थो जपेद्रुद्रान्विमत्सरः। यावदेकादशगताः पुनरेव जपेच्च तान्॥
देवमण्डलवत्कार्य्यं द्वितीयं मण्डलं शुभम्। तस्य मध्ये तु सा नारी श्वेतपुष्पैरलङ्कृता॥
श्वेतवस्त्रपरीधाना श्वेतगन्धानुलेपना। सुखासनोपविष्टान्तामाचार्य्यो रुद्रजापकः॥
अभिषिञ्चेत्ततश्चैनामर्कपत्रपुटाम्बुना। चतुःषष्टिऋचेनैव रुद्रेणैकादशेन तु।
शतानि सप्तवार्णानां चतुर्भिरधिकानि तु॥

चतुःषष्टिसङ्ख्यानामेकादशकृत्वः।

पवित्रामिन्द्रकीटाजगृहगोदावरीमृदम्। सर्वौषधी रोचनां च नदीतीर्थोदकानि च॥
अश्वस्थानाद्गजस्थानाद्वल्मीकात्सङ्गमाद्ध्रदात्। राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदमानीय संक्षिपेत्॥
एतत्प्रक्षिप्य कलशे शिवसंज्ञे सुपूजिते। आपादतलकेशान्तं कुक्षिदेशे विशेषतः॥
सर्वाङ्गं लेपयेद्भक्त्या सुशीला काचिदङ्गना। रुद्राभिजप्तेन ततः स्नापयेत्कलशेन ताम्॥
तोयपूर्णाष्टकलशैरश्वत्थदलपूरितैः। सर्वतो दिक्स्थितैः पश्चात्स्थापयेत्कलशाक्षतैः॥

अग्निकार्य के अतिरिक्त एक अन्य ब्राह्मण श्वेत चन्दन के त्रिपुण्ड्र से चर्चित होकर रुद्रजप करने वाला भी नियुक्त किया जाना चाहिये। वह श्वेत वस्त्रधारी श्वेत माल्यादि से विभूषित हो। कङ्कण, कण्ठी, कर्णवेष्ट तथा अङ्गूठी से शोभित हो। वह मण्डप के समीप ही मत्सररहित होकर रुद्रजप (रुद्राष्टाध्यायी का पाठ) करता रहे। जब तक एकादश आवृत्ति न हो, तब तक पुनः-पुनः जप करता रहे। देवमण्डल की भाँति एक दूसरा मण्डल भी बनाना चाहिये। उस मण्डप के मध्य उस स्त्री को (जिसे रुद्रस्नान कराना है) श्वेत पुष्पों से अलंकृत कर श्वेत वस्त्र परिधान में, श्वेत गन्धानुलेपन किये हुए सुखासन पर बिठाकर आचार्य तथा रुद्रजापक ब्राह्मण उसका अभिषिञ्चन आक के पत्तों के द्वारा निर्मित दोने में जल भरकर रुद्रैकादश की चौंसठ ऋचाओं को पढ़ते हुए करायें। अभिषिञ्चन की संख्या सात सौ चार होनी चाहिये। (६४×११ = ७०४ = चार अधिक सात सौ), बाम्बी की मिट्टी, हाथीशाला, गोशाला की मिट्टी, सर्वौषधि गोरोचन, नदी- जल, तीर्थजल, अश्वशाला, बकरीशाला, सङ्गम की मिट्टी, राजद्वार, गोष्ठ आदि की मिट्टी उस जल में डालनी चाहिये। इसको शिवसंज्ञक कलश में डालकर उसे सम्यक् रीति से पूजित कर पैरों से लेकर बालों के किनारे तक इस मिट्टी का वह सुशीला नारी भक्तिपूर्वक अपने शरीर में लेप करे। फिर रुद्रजप से अभिमन्त्रित कलश से उस नारी को स्नान कराये। यह स्नान जलपूर्ण आठ कलशों से, जो बाद में अश्वत्थ दलों से पूरित कर अक्षतों पर स्थापित किये जायँ, उनसे कराना चाहिये।

एवं स्नाता स्नापकाय दद्याद्गां काञ्चनं तथा। होतुरेवात्र निर्दिष्टा दक्षिणा गौः पयस्विनी॥
ब्राह्मणानामथान्येषां स्वशक्त्या मुनिपुङ्गव। गोवस्त्रकाञ्चनादीनि दत्त्वा सर्वान्क्षमापयेत्॥
कृतेनानेन विप्रेन्द्र रुद्रस्नानेन भामिनी। सुभगा कान्तिसंयुक्ता बहुपुत्रा प्रजायते॥
सर्वेष्वपि हि मासेषु ब्राह्मणानुमतौ शुभम्। तस्मादवश्यं कर्तव्यं पुत्रात्स्त्री सुखमिच्छती॥

या स्नानमाचरति रुद्रमिति प्रसिद्धं श्रद्धान्विता द्विजवरानुमता नताङ्गी।
दोषान्निहत्य सकलांश्च शरीरभाजो भर्तुः प्रिया भवति भारतजीववत्सा॥

इति भविष्योत्तरोक्तं रुद्रस्नानम्।

इस प्रकार से उस नारी का स्नान हो चुकने पर वह स्नापक ब्राह्मण को गोदान तथा स्वर्ण दक्षिणा में दे। फिर सवत्सा दुधारू गाय भी इस कार्य के निमित्त होता ब्राह्मण को दे। अन्य ब्राह्मणों को भी हे मुनिपुङ्गव! गो, वस्त्र, काञ्चनादि देकर सबसे क्षमाप्रार्थना करे। हे विप्रेन्द्र! इस स्नान के करने से वह स्त्री सुभगा, कान्तियुक्ता तथा बहुपुत्रा हो जाती है। सभी मासों में इस स्नान को ऋतुस्नान के उपरान्त शुभ चाहने वाली स्त्री को ब्राह्मणों की अनुमति एवं मार्गदर्शन में सम्पन्न करना चाहिये (इसके लिये किसी मुहूर्त की आवश्यकता नहीं है)। जो वराङ्गी इस रुद्रस्नान को विनम्र होकर ब्राह्मणों की अनुमति से सम्पन्न करती है, वह सम्पूर्ण दोषों को नष्ट करके अपने पति की प्रिया होकर पुत्रों वाली होती है; उसके बच्चे जीवित रहते हैं।

विधानपारिजातोक्तरुद्रस्नानप्रयोगः

अथ रुद्रस्नानप्रयोगः विधानपारिजाते—यस्यां कस्याञ्चिदष्टम्यां चतुर्द्दश्यां वा सम्भारान् सम्भृत्य चतुर्थेऽह्नि ऋतुस्नातायां सूर्यवारे वा नदीसङ्गमं गत्वा तदभावे शिवालयादिकमुपेत्य पुण्याहं वाचयित्वा आहिताग्न्यादिगुणविशिष्टं द्विजमाचार्यत्वेन वृत्वा ब्रह्माणं च वृणुयात्। अथाचार्योऽष्टहस्तं चतुरस्रं मण्डपं कृत्वा तन्मध्ये श्वेतरजसा अष्टदलपद्म-मालिख्य ब्रह्मादीन्मण्डलदेवांस्तत्रावाह्य पूजयित्वा कर्णिकायां रुद्रकलशं मन्त्रवत् स्थापयित्वा दध्यक्षतादिभिः शोभयित्वा तत्र महादेवमावाह्य पूर्वादिचतुर्षु दलेषु नन्दिनं भृङ्गरिटिं कालं महाकालं च क्रमेणावाह्य तेष्वेव अष्टदलेषु इन्द्रादीनष्टदिक्पालांश्चावाह्य महादेवस्य वामभागे पार्वतीदक्षिणभागे विनायकं चावाह्य षोडशोपचारैः पूजयित्वा पद्मचतुष्कोणेषु कुम्भचतुष्टयं यथाविधि स्थापयित्वा उदकमासिच्य अश्वत्थपल्लवादीनि निक्षिप्य वरुणमावाह्य कलशं प्रार्थ्य ततो मण्डपस्य अष्टदिक्षु कुम्भाष्टकं स्थापयित्वा इन्द्रादीन् सम्पूज्य तेभ्यो बलीन् दत्त्वा कुम्भान् संस्पृशन्नेकादशावृत्त्या रुद्रान् जपेत्। तस्मिन्काले ब्रह्मा पद्मादाग्नेय्यां दिशि कुण्डे स्थण्डिले वा अग्निमुपसमाधाय दधिमधुघृतोपेतं लवणमाहुतिपरिमितं ॐ मानस्तोके इति मन्त्रेण अष्टोत्तरशतवारं नवग्रहहोमपूर्वकं जुहुयात्। तत आचार्यो देवमण्डलवत् मण्डलान्तरं कृत्वा तत्र यजमानदम्पती श्वेतवस्त्रावृतौ उपवेश्य पूर्वादिकलशोदकेन रुद्राध्यायस्य एकैकमन्त्रमुक्त्वा अर्कपत्रपुटगृहीतेनाभिषिञ्चेत् चतुःषष्टिमन्त्रविभागेन। एवमेकादशावृत्तौ चतुरधिकसप्तशतानि भवन्ति। अथ रुद्रकलशोदकेन सप्तमृत्तिकासर्वौषधिगोरोचनादियुतेन आपादतलकेशान्तं विशेषतः कुक्षिदेशे अभिषिञ्चेत्। ततो मण्डपस्य अष्टदिक्स्थापितकलशोदकैरभिषिञ्चेत्। एवं स्नात्वा स्नानवस्त्रं परित्यज्य वस्त्रान्तरं परिधाय आचार्याय सुवर्णादि दक्षिणात्वेन दत्त्वा होमकर्त्रे पयस्विनी गौर्देया। अन्येषाञ्च भूयसी दक्षिणा देया। ततो यथाशक्ति ब्राह्मणान् भोजयेत्। इति अनुष्ठानप्रकाशे रुद्रस्नानप्रयोगः समाप्तः।

विधानपारिजात के अनुसार रुद्रस्नान-प्रयोग—किसी भी मास की अष्टमी अथवा चतुर्दशी को अथवा रविवार के दिन ऋतुस्नाता स्त्री सभी सामग्री के साथ चौथे दिन नदी के सङ्गम अथवा शिवालय में जाकर पुण्याहवाचन कराकर आहिताग्नि आदि गुणों से विशिष्ट ब्राह्मण को आचार्य के रूप में वरण करके किसी दूसरे ब्राह्मण का ब्रह्मा के रूप में वरण करे। आचार्य आठ हाथ का सम चौकोर मण्डप बनाकर उसके मध्य में श्वेत रज से अष्टदल पद्म की रचना करके ब्रह्मादि देवताओं का मण्डल में आवाहन तथा पूजन करके उस कमल की कर्णिका में रुद्रकलश मन्त्रोच्चार के साथ स्थापित कर दधि-अक्षत आदि से शोभित करके रखे। वहाँ महादेव का आवाहन कर पूर्वादि के चारो दलों पर क्रमशः नन्दी (पूर्व में), भृङ्गरीटि (दक्षिण में), काल (पश्चिम में) तथा महाकाल (उत्तर में) को आवाहित करे। फिर उन अष्टदलों में इन्द्रादि आठ दिक्पालों का आंवाहन करके महादेव जी के वाम भाग में पार्वती तथा दक्षिण में गणेश जी का आवाहन कर षोडशोपचारों से उनका पूजन कर पद्म के चारो कोणों में चार कलश स्थापित करके उन्हें जलपूरित करके फिर अश्वत्थ के पल्लवादि को डालकर वरुण देवता का आवाहन करके कलश की ('कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यादि मन्त्रों से) प्रार्थना करके फिर मण्डप की

आठ दिशाओं में आठ कुम्भ (अलग से) स्थापित कर उन पर इन्द्रादि आठ दिक्पालों को पूजकर उन्हें बलि प्रदान करके उन कुम्भों का स्पर्श कर रुद्रजप की एकादश आवृत्तियाँ सम्पन्न करे।

उस समय में ब्रह्मा अष्टदल कमल से अग्निकोण में बने कुण्ड में अथवा स्थण्डिल पर अग्नि को स्थापित करके दधि-मधु-घृतमिश्रित लवण की आहुतियाँ 'ॐ मानस्तोके तनये०' इत्यादि मन्त्र से १०८ की संख्या में दे। इसके पूर्व नवग्रहों का होम सम्पन्न कर लेना चाहिये। फिर आचार्य देवमण्डल की भाँति अन्य मण्डल बनाकर उस पर यजमान दम्पति को श्वेत वस्त्र धारण कराकर बैठाकर पूर्वादि दिशाओं के आठ कलशों से क्रमशः रुद्राध्याय के एक-एक मन्त्र का उच्चारण करके आक के पत्तों में जल लेकर उस दम्पति का अभिषेक करे। मन्त्रों का चतुःषष्टि विभाग कर ले। इस प्रकार से सात सौ चार आवृत्तियाँ करे। अब रुद्रकलश में सप्तमृत्तिका, सर्वौषधि, गोरोचना डालकर सम्पूर्ण शरीर में लगाकर; विशेष कर कुक्षि प्रदेश में लगाना चाहिये; अभिषेक करे। रुद्रकलश से प्रथम ही स्नान कराकर फिर आठ कलशों के जल से स्नान कराना चाहिये। इस प्रकार से स्नान करके स्नान के वस्त्रों को त्यागकर अन्य वस्त्रों को धारण कर ले तथा आचार्य को सुवर्णादि दक्षिणा देकर होम करने वाले को दुधारू गाय देनी चाहिये। अन्य वरित ब्राह्मणों को भी भूयसी दक्षिणा देनी चाहिये। फिर यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये।

गरुडमन्त्रपुरश्चरणम्

अथ हरिप्रसङ्गात्तद्वाहनगरुडमन्त्रपुरश्चरणम्। मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'क्षिपः ॐ स्वाहा' इति पञ्चाक्षरो मन्त्रः। अस्य गरुडमन्त्रस्य अनन्त ऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। पक्षीन्द्रो देवता। ॐ बीजम्। स्वाहा शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।' ॐ अनन्तऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिश्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ पक्षीन्द्रदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ज्वलज्वलमहामतिस्वाहा इति हृदयाय नमः॥ १॥ गरुडचूडाननस्वाहा इति शिरसे स्वाहा॥ २॥ गरुडशिखे स्वाहा इति शिखायै वषट्॥ ३॥ गरुडप्रभञ्जनजयजयप्रभेदय २ वित्रासय २ विमर्दय २ स्वाहा इति कवचाय हुं॥ ४॥ उग्ररूपधर सर्वविषहर भीषय २ सर्वं दह २ भस्मीकुरु २ स्वाहा इति नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ अप्रतिहतबलाप्रतिहतशासन हुं फट् स्वाहा इत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिषडङ्गन्यासः।

अथ वर्णन्यासः—ॐ क्षिं नमः पादयोः॥ १॥ ॐ पं नमः कटौ॥ २॥ ॐ नमः हृदये॥ ३॥ ॐ स्वां नमः मुखे॥ ४॥ ॐ हां नमः मूर्ध्नि॥ ५॥ इति वर्णन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

तप्तस्वर्णनिभं फणीन्द्रनिकरैर्क्लृप्ताङ्गभूषं प्रभुं स्मर्तॄणां शमयन्तमुग्रमखिलं नृणां विषं तत्क्षणात्।
चञ्च्वग्रप्रचलद्भुजङ्गमभयं पाण्योर्वरं बिभ्रतं पक्षोच्चारितसामगीतममलं श्रीपक्षिराजं भजे॥

एवं ध्यात्वा पूर्वोक्ते वैष्णवे पीठे मातृकायन्त्रं विलिख्य तन्मध्ये 'ॐ पक्षिराजाय स्वाहा' इति मन्त्रेण मूर्तिं प्रकल्प्य मूलेन पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च पूर्वोक्तहृदयादिमन्त्रषडङ्गपूजां कृत्वा तद्बहिरष्टपत्रेषु पूर्वादि क्रमेण—ॐ अनन्ताय नमः॥ १॥ ॐ वासुकये नमः॥ २॥ ॐ तक्षकाय नमः॥ ३॥ ॐ कर्कोटकाय नमः॥ ४॥ ॐ पद्माय नमः॥ ५॥ ॐ महापद्माय नमः॥ ६॥ ॐ शङ्खपालाय नमः॥ ७॥ ॐ कुलिकाय नमः॥ ८॥ इत्यष्टौ नागान् पूजयेत्। ततो भूपुरे पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान् (तद्बहिः) वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तपूजां कृत्वा जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं पञ्चलक्षात्मकम्। ततो जपान्ते दशांशहोमं तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्ज्जनब्राह्मणभोजनानि च कुर्य्यात्। तथा च—

पञ्चलक्षं जपेन्मन्त्रान्दशांशं जुहुयात्तिलैः। एवं सिद्धे मनौ मन्त्री नाशयेद्गरलद्वयम्॥
विष्णुभक्तिपरो नित्यं यो भजेत्पक्षिनायकम्। शत्रून्सर्वान्पराभूय सुखी भोगसमन्वितः॥

जीवेदनेकवर्षाणि सेवितो धरणीधवैः। कलेवरान्ते श्रीनाथसायुज्यं लभते तु सः॥

इति गरुडमन्त्रपुरश्चरणम्।

गरुडमन्त्र-पुरश्चरण—विष्णु के प्रसङ्ग में उनके सेवक गरुड जी के मन्त्र का पुरश्चरणविधान (मन्त्रमहोदधि के अनुसार) दिया जा रहा है।

'क्षिपः ॐ स्वाहा' यह मूल मन्त्र है। इसमें पाँच अक्षर हैं। इस गरुड मन्त्र के अनन्त ऋषि, पङ्क्ति छन्द, पक्षीन्द्र देवता, ॐ बीज तथा स्वाहा शक्ति है। मेरे अभीष्ट-सिद्धि के लिये इसका जप में विनियोग है—इस अर्थ को प्रकट करने वाले मूल में लिखित मन्त्र से विनियोग करे। तदनन्तर मूल में लिखित 'ॐ अनन्तऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ ज्वल-ज्वल महामति स्वाहा हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ क्षिं नमः पादयोः' से लेकर 'ॐ ह्यां नमः मूर्ध्नि' तक मूलोक्त पाँच मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में क्रमशः मन्त्र के पाँचों अक्षरों का न्यास करना चाहिये।

फिर मूल में लिखित 'तप्तस्वर्णनिभं०' इत्यादि श्लोक के अनुसार गरुड जी का ध्यान करे। ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—जिनके शरीर का तप्त सुवर्ण के समान कान्तिमान् वर्ण है। सर्पराजों से जिनका शरीर सुभूषित है। जो प्रभु स्मरण-करने मात्र से मनुष्यों के उग्र विष को तत्क्षण ही समाप्त कर देते हैं। जिनकी चोंच के अग्रभाग में भुजङ्ग ग्रसित है, दोनों हाथों में अभय तथा वरमुद्रा है, जिनके पङ्खों से सामवेद की ध्वनि होती है, ऐसे श्री पक्षिराज (गरुड) को भजे। इस प्रकार ध्यान करके वैष्णव पीठ पर मातृका यन्त्र को लिखकर उसके मध्य में 'ॐ पक्षिराजाय स्वाहा' इस मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके मूल मन्त्र (क्षिपः ॐ स्वाहा) से पाद्य से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त उपचारों से पूजन कर फिर आवरण-पूजा करनी चाहिये।

आवरण-पूजा—षट्कोण में आग्नेयादि कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में पूर्व में हृदयादि षडङ्ग न्यास में कहे गये मन्त्रों से पूजा करके फिर उसके बाहर अष्टदल में पूर्वादि क्रम से मूल में लिखे 'ॐ अनन्ताय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से (आठ दिशाओं में) आठ नागों की पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में दश दिक्पालों की पूजा करके उनके बाहर उनके वज्रादि आयुधों की भी पूजा करे। इसका पुरश्चरण पाँच लाख जप से होता है। जप के अन्त में दशांश होम, उसका दशांश तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मणभोजन कराये। जैसा कि कहा गया है—पाँच लाख जप करके उसका दशांश (पचास सहस्र) हवन तिलों से करे। इस प्रकार से साधक मन्त्र को सिद्ध कर लेता है तथा उसके प्रभाव से विषभय को नष्ट करता है। जो विष्णुभक्त-परायण होकर नित्य पक्षिनायक गरुड का भजन करता है, वह अपने सभी शत्रुओं को पराभूत करके सुखी तथा भोगयुक्त होकर अनेक वर्षों तक इस पृथ्वी पर भगवान् विष्णु की सेवा करता हुआ जीवित रहता है तथा देहान्त होने पर श्रीविष्णु के सायुज्य को प्राप्त होता है।

श्रीहनुमन्मन्त्रविधानम्

तत्र तावद्द्वादशाक्षरहनुमन्मन्त्रप्रयोगः मन्त्रमहोदधौ—सुमुहूर्त्ते कृतनित्यक्रियः शुचिः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'ममामुककामनासिद्धिद्वारा श्रीहनुमद्देवताप्रीत्यर्थं द्वादशसहस्रमन्त्रजपात्मकं पुरश्चरणं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य तदङ्गतया गणपतिपूजनादिनान्दीश्राद्धान्तं कृत्वा (ब्राह्मणद्वारा कारिते) आचार्यजाप-कवरणं च कुर्य्यात्। ततो जपस्थाने हनुमत्प्रतिमासम्मुखो दर्भासनादौ प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य आचम्य प्राणायामं कृत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुककामनासिद्धिपूर्वकश्रीहनुमत्प्रीतये अमुकसंख्यापरिमितहनुमन्मन्त्रजपं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च पूर्ववत् कृत्वा शिवपञ्चाक्षरोदितं श्रीकण्ठादिकलान्यासं च कुर्य्यात्।

अथ श्रीहनुमन्मन्त्रन्यासादिप्रयोगः; मूलमन्त्रो यथा—'ॐ हौं ह्स्फेंख्फ्रें ह्स्त्रौंह्स्ख्फ्रेंह्सौं हनुमते नमः' इति द्वादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य श्रीहनुमन्मन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः। जगती छन्दः। हनुमान् देवता। ह्सौं बीजम्। ह्स्फ्रें शक्तिः। हनुमते

कीलकम् इष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ श्रीरामचन्द्रऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ जगतीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ हनुमद्देवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ ह्सौं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ ह्स्फ्रें शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ हनुमते कीलकाय नमः नाभौ॥ ६॥ ॐ इष्टार्थे विनियोगाय नमः अञ्जलौ॥ ७॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ हौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्स्फ्रें तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ख्फ्रें मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ह्सौं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ह्स्ख्फ्रें कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ह्सौं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कुर्य्यात्।

ॐ हौं नमः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ ह्स्फ्रें नमः ललाटे॥ २॥ ॐ ख्फ्रें नमः नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ ह्सौं नमः मुखे॥ ४॥ ॐ ह्स्ख्फ्रें नमः कण्ठे॥ ५॥ ॐ ह्सौं नमः बाह्वोः॥ ६॥ ॐ हं नमः हृदि॥ ७॥ ॐ नुं नमः कुक्षौ॥ ८॥ ॐ मं नमः नाभौ॥ ९॥ ॐ तें नमः लिङ्गे॥ १०॥ ॐ नं नमः जानुनोः॥ ११॥ ॐ मं नमः पादयोः॥ १२॥ इति वर्णन्यासः। 'ॐ हौं नः मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ ह्स्फ्रें नमः ललाटे॥ २॥ ॐ ख्फ्रें नमः मुखे॥ ३॥ ॐ ह्सौं नमः हृदि॥ ४॥ ॐ ह्स्ख्फ्रें नमः नाभौ॥ ५॥ ह्सौं नमः ऊर्वोः॥ ६॥ ॐ हनुमते नमः जङ्घयोः॥ ७॥ ॐ नमः नमः पादयोः॥ ८॥ इति पदन्यासः। मूलेन व्यापकं कुर्यात्। इति न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्।

बालार्कायुततेजसं त्रिभुवनप्रक्षोभकं सुन्दरं सुग्रीवादिसमस्तवानरगणैः संसेव्यपादाम्बुजम्।
नादेनैव समस्तराक्षणगणान् सन्त्रासयन्तं प्रभुं श्रीमद्रामपदाम्बुजस्मृतिरतं ध्यायामि वातात्मजम्॥
इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्।

तद्यथा—पीठे ॐ मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः इति सम्पूज्य पूर्वादिदिक्षु ॐ विमलायै नमः॥ १॥ ॐ उत्कर्षिण्यै नमः॥ २॥ ॐ ज्ञानायै नमः॥ ३॥ ॐ प्रियायै नमः॥ ४॥ ॐ योगायै नमः॥ ५॥ ॐ प्रह्व्यै नमः॥ ६॥ ॐ सत्यायै नमः॥ ७॥ ॐ ईशानाय नमः॥ ८॥ (मध्ये) ॐ अनुग्रहायै नमः॥ ९॥' इति पीठशक्तीः पूजयेत्। ॐ ह्रीं नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः इत्यासनं दत्त्वा मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

द्वादशाक्षर हनुमन्मन्त्र-प्रयोग—शुभ मुहूर्त के दिन प्रातःकालीन नित्यकर्मों से निपटकर पवित्र होकर अपने आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर मूल मन्त्र (ॐ हौं, ह्स्फे, ख्फ्रे, ह्स्रौं, ह्स्ख्फ्रे, ह्सौं, हनुमते नमः) से आचमन कर फिर प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण करके 'ममामुककामनासिद्धिद्वारा श्रीहनुमद् देवताप्रीत्यर्थं द्वादशसहस्रमन्त्रजपात्मकं पुरश्चरणं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके उसके अङ्गभूत गणपति-पूजन से लेकर नान्दीश्राद्ध-पर्यन्त कर्म सम्पन्न करके (अथवा ब्राह्मण द्वारा कराकर) आचार्य तथा जापक ब्राह्मणों का वरण करे। फिर जपस्थान पर श्री हनुमान् जी की प्रतिमा के सम्मुख कुशासन आदि पर पूर्व की ओर अथवा उत्तर की ओर मुख करके बैठे। फिर आचमन, प्राणायाम करके देश-काल का संकीर्त्तन करके 'अमुककामनासिद्धिपूर्वक-श्रीहनुमत्प्रीतये अमुकसंख्यापरिमितं हनुमन्मन्त्रजपं करिष्ये' यह सङ्कल्प कर भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृका न्यास, बहिर्मातृका न्यास (पद्धतिकाण्डोक्त) करके फिर शिवपञ्चाक्षर में वर्णित श्रीकण्ठादि कलान्यास भी कर ले।

'ॐ हौं, ह्स्फे, ख्फ्रे, ह्स्रौं, ह्स्ख्फ्रे, ह्सौं, हनुमते नमः' यह बारह अक्षरों का मूल मन्त्र है। 'इस हनुमन्मन्त्र के रामचन्द्र ऋषि, जगती च्छन्द, हनुमान् देवता, हौं बीज, ह्स्फ्रें शक्ति, हनुमते कीलक है तथा इष्टसिद्धिहेतु जप में विनियोग है' इस अभिप्राय का मूलोक्त विनियोग मन्त्र है, उससे विनियोग करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ श्रीरामचन्द्र ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि सात मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में ऋष्यादि न्यास करे। तदनन्तर मूल में लिखित 'ॐ हौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। हृदयादि षडङ्ग न्यास—'ॐ हौं हृदयाय नमः, ॐ ह्स्फ्रें शिरसे स्वाहा, ॐ ख्फ्रें शिखायै वषट्, ॐ ह्सौं कवचाय हुम्, ॐ ह्स्ख्फ्रें नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्सौं अस्त्राय फट्,' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ हौं नमः मूर्ध्नि' इत्यादि बारह मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट मूर्धा आदि अङ्ग में मन्त्र के वर्णों का न्यास करे। तदनन्तर 'ॐ हौं नमः मूर्ध्नि' इत्यादि आठ

मन्त्रों से मन्त्र के पदों का न्यास उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में करना चाहिये। तदुपरान्त मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करना चाहिये। इस प्रकार न्यासविधि के उपरान्त श्री हनुमान् जी का ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—

अयुत संख्यक बालसूर्य के तेज वाले, तीनों लोकों को प्रक्षोभित करने वाले, सुन्दर, सुग्रीवादि समस्त वानरगणों के द्वारा जिनके चरण कमलों की सेवा हो रही है, जो अपनी नादमात्र (गर्जना) से समस्त राक्षसगणों को संत्रासित करते हैं, उन श्री रामचन्द्र के चरण कमलों की स्मृति में लगे हुए वातात्मज श्रीहनुमान् प्रभु का ध्यान करता हूँ। इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करने के उपरान्त पीठपूजा करे। वह इस प्रकार है—

पीठपूजा—पीठ पर 'ॐ मण्डूकादिपरत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' कहकर पीठपूजा करे, फिर पूर्वादि आठ दिशाओं में तथा अन्त में पीठ के मध्य में मूल में लिखित 'ॐ विमलायै नमः' इत्यादि मन्त्रों से पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर 'ॐ ह्रीं नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से आसन (पीठ को) देकर मूल मन्त्र से यन्त्र में मूर्ति की कल्पना करके पुष्पान्त उपचारों से पूजा करके आवरणपूजा प्रारम्भ करनी चाहिये। मन्त्र में सात आवरण है, उनकी पूजा इस प्रकार करे।

तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ ह्रौं हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ह्स्फ्रें शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ख्फ्रें शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ह्स्रौं कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ ह्स्ख्फ्रें नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ह्सौं अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। इति प्रथमावरणम् ॥ १ ॥ तद्बहिः पूर्वाद्यष्टदलेषु—ॐ रामभक्ताय नमः ॥ १ ॥ ॐ महातेजसे नमः ॥ २ ॥ ॐ कपिराजाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ महाबलाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ द्रोणाद्रिहारकाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ मेरुपीठकार्चनकारकाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ दक्षिणाशाभास्कराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ सर्वविघ्ननिवारकाय नमः ॥ ८ ॥ इति द्वितीयावरणम् ॥ २ ॥ ततः दलाग्रेषु—ॐ सुग्रीवाय नमः ॥ १ ॥ ॐ अङ्गदाय नमः ॥ २ ॥ ॐ नीलाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ जाम्बवते नमः ॥ ४ ॥ ॐ नलाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ सुषेणाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ द्विविदाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ मैन्दाय नमः ॥ ८ ॥ इति तृतीयावरणम् ॥ ३ ॥ ततो दलसन्धिषु—ॐ रक्षोघ्नाय नमः ॥ १ ॥ ॐ विषघ्नाय नमः ॥ २ ॥ ॐ रिपुघ्नाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ व्याधिघ्नाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ चौरघ्नाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ भूतघ्नाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ परशस्त्रास्त्रमन्त्रघ्नाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ भयघ्नाय नमः ॥ ८ ॥ इति चतुर्थावरणम् ॥ ४ ॥ ततो भूपुरप्रथमरेखायां पूर्वादिक्रमेण—ॐ ऐरावताय नमः ॥ १ ॥ ॐ पुण्डरीकाय नमः ॥ २ ॥ ॐ वामनाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ कुमुदाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ अञ्जनाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ पुष्पदन्ताय नमः ॥ ६ ॥ ॐ सार्वभौमाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ सुप्रतीकाय नमः ॥ ८ ॥ इति पञ्चमावरणम् ॥ ५ ॥ ततो भूपुरद्वितीयरेखायाम्—लं इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ रं अग्नये नमः ॥ २ ॥ मं यमाय नमः ॥ ३ ॥ क्षं निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ वं वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ यं वायवे नमः ॥ ६ ॥ सं कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ हं ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ (ऊर्ध्वम्) ह्रीं ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ (अधः) अं अनन्ताय नमः ॥ १० ॥' इति पूजयेत्। इति षष्ठावरणम् ॥ ६ ॥ ततो भूपुरे तृतीयरेखायाम्—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इति पूजयेत्। इति सप्तमावरणम् ॥ ७ ॥ एवमावरणपूजां विधाय 'ॐ साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते नमः' इति धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनैः स्तुतिपाठैश्च सम्पूज्य यथाविधि जपं कुर्य्यात्।

आवरण-पूजा—प्रथमावरण षट्कोण है; अतः उसके आग्नेयादि कोणों, मध्य तथा दिशाओं में (यन्त्र में दिये अङ्कों के अनुसार क्रम से) मूलोक्त 'ॐ ह्रौं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करे। षट्कोण के बाहर पूर्वादि आठ दलों में मूलोक्त 'ॐ रामभक्ताय नमः' इत्यादि आठ मन्त्र से द्वितीयावरण की पूजा करे। अष्टदल के अग्रभागों में मूलोक्त 'ॐ सुग्रीवाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से तृतीयावरण की पूजा करनी चाहिये। फिर आठों दलों की सन्धियों में मूलोक्त 'ॐ रक्षोघ्नाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से चतुर्थावरण की पूजा करे। तदनन्तर भूपुर

की प्रथम रेखा में 'ॐ ऐरावताय नमः' इत्यादि मन्त्र से पूर्वादि आठ दिशाओं में पञ्चमावरण की पूजा करे। फिर भूपुर की द्वितीय रेखा में 'लं इन्द्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से दश दिक्पालों की पूजा षष्ठावरण में करे। फिर भूपुर की तृतीय रेखा में उन्हीं दिक्पालों के वज्र आदि आयुधों की पूजा 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि मन्त्रों से सप्तमावरण में करे। इस प्रकार यन्त्र के सातों आवरणों की पूजा करने के उपरान्त 'ॐ साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते नमः' मन्त्र से धूप-दीप-नैवेद्य-ताम्बूल-दक्षिणा तथा नीराजनों से पूजा कर श्री हनुमान् जी की स्तुति (स्तोत्र या कवच) का पाठ करके यथाविधि जप आरम्भ करना चाहिये।

अस्य पुरश्चरणं द्वादशसहस्रजपः; तथा च—

एवं ध्यात्वा जपेदर्कसहस्रं जितमानसः। दशांशं जुहुयाद्व्रीहीन्पयोदध्याज्यसंयुतान्॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री स्वपरेष्टं प्रसाधयेत्। कदलीबीजपूराम्रफलैर्हुत्वा सहस्रकम्॥
द्वाविंशतिं ब्रह्मचारिविप्रान्सम्भोजयेदथ। एवं कृते महाभूतविषचौराद्युपद्रवाः॥
नश्यन्ति क्षणमात्रेण विद्वेषिग्रहदानवाः। अष्टोत्तरशतैर्वारि मन्त्रितं विषनाशनम्॥
रात्रौ नवशतं मन्त्रं जपेद्दशदिनावधि। यो नरस्तस्य नश्यन्ति राजशत्रूत्थभीतयः॥
अभिचारोत्थभूतोत्थज्वरे तन्मन्त्रितैर्जलैः। भस्मभिः सलिलैर्वापि ताडयेज्ज्वरिणः क्रुधा॥
दिनत्रयाज्ज्वरान्मुक्तः स सुखं लभते नरः। तन्मन्त्रितौषधं जग्ध्वा नीरोगो जायते ध्रुवम्॥
तन्मन्त्रितं पयः पीत्वा योद्धुं गच्छेन्मनुं जपन्। तज्जप्तभस्मलिप्ताङ्गः शस्त्रसङ्घैर्न बाध्यते॥
शस्त्रक्षतं व्रणः शोफो लूता स्फोटोऽपि भस्मना। त्रिमन्त्रितेन संस्पृष्टाः शुष्यन्त्यचिरतो नृणाम्॥
सूर्यास्तमयमारभ्य जपेत्सूर्य्योदयावधि। कीलकं भस्म चादाय सप्ताहावधिसंयुतः॥
निखनेद्भस्मकीलौ तौ विद्विषां द्वार्य्यलक्षितः। विद्वेषं मिथ आपन्नाः पलायन्तेऽरयोऽचिरात्॥

पुरश्चरण—इसका बारह सहस्र जप करने से पुरश्चरण होता है, जैसा कि कहा भी गया है—इस प्रकार ध्यान करके इस मन्त्र का बारह सहस्र जप एकाग्रतापूर्वक करना चाहिये। उसका दशांश (बारह सौ) पयोदधि-आज्य पदार्थों से हवन करना चाहिये। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। तदुपरान्त साधक अपने तथा पराये इष्ट कार्यों के लिये अनुष्ठान कर सकता है। केला, बिजौरा नीबू तथा आम के फलों से एक सहस्र होम करके बाईस ब्रह्मचारी विप्रों को भोजन कराने से महाभूत, विष, चौर, शत्रु, ग्रह, दानव आदि नष्ट होते हैं। इस मन्त्र के एक सौ आठ जप अभिमन्त्रित जल विषनाशक हो जाता है। रात्रि के समय इस द्वादशाक्षर हनुमत् मन्त्र को निरन्तर दश रात्रियों में जो जपता है, उस व्यक्ति का राजभय, शत्रुभय, अभिचारोत्पन्न, भूतज्वर इस मन्त्र के अभिमन्त्रित जल से नष्ट होते हैं। ज्वर को भस्म एवं जल से क्रोधित होकर ताडित करना चाहिये। ऐसा करने से तीन दिन में ज्वर से मुक्त होकर रोगी को आराम मिलता है। यदि इस मन्त्र से अभिमन्त्रित औषधि दी जाय तो उससे रोग नष्ट होकर निश्चित ही रोगी नीरोग हो जाता है। इससे अभिमन्त्रित जल पीकर तथा मन्त्रपूत भस्म को सर्वाङ्ग में लेपकर मन्त्र जपते हुए युद्ध में जाने पर सर्वाङ्ग में अस्त्र-शस्त्र का वेधन नहीं होता है। इस अभिमन्त्रित भस्म को शस्त्र का क्षत, व्रण, सूजन, लूता (मकड़ी आदि का विष), फोड़े आदि तीन बार लगाने से शीघ्र ही सूख जाते हैं। सूर्य के अस्त समय में आरम्भ करके सूर्योदय-पर्यन्त (रातभर) जप करे तथा इससे अभिमन्त्रित कील तथा भस्म को लेकर सात रात्रियों तक निरन्तर जप करता रहे। फिर अपने शत्रु के द्वार पर उस कील से खोदकर उसमें भस्म दबा दे। यह कार्य गुप्त रूप में करे, जिसे कोई देख न पाये तो उन शत्रुओं में आपस में ही द्वेष उत्पन्न हो जाता है तथा वे शीघ्र ही आपस में लड़कर उजड़ जाते हैं।

अभिमन्त्रितभस्माम्बु देहचन्दनसंयुतम्। खाद्यादि योजितं यस्मै दीयते स तु दासवत्॥
क्रूराश्च जन्तवोऽनेन भवन्ति विधिना वशाः। ईशानदिक्स्थले मूलभूतां कुशतरोः शुभाम्॥
अङ्गुष्ठमात्रां प्रतिमां प्रविधाय हनूमतः। प्राणसंस्थापनं कृत्वा सिन्दूरैः परिपूज्य च॥
गृहस्याभिमुखो द्वारे निखनेन्मन्त्रमुच्चरन्। भूताभिचारचौराग्निविषरोगनृपोद्भवाः ॥
सञ्जायन्ते गृहे तस्मिन्न कदाचिदुपद्रवाः। प्रत्यहं धनपुत्राद्यैरेधते तद्गृहं चिरम्॥
वश्यार्थे सर्षपैर्होमो विद्वेषे करवीरजैः। कुसुमैरिध्मकाष्ठैर्वा जीरकैर्मरिचैरपि॥
ज्वरे दूर्वागुडूचीभिर्दध्ना क्षीरेण वा घृतैः। शूले होमः कुबेराक्षैरेरण्डसमिधा तथा॥
तैलाक्ताभिश्च निर्गुण्डीसमिद्भिर्वा प्रयत्नतः। सौभाग्यं चन्दनैश्चन्द्रै रोचनैलालवङ्गकैः॥
सुगन्धपुष्पैर्वस्त्राद्यैस्तत्तद्धान्यैस्तदाप्तये । तत्पादरजसा राजीलवणाक्तेन मृत्यवे॥
किं बहूक्तैर्विषे व्याधौ शान्तौ मोहे च मारणे। विवादे स्तम्भने द्यूते भूतभीतौ च सङ्कटे॥
वश्ये युद्धे नृपद्वारे समरे चौरसङ्कटे। मन्त्रोऽयं साधितो दद्यादिष्टसिद्धिं ध्रुवं नृणाम्॥

इति द्वादशाक्षरश्रीहनुमन्मन्त्रपुरश्चरणम्।

श्रीहनुमन्मन्त्रपूजायन्त्रम्
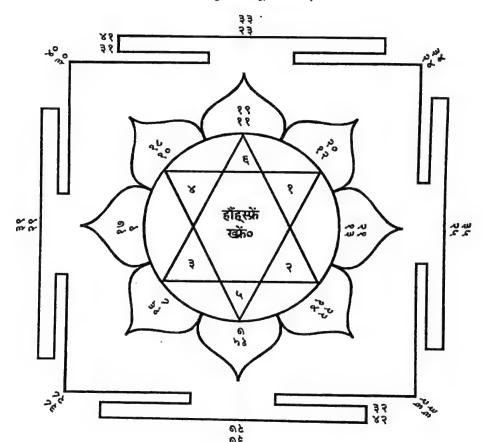
इस मन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म को चन्दन के साथ जल में मिलाकर स्वदेह में लगाकर तथा उसी को खाद्य पदार्थ में मिलाकर खिला दे तो उसे खाने वाला दास की भाँति सेवा करने लगता है। इस विधि से क्रूर जीव-जन्तु भी वश में हो जाते हैं। कुश की जड़, जो ईशान दिशा को गई हो, की अङ्गूठे प्रमाण की श्री हनुमान् जी की प्रतिमा बनवाकर या बनाकर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करके सिन्दूर से पूजा करे। उसे साध्य व्यक्ति के घर की ओर मुख करके उसके द्वार के सामने मन्त्र पढ़ते हुए खोदकर भूमि में गाड़ दे तो उस घर के सारे उपद्रव नष्ट हो जाते हैं। भूत-प्रेत-पिशाच, अभिचार, चौर, अग्नि, रोग आदि शान्त हो जाते हैं तथा फिर नहीं होते हैं। उस घर की उन्नति हो जाती है और प्रतिदिन धन-पुत्रादि बढ़ते चले जाते हैं।

वशीकरण कर्म के लिये इस मन्त्र के द्वारा सफेद सरसों का होम करना चाहिये। विद्वेषण के लिये लाल कनेर के फूलों-फलों एवं समिधाओं का होम करे एवं जीरे तथा काली मिर्च मिलाकर आहुति दे। ज्वरनाश के लिये दूब, गिलोय, दूध-दही अथवा घृत का होम करे। शूल रोग में इस मन्त्र से कुबेराक्ष (पाढल या लता करञ्ज) तथा ऐरण्ड की समिधाओं को तैल में आप्लावित कर हवन करे अथवा निर्गुण्डी की समिधाओं से प्रयत्नपूर्वक हवन करना चाहिये। इस मन्त्र से चन्दन, कपूर, गोरोचन, इलायची के द्वारा हवन करे। सुगन्ध पुष्प, वस्त्र तथा धान्यों की प्राप्ति के लिये भी इन द्रव्यों से हवन करना चाहिये। जिस पर मारण प्रयोग करना हो, उसके पैरों के नीचे की धूल लेकर उसमें नमक तथा राई मिलाकर होम करना चाहिये। अधिक क्या कहा जाय; व्याधि में, शान्ति में, मोहन में, मारण में, विवाद में, स्तम्भनकर्म में, जुवा खेलने में, भूत के भय में, सङ्कट में, वशीकरणहेतु, युद्ध में, राजद्वार पर, समर में, चौर सङ्कट में इस मन्त्र की साधना करने से तत्काल सफलता मिलती है।

विमर्श—मन्त्रमहोदधि में इस मन्त्र के और अधिक प्रयोग लिखे हैं, उन्हें वहीं देखना चाहिये।

अष्टादशाक्षरहनुमन्मन्त्रप्रयोगः

अथाष्टादशाक्षरहनुमन्मन्त्रप्रयोगस्तत्रैव—भूतशुद्ध्यादि श्रीकण्ठकलामातृकान्तौ न्यासः पूर्ववत्। मूलमन्त्रो यथा—'ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा' इत्यष्टादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य ईश्वर ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। हनुमान् देवता। हूं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः॥ ॐ ईश्वरऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ हनुमद्देवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ हूं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहाशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ आञ्जनेयाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ रुद्रमूर्त्तये तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ वायुपुत्राय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ रामदूताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ब्रह्मास्त्रनिवारणाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं च कृत्वा ध्यायेत्।

दहनतप्तसुवर्णसमप्रभं भयहरं हृदये विहिताञ्जलिम्।
श्रवणकुण्डलशोभिमुखाम्बुजं नमत वानरराजमिहाद्भुतम्॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पाद्याद्यैः पुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य पूर्ववदावरणपूजान्ते धूपादि-नीराजनान्तं सम्पाद्य स्तवेन स्तुत्वा जपं कुर्य्यात्।

अष्टादशाक्षर हनुमन्मन्त्र-प्रयोग—इस मन्त्र की सिद्धि के लिये पूर्व काण्डों में कथित भूतशुद्धि, श्रीकण्ठकला मातृकान्यास आदि की भाँति करे। 'ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा' यह अठारह अक्षरों वाला श्री हनुमान् जी का मूल मन्त्र है। इसके लिये मूल में लिखित 'अस्य मन्त्रस्य ईश्वरः ऋषिः' इत्यादि मन्त्र से विनियोग करने के बाद 'ॐ ईश्वर ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ

आञ्जनेयाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् 'ॐ आञ्जनेयाय हृदयाय नमः, ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा, ॐ वायुपुत्राय शिखायै वषट्, ॐ अग्निगर्भाय कवचाय हुम्, ॐ रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ब्रह्मास्त्र निवारणाय अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये।

तत्पश्चात् 'अग्नि में तपे हुए स्वर्ण के समान प्रभा वाले, भय को हरण करने वाले, हृदय में विहित अञ्जलियुक्त कानों में कुण्डल धारण किये शोभित मुखकमल वाले अद्भुत वानरराज का ध्यान करता हूँ।' इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त पीठ पर मूल मन्त्र से मूर्ति को प्रकल्पित करके पाद्य से लेकर पुष्पों तक उपचारों से पूजित कर पूर्व की भाँति आवरणपूजा कर फिर उसके अन्त में धूपादि नीराजनान्त कर्म सम्पादित करके स्तव से स्तुति करने के उपरान्त जप करना चाहिये।

अस्य पुरश्चरणमयुतमन्त्र जपः; तथा च—

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रान्दशांशं जुहुयात्तिलैः। वैष्णवे पूजयेत्पीठे पूर्ववत्कपिनायकम्॥
जितेन्द्रियो नक्तभोजी प्रत्यहं साष्टकं शतम्। जपित्वा क्षुद्ररोगेभ्यो मुच्यते दिवसत्रयात्॥
भूतप्रेतपिशाचादिनाशायैवं समाचरेत्। महारोगनिवृत्त्यै तु सहस्रं प्रत्यहं जपेत्॥
यत्ताशनोऽयुतं नित्यं जपन्ध्यायन्कपीश्वरम्। राक्षसौघं विनिघ्नन्तमचिराज्जयति द्विषम्॥
सुग्रीवेण समं रामं सन्दधानं स्मरन्कपिम्। प्रजाप्यायुतमेतस्य सन्धिं कुर्य्याद्विरुद्धयोः॥
लङ्कां दहन्तं तं ध्यायन्नयुतं प्रजपेन्मनुम्। शत्रूणां प्रदहेद्ग्रामानचिरादेव साधकः॥
प्रयाणसमये ध्यायन्हनूमन्तं मनुं जपन्। यो याति सोऽचिरात्स्वेष्टं साधयित्वा गृहं व्रजेत्॥
यः कपीशं सदा गेहे पूजयेज्जपतत्परः। आयुर्लक्ष्म्यौ प्रवर्द्धेते तस्य नश्यन्त्युपद्रवाः॥
शार्दूलतस्करादिभ्यो रक्षेन्मनुरयं स्मृतः। प्रस्वापकाले चौरेभ्यो दुष्टस्वप्नादपि ध्रुवम्॥

इत्यष्टादशाक्षरहनुमन्मन्त्रप्रयोगः।

पुरश्चरण—इस अष्टादशाक्षर हनुमान् मन्त्र का पुरश्चरण एक अयुत (दश सहस्र) मन्त्रों का है। जैसा कि कहा भी गया है—अयुत मन्त्रों का जप करके फिर उसका दशांश (एक सहस्र) तिलों से होम करे। पूर्व की भाँति कपिनायक हनुमान् जी की पूजा करे। जितेन्द्रिय नक्तभोजी रहकर प्रतिदिन एक सौ आठ मन्त्रों का जप करे तो तीन दिन के जप सें क्षुद्र रोगों से मुक्त हो जाता है। भूत-प्रेत-पिशाचादि के नाश के लिये भी यही उपाय करना चाहिये। महारोग की निवृत्ति के लिये प्रतिदिन एक सहस्र मन्त्र का जप करना चाहिये। जो प्रतिदिन अयुत संख्या में हनुमान् जी का ध्यान करते हुए मन्त्र जपता है, वह राक्षसों के समूह को नष्ट करता हुआ शीघ्र ही अपने वैरियों को परास्त कर देता है। सुग्रीव के साथ राम एवं हनुमान् जी का स्मरण करते हुए इस मन्त्र को अयुत संख्या में जप करके अपने विपक्षी से सन्धि करे तो दोनों पक्षों में मित्रता हो जाती है। लङ्का को जलाते हुए हनुमान् जी का ध्यान करते हुए इस मन्त्र का जप अयुत संख्या में करने से साधक शत्रुओं के ग्रामों को शीघ्र ही नष्ट कर देता है। प्रयाण (यात्रा) आरम्भ के समय श्री हनुमान् का स्मरण करते हुए इस मन्त्र को जपने से यात्रा सफल होती है और शीघ्र ही घर लौट आता है। जो इस मन्त्र का जप करते हुए श्री हनुमान् जी को अपने घ्नर में पूजता है, उसके आयु-लक्ष्मी शीघ ही बढ़ने लगती है तथा सभी उपद्रव नष्ट होते हैं। इसका जप चोर, डाकुओं से मनुष्य की रक्षा करता है। यदि सोते समय इस मन्त्र को जपा जाता है तो चोरों का डर नहीं रहता तथा बुरे स्वप्न नहीं आते हैं।

द्वादशाक्षरहनुमन्मन्त्रविधानम्

अथ तन्त्रसारोक्तद्वादशाक्षरहनुमन्मन्त्रविधानम्—

देव्युवाच—

शैवानि गाणपत्यानि शाक्तानि वैष्णवानि च। साधनानि च सौराणि चान्यानि यानि कानि च॥
श्रुतानि देवदेवेश त्वद्वक्त्रान्निःसृतानि च। किञ्चिदन्यत्तु देवानां साधनं यदि कथ्यताम्॥

तन्त्रसारोक्त हनुमद् द्वादशाक्षर मन्त्र-विधान—देवी ने कहा—हे देवदेवेश! आपके मुख से मैंने शैव, शाक्त, गाणपत्य, वैष्णव तथा सौर शास्त्रों के अनुसार जो कुछ भी अनेक साधन हैं, उनको सुना; अब आप कुछ अन्य देवताओं के साधन हों तो उन्हें भी कहिये।

शङ्कर उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय। हनुमत्साधनं पुण्यं महापातकनाशनम्॥
एतद्गुह्यतमं लोके शीघ्रसिद्धिकरं परम्। जयो यस्य प्रसादेन जितलोकत्रयो भवेत्॥
तत्साधनविधिं वक्ष्ये नृणां सिद्धिकरं द्रुतम्। वियत्सलवकं हनूमते च तदनन्तरम्।
रुद्रात्मकाय कवचं फडिति द्वादशाक्षरः॥
एतन्मन्त्रं समाख्यातं गोपनीयं प्रयत्नतः। तव स्नेहेन भक्त्या च दासोऽस्मि तव सुन्दरि॥
एतन्मन्त्रमर्जुनाय पुरा दत्तं तु शौरिणा। जपेन साधनं कृत्वा जितं सर्वं चराचरम्॥
नदीकूले विष्णुगेहे निर्जने पर्वते वने। एकाग्रचित्तमाधाय साधयेत्साधनं महत्॥

श्री शङ्कर जी बोले—सुनो देवि! अब मैं पुण्यदायक तथा महापातक-नाशक हनुमत्साधन कहता हूँ, अब आप उसे सावधानी से याद करो। यह लोक में गुह्यतम तथा शीघ्र ही परमसिद्धि देने वाला है; जिसकी प्रसन्नता से जय तथा तीनों लोकों में विजय होती है। उसकी साधन विधि कहता हूँ, जो मनुष्यों को सिद्धि देने वाली है। 'ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुँ फट्' यह मूल मन्त्र का स्वरूप है। यह द्वादशाक्षर मन्त्र गोपनीय है। हे सुन्दरि! तुम्हारी भक्ति के कारण यह मन्त्र तुम्हें बता रहा हूँ। प्राचीन काल में यह मन्त्र भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को दिया था, जिन्होंने इसे जपकर चराचर को साध लिया था। नदी किनारे, निर्जन स्थान में, निर्जन वन में, पर्वत पर एकाग्रचित्त से इसकी साधना करने से महान् फल मिलता है।

तत्र प्रयोगः—प्रातः स्नात्वा नदीतीरे वा विष्णुगेहे निर्जने स्थाने कुशासने उपविश्य मूलेन आचम्य प्राणानायम्य स्वकामनया सङ्कल्प्य भूतशुध्यादिश्रीकण्ठादिकलामातृकान्तन्यासं कृत्वा मूलमन्त्रेण षडङ्गन्यासं कुर्य्यात्। (मूलमन्त्र-स्वरूपं यथा—) 'हं हनूमते रुद्रात्मकाय हुं फट्। इति द्वादशवर्णात्मको मन्त्रः। ॐ हं हनूमते रुद्रात्मकाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ हं हनूमते रुद्रात्मकाय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ हं हनूमते रुद्रात्मकाय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ हं हनूमते रुद्रात्मकाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ हं हनूमते रुद्रात्मकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ हं हनूमते रुद्रात्मकाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तं रावणं प्रति। तिष्ठतिष्ठ रणे दुष्ट घोररावं समुत्सृजन्॥
लाक्षारक्तारुणं रौद्रं कालान्तकयमोपमम्। ज्वलदग्निसमं नेत्रं सूर्यकोटिसमप्रभम्॥
अङ्गदाद्यैर्महावीरैर्वेष्टितं रुद्ररूपिणम्।

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्ते वैष्णवे पीठे यन्त्रं विलिखेत्। तद्यथा—

ताम्रपात्रे ततः पद्ममष्टपत्रं सकेसरम्। रक्तचन्दनघृष्टेन लिखेत्ताम्रशलाकया॥
कर्णिकायां लिखेन्मन्त्रं तत्रावाह्य कपिप्रभुम्। कर्णिकायां हनूमन्तं ध्यात्वा पाद्यादिभिस्ततः॥

(पूजयेदिति शेषः) एवं यन्त्रं विलिख्य तन्मध्ये मूलमन्त्रं लिखित्वा तत्र मूलेन श्रीहनुमन्तमावाह्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च मूलेन पूर्ववत् हृदयादिषडङ्गपूजां कुर्यात्। तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ सुग्रीवाय नमः॥ १॥ ॐ लक्ष्मणाय नमः॥ २॥ ॐ अङ्गदाय नमः॥ ३॥ ॐ नलाय नमः॥ ४॥ ॐ नीलाय नमः॥ ५॥ ॐ जाम्बवते नमः॥ ६॥ ॐ कुमुदाय नमः॥ ७॥ ॐ केसरिणे नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततो देवदक्षिणे—ॐ पवनाय नमः॥ १॥ (वामभागे) ॐ अञ्जनायै नमः॥ २॥ इति पूजयेत्। ततो दलाग्रेषु—पूर्वोक्ताष्ट- कपिभ्यः पुष्पाञ्जल्यष्टकं तत्तन्नाममन्त्रेण दत्त्वा तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिषु इन्द्रादिदशदिक्पालान्सम्पूज्य तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तैरुपचारैः पूजां कृत्वा रामं ससीतं ध्यात्वा जपं कुर्यात्।

प्रयोग—प्रातःकाल स्नान कर नदी किनारे कुशासन पर बैठकर मूल मन्त्र से आचमन कर प्राणायाम करके अपनी कामना के अनुसार सङ्कल्प करके भूतशुद्ध्यादि, श्रीकण्ठकलान्यास तथा कलामातृकान्यास के मूल मन्त्र से षडङ्ग न्यास करके फिर 'ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। तदनन्तर 'ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय हृदयाय नमः, ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय शिरसे स्वाहा, ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय शिखायै वषट्, ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय कवचाय हुम्, ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ हं हनुमते रुद्रात्मकाय अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से षडङ्गन्यास करना चाहिये।

न्यासोपरान्त 'महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तो रावणं प्रति। तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट घोररावं समुत्सृजन्॥ लाक्षारक्तारुणं रौद्रं कालान्तकयमोपमम्। ज्वलदग्निसमं नेत्रं सूर्यकोटिसमप्रभम्॥ अङ्गदाद्यैर्महावीरैर्वेष्टितम् रुद्ररूपिणम्। ध्यायामि श्रीहनूमन्तं सर्वापद् सुविनाशनम्॥' इस मन्त्र से ध्यान करना चाहिये। फिर मानसोपचारों से पूजन करके पूर्वोक्त वैष्णव पीठ पर यन्त्र को लिखे। वह इस प्रकार से—ताम्रपात्र में अष्टदल कमल केसरसहित बनाये। उसे लालचन्दन घिसकर ताम्रशलाका से लिखना चाहिये। कर्णिका में मन्त्र लिखकर वहाँ कपीश का आवाहन कर कर्णिका में श्री हनुमान् का ध्यान करके पाद्यादि से उनका पूजन करे। इस प्रकार यन्त्र लिखकर उसके मध्य में मूल मन्त्र लिखकर तथा मूल मन्त्र से ही श्री हनुमान् का आवाहन कर पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूजा कर फिर आवरण-पूजा करे।

आवरण-पूजा—षट्कोण में आग्नेयादि कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में मूल मन्त्र से पूर्व की भाँति हृदयादि षडङ्ग पूजा करे। फिर बाहर अष्टदलों में 'ॐ सुग्रीवाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर देव के दक्षिण में 'ॐ पवनाय नमः' तथा वामभाग में 'ॐ अञ्जनायै नमः' इस प्रकार पूजन करे। फिर दलाग्रों में पूर्वोक्त आठ कपियों के लिये पुष्पाञ्जलि अष्टक उनके नाममन्त्रों से देकर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करके उसके बाहर उनके वज्रादि आयुधों की भी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार आवरण-पूजा करके धूपादि नीराजनान्त उपचारों से पूजन कर राम का सीतासहित ध्यान कर जप करना चाहिये।

अस्य पुरश्चरणं लक्षमन्त्रजपः। जपान्ते पूर्वोक्तद्रव्यैर्दशांशहोमं कृत्वा तत्तद्दशांशेन तर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि च कुर्यात्। तथा च—

ध्यात्वा जपेन्मन्त्रराजं लक्षं यावत्तु साधकः। लक्षान्तदिवसं प्राप्य कुर्याच्च पूजनं महत्॥
एकाग्रशुद्धमनसा तस्मिन्पवननन्दने। दिवा रात्रौ जपं कुर्याद्यावत्सन्दर्शनं भवेत्॥

सुदृढं साधकं मत्वा निशीथे पवनात्मजः। सुप्रसन्नस्ततो भूत्वा प्रयाति साधकाग्रतः॥
यथेप्सितं वरं दत्त्वा साधकाय कपिप्रभुः। वरं लब्ध्वा साधकेन्द्रो विहरेदात्मनः सुखैः॥
एतद्धि साधनं पुण्यं देवानामपि दुर्लभम्। तव स्नेहात्समाख्यातं भक्तासि मयि पार्वति॥

इति गारुडे तन्त्रे द्वादशाक्षरहनुमत्कल्पं समाप्तम्।

पुरश्चरण—इसका पुरश्चरण एक लाख मन्त्रों से होता है। जप पूर्ण होने पर पूर्वोक्त द्रव्यों से दशांश होम करके तद् दशांश तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिये। जैसा कि कहा भी गया है—ध्यानोपरान्त इस मन्त्रराज का एक लाख की संख्या पूर्ण होने तक जप करना चाहिये। जिस दिन एक लाख मन्त्रजप पूरा हो, उस दिन महत्पूजन करे। पवनपुत्र के जब तक दर्शन न हों तब तक एकाग्र मन से उनका ध्यान करते हुए जप करना चाहिये। जप दिन-रात करता रहे। इस प्रकार साधक को सुदृढ समझकर अर्धरात्रि को प्रसन्न होकर साधक के सामने जाते हैं। वे कपीश साधक को यथेच्छित वर देकर लौटते हैं। साधक अभीप्सित वर पाकर आत्मसुखपूर्वक विहार करे। यह पुण्य साधन देवताओं को भी दुर्लभ है। हे पार्वति! तुम मेरी भक्त हो अतः मैंने स्नेहपूर्वक यह साधन तुम्हें बताया है।

दशाक्षरमन्त्रवीरसाधनप्रयोगः

मन्त्रो यथा—'हं पवननन्दनाय स्वाहा' इति दशाक्षरो मन्त्रः।

ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय कृतनित्यक्रियो द्विजः। गत्वा नदीं ततः स्नात्वा तीर्थमावाह्य चाम्भसि॥
मूलमन्त्रं ततो जप्त्वा सिञ्चेदादित्यसंख्यया। अथो वासः परिधाय गङ्गातीरेऽथवा गृहे॥

तत्र प्रयोगः—कुशासने उपविश्य मूलेनाचम्य प्राणानायम्य 'ॐ आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ईं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ऊं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ऐं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ एवं हृदयादिन्यासः। ततः अकारादिवर्णानुच्चरन् वामनासापुटेन वायुं पूरयेत्। ककारादिमकारान्तं पञ्चवर्गेण कुम्भयेत्। यकारादिक्षकारान्तवर्णैर्वायुं च रेचयेत्। एवं वारत्रयं कृत्वा मन्त्रवर्णैरङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ हं पवननन्दनाय स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ हं पवननन्दनाय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ हं पवननन्दनाय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ हं पवननन्दनाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ हं पवननन्दनाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ हं पवननन्दनाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्यात्। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्।

ध्यायेद्रणे हनूमन्तं कपिकोटिसमन्वितम्। धावन्तं रावणं जेतुं दृष्ट्वा सत्वरमुत्थितम्॥
लक्ष्मणं च महावीरं पतितं रणभूतले। गुरुं च क्रोधमुत्पाद्य गृहीत्वा गुरुपर्वतम्॥
हाहाकारैः सदर्पैश्च कम्पयन्तं जगत्त्रयम्। आब्रह्माण्डं समाव्याप्य कृत्वा भीमं कलेवरम्॥

इति ध्यात्वा षट्सहस्त्रं जपेत्। सप्तदिवसे दिवा रात्रिं च व्याप्य जपेत्। सप्तम्यां रात्रौ महाभयं दत्त्वा त्रिभागशेषासु निशासु नियतमा गच्छति साधको यदि मायां तरति भीतो न भवति तदेप्सितं वरं प्राप्नोति—

विद्यां वापि धनं वापि राज्यं वा शत्रुनिग्रहम्। तत्क्षणादेव चाप्नोति सत्यं सत्यं सुनिश्चितम्॥

इति दशाक्षरमन्त्रप्रयोगः।

दशाक्षर मन्त्र वीरसाधन-प्रयोग—'हं पवननन्दनाय स्वाहा' यह दश अक्षरों का मन्त्र है। द्विज प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में जागकर नित्यक्रिया करके नदी में जाकर तीर्थों का आवाहन कर उस जल में स्नान करे। वहाँ मूल मन्त्र (हं पवननन्दनाय स्वाहा) का जप करके बारह बार डुबकी लगाये। फिर वस्त्र पहिनकर गङ्गातीर में अथवा

घर में बैठकर प्रयोग करे। वहाँ कुशासन पर बैठकर मूल मन्त्र से आचमन करके प्राणायाम कर 'ॐ आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मूलोक्त मन्त्रों से करन्यास करे। फिर 'ॐ आं हृदयाय नमः, ॐ ईं शिरसे स्वाहा, ॐ ॐ शिखायै वषट्, ॐ ऐं कवचाय हुम्, ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ अः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये। इसके पूर्व प्राणायाम तथा मन्त्रवर्णन्यास भी कर लेना चाहिये। आगे अकारादि द्वादश वर्णों का उच्चारण कर वामनासा में वायु का पूरण करे। फिर ककारादि मकारान्त पच्चीस वर्णों का उच्चारण कर कुम्भक प्राणायाम करे। फिर यकार से लेकर क्षकारपर्यन्त नौ अक्षरों का उच्चारण कर रेचक प्राणायाम करना चाहिये। इस प्रकार तीन बार प्राणायाम करे। फिर मन्त्र के दश अक्षरों से न्यास करे।

तदनन्तर श्री हनुमान् जी महाराज का करोड़ों कपियों के साथ रावण को जीतने के लिये महावीर लक्ष्मण को रणभूमि में गिरते देखकर भारी क्रोध करके भारी पर्वत को उचाटकर हाहाकार तथा दर्प के साथ तीनों लोकों को कम्पायमान करते हुए ब्रह्माण्डव्यापी भीमकाय कलेवर के साथ दौड़ते हुए ध्यान करे।

पुरश्चरण—इसका छः सहस्र जप प्रतिदिन करे। इस प्रकार छः दिवस प्रतिदिन जप करने के उपरान्त सातवें दिन इसे दिन-रात जपे। सप्तमी की रात में साधक को बहुत डर लगेगा। यदि वह उस माया से भयभीत न हुआ तो उसे अभीष्ट वर की प्राप्ति होती है। उसे विद्या, धन, शत्रुविजय तत्काल ही मिल जाते हैं। यह निश्चित है।

एकमुखीहनुमत्कवचम्

नारद उवाच—

एकदा सुखमासीनं शङ्करं लोकशङ्करम्। पप्रच्छ गिरिजा कान्तं कर्पूरधवलं शिवम्॥

एकमुखी हनुमत्कवच—श्री नारदजी बोले—एक समय लोक का कल्याण करने वाली श्री शङ्करजी सुखपूर्वक बैठे थे, तब पार्वतीजी ने कर्पूर की भाँति धवल अपने पति शिव से पूछा।

श्रीपार्वत्युवाच—

भगवन्देवदेवेश लोकनाथ जगत्प्रभो। शोकाकुलानां लोकानां केन रक्षा भवेद्भव॥

सङ्ग्रामे सङ्कटे घोरे भूतप्रेतादिके भये। दुःखदावाग्निसन्तप्तचेतसां दुःखभागिनाम्॥

श्री पार्वती ने कहा—हे भगवन्! देवाधिदेव, लोकनाथ, जगत्प्रभो! शोकाकुल मनुष्यों की रक्षा किसके द्वारा है। संग्राम में, सङ्कट में, घोर भूत-प्रेतादि के भय में, जो दुःखरूपी दावाग्नि से सन्तप्त चित्त वाले, दुःख भोगने वाले मनुष्य है, उनका त्राण कैसे हो?

ईश्वर उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया। विभीषणाय रामेण कथितं कवचं पुरा॥

कवचं कपिनाथस्य वायुपुत्रस्य धीमतः। गुह्याद्गुह्यं प्रवक्ष्यामि विशेषात्तत्र सुन्दरि॥

ईश्वर बोले—हे देवि! लोकों के हित के लिये सुनो। प्राचीन काल में विभीषण के लिये श्री रामजी द्वारा कवच बताया गया था। हे सुन्दरि! उस वायुपुत्र कपिनाथ के गोपनीय से भी गोपनीय कवच को तुम्हें बता रहा हूँ।

ॐ अस्य श्रीहनुमत्कवचस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः। श्रीवीरो हनुमान्परमात्मा देवता। अनुष्टुपछन्दः। मारुतात्मज इति बीजम्। अञ्जनीसूनुरिति शक्तिः। लक्ष्मणप्राणदाता इति जीवः। श्रीरामभक्तिरिति कवचम्। लङ्काप्रदाहक इति कीलकम्। मम सकलकार्यसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ ऐं श्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं

तर्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ इति करन्यासः । ॐ अञ्जनीसूनवे नमो हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ रुद्रमूर्तये नमः शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ वातात्मजाय नमः शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ श्रीरामभक्तिसहिताय नमः कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ ॐ वज्रकवचाय नमो नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ ब्रह्मास्त्रनिवारणाय नमः अस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति हृदयादिन्यासः ।

तदनन्तर मूलोक्त 'ॐ अस्य श्री हनुमत् कवचस्य' इत्यादि मन्त्र से विनयोग करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर 'ॐ अञ्जनीसूनवे नमो हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे।

अथ ध्यानम्—

ध्यायेद्बालदिवाकरद्युतिनिभं देवारिदर्पापहं देवेन्द्रप्रमुखं प्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा।
सुग्रीवादिसमस्तवानरयुतं सुव्यक्ततत्त्वप्रियं संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालङ्कृतम् ॥

उद्यन्मार्तण्डकोटिप्रकटरुचियुतं चारुवीरासनस्थं मौञ्जीयज्ञोपवीताभरणरुचिशिखाशोभितं कुण्डलाढ्यम्।
भक्तानामिष्टदानप्रवणमनुदिनं वेदनादप्रमोदं ध्यायेद्देवं विधेयं प्लवगकुलपतिं गोष्पदीभूतवार्धिम् ॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्। वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥
वज्राङ्गं पिङ्गकेशाढ्यं स्वर्णकुण्डलमण्डितम्। उद्यद्दक्षिणदोर्दण्डं हनुमन्तं विचिन्तये ॥
स्फटिकाभं स्वर्णकान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम्। कुण्डलद्वयसंशोभिमुखाम्भोजं हरिं भजे ॥
उद्यदादित्यसङ्काशमुदारभुजविक्रमम्। कन्दर्पकोटिलावण्यं सर्वविद्याविशारदम् ॥
श्रीरामहृदयानन्दं भक्तकल्पमहीरुहम्। अभयं वरदं दोर्भ्यां कलये मारुतात्मजम् ॥

ध्यानादि का भावार्थ—बालसूर्य के समान द्युति वाले, राक्षसों के दर्प को नष्ट करने वाले, देवेन्द्रप्रमुखादि द्वारा यश की प्रशस्तियुक्त होकर अपनी कान्ति से प्रकाशित, सुग्रीवादि समस्त वानरों सहित, सुव्यक्त तत्वप्रिय, लाल नेत्रों वाले पवनपुत्र पीताम्बर से अलंकृत का ध्यान करे। भुजविक्रम, करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश प्रकट करने वाले, चारु, वीरासन पर स्थित, मौञ्जी, यज्ञोपवीत के सुन्दर आभरण से शोभित शिखा वाले, कुण्डलों से युक्त, भक्तों को अभीष्ट दान में प्रवण, उनकी वेदना से अप्रसन्नता का अनुभव करने वाले, प्लवगकुल के पति, समुद्र को गोपद के समान लाँघने वाले, मन की गति के समान गति वाले, वायु के समान वेग वाले, जितेन्द्रिय, बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, वायु के पुत्र, वानरयूथ में मुख्य श्री रामदूत हनुमान् की शरण में जाता हूँ। वज्र के समान शरीर वाले, पिङ्गल केशों से युक्त, स्वर्णकुण्डलों से मण्डित, दक्षिण की ओर जाते हुए धनुषाकार भुजाओं वाले हनुमान् का चिन्तन करे। स्फटिकाभ स्वर्णकान्ति से युक्त दो भुजाओं वाले, कृताञ्जलि, दो कुण्डलों से शोभित कमलमुख वाले हरि (वानर) को भजना चाहिये। सूर्य के समान उदार भुजविक्रम वाले, करोड़ों कामदेवों के समान सुन्दर, सभी विद्याओं में विशारद, श्री रामजी के हृदयानन्द, भक्तों के लिये कल्पतरु के समान, अभय एवं वरद मुद्राओं से युक्त मारुतिनन्दन की वन्दना करे।

अपराजित नमस्तेऽस्तु नमस्ते रामपूजित। प्रस्थानं च करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा ॥
यो वारान्निधिमल्पपल्वलमिवोल्लङ्घ्य प्रतापान्वितो वैदेहीघनशोकतापहरणो वैकुण्ठभक्तप्रियः।
अक्षाद्यूर्जितराक्षसेश्वरसहादर्पापहारी रणे सोऽयं वानरपुङ्गवोऽवतु सदा चास्मन्समीरात्मजः ॥
वज्राङ्गं पिङ्गनेत्रं कनकमयलसत्कुण्डलाक्रान्तगण्डं सर्वविद्याधिनाथं करतलविधृतं पूर्णकुम्भं दृढं च।
भक्ताभीष्टाधिकारं विदधति च सदा सुप्रसन्नं कपीन्द्रं त्रैलोक्यत्राणकारं सकलभुवनगं रामदूतं नमामि ॥

उद्यल्लाङ्गूलकेशप्रचलजलधरं भीममूर्तिं कपीन्द्रं वन्दे रामाङ्घ्रिपद्मभ्रमरपरिवृतं सत्त्वसारं प्रसन्नं॥ वामे करे वैरिभयं वहन्तं शैलं च धत्ते निजकण्ठलग्नम्। उद्यानमुत्थाय सुवर्णवर्णं भजे ज्वलत्कुण्डलरामदूतम्॥ पद्मरागमणिकुण्डलत्विषा पाटलीकृतकपोलमण्डलम्। दिव्यगेहकदलीवनान्तरे भावयामि पवमाननन्दनम्॥

ॐ ऐं ह्रीं हनुमते रामदूताय शाकिनीडाकिनीविध्वंसनाय किलकिल वामकरेण निषण्णाय हनुमद्देवाय ॐ ह्रींश्रीं ह्रौंह्रां स्वाहा। अथ मन्त्रः—नमो भगवते हनुमदाख्यरुद्राय सर्वदुष्टजनमुखस्तम्भनं कुरकुरु ह्रां ह्रीं ह्रूं ठंठंठंहुंफट्स्वाहा। ॐ नमो हनुमते अञ्जनीगर्भसम्भूताय रामलक्ष्मणानन्दकराय कपिसैन्यप्रकाशनाय पर्वतोत्पाटनाय सुग्रीवामात्याय रणपरोद्घाटनाय कुमारब्रह्मचारिणे गम्भीरभीमशब्दोदयाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं सर्वदुष्टनिवारणाय स्वाहा। ॐ नमो हनुमते सर्वग्रहान् भूतभविष्यद्वर्तमानान् दूरस्थान् समीपस्थान् सर्वकालदुष्टबुद्धीमुच्चाटयोच्चाटय परबलानि क्षोभयक्षोभय मम सर्वकार्याणि साधयसाधय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं फट् देहिदेहि स्वाहा शिवं सिद्धिं ह्रूं ह्रीं ह्रां स्वाहा ॐ नमो हनुमते परकृतयन्त्रमन्त्रपराहङ्कारभूतप्रेतपिशाचपरदृष्टिसर्वविघ्नदुर्जनचेटकविद्यासर्वग्रहभयं निवारय २ वध २ पच २ दल २ विचुलु २ किलु २ सर्वयन्त्राणि कुरुष्व वाचं ॐ फट् स्वाहा। ॐ नमो हनुमते पाहि २ एहि २ सर्वग्रहभूतानां शाकिनीडाकिनीनां विषमदुष्टानां सर्वविषयान् आकर्षय२मर्दय२छेदय २ अपमृत्युं मम उपशोषय २ ज्वल २ प्रज्वल २ भूतमण्डलं पिशाचमण्डलं निरासय २ भूतज्वरप्रेतज्वरचतुर्थज्वरविषमज्वरमहेशज्वरं छिन्धि २ भिन्धि २ अक्षिशूलपक्ष-शूलशिरोभ्यन्तरशूलगुल्मशूलपितृशूलब्रह्मराक्षसकुलपरबलनागकुलविषनिर्विषफट् ॐ सर्वदुष्टग्रहनिवारणाय स्वाहा। ॐ नमो हनुमते पवनपुत्राय वैश्वानरमुखाय पापदृष्टिघ्नोरदृष्टिहनुमदाज्ञास्फुरेत्स्वाहा।

हे अपराजित! आपको प्रणाम है। हे रामपूजित! आपको प्रणाम है। मैं अब (यात्रार्थ) प्रस्थान करता हूँ, मुझे सदा सफलता मिलती रहे। जिन्होंने समुद्र को पल्वल (पोखर) की भाँति लाँघा, प्रतापान्वित होकर वैदेही के शोकरूपी बादलों के लिये सूर्य के समान हैं, वैकुण्ठ के भक्तों के प्रिय हैं, जो राक्षसों के दर्प का हरण करने वाले हैं, वे वानरपुङ्गव समीरात्मज सदैव मेरी रक्षा करें। वज्राङ्ग, पिङ्गनेत्र, स्वर्णकुण्डल से शोभित कपोलों वाले, सर्वविद्या के स्वामी, हाथ में पूर्ण कुम्भधारी, सुदृढ़ भक्तों को अभीष्ट अधिकार देने वाले, सदैव सुप्रसन्न, कपीन्द्र, त्रैलोक्यत्राणकारक, सम्पूर्ण भुवनों में गमन करने वाले रामदूत को नमस्कार करता हूँ। पूँछ को उठाये हुए, फहराते हुए बालों वाले, भीमरूप कपीन्द्र, राम के चरणकमलों में भ्रमर की भाँति मँडराने वाले, सत्वसार प्रसन्न की वन्दना करता हूँ। वाम हस्त में वैरियों के लिये भयदायक पर्वत को धारण किये, सुवर्ण वर्ण वाले ज्वलत्कुण्डलों वाले श्री रामदूत को भजता हूँ। जिनका कपोलमण्डल पद्मराग मणि के कुण्डलों की छाया से पाटलवर्ण का हो रहा है, जो कदलीवन के दिव्य गृह में निवास करते हैं, उन पवमाननन्दन को भजता हूँ। 'ॐ ऐं ह्रीं रामदूत; जो कि शाकिनी, डाकिनी का विध्वंस करने के लिये वाम कर से किलकिल शब्द के साथ निषण्ण हैं, उन हनुमद्देव के लिये ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां स्वाहा'। 'नमो भगवते' से लेकर मदाज्ञास्फुरेत् स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र है।

श्रीराम उवाच—

हनुमान्पूर्वतः पातु दक्षिणे पवनात्मजः। पातु प्रतीच्यां रक्षोघ्नः पातु सागरपारगः॥
उदीच्यामूर्ध्वगः पातु केसरिप्रियनन्दनः। अधस्ताद्विष्णुभक्तस्तु पातु मध्यं च पावनिः॥
अवान्तरदिशः पातु सीताशोकविनाशनः। लङ्काविदाहकः पातु सर्वापद्भ्यो निरन्तरम्॥
सुग्रीवसचिवः पातु मस्तकं वायुनन्दनः। भालं पातु महावीरो भ्रुवोर्मध्ये निरन्तरम्॥
नेत्रे छायापहारी च पातु नः प्लवगेश्वरः। कपोलौ कर्णमूले च पातु श्रीरामकिङ्करः॥

नासाग्रमञ्जनीसूनुः पातु वक्त्रं हरीश्वरः। वाचं रुद्रप्रियः पातु जिह्वां पिङ्गललोचनः॥
पातु दन्तान्फाल्गुनेष्टश्चिबुकं दैत्यपादहा। पातु कण्ठं च दैत्यारिः स्कन्धौ पातु सुरार्चितः॥
भुजौ पातु महातेजाः करौ तु चरणायुधः। नखान्नखायुधः पातु कुक्षिं पातु कपीश्वरः॥
वक्षो मुद्रापहारी च पातु पार्श्वे भुजायुधः। लङ्काविभञ्जनः पातु पृष्ठदेशे निरन्तरम्॥
नाभिं च रामदूतस्तु कटिं पात्वनिलात्मजः। गुह्यं पातु महाप्राज्ञो लिङ्गं पातु शिवप्रियः॥
ऊरू च जानुनी पातु लङ्काप्रासादभञ्जनः। जङ्घे पातु कपिश्रेष्ठो गुल्फौ पातु महाबलः॥
अचलोद्धारकः पातु पादौ भास्करसन्निभः। अङ्गान्यमितसत्त्वाढ्यः पातु पादाङ्गुलीस्तथा॥
सर्वाङ्गानि महाशूरः पातु रोमाणि चात्मवान्।

श्रीरामजी बोले—हनुमान् पूर्व में रक्षा करें। दक्षिण में पवनात्मज रक्षा करें। पश्चिम में रक्षोघ्न रक्षा करें, जो सागर पार जानेवाले हैं। उत्तर में केसरि के प्रियपुत्र ऊर्ध्वग रक्षा करें। नीचे विष्णुभक्त रक्षा करें तथा मध्य में पावनि रक्षा करें। अवान्तर दिशाओं में सीताशोकविनाशन रक्षा करें। सभी आपदाओं से लङ्काविदाहक निरन्तर रक्षा करें। सुग्रीव के सचिव वायुनन्दन मस्तक की रक्षा करें। महावीर भाल की रक्षा निरन्तर करते रहें। नेत्रों की रक्षा छायापहारी करें। प्लवगेश्वर हमारी रक्षा करें। श्रीरामकिङ्कर कपोल तथा कर्णमूल की रक्षा करें। अञ्जनीपुत्र नासाग्र की रक्षा करें। हरीश्वर मुख की रक्षा करें। वाणी की रक्षा रुद्रप्रिय करें। जिह्वा की रक्षा पिङ्गलोचन करें। फाल्गुनेष्ट दाँतों की तथा चिबुक की रक्षा दैत्यपादहा करें। दैत्यारि कण्ठ की रक्षा करें। कन्धों की रक्षा सुरार्चित करें। महातेजा भुजाओं की रक्षा करें। चरणायुध हाथों की रक्षा करें। नखायुध नखों की रक्षा करें तथा कपीश्वर कुक्षि की रक्षा करें। मुद्रापहारी वक्ष की रक्षा करें तथा भुजायुध पार्श्वों की रक्षा करें। लङ्का विभञ्जन पृष्ठदेश की रक्षा निरन्तर करते रहें। रामदूत नाभि की रक्षा करें एवं अनिलात्मज कटि की रक्षा करें। कपिश्रेष्ठ जङ्घाओं की रक्षा करें तथा महाबल गुल्फों की रक्षा करें। अचलोद्धारक, जो कि सूर्य के समान हैं, पैरों की रक्षा करें। अमित सत्त्वाढ्य अङ्गों की रक्षा करें तथा पादाङ्गुलियों की रक्षा करें। महाशूर सर्वाङ्गों की रक्षा करें। आत्मवान् रोमों की रक्षा करें।

हनुमत्कवचं यस्तु पठेद्विद्वान् विचक्षणः। स एव पुरुषश्रेष्ठो भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति॥
त्रिकालमेककालं वा पठेन्मासत्रयं सदा। सर्वान् रिपून्क्षणाज्जित्वा स पुमान् श्रियमाप्नुयात्॥
मध्यरात्रे जले स्थित्वा सप्तवारं पठेद्यदि। क्षयापस्मारकुष्ठादितापज्वरनिवारणम्॥
अश्वत्थमूलेऽर्कवारे स्थित्वा पठति यः पुमान्। अचलां श्रियमाप्नोति सङ्ग्रामे विजयं तथा॥
लिखित्वा पूजयेद्यस्तु सर्वत्र विजयी भवेत्। यः करे धारयेन्नित्यं स पुमाञ्छ्रियमाप्नुयात्॥

जो विचक्षण विद्वान् हनुमत्कवच पढ़ता है, वह पुरुषश्रेष्ठ भुक्ति तथा मुक्ति को प्राप्त करता है। जो तीनों कालों (प्रातः, मध्यम, सायं) में इसे पढ़ता है अथवा एक काल में ही पढ़ता है, वह अपने सभी शत्रुओं को जीतकर लक्ष्मी को प्राप्त करता है। अर्धरात्रि के समय जल में स्थित होकर यदि इस (एकमुखी हनुमत् कवच) का सात बार पाठ करे तो क्षय, अपस्मार, कुष्ठ आदि तथा ज्वर आदि को दूर करता है। यदि पीपल वृक्ष की जड़ में बैठकर रविवार के दिन मनुष्य इसका पाठ करता है तो उसे संग्राम में विजय तथा स्थिर लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। जो इसे लिखकर पूजता है, वह सर्वत्र विजयी होता है। जो इसे लिखकर ताबीज में रखकर हाथ में बाँधता है, वह व्यक्ति लक्ष्मी को प्राप्त करता है।

विवादे द्यूतकाले च द्यूते राजकुले रणे। दशवारं पठेद्रात्रौ मिताहारो जितेन्द्रियः॥
विजयं लभते लोके मानुषेषु नराधिपः। भूतप्रेतमहादुर्गे रणे सागरसम्प्लवे॥

सिंहव्याघ्रभये चोग्रे शरशस्त्रास्त्रपातने। शृङ्खलाबन्धने चैव कारागृहनियन्त्रणे॥
कायस्तोभे वह्निचक्रे क्षेत्रे घोरे सुदारुणे। शोके महारणे चैव ब्रह्मग्रहविनाशनम्॥
सर्वदा तु पठेन्नित्यं जयमाप्नोत्यसंशयम्। भूर्जे वा वसने रक्ते क्षौमे वा तालपत्रके॥
त्रिगन्धेनाथ मस्यैव विलिख्य धारयेन्नरः। पञ्चसप्तत्रिलोहैर्वा गोपितं कवचं शुभम्॥
गले कट्यां बाहुमूले कण्ठे शिरसि धारयेत्। सर्वान्कामानवाप्नोति सत्यं श्रीरामभाषितम्॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे नारदागस्त्यसंवादे श्रीरामप्रोक्तं हनुमत्कवचं सम्पूर्णम्॥

जो विवाद में, द्यूतक्रीड़ा के समय, राजकुल से युद्ध में, रात्रि के समय दश बार पढ़कर मिताहार तथा जितेन्द्रिय होकर रहता है। उस राजा को लोक में मनुष्यों पर विजय मिलती है। भूत-प्रेत महादुर्गम स्थान में, युद्ध में सागर पर यात्रा करने में, सिंह व्याघ्र के भय में, बाण आदि अस्त्र-शस्त्र के पातन काल में, शृङ्खलाओं (बेड़ियों) में जकड़ जाने पर कारागार के नियन्त्रण में, कायस्तोभ (शरीर के जकड़ जाने पर) में, अग्नि से घिरने पर (गोलीबारी, क्रमबारी के समय) दारुण युद्धक्षेत्र में, शोक में, महारण में इसे पढ़ना चाहिये। यह ब्रह्मग्रह-विनाशक है। इसे सदैव पढ़ने से निःसन्देह विजय प्राप्त होती है। भोजपत्र अथा लालवस्त्र में, अलसी के वस्त्र में अथवा तालपत्र पर इस कवच को त्रिगन्ध से अथवा स्याही लिखकर इसे पञ्चधातु, सप्तधातु या त्रिधातु के ताबीज में रखकर धारण करे तो शुभफल होता है। इसे गले, कमर, बाहुमूल, कण्ठ अथवा सिर में धारण करे, तो उसके सभी कार्य सद्ध होते हैं। यह श्रीराम के कथन से सत्य है।

श्री हनुमद् द्वादशाक्षर मन्त्रपुरश्चरण का संख्यान		
पुरश्चरण के अङ्ग	अङ्गों का परस्पर गणितीय अनुपात	संख्या
१. जप	एक	बारह सहस्र जप
२. होम	$\frac{१}{१०}$	बारह सौ
३. तर्पण	$\frac{१}{१००}$	एक सौ बीस
४. मार्जन	$\frac{१}{१०००}$	बारह
५. ब्राह्मणभोजन	$\frac{१}{१०,०००}$	दो

अष्टादशाक्षर हनुमन् मन्त्र पुरश्चरण का संख्यान		
पुरश्चरण के अङ्ग	अङ्गों का परस्पर गणितीय अनुपात	संख्या
१. जप	एक	अयुत (१०,०००)
२. होम	$\frac{१}{१०}$ = दशमांश	एक सौ
३. तर्पण	$\frac{१}{१००}$ = दशमांश	दस
४. मार्जन	$\frac{१}{१०००}$ = दशमांश	एक
५. ब्राह्मणभोजन	$\frac{१}{१०,०००}$ = दशमांश	एक

द्वादशाक्षर हनुमत् कल्प गारुड तन्त्र के अनुसार पुरश्चरण संख्यान		
पुरश्चरण के अङ्ग	अङ्गों का परस्पर अनुपात	संख्या
१. जप	एक	एक लाख
२. होम	$\frac{१}{१०}$ = दशमांश	दस सहस्र
३. तर्पण	$\frac{१}{१००}$ = दशमांश	एक सहस्र
४. मार्जन	$\frac{१}{१०००}$ = दशमांश	एक सौ
५. ब्राह्मणभोजन	$\frac{१}{१०,०००}$ = दशमांश	एक

दशाक्षर मन्त्रवीर सिद्धिहेतु पुरश्चरण का संख्यान		
पुरश्चरण के अङ्ग	अङ्गों का परस्पर अनुपात	संख्या
१. जप	एक	साठ हजार
२. होम	$\frac{१}{१०}$	एक सौ
३. तर्पण	$\frac{१}{१००}$	दस
४. मार्जन	$\frac{१}{१०००}$	एक
५. ब्राह्मणभोजन	$\frac{१}{१०,०००}$	एक

हनुमत्स्तोत्रम्

नमो हनुमते तुभ्यं नमो मारुतसूनवे। नमः श्रीराम भक्ताय श्यामलाङ्गाय ते नमः॥
नमो वानरवीराय सुग्रीवसख्यकारिणे। सीताशोकविनाशाय राममुद्राधराय च॥
रावणान्तकुलच्छेदकारिणे ते नमो नमः। मेघनादमखध्वंसकारिणे ते नमो नमः॥
वायुपुत्राय वीराय आकाशोदरगामिने। वनपालशिरश्छेदलङ्काप्रासादभञ्जिने॥
ज्वलत्कनकवर्णाय दीर्घलाङ्गूलधारिणे। सौमित्रिजयदात्रे च रामदूताय ते नमः॥
अक्षयवधकर्त्रे च ब्रह्मपाशनिवारणे। लक्ष्मणाङ्घ्रिमहाशक्तिघ्नातक्षतविनाशिने॥
रक्षोघ्नाय रिपुघ्नाय भूतघ्नाय च ते नमः। ऋक्षवानरवीरैकप्राणदाय नमो नमः॥
परसैन्यबलघ्नाय शस्त्रास्त्रघ्नाय ते नमः। विषघ्नाय द्विषघ्नाय ज्वरघ्नाय च ते नमः॥
महाभयरिपुघ्नाय भक्तत्राणैककारिणे। परप्रेरितमन्त्राणां यन्त्राणां स्तम्भकारिणे॥
पयःपाषाणतरणकरणाय नमो नमः। बालार्कमण्डलत्राणकारिणे भवकारिणे॥
नखायुधाय भीमाय दन्तायुधधराय च। रिपुमायाविनाशाय रामाज्ञालोकरक्षिणे॥
प्रतिग्रामस्थितायाथ रक्षोभूतवधार्थिने। करान्तशैलशस्त्राय द्रुमशस्त्राय ते नमः॥
बालकब्रह्मचर्य्याय रुद्रमूर्तिधराय च। दक्षिणाशाभास्कराय शतचन्द्रोदयात्मने॥
कृतक्षतव्यथाघ्नाय सर्वक्लेशहराय च। स्वाम्याज्ञाप्रार्थसङ्ग्रामसङ्ख्ये सञ्जयकारिणे॥
भक्तानां दिव्यवादेषु सङ्ग्रामे जयदायिने। किं कृत्वा बुबुकोच्चारघ्नोरशब्दकराय च॥
रावोग्रव्याधिसंस्तम्भकारिणे वनधारिणे। सदावनफलाहारे निरताय विशेषतः॥
महार्णवशिलाबन्धे सेतुबन्धाय ते नमः। वादे विवादे सङ्ग्रामे भये घ्नोरे च संस्तवेत्॥
सिंहतस्करव्याघ्रेषु पठंस्तत्र भयं नहि। दिव्यभूतभये व्याघ्रे विषे स्थावरजङ्गमे॥
राजशस्त्रभये चोग्रे तथा ग्रहभयेषु च। जले सर्पे महावृष्टौ दुर्भिक्षे प्राणसम्प्लवे॥
पठन्स्तोत्रं प्रमुच्येत भयेभ्यः सर्वतो नरः। तस्य क्वापि भयं नास्ति हनुमत्स्तवपाठनात्॥
सर्वदा वै त्रिकालं च पठनीयस्तवो ह्यसौ। सर्वान्कामानवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥
विभीषणकृतं स्तोत्रं ताक्ष्र्येण समुदीरितम्। ये पठिष्यन्ति भक्त्या च सिद्धयस्तत्करे स्थिताः॥

इति श्रीसुदर्शनसंहितोक्तं विभीषणप्रोक्तं श्रीहनुमत्स्तोत्रं सम्पूर्णम्।

इति श्रीबीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे विष्णुमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं चतुर्थं समाप्तम्।

हनुमत् स्तोत्र—हे हनुमते! आपको नमस्कार है। हे मारुतपुत्र! आपको नमस्कार है। श्री रामजी के भक्त, श्यामलाङ्ग के भक्त को नमस्कार है। सुग्रीव से मैत्री करने वाले वानरवीर को नमस्कार है। राममुद्राधारक तथा श्री सीताजी के शोक-विनाशक को नमस्कार है। हे रावण के कुल को समूल नष्ट करने वाले! आपको नमो नमः। हे मेघनाद के यज्ञ को विध्वंस करने वाले! आपको नमो नमः। आकाश के मध्य गमन करने वाले वायुपुत्र, वीर वनपाल का शिखछेद करने वाले, लङ्काप्रासाद का भञ्जन करने वाले के लिये नमस्कार है। चमकीले सुवर्ण के

समान वर्ण वाले, दीर्घलाङ्गूल धारण करने वाले को नमस्कार है। सौमित्रि को विजय दिलाने वाले रामदूत! तुझे नमस्कार है। हे अक्षयकुमार के वधकर्ता तथा ब्रह्मशाप का निवारण करने वाले! लक्ष्मण के पैरों की महाशक्ति के घात से उत्पन्न घावों का निवारण करने वाले! हे रक्षोघ्न, रिपुघ्न तथा भूतघ्न! आपको नमस्कार है। ऋक्ष वानरवीरों को प्राण देने वाले एकमात्र वीर! आपको नमस्कार है, नमस्कार है।

दूसरे की सेना का बल नष्ट करने वाले, उनके शस्त्रास्त्रों को नष्ट करने वाले! आपको नमस्कार है। विषनाशक, द्विषनाशक (शत्रुनाशक) और ज्वरनाशक! आपको नमस्कार है। महाभयङ्कर शत्रु को नष्ट करने वाले, भक्तों के एकमात्र त्राणकर्त्ता, दूसरों के द्वारा प्रेषित मन्त्र-तन्त्रों को रोकने वाले, पत्थरों को जल पर तैराने वाले श्री हनुमान् जी को नमस्कार है, नमस्कार है। बालार्कमण्डल (ग्रहण) के त्राण करने वाले को, नखायुध वाले को, भीमदन्तायुध वाले को, शत्रु की माया विनष्ट करने वाले को, शैलशस्त्र वाले को, द्रुमशस्त्रधारी को नमस्कार है। ब्रह्मचारी बालक रूपधारी, रुद्रमूर्ति को, दक्षिण दिशा के सूर्य को, शत चन्द्रोदय से युक्त को, घावों की पीड़ा दूर करने वाले को, सर्वक्लेशहारी को, स्वामी की आज्ञा के अनुसार संग्राम में विजय करने वाले को, भक्तों को दिव्यवादों तथा संग्राम में विजय देने वाले को, 'किं' शब्द करके फिर बुबुकार का घोर शब्द करने वाले को, अपने उग्र राव से संस्तम्भ करने वाले को, वन को धारण करने वाले को विशेष नमस्कार है।

वाद-विवाद तथा घोर संग्राम में इस स्तव से स्तुति करे। सिंह, तस्कर तथा व्याघ्रादि के भय में इसको पढ़ने से भय नहीं होता है। दिव्यभूतों के भय में, व्याघ्रभय में, विषभय में, स्थावर-जङ्गम विष में, राजभय में, शस्त्रभय में, उग्रग्रहों के भय में, जलभय, सर्पभय, महावृष्टि, दुर्भिक्ष, प्राणभय में मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ करके सब प्रकार के भय से मुक्त हो जाता है। इस हनुमत् स्तोत्र के पाठ से किसी प्रकार का भय नहीं रहता है। सर्वदा तथा तीनों कालों में यह स्तोत्र पढ़ना चाहिये। उसकी सब कामनाएँ पूर्ण होती हैं, इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है। यह स्तोत्र विभीषण द्वारा निर्मित है; इसे जो भी भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, सफलता उनके हाथ लगती है॥ १७-२२॥

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के चतुर्थ प्रकरण विष्णुमन्त्रानुष्ठान प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ४॥

✿

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान)प्रकरणं पञ्चमम्॥ ५॥

वेदपारायणे कलशस्थापनविधिः

अथ विष्णोः प्रसङ्गाद्वेदादिपारायणविधानम्; तत्रादौ वेदपारायणे कलशस्थापनप्रकारः महार्णवे—

तीर्थे देवालये गेहे प्रशस्ते सुपरिष्कृते। कलशं सुदृढं तत्र सुनिर्णिक्तं विभूषितम्॥
पुष्पपल्लवमालाभिश्चन्दनैः कुङ्कुमादिभिः। मृत्तिकायवसम्मिश्रा वेदीमध्ये न्यसेत्ततः॥
पञ्चाशद्भिः कुशैः कार्यो ब्रह्मा पश्चान्मुखस्थितः। स्नापितः स्थापितः कुम्भे चतुर्बाहुश्चतुर्मुखः॥
वत्सजान्वाकृतिं देवमुत्तराग्रैः कुशैः कृतम्। ब्रह्मोपधाने दत्त्वा तं ततः स्वस्त्ययनं पठेत्॥
प्रतिष्ठां कारयेत्पश्चात्पूजाद्रव्यमथोच्यते। यज्ञोपवीतनैवेद्यवस्त्रचन्दनकुङ्कुमैः॥
सधूपदीपताम्बूलैरक्षतैश्च पितामहम्। ब्रह्मयज्ञानमिति वा गायत्र्या वा प्रपूजयेत्॥
उपाध्यायं च सम्पूज्य यथापाठं पठेत्ततः॥

इति कलशप्रतिष्ठापनम्।

वेदपारायण में कलशस्थापन की विधि—तीर्थ में, देवालय में अथवा घर में प्रशस्त एवं परिष्कृत स्थान में सुदृढ़ कलश स्थापित करे, वह कलश सुनिर्णिक्त (भली-भाँति स्वच्छ किया गया धुला हुआ हो) तथा सुसज्जित होना चाहिये। उसे पुष्पों, पत्तों, मालाओं तथा चन्दन-कुङ्कुमादि के द्वारा विभूषित करे। वेदी के मध्य में यव-सम्मिश्रित मृत्तिका डाले। पचास कुशों के ब्रह्मा को बनाकर पश्चिम की ओर मुख कर उसे स्थित करना चाहिये। उसे चतुर्बाहु तथा चतुर्मुख बना करके स्थापित कुम्भ से स्नान कराना चाहिये। जानु की आकृति का वत्स कुश से बनाकर उत्तराग्र कुशों पर उसे ब्रह्मा का पद देकर फिर स्वस्तिवाचन पढ़े। फिर उसकी प्रतिष्ठा करे। यज्ञोपवीत, नैवेद्य, वस्त्र, चन्दन, कुङ्कुम, धूप, दीप, ताम्बूल, अक्षत से पितामह की पूजा 'ॐ ब्रह्मयज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्०' इत्यादि मन्त्र से अथवा गायत्री मन्त्र से करे। फिर अपने उपाध्याय (वेद पढ़ाने वाले) का पूजन कर वेदपाठ करे।

अनश्नत्पारायणविधानम्

महार्णवे—अथातोऽनश्नत्पारायणविधिं व्याख्यास्यामः। आसमाप्तेर्नाश्नीयात् यथाशक्ति वा पयः फलान्योदनं वा हविष्यमात्रमल्पं भुक्त्वा तदाशेषमधीयीत। ग्रामात्प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्याग्निमुपसमाधाय परिस्तीर्येध्मप्रदायाज्येनैताभ्यो देवताभ्यो जुहोति। अग्नये, सोमायेन्द्राय, प्रजापतये, बृहस्पतये, विश्वेभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मणे ऋषिभ्यः ऋग्भ्यो यजुर्भ्यः सामभ्यः श्रद्धायै मेधायै प्रज्ञायै सदसस्पतये अनुमतये ह्रियै सावित्र्यै सवित्रे प्रजापतये काण्डऋषये विश्वेभ्यो देवेभ्यः काण्डऋषिभ्यः सांहिकीभ्यो देवताभ्य उपनिषद्भ्यो याज्ञिकेभ्यो देवताभ्यः उपनिषद्भ्यो वारुणीभ्यो देवताभ्यः उपनिषद्भ्यो हव्यवाहाय विश्वेभ्यो वरुणेभ्यः। अनुमत्यै स्विष्टकृते च पृथक् स्वाहाकारेण हुत्वा व्याहृतिभिश्च पुनः परिषिञ्चति समाप्ते चैताः। यजुषा तर्पयति। एवं ऋग्वेदिनां काण्डऋष्यादिवर्जमास्विष्टकृतस्तेषां स्थाने शतर्चिभ्यो माध्यमेभ्यो गृत्समदाय विश्वामित्राय वामदेवाय अत्रये भरद्वाजाय जामदग्न्याय गौतमाय वसिष्ठाय प्रगाथेभ्यः पावमानीभ्यः क्षुद्रसूक्तेभ्यो महासूक्तेभ्यो महानाम्नीभ्य इति। ततो वेदादिमारभ्य सततमधीयीत नास्यान्तरानध्यायो नास्यान्तरा जननमरणे अशुचीन्नान्तरा व्याहरेन्नान्तरा विरमेत्। यावदन्तमधीयीत यद्यन्तरा विरमेत् त्रीन् प्राणायामानायम्य प्रणवं वा प्रणिधाय यावत्कालमधीयीत। ततः सर्वं निशो निशान्तरं सङ्ग्रामारण्यसलिलं प्रलोप्य परिदध्यात्। आदावन्ते च ब्राह्मणभोजनं

दक्षिणादानं च कुर्यात्। य एतेन विधिना वेदमधीयत सः ततः पूतो वेदो भवति मनःशुद्धिश्च भवति। द्वाभ्यां पारायणाभ्यां ऋग्भिश्चाभोजन इहाधीते अनृतेभ्यः प्रमुच्यते त्रिभिर्बहुभ्यः पतनीयपातकेभ्यः शूद्रायां रेनः सिक्त्वा गङ्गासु मज्जंश्च भवति। चतुर्भ्यः शूद्रान्नभोजनात्तत्सेवनात्तत्स्त्रीसेवनाच्च पञ्चभिरयाज्ययाजनात्पूतो भवति। अग्राह्यग्रहणाद् ग्राह्याग्रहणादभ्यासोपसनाच्च षड्भिर्ब्राह्मणस्य लोहितकरणात् स्त्रीलोहितकरणात् पशुहननात्सुवर्णस्तेयात्पतितसम्प्रयोगाच्च सप्तभिः प्राजापत्यानां हीनाचरणात् यज्ञोपवीतवेधनाच्च अष्टभिश्चान्द्रायणस्यान्तरानाचरणात् गुरुतल्पगमनाद्रजस्वलागमनाच्च नवभिः सुरापानाच्च दशभिरश्रोत्रिययाजनात्। असोमपानात् अन्यायतश्च एकादशभिर्ब्राह्मणहननाद्भ्रूणहननाद्वा दशभिः पूर्वजन्मेहजन्मकृतैः सर्वैः पापैः प्रमुच्यते स्वर्गं लोकं गच्छति पितॄन् स्वर्गलोकं गमयति। अग्निष्टोमादीन् क्रतून् यजति तैः क्रतुभिरिष्टं भवति। वेदाध्यायी सदैव स्याद्यथा वै सत्यवाक् शुचिः। यं यं कामयते कामं तं तं वेदेन साधयेत्। असाध्यं नास्ति यत्किञ्चिद्ब्रह्मणो हि फलं महत्। ब्रह्मणो हि फलं महदिति समाप्तौ यजुषा तर्पयतीति। समस्तवेदपारायणे समाप्ते एता देवताः पूर्वोक्ता अग्निसोमाद्यायजुषा तर्पयति यजुर्वेदेन सह तर्पयति इति। न यजुर्वेदपारायणे तस्य वेदस्य प्राधान्यमुच्यते। अथवा भूरादिव्याहृतिचतुष्टयात्मकं यजुःशब्देन गृह्यते। तेनैव तदुक्तं भवति। भूर्देवांस्तर्पयामीत्यनेन प्रकारेण तर्पयित्वा अग्निसोमादींस्तर्पयेदिति। नास्यान्तरा जननमरणे अशुची। इत्यनश्नत्पारायणविधानं समाप्तम्।

निराहार पारायण की विधि—अब मैं बिना भोजन किये पारायण की विधि कहता हूँ। इसमें जब तक पाठ पूरा न हो जाय तब तक कुछ भोजन नहीं लेना चाहिये अथवा बीच में यथाशक्ति दूध, फल, भात अथवा हविष्यान्न को अल्प मात्रा में खाकर शेष पाठ को पूरा करना चाहिये। ग्राम या नगर से पश्चिम दिशा में अथवा उत्तर दिशा में जाकर अग्नि का उपसमाधान करके, समिधाओं को बिछाकर (चुनकर) आज्य (घृत) से इन देवताओं को आहुति दे। अग्नि को, सोम को, इन्द्र को, बृहस्पति को, विश्वेदेवों को, सावित्री को, प्रजापति को, सविता को, काण्ड ऋषि को, सांहिकी देवों को, उपनिषदों को, याज्ञिकों को, देवताओं को, वारुणी देवताओं को, हव्यवाह को, वरुणों को, अनुमति को तथा स्विष्टकृत् को अलग-अलग आहुतियाँ स्वाहाकार से देकर व्याहृतियों से पुनः परिषिञ्चन कर पाठसमाप्ति पर पुनः इन देवताओं को आहुति दे। यजुष् मन्त्रों से तर्पण करे। इसी प्रकार ऋग्वेदी काण्ड एवं ऋषियों से स्विष्टकृत्-पर्यन्त छोड़कर उनके स्थान पर शतर्चियों को, माध्यमों को, गृत्समद को, विश्वामित्र को, वामदेव को, अत्रि को, भरद्वाज को, जमदग्नि को, गौतम को, वसिष्ठ को, प्रगाथों को, पावमानियों को, क्षुत्र सूक्तों को, महासूक्तों को आहुतियाँ दे।

फिर वेदादि ग्रन्थ को प्रारम्भ करके सतत् पाठ करता रहे। इसके पाठ के बीच में अनध्याय तिथि, जनन-मरण का अशौच आदि होने पर न तो उस सम्बन्ध में चर्चा करनी चाहिये और न ही रुकना चाहिये (पाठ में विराम नहीं करना चाहिये)। जब तक पाठ पूरा न हो जाय, तब तक यदि उस अन्तराल में विराम हो जाय (या बोलना पड़े) तो तीन प्राणायाम करके आचमन करे अथवा प्रणव का उच्चारण कर आगे पाठ प्रारम्भ कर दे। आदि-अन्त में ब्राह्मणभोजन तथा दक्षिणा दे। जो इस विधि से वेदों का अध्ययन करता है, वह पवित्र ज्ञान तथा शुद्ध मन वाला हो जाता है। जो दो पारायणों को निराहार करता है, वह झूठ से मुक्त हो जाता है। तीन निराहार पारायण से बहुत से पतनीय पातकों से बच जाता है। चार पारायणों से शूद्रान्न भोजनादि के पाप से बच जाता है। पाँच पारायण करने पर अयाज्य-याजन के पातक से मुक्त हो जाता है। छः पाठ कर लेने पर ब्राह्मण को या स्त्री को लोहित (लहू-लुहान) करने के पाप से मुक्त हो जाता है। इसी प्रकार पशुहनन, सुवर्ण की चोरी तथा पतित सम्प्रयोग से भी मुक्त हो जाता है। सात पाठों से प्राजापत्यों के हीनाचरण, यज्ञोपवीतवेधन से मुक्त हो जाता है। आठ पाठों से गुरुतल्पगमनादि दोषों से छूट जाता है। नौ पारायणों से सुरापान के दोष से तथा दश पाठों से अश्रोत्रिय के यहाँ यज्ञ कराने का जो दोष होता है, उससे मुक्ति मिलती है; साथ ही असोमपान तथा अन्याय के दोष से भी छूट

जाता है। एकादश पाठों से ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त होता है तथा गर्भहनन के पातक से मुक्त हो जाता है। बारह पारायण करने पर पूर्वजन्म में किये गये सभी प्रकार के पापों से भी मुक्ति मिल जाती है तथा वह स्वर्गलोक को चला जाता है, पिता-माता के साथ स्वर्गलोक को जाता है।

यदि वह बारह पाठ करने वाला व्यक्ति अग्निष्टोम आदि यज्ञों को सम्पन्न करता है तो वे यज्ञ सफल होते हैं। सदैव वेदाध्यायी रहना चाहिये। सत्य वाणी बोलता रहे, पवित्र वाणी बोलता रहे तो वह जो-जो चाहेगा, वह-वह सब वेदपाठ से प्राप्त होगा। उसके लिये कुछ भी असाध्य तथा असम्भव नहीं रहेगा। ब्रह्माजी उसे महान् फल प्रदान करते हैं। समाप्ति पर यजुषों का तर्पण करना चाहिये। समस्त वेदों के पारायण के समाप्त होने पर जो देवता ऊपर बताये जा चुके हैं—अग्नि, सोम आदि, उनका यजुषों से तर्पण करना चाहिये। यजुर्वेद के साथ उनका तर्पण करना अभीष्ट है।

यजुर्वेद के पारायण में उस वेद का प्राधान्य नहीं कहा गया है (माना जाता है)। अथवा भूरादि व्याहृति-चतुष्टयात्मक का ग्रहण यजुः शब्द से किया जाता है। उसी को यजुष कहा जाता है, उसी से तर्पण तथा उन्हीं का तर्पण करना चाहिये। 'भूर्देवांस्तर्पयामि' ऐसा कहकर तर्पण करके अग्नि, सोम आदि देवों का तर्पण करे (ॐ भूः अग्निं तर्पयामि, ॐ भूः सोमं तर्पयामि इत्यादि)। इस पारायण काल में जनन-मरण आदि अशौच पाठकर्ता को नहीं होता है।

सामान्यतः सर्वपुराणेतिहासश्रवणविधानम्

अथ पुराणादिपारायणविधानं पाद्मे पातालखण्डे—

शुक्लपक्षे दिने शुद्धे वारनक्षत्रयोगतः। करणे चापि लग्ने च ग्रहताराबलान्विते॥ १॥
अमूढे न ग्रहे बाले न च वृद्धौ गुरौ स्थिते। न कृष्णपक्षे ग्रहणे न च नास्तिकसन्निधौ॥ २॥
शुद्धगेहेऽथ वा शुद्धवेदिकायां मठेऽथ वा। नदीतीरे देवगेहे सभामण्डप एव च॥ ३॥
रथ्यामठेऽथवा रम्ये पुण्यशालासु राघव। पूर्वोक्तलक्षणोपेतं पुराणं शृणुयादिति॥ ४॥
स्वयं नमस्य विप्रेन्द्रान्पुराणज्ञं विशेषतः। आसनं कल्पितं कुर्यादूर्ध्वं सर्वविशेषितम्॥ ५॥
एहि धर्म्मासनमिति वक्तव्यं स्यादनिष्ठुरम्। पुराणप्रक्रमदिने यत्कार्यं तदुदीरयेत्॥ ६॥
व्याख्यातारं पुराणस्य वस्त्राद्यैः परिपूजयेत्। शुभानि दत्त्वा वस्त्राणि सूक्ष्माणि च नवानि च॥ ७॥
करकण्ठविभूषादि पात्रमासनमेव च। गन्धपुष्पाक्षतैः पूज्यं ताम्बूलं विनिवेद्य च॥ ८॥
शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥ ९॥

पुराणादि पारायण-विधान—अब यहाँ पद्मपुराण के पाताल खण्ड के अनुसार पुराणादि (पुराण, उपपुराण, रामायण, महाभारत) के पारायण की विधि दी जा रही है। शुक्लपक्ष की तिथि में दिन के समय शुद्ध वार, नक्षत्र, करण तथा लग्न में ग्रह, तारा का बल देखकर; गुरु, शुक्र, मङ्गल, बुध आदि ग्रह (वेद का स्वामी ग्रह) अस्त न हो, कृष्णपक्ष न हो तथा नास्तिक की समीपता न हो; शुद्ध घर में अथवा शुद्ध वेदी (चबूतरे) पर अथवा देवालय या मठ में, नदीतीर पर अथवा सभामण्डप में अथवा मुख्य मार्ग के किनारे स्थित मठ में, रमणीय पुण्यशाला में पूर्वोक्त लक्षणों से युक्त पुराण को सुनाना-सुनना चाहिये। यजमान द्वारा स्वयं ही पुराणज्ञ विप्रेन्द्र को प्रणाम करके ऊँचा आसन बनाकर सबसे विशिष्ट मान कर 'आइये यह धर्मासन है, इस पर बैठिये और आज क्या-क्या कार्य होना है ? वह बताने की कृपा करें' ऐसा विनम्र शब्दों में कहना चाहिये। पुराण के व्याख्याता का वस्त्रादि से पूजन

करना चाहिये। उसे शुभ पवित्र नवीन वस्त्र देना चाहिये। साथ ही हाथ एवं कण्ठ के आभूषण भी देना चाहिये। पात्र-आसन आदि देना चाहिये तथा गन्ध, पुष्प, अक्षतों से पूजन कर ताम्बूल का निवेदन करना चाहिये। शुक्ल वस्त्रधारी विष्णु, जो कि चन्द्रमा के समान वर्ण वाले, चतुर्भुज तथा प्रसन्नवदन हैं, उनका ध्यान करना चाहिये, जिससे सभी विघ्नों की शान्ति हो॥ १-९॥

सभासदश्च सम्पूज्य गणेशं पूजयेत्ततः। ॐ नमेत्यादिमन्त्रेण पूजनं भारतीनुतिः॥ १०॥
प्रातःकाले पुराणस्य प्रक्रमं प्रारभेदिति। उपक्रमदिने राम त्रिपंच दश वा पुनः॥ ११॥
श्लोका द्वितीये दिवसे ततो द्विगुणिताः शुभाः। तृतीये दिवसे राम ततश्चाधिकमिष्यते॥ १२॥
दिनानामव्यवच्छेदाद्व्याख्यानं श्रवणं तथा। व्यवस्थितिर्यदा जाता तदा पौराणिकं गुरुम्॥ १३॥
ताम्बूलादि प्रदायाथ परेद्युः शृणुयादपि। पुराणमेवं श्रोतव्यं दैनन्दिनमिति श्रुतिः॥ १४॥
व्रतरूपेण यः कश्चित्पुराणं शृणुयान्नरः। यदैवं तत्पुराणं तु तत्र याति न संशयः॥ १५॥
पुराणं श्रोतुकामेन श्लोकश्चैकोऽपि चेच्छ्रुतः। तद्दिने तु कृतं पापं नाशयेत्तु न संशयः॥ १६॥

देव के सभासदों का पूजन कर फिर गणेशजी का 'ॐ नमो' इत्यादि मन्त्र से पूजन तथा प्रार्थना करनी चाहिये। प्रातःकाल पुराण का व्याख्यान प्रारम्भ करना चाहिये। प्रथम दिन तीन, पाँच अथवा दश श्लोक का व्याख्यान करना चाहिये। दूसरे दिन उससे दुगुनी संख्या में श्लोकों का व्याख्यान करना चाहिये। तृतीय दिवस उससे अधिक होना चाहिये। जब कथा व्यवस्थित हो जाय तब दिनों का व्यवच्छेद (नागा) न करते हुए कथा सतत् चलनी चाहिये। अन्त में पौराणिक गुरु को ताम्बूल आदि प्रदान करके फिर अगले दिन श्रवण करना चाहिये। इस प्रकार प्रतिदिन (पुराणसमाप्ति-पर्यन्त) कथा-श्रवण करना चाहिये। जो व्यक्ति व्रत के रूप में कथा सुनता है, वह उस पुराण के अधिष्ठाता देवता (शिव-विष्णु-शक्ति) आदि के लोक को ही (देहान्त होने पर) जाता है; इसमें संशय नहीं है। पुराण सुनने की आकांक्षा के साथ जिसने एक श्लोक भी सुना हो तो उस दिन का उसका किया हुआ पाप सुनिश्चित ही नष्ट हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है॥ १०-१६॥

एवं पुराणं शृणुयाच्च यस्तु स ब्रह्महत्याकृतपापबन्धनात्।
सुरापीतिः स्वर्णहरश्च राम गुर्वङ्गनागश्च विमुक्तिमेति॥ १७॥

भारतश्रवणे चापि नियमा ये मयेरिताः। आदिपर्वसमाप्तौ च सूक्ष्मवस्त्रत्रयं ददेत्॥ १८॥
सुवर्णं च यथाशक्ति सभापर्वणि वाससी। अनुशासनिकारण्यस्वर्गारोहेषु पर्वसु॥ १९॥
आदिपर्वणि पूजा या सा पूजा नृपपुङ्गव। कर्णाश्वमेधवैराट्शल्यद्रोणेषु पर्वसु॥ २०॥
सूक्ष्मवस्त्रत्रयं शुद्धं निष्कद्वयमथापि वा। क्षुद्रपर्वस्वथान्येषु निष्कावथ समानयेत्॥ २१॥
हरिवंशे सनिष्कं तु वस्त्रत्रितयमेव च। भारतस्याखिलस्यैव समाप्तौ क्षेत्रदो भवेत्॥ २२॥
रामायणस्य श्रवणे काण्डे काण्डे प्रपूजयेत्। क्षेत्रं पर्याप्तमथवा सुवर्णमपि दापयेत्॥ २३॥
अन्यान्यपि पुराणानि मुनिप्रोक्तानि तान्यपि। श्रोतॄणां पापनाशाय वक्तुश्चापि विशेपतः॥ २४॥
यश्च सर्वपुराणानि षट्त्रिंशत्तु प्रकीर्त्तयेत्। शृणोति वा न तस्यास्ति चित्तच्छेदः कदाचन॥ २५॥

इति सामान्यतः सर्वपुराणेतिहासानां श्रवणविधानम्।

इस प्रकार की कथा जो सुनता है, वह ब्रह्महत्या के पाप से छूट जाता है। सुरापान करने वाला, गुरुपत्नी से गमन करने वाला भी मुक्त हो जाता है। महाभारत की कथा सुनने के लिये भी मैंने यही नियम कहे हैं। आदिपर्व

की समाप्ति पर तीन सूक्ष्म वस्त्र वक्ता को देना चाहिये। सभापर्व की समाप्ति पर यथाशक्ति सुवर्णदक्षिणा देनी चाहिये तथा अनुशासनपर्व, वनपर्व एवं स्वर्गारोहणपर्व की समाप्ति पर वस्त्र देना चाहिये। हे नृपपुङ्गव! आदिपर्व में वक्ता की जो पूजा कही गई है, वही पूजा कर्णपर्व, अश्वमेध पर्व, विराट् पर्व, शल्यपर्व, द्रोणपर्व में भी करनी चाहिये। अन्य जो छोटे-छोटे पर्व हैं, उनकी कथासमाप्ति पर दो सूक्ष्म वस्त्र एवं दो निष्क सुवर्ण देना चाहिये। इन सब पर्वों में निष्कदक्षिणा समान है। हरिवंश-श्रवण में सनिष्क तीन वस्त्रों की दक्षिणा देनी चाहिये। जब सम्पूर्ण महाभारत की कथा पूरी हो जाय तब क्षेत्रदान (खेत का दान) करना चाहिये। रामायण (वाल्मीकि-आनन्द आदि) के श्रवण में हर काण्ड में पूजा करनी चाहिये। उसमें पर्याप्त मात्रा में कृषिभूमि अथवा सुवर्ण अथवा दोनों ही अपनी शक्ति के अनुसार देना चाहिये। अन्यान्य भी जो पुराण-उपपुराण मुनियों द्वारा कथित हैं, उनके श्रवण में अपने पापनाश करने के लिये वक्ता को विशेष रूप से दान करना चाहिये। सम्पूर्ण पुराण, जिनकी संख्या छत्तीस कही गई है, उन सभी को जब तक नहीं सुन लेता है तब तक श्रोता के मन का संशय समाप्त नहीं होता है॥ १७-२५॥

श्रीमद्भागवतपारायणविधानम्

पाद्मे—

श्रीपार्वत्युवाच—

स्कन्धैर्द्वादशभिः प्रोक्तं श्रीमद्भागवतं प्रभो। शुकस्तच्छ्रावयामास महाराजं परीक्षितम्॥ १॥
सप्ताहेनेति भगवञ्छ्रूयते तत्र तत्र ह। तस्यानुक्रममिच्छामि श्रोतुं तत्फलमेव च॥ २॥

श्रीमद्भागवत सप्ताह-पारायण विधि (पद्मपुराण के अनुसार)—पार्वती जी बोलीं—हे प्रभो! श्रीमद्भागवत बारह स्कन्धों की कही गयी है। शुकदेव जी ने उसे राजा परीक्षित को एक सप्ताह में सुनाया था, अतः उसका अनुक्रम सुनने की इच्छा है तथा उसका क्या फल होता है, यह भी सुनना चाहती हूँ॥ १-२॥

सदाशिव उवाच—

साधु पृष्टं महाभागे लोके यत्प्रचरिष्यति। पारायणमिति ख्यातं सद्यो मुक्तिप्रदं नृणाम्॥ ३॥
शुकस्योक्तिक्रमेणैव पठेद्भागवतं तु यः। श्रावयेच्छृणुयाद्वापि तस्यानन्तं फलं भवेत्॥ ४॥
कृतनित्यक्रियः प्रातः कुशहस्तः कृतासनः। देवद्विजगुरून्नत्वा ध्यात्वा विष्णुं सनातनम्॥ ५॥
द्वैपायनं नमस्कृत्य शुकदेवं च भक्तितः। हिरण्याक्षवधं यावत्प्रथमेऽहनि कीर्त्तयेत्॥ ६॥
चरितं भरतस्यापि द्वितीयेऽथ तृतीयके। मथनं चामृतस्यापि यत्र कूर्मः स्वयं हरिः॥ ७॥
चतुर्थदिवसे चैव दशमे हरिजन्म च। पञ्चमे तु पठेद्विद्वान् रुक्मिण्या हरणावधि॥ ८॥
षष्ठे चोद्धवसंवादं सप्तमे तु समापयेत्। अध्यायं प्राप्य विरमेन्न तु मध्ये कदाचन॥ ९॥

श्री सदाशिव बोले—हे महाभागे! आपने बहुत ठीक पूछा है। यह कथा लोक में प्रचारित होगी, इसका पारायण मनुष्यों को शीघ्र ही मुक्ति देने वाला है। जो शुकदेव जी के बताये क्रम से भागवत पढ़ता है अथवा सुनता है, उसे अनन्त फल की प्राप्ति होती है। प्रातःकाल नित्यक्रिया से निपटकर हाथ में कुश लेकर आसन पर बैठकर देव, द्विज, गुरु को प्रणाम करके तथा विष्णु का ध्यान करके, द्वैपायन व्यास को नमस्कार करके तथा भक्तिपूर्वक शुकदेवजी को प्रणाम करके प्रथम दिन प्रारम्भ से हिरण्याक्षवध-पर्यन्त कथा कहनी चाहिये। द्वितीय दिवस में भरत के चरित्र तक कथा कहे। तृतीय दिन समुद्रमन्थन तक की कथा कहे, जिसमें स्वयं श्रीहरि कूर्म बने थे। चौथे दिन

दशम स्कन्ध में कृष्णजन्म तक की कथा तथा पाँचवें दिन विद्वान् रुक्मिणीहरण-पर्यन्त कथा कहे। छठे दिन उद्धव-संवाद तक तथा सातवें दिन कथा का समापन करे। अध्याय पर ही विश्राम देना चाहिये, मध्य में विराम नहीं करना चाहिये ॥ ३-९ ॥

कृते विरामे मध्ये तु अध्यायादिं पठेत्पुनः। पठेदर्थं बुध्यमानः श्रावयेद्वैष्णवोत्तमे ॥ १० ॥
श्रोता तु प्राङ्मुखो भूत्वा शृणुयाद्भक्तितत्परः। अध्याये स्वर्णमाषैकं तथा दद्याच्च दक्षिणाम् ॥ ११ ॥
समाप्तौ च ततो धेनुं स्वर्णशृङ्गीं निवेदयेत्। कुर्य्याच्च वैष्णवं होमं सात्वतान्भोजयेत्ततः ॥ १२ ॥
एवं यः कुरुते देवि पाठं भागवतस्य तु। श्रवणं श्रावणं वापि इष्टां गतिमवाप्नुयात् ॥ १३ ॥
एतत्पारायणं नाम सर्व्वकामफलप्रदम्। पाठकाले च त्रिदशा मुनयश्च तपोधनाः ॥ १४ ॥
पार्श्वदाश्च तथा विष्णोः सान्निध्यं तत्र कुर्व्वते। एतत्ते कथितं देवि पारायणविधानकम् ॥ १५ ॥
विष्णुप्रीतिकरं पुण्यं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १६ ॥

इति श्रीमद्भागवतपारायणविधानम्।

यदि मध्य में विराम हो जाय तो उस अध्याय को पुनः पढ़ना चाहिये। अर्थ को समझते हुए पढ़ना चाहिये तथा उत्तम वैष्णव को कथा सुनानी चाहिये। श्रोता को पूर्वमुख होकर कथा सुननी चाहिये तथा भक्तियुक्त होकर कथा सुननी चाहिये। अध्याय की समाप्ति पर वक्ता को एक मासा स्वर्ण देना चाहिये। समाप्ति पर स्वर्णशृङ्गी धेनु का दान करना चाहिये। वैष्णव होम करके सात्वतों (वैष्णवों) को भोजन कराना चाहिये। जो इस प्रकार से भागवत का पाठ करता है, श्रवण-श्रावण करता है, उसे इष्ट गति प्राप्त होती है। यह पारायण सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। पाठकाल में देवता तथा तपस्वी मुनिगण एवं विष्णु के पार्षद वहाँ आते हैं। हे देवि! यह मैंने तुमसे पारायण-विधि कही है, यह विष्णु के लिये प्रिय तथा पुण्य फलप्रद है; अब और क्या सुनना चाहती हो ॥ १०-१६ ॥

सप्रयोगश्रीमद्भागवतसप्ताहविधिः

अथ श्रीमद्भागवतसप्ताहविधानं सप्रयोगं पाद्मे उत्तरखण्डे—

अथ ते सम्प्रवक्ष्यामः सप्ताहश्रवणे विधिम्। येन भागवतं सिद्ध्येत्पुंसां कृष्णार्पितात्मनाम् ॥ १ ॥
दैवज्ञं शास्त्रकुशलं समाहूय धनांशुकैः। समभ्यर्च्य मुहूर्त्तं तु प्राक्पृच्छेद्भक्तिमान्नरः ॥ २ ॥
स वदेद्यं मुहूर्त्तं तु तत्रारम्भः प्रशस्यते। नभोनभस्येषोर्जाश्च सहःशुचिसमन्विताः ॥ ३ ॥
मासाः श्रेष्ठाः कथारम्भे पूर्णा चापि तिथिः शुभाः। भौमार्किवर्जिता वारा भानि ध्रुवमृदूनि च ॥ ४ ॥
शुभे योगे शुभे लग्ने प्रारम्भः शस्यते सदा। तीर्थे वापि वने वापि ग्रामे वापि गृहेऽपि वा ॥ ५ ॥
संशोधितायां भूम्यां तु मण्डपं परिकल्पयेत्। कदलीस्तम्भसंयुक्तं चतुर्दिक्षु ध्वजान्वितम् ॥ ६ ॥
उच्चमासनमप्युक्तं वक्तुस्तस्याग्रतो मुने। अपार्श्वद्वयमुक्तानि श्रोतृणामासनानि च ॥ ७ ॥
उदङ्मुखो भवेद्वक्ता श्रोता वै प्राङ्मुखस्तदा। प्राङ्मुखो वा भवेद्वक्ता श्रोना चोदङ्मुखस्तदा ॥ ८ ॥

श्रीमद्भागवत सप्ताह-विधान प्रयोगसहित—(पद्मपुराण के उत्तरखण्ड के अनुसार)—अब मैं सप्ताहश्रवण की विधि कहता हूँ, जिससे श्रीमद्भागवत कृष्णार्पित चित्त वाले लोगों से सिद्धि देती है। शास्त्रकुशल दैवज्ञ (ज्योतिषी) को बुलाकर धन एवं वस्त्रों से सम्मानित करके भक्तिमान् मनुष्य को श्रीमद् भागवत पुराण का मुहूर्त पूछना चाहिये। वह जिस मुहूर्त को बताये, वही श्रेष्ठ होता है। श्रावण, भाद्र, क्वार, कार्तिक, मार्गशीर्ष तथा आषाढ़—

ये मास कथारम्भ में विशेष श्रेष्ठ हैं। पूर्णा तिथियाँ (५-१०-१५) शुभ हैं। मङ्गल तथा शनिवार को छोड़कर अन्य वार शुभ हैं। ध्रुव नक्षत्र (तीनों उत्तरा, रोहिणी), मृदुनक्षत्र (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) विशेष शुभ हैं। शुभ योग तथा शुभ लग्न में कथा का प्रारम्भ करना श्रेष्ठ है। तीर्थ में, ग्राम में अथवा घर में संशोधित भूमि पर केले के स्तम्भों से युक्त मण्डप बनाकर इसमें चारो ओर ध्वजा लगाना चाहिये। उसमें हे मुनि! वक्ता के लिये ऊँचा आसन लगाकर दोनों पार्श्वों को छोड़कर श्रोताओं के लिये आसन बिछाना चाहिये। वक्ता का मुख उत्तर की ओर तथा श्रोताओं का मुख पूर्व दिशा की ओर होना चाहिये। अथवा वक्ता यदि पूर्वाभिमुख बैठे तो श्रोता को उत्तराभिमुख बैठना चाहिये॥ १-८॥

वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो वैष्णवो ब्राह्मणोत्तमः। दृष्टान्तकुशलो धीरो वक्ता कार्योऽतिनिस्पृहः॥ ९॥
कथाविघ्नविघातार्थं गणेशं प्राक्प्रपूजयेत्। ततो दुर्गां हरं विष्णुं ब्रह्माणं भास्करं द्विजान्॥ १०॥
सम्पूज्य विधिवद्भक्त्या तर्पयेद्देवताः पितॄन्। मुख्यः श्रोता ततः पश्चात्पूजयेत्पुस्तके हरिम्॥ ११॥
ततः प्रदक्षिणीकृत्य द्रव्यवस्त्रफलानि च। धृत्वाञ्जलौ पुस्तकस्थं हरिं सम्प्रार्थयेन्मुने॥ १२॥

वक्ता के गुण—वक्ता वेदशास्त्रों के अर्थ एवं तत्त्व को जानने वाला होना चाहिये। वह वैष्णव तथा ब्राह्मण हो। वह दृष्टान्त में कुशल, धीर तथा निष्काम भाव से कर्म करने वाला हो। कथारम्भ में प्रथम श्रीगणेश जी की विघ्न-विनाशार्थ पूजा करनी चाहिये। फिर दुर्गा, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, सूर्य तथा ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिये। विधिपूर्वक भक्तिभाव से देवता तथा पितरों का तर्पण करना चाहिये। फिर जो मुख्य श्रोता (यजमान) हो, वह पुस्तकरूपी हरि की पूजा करे। फिर प्रदक्षिणा करके द्रव्य, वस्त्र तथा फलों को लेकर अञ्जलि में धारण कर पुस्तकस्थ हरि की प्रार्थना करे॥ ९-१२॥

अथ प्रयोगः—पूर्वदिने चान्द्रायणधेनुदानादिद्वारा पूर्ववत्प्रायश्चित्तं सम्पाद्य प्रारम्भदिने प्रातर्नित्यकर्म कृत्वा। चन्द्रतारादिबलान्विते पूर्वोक्ते सुमुहूर्ते गोमयादिना संशोधिते कथास्थाने स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य पूर्वोक्तलक्षणयुक्तं पण्डितं च शुद्धासने उदङ्मुखमुपवेश्य आचम्य प्राणानायम्य शान्तिपाठे पठिते देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम इह जन्मनि जन्मान्तरं वा कृतसमस्तपापक्षयपूर्वकधर्मार्थकाममोक्षसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं ब्राह्मणद्वारा श्रीमद्भागवतसप्ताहयज्ञं करिष्ये; तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणपतिपूजनादिनान्दीश्राद्धान्तं पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डवत्सर्वं सम्पादयेत्। ततो वरणद्रव्याणि गृहीत्वा देशकालो सङ्कीर्त्य 'मम सर्वविधपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं जन्मजन्मान्तरे श्रीभगवद्भक्तिप्राप्त्यर्थं च श्रीमद्भागवतसप्ताहकथाश्रवणार्थ-ममुकगोत्रममुकवेदशाखाध्यायिनं ब्राह्मणं श्रावयितारमेभिर्द्रव्यैस्त्वामहं वृणे'। 'ॐ वृतोऽस्मीति' प्रतिवचनान्तरं वस्त्रालङ्कारैः सम्पूज्य प्रार्थयेत्।

शुकरूप द्विजश्रेष्ठ सर्वशास्त्रविशारद। श्रीभागवतव्याख्यानादज्ञानं मे विनाशय॥
इति सम्प्रार्थ्य वक्तारं वरयेत्पञ्च वाडवान्। द्वादशाक्षरमन्त्रस्य जपार्थं मुनिसत्तम॥

ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम सर्वविधपातकनिवृत्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं करिष्यमाणश्रीमद्भागवतसप्ताहयज्ञ कर्मणः साङ्गतासिद्धये अमुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्द्रव्यैर्विष्णोर्द्वादशाक्षरमन्त्रजपकरणार्थं त्वामहं वृणे' इति वृत्वा वरणद्रव्यैः सम्पूज्य प्रार्थयेत्। एवमेव गायत्रीजपार्थं विष्णुसहस्त्रनामजपार्थं च वृणुयात्। ततः सर्वतोभद्रमण्डले विष्णुप्रतिमां संस्थाप्य पुरुषसूक्तेन द्वादशाक्षरमन्त्रेण वा षोडशोपचारैः सम्पूज्य प्रदक्षिणाचतुष्टयं कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य प्रार्थयेत्।

संसारसागरे मग्नं दीनं मां करुणानिधे। कर्म्मग्राहगृहीताङ्गं मामुद्धर भवार्णवात्॥

ततः श्रीमद्भागवतपूजां षोडशोपचारैः कृत्वा वस्त्राभरणपुष्पमालाफलनैवेद्यादि निवेद्य प्रदक्षिणां कृत्वा प्रार्थयेत्।

प्रयोग—पूर्वदिन (कथारम्भ से एक दिन पूर्व) चान्द्रायण व्रत को धेनुदानादि के द्वारा सम्पन्न करके पूर्व की भाँति प्रायश्चित्त कर्म सम्पादित करके प्रारम्भ के दिन नित्यकर्म करके चन्द्र-ताराबलान्वित शुभ मुहूर्त में गोबर से लीपकर कथास्थान पर शुद्ध आसन पर पूर्व की ओर मुख करके बैठे। अपने सामने उत्तर मुख करके पूर्वोक्त लक्षणों से युक्त पण्डित को भी आसन पर बैठाये। फिर आचमन तथा प्राणायाम करके शान्तिपाठ पढ़कर देश-काल का उच्चारण करके 'मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा कृतसमस्तपापक्षयपूर्वकधर्मार्थकाममोक्षसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं ब्राह्मणद्वारा श्रीमद्भागवतसप्ताहयज्ञं करिष्ये; तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं, नान्दीश्राद्धञ्च करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प कर गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्त पूर्वोक्त पद्धतिकाण्ड में वर्णित सभी कर्मों को सम्पादित करे। फिर वरण द्रव्य लेकर देश-काल का उच्चारण कर 'मम सर्वविधपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं च श्रीमद्भागवत-सप्ताहकथाश्रवणार्थममुकगोत्रममुकवेदशाखाध्यायिनं ब्राह्मणं श्रावयितारमेभिर्द्रव्यैः त्वामहं वृणे' ऐसा कहकर आचार्य का वरण करे। आचार्य 'वृतोऽस्मि' ऐसा प्रतिवचन कहे। फिर प्रतिवचनानन्तर आचार्य को वस्त्रालङ्कार से पूजकर प्रार्थना करे। 'हे शुकरूप द्विजश्रेष्ठ सर्वशास्त्रविशारद! आप श्रीमद्भागवत के व्याख्यान द्वारा मेरे अज्ञान को दूर करें।' ऐसा कहकर फिर पाँच ब्राह्मणों का वरण करे। वे द्वादशाक्षर मन्त्र का जप करें। फिर देश-काल का संकीर्त्तन करके 'मम सर्वविधपातकनिवृत्तिद्वारा------------------ त्वामहं वृणे' इत्यादि मूलोक्त संकल्प पढ़कर पाँच ब्राह्मणों का वरण करे। उनको सामग्री से पूजित करके प्रार्थना करे। इसी प्रकार गायत्री-जपार्थ तथा विष्णुसहस्रनाम के जप के लिये भी ब्राह्मणों का वरण करे।

फिर सर्वतोभद्रमण्डल पर विष्णुप्रतिमा स्थापित करके पुरुषसूक्त से या द्वादशाक्षर मन्त्र से षोडशोपचार से उसका पूजन कर चार प्रदक्षिणा करके साष्टाङ्ग प्रणाम कर प्रार्थना करे—हे हृदयानिधि! मैं संसार सागर में मग्न हूँ, दीन हूँ, मेरा उद्धार कीजिये। मेरा अङ्ग कर्मरूपी ग्राह ने पकड़ लिया है, उससे बचाइये।' फिर भागवत की पूजा षोडशोपचार से करके वस्त्राभरण, पुष्पमाला, फल, नैवेद्य आदि निवेदित कर प्रदक्षिणा करके प्रार्थना करे।

श्रीमद्भागवताख्यस्त्वं प्रत्यक्षः कृष्ण एव हि। स्वीकृतोऽसि मया नाथ मुक्त्यर्थं भवसागरे॥ १॥
मनोरथो मदीयोऽयं सफलः सर्वथा त्वया। निर्विघ्नेनैव कर्त्तव्यो दासोऽहं तव केशव॥ २॥
एवं दीनं वचः प्रोक्त्वा वक्तारं चापि पूजयेत्। सम्भूष्य वस्त्रभूषाभिः पूजान्ते तं च संस्तवेत्॥ ३॥
ब्राह्मणान्वैष्णवाञ्चान्यांस्तथा कीर्त्तनकारिणः। नत्वा सम्पूज्य दत्त्वार्घ्यं स्वयमासनमाविशेत्॥ ४॥
लोकचिन्ताधनागारपुत्रचिन्ताच्युतश्च यः। कथाचिन्ताशुद्धमतिः स लभेत्फलमुत्तमम्॥ ५॥

श्रीमद्भागवत नाम प्रत्यक्ष कृष्ण ही है; इस भवसागर से मुक्ति के लिये मैं आपको स्वीकार करता हूँ। मेरा यह मनोरथ आपके द्वारा सर्वथा सफल हो। आप इसे निर्विघ्न सम्पन्न करायें। हे केशव! मैं आपका दास हूँ। इस प्रकार की दीन वाणी से वक्ता का भी पूजन करे। वस्त्र भूषा देकर फिर उससे प्रार्थना करे। वहाँ पर जो ब्राह्मण-वैष्णव आदि कीर्तनकारी हों, उन सबको प्रणाम एवं पूजन करके तथा अर्घ्य देकर अपने आसन पर बैठे। लोकचिन्ता, पुत्रचिन्ता, धनचिन्ता, घर की चिन्ता को त्यागकर जो केवल भगवान् की चिन्ता करता हुआ कथाश्रवण करता है, उसे उत्तम फल मिलता है॥ १-५॥

आसूर्योदयमारभ्य सार्द्धं त्रिप्रहरान्तकम्। वाचनीया कथा सम्यग्धीरकण्ठं सुधीमता॥ ६॥
कथाविरामः कर्त्तव्यो मध्याह्ने घटिकाद्वयम्। कथावसाने कर्त्तव्यं कीर्त्तनं केशवस्य च॥ ७॥
उपवासः प्रकर्त्तव्यः श्रोतृभिस्तत्फलेप्सुभिः। तदशक्तौ हविष्यान्नं सकृत्स्वल्पं समाहरेत्॥ ८॥
जलेनापि फलेनापि दुग्धेन च घृतेन वा। केवलेनैव कर्त्तव्यं निर्विघ्नं धारणं तनोः॥ ९॥
ब्रह्मचर्यमधःसुप्तिः पत्रावल्यां च भोजनम्। कथासमाप्तौ भुक्तिं च कुर्य्यान्नित्यं कथाव्रती॥ १०॥
कामं क्रोधं मदं लोभं दम्भं मात्सर्यमेव च। मोहं द्वेषं तथा हिंसां निन्दा चापि विवर्जयेत्॥ ११॥
सत्यं शौचं दयां मौनमार्जवं विनयं तथा। मनःप्रसन्नतां चापि बुधः कुर्यात्कथाव्रती॥ १२॥

कथा का नियम—सूर्यादि से प्रारम्भ कर साढ़े तीन प्रहर-पर्यन्त सम्यक् धीर कण्ठ से कथा कहनी चाहिये। मध्याह्न में दो घटी के लिये कथा में विराम करना चाहिये। कथा की समाप्ति पर श्री विष्णु का कीर्तन करना चाहिये। इसका फल चाहने वाले श्रोताओं को उपवास रखना चाहिये। उसमें असमर्थता होने पर हविष्यान्न का भोजन करना चाहिये, वह भी अल्पमात्रा में एक ही बार करना चाहिये। जल से, फल से, दुग्ध से अथवा घृत से निर्विघ्नतापूर्वक शरीर को धारण करना चाहिये। ब्रह्मचर्य का पालन, भूमि पर शयन, पत्तल में भोजन कथासमाप्ति के बाद ही कथाव्रती को नित्य करना चाहिये। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, दम्भ, मात्सर्य, द्वेष, हिंसा, निन्दा—इन सबको छोड़ देना चाहिये। सत्य, शौच, दया, मौन, आर्जव (ईमानदारी), विनय, मन की प्रसन्नता—इनको कथाव्रती को धारण करना चाहिये॥ ६-१२॥

श्रीकामस्तनयार्थी च जयकामश्च मोक्षधीः। शृणुयाद्वै भागवतं निष्कामः श्रीहरिं लभेत्॥ १३॥
दरिद्रश्च क्षयी रोगी निर्भाग्यः पापकर्म्मवान्। अनपत्यो मोक्षकामः शृणुयात्स कथामिमाम्॥ १४॥
अपुष्पा काकवन्ध्या च वन्ध्या या च मृतार्भका। स्त्रवद्गर्भा च या नारी तया श्राव्या प्रयत्नतः॥ १५॥

जो लक्ष्मी चाहता हो, पुत्र चाहता हो अथवा मोक्ष चाहता हो, उसे इस कथा को सुनना चाहिये अथवा जो निष्काम भाव से कथा सुनता है, उसे श्रीहरि की प्राप्ति होती है। दरिद्र, क्षयरोगी, निर्भाग्य, पापकर्मा, सन्तानहीन तथा मोक्षकामी को यह कथा सुननी चाहिये। जो स्त्री अपुष्पा, काकवन्ध्या, मृतवत्सा, स्त्रवद्गर्भा हो, उसे यह कथा प्रयत्नपूर्वक सुनानी चाहिये॥ १३-१५॥

सप्तमे दिवसे कुर्याल्लङ्घनं तत्समाप्तिके। वक्तुश्च पूजा कर्त्तव्या गोभूस्वर्णाम्बरादिभिः॥ १६॥
प्रसादं तुलसीं मालां श्रोतृभ्यः प्रतिपादयेत्। उत्सवश्च तथा कार्यो गीतवाद्यविशारदैः॥ १७॥
जयशब्दो नमःशब्दः शङ्खशब्दश्च गीयताम्। विप्रेभ्यो याचकेभ्यश्च वित्तमन्नं प्रदीयताम्॥ १८॥
विरक्तश्चेद्भवेच्छ्रोता गीता वाच्या परेऽहनि। गृहस्थश्चेत्तदा होमः कर्त्तव्यः कर्म्मशान्तये॥ १९॥

सप्ताह कथा पूर्ण होने के पश्चात् करणीय—सातवें दिन लङ्घन करना चाहिये तथा वक्ता की पूजा गाय, पृथ्वी, सुवर्ण तथा वस्त्रादि से करनी चाहिये। प्रसाद-तुलसी-माला श्रोताओं में बाँटना चाहिये। गीत-वाद्यविशारदों के द्वारा उत्सव होना चाहिये। नमः शब्द, जय शब्द तथा शङ्ख शब्द होना चाहिये। ब्राह्मणों तथा भिखारियों को वित्त तथा अन्न देना चाहिये। यदि श्रोता विरक्त हो तो गीता पर प्रवचन भी होना चाहिये। यह कार्य आठवें दिन हो। यदि गृहस्थ श्रोता हो तो उसकी शान्तिहेतु होम करना चाहिये॥ १६-१९॥

प्रतिश्लोकं च जुहुयाद्विधिना दशमस्य च। पायसं मधुसर्पिश्च तिलतण्डुलकान् यवान्॥ २०॥
शर्करां च प्रियालं च द्राक्षां बादामखर्जुरौ। अम्भोजानि च कर्पूरं चन्दनागुरुणी पुरम्॥ २१॥
लवङ्गं बिल्वपत्राणि सहस्रं च पृथक् हुनेत्। अथ वा हवनं कुर्याद्गायत्र्या सुसमाहितः॥ २२॥

होम-कथन—दशम स्कन्ध के प्रति श्लोक से पायस, मधु, घृत, तिल, तण्डुल तथा यवों का; शर्करा, चिरौंजी, दाख, बादाम, खर्जूर, कमल, कपूर, चन्दन, अगुरु, लवङ्ग का हवन करना चाहिये तथा एक सहस्र बिल्वपत्रों का हवन पृथक् से करना चाहिये अथवा गायत्री मन्त्र से समाहित चित्त से हवन करना चाहिये॥ २०-२२॥

तन्मयत्वातपुराणस्य परमस्यास्य तत्त्वतः। होमाशक्तौ बुधो हौम्यं दद्यात्तत्फलसिद्धये॥ २३॥
नानाछिद्रनिरोधार्थं न्यूनताधिक्यताख्ययोः। दोषयोः प्रशमार्थं तु पठेन्नामसहस्रकम्॥ २४॥

तन्मयतापूर्वक इस परम पुराण का तत्त्वज्ञानपूर्वक श्रवण करने से होम का सामर्थ्य न होने पर भी होम का फल प्राप्त होता है। अनेक प्रकार के छिद्रों को रोकने के लिये न्यूनता तथा अधिकता के दोष के परिहारार्थ श्रीविष्णुसहस्रनाम का पाठ करना चाहिये॥ २३-२४॥

द्वादशाष्टादशा वापि श्रद्धया ह्यधिकांस्तथा। पायसेनाशयेद्विप्रान् स्वर्णं धेनुश्च दक्षिणा॥ २५॥
शक्तौ पलत्रयमितं स्वर्णसिंहं विधाय च। तत्रास्य पुस्तकं स्थाप्य लिखितं ललिताक्षरम्॥ २६॥
सम्पूज्यावाहनाद्यैस्तदुपचारैः सदक्षिणम्। वस्त्रभूषणगन्धाद्यैः पूजिताय यतात्मने॥ २७॥
आचार्य्याय सुधीर्दत्त्वा मुक्तः स्याद्भवबन्धनैः। एवं कृते विधाने च सर्वपापनिवारणे॥ २८॥
फलदं स्यात्पुराणं तु श्रीमद्भागवतं शुभम्। धर्म्मार्थकाममोक्षाणां साधनं नात्र संशयः॥ २९॥
इति ते कथितं सर्वं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि। श्रीमद्भागवतेनैव भुक्तिर्मुक्तिः प्रकाशिता॥ ३०॥

इति पाद्मे उत्तरखण्डे श्रीमद्भावत पारायणसप्ताहविधानं सप्रयोगं समाप्तम्।

सहस्रनाम के पाठों की संख्या बारह या अठारह अथवा श्रद्धा के अनुसार अधिक भी हो सकती है। इतनी ही संख्या में पायस से ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। स्वर्ण, धेनु तथा दक्षिणा भी देनी चाहिये। यदि शक्ति हो तो तीन पल भार सोने का सिंह बनवाकर उसके समीप में ललित अक्षरों में लिखी हुई पुस्तक को स्थापित कर आवाहन आदि उपचारों से उसे पूजित कर दक्षिणा, वस्त्राभूषण, गन्धादि से पूजित कर आचार्य को देकर बुद्धिमान् व्यक्ति को भव-बन्धनों से मुक्त हो जाना चाहिये। इस प्रकार का विधान सभी पापों का निवारण करने वाला होता है। यह श्रीमद्भागवत पुराण फल देने वाला तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—इन चारो पदार्थों का साधन है; इसमें कोई सन्देह नहीं है। यह आपसे सब कुछ बता दिया; अब और अधिक क्या सुनने की इच्छा है॥ २५-३०॥

विशेष विमर्श—यहाँ इस ग्रन्थ (अनुष्ठानप्रकाश) में केवल पद्मपुराण के अनुसार श्रीमद्भागवत महापुराण की पारायण-विधि दी गई है; परन्तु पुराणों, वैष्णवतन्त्रों तथा अन्य संस्कृत वाङ्मय में कामनाभेद से तथा मतान्तरों से अनेक प्रकार से पाठ एवं कथा के विश्रामस्थलों, कामनापरक सम्पुटों, सामग्रियों आदि का वर्णन उपलब्ध होता है; अतः उपयोगिता की दृष्टि से उनमें से कुछ को यहाँ दिया जा रहा है—

विभिन्न मतों से कामनापरक भेद से श्रीमद्भागवत के सप्ताह पारायण

क्रमांक	कामना	ऋषि का प्रमाण	मास एवं पक्ष	सप्ताह का दिन क्रम	से प्रारम्भ कर			इतने तक समाप्त करे			दिन भर पाठ किये गये कुल अध्यायों की संख्या	सप्ताह के अध्यायों का महायोग
					स्कन्ध	अध्याय	श्लोक	स्कन्ध	अध्याय	श्लोक		
१	धनप्राप्ति के लिये	शाशम्पायन का मत	भाद्रपद कृष्णपक्ष	प्रथम दिवस	१	१	१	४	९	अन्तिम	कुल ७१ अध्याय = एकहत्तर का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	४	१०	१	६	१३	अन्तिम	कुल ६१ अध्याय = एकसठ का पाठ	
				तृतीय दिवस	६	१४	१	९	७	अन्तिम	कुल ५२ अध्याय = बावन का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	९	८	१	१०	३४	अन्तिम	कुल ५१ अध्याय = इक्यावन का पाठ	
				पञ्चम दिवस	१०	३५	१	१०	७३	अन्तिम	कुल ३९ अध्याय = उनतालीस का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	७४	१	१०	९०	अन्तिम	कुल १७ अध्याय = सत्रह का पाठ	
				सप्तम दिवस	११	१	१	१२	१३	अन्तिम	कुल ४४ अध्याय = चौंवालीस का पाठ	
२	पुत्र की प्राप्ति के लिये	वसिष्ठ ऋषि का मत	वैशाख मास	प्रथम दिवस	१	१	१	३	२४	अन्तिम	कुल ५३ अध्याय = तिरपन का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	३	२५	१	५	३	अन्तिम	कुल ४३ अध्याय = तैंतालीस का पाठ	
				तृतीय दिवस	५	४	१	७	८	अन्तिम	कुल ५० अध्याय = पचास का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	७	९	१	१०	४	अन्तिम	कुल ५९ अध्याय = उनसठ का पाठ	
				पञ्चम दिवस	१०	५	१	१०	५५	अन्तिम	कुल ५१ अध्याय = इक्यावन का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	५६	१	११	६	अन्तिम	कुल ४१ अध्याय = इकतालीस का पाठ	
				सप्तम दिवस	११	७	१	१२	१३	अन्तिम	कुल ३८ अध्याय = अड़तीस का पाठ	
३	निष्काम भाव से	श्री सूत जी का मत	कार्तिक शुक्लपक्ष	प्रथम दिवस	१	१	१	३	२०	अन्तिम	कुल ४९ अध्याय = उनचास का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	३	२१	१	५	२३	अन्तिम	कुल ६७ अध्याय = सड़सठ का पाठ	
				तृतीय दिवस	५	२४	१	७	१५	अन्तिम	कुल ३७ अध्याय = सैंतीस का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	८	१	१	९	२४	अन्तिम	कुल ४८ अध्याय = अड़तालीस का पाठ	
				पञ्चम दिवस	१०	१	१	१०	४२	अन्तिम	कुल ४२ अध्याय = बयालीस का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	४३	१	१०	९०	अन्तिम	कुल ४८ अध्याय = अड़तालीस का पाठ	
				सप्तम दिवस	११	१	१	१२	१३	अन्तिम	कुल ४४ अध्याय = चौवालीस का पाठ	
४	सङ्कटमोचन के लिये	श्री विश्वामित्र का मत	मार्गशीर्ष मास	प्रथम दिवस	१	१	१	२	१०	अन्तिम	कुल २९ अध्याय = उन्तीस का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	३	१	१	४	३१	अन्तिम	कुल ६४ अध्याय = चौंसठ का पाठ	
				तृतीय दिवस	५	१	१	६	१९	अन्तिम	कुल ४५ अध्याय = पैंतालीस का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	७	१	१	८	२४	अन्तिम	कुल ३९ अध्याय = उनतालीस का पाठ	
				पञ्चम दिवस	९	१	१	१०	४९	अन्तिम	कुल ७३ अध्याय = तिहत्तर का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	५०	१	११	३१	अन्तिम	कुल ७२ अध्याय = बहत्तर का पाठ	
				सप्तम दिवस	१२	१	१	१२	१३	अन्तिम	कुल १३ अध्याय = तेरह का पाठ	

विभिन्न ऋषियों के मत से कामनापरक भेद से श्रीमद्भागवत सप्ताह के पारायण

क्रमांक	कामना	प्रमाण	मास	सप्ताह के दिवसों का क्रम	इतने से			इतने तक			दिन भर में पठनीय कुल अध्यायों की संख्या	सप्ताह के अध्यायों का महायोग
					स्कन्ध	अध्याय	श्लोक	स्कन्ध	अध्याय	श्लोक		
५	विघ्ननाश के लिये	जमदग्नि ऋषि	पौष मास में	प्रथम दिवस	१	१	१	३	१९	अन्तिम	कुल ४८ = अड़तालीस अध्याय का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	३	२०	१	५	६	अन्तिम	कुल ५१ = इक्यावन अध्याय का पाठ	
				तृतीय दिवस	५	७	१	७	१०	अन्तिम	कुल ४९ = उनचास अध्याय का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	७	११	१	९	२४	अन्तिम	कुल ५३ = तिरपन अध्याय का पाठ	
				पञ्चम दिवस	१०	१	१	१०	४९	अन्तिम	कुल ४९ = उनचास अध्याय का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	५०	१	१०	९०	अन्तिम	कुल ४१ = इकतालीस अध्याय का पाठ	
				सप्तम दिवस	११	१	१	१२	१३	अन्तिम	कुल ४४ = चौवालीस अध्याय का पाठ	
६	बन्धन से मुक्तिहेतु	भारद्वाज ऋषि का मत	माघ मास में	प्रथम दिवस	१	१	१	३	३३	अन्तिम	कुल ६२ = बासठ अध्याय का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	४	१	१	५	२६	अन्तिम	कुल ५७ = सत्तावन अध्याय का पाठ	
				तृतीय दिवस	६	१	१	७	१५	अन्तिम	कुल ३४ = चौंतीस अध्याय का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	८	१	१	९	२४	अन्तिम	कुल ४८ = अड़तालीस अध्याय का पाठ	
				पञ्चम दिवस	१०	१	१	१०	९०	अन्तिम	कुल ९० = नब्बे अध्याय का पाठ	
				षष्ठ दिवस	११	१	१	११	३१	अन्तिम	कुल ३१ = इकतीस अध्याय का पाठ	
				सप्तम दिवस	१२	१	१	१२	१३	अन्तिम	कुल १३ = तेरह अध्याय का पाठ	
७	शत्रु को पराजित करने के लिये	गौतम के मत से	फाल्गुन मास में	प्रथम दिवस	१	१	१	३	१९	अन्तिम	कुल ४८ = अड़तालीस अध्याय का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	३	२०	१	५	१५	अन्तिम	कुल ६० = साठ अध्याय का पाठ	
				तृतीय दिवस	५	१६	१	७	१५	अन्तिम	कुल ४५ = पैंतालीस अध्याय का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	८	१	१	१०	१२	अन्तिम	कुल ६० = साठ अध्याय का पाठ	
				पञ्चम दिवस	१०	१३	१	१०	८४	अन्तिम	कुल ७२ = बहत्तर अध्याय का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	८५	१	११	३१	अन्तिम	कुल ३७ = सैंतीस अध्याय का पाठ	
				सप्तम दिवस	१२	१	१	१२	१३	अन्तिम	कुल १३ = तेरह अध्याय का पाठ	
८	रोगमुक्ति	अत्रि मुनि	चैत्र मास में	प्रथम दिवस	१	१	१	३	२०	अन्तिम	कुल ४९ = उनचास अध्याय का पाठ	तीन सौ पैंतीस
				द्वितीय दिवस	३	२१	१	५	६	अन्तिम	कुल ५० = पचास अध्याय का पाठ	
				तृतीय दिवस	५	७	१	६	१९	अन्तिम	कुल ३९ = उनतालीस अध्याय का पाठ	
				चतुर्थ दिवस	७	१	१	९	२०	अन्तिम	कुल ५९ = उनसठ अध्याय का पाठ	
				पञ्चम दिवस	९	२१	१	१०	३५	अन्तिम	कुल ३९ = उनतालीस अध्याय का पाठ	
				षष्ठ दिवस	१०	३६	१	११	६	अन्तिम	कुल ६१ = इकसठ अध्याय का पाठ	
				सप्तम दिवस	११	७	१	१२	१३	अन्तिम	कुल ३८ = अड़तीस अध्याय का पाठ	

कृत्यसारसमुच्चय के अनुसार सप्ताह कथा क्रम—

आद्ये हिरण्याक्षवधं द्वितीये भरतावधिः। तृतीये त्वब्धिमथनं चतुर्थे कृष्णजन्म च॥
पञ्चमे रुक्मिणीग्राहं षष्ठे चोद्धवसंज्ञकम्। सप्तमेऽह्नि समाप्तिः स्यात् सप्ताहमनुरब्रवीत्॥

अर्थात् प्रथम दिन हिरण्याक्षवध-पर्यन्त कथा कहें। दूसरे दिन भरतचरित्र तक कथा कहें। तीसरे दिन समुद्रमन्थन तक कथा कहें। चौथे दिन कृष्णजन्म-पर्यन्त कथा कहें। पाँचवें दिन रुक्मिणीविवाह-पर्यन्त कथा कहें। छठे दिन उद्धव-गोपी संवाद तक तथा सातवें दिन समाप्ति-पर्यन्त कथा कहनी चाहिये। तदनुसार—

प्रथम दिवस—प्रारम्भ से लेकर तीसरे स्कन्ध के १९वें अध्याय तक कुल ४८ अध्याय।

द्वितीय दिवस—तृतीय स्कन्ध के २०वें अध्याय से प्रारम्भ कर पञ्चम स्कन्ध के १५वें अध्याय तक कुल ६० अध्याय।

तृतीय दिवस—पञ्चम के १६वें अध्याय से प्रारम्भ कर अष्टम स्कन्ध के नवम अध्याय तक कुल ५४ अध्याय।

चतुर्थ दिवस—अष्टम स्कन्ध के दशम अध्याय से प्रारम्भ कर दशम स्कन्ध के तृतीय अध्याय तक कुल ४२ अध्याय।

पञ्चम दिवस—दशम स्कन्ध के चतुर्थ अध्याय से प्रारम्भ कर दशम के तिरपनवें अध्याय तक कुल ५० अध्याय।

षष्ठ दिवस—दशम के चौवनवें अध्याय से लेकर ग्यारहवें स्कन्ध के सातवें अध्याय तक कुल ४४ अध्याय।

सप्तम दिवस—ग्यारहवें स्कन्ध के आठवें अध्याय से लेकर समाप्ति तककुल ३७ अध्याय।

कौशिकसंहिता के अनुसार सप्ताह-पारायण का विधान—

सप्ताहे पाठनियमं शृण शौनक संयतः। मनुकर्दमसंवादपर्यन्तं प्रथमेऽहनि॥ १॥
ऋषभाख्यानपर्यन्तं द्वितीये दिवसे वदेत्। तृतीये दिवसे कुर्यात् सप्तमस्कन्धपूरणम्॥ २॥
कृष्णाविर्भावपर्यन्तं चतुर्थेऽहनि वाचयेत्। रुक्मिण्युद्वाहपर्यन्तं पञ्चमेऽह्नि वदेत्सुधीः॥ ३॥
श्रीहंसाख्यानपर्यन्तं षष्ठे वाचयेद् ध्रुवम्। सप्तमे दिने कुर्याच्छ्रीभागवतपूरणम्॥ ४॥

अर्थात् हे शौनक! सुनो; मैं सप्ताहपाठ के नियम को बताता हूँ। प्रथम दिन मनु-कर्दमसंवाद-पर्यन्त कथा या पाठ होना चाहिये। द्वितीय दिन ऋषभाख्यान-पर्यन्त पारायण चले। तीसरे दिन सप्तम स्कन्ध की समाप्ति तक पाठ तथा कथा चलनी चाहिये। चौथे दिन कृष्णजन्म तक कथा बाँचनी चाहिये। पाँचवें दिन रुक्मिणी जी के विवाह तक कथा चले। छठे दिन श्रीहंसाख्यान तक व्याख्यान एवं पाठ करना चाहिये तथा सातवें दिन श्रीमद्भागवत का समापन होना चाहिये।

श्रीमद्भागवत के द्वादश स्कन्धों का श्रीकृष्ण के शरीर के साथ समन्वय—

भगवान् श्रीकृष्ण के शरीराङ्गों के साथ द्वादश अङ्गों का समन्वय ग्रन्थों में इस प्रकार से वर्णित है—

पादानि जानुपर्यन्तं प्रथमस्कन्धईरित। तदूर्ध्वं कटिपर्यन्तं द्वितीयस्कन्ध उच्यते॥
तृतीयो नाभिरित्युक्तश्चतुर्थमुदरं मतम्। पञ्चमो हृदयं प्रोक्तं षष्ठः कण्ठसबाहुकम्॥
सर्वलक्षणसंयुक्तः सप्तमो मुखमुच्यते। अष्टमं चक्षुषी विष्णोः कपोलो भृकुटिपटः॥
दशमो ब्रह्मरन्ध्रश्च मन एकादश स्मृतः। आत्मा तु द्वादशः स्कन्धः श्रीकृष्णस्य प्रकीर्तितः॥

स्कन्ध	भगवान् के अंग
१. प्रथम	पाद से जानुपर्यन्त
२. द्वितीय	जानु से कटिपर्यन्त
३. तृतीय	नाभि
४. चतुर्थ	उदर
५. पञ्चम	हृदय
६. षष्ठ	कण्ठ एवं बाहु
७. सप्तम	मुख
८. अष्टम	नेत्र
९. नवम	कपोल, भृकुटि
१०. दशम	ब्रह्मरन्ध्र
११. एकादश	मन
१२. द्वादश	आत्मा

भगवान् के पैरों से लेकर घुटनों तक प्रथम स्कन्ध कहा गया है। उसके ऊपर कमर तक का भाग द्वितीय स्कन्ध है। तृतीय स्कन्ध भगवान् की नाभि तथा चतुर्थ स्कन्ध उनका उदर है। पञ्चम स्कन्ध भगवान् का हृदय तथा छठा स्कन्ध भगवान् का बाहु एवं कण्ठ है। सातवाँ स्कन्ध भगवान् का सर्व लक्षणयुक्त मुखमण्डल है तथा आठवाँ नेत्र, नवाँ भृकुटी तथा कपोल, दशम ब्रह्मरन्ध्र, ग्यारहवाँ मन तथा बारहवाँ स्कन्ध भगवान् की आत्मा है।

एक पक्ष में सप्ताह का अनुष्ठान करने का सम्प्रदाय—पद्मपुराण के निम्न श्लोक के अनुसार शुकदेव जी ने भाद्रशुक्ल नवमी से भाद्रशुक्ल पूर्णिमा तक कथा समाप्त की थी। तदनुसार कुछ विद्वानों के मत से सप्ताह कथा या पारायण का अनुष्ठान दो पक्ष में समाप्त न कर एक ही पक्ष में कर देना चाहिये—

आकृष्ण निर्गमाद् त्रिंशद् वर्षाधिकगते कलौ। नवमीतो नभस्ये च कथाऽऽरम्भं शुकोऽकरोत्॥

अर्थात् श्रीकृष्ण के गोलोक धाम जाने पर जब कलियुग के तीस वर्ष व्यतीत हो गये तब भाद्रपद शुक्लपक्ष की नवमी को श्री शुकदेव जी ने कथारम्भ (सप्ताह कथा आरम्भ) किया था; अत: उसमें सप्ताह का समापन पूर्णिमा पर हो गया था। इस वचन के अनुसार कुछ विद्वान् दो पक्ष में सप्ताह कथा चलने का निषेध करते हैं; परन्तु यह कोई अनिवार्य नियम नहीं है और न ही इसके लिये कोई धर्मशास्त्रीय निर्देश प्राप्त होता है।

सप्ताह से अधिक अवधि के श्रीमद्भागवत-पारायण के विधान

शास्त्रों में एक सप्ताह से अधिक दिनों के भी श्रीमद्भागवत महापुराण के पाठ (पारायण) अनुष्ठानादि का निर्देश है; तदनुसार दस दिन, पन्द्रह दिन, अठारह दिन तथा मासपारायण के भी निर्देश प्राप्त होते हैं।

दस दिन का पारायण श्री कश्यप मुनि के मत से आषाढ़ शुक्ल पक्ष में करणीय

दशाह पारायण दिवस क्रम	प्रारम्भ		समाप्ति		दशाह में पठनीय अध्यायों की संख्या	
	स्कन्ध	अध्याय से	स्कन्ध	अध्याय तक		
१. प्रथम दिवस	प्रथम स्कन्ध	प्रथमाध्यायत:	तृतीय स्कन्ध	षष्ठाध्यायान्त	१९+१०+६= ३५ (पैंतीस)	तीन सौ पैंतीस अध्याय
२. द्वितीय दिवस	तृतीय स्कन्ध	सप्तमाध्यायत:	चतुर्थ स्कन्ध	सप्तमाध्यायान्त	२७+७ = ३४ (चौंतीस)	
३. तृतीय दिवस	चतुर्थ स्कन्ध	अष्टमाध्यायत:	पञ्चम स्कन्ध	नवमाध्याय-पर्यन्त	२४+९ = ३३ (तैंतीस)	
४. चतुर्थ दिवस	पञ्चम स्कन्ध	दशमाध्यायत:	षष्ठ स्कन्ध	एकोनविंशाध्यायान्त	१७+१९ = ३६ (छत्तीस)	
५. पञ्चम दिवस	सप्तम स्कन्ध	प्रथमाध्यायत:	अष्टम स्कन्ध	चतुर्विंशत्यध्यायान्त	१५+२४ = ३९ (उनतालीस)	
६. षष्ठ दिवस	नवम स्कन्ध	प्रथमाध्यायत:	दशम स्कन्ध	एकादशाध्यायान्त	२४+११ = ३५ (पैंतीस)	
७. सप्तम दिवस	दशम स्कन्ध	द्वादशाध्यायत:	दशम स्कन्ध	पञ्चचत्वारिंशदध्यायान्त	= ३४ (चौंतीस)	
८. अष्टम दिवस	दशम स्कन्ध	षट्चत्वारिंशदध्यायत:	दशम स्कन्ध	एकोनशीत्यध्यायान्त	= ३४ (चौंतीस)	
९. नवम दिवस	दशम स्कन्ध	अशीति अध्यायत:	एकादश स्कन्ध	त्रयोविंशत्यध्यायान्त	११+२३ = ३४ (चौंतीस)	
१०. दशम दिवस	एकादश स्कन्ध	चतुर्विंशाध्यायत:	द्वादश स्कन्ध	त्रयोदशाध्यायान्त	८+१३ = २१ (इक्कीस)	

पञ्चदश दिवसात्मक श्रीमद्भागवत पारायण—ग्रन्थान्तरों में श्रीमद्भागवत का पारायण पन्द्रह दिनों में भी होता है, इसके दो प्रकार हैं। प्रथम प्रकार में प्रथम दिन से लेकर चौदहवें दिन तक प्रतिदिन कुल २२ अध्यायों का पाठ होता है। इस प्रकार चौदह दिनों में २२×१४=३०८ अध्याय पढ़े जाते हैं तथा पन्द्रहवें दिन शेष २७ अध्याय पढ़कर पूरा पाठ ३०८+२७=३३५ अध्याय हो जाते हैं।

प्रथम मत से पञ्चदश दिनात्मक भागवत पाठ किसी भी मास के शुक्लपक्ष में आरम्भ करणीय

पञ्चादशाह	स्कन्ध	अध्याय	से	स्कन्ध	अध्याय	तक	कुल अध्याय	दिवस	स्कन्ध	अध्याय	से	स्कन्ध	अध्याय	तक	कुल अध्याय	दिवस	स्कन्ध	अध्याय	से	स्कन्ध	अध्याय	तक	कुल अध्याय
प्रथम दिवस	एक	१	से	दो	३	तक	२२	षष्ठ दिवस	पाँच	१८	से	छठा	१३	तक	२२	एकादश	दशम	२०	से	दशम	४१	तक	२२
द्वितीय „	दो	४	से	तीन	१५	तक	२२	सप्तम „	छठे	१४	से	आठवें	१	तक	२२	द्वादश	दशम	४२	से	दशम	६३	तक	२२
तृतीय „	तीन	१६	से	चार	४	तक	२२	अष्टम „	आठवें	२	से	आठ	२३	तक	२२	त्रयोदश	दशम	६४	से	दशम	८५	तक	२२
चतुर्थ „	चार	५	से	चार	२६	तक	२२	नवम „	आठवें	२४	से	नौवें	२१	तक	२२	चतुर्दश	दशम	८६	से	एकादश	१७	तक	२२
पञ्चम „	चार	२७	से	पाँच	१७	तक	२२	दशम „	नौवें	२२	से	दशम	१९	तक	२२	पञ्चदश	एकादश	१८	से	द्वादश	१३	तक	२७

बृहस्पति के मत से ज्येष्ठ शुक्ल अथवा आषाढ़ कृष्ण में प्रथम दिन आरम्भ करणीय पञ्चादशाह भागवत अनुष्ठान चक्र

दिनक्रम	स्कन्ध	अध्याय	से	स्कन्ध	अध्याय	तक	प्रतिदिन की अध्याय संख्या	दिनक्रम	स्कन्ध	अध्याय	से	स्कन्ध	अध्याय	तक	प्रतिदिन की अध्याय संख्या
१. पहिला	प्रथम	१	से	द्वितीय	२	तक	२१	९. नौवाँ	नवम	७	से	दशम	४	तक	२२
२. दूसरा	द्वितीय	३	से	तृतीय	१५	तक	२३	१०. दशवाँ	दशम	५	से	दशम	२६	तक	२२
३. तीसरा	तृतीय	१६	से	चतुर्थ	४	तक	२२	११. ग्यारहवाँ	दशम	२७	से	दशम	४९	तक	२३
४. चौथा	चतुर्थ	५	से	चतुर्थ	२७	तक	२३	१२. बारहवाँ	दशम	५०	से	दशम	७०	तक	२१
५. पाँचवाँ	चतुर्थ	२८	से	पञ्चम	१८	तक	२२	१३. तेरहवाँ	दशम	७१	से	एकादश	२	तक	२२
६. छठाँ	पञ्चम	१९	से	षष्ठ	१५	तक	२३	१४. चौदहवाँ	एकादश	३	से	एकादश	२५	तक	२३
७. सातवाँ	षष्ठ	१६	से	अष्टम	५	तक	२४	१५. पन्द्रहवाँ	एकादश	२६	से	द्वादश	१३	तक	१९
८. आठवाँ	अष्टम	६	से	नवम	६	तक	२५			अध्यायों का कुल योग—तीन सौ पैंतीस अध्याय→					३३५

मतान्तर से श्रीमद्भागवत के अष्टादश दिनात्मक पारायण का चक्र

अठारह दिनों का क्रम	स्कन्ध के	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	दैनिक पाठ की अध्याय संख्या	अठारह दिनों का क्रम	स्कन्ध के	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	दैनिक पाठ की अध्याय संख्या
पहिला दिन	प्रथम	१	से	प्रथम	१९	तक	१९	दशवाँ दिन	अष्टम	७	से	नवम	२	तक	१८+२=२०
दूसरा दिन	द्वितीय	१	से	तृतीय	८	तक	१०+८=१८	ग्यारहवाँ दिन	नवम	३	से	नवम	२३	तक	२१
तीसरा दिन	तृतीय	९	से	तृतीय	२५	तक	१७	बारहवाँ दिन	नवम	२४	से	दशम	१४	तक	१+१४=१५
चौथा दिन	तृतीय	२६	से	चतुर्थ	८	तक	८+८=१६	तेरहवाँ दिन	दशम	१५	से	दशम	३८	तक	२४
पाँचवाँ दिन	चतुर्थ	९	से	चतुर्थ	२७	तक	१९	चौदहवाँ दिन	दशम	३९	से	दशम	५३	तक	१५
छठाँ दिन	चतुर्थ	२८	से	पञ्चम	७	तक	४+७=११	पन्द्रहवाँ दिन	दशम	५४	से	दशम	७०	तक	१७
सातवाँ दिन	पञ्चम	८	से	षष्ठ	१	तक	१९+१=२०	सोलहवाँ दिन	दशम	७१	से	एकादश	२	तक	२०+२=२२
आठवाँ दिन	षष्ठ	२	से	सप्तम	४	तक	१८+४=२२	सत्रहवाँ दिन	एकादश	३	से	एकादश	२१	तक	१९
नौवाँ दिन	सप्तम	५	से	अष्टम	६	तक	११+६=१७	अठारहवाँ दिन	एकादश	२२	से	द्वादश	१३	तक	१०+१३=२३

भागवतप्रदीप के अनुसार इक्कीस दिन के पाठ का चक्र

(प्रत्येक स्कन्ध के आदि एवं अन्त के श्लोक को दोहरा कर पढ़ना चाहिये)

दिनक्रम	स्कन्ध के	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	दैनिक पाठ के अध्याय क्रम	दिनक्रम	स्कन्ध से	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	दैनिक पाठ के अध्याय क्रम	दिनक्रम	स्कन्ध के	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	दैनिक पाठ के अध्याय क्रम
पहिला दिन	प्रथम	१	से	प्रथम	१६	तक	१६	आठवाँ दिन	पञ्चम	२०	से	षष्ठ	९	तक	७+९=१६	पन्द्रहवाँ दिन	दशम	२३	से	दशम	३९	तक	१६
दूसरा दिन	प्रथम	१७	से	तृतीय	३	तक	३+१०+३=१६	नवाँ दिन	षष्ठ	१०	से	सप्तम	६	तक	१०+६=१६	सोलहवाँ दिन	दशम	४०	से	दशम	५५	तक	१६
तीसरा दिन	तृतीय	४	से	तृतीय	१९	तक	१६	दसवाँ दिन	सप्तम	७	से	अष्टम	७	तक	९+७=१६	सत्रहवाँ दिन	दशम	५६	से	दशम	७१	तक	१६
चौथा दिन	तृतीय	२०	से	चतुर्थ	२	तक	१४+२=१६	ग्यारहवाँ दिन	अष्टम	८	से	अष्टम	२३	तक	१६	अठारहवाँ दिन	दशम	७२	से	दशम	८७	तक	१६
पाँचवाँ दिन	चतुर्थ	३	से	चतुर्थ	१८	तक	१६	बारहवाँ दिन	अष्टम	२४	से	नवम	१५	तक	१+१५=१६	उन्नीसवाँ दिन	दशम	८८	से	एकादश	१३	तक	३+१३=१६
छठाँ दिन	चतुर्थ	१९	से	पञ्चम	३	तक	१३+३=१६	तेरहवाँ दिन	नवम	१६	से	दशम	७	तक	९+७=१६	बीसवाँ दिन	एकादश	१४	से	एकादश	२९	तक	१६
सातवाँ दिन	पञ्चम	४	से	पञ्चम	१९	तक	१६	चौदहवाँ दिन	दशम	८	से	दशम	२३	तक	१६	इक्कीसवाँ दिन	एकादश	३०	से	द्वादश	१३	तक	२+१३=१५

विशेष—श्रीमद्भागवत के द्वैमासिक पारायण, षाण्मासिक पारायण तथा वार्षिक पारायण के भी विधान ग्रन्थों में उपलब्ध हैं, परन्तु एक मास से अधिक का पारायण कठिन कार्य होता है; अतः यहाँ पर केवल मासपारायण का क्रम ही आगे लिखा जा रहा है।

श्रीमद्भागवत मासपारायण अनुष्ठानक्रम-प्रदर्शक चक्र

(बृहस्पति का मत)

(१) इसे शुक्लपक्ष के अन्त में आरम्भ करे (अर्थात् कृष्ण प्रतिपदा से आरम्भ कर) शुक्लपक्ष के अन्त (पूर्णिमा तक) समाप्त करे। अथवा (२) शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ कर कृष्ण अमावास्या पर समाप्त करना चाहिये। इससे प्रजापालन (राजनैतिक सफलता) तथा अन्य सब कामनाएँ सफल होती हैं। (मतान्तर से इसे वैशाख कृष्ण पञ्चमी से ज्येष्ठ शुक्ल पञ्चमी तक करना चाहिये)।

मासपारायण के दिवस (कृष्णपक्ष)	स्कन्ध के	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	दैनिक पाठ के अध्यायों की संख्या	शुक्लपक्ष मास पारायण के दिवस	स्कन्ध के	अध्याय	से	स्कन्ध के	अध्याय	तक	प्रतिदिन की अध्याय संख्या
१. पहिला दिवस	प्रथम	१	से	प्रथम	११	तक	११	१६. सोलहवाँ दिवस	अष्टम	२	से	अष्टम	१५	तक	१४
२. दूसरा दिवस	प्रथम	१२	से	द्वितीय	२	तक	८ + २ = १०	१७. सत्रहवाँ दिवस	अष्टम	१६	से	नवम	४	तक	९ + ४ = १३
३. तीसरा दिवस	द्वितीय	३	से	तृतीय	२	तक	८ + २ = १०	१८. अठारहवाँ दिवस	नवम	५	से	नवम	१८	तक	१४
४. चौथा दिवस	तृतीय	३	से	तृतीय	१२	तक	१०	१९. उन्नीसवाँ दिवस	नवम	१९	से	दशम	६	तक	६ + ६ = १२
५. पाँचवाँ दिवस	तृतीय	१३	से	तृतीय	२३	तक	११	२०. बीसवाँ दिवस	दशम	७	से	दशम	१७	तक	११
६. छठा दिवस	तृतीय	२४	से	चतुर्थ	१	तक	१० + १ = ११	२१. इक्कीसवाँ दिवस	दशम	१८	से	दशम	३०	तक	१३
७. सातवाँ दिवस	चतुर्थ	२	से	चतुर्थ	१०	तक	९	२२. बाईसवाँ दिवस	दशम	३१	से	दशम	४२	तक	१२
८. आठवाँ दिवस	चतुर्थ	११	से	चतुर्थ	२२	तक	१२	२३. तेईसवाँ दिवस	दशम	४३	से	दशम	५४	तक	१२
९. नवाँ दिवस	चतुर्थ	२३	से	पञ्चम	१	तक	९ + १ = १०	२४. चौबीसवाँ दिवस	दशम	५५	से	दशम	६५	तक	११
१०. दशवाँ दिवस	पञ्चम	२	से	पञ्चम	१०	तक	९	२५. पच्चीसवाँ दिवस	दशम	६६	से	दशम	७८	तक	१३
११. ग्यारहवाँ दिवस	पञ्चम	११	से	पञ्चम	२०	तक	१०	२६. छब्बीसवाँ दिवस	दशम	७९	से	दशम	८७	तक	९
१२. बारहवाँ दिवस	पञ्चम	२१	से	षष्ठ	५	तक	६ + ५ = ११	२७. सत्ताईसवाँ दिवस	दशम	८८	से	एकादश	९	तक	३ + ९ = १२
१३. तेरहवाँ दिवस	षष्ठ	६	से	षष्ठ	१६	तक	११	२८. अट्ठाइसवाँ दिवस	एकादश	१०	से	एकादश	२१	तक	१२
१४. चौदहवाँ दिवस	षष्ठ	१७	से	सप्तम	७	तक	३ + ७ = १०	२९. उन्तीसवाँ दिवस	एकादश	२२	से	द्वादश	२	तक	१० + २ = १२
१५. पन्द्रहवाँ दिवस	सप्तम	८	से	अष्टम	१	तक	८ + १ = ९	३०. तीसवाँ दिवस	द्वादश	३	से	द्वादश	१३	तक	११

श्रीमद्भागवत के सप्ताह से न्यून दिनों के पारायण

ग्रन्थों में एक दिवस से लेकर छः दिवस के पारायण ऋषियों के मतानुसार लिखे गये हैं; अतः उनका भी विवरण यहाँ चक्रों द्वारा प्रदर्शित है।

एकाह पारायण (एक दिन में)

दिवस	स्कन्ध	अध्याय	से लेकर	स्कन्ध	अध्याय तक	कुल अध्याय
एक	१	१		१२	१३	३३५

शुक्राचार्य के मतानुसार एक ही दिन में सम्पूर्ण श्रीमद्भागवत के बारहों स्कन्धों का पाठ करना चाहिये। इसे श्रावण कृष्णपक्ष में किसी शुभ दिन में पञ्चाङ्गशुद्धि तथा गोचरशुद्धि देखकर साधन एवं सामर्थ्य का सञ्चय कर सम्पन्न करना चाहिये।

द्व्यह्न पारायण (दो दिनों में)

दिवस	स्कन्ध	अध्याय	प्रारम्भ	स्कन्ध	अध्याय	समाप्ति	दैनिक पाठ की अध्याय संख्या	कुल योग
प्रथम दिन	प्रथम स्कंध	१	से	नवम	१३	तक	१९०	३३५
द्वितीय दिन	नवम	१६	से	द्वादश	१३	तक	१४५	तीन सौ पैंतीस

त्र्यय्यारुणि ऋषि के मतानुसार श्रीमद्भागवत महापुराण का दो दिवसीय पारायण श्रावण शुक्ल पक्ष में करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत त्र्यह पारायण

दिवस	स्कन्ध	अध्याय	प्रारम्भ	स्कन्ध	अध्याय	समाप्ति	दैनिक पाठ की अध्याय संख्या	कुल योग
पहिला	प्रथम	१	से	सप्तम	१५	तक	१५३	३३५
दूसरा	सप्तम	१६	से	दशम	९०	तक	१३८	
तीसरा	एकादश	१	से	द्वादश	१३	तक	०४४	

हारीत मुनि के मतानुसार मोक्ष चाहने वाले साधक को श्रीमद्भागवत महापुराण का त्रिदिवसीय पारायण आश्विन मास के शुक्लपक्ष में सम्पन्न करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत चतुरह पारायण

दिवस	स्कन्ध	अध्याय	प्रारम्भ	स्कन्ध	अध्याय	समाप्ति	दैनिक पाठ की अध्याय संख्या	कुल योग
पहिला	प्रथम	१	से	चतुर्थ	१९	तक	८१	तीन सौ पैंतीस
दूसरा	चतुर्थ	२०	से	अष्टम	१७	तक	८९	
तीसरा	अष्टम	१८	से	दशम	५२	तक	८३	
चौथा	दशम	५३	से	द्वादश	१३	तक	८२	

श्री शौनक जी के मत से सर्वकामना-पूर्तिहेतु चतुर्दिवसीय पारायण भाद्रपद शुक्लपक्ष में करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत पञ्चाह पारायण

पञ्चाह	स्कन्ध	अध्याय	प्रारम्भ	स्कन्ध	अध्याय	समाप्ति	दैनिक पारायण की अध्याय संख्या	कुल योग
१. पहिला दिन	प्रथम	१	से	चतुर्थ	७	तक	६९	३३५
२. दूसरा दिन	चतुर्थ	८	से	षष्ठ	१९	तक	६९	
३. तीसरा दिन	सप्तम	१	से	नवम	२४	तक	६३	
४. चौथा दिन	दशम	१	से	दशम	६९	तक	६९	
५. पाँचवाँ दिन	दशम	७०	से	द्वादश		तक	६५	

अकृतव्रण नामक ऋषि के अनुसार सभी कामनाओं की पूर्ति के लिये भाद्र शुक्लपक्ष में शुभ समय में श्रीमद्भागवत का पञ्च दिनात्मक पारायण करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत षडह पारायण

पडाह दिवस	स्कन्ध	अध्याय	प्रारम्भ	स्कन्ध	अध्याय	समाप्ति	दैनिक पाठ की अध्याय संख्या	कुल योग
पहिला दिन	प्रथम	१	से	तृतीय	३२	तक	६१	तीन सौ पैंतीस
दूसरा दिन	तृतीय	३३	से	पञ्चम	१४	तक	४६	
तीसरा दिन	पञ्चम	१५	से	अष्टम	२४	तक	७०	
चौथा दिन	नवम	१	से	दशम	३९	तक	६३	
पाँचवाँ दिन	दशम	४०	से	एकादश	१९	तक	७०	
छठा दिन	एकादश	२०	से	द्वादश	१३	तक	२५	

शांशपायन मुनि के अनुसार धनप्राप्ति-कामी व्यक्ति को भाद्रपद कृष्णपक्ष में श्रीमद्भागवत का छः दिवसीय पारायण सम्पन्न करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत के सम्पुटों द्वारा किये जाने वाले अनुष्ठान

१. ब्राह्मणों को—गायत्री मन्त्र के सम्पुट द्वारा मासपारायण अथवा पक्षपारायण करना चाहिये।

२. क्षत्रियों को—'ॐ देवसवित: प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्व: केतपू: केतन्न: पुनातु वाचस्पति वोचं न: स्वदतु' (शु. य. ११।७) इस वैदिक मन्त्र से सम्पुटित श्लोकों का पाठ करना चाहिये।

३. वैश्यों को—'ॐ विश्वारूपाणि प्रतिमुञ्चते कवि: प्रासावीद् भद्रं द्विपदे चतुष्पदे। विनाकमख्यत्सविता वरेण्योऽनु प्रयाणमुषसो विराजति॥' (शु. यजु. १२।३) इस मन्त्र से सम्पुटित उक्त मासपारायण अथवा पक्षपारायण पाठ करना चाहिये। इससे उनकी सब कामनाएँ फलीभूत होती हैं तथा अन्त में उन्हें मोक्ष की प्राप्ति भी होती है।

४. स्वास्थ्य-कामना से—महामृत्युञ्जय मन्त्र से सम्पुटित भागवत पाठ का मासिक या पाक्षिक पारायण करना चाहिये।

५. पुत्र की कामना से—सन्तानगोपाल मन्त्र से सम्पुटित सम्पूर्ण भागवत का मासिक अथवा पाक्षिक पाठ करना चाहिये। अथवा स्थितिक्रम से केवल श्रीमद्भागवत का पाठ करने से पुत्र की प्राप्ति होती है (पाठ मासिक-षाण्मासिक या वार्षिक होना चाहिये।

६. शत्रुनाश के लिये—'ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निदहातिवेद:। सन: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुर्दुरिताग्नि:॥' इस श्लोक से सम्पुटित भागवत का पाठ करना चाहिये।

७. कष्टमुक्ति के लिये—'ॐ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने। प्रणत: क्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नम:॥' इस मन्त्र से सम्पुटित मासपारायण करना चाहिये।

८. शत्रुबाधा-विनाश के लिये—'ॐ गोविन्द द्वारिकावासिन् कृष्णदामोदरप्रिय:। कौरवार्णवमग्नानां किं न जानाति केशव॥' इस मन्त्र से सम्पुटित पाठ करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत के पृथक्-पृथक् स्कन्धों के अनुष्ठान (पाठ) के फल

१. प्रथम स्कन्ध के पाठ का फल—श्रीमद्भागवत के केवल प्रथम स्कन्ध के पाठ करने से सर्वपाप नष्ट होते हैं तथा गर्भ का स्तम्भन हो जाता है। गर्भस्तम्भन के लिये 'ॐ पाहि पाहि महायोगिन् देवदेव जगत्पते। नान्यं त्वदभयं पक्ष्ये यत्र मृत्यु: परस्परम्॥ १॥ अभिद्रवति मामीश शरस्तप्तायसो विभो। कामं दहतु मान्नाथ मा मे गर्भो निपात्यताम्॥ २॥' इस मन्त्र से सम्पुटित पाठ करना चाहिये। इस पाठ के प्रारम्भ करने के पूर्व कुमारी कन्या के हाथ से कते हुए सूत को लेकर गर्भिणी के पादाङ्गुष्ठ से लेकर केशपर्यन्त लम्बाई की पाँच गुनी लम्बाई का सूत्र लेकर 'ॐ पाहि पाहि०' इस मन्त्र को पढ़कर उसमें नौ गाँठें लगा देनी चाहिये, प्रत्येक गाँठ लगाते समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये। उस सूत्र को गर्भवती स्त्री को अपनी कटि में बाँध लेना चाहिये। इससे गर्भ का स्तम्भन होता है तथा गर्भपात नहीं होता है। इस प्रयोग के उपरान्त पति-पत्नी को नियमित श्रद्धा-विश्वासपूर्वक प्रथम स्कन्ध का पाठ करते रहना चाहिये।

२. द्वितीय स्कन्ध के पाठानुष्ठान का फल—यदि दीपक (घृत का दीपक) जलाकर उसके साक्षी में श्रीमद्भागवत के द्वितीय स्कन्ध का नियमित पाठ किया जाय तो विराट् पुरुष के दर्शन हो जाते हैं तथा अन्त:करण में उसकी अमिट छवि बन जाती है। यह मुक्तिकामियों के लिये होता है।

३. तृतीय स्कन्ध के पाठ का फल—इसके पाठ से शत्रु पराजित होते हैं; निर्वाचन, चयन तथा प्रतियोगिता एवं वाद-विवाद में सफलता मिलती है। युद्ध में विजय प्राप्त होती है।

४. चतुर्थ स्कन्ध के पाठ का फल—चतुर्थ स्कन्ध के पारायण एवं श्रवण से अनुष्ठानकर्ता धनवान हो जाता है, उसका विवाह हो जाता है तथा वंशपरम्परा बनी रहती है।

५. पञ्चम स्कन्ध के पाठ का फल—श्रीमद्भागवत के पञ्चम स्कन्ध का पाठ करने से लोक-परलोक-इतिहास एवं भूगोल के रहस्यों का ज्ञान मिल जाता है। ज्योतिष शास्त्र (खगोल विद्या) में पारङ्गत हो जाता है।

६. षष्ठ स्कन्ध—'दृढा भक्तिर्भगवति रसस्कन्धस्य पाठतः। स्वर्गं यशस्यमायुष्यं धर्मार्थं परिकीर्तयेत्॥' अर्थात् भगवान् में दृढ़भक्ति प्राप्त होती है। यह छठा स्कन्ध स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला तथा धर्म एवं अर्थ को देने वाला होता है।

७. सप्तम स्कन्ध के पाठ का फल—सप्तम स्कन्ध के पाठ से धर्माचरण एवं चरित्र में दृढ़ता आती है। पाठक नीतिमार्ग पर आरूढ़ होता है, उसका गार्हस्थ्य जीवन सुखमय होता है। पत्नी एवं पुत्र आज्ञाकारी होते हैं। इसे प्रतिदिन परिवार के सदस्यों को पढ़ाना, सुनाना चाहिये।

८. अष्टम स्कन्ध के पारायण का फल—सभी मनोरथों की सिद्धि के लिये प्रतिदिन अष्टम स्कन्ध का पाठ उसके प्रति श्लोक को 'असदविषयमङ्घ्रिभावगम्यं प्रपन्नानमृतवर्यानाशयत् सिन्धुमध्यम्। कपटयुवतिवेषो मोहयन् यः सुरारींस्तमहमुपसृतानां कामपूरं नतोऽस्मि॥' इस मन्त्र से सम्पुटित कर पाठ करना चाहिये।

९. नवम स्कन्ध के पाठ का फल—नवम स्कन्ध के पाठ से वंशवृद्धि होती है। वन्ध्या, काकवन्ध्या तथा जो स्त्री मृतवत्सा होती है, उसे नवम स्कन्ध की कथा भक्तिपूर्वक सुनने से तथा इसका अनुष्ठान ब्राह्मण द्वारा कराने से चिरजीवी पुत्र सन्तति प्राप्त होती है। स्कन्ध के प्रारम्भ तथा समाप्ति पर एक अयुत (१०,००१) की संख्या में 'ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥' इस मन्त्र का जप अवश्य करना चाहिये।

१०. दशम स्कन्ध के पाठ से फल—कृष्णयंन्त्र बनाकर शालिग्राम शिला आदि के समीप दशम स्कन्ध का वृद्धिपाठ करना चाहिये। अन्त में द्वादशाक्षर (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) मन्त्र से हवन, तर्पण, मार्जन, ब्राह्मणभोजनादि कराना चाहिये। वृद्धिपाठ का अर्थ है—प्रथम दिन एक पाठ, दूसरे दिन दो पाठ, तीसरे दिन तीन पाठ—इस क्रम से पाठ करना चाहिये। 'तमेव परमात्मानं जारबुद्ध्यापि सङ्गताः जुहुर्गुणमयं देहं सद्यः प्रक्षीणबन्धनाः।' इसका सम्पुट लगाने से निकृष्ट प्रारब्ध कर्म नष्ट होता है। 'तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः। पीताम्बरधरः स्त्रग्वी साक्षान् मन्मथमन्मथः॥' इस मन्त्र से सम्पुटित दशम स्कन्ध का पाठ करने से कृष्ण भगवान् के दर्शन होते हैं। और भी प्रयोग हैं; जिन्हें विस्तारभय से नहीं लिखा जा रहा है। इसका पाठ दश दिन करना चाहिये।

११. एकादश स्कन्ध के अनुष्ठान का फल—विष्णुयन्त्र बनाकर प्रतिष्ठित कर एक ग्यारह बत्तियों का दीपक प्रज्वलित करके प्रारम्भ के पूर्व 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' मन्त्र का १०८ जप करके पाठ प्रारम्भ करना चाहिये तथा पाठ की समाप्ति पर पुनः एक सौ आठ जप करना चाहिये। इस कार्य को ग्यारह दिनों तक कर चुकने के उपरान्त अन्तिम दिन में उत्तर पूजन करके 'ॐ ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरिञ्चिनुतं शरण्यम्। भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्॥' इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि प्रदान करनी चाहिये। फिर अनुष्ठानकर्ता ब्राह्मण को दक्षिणा आदि से सन्तुष्ट कर यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। इससे साधक ज्ञानवान् होता है।

१२. द्वादश स्कन्ध के अनुष्ठान का फल—इसके पाठारम्भ के पूर्व द्वादशाक्षर अथवा षोडशाक्षर यन्त्र बनाकर बारह बत्तियों का दीपक जलाकर विष्णुमन्त्र की आवरण-पूजा करके फिर एक सौ आठ की संख्या में द्वादशाक्षर मन्त्र का जप करके द्वादश पाठ द्वादश दिन तक करना चाहिये। इस प्रकार बारह दिनों में १२×१२=१४४ (एक सौ चवालीस) पाठ सम्पन्न होते हैं। प्रति पाठ के अन्त में भी एक सौ आठ 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' का जप अवश्य करना चाहिये। समाप्ति के दिन उत्तर पूजन करके पन्द्रह अथवा बारह ब्राह्मणों को भोजन कराने से मनोवाञ्छित कार्य में सफलता मिलती है।

नारायणकवच का पाठ शत्रु की शान्ति के लिये करना चाहिये। **रुद्रगीत** का पाठ शत्रुओं से छुटकारा पाने के लिये नित्यप्रति करणीय है। सन्तान चाहने वाले को **पयोव्रत** का अनुष्ठान करना चाहिये। **गजेन्द्रमोक्ष** का पाठ स्त्रियों को अपने पति-पुत्र-ज्येष्ठ-देवर-ससुर आदि पारिवारिक जनों की कष्टमुक्ति तथा बन्धनमुक्ति के लिये करना चाहिये। पुरुष भी इसका पाठ कर सकते हैं। इससे ऋणग्रस्तता भी समाप्ति हो जाती है। मोक्षकामियों को **पृथुचरित** का पाठ करना चाहिये। **ब्रह्मस्तुति** का पाठ आकर्षण कर्म में करना चाहिये।

भागवतपाठ के साथ तुलसी एवं शालिग्राम की प्रदक्षिणा—यदि श्रीमद्भागवत का पाठ श्री शालिग्राम एवं तुलसी वृक्ष के समीप हो तथा साधक प्रतिश्लोक के पाठ के साथ श्री शालिग्राम जी एवं तुलसी जी की प्रदक्षिणा तथा नमस्कार करे तो उसकी कीर्ति दूर-दूर तक फैल जाती है। इससे अनन्त फल प्राप्त होता है।

श्रीमद्भागवत पाठ में क्रमभेद—१. **सृष्टिक्रम**—प्रथम स्कन्ध के प्रथम श्लोक से लेकर क्रमशः पूरे स्कन्धों का पाठ बारहवें स्कन्ध के अन्तिम श्लोक तक करना सृष्टिक्रम पाठ कहा जाता है। सामान्यतः यही पाठ प्रचलित है।

२. **स्थितिक्रम**—सर्वप्रथम दशम स्कन्ध के प्रथम अध्याय से क्रमशः पाठ करते हुए बारहवें अध्याय के अन्तिम श्लोक का पाठ करके फिर प्रथम स्कन्ध के प्रथम श्लोक का पाठ करते हुए नवम स्कन्ध के अन्त तक पाठ करने को स्थितिक्रम कहा जाता है।

३. **संहारक्रम**—इसमें सर्वप्रथम बारहवें स्कन्ध के अन्तिम श्लोक (तेरहवें श्लोक) से पाठारम्भ करते हैं तथा उत्क्रम से (विलोम = उल्टे) २३वाँ २२वाँ श्लोक पाठ करते हुए पीछे की ओर लौटकर पाठ करते चले जाते हैं और अन्त में प्रथम श्लोक पर समाप्त करते हैं। यह संहारक्रम पाठ कहलाता है।

श्रीमद्भभागवत के अनुष्ठान में अवधिभेद—अनुष्ठान में अवधि एवं आचरण की दृष्टि से चार प्रकार का अनुष्ठान श्रीमद्भभागवत का होता है। १. सात्विक, २. राजस, ३. तामस तथा ४. निर्गुण—ये चार प्रकार हैं। सात दिन विधिपूर्वक सप्ताह कथा का श्रवण एवं अनुष्ठान राजस होता है। इक्कीस दिन में क्रमानुसार भागवतपाठ सात्विक होता है। इसी प्रकार अष्टादशाह भी सात्विक कहा जाता है। पञ्चादशाह की कथा एवं पाठ निर्गुण है। जो पाठ आलसपूर्वक कभी कर लिया, कभी न किया—ऐसी रीति से अनिश्चित अवधि में पूर्ण होता है, वह सालस तथा तामस कहा जाता है।

महाभारतश्रवणविधानम्

महाभारते—

अतः परं प्रवक्ष्यामि यानि देयानि भारते। वाच्यमाने तु विप्रेभ्यो राजन्पर्वणि पर्वणि॥ १॥
स्वस्तिं वाच्य द्विजानादौ ततः कार्ये प्रवर्तिते। समाप्ते पर्वणि ततः स्वशक्त्या पूजयेद्द्विजान्॥ २॥
आदौ तु वाचकं चैव वस्त्रगन्धसमन्वितम्। विधिवद्भोजयेद्राजन्मधुपायसमुत्तमम् ॥ ३॥

ततो मूलफलप्रायं पायसं मधुसर्पिषा। आस्तिकं भोजयेद्राजन्दद्याच्चैव गुडौदनम्॥ ४॥
अपूपैश्चैव पूपैश्च मोदकैश्च समन्वितम्। सभापर्वणि राजेन्द्र हविष्यं भोजयेद्द्विजान्॥ ५॥
आरण्यके मूलफलैस्तर्पयेत्तु द्विजोत्तमान्। अरणीपर्व चासाद्य जलकुम्भान्प्रदापयेत्॥ ६॥
तर्पणानि च मुख्यानि वन्यमूलफलानि च। सर्वकामगुणोपेतं विप्रेभ्योऽन्नं प्रदापयेत्॥ ७॥
विराट्पर्वणि तथा वासांसि विविधानि च। उद्योगे भरतश्रेष्ठ सर्वकामगुणान्वितम्॥ ८॥
भोजनं भोजयेद्विप्रान् गन्धमाल्यैरलङ्कृतान्। भीष्मपर्वणि राजेन्द्र दत्त्वा यानमनुत्तमम्॥ ९॥
ततः सर्वगुणोपेतमन्नं दद्यात्सुसंस्कृतम्। द्रोणपर्वणि विप्रेभ्यो भोजनं परमार्चितम्॥ १०॥
शराश्च देया राजेन्द्र चापान्यसिवरास्तथा। कर्णपर्वण्यपि तथा भोजनं सर्वकामिकम्॥ ११॥
विप्रेभ्यः संस्कृतं सम्यग्दद्यात्संयतमानसः। शल्यपर्वणि राजेन्द्र मोदकैः सगुडौदनैः॥ १२॥
अपूपैस्तर्पणैश्चैव सर्वमन्नं प्रदापयेत्। गदापर्वण्यपि तथा मुद्गमिश्रं प्रदापयेत्॥ १३॥
स्त्रीपर्वणि तथा रत्नैस्तर्पयेत्तु द्विजोत्तमान्। घृतौदनं पुरस्ताच्च ऐषीके दापयेत्पुनः॥ १४॥
ततः सर्वगुणोपेतमन्नं दद्यात्सुसंस्कृतम्।

महाभारत-श्रवण की विधि—अब इसके आगे महाभारत-श्रवण में जो कुछ देना चाहिये, वह वर्णन करता हूँ। हे राजन्! वाचक ब्राह्मणों को प्रत्येक पर्व पर क्या-क्या वस्तुएँ देनी चाहिये, उन सबका वर्णन करता हूँ। ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन करवा कर वाचन प्रारम्भ करवाना चाहिये। प्रत्येक पर्व की समाप्ति पर ब्राह्मणों का पूजन करना चाहिये। आदिपर्व का वाचन होने पर ब्राह्मणों को गन्ध (इत्र) तथा वस्त्र देकर फिर उन्हें विधिवत् हे राजन्! मधु एवं पायस (खीर) का भोजन कराना चाहिये। भोजन में मूल, फल, मधु, पायस, मधु, सर्पि (घी) तथा गुड़-भात का दान आस्तीक (पर्व) की कथा के समय देना चाहिये। हे राजन्! सभापर्व की कथा आरम्भ होने पर ब्राह्मणों को मालपूए, कचौड़ियाँ तथा मिठाइयों के साथ हविष्यान्न भोजन (खीर) खिलाना चाहिये। आरण्यकपर्व के वाचन पर उत्तम ब्राह्मणों को कन्दमूल-फलों से तृप्त करना चाहिये। जब अरणीपर्व की कथा आये तब जल के कुम्भों का दान करना चाहिये। इतना ही नहीं; अपितु जिनको भोजन में ग्रहण करने से तृप्ति का अनुभव हो, ऐसे उत्तम जङ्गली फल एवं कन्द-मूल खिलाना चाहिये। सभी अभीष्ट गुणों से सम्पन्न अन्न ब्राह्मणों को दान करना चाहिये। विराट्पर्व में विविध प्रकार के वस्त्रों का दान करना चाहिये तथा हे भरतश्रेष्ठ! उद्योगपर्व में सर्वकाम-गुणान्वित भोजन ब्राह्मणों को कराना चाहिये एवं उन्हें गन्ध-माल्य भी अर्पित करना चाहिये। हे राजेन्द्र! भीष्मपर्व में उत्तम यान का दान के साथ सर्वगुणोपेत तथा सुसंस्कृत भोजन देना चाहिये। द्रोणपर्व में ब्राह्मणों को परम उत्तम दान के साथ धनुष-बाण तथा उत्तम खड्गदान भी करना चाहिये। कर्णपर्व में ब्राह्मणों को भली-भाँति सिद्ध किया उत्तम भोजन, जो सबकी रुचि के अनुकूल हो, करना चाहिये; साथ ही अपने मन को नियन्त्रण में रखना चाहिये। हे राजेन्द्र! शल्यपर्व में मिठाई, गुड़, भात, पूआ, तृप्तिकारक फल आदि के साथ सब प्रकार के उत्तम अन्नों का दान करना चाहिये। गदापर्व में मूँगमिश्रित चावल खिलाना चाहिये। फिर सुसंस्कारित सर्वगुणसम्पन्न अन्न का दान करना चाहिये। ऐषीकपर्व में घी-भात का भोजन तथा उत्तम अन्न का दान करना चाहिये॥ १-१४॥

शान्तिपर्वणि च तथा हविष्यं भोजयेद्द्विजान्॥ १५॥
आश्विमेधिकमासाद्य भोजनं सर्वकामिकम्। तथाश्रमनिवासे तु हविष्यं भोजयेद्द्विजान्॥ १६॥
मौसले सार्वगुणितं गन्धमाल्यानुलेपनम्। महाप्रस्थानिके तद्वत्सर्वकामगुणान्वितम्॥ १७॥

स्वर्गपर्वण्यपि तथा हविष्यं भोजयेद्द्विजान्। हरिवंशसमाप्तौ तु सहस्रं भोजयेद्द्विजान्॥ १८॥
गामेकां निष्कसंयुक्तां ब्राह्मणाय निवेदयेत्। तदर्धेनापि दातव्या दरिद्रेणापि पार्थिव॥ १९॥
प्रतिपर्वसमाप्तौ तु पुस्तकं वै विचक्षणः। सुवर्णेन च संयुक्तं वाचकाय निवेदयेत्॥ २०॥
हरिवंशे पर्वणि च पायसं तत्र भोजयेत्। पारणे पारणे राजन्यथावद्भरतर्षभ॥ २१॥
समाप्य सर्वाः प्रयतः संहिताः शास्त्रकोविदः। शुभे देशे निवेश्याथ क्षौमवस्त्राभिसंवृताः॥ २२॥
अर्चयेत यथान्यायं गन्धमाल्यैः पृथक्पृथक्। हिरण्यं च सुवर्णं च दक्षिणामथ दापयेत्॥ २३॥

शान्तिपर्व में ब्राह्मणों को हविष्य भोजन कराना चाहिये तथा आश्वमेधिक पर्व में सबकी रुचि के अनुकूल उत्तम भोजन देना चाहिये। आश्रमवासिक पर्व में ब्राह्मणों को हविष्यान्न खिलाना चाहिये तथा मौसल पर्व में सर्वगुणसम्पन्न अन्न, चन्दन, भात, माला तथा अनुलेपन का दान करना चाहिये। महाप्रास्थानिक पर्व में भी सभी आवश्यक गुणों से युक्त अन्न आदि का दान करना चाहिये। स्वर्गारोहण पर्व में भी ब्राह्मणों को हविष्यान्न खिलाना चाहिये। हरिवंश की समाप्ति होने पर एक सहस्र ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये तथा स्वर्णमुद्रायुक्त एक गौ का दान भी करना चाहिये। भले ही उससे आधा दे, परन्तु दरिद्र श्रोता को भी इन दानों को अवश्य देना चाहिये। प्रत्येक पर्व की समाप्ति पर सुवर्णसहित उस पर्व की पुस्तक का दान अवश्य करना चाहिये। हरिवंश पर्व में वहाँ पायस का भोजन करायें; प्रत्येक पारण के समय ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। इस प्रकार एकाग्रचित्त होकर सब पर्वों की संहिताओं को समाप्त करके शास्त्रवेत्ता पुरुष को चाहिये कि वह उन्हें (पुस्तकों को) रेशमी वस्त्र में लपेटकर किसी उत्तम स्थान में रखे तथा स्वयं स्नानादि से पवित्र होकर स्वच्छ वस्त्र, पुष्पमाला तथा आभूषण धारण करके चन्दन माला आदि उपचारों से उन संहितापुस्तकों की पृथक्-पृथक् पूजा चित्त को शुद्ध एवं एकाग्र करके करे। भाँति-भाँति के उत्तम भक्ष्य, भोजन, पेय, माल्य, तथा अन्य कमनीय वस्तुएँ भेंट करना चाहिये॥ १५-२३॥

सर्वथा तोषयेद्भक्त्या वाचकं गुरुमात्मनः। वाचके परितुष्टे तु शुभा प्रीतिरनुत्तमा॥ २४॥
ब्राह्मणेषु तु तुष्टेषु प्रसन्नाः सर्वदेवताः। अष्टादशपुराणानां श्रवणाद्यत्फलं भवेत्॥ २५॥
तत्फलं समवाप्नोति वैष्णवो नात्र संशयः। स्त्रियश्च पुरुषाश्चैव वैष्णवं पदमाप्नुयुः॥ २६॥
स्त्रिभिश्च पुत्रकामाभिः श्रोतव्यं वैष्णवं यशः। दक्षिणा चात्र देया वै निष्कपञ्चसुवर्णकम्॥ २७॥
वाचकाय यथाशक्त्या यथोक्तं फलमिच्छता। स्वर्णशृङ्गीं च कपिलां सवत्सां वस्त्रसंवृताम्॥ २८॥
वाचकाय च दद्याद्धि आत्मनः श्रेय इच्छता। अलङ्कारं प्रदद्याच्च पाण्योर्वै भरतर्षभ॥ २९॥
कर्णस्याभरणं दद्याद्धनं चैव विशेषतः। भूमिदानं समादद्याद्वाचकाय नराधिप॥ ३०॥
शृणोति श्रावयेद्वापि सततं चैव यो नरः। सर्वपापविनिर्मुक्तो वैष्णवं पदमाप्नुयात्॥ ३१॥
पितॄनुद्धरते सर्वानैकादशसमुद्भवान्। आत्मानं ससुतं चैव स्त्रियं च भरतर्षभ॥ ३२॥
दशांशश्चैव होमोऽपि कर्त्तव्योऽत्र नराधिप। इदं मया तवाग्रे च प्रोक्तं सर्वं नरर्षभ॥ ३३॥

इति महाभारतश्रवणविधानं समाप्तम्।

सब प्रकार भक्तिभाव से अपने वाचक गुरु को सन्तुष्ट करना चाहिये। वाचक के सन्तुष्ट एवं प्रसन्न हो जाने पर, तथैव ब्राह्मणों के भी सन्तुष्ट एवं प्रसन्न हो जाने पर सभी देवता प्रसन्न हो जाते हैं। अठारह पुराणों के श्रवण से जो फल प्राप्त होता है, उस फल को केवल महाभारत के श्रवण से ही वैष्णव प्राप्त कर लेता है, स्त्री एवं पुरुषों को वैष्णव पद (लोक) की प्राप्ति होती है। पुत्रकामना वाली स्त्रियों को इस वैष्णवों के यश को अवश्य सुनना चाहिये। यहाँ पर पाँच सुवर्णनिष्क दक्षिणा देनी चाहिये। वाचक को यथाशक्ति सोने से सींग मढ़वा कर कपिला

गाय बछड़ा सहित दानफल की इच्छा वाले को वस्त्राच्छादित करके देनी चाहिये। यदि स्वयं का श्रेय चाहता तो वाचक को हाथों के लिये आभूषण भी देना चाहिये। कर्णाभूषण, धनदान, भूमिदान इत्यादि वाचक को देना चाहिये। जो व्यक्ति सतत् रूप से इस महाभारत को सुनता-सुनाता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर वैष्णव पद को प्राप्त हो जाता है। वह अपने ग्यारह पीढ़ियों के पुरखों का उद्धार कर देता है। वह स्वयं अपनी पत्नी एवं पुत्रों का भी उद्धार कर देता है। दशांश का होम भी करना चाहिये। हे राजन्! यह मैंने आपको सब बता दिया॥ २४-३३॥

वाल्मिकीरामायणनवाहपाठविधानम्

अथ श्रीवाल्मीकिमुनिकृतस्यादिकाव्यस्य श्रीमद्रामायणाख्यस्य नवाहपाठविधानं रामसेवाग्रन्थे—

माघकार्तिकवैशाखे चैत्रे वान्यतमेऽपि च। यथावकाशः श्रद्धा च तथैव शृणुयान्नरः॥

वाल्मीकि रामायण नवाहपाठ-विधान—रामसेवाग्रन्थ में कहा है कि माघ, कार्तिक, चैत्र में विशेषकर तथा सामान्यतः अन्य मास में भी जब अवकाश हो तब वाल्मीकि रामायण का श्रवण करना चाहिये।

श्रीरामायणमाहात्म्येऽपि—

चैत्रे माघे कार्तिके च सिते पक्षे च वाचयेत्। नवाह्ने सुमहापुण्यं श्रोतव्यं च प्रयत्नतः॥
पञ्चम्या दिनमारभ्य रामायणकथामृतम्। नवाहश्रवणेनैव सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

श्री रामायण माहात्म्य में भी कहा है—चैत्र, माघ तथा कार्तिक के शुक्लपक्ष में वाचन करे। नौ दिनों तक इसको प्रयत्नपूर्वक सुनना चाहिये। पञ्चमी तिथि को श्री रामायण के कथामृत का आरम्भ करना चाहिये। इसे निरन्तर नौ दिनों तक सुनने से सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

रामसेवायाम्—

तिथिः सैव महापुण्या स कालः सर्वपुण्यदः। यस्मिन्रामायणकथाश्रवणे जायते मतिः॥
पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे तुलसीविष्णुसन्निधौ। स्वगृहे वा पठेद्यस्तु स देवैः परिपूज्यते॥
पूर्वोत्तरमुखो वक्ता श्रोतारस्तत्पुरःस्थिताः। एकाग्रतरचित्तेन पठेद्वा शृणुयान्नरः॥
व्यासासनं समास्तीर्य तदग्रे पुस्तकासनम्। वितानपल्लवोपेतं कदलीस्तम्भमण्डितम्॥
श्रोतॄणामासनं स्थाप्यं विशालं तत्पुरः पुनः। श्रोतृभिश्च तथा वक्तुर्व्यासाद्ग्रन्थस्य चोच्चता॥
पुराणं पूजयेन्नित्यं नित्यं व्यासस्य पूजनम्। मध्याह्ने घटिकायुग्मं विश्रामं कारयेत्तथा॥
कथान्ते भगवन्नामस्मरणं सम्प्रकीर्तितम्। समाप्तौ वस्त्रभूषाद्यैर्द्रव्यैर्व्यासस्य तोषणम्॥

रामसेवा ग्रन्थ में कहा है कि वही तिथि महापुण्यशाली है तथा वही समय पुण्यप्रद है, जिसमें रामायण की कथा सुनने में मन लगे। पुण्यक्षेत्र, पुण्यतिथि में तुलसी एवं विष्णु के सान्निध्य में अथवा आपने घर में जो इसका पाठ करता है, वह देवों द्वारा पूजा जाता है। पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके वक्ता श्रोता को आमने-सामने बैठना चाहिये एवं एकाग्रचित्त से इसका पठन तथा श्रवण करना चाहिये। सर्वप्रथम व्यास के लिये आसन लगाये, फिर उसके आगे पुस्तक के लिये आसन की व्यवस्था करे। वितान तथा पल्लव से युक्त केले का मण्डप बनाये। श्रोताओं के लिये भी विशाल आसन वक्ता के आसन के आगे बिछाना चाहिये। श्रोताओं के आसन से वक्ता का आसन ऊँचा बनाना चाहिये। नित्यप्रति पुराण की पूजा तथा व्यास की भी नित्य पूजा करनी चाहिये। मध्याह्न में दो घटी का विश्राम कथा के लिये देना चाहिये। कथा की समाप्ति पर भगवन्नाम का कीर्तन तथा उच्चारण करना चाहिये। कथा के अन्तिम दिन व्यास को वस्त्र-आभूषण तथा अन्य द्रव्यों से सन्तुष्ट करना चाहिये।

अथ नवदिनपर्यन्तं कथाविश्रामस्थलकथनम्—

प्रथमे तु अयोध्यायाः षट्सर्गान्ते शुभा स्थितिः। तस्यैवाऽशीतिसर्गान्ते द्वितीये दिवसे स्थितिः॥ १॥
तथा विंशतिसर्गान्ते चारण्यस्य तृतीयके। दिने चतुर्थे षट्चत्वारिंशत्सर्गे कथास्थितिः॥ २॥
किष्किन्धाख्यस्य काण्डस्य पाठविद्भिरुदाहृता। सुसप्तचत्वारिंशत्के सर्गान्ते सुन्दरे स्थितिः॥ ३॥
पञ्चमे दिवसे कुर्य्यादथ षष्ठे तथोच्यते। युद्धकाण्डस्य पञ्चाशत्सर्गान्ते विमला स्थितिः॥ ४॥
एकोनशतसङ्ख्याके सर्गान्ते सप्तमे दिने। युद्धस्यैव तु काण्डस्य विश्रामः सम्प्रकीर्तितः॥ ५॥
तथा चोत्तरकाण्डस्य षट्त्रिंशत्सर्गपूरणे। अष्टमे दिवसे कृत्वा स्थितिश्च नवमे दिने॥ ६॥
शेषं समाप्य युद्धस्य चान्त्यं सर्गं पुनः पठेत्। रामराज्यकथा यस्मिन्सर्ववाञ्छितदायिनी॥ ७॥

वैदिक की कथा के विश्रामस्थल—प्रथम दिवस पूरा बालकाण्ड तथा अयोध्याकाण्ड के छः सर्गों तक कथा कहनी चाहिये। यह स्थिति शुभ होती है। फिर उसी अयोध्याकाण्ड के अस्सीवें सर्ग की समाप्ति पर द्वितीय दिन का विश्राम शुभ होता है। अरण्यकाण्ड के बीस सर्ग-पर्यन्त तीसरे दिन कथा कहनी चाहिये। चौथे दिन उसी के ४६वें सर्ग पर विश्राम देना चाहिये। फिर उसके आगे किष्किन्धाकाण्ड की पूरी समाप्ति ४७वें सर्ग पर पाँचवाँ विश्राम करना चाहिये। फिर युद्धकाण्ड के ५०वें सर्ग की समाप्ति पर निन्यानबे सर्ग पर सातवाँ विश्राम करना चाहिये। उत्तरकाण्ड के ३६वें सर्ग की समाप्ति पर आठवाँ विश्राम शुभ होता है। फिर नवें दिन कथा को समाप्त करके युद्ध काण्ड के अन्तिम सर्ग का पाठ पुनः करना चाहिये। राम की कथा सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाली होती है॥ १-७॥

एवं पाठक्रमः पूर्वैराचार्यैश्च विनिर्मितः। यः करोति नरश्रेष्ठः शृणुयाद्वा समाहितः॥ ८॥
धर्म्मार्थकाममोक्षाणां फलं त्वविकलं लभेत्। कथान्ते मण्डपं कृत्वा सर्वतोभद्रसंयुतम्॥ ९॥
सस्थण्डिलं सकुण्डं वा पताकाकदलीयुतम्। पूजयेद्गणराजं च ब्राह्मणैः स्वस्ति वाचयेत्॥ १०॥
मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं भूसुरवर्णनम्। मण्डले सर्वतोभद्रे हैमं रामं प्रपूजयेत्॥ ११॥
जानकीसहितं वस्त्रभूषास्त्रक्चन्दनादिभिः। पार्श्वे भरतशत्रुघ्नौ हनुमन्तं पुरःस्थितम्॥ १२॥
पृष्ठे विभीषणं भक्तं सुग्रीवं तु समर्चयेत्। लक्ष्मणं पादपीठस्य सन्निधौ विधिनार्चयेत्॥ १३॥

इस प्रकार से पूर्व के आचार्यों ने पाठ का क्रम निर्धारित किया है। जो नरश्रेष्ठ इस विधि से पाठ करता है, उसे धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष चारो पदार्थों का फल मिलता है। कथा की समाप्ति करके मण्डप का निर्माण करना चाहिये तथा उनमें सर्वतोभद्रमण्डल का निर्माण कर मण्डप में स्थण्डिल कुण्ड आदि बनाकर उसे ध्वज-पताका एवं तोरणों से सजाना चाहिये। श्रीगणेश जी का पूजन करके स्वस्तिवाचन, मातृकापूजन, नान्दीश्राद्ध, ब्राह्मणवरण करके सर्वतोभद्र पर श्री रामजी की सुवर्णप्रतिमा की जानकीसहित वस्त्राभूषण, माला, चन्दन आदि से पूजा करके पार्श्व में भरत-शत्रुघ्न तथा सामने स्थित हनुमान की भी पूजा करनी चाहिये। पीठ पर विभीषण तथा सुग्रीव की अर्चना करनी चाहिये तथा लक्ष्मण जी का पादपीठ के समीप पूजन करना चाहिये॥ ८-१३॥

चतुःशतोत्तरं चैव द्विसहस्त्रं तिलैस्तदा। हवनं मन्त्रतः कुर्याद्द्वादशाक्षरविद्यया॥ १४॥
अष्टाक्षरेण वा रामषडक्षरत आचरेत्। तर्पणं तद्दशांशेन मार्ज्जनं तद्दशांशतः॥ १५॥
ब्राह्मणान्वैष्णवांश्चैव सदन्नेन तु भोजयेत्। एकपारायणस्यैषा सङ्ख्या होमे प्रकीर्तिता॥ १६॥
पाठवृद्ध्या तु होमस्य सङ्ख्यावृद्धिः प्रजायते। गोप्रदानादिकं सर्वं दानं शक्त्या प्रदापयेत्॥ १७॥
व्यासाय पुस्तकं दद्याद्धेमसिंहासने स्थितम्। साङ्गतासिद्धये तस्य स्वर्णमुद्रां समर्पयेत्॥ १८॥

भूयसीं दक्षिणां दत्त्वा दीनानाथान् समर्चयेत्। एवं कृते मनुष्याणां दुर्लभोऽपि मनोरथः॥ १९॥
श्रीरामस्य प्रसादेन सुलभः स्यान्न संशयः। प्रतिमां कलशोपेतां मण्डलेन समन्विताम्॥ २०॥
विसर्जयित्वाऽऽचार्याय दद्यात्कर्म्माङ्गसिद्धये। कृतकृत्यं भावयित्वा चात्मानं तु हरिं स्मरेत्॥ २१॥

इति श्रीवाल्मीकिरामायणनवाहपारायणविधानम्।

द्वादशाक्षर मन्त्र से तिलादि के द्वारा चौबीस सौ आहुतियों का हवन करना चाहिये। अथवा अष्टाक्षर मन्त्र या श्री रामषडक्षर मन्त्र से होम करके उसका दशांश तर्पण तथा उसका दशांश मार्जन करना चाहिये। श्रेष्ठ अन्न से ब्राह्मणों तथा वैष्णवों को भोजन कराना चाहिये। यह संख्या एक पारायण की है। पाठवृद्धि होने पर होम की संख्या में भी वृद्धि होती है। यथाशक्ति गोदानादि भी करना चाहिये। व्यास को स्वर्णसिंहासन पर रखकर पुस्तक दान करना चाहिये। उसकी साङ्गता के लिये स्वर्णमुद्राओं का दान भी करना चाहिये। भूयसी दक्षिणा देकर दीनों, अनाथों को तृप्त करना चाहिये। ऐसा करने से मनुष्यों के दुर्लभ मनोरथ पूरे होते हैं। उसे श्री रामजी की कृपा से सब कुछ मिल जाता है; इसमें सन्देह नहीं है। स्वर्णप्रतिमा तथा कलश एवं सर्वतोभद्रमण्डल की सम्पूर्ण सामग्री का विसर्जन करके उसे आचार्य को कर्माङ्ग की सिद्धि के लिये दे देना चाहिये। तदनन्तर अपने को कृतकृत्य मानकर श्रीहरि का स्मरण करना चाहिये॥ १४-२१॥

श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण के नवाह कथाविश्राम स्थलों का प्रदर्शक चक्र
(अनुष्ठानप्रकाश के अनुसार)

नवाह दिवस क्रम	काण्ड का नाम	सर्ग संख्या	पाठ आरम्भ	काण्ड	सर्ग संख्या	दैनिक पाठ की समाप्ति	दैनिक पाठ में सर्गों की संख्या	विशेष=सप्तकाण्डात्मक पाठ
१. प्रथम दिवस	बालकाण्ड	१	से	अयोध्याकाण्ड	६	तक	७७ + ६ = ८३ सर्ग	इस पारायण में उत्तरकाण्ड-सहित सात काण्डों का पाठ होता है, जिसमें ७०+११९+७५+६७+६८+१२८+१११= ६४५ (छः सौ पैंतालीस) कुल सर्गों का पाठ नौ दिनों में सम्पन्न होता है।
२. द्वितीय दिवस	अयोध्याकाण्ड	७	से	अयोध्याकाण्ड	८०	तक	= ७४ सर्ग	
३. तृतीय दिवस	अयोध्याकाण्ड	८१	से	अरण्यकाण्ड	२०	तक	३९ + २० = ५९ सर्ग	
४. चतुर्थ दिवस	अरण्यकाण्ड	२१	से	किष्किन्धाकाण्ड	४६	तक	५५ + ४६ = १०१ सर्ग	
५. पञ्चम दिवस	किष्किन्धाकाण्ड	४७	से	सुन्दरकाण्ड	४७	तक	२१ + ४७ = ६८ सर्ग	
६. षष्ठ दिवस	सुन्दरकाण्ड	४८	से	युद्धकाण्ड	५०	तक	२१ + ५० = ७१ सर्ग	
७. सप्तम दिवस	युद्धकाण्ड	५१	से	युद्धकाण्ड	९९	तक	= ४८ सर्ग	
८. अष्टम दिवस	युद्धकाण्ड	१००	से	उत्तरकाण्ड	३६	तक	२९ + ३६ = ६५ सर्ग	
९. नवम दिवस	उत्तरकाण्ड	३७	से	उत्तरकाण्ड	१११ (समाप्ति)	तक	= ७५ सर्ग	

मतान्तर से श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण के नवाह पाठ (कथा) विश्राम स्थलों का प्रदर्शक चक्र

नवाह दिवस क्रम	काण्ड का नाम	सर्ग संख्या	पाठ आरम्भ	काण्ड	सर्ग संख्या	दैनिक पाठ की समाप्ति	दैनिक पाठ में सर्गों की संख्या	विशेष=सप्तकाण्डात्मक पाठ
१. प्रथम दिवस	बालकाण्ड	१	से	बालकाण्ड	७७	तक	सम्पूर्ण काण्ड ७७ सर्ग	इस मत से उत्तरकाण्ड का पाठ नहीं किया जाता है; केवल आदिकाण्ड, अयोध्या, अरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर तथा युद्ध (लङ्का) काण्ड—इन छः कांडों का ही पाठ होता है, जिनकी सर्ग संख्या क्रमशः ७७+११९+७५+६७+६८+१२८=५३४ (पाँच सौ चौंतीस) होती है।
२. द्वितीय दिवस	अयोध्याकाण्ड	१	से	अयोध्याकाण्ड	६०	तक	६० सर्ग	
३. तृतीय दिवस	अयोध्याकाण्ड	६१	से	अयोध्याकाण्ड	११९	तक	५९ सर्ग	
४. चतुर्थ दिवस	अरण्यकाण्ड	१	से	अरण्यकाण्ड	६८	तक	६८ सर्ग	
५. पञ्चम दिवस	अरण्यकाण्ड	६९	से	किष्किन्धाकाण्ड	४९	तक	७ + ४९ = ५६ सर्ग	
६. षष्ठ दिवस	किष्किन्धाकाण्ड	५०	से	सुन्दरकाण्ड	५६	तक	१८ + ५६ = ७४ सर्ग	
७. सप्तम दिवस	सुन्दरकाण्ड	५७	से	युद्धकाण्ड	५०	तक	१२ + ५० = ६२ सर्ग	
८. अष्टम दिवस	सुन्दरकाण्ड	५१	से	युद्धकाण्ड	१११	तक	६१ सर्ग	
९. नवम दिवस	युद्धकाण्ड	११२	से	युद्धकाण्ड	१२८	तक	१७ सर्ग	

विमर्श—विद्वानों के अनुसार प्रतिदिन कथा-समापन काल में निम्नाङ्कित १२ श्लोकों का पाठ कर मङ्गलाशासन करके ही कथा समाप्त करनी चाहिये—

मङ्गलाशासनम्

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यो शुभमस्तु नित्यं लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥ १॥

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी। देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः॥ २॥
अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः। अधनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम्॥ ३॥
चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्। एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम्॥ ४॥
शृण्वन् रामायणं भक्त्या यः पादं पदमेव वा। स याति ब्रह्मणः स्थानं ब्रह्मणा पूज्यते सदा॥ ५॥
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे। रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः॥ ६॥
यन्मङ्गलं सहस्राक्षे सर्वदेवनमस्कृते। वृत्रनाशे समभवत् तत्ते भवतु मङ्गलम्॥ ७॥
यन्मङ्गलं सुपर्णस्य विनता कल्पयत् पुरा। अमृतं प्रार्थयानस्य तत्ते भवतु मङ्गलम्॥ ८॥
मङ्गलं कौसलेन्द्राय महनीयगुणात्मने। चक्रवर्त्तितनूजाय सार्वभौमाय मङ्गलम्॥ ९॥
अमृतोत्पादने दैत्यान् घ्नतो वज्रधरस्य यत्। अदितिर्मङ्गलं प्रादात् तत्ते भवतु मङ्गलम्॥ १०॥
त्रीन् विक्रमान् प्रक्रमतो विष्णोरमिततेजसः। यदासीन्मङ्गलं राम तत्ते भवतु मङ्गलम्॥ ११॥
ऋषयः सागराः द्वीपा वेदा लोकादिशश्च ते। मङ्गलानि महाबाहो दिशन्तु तव सर्वदा॥ १२॥

मङ्गलपाठ करने के उपरान्त नारायण भगवान् को सम्पूर्ण कर्म का अर्पण करने के लिये निम्नलिखित श्लोक भी समाहित चित्त से उच्चारित करना चाहिये—

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वा प्रकृतिस्वभावात्।
करोमि यद् यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पये तत्॥ १॥

॥ सर्वं नारायणार्पणमस्तु॥

अथ वाल्मीकिरामायणपुस्तकदानविधानम्—तत्रादौ पञ्चोपचारैः पुस्तकपूजनम्॥

ॐ सदा श्रवणमात्रेण पापिनां सद्गतिप्रदे। शुभे रामकथे तुभ्यं गन्धमद्य समर्प्पये॥ १॥
इति गन्धम्।

बालादिसप्तकाण्डेन सर्वलोकसुखप्रद। रामायण महोदार पुष्पं तेऽद्य समर्प्पये॥ २॥
इति पुष्पाणि पुष्पमालां च।

यस्यैकश्लोकपाठस्य फलं सर्वफलाधिकम्। तस्मै रामायणायाद्य दशाङ्गं धूपमर्प्पये॥ ३॥
इति धूपम्।

यस्य लोके प्रणेतारो वाल्मीक्यादिमहर्षयः। तस्मै रामचरित्राय घृतदीपं समर्प्पये॥ ४॥
इति दीपम्।

श्रूयते ब्रह्मणो लोके शतकोटिप्रविस्तरम्। रूपं रामायणस्यास्य तस्मै नैवेद्यमर्प्पये॥ ५॥
इति नैवेद्यम्।

एवं पञ्चोपचारपूजां कर्पूरेण नीराजनं च कृत्वा प्रदक्षिणाचतुष्टयं पुष्पाञ्जलिं च दत्त्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य प्रार्थनां कुर्यात्—

वाल्मीकिगिरिसम्भूता रामसागरगामिनी। पुनाति भुवनं पुण्या रामयणमहानदी॥ १॥
श्लोकसारसमाकीर्णं सर्गकल्लोलसङ्कुलम्। काण्डग्राहमहामीनं वन्दे रामायणार्णवम्॥ २॥
अस्मिन्कलिमलाकीर्णे काले सर्वशुभप्रदम्। मनुजानां गतिर्नास्ति श्रीमद्रामकथां विना॥ ३॥
वाल्मीकेर्मुनिसिंहस्य कवितावनचारिणः। शृण्वन्राम कथानादं को न याति परां गतिम्॥ ४॥

इति सम्प्रार्थ्य देवब्राह्मणं सम्पूज्य पुस्तकस्य सङ्कल्पं कृत्वा ब्राह्मणाय दद्यात्। ततो दानप्रतिष्ठासिद्ध्ये सुवर्णदक्षिणां दत्त्वा प्रणिपत्य विसर्जयेत्। इति पुस्तकदानम्।

वाल्मीकि रामायण की पुस्तकदान की विधि—सर्वप्रथम पञ्चोपचारों से वाल्मीकीय रामायण की पूजा करनी चाहिये। इसके लिये मूल में लिखित—'ॐ सदा श्रवणमात्रेण पापिनां सद्गतिप्रदे। शुभे रामकथे तुभ्यं गन्धमद्य समर्पये॥' इस मन्त्र से गन्ध समर्पित कर 'बालादिसप्तकाण्डेन सर्वलोकसुखप्रद। रामायण महोदार पुष्पं तेऽद्य समर्पये।' इस मन्त्र से पुष्प एवं पुष्पमाला समर्पित करनी चाहिये। फिर 'यस्य लोके प्रणेतारो वाल्मीक्यादिमहर्षयः। तस्मै राम चरित्राय घृतदीपं समर्पये।' इस श्लोक से दीपदान करना चाहिये। इसी प्रकार मूल में लिखित मन्त्रों से नैवेद्य-पर्यन्त पञ्चोपचार पूजन करना चाहिये। इस प्रकार पञ्चोपचार पूजन कर रामायण से प्रार्थना करनी चाहिये। प्रार्थना में मूल में लिखित 'वाल्मीकिगिरिसम्भूता रामसागरगामिनी। पुनाति भुवनं पुण्या रामायणमहानदी॥' इत्यादि चार श्लोकों वाली 'रामायणरूपी महानदी लोकपावनी है। यह श्लोक के सार एवं सर्गरूपी कल्लोलों से युक्त है, जिसमें काण्ड ग्राह तथा महामत्स्य हैं'—ऐसे रामायणरूपी समुद्र की वन्दना करता हूँ। इस कलिकाल में कलिमल से लिप्त समय में शुभ फल देने वाली रामकथा को छोड़कर मनुष्यों की सद्गति देने वाली अन्य कोई दूसरी कथा नहीं है। जिस कवितावन में वाल्मीकि ऋषिरूपी सिंह गर्जना कर रहा है, उस कथानाद को सुनकर कौन ऐसा है, जिसे परमगति प्राप्त नहीं होती है।' ऐसी प्रार्थना कर देवताओं तथा ब्राह्मणों का पूजन करके पुस्तकदान का सङ्कल्प करके ब्राह्मण को देना चाहिये। तदनन्तर दान की प्रतिष्ठा की सिद्धि के लिये प्रणाम करके फिर विसर्जन कर देना चाहिये।

तत्तत्काण्डपाठफलम्

अथ काण्डपाठफलकथनम्—पुत्रकामो बालकाण्डं पठेत्। लक्ष्मीकामोऽयोध्याकाण्डम्। नष्टराज्यप्राप्तिकामः किष्किन्धाकाण्डम्। शत्रुनाशकामः सर्वकामश्च लङ्काकाण्डं च पठेत्। उक्तञ्च बृहद्धर्मपुराणे—

अनावृष्टिर्महापीडा ग्रहपीडाप्रपीडिताः। आदिकाण्डं पठेयुर्ये ते मुच्यन्ते ततो भयात्॥ १॥
पुत्रजन्मविवाहादौ गुरुदर्शन एव च। पठेच्च शृणुयाच्चैव द्वितीयं काण्डमुत्तमम्॥ २॥
वने राजकुल वह्निजलपीडायुतो नरः। पठेदारण्यकं काण्डं शृणुयाद्वा स मङ्गली॥ ३॥
मित्रलाभे तथा नष्टद्रव्यस्य गवेषणे। श्रुत्वा पठित्वा कैष्कन्ध्यं काण्डं तत्तत् फलं लभेत्॥ ४॥
श्राद्धेषु देवकार्येषु पठेत् सुन्दरकाण्डकम्॥ ५॥
शत्रोर्जये समुत्साहे जनवादे विगर्हिते। लङ्काकाण्डं पठेत् किंवा शृणुयात् स सुखी भवेत्॥ ६॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापि काण्डमभ्युदयोत्तरम्। आनन्दकार्ये यात्रायां स जयी परतोऽत्र च॥ ७॥
मोक्षार्थी लभते मोक्षं भक्त्यर्थी भक्तिमेव च। ज्ञानार्थी लभते ज्ञानं ब्रह्मतत्त्वोपलम्भकम्॥ ८॥

इति वाल्मीकिरामायणस्य पृथक्-पृथक् काण्डपाठप्रयोजनम्।

वाल्मीकि रामायण के अलग-अलग काण्डों के पाठ से कामनासिद्धि का कथन—पुत्र की इच्छा वाले को बालकाण्ड का पाठ करना चाहिये। लक्ष्मी चाहने वाले को अयोध्याकाण्ड पढ़ना चाहिये। जिसे अपनी खोई हुई राज्यसत्ता (पद) आदि को प्राप्त करना हो, उसे किष्किन्धाकाण्ड का पाठ करना चाहिये। सर्वकामनाओं की पूर्ति के लिये सुन्दरकाण्ड का पाठ विहित है। शत्रुनाश की कामना से तथा सर्वकामना से लङ्काकाण्ड (युद्धकाण्ड) पढ़ना चाहिये। बृहद्धर्मपुराण में इस प्रकार की फलश्रुति अलग-अलग काण्डों के पाठ की दी गयी है—

१. आदिकाण्ड (बालकाण्ड) का पाठ—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, महापीड़ा, ग्रहपीड़ा आदि का भय होने पर बालकाण्ड का पाठ करने पर सभी महाभयों से मुक्ति मिलती है।

२. अयोध्याकाण्ड का पाठ—जो द्वितीय काण्ड को पढ़ता तथा सुनता है, उसे पुत्रजन्म, विवाहोत्सव तथा गुरुदेव-दर्शन के समय शुभ फल प्राप्त होता है।

३. अरण्यकाण्ड (वनकाण्ड)—वन में दुःखी होने पर, राजकुल से पीड़ा होने पर, अग्निपीड़ा अथवा जलपीड़ा होने पर अरण्यकाण्ड के पाठ से इन पीड़ाओं से छुटकारा मिलता है तथा उसका कल्याण होता है।

४. किष्किन्धाकाण्ड—मित्रलाभ के लिये, मुकदमे में सन्धि के लिये, नष्टद्रव्य (चोरी गई या खोई वस्तु) की प्राप्ति के लिये किष्किन्धाकाण्ड के पाठ को करना तथा सुनना चाहिये।

५. सुन्दरकाण्ड का पाठ—श्राद्धकार्यों में तथा देवकार्यों में सुन्दरकाण्ड का पाठ एवं श्रवण करना चाहिये।

६. लङ्काकाण्ड का पाठ—शत्रु को जीतने के लिये, विजय के उपरान्त, कलङ्क लगने पर, बदनामी होने पर लङ्काकाण्ड (युद्धकाण्ड) का पाठानुष्ठान तथा श्रवण करने से सुख मिलता है।

७. उत्तरकाण्ड का पाठ—जो आनन्दकार्य में अथवा यात्रा में सुन्दरकाण्ड का पाठ करता है, वह सर्वत्र विजय को प्राप्त करता है। मोक्षार्थी को मोक्ष मिलता है तथा भक्ति चाहने वाले को भक्ति मिलती है। ज्ञानार्थी को ज्ञान मिलता है तथा ब्रह्मसाक्षात्कार होता है।

नवाह्नपाठे श्रीमद्वाल्मीकिरामायणन्यासादिविधानम्

तत्र प्रयोगः—ॐ अस्य श्रीवाल्मीकिरामायणमहामन्त्रस्य वाल्मीकिभगवान् ऋषिः। प्रायेण अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरामः परमात्मा देवता। अभयं सर्वभूतेभ्य इति बीजम्। अङ्गुल्यग्रेण तान् हन्यामिति शक्तिः। एतदस्त्रबलं दिव्यमिति कीलकम्। भगवान्नारायणो देव इति तत्त्वम्। धर्मात्मा सत्यसङ्घश्चेत्यस्त्रं पाठे विनियोगः। ॐ श्रीं रां आपदामपहर्तारमित्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं रीं दातारं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ रों रूं सर्वसम्पदामिति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ श्रीं रैं लोकाभिराममित्यनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ श्रीं रौं श्रीराममिति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ रौं रः भूयोभूयो नमाम्यहमिति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिपञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा ॐ अहं सखा ते काकुत्स्थ इत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गं कृत्वा ॐ ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवानिति दिग्बन्धं कुर्य्यात्। अथ ध्यानम्—

वामे भूमिसुता पुरस्तु हनुमान्पश्चात्सुमित्रासुतः शत्रुघ्नो भरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषु च।
सुग्रीवश्च विभीषणश्च युवराट् तारासुतो जाम्बवान्मध्ये नीलसरोजकोमलरुचिं रामं भजे श्यामलम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पठेत्।

ॐ आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्। लोकाभिरामं श्रीरामं भूयोभूयो नमाम्यहम्॥

इति मन्त्रेण सम्पुटितरामायणपाठात्सकलकार्य्यसिद्धिः। इति वाल्मीकिरामायणपाठे सामान्यन्यासादिविधानम्।

वाल्मीकि रामायण पाठ के लिये न्यासादि के प्रयोग—मूल में लिखित 'ॐ अस्य श्रीवाल्मीकिरामायण-महामन्त्रस्य०' इत्यादि के द्वारा विनियोगार्थ जल छोड़ना चाहिये। फिर मूल में लिखित 'ॐ श्रीं रां आपदामपहर्त्तारम् इति अङ्गुष्ठाभ्याम् नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास 'ॐ श्रीं रां आपदामपहर्त्तारम् हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं रीं दातारम् शिरसे स्वाहा, ॐ रीं रूं सर्वसम्पदाम् शिखायै वषट्, ॐ श्रीं रैं लोकाभिरामम् कवचाय हुम्, ॐ श्रीं रौं श्रीरामम् नेत्रत्रयाय वौषट् तथा ॐ अहं सखा ते काकुत्स्थ अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करने के उपरान्त 'ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवान् देवाश्चैव तपस्विनः। सिद्धिं दिशन्तु मे देवा सर्षिगणास्त्विह॥' इस मन्त्र से दिग्बन्ध करना चाहिये। फिर मूल में लिखित 'वामे भूमियुता' इत्यादि श्लोक से 'जिनके वाम भाग में पृथ्वी की पुत्री श्रीसीताजी विराजमान हैं तथा आगे श्री हनुमान् जी विराजमान हैं। पीछे श्री लक्ष्मण जी हैं। दोनों पार्श्वों में श्री शत्रुघ्न जी तथा श्री भरत जी हैं। वायव्य आदि चारो कोणों में क्रमशः सुग्रीव, विभीषण, अङ्गद तथा श्री जामवन्त जी स्थित हैं, इन सबके मध्य में नीलकोमल कमल के समान आभा वाले श्री श्यामल रामजी को मैं भजता हूँ।' इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करके पाठ करना चाहिये।

रामायण-पाठहेतु सम्पुट मन्त्र—'आपदामपहर्त्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्। लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्॥' इस मन्त्र का सम्पुट लगाकर नवाह पाठ करना चाहिये। इस प्रकार के सम्पुटित पाठ से सकल कार्य सिद्ध होते हैं।

अथ बालकाण्डस्य ऋषिन्यासादिप्रयोगः—ॐ अस्य श्रीबालकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् ऋष्यशृङ्गऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। दाशरथिः परमात्मा देवता। रां बीजम्। नमः शक्तिः। रामायेति कीलकम्। श्रीरामप्रीत्यर्थे बालकाण्डे जपे विनियोगः। ॐ ऋष्यशृङ्गऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ दाशरथिपरमात्मदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ रां बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ रामाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ सुप्रसन्नाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ शान्तमनसे तर्ज्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सत्यसन्धाय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ जितेन्द्रियाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ धर्म्मिष्ठाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ राजदाशरथये जयिने करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादि षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। ध्यानम्—

श्रीराममाश्रितजनामरभूरुहेशमानन्दशुद्धमखिलामरवन्दिताङ्घ्रिम्।
सीताङ्गनासुमिलितं सततं सुमित्रापुत्रान्वितं धृतधनुः शरमादिदेवम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पुत्रकामनया 'ॐ रां रामाय नमः' इति मन्त्रेण सम्पुटितं बालकाण्डं पठेत्।

ॐ सुप्रसन्नः शान्तमनाः सत्यसन्धो जितेन्द्रियः। धर्मज्ञो नयसारज्ञो राजा दाशरथिर्जयी॥

इति मन्त्रेण वा सम्पुटितं दद्यात्। हनुमत्पूजापूर्वकं पारायणं कृत्वा काण्डान्ते पूर्वोक्तन्यासं कुर्य्यात्।

इति बालकाण्डपारायणम्।

बालकाण्ड के ऋष्यादि न्यास-प्रयोग—मूल में लिखित 'ॐ अस्य श्रीबालकाण्डमहामन्त्रस्य०' इत्यादि मन्त्र पढ़कर विनियोग करने के उपरान्त मूलोक्त 'ॐ ऋष्यशृङ्गऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करने के पश्चात् 'ॐ सुप्रसन्नाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास सम्पन्न कर 'ॐ सुप्रसन्नाय हृदयाय नमः, ॐ शान्तमनसे शिरसे स्वाहा, ॐ सत्यसन्धाय शिखायै वषट्, ॐ जितेन्द्रियाय कवचाय हुम्, ॐ धर्मज्ञाय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ राजा दाशरथये जयिने अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये। इस प्रकार षडङ्ग न्यास के उपरान्त ध्यान करना चाहिये। ध्यान-हेतु मूल में 'श्रीराममाश्रित०' इत्यादि मन्त्र लिखा है।

ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—श्रीराम अपने आश्रित जनों के लिये अमरभूरुह (कल्पवृक्ष) के समान अखिल आनन्द देने वाले हैं; वे सबके द्वारा वन्दित-चरण हैं। मैं सीताजी सुमिलित सतत रहने वाले, सलक्ष्मण धनुष-बाणधारी उन आदिदेव का ध्यान करता हूँ।

सम्पुट—बालकाण्ड का पाठ यदि पुत्रकामना से किया जाय तो 'ॐ रां रामाय नमः' मन्त्र से सम्पुटित करना चाहिये अथवा 'ॐ सुप्रसन्नः शान्तमनाः सत्यसिन्धो जितेन्द्रियः। धर्मज्ञो नयसारज्ञो राजा दाशरथिर्जयी॥' इस मन्त्र से प्रति- श्लोक को सम्पुटित करते हुए पाठ करना चाहिये। इससे ग्रहों का भय दूर होता है तथा पुत्र की प्राप्ति होती है।

अथ अयोध्याकाण्डस्य ऋषिन्यासादिप्रयोगः—ॐ अस्य श्रीअयोध्याकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् वसिष्ठ ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। भरतो दाशरथिपरमात्मा देवता। भं बीजम्। नमः शक्तिः। भरतायेति कीलकम्। मम भरतप्रसादसिद्ध्यर्थे अयोध्याकाण्डजपे विनियोगः। ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ दाशरथि-भरतपरमात्मदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ भं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ भरताय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ भरताय नमस्तस्मै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ रसज्ञाय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ महात्मने मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ तापसाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ अतिशान्ताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ शत्रुघ्नसहिताय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। ध्यानम्—

श्रीरामपादद्वयपादुकान्तस्संसक्तचित्तं कमलायताक्षम्।
श्यामं प्रसन्नवदनं कमलावदाभं शत्रुघ्नयुक्तमनिशं भरतं नमामि॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य ॐ भरताय नमः,

भरताय नमस्तस्मै सारज्ञाय महात्मने। तापसायातिशान्ताय शत्रुघ्नसहिताय च॥

इति मन्त्रेण सम्पुटितमयोध्याकाण्डं लक्ष्मीकामनया पठेत्। तत उत्तरन्यासं पूर्ववत्कृत्वा पारायणं समापयेत्। इत्ययोध्याकाण्डपारायणम्॥ २॥

अयोध्याकाण्ड की पाठविधि—मूलोक्त 'ॐ अस्य श्रीअयोध्याकाण्डमहामन्त्रस्य०' इत्यादि मन्त्र से विनियोग करने के पश्चात् 'ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास सम्पन्न कर 'ॐ भरताय नमः तस्मै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ भरताय नमः तस्मै हृदयाय नमः, ॐ रसज्ञाय शिरसे स्वाहा, ॐ महात्मने शिखायै वषट्, ॐ तापसाय कवचाय हुम्, ॐ अतिशान्ताय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ शत्रुघ्नसहिताय अस्त्राय फट्' इस छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास सम्पन्न करके 'श्रीरामपादद्वयपादुकान्तस्संसक्तं०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र से ध्यान करे। ध्यान-भावार्थ—'श्रीराम की पादुकाद्वय से जिनका अन्तःकरण शीतल है, उन कमलनेत्र श्यामल, प्रसन्न मुख, कमल के समान आभा वाले शत्रुघ्नयुक्त श्री भरत को सदैव प्रणाम करता हूँ।' इस प्रकार से ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन कर 'ॐ भं भरताय नमः' इत्यादि मूल-लिखित मन्त्र के द्वारा 'भरताय नमस्तस्मै सारज्ञाय महात्मने। तापसायातिशान्ताय शत्रुघ्नसहिताय च' इस मन्त्र से सम्पुटित करके अयोध्याकाण्ड का पाठ लक्ष्मीप्राप्ति की कामना से करना चाहिये। फिर पाठसमाप्ति पर उत्तरन्यास करके पारायण समाप्त करना चाहिये।

अथ किष्किन्धाकाण्डस्य ऋष्यादिन्यासः—ॐ अस्य श्रीकिष्किन्धाकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। सुग्रीवो देवता। सुं बीजम्। नमः शक्तिः। सुग्रीवेति कीलकम्। मम सुग्रीवप्रसादसिद्ध्यर्थे किष्किन्धाकाण्डपारायणे जपे विनियोगः। ॐ भगवदृषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सुग्रीवदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ सुं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ सुग्रीवेति कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति

ऋष्यादिन्यासः। ॐ सुग्रीवाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ सूर्यतनयाय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सर्ववानरपुङ्गवाय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ बलवते अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ राघवसखाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ वशी रायं प्रच्छतु इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

सुग्रीवमर्कतनयं कपिवर्यवन्द्यमारोपिताच्युतपदाम्बुजमादरेण।
पाणिप्रहारकुशलं बलपौरुषाढ्यमाशास्पदान्तनिपुणं हृदि भावयामि॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य 'ॐ सुं सुग्रीवाय नमः। सुग्रीवः सूर्यतनयः सर्ववानरपुङ्गवः। बलवान्राघवसखा वशी रायं प्रयच्छतु॥' इति मन्त्रेण सम्पुटितं पठेत्। नष्टराज्यप्राप्तिः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। इति किष्किन्धाकाण्ड- पारायणम्।

किष्किन्धा काण्ड-प्रयोग—'ॐ अस्य किष्किन्धाकाण्डमहामन्त्रस्य०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र को पढ़कर विनियोग करने के बाद 'ॐ भगवद् ऋषये नमः शिरसि०' इत्यादि छः मूलोक्त मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास सम्पन्न करे। फिर 'ॐ सुग्रीवाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मन्त्रों के द्वारा करन्यास करके 'ॐ सुग्रीवाय हृदयाय नमः, ॐ सूर्यतनयाय शिरसे स्वाहा, ॐ सर्ववानरपुङ्गवाय शिखायै वषट्, ॐ बलवते कवचाय हुम्, ॐ राघवसखाय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ वशी रायं प्रयच्छतु अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये। तदनन्तर सूर्य के पुत्र, कपिवर्य के द्वारा वन्दित, जिनके मन में अच्युत के चरणकमलों में आदर है, जो पाणिप्रहार में कुशल हैं, बलपौरुष से सम्पन्न हैं, आशा के आस्पद हैं, अन्त में निपुणता प्रदर्शित करते हैं, उन सुग्रीव की अपने हृदय में भावना करता हूँ' इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करके 'ॐ सुग्रीवाय नमः, सुग्रीवः सूर्यतनयः सर्ववानरपुङ्गवः। बलवान् राघवसखा वशी रायं प्रच्छतु' इस मन्त्र का सम्पुट लगाकर किष्किन्धा काण्ड का पाठ करे तो नष्ट राज्य की प्राप्ति होती है।

अथ वाल्मीकिरामायणस्य आरण्यकाण्डस्य ऋष्यादिन्यासप्रयोगः—ॐ अस्य श्रीआरण्यकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरामो दाशरथिः परमात्मा महेन्द्रो देवता। ईं बीजम्। नमः शक्तिः। इन्द्रायेति कीलकम्। इन्द्रप्रसादसिद्ध्यर्थे आरण्यकाण्डपारायणे जपे विनयोगः। ॐ भगवान् ऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीरामपरमात्मामहेन्द्रदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ ईं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ इन्द्राय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। 'ॐ सहस्रनयनाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ देवाय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सर्वदेवनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ दिव्यवज्रायुधाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ महेन्द्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ शचीपतये करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

शचीपतिं सर्वसुरेशवन्द्यं सर्वार्तिहर्तारमचिन्त्यशक्तिम्। श्रीरामसेवानिरतं महान्तं वन्दे महेन्द्रं धृतवज्रमीड्यम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य 'ॐ लं इन्द्राय नमः, सहस्रनयनं देवं सर्वदेवनमस्कृतम्। दिव्यवज्रधरं देवं महेन्द्रं च शचीपतिम्॥' इति मन्त्रेण सम्पुटितं पठेत्। अन्यत्पूर्ववदित्यारण्यकाण्डपारायणम्।

आरण्यकाण्ड-प्रयोगविधि—सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीआरण्यकाण्डमहामन्त्रस्य०' इत्यादि मूल पाठ में लिखित मन्त्र से जल छोड़कर विनियोग करे। तदुपरान्त 'ॐ भगवान् ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ सहस्रनयनाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास सम्पन्न करे। तदनन्तर 'ॐ सहस्रनयनाय हृदयाय नमः, ॐ देवाय शिरसे स्वाहा, ॐ सर्वदेवनमस्कृताय शिखायै वषट्, ॐ दिव्यवज्रायुधाय कवचाय हुम्, ॐ महेन्द्राय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ शचीपतये अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तत्पश्चात् 'शचीपति इन्द्र के द्वारा वन्दित, सर्वार्तिहर्त्ता, अचिन्त्यशक्ति, श्रीरामजी की सेवा में निरत

महान् इन्द्र, जो वज्रधारी हैं, उनको पूजना चाहिये।' इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करके सम्पुट मन्त्र—'ॐ लं इन्द्राय नमः, सहस्रनयनं देवं सर्वदेवनमस्कृतम्। दिव्यवज्रधरं देवं महेन्द्रं च शचीपतिम्॥' इस मन्त्र से सम्पुटित कर आरण्यकाण्ड के प्रत्येक श्लोक का पाठ करे। शेष सब पूर्ववत् करे।

अथ सुन्दरकाण्डस्य न्यासादिः—अस्य श्रीसुन्दरकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् हनुमान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। जगन्माता सीता देवता। श्रीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सीतायै कीलकं; सीताप्रसादसिद्ध्यर्थे सुन्दरकाण्डपारायणे जपे विनियोगः। ॐ भगवद्धनुमदृषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ जगन्माता सीतादेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ श्रीं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ सीतायै कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ सीतायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ विदेहराजसुतायै तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ रामसुन्दर्यै मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ हनुमता समाश्रितायै अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ भूमिसुतायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ शरणं भजे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। ध्यानम्—

सीतामुदारचरितां विधिसाम्बविष्णुवन्द्यां त्रिलोकजननीं शतकल्पवल्लीम्।
हैमैरनेकमणिरञ्जितकोटिभागैर्भूषाचयैरनुदिनं सहितां नमामि॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य 'ॐ श्रीं सीतायै नमः' इति मन्त्रेण सम्पुटितं पठेत्। सर्वकार्य्यसिद्धिः। अन्यत्पूर्ववत्। इति सुन्दरकाण्डपारायणम्॥ ५॥

सुन्दरकाण्ड अनुष्ठान-विधि—सर्वप्रथम मूल में लिखित 'अस्य सुन्दरकाण्डमहामन्त्रस्य' इत्यादि से विनियोग करे। फिर 'ॐ भगवद् हनुमत् ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ सीतायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में करन्यास करे। तदुपरान्त 'ॐ सीतायै हृदयाय नमः, ॐ विदेहराजसुतायै शिरसे स्वाहा, ॐ रामसुन्दर्यै शिखायै वषट्, ॐ हनुमता समाश्रितायै कवचाय हुम्, ॐ भूमिसुतायै नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ शरणं भजे अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि न्यास करे। तत्पश्चात् 'उदारचरिता सीता को जो ब्रह्मा, शक्ति तथा विष्णु के द्वारा वन्दित तीनों लोकों की माता शतकल्पवल्ली है, जो स्वर्ण तथा कोटि-कोटि मणियों से जटित भूषा को अनुदिन वृद्धि के साथ हैं, उनको नमस्कार करता हूँ।' इस प्रकार ध्यान कर मानसपूजन कर 'ॐ सीतायै नमः' इस मन्त्र से (अथवा 'रामभद्र महेष्वास रघुवीर नृपोत्तम। भो दशस्यान्तकं अस्माकं रक्षां देहि श्रियं च ते॥' इस मन्त्र से) सम्पुटित पाठ करने से सर्वकार्य-सिद्धि होती है। अन्य सब पूर्ववत् है।

अथ युद्धकाण्डस्य न्यासादि—अस्य श्रीयुद्धकाण्डमहामन्त्रस्य विभीषण ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। विधाता देवता। बं बीजम्। नमः शक्तिः। विधातेति कीलकम्। श्रीधातृप्रसादसिद्ध्यर्थे युद्धकाण्डपारायणे जपे विनियोगः। ॐ विभीषणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ विधातृदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ विधातेति कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ विधात्रे अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ महादेवाय तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ भक्तानामभयप्रदाय मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सर्वदेवप्रीतिकराय अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ भगवत्प्रियाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ ईश्वराय करतल करपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

देवं विधातारमनन्तवीर्यं भक्ताभयं श्रीपरमादिदेवम्। सर्वामरप्रीतिकरं प्रशान्तं वन्दे सदा भूतपतिं सुभर्तुम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य ॐ वं विधात्रे नमः॥ १॥

विधातारं महादेवं भक्तानामभयप्रदम्। सर्वदेवप्रीतिकरं भगवत्प्रियमीश्वरम्॥

इति मन्त्रेण सम्पुटितं पठेत्। (शत्रोः पराभवो विजयश्च) अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। इति युद्धकाण्डपारायणम्॥ ६॥ उत्तरकाण्डस्यापि ऋष्यादिन्यासं षडङ्गन्यासं चैतदेव ज्ञातव्यम्।

लङ्काकाण्ड की पारायण-विधि—सर्वप्रथम 'अस्य श्रीयुद्धकाण्डमहामन्त्रस्य०' इत्यादि मूलोक्त मन्त्र पढ़कर विनियोगार्थ जल छोड़ना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ विभीषणऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्र पढ़कर ऋष्यादि न्यास करके 'ॐ विधात्रे अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मूलोक्त मन्त्र पढ़कर अङ्गुष्ठादि ५ कराङ्गों में न्यास करना चाहिये। तदुपरान्त 'ॐ विधात्रे हृदयाय नमः, ॐ महादेवाय शिरसे स्वाहा, ॐ भक्तानामभयप्रदाय शिखायै वषट्, ॐ सर्वदेवप्रीतिकराय कवचाय हुम्, ॐ भगवत्प्रियाय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ईश्वराय अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास सम्पन्न करना चाहिये। फिर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये।

विधाता, अनन्त वीर्यशाली भक्तों को अभय देनेवाले परम आदिदेव, प्रीति करने वाले, प्रशान्त भूतपति उत्तम स्वामी का ध्यान करता हूँ। इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त सम्पुट मन्त्र से सम्पुटित कर युद्धकाण्ड का पाठ आरम्भ करना चाहिये। इससे शत्रु का नाश होता है। सम्पुट से पूर्व मानसपूजा करनी चाहिये। सम्पुटमन्त्र है—

विधातारं महादेवं भक्तानामभयप्रदम्। सर्वदेवप्रीतिकरं भगवत्प्रियमीश्वरम्॥

उत्तरकाण्ड का अनुष्ठान—उत्तरकाण्ड के विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, हृदयादिन्यास, ध्यान तथा सम्पुट आदि सब लङ्काकाण्ड की भाँति ही करना चाहिये।

नवाहपारायणदिनसङ्ख्या

पुनर्वसुनक्षत्रादारभ्य आर्द्रापर्यन्तं सप्तकाण्डपाठः। इत्येकः पक्षः॥ १॥ प्रतिपदमारभ्य नवरात्रं पठेत्। इति द्वितीयः॥ २॥ चत्वारिंशद्दिनैः पाठः। इति तृतीयः॥ ३॥ यथारुचि कार्यः। सुन्दरकाण्डे एकोत्तरावृत्त्या पाठः कर्त्तव्यः। यथा प्रथमदिने एकः द्वितीये द्वौ तृतीये त्रय इत्यादि एकादशदिनपर्यन्तम्। द्वादशदिने अवशिष्टं सर्गद्वयं पठित्वा पुनः प्रथमसर्गः पठनीयः। एवं त्रिरावृत्त्या सकलकार्यसिद्धिः। श्रीहनुमत्प्रतिमासमीपे सुन्दरकाण्डपाठाच्छीघ्रकार्यसिद्धिः। पाठश्च तन्मनसैव कार्यः। इति श्रीवाल्मीकिरामायणपारायणविधानम्।

रामायण-पारायण की दिनसंख्या—सम्पूर्ण वाल्मीकि रामायण के पारायण की दिनसंख्या के सम्बन्ध में तीन पक्ष प्राप्त होते हैं—

सत्ताईस दिन के पाठ का पक्ष—इस मत के अनुसार किसी भी मास-पक्ष में जिस दिन पञ्चाङ्ग में पुनर्वसु नक्षत्र हो, उस दिन से आरम्भ कर जब आर्द्रा नक्षत्र आये (२७ या २८ दिन पश्चात्) तब तक सम्पूर्ण रामायण का पाठ समाप्त करे—यह एक मत है।

चालीस दिन के पाठ का पक्ष—चालीस दिनों में सभी सात काण्डों का पाठ करना चाहिये, यह दूसरा पक्ष है।

नवाह पाठ—शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ करके नवमी-पर्यन्त (चैत्र-पौष-आषाढ़-आश्विन) में नौ दिनों में पाठ करना भी एक मत है।

सुन्दरकाण्ड के पाठ में विशेष—सुन्दरकाण्ड का पाठ ग्यारह दिनों तक एकोत्तर वृद्धि से करना चाहिये। जैसे प्रथम दिन एक पाठ, द्वितीय दिन दो पाठ, तृतीय दिन तीन पाठ, चतुर्थ दिन चार पाठ—इस प्रकार से ग्यारहवें दिन ग्यारह पाठ होंगे। इस प्रकार ग्यारह दिनों में सुन्दरकाण्ड के सर्गपाठ की कुल संख्या १+२+३+४+५+६+७+८+९+१०+११=६६ (छियासठ) होगी। यह संख्या सर्गों की होती है। तात्पर्य यह कि पहिले दिन एक सर्ग, दूसरे दिन दो सर्ग का पाठ करे। इस प्रकार से ग्यारह दिन में छियासठ सर्ग का पाठ हो जायेगा। बारहवें दिन केवल दो सर्ग बचेंगे; क्योंकि सुन्दरकाण्ड में कुल ६८ (अड़सठ) सर्ग हैं। उनका पाठ बारहवें दिन करके उसी दिन पुनः प्रथम सर्ग से पाठ की दूसरी आवृत्ति प्रारम्भ करनी चाहिये। ऐसी तीन आवृत्ति पूरी करने पर सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि होती है। श्री हनुमान् जी की मूर्ति के समीप में सुन्दरकाण्ड के पाठ से शीघ सफलता मिलती है। पाठ तन्मयता के साथ करना चाहिये।

रामायण-पाठ के नियम—विद्वानों द्वारा रामायण पाठ के लिये भी कुछ नियम निर्धारित किये गये हैं। यथा—एक बार पाठ आरम्भ हो जाने पर पूरे सर्ग के पाठ के उपरान्त ही विराम लेना चाहिये। मध्यम स्वर से सुस्पष्ट उच्चारण कर श्रद्धा एवं प्रेमपूर्वक रामायण का पाठ करना चाहिये। गा करके, शिर हिलाकर, जल्दी-जल्दी तथा अर्थ को बिना जाने पाठ नहीं करना चाहिये। नवाह पाठ के सायङ्कालीन विश्राम स्थल पूर्व में बताये जा चुके हैं। नवाह के विराम स्थलों की सूचना एक मत के अनुसार निम्नाङ्कित भी उपलब्ध होती है—

उद्योगं रामराज्यस्य भरतोद्योगमेव च। मारीचस्य वधं यावत् सुग्रीवपुरवेशनम्॥
लक्ष्मणस्य ततो यावत् त्रिजटास्वप्नदर्शनम्। रावणस्य ततो यात्रा जयार्थं देवसद्मसु॥
समुद्रावतरणं यावत् निकुम्भवधमेव च। तथा पूर्णकथां कुर्यात् नवमेऽह्नि सर्वदा॥
(इस पारायण में उत्तरकाण्ड सम्मिलित नहीं है)।

इसी प्रकार से उपासना ग्रन्थों में सुन्दरकाण्ड पाठ की एक और भी विधि वर्णित है, जिसके अनुसार प्रथम दिन से तेरह दिन तक प्रतिदिन पाँच सर्ग का पाठ करे। इससे १३×५=६५ सर्ग का पाठ हो जायेगा। चौदहवें दिन अवशिष्ट तीन सर्गों को पढ़कर फिर सुन्दरकाण्ड का प्रथम तथा द्वितीय सर्ग पढ़ना चाहिये।

अध्यात्मरामायणपाठविधानम्

ॐ अस्य श्रीमदध्यात्मरामायणे अमुककाण्डमहामालामन्त्रस्य श्रीभगवान् सदाशिव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरामः परमात्मा देवता। ॐ नमो नारायणायेति बीजम्। दाशरथिरिति शक्तिः। रावणघ्न इति कीलकम्। 'मम अमुककामना-सिद्ध्यर्थममुकमन्त्रस्य सम्पुटीकरणसहितामुककाण्डपाठं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पारायणादौ पूर्वोक्तभूतशुद्धिमातृका-न्यासादि कर्म कुर्यात्। ॐ श्रीभगवत्सदाशिवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ श्रीरामपरमात्मदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ नमो नारायणायेति बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ दाशरथिशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ रावणघ्नकीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। अथ करन्यासः—ॐ रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ॐ रांरींरूंरैंरौंरः इति मन्त्रेण दिग्बन्धं कुर्यात्। अथ ध्यानम्—

नीलेन्दीवरतुल्यश्यामवदनं पीताम्बरालङ्कृतं मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरां विद्युन्निभां राघवम्।
पश्यन्तीं मुकुटाङ्गदादिविविधैः कल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे श्रीमद्दाशरथिं नमामि सुतरामब्धौ प्लवं दुस्तरे॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य यथाकामनया मन्त्रसम्पुटितपाठं कुर्यात्। एतन्न्यासादिककर्म्म प्रतिकाण्डं कार्यम्। (सम्पुटीकरण मन्त्राः)—ॐ श्रीरामचन्द्राय स्वाहा॥ १॥ ॐ क्लीं नमः श्रीरघुनाथाय॥ २॥ ॐ जयजय रावणान्तकाय॥ ३॥ ॐ नमः सीतापतये नमः॥ ४॥ ॐ लक्ष्मणाग्रजाय नमः॥ ५॥ ॐ भरतशत्रुघ्नसेवितचरणाय नमः॥ ६॥ ॐ रां रामाय नमः॥ ७॥ एषामन्यतमेन सम्पुटीकृत्य पाठं कुर्यात्सर्वकार्यसिद्धिः। इत्यध्यात्मरामायणपारायणविधानम्।

अध्यात्मरामायण पारायण-विधान—सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीमद् अध्यात्मरामायणमहामन्त्रस्य श्री भगवान् सदाशिवऋषिः। अनुष्टुपछन्दः। श्रीरामः परमात्मा देवता। ॐ नमो नारायणेति बीजं दाशरथिः शक्तिः। रावणघ्न इति कीलकं ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः' कहकर विनियोग करे। सङ्कल्प आचमन प्राणायाम कर 'मम अमुक-कामनासिद्ध्यर्थं अमुकमन्त्रस्य सम्पुटीकरणसहितामुककाण्डपाठं करिष्ये (वा सम्पूर्ण पाठं करिष्ये)' ऐसा सङ्कल्प करे। पारायण के प्रारम्भ में भूतशुद्धि मातृकान्यासादि कर्म करे। फिर मूलोक्त 'ॐ रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गुष्ठादि में करन्यास करने के उपरान्त 'ॐ रां हृदयाय नमः, ॐ रीं शिरसे स्वाहा, ॐ रूं शिखायै वषट्, ॐ रैं कवचाय हुम्, ॐ रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ रः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर 'ॐ रां रीं रूं रैं रौं रः' इस मन्त्र से दिग्बन्ध (चुटकी बजाये) करे।

इसके पश्चात् 'नीलकमल के समान श्याम वदन, पीताम्बर से अलंकृत, ज्ञानमयी मुद्रा को धारण किये, दूसरी बिजली के समान कान्ति वाले राघव को देखती हुई मुकुट, बाजूबन्द आदि के कल्प से उज्ज्वल अङ्ग के दाशरथि राम जो कि दुस्तर भवसागर से पार करने वाले हैं, उनको भजता हूँ।' इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजकर यथाकामना वाले मन्त्र से सम्पुटित पाठ करे। सम्पुट के मन्त्र हैं—(१) ॐ श्रीरामचन्द्राय स्वाहा। (२) ॐ क्लीं नमः श्रीरघुनाथाय। (३) ॐ जय-जय रावणान्तकाय। (४) ॐ नमः सीतापतये नमः। (५) ॐ लक्ष्मणाग्रजाय नमः। (६) ॐ भरतशत्रुघ्नसेवितचरणाय नमः॥ ७॥ ॐ रां रामाय नमः।' इन सात मन्त्रों में से किसी एक का उपयोग सम्पुट में करना चाहिये।

वेदव्यासमन्त्रानुष्ठानप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'व्यां वेदव्यासाय नमः' इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः। अस्य वेदव्यासमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। सत्यवतीसुतवेदव्यासो देवता। व्यां बीजम्। नमः शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सत्यवतीसुतवेदव्यासदेवतायै नमः मुखे॥ ३॥ ॐ व्यां बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। अथ षडङ्गन्यासः—ॐ व्यां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ व्यीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ व्यूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ व्यैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ व्यौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ व्यः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इत्यङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। अथ ध्यानम्—

व्याख्यामुद्रिकया लसत्करतलं सद्योगपीठस्थितं वामे जानुतले दधानमपरं हस्ते सुविद्यानिधिम्।
विप्रव्रातवृत्तं प्रसन्नमनसं पाथोरुहाङ्गद्युतिं पाराशर्य्यमतीव पुण्यचरितं व्यासं स्मरेत्सिद्धये॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पूर्वोक्ते धर्मादियुक्ते पीठे आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैर्मूलेन वेदव्यासं सम्पूज्य आवरणपूजनं कुर्यात्।

तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च पूर्वोक्तानि हृदयादिषडङ्गानि सम्पूज्य तद्बहिरष्टदलेषु प्राचीक्रमेण—ॐ पैलाय नमः॥ १॥ ॐ वैशम्पायनाय नमः॥ २॥ ॐ जैमिनये नमः॥ ३॥ ॐ सुमन्तवे नमः॥ ४॥ (दिग्दलेषु) ॐ शुक्राय नमः॥ ५॥ ॐ रोमहर्षणाय नमः॥ ६॥ ॐ उग्रश्रवसे नमः॥ ७॥ ॐ अन्येभ्यो मुनिभ्यो

नमः ॥ ८ ॥ इति पूजयेत्। ततो बाह्ये चतुरस्त्रे भूपुरे पूर्वादिदशदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बहिर्वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। ततो धूपादिनमस्कारान्तपूजां समाप्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणमष्टसहस्त्रजपः। जपान्ते दशांशेन पायसहोमः। तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशतो ब्राह्मणभोजनं च कुर्यात्।

तथा च—

जपेदष्टसहस्राणि पायसैर्होममाचरेत्। एवं सिद्धमनुर्मन्त्री कवित्वं शोभनाः प्रजा॥
व्याख्यानशक्तिं कीर्तिं च लभते सम्पदां चयम्। मृत्युञ्जयेन पुटितं यो व्यासस्य मनुं जपेत्॥
सर्वोपद्रवसन्त्यक्तो लभते वाञ्छितं फलम्।

मृत्युञ्जयसम्पुटितो मन्त्रः—ॐ जूँ सः व्यां वेदव्यासाय नमः सः जूँ ॐ।

मृत्युञ्जयस्य मन्त्रोऽयं त्रिवर्णो मृत्युनाशनः॥
जप्तोयं केवलो नृणामिष्टसिद्धिं प्रयच्छति। किंपुनस्तेन पुटितो वेदव्यासमनूत्तमः॥

इति वेदव्यासमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

वेदव्यास मन्त्रानुष्ठान-प्रयोग—'ॐ व्यां वेदव्यासाय नमः' यह आठ अक्षरों का मूल मन्त्र है। सर्वप्रथम 'अस्य वेदव्यासमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। सत्यवतीसुतवेदव्यासो देवता। व्यां बीजं। नमः शक्तिः। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करे। 'ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। तदनन्तर 'ॐ व्यां हृदयाय नमः, ॐ व्यीं शिरसे स्वाहा, ॐ व्यूं शिखायै वषट्, ॐ व्यैं कवचाय हुम्, ॐ व्यौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ व्यः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—जिनके करतल की हथेली व्याख्यामुद्रा को धारण किये है। सद्योगपीठ पर जो विराजमान हैं, वाम जानुतल पर स्थित हस्त में सुविद्यानिधि धारित है। जो विप्रवृन्द से परिवृत्त हैं। प्रसन्न मन वाले, पाथोरुह (सूर्य) के समान द्युतियुक्त शरीर वाले, पाराशर के पुत्र अत्यन्त पुण्य चरित्र वाले व्यास का स्मरण सिद्धिहेतु करे।' इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करके पूर्व में जो पीठ वर्णित है, उसके पीठदेवताओं को पूजकर फिर उसके आवरणों की पूजा करे।

यन्त्रपूजन—षट्कोण में आग्नेयादि केसरों में, मध्य तथा दिशाओं में हृदयादि छः अङ्गों का पूजन करे। फिर बाहर के अष्टदल में प्रथम पूर्वादि चार दिशाओं में क्रम से मूलोक्त 'ॐ पैलाय नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर चारो कोनों में 'ॐ शुक्राय नमः' आदि चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर बाहर के चौकोर (चतुरस्त्र) भूपुर में पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रादि दश दिक्पालों तथा उनके समीप उनके वज्रादि आयुधों का भी पूजन करना चाहिये। फिर धूपादि नमस्कारान्त पूजा को समाप्त कर जप प्रारम्भ करना चाहिये।

पुरश्चरण—व्यासमन्त्र का पुरश्चरण आठ सहस्र जप से होता है। जप के अन्त में दशांश होम, तद्दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन तथा तद्दशांश ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। जो पायस के द्वारा जप का दशांश होमादि करता है, उसको यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है, उसके व्याख्यान शक्ति तथा सम्पदा की वृद्धि होती है। जो मृत्युञ्जय से सम्पुटित मन्त्र (ॐ जूं सः व्यां वेदव्यासाय नमः सः जूँ ॐ) का जप करता है, उसके सभी उपद्रव नष्ट होकर वाञ्छित फल की प्राप्ति होती है। यह मन्त्र मृत्युनाशक है। केवल 'ॐ जूँ सः' तीन अक्षर का मन्त्र जपने से ही सभी काम बनते हैं तब फिर वेदव्यास मन्त्र के सम्पुट के साथ जपने का तो कहना ही क्या है। यह जप पुराण कथावाचकों तथा धार्मिक प्रवचनकर्त्ताओं को अनुष्ठान करने से सफलता देने वाला है।

नारायणाथर्वशीर्षम्

अथ पुरुषोहवैनारायणोऽकामयतप्रजाः सृजेयेति। नारायणात्प्राणो जायते मनः सर्वेन्द्रियाणि च। खंवायुर्ज्योतिरापः पृथिवीविश्वस्यधारिणी। नारायणाद्ब्रह्माजायते। नारायणाद्विष्णुर्जायते। नारायणाद्रुद्रो जायते। नारायणादिन्द्रोजायते। नारायणात्प्रजापतिः प्रजायते। नारायणाद्द्वादशादित्या रुद्रा वसवः सर्वाणि च्छन्दांसि नारायणाद्देवाः समुत्पद्यन्ते। नारायणात्प्रवर्तन्ते नारायणे प्रलीपयन्ते। अथादित्यो नारायणः। ब्रह्मा नारायणः। शिवश्च नारायणः। शक्रश्च नारायणः। कालश्च नारायणः। दिशश्च नारायणः। ऊर्ध्वं नारायणः अधश्च नारायाणः। अन्तर्बहिश्च नारायणः। नारायण एवेदर्ठ० सर्वं यद्भूतम्यच्च भाव्यम्। निष्कलो निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणो न द्वितीयोऽस्ति कश्चित्। य एवं वेद। स विष्णुरेव भवति स विष्णुरेव भवति। ॐ इत्यग्रे व्याहरेत्। नम इति पश्चात्। नारायणायेति पञ्चाक्षराणि। एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदम्। यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्येति। अनुपव्रतः सर्वमायुरेति। विन्दते प्रजां रायस्पोषं गोपत्यन्ततोऽमृतत्वमश्नुते। ततोऽमृतत्वमश्नुत इति। प्रत्यगानन्दब्रह्मपुरुषं प्रणवस्वरूपम्। अकार उकारो मकार इति तानेकधा संयोज्य तदेव तदोमिति। यमुक्त्वा मुच्यते योगी जन्मसंसारबन्धनात्। ॐ नमो नारायणायेति मन्त्रोपासकः वैकुण्ठभुवनं गच्छति। तदिदं परमपुण्डरीकं विज्ञानघनं तस्मात्तडिदाभमात्रम्। ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः। सर्वभूतस्थमेकं वै नारायणम्। कारणरूपं परब्रह्मकम्। एतदथर्वशीर्षं योऽधीते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायंप्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। मध्यन्दिनमादित्याभिमुखोऽधीयानः सद्यः पञ्चमहापातकोपपातकेभ्यो मुच्यते। सर्ववेदपारायणपुण्यं लभते श्रीनारायणसायुज्यमाप्नोति। य एवं वेद। इत्युपनिषत्। इति नारायणाथर्वशीर्षम्।

इति श्रीबीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान)प्रकरणं पञ्चमं समाप्तम्।

नारायण अथर्वशीर्ष—उस नारायण पुरुष को इच्छा हुई कि सृष्टि-रचना की जाय। नारायण से प्राण उत्पन्न होते हैं, मन तथा सभी इन्द्रियाँ भी उत्पन्न होती हैं। आकाश, वायु, जल, अग्नि, पृथिवी, जो कि विश्व को धारण करती है, यह सब नारायण से ही उत्पन्न होते हैं। नारायण से विष्णु उत्पन्न होते हैं। नारायण से रुद्र उत्पन्न होते हैं। नारायण से इन्द्र उत्पन्न होते हैं। नारायण से प्रजापति उत्पन्न होते हैं। नारायण से बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, आठ वसु, सभी छन्द एवं सभी देवता नारायण से ही उत्पन्न होते हैं। ये सभी नारायण से निकलते हैं और नारायण में ही विलीन हो जाते हैं। आदित्य नारायण हैं। ब्रह्मा नारायण हैं। शिव नारायण हैं। शक्र नारायण है। काल नारायण हैं। दिशाएँ नारायण हैं। ऊर्ध्व में नारायण है। अधः में नारायण हैं। भीतर तथा बाहर नारायण हैं। नारायण ही जो कुछ हो चुका है, वह हैं। जो होने वाला है, वह भी नारायण ही हैं। एकमात्र नारायण ही शुद्ध निष्कल, निरञ्जन, निर्विकल्प, निराख्यात हैं; उनसे अतिरिक्त अन्य कोई दूसरा नहीं है।

जो इस प्रकार जानता है, वह विष्णु ही होता है, वह विष्णु ही होता है। 'ॐ' को नारायण के पूर्व लगाकर पश्चात् में 'नमः' या 'नमो' लगाकर उच्चारण करना चाहिये। 'नारायणाय' ये पाँच अक्षर हैं, इन्हें मध्य में रखना चाहिये (ॐ नारायणाय नमः अथवा ॐ नमो नारायणाय)। इस प्रकार यह नारायण का अष्टाक्षर पद (मन्त्र) है। जो भी नारायण के इस अष्टाक्षर पद का अध्ययन (जप) करता है, वह सर्वायु में अनुपव्रत रहता है। उसे प्रजा, धन, भोजनादि, गवादि सम्पत्ति प्राप्त होती है तथा अन्तकाल में अमृतपद की प्राप्ति (मोक्ष) होती है। वह अमृत को

चखता है। आनन्दस्वरूप पुरुष प्रणवस्वरूप है। अकार, उकार, मकार यह ओम् है। जो अनेक प्रकार से संयोज्य है; वही ॐ है। इसका उच्चारण करके योगी संसार बन्धनों से मुक्त हो जाता है।

'ॐ नमो नारायणाय' इस मन्त्र का उपासक वैकुण्ठ धाम में जाता है। वह परम पुण्डरीक विज्ञानघन है; इसलिये विद्युत् के समान आभा वाला है। देवकीपुत्र ब्रह्मण्य हैं। देवकीपुत्र मधुसूदन हैं। सभी प्राणियों में एकमात्र नारायण विराजमान हैं। वे कारणरूप परब्रह्म हैं। जो इस अथर्वशीर्ष का अध्ययन करता है, वह सायङ्काल पाठकर दिन के पापों को नष्ट करता है। प्रातः पाठ करने से रात्रिकृत पापों को नष्ट करता है। जो प्रातः तथा सायङ्काल दोनों समय पाठ करता है, वह पापरहित हो जाता है। जो मध्याह्न के समय सूर्याभिमुख इसका जप करता है, शीघ्र ही वह पञ्च महापातकों तथा उपपातकों से मुक्त हो जाता है। उसे सम्पूर्ण वेदों के पारायण का फल मिलता है। जो ऐसा जानता है वह नारायण का सायुज्य प्राप्त करता है यह उपनिषत् (गुरु के पास रहकर प्राप्त किया ज्ञान अथवा परमात्मा के समीप स्थित) है।

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के पञ्चम प्रकरण वेदादिग्रन्थपारायण(अनुष्ठान) प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ५॥

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे सूर्य्यादिनवग्रहमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं षष्ठम्॥ ६॥

मङ्गलाचरणम्

हेमाम्भोजप्रवालप्रतिमनिजरुचिं चारुखट्वाङ्गपद्मौ चक्रं शङ्खं सपाशं शृणिमतिरुचिरामक्षमालां कपालम्। हस्ताम्भोजैर्दधानं त्रिनयनविलसद्वेदवक्त्राभिरामं मार्तण्डं वल्लभाढ्यं मणिमयमुकुटं हारयुक्तं भजामि॥ १॥

मङ्गलाचरण—स्वर्णकमल, प्रवाल के समान द्युतिमान् अङ्ग वाले, सुन्दर खट्वाङ्ग, चक्र, शङ्ख, पाश, अत्यन्त श्रेष्ठ अक्षमाला धारण किये, कपालधारी हस्तकमल, तीन नेत्रों वाले सुन्दर सूर्य छाया के सहित मणिमयमुकुट एवं हारयुक्त सूर्य को भजता हूँ॥ १॥

अष्टाक्षरसूर्य्यमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः

तत्र तावत्सर्वरोगदारिद्र्यनाशकाऽष्टाक्षरसूर्य्यमन्त्रपुरश्चरणप्रयोगः—सुमुहूर्ते प्रातर्नित्यावश्यकं समाप्य जपस्थानमागत्य कूर्म्मसंशोधिते स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य मूलेनाचम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम सर्वरोगदारिद्र्यादिविनाशनार्थमायुरारोग्यसुखश्रीसम्पत्तिप्राप्त्यर्थं श्रीभगवत्सवितृसूर्य्यनारायणप्रीत्यर्थमष्टलक्षसङ्ख्यात्मकमष्टाक्षरसूर्य्यमन्त्रजपपुरश्चरणं करिष्ये, तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिमन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं केशवादिकलामातृकान्यासं च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य पूर्वोक्तपद्धतिकाण्डानुसारेण भूतशुद्धिमन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च कृत्वा विष्णोरष्टाक्षरमन्त्रोक्तं केशवादिकलामातृकान्यासं कुर्यात्।

अथ मूलमन्त्रप्रयोगः; मूलमन्त्रो यथा—'ॐ घृणिः सूर्यआदित्यः' इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य देवभाग ऋषिः। गायत्री छन्दः। आदित्यो देवता। ममाभीष्टसाधने विनियोगः। ॐ देवभागऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ आदित्यदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ सत्यायतेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अङ्गुष्ठायाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ सर्वायतेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ५॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्य्यात्। ॐ ओं आदित्याय नमो मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ एँ रवये नमो मुखे॥ २॥ ॐ उं भानवे नमो हृदये॥ ३॥ ॐ इँ भास्कराय नमो लिङ्गे॥ ४॥ ॐ अँ सूर्याय नमः पादयोः॥ ५॥ इति पञ्चमूर्तिन्यासः।

अथ मन्त्रवर्णन्यासः—ॐ नमो मूर्ध्नि॥ १॥ ॐ घृं नमो मुखे॥ २॥ ॐ णिं नमः कण्ठे॥ ३॥ ॐ सूं नमः हृदये॥ ४॥ ॐ यं नमः कुक्षौ॥ ५॥ ॐ आं नमः नाभौ॥ ६॥ ॐ दिं नमः लिङ्गे॥ ७॥ ॐ त्यं नमः पादयोः॥ ८॥ एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्। अथ ध्यानम्—

रक्ताब्जयुग्माभयदानहस्तं केयूरहाराङ्गदकुण्डलाढ्यम्।
माणिक्यमौलिं दिननाथमीडे बन्धूककान्तिं विलसत्त्रिनेत्रम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजादि कुर्य्यात्।

तद्यथा—पूर्वादिदिक्षु मध्ये च ॐ प्रभूताय नमः॥ १॥ ॐ विमलाय नमः॥ २॥ ॐ साराय नमः॥ ३॥ समाराध्याय नमः॥ ४॥ मध्ये ॐ परमसुखाय नमः॥ ५॥ इति पूजयेत्।

तद्बहिः—ॐ अं अनन्ताय नमः ॥ १ ॥ ॐ पृं पृथिव्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ अं अमृतसागराय नमः ॥ ३ ॥ ॐ रं रत्नद्वीपाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ हें हेमगिरये नमः ॥ ५ ॥ ॐ नं नन्दनोद्यानाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ कं कल्पवृक्षेभ्यो नमः ॥ ७ ॥ ॐ मं मणि-भूषितभूतलाय नमः ॥ ८ ॥ इत्यष्टौ सम्पूज्य ॐ सं सोममण्डलाय नमः ॥ १ ॥ ॐ वं वह्निमण्डलाय नमः ॥ २ ॥ ॐ सं सूर्यमण्डलाय नमः ॥ ३ ॥ इति पीठदेवताः सम्पूज्य पीठशक्तीः पूर्वादिक्रमेण पूजयेत्। ॐ राँ दीप्तायै नमः ॥ १ ॥ ॐ रीं सूक्ष्मायै नमः ॥ २ ॥ ॐ रूं जयायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ रें भद्रायै नमः ॥ ४ ॥ ॐ रैं विभूत्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ रों विमलायै नमः ॥ ६ ॥ ॐ रौं अमोघायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ रं विद्युतायै नमः ॥ ८ ॥ (मध्ये) ॐ रः सर्वतोमुख्यै नमः ॥ ९ ॥ इति पीठशक्तीः सम्पूज्य 'ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नमः' इति पुष्पाञ्जलिनाऽऽसनं दद्यात्। तत्र 'ॐ खंखषोल्काय नमः' इति मनसा मूर्तिं प्रकल्प्य (अथवा) ताम्रकलशोपरि सुवर्णमयीं सूर्य्यप्रतिमां संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा तस्यां सर्वलोकसाक्षिणं सूर्य्यमावाह्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैर्यथाविधि सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च 'ॐ सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ ॐ अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा इत्यस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्। तद्बहिरष्टदलेषु पूर्वदले—ॐ आदित्याय नमः ॥ १ ॥ (दक्षिणदले) ॐ रवये नमः ॥ २ ॥ (पश्चिमदले) ॐ भानवे नम) ॥ ३ ॥ (उत्तरदले) ॐ भास्कराय नमः ॥ ४ ॥ इति सम्पूज्य आग्नेयादिकोणदलेषु—ॐ उं उमायै नमः ॥ १ ॥ ॐ प्रं प्रज्ञायै नमः ॥ २ ॥ ॐ प्रं प्रभायै नमः ॥ ३ ॥ ॐ सं सन्ध्यायै नमः ॥ ४ ॥ इति शक्तीः पूजयेत्।

ततो दलाग्रेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ ब्रां ब्राह्मयै नमः ॥ १ ॥ ॐ मां माहेश्वर्य्यै नमः ॥ २ ॥ ॐ कौं कौमार्य्यै नमः ॥ ३ ॥ ॐ वैं वैष्णव्यै नमः ॥ ४ ॥ ॐ वां वाराह्यै नमः ॥ ५ ॥ ॐ इं इन्द्राण्यै नमः ॥ ६ ॥ ॐ चां चामुण्डायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ मं महालक्ष्म्यै नमः ॥ ८ ॥ इति मातृः पूजयेत्। ततो देवपुरतः 'ॐ अरुणाय नमः' इत्यरुणं पूजयेत् ॥ १ ॥

तद्बाह्ये पूर्वादिषु—ॐ सों सोमाय नमः ॥ १ ॥ ॐ बुं बुधाय नमः ॥ २ ॥ ॐ गुं गुरवे नमः ॥ ३ ॥ ॐ शुं शुक्राय नमः ॥ ४ ॥ इति दिक्षु; ततः कोणेषु—ॐ अं अङ्गारकाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ शं शनैश्चराय नमः ॥ ६ ॥ ॐ रां राहवे नमः ॥ ७ ॥ ॐ कें केतवे नमः ॥ ८ ॥ इति ग्रहान् पूजयेत्।

ततो भूपुरे पूर्वादिदिक्षु—ॐ इन्द्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ २ ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ निर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ वायवे नमः ॥ ६ ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ईशानाय नमः ॥ ८ ॥ (ऊर्ध्वम्) ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ (अधः) ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥ इति दशदिक्पालान् पूजयेत्।

तद्बहिः—ॐ वज्राय नमः ॥ १ ॥ ॐ शक्तये नमः ॥ २ ॥ ॐ दण्डाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ खड्गाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ पाशाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ अङ्कुशाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ गदायै नमः ॥ ७ ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥ ९ ॥ ॐ चक्राय नमः ॥ १० ॥ इत्यायुधानि पूजयेत्।

एवमावरणपूजां कृत्वा धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनादिभिः सूर्य्यं सम्पूज्य स्तोत्रैः स्तुत्वा यथाविधि चित्तैकाग्रतया जपं कुर्यात्। (प्रत्यहं वक्ष्यमाणविधिना पूजान्ते अर्घ्यं दद्यात्)। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षमन्त्रः। जपान्ते अष्टसहस्रसङ्ख्याकहोमः। तद्दशांशेन तर्पणम्। तद्दशांशेन मार्जनम्। तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनं च ज्ञेयम्।

तथा च शारदातिलके—

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं समिद्भिः क्षीरशाखिनाम्। तत्सहस्त्रं प्रजुहुयात्क्षीराक्ताभिर्जितेन्द्रियः॥
एवं सम्पूज्य विधिवद्भास्करं भक्तवत्सलम्। दद्यादर्घ्यं प्रतिदिनं वारे वा तस्य चोदिते॥
प्रभाते मण्डलं कृत्वा पूर्ववत्पीठमर्चयेत्। पात्रं ताम्रमयं प्रस्थतोयग्राहि मनोहरम्॥
विधाय तत्र मनुना पूरयेत्तच्छुभोदकैः। कुङ्कुमं रोचनं राजीरक्तचन्दनवैणवान्॥
करवीरजपालाशीकुशश्यामाकतण्डुलान्। निक्षिपेत्सलिले तस्मिन्नैक्यं सङ्कल्प्य भानुना॥
साङ्गमभ्यर्चयेत्तस्मिन्भास्करं प्रोक्तलक्षणम्। गन्धपुष्पादिनैवेद्यैर्यथाविधि विधानवित्॥
तद्विधाय जपेन्मन्त्रं सम्यगष्टोत्तरं शतम्। पुनः सम्पूज्य गन्धाद्यैर्जानुभ्यामवनीं गतः॥
आमस्तकं तदुद्धृत्य व्योम्नि सावरणे रवौ। दृष्टिं विधाय स्वैक्येन मूलमन्त्रं धिया जपन्॥

मूलमन्त्रः—ॐ ह्रीं घृणिः सूर्यआदित्यः श्रीं इति।

दद्यादर्घ्यं दिनेशाय प्रसन्नेनान्तरात्मना। कृत्वा पुष्पाञ्जलिं भूयो जपेदष्टोत्तरं शतम्॥
यावदर्घ्यामृतं भानुः समादत्ते निजैः करैः। तेन तृप्तो दिनमणिर्दद्यात्तस्मै मनोरथान्॥
अर्घ्यदानमिदं पुण्यं पुंसामारोग्यवर्द्धनम्। धनधान्यपशुक्षेत्रपुत्रमित्रकलत्रदम्॥
तेजोवीर्ययशःकान्तिविद्याविभवभाग्यदम्॥

इत्यष्टाक्षरसूर्यमन्त्रविधानं सार्घ्यं समाप्तम्।

श्रीसूर्ययन्त्रम्
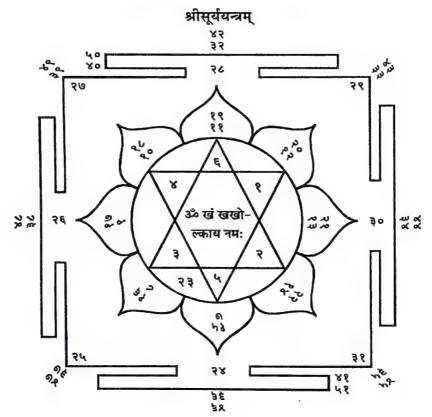
अष्टाक्षर सूर्यमन्त्र-पुरश्चरण—शुभ मुहूर्त में प्रात:काल नित्यक्रियाओं से निवृत्त होकर जपस्थान के समीप आकर पद्धतिकाण्ड में वर्णित कूर्म का संशोधन करके अपने आसन पर पूर्व की ओर मुख करके बैठ जाय, फिर मूल मन्त्र से आचमन तथा पाणायाम कर देश-काल का उच्चारण कर 'मम सर्वरोगदारिद्र्यादिविनाशनार्थं आयुरारोग्यसुखश्रीसम्पत्तिप्राप्त्यर्थं श्रीभगवत् सवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं अष्टलक्षसङ्ख्यात्मकं अष्टाक्षरसूर्यमन्त्रजपपुरश्चरणं करिष्ये; तदङ्गत्वेन भूतशुद्धिं अन्तर्मातृका-बहिर्मातृकान्यासं, केशवादिकलामातृकान्यासं च करिष्ये' ऐसा कहकर सङ्कल्प करे। फिर पूर्वोक्त पद्धतिकाण्ड में वर्णित विधि से भूतशुद्धि, अन्तर्मातृका न्यास, बहिर्मातृकान्यास, केशवादि कला मातृकान्यास (विष्णु के अष्टाक्षर मन्त्र में वर्णित) करना चाहिये।

'ॐ घृणि: सूर्य आदित्य:' यह अष्टाक्षर मूल मन्त्र (सूर्य का) है। सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीसूर्याष्टाक्षरमन्त्रस्य देवभाग: ऋषि:। गायत्रीछन्द:। आदित्यो देवता। ममाभीष्टसाधने विनियोग:' कहकर विनियोग करे। फिर मूलपाठ में लिखे 'ॐ देवभागऋषये नम: शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। पुन: मूलोक्त 'ॐ सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नम:' इत्यादि छ: मन्त्रों से करन्यास करे। तदनन्तर 'ॐ सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नम:, ॐ ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट्, ॐ रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कवचाय हुम्, ॐ अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास सम्पन्न करे।

तत्पश्चात् 'ॐ ओं आदित्याय नमो मूर्ध्नि' इत्यादि मूलोक्त पाँच मन्त्रों के द्वारा पञ्चमूर्ति न्यास करे। फिर मूल में लिखे 'ॐ नमो मूर्ध्नि' इत्यादि आठ मन्त्रों से मन्त्र के आठ अक्षरों (वर्णों) का न्यास उन मन्त्रों में वर्णित शरीराङ्गों में करना चाहिये। फिर न्यासोपरान्त 'रक्ताब्जयुग्माभयदानहस्तं०' इत्यादि मन्त्र से ध्यान करे। ध्यान का भावार्थ इस प्रकार है—'दोनों रक्तकमल की आभा वाले हाथों में अभय मुद्रा धारण किये, केयूर-हार-बाजूबन्द तथा कुण्डलों से युक्त, शिखा पर माणिक्यों वाले, बन्धूक (गुलदुपहरिया) के फूल के समान कान्ति वाले, तीन नेत्रों से युक्त दिननाथ (सूर्य) को पूजता हूँ।' इस प्रकार ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन कर पीठपूजा करे।

पीठपूजा—पूर्वादि दिशाओं तथा मध्य में मूलपाठ में लिखित 'ॐ प्रभूताय नम:' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर 'ॐ अं अनन्ताय नम:' इन आठ मन्त्रों से पूजन करे। फिर 'ॐ सं सोममण्डलाय नम:' इत्यादि तीन मन्त्रों से पीठदेवताओं को पूजकर पीठशक्तियों की पूजा पूर्वादि दिशाओं तथा मध्य में 'ॐ रां दीप्तायै नम:' इत्यादि ९ मन्त्रों से करना चाहिये। तदुपरान्त 'ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नम:' इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि का आसन दे। फिर 'ॐ खं खखोल्काय नम:' इस मन्त्र से सूर्यमूर्ति की कल्पना करे अथवा ताम्रकलश के ऊपर सूर्य की प्रतिमा स्थापित कर प्राणप्रतिष्ठा करके उसमें सर्वलोकों के साक्षी सूर्य का आवाहन कर पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से यथाविधि पूजन कर तदुपरान्त आवरण-पूजा करे।

आवरणपूजा—षट्कोण में (सूर्ययन्त्र में)—आग्नेयादि कोणों के केसरों, मध्य में तथा दिशाओं में 'ॐ सत्याय तेजोज्वालामणिं हुं फट् स्वाहा हृदयाय नम:' इत्यादि छ: मन्त्रों से हृदयादि छ: अङ्गों को पूजे। फिर उस षट्कोण के बाहर प्रथम पूर्वादि चारो दिशाओं में 'ॐ आदित्याय नम:' इत्यादि चार मूलोक्त मन्त्रों से पूजा करे। फिर अग्निकोण से लेकर प्रदक्षिणक्रम से चारो कोणों में मूलोक्त 'ॐ उं उमायै नम:' इत्यादि चार मन्त्रों से चार

शक्तियों को पूजे। फिर दलों (अष्टदलों) के अग्रभागों में पूर्वादि क्रम से 'ॐ ब्रां ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से आठ माताओं की पूजा करे। फिर देव के आगे 'ॐ अरुणाय नमः' इस मन्त्र से पूजा कर फिर उसके बाहर (अरुण के बाहर) पूर्वादि चारो दशाओं में—'ॐ सों सोमाय नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से चार शुभग्रहों को पूजकर आग्नेयादि चार कोणों में 'ॐ अं अङ्गारकाय नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से मङ्गल आदि चार क्रूर ग्रहों की पूजा करनी चाहिये। फिर सूर्ययन्त्र के भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि से दश दिक्पालों की पूजा करनी चाहिये। फिर उन दिक्पालों के बाहर की ओर 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दश दिक्पालों के आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार आवरणपूजा करके धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन आदि से सूर्य को पूजकर स्तोत्रों से उनकी स्तुति कर यथाविधि चित्त को एकाग्र करके अष्टाक्षर मन्त्र का जप करना चाहिये तथा प्रतिदिन आगे कही गयी रीति से सूर्य को अर्घ्य देना चाहिये। इसका पुरश्चरण आठ लाख मन्त्रजप से पूर्ण होता है। जप पूर्ण होने पर जप का दशांश होम, तद्दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये।

शारदातिलक के अनुसार—आठ लाख मन्त्रों का जप करके क्षीरी वृक्षों की समिधा से उतने ही अयुत (अस्सी सहस्र) होम करना चाहिये। इस प्रकार से भक्त-वत्सल श्री सूर्य को पूजकर प्रतिदिन अर्घ्य देना चाहिये अथवा उनके वार (रविवार) में सूर्योदय के समय अर्घ्य देना चाहिये। प्रातःकाल मण्डल (सूर्यपीठ) को बनाकर अर्चना करे। सुन्दर ताम्रपात्र में जल भर कर उक्त मन्त्र से कुङ्कुम, गोरोचन, राई, रक्तचन्दन, बाँस के फूल, कनेर के फूल, गुड़हल के फूल, पलाश के फूल, साँवा के चावल ताम्रपात्र के जल में डालकर सूर्य के लिये सङ्कल्प कर साङ्गतापूर्वक सूर्य की अर्चना करे। गन्ध, पुष्प, नैवेद्य आदि से विधिपूर्वक पूजा कर फिर एक सौ आठ मन्त्रों का जप करे। पुनः गन्धादि से पूजन कर घुटनों को भूमि पर टेककर तथा उस अर्घ्यपात्र को मस्तक के बराबर ऊँचा करके सूर्य की ओर दृष्टि करके शारदातिलकोक्त (ॐ ह्रीं घृणिः सूर्यआदित्यः श्रीं) मूल मन्त्र का जप मन ही मन करके प्रसन्न मन से श्री सूर्य भगवान् को अर्घ्य प्रदान करे। फिर पुष्पाञ्जलि देकर पुनः एक सौ आठ मूल मन्त्र का जप करे। श्री सूर्य भगवान् उस अर्घ्य को अपनी किरणों से ग्रहण करते हैं तथा उससे तृप्त होकर साधक के सभी मनोरथों को पूर्ण करते हैं। यह सूर्यार्घ्यदान महान् पुण्यदायक तथा पुरुषों के लिये आरोग्यवर्धक होता है। यह धन-धान्य, पशु, क्षेत्र, पुत्र, मित्र, कलत्र को देने वाला है; तेज, शक्ति, यश, कान्ति, विद्या, वैभव तथा भाग्य देने वाला है।

अष्टाक्षर सूर्यमन्त्र के पुरश्चरण में कर्त्तव्य		
आनुषङ्गिक कर्म	अनुपात	गणितीय संख्या
१. पुरश्चरण (जप)	एक	आठ लाख
२. हवन (होम)	दशांश	८०,००० (अस्सी सहस्र)
३. तर्पण	शतांश	८०० (आठ सौ)
४. मार्जन	सहस्रांश	८० (अस्सी)
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	८ (आठ)

त्र्यक्षरसूर्यमन्त्रविधानम्

मन्त्रो यथा—'ह्रांह्रींसः' इति त्र्यक्षरमन्त्रः। अस्य श्रीसूर्यमन्त्रस्य अज ऋषिः। गायत्री छंदः। सूर्यो देवता। ह्रां बीजम्। ह्रीं शक्तिः। सः कीलकम्। सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः। ॐ अजऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सूर्यदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ ह्रां बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ सः कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ह्रां नमः आधारादिपदाग्रान्तं विन्यसेत्॥ १॥ ॐ ह्रीं नमः कण्ठाद्याधारान्तं विन्यसेत्॥ २॥ ॐ सः नमः मूर्धादिकण्ठपर्यन्तं विन्यसेत्॥ ३॥ इत्यङ्गन्यासः। ॐ आं ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ईं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ऊँ ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ऐं ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ औं ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ अः ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्य्यात्। एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि।
पद्मद्वयाभयवरान्दधतं कराब्जैर्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम्॥ १ ॥

एवं ध्यात्वा पूर्वोक्ते पीठे पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ आं ह्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ईं ह्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ऊं ह्रीं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ऐं ह्रीं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ औं ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ अः ह्रीं अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्॥ १॥ ततो द्वितीयावरणे अष्टदले चन्द्राद्यष्टग्रहान् सम्पूजयेत्॥ २॥ तृतीयावरणे भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादीन्दशदिक्पालान्। तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च सम्पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनीराजनान्तैरुपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रमन्नाज्येन दशांशतः। तिलैर्वा मधुरासिक्तैर्जुहुयाद्विजितेन्द्रियः॥
सोऽपि रत्नं धनं धान्यं पुत्रपौत्रान्यशः पशून्। वस्त्राणि भूषणादीनि दद्यात्तस्मै न संशयः॥
इति सम्पूज्य निर्माल्यं तेजश्चण्डाय दीयताम्। अर्घ्यं प्रागीरितं दद्याद्भानवे संयतेन्द्रियः॥

इति त्र्यक्षरीसूर्यमन्त्रप्रयोगः।

श्रीसूर्यमन्त्रानुष्ठानोपयोगिसूर्यभद्रमण्डलम्
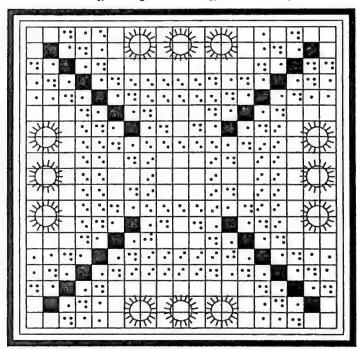
त्र्यक्षरात्मक सूर्यमन्त्र का अनुष्ठान—मूलमन्त्र इस प्रकार है—ह्रां ह्रीं सः। यह तीन अक्षरों का है। सर्वप्रथम मूल में लिखित 'अस्य श्रीसूर्यमन्त्रस्य अज ऋषिः' इत्यादि मन्त्र से विनियोग का जल छोड़े। तदनन्तर मूलोक्त 'ॐ अजऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ह्रां ह्रीं नमः' से पैरों से लेकर कटि तक न्यास करे। 'ॐ ह्रीं नमः' से कण्ठ से कटिपर्यन्त न्यास करे तथा 'ॐ सः नमः' मन्त्र से मूर्धा (सिर) से कण्ठपर्यन्त अङ्गन्यास करे। तत्पश्चात् मूलोक्त 'ॐ आं ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे।

फिर 'ॐ आं ह्रीं हृदयाय नमः, ॐ ईं ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ऊँ ह्रीं शिखायै वषट्, ॐ ऐं ह्रीं कवचाय हुम्, ॐ औं ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ अः ह्रीं अस्त्राय फट्' इस प्रकार हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। फिर 'रक्ताम्बुजासनमशेष०' इत्यादि श्लोक से ध्यान करे। ध्यान के उपरान्त पूर्वोक्त पीठ (मण्डल) पर पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूजन कर आवरणपूजा करे।

आवरणपूजा—षट्कोण में (सूर्ययन्त्र में) आग्नेयादि कोणों, मध्य तथा दिशाओं में मूलोक्त 'ॐ आं ह्रीं हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करे। फिर द्वितीय आवरण में अष्टदल कमल के आठ दलों में चन्द्रमा आदि आठ ग्रहों की पूजा करे। फिर तृतीय आवरण में भूपुर में पूर्वादि दश दिशाओं में क्रमशः दश दिक्पालों को पूजकर उनके बाहर समीप ही उनके वज्रादि दश आयुधों की पूजा भी 'नमः' के साथ करे। इस प्रकार आवरणपूजा कर धूप, दीप, नीराजनान्त उपचारों से पूजकर जप आरम्भ करे। इसके पुरश्चरण के लिये बारह लाख मन्त्रजप करके उसके दशांश से तिल, मधु, शर्करा, दूध, घी आदि मिश्रित हवन जितेन्द्रिय होकर करने से साधक को रत्न, धन-धान्य, पुत्र, पौत्र, पशु, वस्त्राभूषणादि की प्राप्ति होती है, इसमें सन्देह नहीं है। पूजा के उपरान्त निर्माल्य चण्ड को देना चाहिये तथा पूर्व में कथित विधि से सूर्य को अर्घ्य भी देना चाहिये।

त्र्यक्षर सूर्यमन्त्र पुरश्चरण संख्या

पुरश्चरण के अङ्ग	परस्पर अनुपात	संख्या
१. जप	१ एक	१२,००,००० (बारह लाख)
२. होम (हवन)	१/१० दशांश	१२०,००० (एक लाख बीस हजार)
३. तर्पण	१/१०० शतांश	१२,००० (बारह हजार)
४. मार्जन	१/१००० सहस्रांश	१२०० (बारह सौ)
५. ब्राह्मणभोजन	१/१०,००० अयुतांश	१२० (एक सौ बीस)

चन्द्रमन्त्रप्रयोगः

शारदायाम् मन्त्रो यथा—स्वौं सोमाय नमः (मतान्तरे—सौं सोमाय नमः) इति षडक्षरो मन्त्रः। अस्य सोममन्त्रस्य भृगुर्ऋषिः। पङ्क्तिश्छन्दः। सोमो देवता। स्वौं बीजम्। नमः शक्तिः। मम सर्वेष्टसिद्धये जपे विनियोगः। ॐ भृगुऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ पङ्क्तिच्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सोमदेवतायै नमो हृदि॥ ३॥ ॐ स्वौं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ सीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ सौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ सः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं पूर्णेन्दुबिम्बाननं मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तं तमः।
हस्ताभ्यां कुमुदं वरं च दधतं नीलालकोद्भासितं स्वीयाङ्कस्थमृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धिं भजे॥

इति ध्यात्वा पीठे मण्डूकादिसोमान्तपीठदेवताः सम्पूज्य ततः पीठमध्ये 'सौं सोमाय नमः' इति मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। षट्कोणे केसरेषु पूज्यपूजकयोर्मध्ये दिक्षु च ॐ सां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ सीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ सूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ सैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ सौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ सः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्।

ततोऽष्टदले पूर्वादिक्रमेण—ॐ रोहिण्यै नमः॥ १॥ ॐ कृत्तिकायै नमः॥ २॥ ॐ रेवत्यै नमः॥ ३॥ ॐ भरण्यै नमः॥ ४॥ ॐ रात्र्यै नमः॥ ५॥ ॐ आर्द्रायै नमः॥ ६॥ ॐ ज्योत्स्नायै नमः॥ ७॥ ॐ कलायै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्।

ततोऽष्टदलाग्रेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ आं आदित्याय नमः॥ १॥ ॐ मं मङ्गलाय नमः॥ २॥ ॐ बुं बुधाय नमः॥ ३॥ ॐ शं शनैश्चराय नमः॥ ४॥ ॐ बृं बृहस्पतये नमः॥ ५॥ ॐ रां राहवे नमः॥ ६॥ ॐ शुं शुक्राय नमः॥ ७॥ ॐ कें केतवे नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततो भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिदशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। इत्यावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तं सम्पूज्य जपं कुर्यात्।

अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षजपः। तथा च—

रसलक्षं जपेन्मन्त्रं साधको विजितेन्द्रियः। तत्सहस्त्रं प्रजुहुयात्पायसेन ससर्पिषा॥
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री सम्पदां वसतिर्भवेत्। हृत्पुण्डरीकमध्यस्थं ताराहारविभूषणम्॥
तारापतिं स्मरन्मन्त्री त्रिसहस्त्रं मनुं जपेत्। राज्यैश्वर्यं दरिद्रोऽपि प्राप्नुयाद्वत्सरान्तरे॥
पूर्वोक्तसङ्ख्यं प्रजपेच्छशिनं मूर्ध्नि चिन्तयेत्। रोगापमृत्युदुःखानि जित्वा वर्षशतं वसेत्॥
ब्रह्मचर्यरतः शुद्धश्चतुर्लक्षमिदं जपन्। निधानं भूगतं सद्यः प्राप्नुयाद्यत्नवर्जितम्॥
जितेन्द्रियो जपेन्मन्त्रं पूर्णमास्यां विशेषतः। भवेत्सौभाग्यनिलयः सम्पदामपरो निधिः॥
घोराञ्ज्वराञ्छिरोरोगानभिचारानुपद्रवान्। विद्विषामपि सङ्घातं नाशयेन्मनुनामुना॥
पौर्णमास्यां निराहारो दद्यादर्घ्यं विधूदये। प्राक्प्रत्यगायतं कुर्याद्भूतले मण्डलत्रयम्॥
निषण्णः पश्चिमे मन्त्री मण्डले विहितासने। मध्यस्थे स्थापयेत्पश्चात्पूजाद्रव्याण्यशेषतः॥
अन्यस्मिन्मण्डले सोममर्चयित्वाम्बुजान्विते। राजतं चषकं भद्रं स्थापयेत्पुरतः सुधीः॥
गोदुग्धेन समापूर्य स्पृष्ट्वा तं प्रजपेन्मनुम्। अष्टोत्तरशतं पश्चाद्विद्यामन्त्रेण देशिकः॥
दद्यादर्घ्यं शशाङ्काय सर्वकामार्थसिद्धये। अनेन विधिना कुर्वन्प्रतिमासमतन्द्रितः॥
षण्मासाभ्यन्तरे सिद्धिं साधकेन्द्रः समश्नुते। श्रियमत्यूर्जितान्पुत्रान्सौभाग्यमतुलं यशः॥
कन्यामिष्टामवाप्नोति कन्यापि वरमीप्सितम्। बहुना किमिहोक्तेन सर्वं दद्यान्निशापतिः॥
विद्ये विद्यामालिनि स्याच्चन्द्रिण्यन्ते ततो भवेत्। पुनश्चन्द्रमुखि स्वाहा विद्यामन्त्र उदाहृतः॥

विद्ये विद्यामालिनि चन्द्रिणि चन्द्रमुखि स्वाहा—इति विद्यामन्त्रः।

इति सोममन्त्रप्रयोगः समाप्तः।

चन्द्रमन्त्र का अनुष्ठान—स्वौं सोमाय नमः' यह मूल मन्त्र है। इसमें छः अक्षर हैं। 'अस्य सोममन्त्रस्य भृगुः ऋषिः' इत्यादि जो मन्त्र लिखा है, उसे पढ़कर विनियोग करे। तदुपरान्त मूल में लिखित 'ॐ भृगुऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखे हुए 'ॐ सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। तदुपरान्त ध्यान करे। ध्यान-मूल पाठ में लिखित 'कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं' इत्यादि श्लोक के भाव के अनुसार करे।

ध्यान का भावार्थ—कर्पूर एवं स्फटिक मणि के समान सुन्दर, पूर्णचन्द्रबिम्ब के मुख को मुक्तामाला से विभूषित शरीर के द्वारा अन्धकार को दूर करते हुए हाथों में कुमुद तथा वरमुद्रा धारण किये हुए नीली अलकों (बालों की लटों) से उद्भासित अपने अङ्क में मृग को आश्रय दिये हुए अमृत के भण्डार सोम को भजता हूँ।

पीठपूजन—पीठ पर 'मण्डूकादिसोमान्तपीठदेवताभ्यो नमः' मन्त्र से पीठदेवताओं का पूजन करके फिर पीठ पर 'ॐ सौं सोमाय नमः (स्वौं सोमाय नमः)' इस मूल मन्त्र से चन्द्रमा के मूर्ति की कल्पना करके उसकी पाद्य से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त पूजा करने के उपरान्त आवरण-पूजा करे।

आवरणपूजा—षट्कोणस्थ केसरों में आग्नेयादि कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में (यन्त्र में लिखे अङ्कों के अनुसार) पूज्य-पूजक के मध्य में पूर्व दिशा की कल्पना करके 'ॐ सां हृदयाय नमः' इत्यादि मूलोक्त मन्त्रों से पूजा करे। फिर अष्टदल कमल में पूर्वादि क्रम से आठ दिशाओं में 'ॐ रोहिण्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर अष्टदलों के अग्रभागों में भी पूर्वादि क्रमानुसार (चन्द्र को छोड़कर) आठ ग्रहों की 'ॐ आदित्याय

नमः' आदि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्वादिक्रम से दश दिशाओं में 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि नाममन्त्रों से दश दिक्पालों की पूजा करे। फिर दिक्पालों के बाहर की ओर समीप ही उनके वज्रादि आयुधों की पूजा भी 'ॐ वज्राय नमः' इस प्रकार के नाममन्त्रों से करे।

इसका पुरश्चरण छः लाख मन्त्र जपने से होता है; यथा—साधक जितेन्द्रिय होकर मन्त्र का जप करे तथा छः हजार (दूसरे अर्थ में साठ हजार) आहुति पायस तथा घृत से देनी चाहिये। ऐसा करने से साधक मन्त्र सिद्ध कर लेता है, उस सिद्ध मन्त्र के प्रयोग से सम्पत्ति के मध्य निवास करता है। इसके लिये उसे हृदय कमल के मध्य में चन्द्रमा का स्मरण करते हुए तीन सहस्र मन्त्रों का जप करना चाहिये। इससे दरिद्र को भी राज्य तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। पूर्वोक्त संख्या में (तीन सहस्र) मन्त्र जपते हुए चन्द्रमा का ध्यान करे तो उस प्रयोगकर्ता के दुःख, रोग, मृत्यु आदि दूर होकर वह शतायु होकर रहता है। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए चार लाख की संख्या में इस सिद्ध मन्त्र का जप करने से बिना प्रयास के उसे भूमि में गड़े हुए धन की प्राप्ति होती है। यदि जितेन्द्रिय होकर पूर्णिमा के दिन इस सिद्ध मन्त्र का जप करे तो वह साधक सौभाग्यनिलय तथा सम्पदा की प्राप्ति कर लेता है। इस मन्त्र के जप से घोर ज्वर, शिरोरोग, अभिचार (मूठ आदि प्रयोग) आदि उपद्रव दूर हो जाते हैं तथा शत्रुओं का भी नाश हो जाता है।

चन्द्रमन्त्र की पुरश्चरण संख्या		
पुरश्चरण के अङ्ग	अनुपात (भागात्मक)	संख्या
१. जप	१ एक	६,०,००,००० = छः लाख
२. होम (हवन)	$\frac{१}{१०}$ दशांश	६०,००० = साठ हजार
३. तर्पण	$\frac{१}{१००}$ शतांश	६,००० = छह हजार
४. मार्जन	$\frac{१}{१०००}$ सहस्रांश	६०० = छह सौ
५. ब्राह्मणभोजन	$\frac{१}{१०,०००}$ अयुतांश	६० = साठ

पूर्णिमा के दिन निराहार रहकर उपवास करके जब चन्द्रोदय हो तो चन्द्रमा को अर्घ्य प्रदान करे। पूर्व से पश्चिम की ओर पृथ्वी पर एक के पश्चात् एक अन्तर के साथ तीन मण्डल बनाये। उनमें पश्चिम के मण्डल (चौक) पर साधक स्वयं बैठे। बीच वाले मण्डल (चौक या घेरा) में पूजन की सामग्री रखे तथा अन्य तीसरे मण्डल में चन्द्रमा का पूजन कर उनके आगे चाँदी का चषक (प्याला) रखे। उस चाँदी की कटोरी में गोदुग्ध भर दे तथा उसका स्पर्श करते हुए सिद्ध मन्त्र 'ॐ सौं सोमाय नमः' का जप करता रहे। एक सौ आठ जप करने के पश्चात् आचार्य विद्यामन्त्र से चन्द्रमा को अर्घ्य सर्वकामार्थ-सिद्धि-हेतु दे। ऐसा प्रत्येक मास की पूर्णिमा को करते रहने पर छः महीने में साधक को सिद्धि प्राप्त हो जाती है और वह श्रीप्राप्ति से अत्यन्त ऊर्जावान् होकर पुत्र-पौत्रादि के साथ सौभाग्य तथा अतुल यश को प्राप्त करता है। वर के लिये मनोनुकूल कन्या प्राप्त होती है तथा कन्या के लिये मनपसन्द वर मिल जाता है। अधिक क्या कहा जाय; चन्द्रमा सब कुछ दे देता है। 'विद्ये विद्यामालिनि चन्द्रमुखि स्वाहा' यह विद्यामन्त्र है, इसी मन्त्र से चन्द्रमा को अर्घ्य देना चाहिये।

तन्त्रोक्तमङ्गलमन्त्रप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'ॐ हाँ हँसः खंखः।' इति षडक्षरो मन्त्रः। 'अस्य मङ्गलमन्त्रस्य विरूपा ऋषिः। गायत्री छन्दः। मङ्गलो देवता। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ विरूपाऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ मङ्गलदेवतायै नमो हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ हां तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ हं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सः अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ खं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ खः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

ध्यानम्—

जपाभं शिवस्वेदजं हस्तपद्मैर्गदाशूलशक्तीर्वरं धारयन्तम्। अवन्तीसमुत्थं सुमेषासनस्थं धरानन्दनं रक्तवस्त्रं समीडे॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते शिवपीठे मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य अथवा त्रिकोणं ताम्रयन्त्रं प्रतिमां वा संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा आवाहनादिपाद्यान्तैरुपचारैर्भौमं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ हां शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ हं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ सः कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ खं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ खः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इत्यङ्गानि पूजयेत्।

तद्बाह्ये त्रिकोणे एकविंशतिकोष्ठेषु—ॐ मङ्गलाय नमः॥ १॥ ॐ भूमिपुत्राय नमः॥ २॥ ॐ ऋणहर्त्रे नमः॥ ३॥ ॐ धनप्रदाय नमः॥ ४॥ ॐ स्थिरासनाय नमः॥ ५॥ ॐ महाकायाय नमः॥ ६॥ ॐ सर्वकामावरोधकाय नमः॥ ७॥ ॐ लोहिताय नमः॥ ८॥ ॐ लोहिताक्षाय नमः॥ ९॥ ॐ सामगानां कृपाकराय नमः॥ १०॥ ॐ धरात्मजाय नमः॥ ११॥ ॐ कुजाय नमः॥ १२॥ ॐ भौमाय नमः॥ १३॥ ॐ भूमिदाय नमः॥ १४॥ ॐ भूमिनन्दनाय नमः॥ १५॥ ॐ अङ्गारकाय नमः॥ १६॥ ॐ यमाय नमः॥ १७॥ ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः॥ १८॥ ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः॥ १९॥ ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः॥ २०॥ ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः॥ २१॥ इत्येकविंशतिभौमान्सम्पूजयेत्।

तद्बाह्ये चतुरस्त्रे भूपुरे पूर्वादिषु—ॐ इं इन्द्राय नमः॥ १॥ अं अग्नये नमः॥ २॥ यं यमाय नमः॥ ३॥ निं निर्ऋतये नमः॥ ४॥ वं वरुणाय नमः॥ ५॥ वां वायवे नमः॥ ६॥ कुं कुबेराय नमः॥ ७॥ ईं ईशानाय नमः॥ ८॥ (ऊर्ध्वं) ब्रं ब्रह्मणे नम॥। ९॥ (अधः) अं अनन्ताय नमः॥ १०॥ इति दिक्पालान् पूजयेत्।

तद्बहि—ॐ वज्राय नमः॥ १॥ शक्तये नमः॥ २॥ दण्डाय नमः॥ ३॥ खड्गाय नमः॥ ४॥ पाशाय नमः॥ ५॥ अङ्कुशाय नमः॥ ६॥ गदायै नमः॥ ७॥ त्रिशूलाय नमः॥ ८॥ पद्माय नमः॥ ९॥ चक्राय नमः॥ १०॥ इत्यायुधानि पूजयेत्।

इत्थमावरणपूजां कृत्वा धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनैः सम्पूज्य वक्ष्यमाणविधिना अर्घ्यं दत्त्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य यथाविधि जपेत्। अस्य पुरश्चरणं षट्लक्षजपः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। तथा च—

रसलक्षं जपो होमः समिद्भिः खदिरस्य च। इत्थं जपादिभिः सिद्धं स्वेष्टसिद्धौ प्रयोजयेत्॥

इति षट्वर्णात्मकभौममन्त्रविधानम्।

तन्त्रोक्त मङ्गलमन्त्र का अनुष्ठान—मन्त्रमहोदधि के अनुसार 'ॐ हां हंसः खंखः' यह षडक्षर मङ्गल मन्त्र है (इसी मूल मन्त्र को जपना चाहिये)। सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीमङ्गलमन्त्रस्य विरूपा ऋषिः' इत्यादि मूलोक्त मङ्गल मन्त्र से विनियोग करे। तदनन्तर 'ॐ विरूपाऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलपाठ में उससे आगे लिखे 'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गूठा आदि में मन्त्रों में निर्दिष्ट अङ्गों में करन्यास करे। फिर 'ॐ हृदयाय नमः, ॐ हां शिरसे स्वाहा, ॐ हं शिखायै वषट्, ॐ सः कवचाय हुम्, ॐ खं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ खः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि छः अङ्गों में न्यास करना चाहिये।

न्यासोपरान्त 'गुड़हल के फूल की भाँति आभा वाले, भगवान् शिव के स्वेद से उत्पन्न, अपने करकमलों में गदा, त्रिशूल, शक्ति, वरमुद्रा धारण किये हुए; अवन्ती से उदित होने वाले, सुन्दर मेष पर सवार, रक्तवस्त्रधारी पृथ्वीपुत्र मङ्गल को पूजता हूँ।' इस प्रकार ध्यान करके 'शैवपीठे यजेद् भौमं प्रागङ्गानि पूजयेत्' (मन्त्र महोदधि) के अनुसार मूल मन्त्र के छः वर्णों से शैव यन्त्र में षट्कोण में मङ्गल के हृदयादि छः अङ्गों को आग्नेयादि कोण, मध्य तथा दिशाओं में पूजना चाहिये। तदुपरान्त त्रिकोण ताम्रयन्त्र अथवा भौम की प्रतिमा को पीठ पर स्थापित कर उसकी प्राणप्रतिष्ठा करके आवाहनादि पाद्यान्त उपचारों से पूजा करके आवरणपूजा करनी चाहिये।

आवरणपूजा—मङ्गल यन्त्र के इक्कीस कोठों में मूल में लिखित 'ॐ मङ्गलाय नमः' इत्यादि इक्कीस (२१) कोष्ठकों में (यन्त्र में दिये अङ्कों के अनुसार) इक्कीस नामों से मङ्गल का पूजन करना चाहिये। फिर उस मङ्गल यन्त्र की दशों दिशाओं में पूर्व से लेकर अधः पर्यन्त (भूपुर में) इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन 'ॐ इं इन्द्राय नमः' इत्यादि मूलोक्त दस मन्त्रों से सम्पन्न करके उन दिक्पालों के बाहर समीप में मूलोक्त 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दस मन्त्रों से उनके आयुधों का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार आवरणपूजा करके धूप-दीप-नैवेद्य-ताम्बूल-दक्षिणा-नीराजन आदि से पूजकर आगे लिखी विधि से अर्घ्य देकर साष्टाङ्ग प्रणाम कर यथाविधि जप करना चाहिये।

पुरश्चरण—इसका पुरश्चरण छः लाख जप से होता है अन्य सब पूर्व की भाँति करना चाहिये। जैसा कि कहा गया है—इसका रसलक्ष (छः लाख) जप करना चाहिये, तदुपरान्त खदिर की समिधाओं से उसका दशांश (पाठ सहस्र) होम करना चाहिये (उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन, उसका दशांश ब्राह्मणभोजन भी कराना चाहिये)। इस प्रकार जपादि सब क्रियाओं से मङ्गल मन्त्र सिद्ध हो जाता है। उस सिद्ध मन्त्र का प्रयोग अपनी मनोकामना की सिद्धि के लिये करना चाहिये।

मङ्गलयन्त्रम्
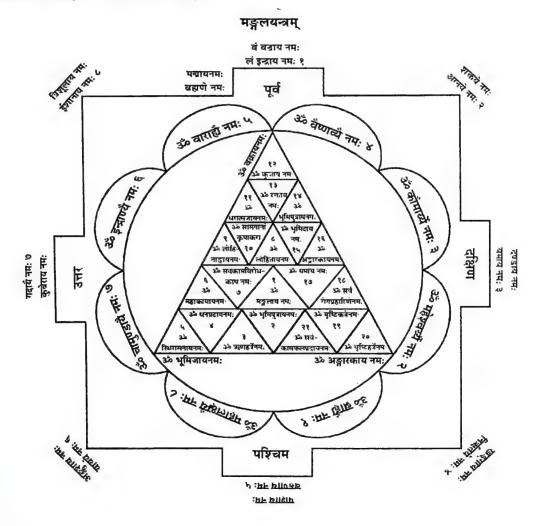
धनपुत्रादिप्रदमङ्गलव्रतविधानम्

स्कान्दे मन्त्रमहोदधौ च—मार्गशीर्षे वैशाखे वा शुक्लपक्षे चन्द्रतारादिबलान्विते भौमवासरे व्रतं प्रगृह्य वक्ष्यमाणविधिना संवत्सरपर्यन्तं कार्य्यम्। तद्यथा—मङ्गलवारे अरुणोदयवेलायामुत्थाय शौचविधिं विधाय अपामार्गकाष्ठेन मौनपूर्वकं दन्तधावनं कृत्वा नद्यादौ यथाविधि स्नात्वा सन्ध्यादिनित्यक्रियां समाप्य शिवालये गृहे वा रक्तवाससी परिधाय रक्तगोमयलिप्तमण्डले स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य दक्षिणपार्श्वे रक्तचन्दनपुष्पादीनि सम्पाद्य सपवित्रकरः आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य मम जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशा-जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद्गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्टस्थानस्थितभौमसूचितसूचयिष्यमाणसर्वानिष्टफलनिवृत्तिद्वारा तृतीयै-कादशस्थानस्थितवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थमायुरारोग्यसुखपुत्रधनप्राप्त्यर्थं श्रीभौमदेवताप्रीत्यर्थं भौमव्रतं करिष्ये; तदङ्गत्वेन न्यासध्यानपूजार्घ्यदानादि च करिष्ये' इति सङ्कल्प्य (प्रारम्भदिने गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं च कुर्यात्)। ततः—

अथ देवेश ते भक्त्या करिष्ये व्रतमुत्तमम्। ऋणव्याधिविनाशाय धनसन्तानहेतवे॥

इति प्रार्थ्य कर्ता स्वदेहे न्यासान्कुर्य्यात्। ॐ मङ्गलाय नमः अङ्घ्र्योः॥ १॥ ॐ भूमिपुत्राय नमः जानुनोः॥ २॥ ॐ ऋणहर्त्रे नमः ऊर्वोः॥ ३॥ ॐ धनप्रदाय नमः कट्योः॥ ४॥ ॐ स्थिरासनाय नमः गुह्ये॥ ५॥ ॐ महाकालाय नमः उरसि॥ ६॥ ॐ सर्वकर्मावरोधकाय नमः वामबाहौ॥ ७॥ ॐ लोहिताय नमः दक्षिणबाहौ॥ ८॥ ॐ लोहिताक्षाय नमः गले॥ ९॥ ॐ सामगानां कृपाकराय नमः मुखे॥ १०॥ ॐ धरात्मजाय नमः नासिकायाम्॥ ११॥ ॐ कुजाय नमः अक्ष्णोः॥ १२॥ ॐ भौमाय नमः ललाटे॥ १३॥ ॐ भूतिदाय नमः भ्रुवोर्मध्ये॥ १४॥ ॐ भूमिनन्दनाय नमः शिरसि॥ १५॥ ॐ अङ्गारकाय नमः शिखायाम्॥ १६॥ ॐ यमाय नमः सर्वाङ्गे॥ १७॥ ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः बाहुद्वये॥ १८॥ ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः मूर्द्धादिपादपर्यन्तम्॥ १९॥ ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः चरणादिमस्तकान्तम्॥ २०॥ ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः दिक्षु॥ २१॥ ॐ आराय नमः नाभौ॥ २२॥ ॐ वक्राय नमः वक्षसि॥ २३॥ ॐ भूमिजाय नमः मूर्ध्नि॥ २४॥ एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

रक्तमाल्याम्बरधरः शक्तिशूलगदाधरः। चतुर्भुजो मेषगमो वरदः स्याद्धरासुतः॥

एवं ध्यात्वा अर्घ्यं संस्थाप्य पूजां कुर्यात्। तद्यथा—त्रिकोणे स्थण्डिले यथाविधि ताम्रकलशं संस्थाप्य तत्र एकविंशतिकोष्ठाढ्यं त्रिकोणं ताम्रयन्त्रमथवा रक्तचन्दननिर्मितां शूलशक्तिगदाधरां मेषमारूढां भौमप्रतिमां संस्थाप्य पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा आवाहनं कुर्यात्।

ॐ एह्येहि भगवन्ब्रह्मन्नङ्गारक महाप्रभो। त्वयि सर्वं समायातं त्रैलोक्यं सचराचरम्॥
भौममावाहयिष्यामि तेजोमूर्तिं दुरासदम्। रुद्ररूपमनिर्देश्यं वक्रं च रुधिरप्रियम्॥

ॐ अग्निर्मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्याअयं अपाᳬंरेताᳬंसिजिन्वति॥ १॥ ॐ अङ्गारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्॥ १॥ इति भौममावाह्य पाद्यादिरक्तपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्। षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च—ॐ ह्रां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ हूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ हुं हंहं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ हंसः नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ खखः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति पूजयेत्।

ततः एकविंशतिकोष्ठेषु—ॐ मङ्गलाय नमः पादौ पूजयामि॥ १॥ ॐ भूमिपुत्राय नमः जानुनी पूजयामि॥ २॥ ॐ ऋणहर्त्रे नमः ऊरू पूजयामि॥ ३॥ ॐ धनप्रदाय नमः कटीं पूजयामि॥ ४॥ ॐ स्थिरासनाय नमः गुह्यं पूजयामि॥ ५॥ ॐ महाकायाय नमः उरः पूजयामि॥ ६॥ ॐ सर्वकर्मावरोधकाय नमः वामबाहुं पूजयामि॥ ७॥ ॐ लोहिताय नमः दक्षिणबाहुं पूजयामि॥ ८॥ ॐ लोहिताक्षाय नमः कण्ठं पूजयामि॥ ९॥ ॐ सामगानां कृपाकराय नमः मुखं पूजयामि॥ १०॥ ॐ धरात्मजाय नमः नासिकां पूजयामि॥ ११॥ ॐ कुजाय नमः नेत्रद्वयं पूजयामि॥ १२॥ ॐ भौमाय

नमः ललाटं पूजयामि॥ १३॥ ॐ भूतिदाय नमः भ्रुवोर्मध्यं पूजयामि॥ १४॥ ॐ भूमिनन्दनाय नमः मस्तकं पूजयामि॥ १५॥ ॐ अङ्गारकाय नमः शिखां पूजयामि॥ १६॥ ॐ यमाय नमः सर्वाङ्गं पूजयामि॥ १७॥ ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः बाहुद्वयं पूजयामि॥ १८॥ ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः मूर्धादिपादपर्यन्तं पूजयामि॥ १९॥ ॐ वृष्ट्यपहर्त्रे नमः चरणादिमस्तकपर्यन्तं पूजयामि॥ २०॥ ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः दिशः पूजयामि॥ २१॥ इति पूजयेत्।

ततः तद्बाह्यत्रिकोणेषु—ॐ वक्राय नमः॥ १॥ ॐ आराय नमः॥ २॥ ॐ भूमिजाय नमः॥ ३॥ इति पूजयेत्।

तद्बहिरष्टदले पूर्वादिक्रमेण—ॐ ब्राह्म्यै नमः॥ १॥ ॐ माहेश्वर्यै नमः॥ २॥ ॐ कौमार्यै नमः॥ ३॥ ॐ वैष्णव्यै नमः॥ ४॥ ॐ वाराह्यै नमः॥ ५॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः॥ ६॥ ॐ चामुण्डायै नमः॥ ७॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः॥ ८॥ इति 'मातृकाः पूजयामि' इति पूजयेत्।

तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादिक्रमेण—ॐ इन्द्राय नमः॥ १॥ ॐ अग्नये नमः॥ २॥ ॐ यमाय नमः॥ ३॥ ॐ निर्ऋतये नमः॥ ४॥ ॐ वरुणाय नमः॥ ५॥ ॐ वायवे नमः॥ ६॥ ॐ कुबेराय नमः॥ ७॥ ॐ ईशानाय नमः॥ ८॥ ईशानपूर्वयोर्मध्ये—ॐ ब्रह्मणे नमः॥ ९॥ निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये—ॐ अनन्ताय नमः॥ १०॥ इति दशदिक्पालान्पूजयेत्। तद्बाह्ये—ॐ वज्राय नमः॥ १॥ ॐ शक्तये नमः॥ २॥ ॐ दण्डाय नमः॥ ३॥ ॐ खड्गाय नमः॥ ४॥ ॐ पाशाय नमः॥ ५॥ ॐ अङ्कुशाय नमः॥ ६॥ ॐ गदायै नमः॥ ७॥ ॐ त्रिशूलाय नमः॥ ८॥ ॐ पद्माय नमः॥ ९॥ ॐ चक्राय नमः॥ १०॥ इत्यस्त्राणि पूजयेत्।

एवमावरणपूजां कृत्वा धूपदीपगोधूमान्ननैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनादिभिः सम्पूज्यार्घ्यं दद्यात्। तद्यथा जलपूर्णे ताम्रपात्रे रक्तगन्धरक्तपुष्पाक्षतफलानि निःक्षिप्य जानुभ्यामवनीं गत्वा—

ॐ भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः। श्रेयोर्थी त्वां प्रपन्नोऽहं गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥
प्रसीद देवदेवेश विघ्नहारिन्धरात्मज। गृहाणार्घ्यं मया दत्तं मम शान्तिप्रदो भव॥
रक्तप्रवालसङ्काश जपाकुसुमसन्निभ। महीसुत महाबाहो गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥

इत्यर्घ्यं दत्त्वा पूर्वोक्तैर्नामभिः प्रणम्य एकविंशतिप्रदक्षिणाः कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणमेत्। ततः खदिराङ्गारकेन स्वपुरतः ऋणरेखात्रयं समं कृत्वा वामपादेन प्रमार्जयेत्। तत्र मन्त्रौ—

दुःखदौर्भाग्यनाशाय पुत्रसन्तानहेतवे। कृतरेखात्रयं वामपादेनैतत्प्रमार्ज्म्यहम्॥
ऋणदुःखविनाशाय मनोऽभीष्टार्थसिद्धये। मार्जयाम्यसिता रेखास्तिस्रो जन्मत्रयोद्भवाः॥

ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा प्रार्थनां कुर्यात्—

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजःसमप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम्॥
ऋणहर्त्रे नमस्तुभ्यं दुःखदारिद्र्यनाशिने। नमामि द्योतमानाय सर्वकल्याणकारिणे॥
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः। सुखं यान्ति यतस्तस्मै नमो धरणिसूनवे॥
यो वक्रगतिमापन्नो नृणां विघ्नं प्रयच्छति। पूजितः सुखसौभाग्यं तस्मै क्ष्मासूनवे नमः॥
प्रसादं कुरु मे नाथ मङ्गलप्रद मङ्गल। मेषवाहन रुद्रात्मन्पुत्रान्देहि धनं यशः॥
अङ्गारक महाभाग भगवन्भक्तवत्सल। त्वां नमामि ममाशेषमृणमाशु विमोचय॥
ऋणरोगादिदारिद्र्यं ये चान्ये चापमृत्यवः। भयक्लेशमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा॥
अतिवक्र दुराराध्य भोगमुक्तजितात्मनः। तुष्टो ददासि साम्राज्यं रुष्टो हरसि तत्क्षणात्॥
विरञ्चिशक्रविष्णूनां मनुष्याणां तु का कथा। तेन त्वं सर्वसत्त्वेन ग्रहराजो महाबलः॥
पुत्रान्देहि धनं देहि त्वामस्मि शरणं गतः। ऋणदारिद्र्यदुःखेन शत्रूणां च भयात्ततः॥

इति प्रार्थ्य पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। ततः ब्राह्मणान्सम्पूज्य गुरवे दक्षिणां दत्त्वा पूजायां निवेदितान्नेन एकभक्तव्रतं कुर्यात्। एवं प्रतिभौमदिनं संवत्सरावधि कृत्वा समाप्ते व्रते सर्वतोभद्रमण्डलमध्ये यथाविधि ताम्रकलशं संस्थाप्य तत्र वरुणमावाह्य सम्पूज्य तदुपरि स्वर्णमयीं भौमप्रतिमां संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा षोडशोपचारैः सम्पूजयेत्। ततः ईशान्यां त्रिकोणे स्थण्डिले अग्निं प्रतिष्ठाप्य कुशकण्डिकां कृत्वा आघारावाज्यहोमं विधाय 'ॐ अग्निर्मूर्धा०' इति मन्त्रेण भौमगायत्र्या वा अष्टोत्तरशतं तिलहोमं कृत्वा पूर्णपात्रदानान्तं होमशेषं समाप्य दिक्पालेभ्यो माषभक्तबलिं दत्त्वा कलशोदकेन सपत्नीकं यजमानं पूर्वोक्तमङ्गलनामभिः वेदमन्त्रैश्च अभिषिच्य यजमानः स्वर्णमूर्त्यादिकमाचार्याय दत्त्वा पञ्चाशद्ब्राह्मणान् गोधूमान्नेन भोजयेत्। एवमेव स्त्रीधनपुत्रसौभाग्यकामनया कुर्यात्। तथा च—

एवं व्रतपरा नारी प्राप्नुयात्सुभगा सुतान्। धनाप्त्यै ऋणनाशाय व्रतं कुर्यात्पुमानपि॥
अग्निर्मूर्धेत्यपि मनुं वैदिकं ब्राह्मणो जपेत्। तथाङ्गारकगायत्रीं सर्वाभीष्टप्रसिद्धये॥

इति मङ्गलविधानं समाप्तम्।

स्त्रियों के लिये मङ्गलव्रत—स्कन्दपुराण में लिखा है कि मार्गशीर्ष अथवा वैशाख मास में शुक्लपक्ष में जिस दिन कर्ता को चन्द्रबल तथा ताराबल प्राप्त हो, उस दिन मङ्गलवार भी होना चाहिये। तब व्रत को ग्रहण कर उस व्रत का वर्षभर पालन करना चाहिये। उसकी विधि इस प्रकार है—

मङ्गलवार के दिन व्रत प्रारम्भ करने के लिये प्रातः अरुणोदय वेला में उठकर शौचादि से निवृत्त होकर अपामार्ग (अज्झाझारा) की दातौन से दाँतों को मौनपूर्वक स्वच्छ करे। नदी आदि में यथाविधि स्नान करके सन्ध्या इत्यादि नित्यकर्म सम्पन्न करके शिवालय में अथवा घर में लाल वस्त्र पहिनकर लाल गोबर से लिपी भूमि में अपने आसन पर पूर्व की ओर अथवा उत्तर की ओर मुख करके बैठना चाहिये। बैठकर अपने दाहिनी ओर लाल चन्दन, लाल पुष्प आदि तथा पवित्री हाथ में लेकर आचमन तथा प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण कर 'मम जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकासाज्जन्मलग्राद्वर्षलग्राद्वागोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्टस्थानस्थितभौमसूचित-सूचयिष्यमाणसर्वानिष्टफलनिवृत्तिद्वारा तृतीयैकादशस्थानस्थितवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थं आयुरारोग्यसुखपुत्रधनप्राप्त्यर्थं श्रीभौमदेवताप्रीत्यर्थं भौमव्रतं करिष्ये, तदङ्गत्वेन न्यासध्यानपूजार्घ्यदानादि करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके प्रारम्भ के दिन गणपति पूजन तथा पुण्याहवाचन भी करना चाहिये। तदनन्तर इस प्रकार प्रार्थना करे—

'हे देवदेवेश! मैं भक्तिपूर्वक आपके उत्तम व्रत को ग्रहण कर रहा हूँ। यह व्रत मैं ऋणनाश, रोगनाश तथा धन-सन्तान की वृद्धि के लिये कर रहा हूँ।' इस प्रकार प्रार्थना करके अपने शरीर में मङ्गल के चौबीस नाम वाले मूल में लिखित चौबीस मन्त्रों से न्यास करना चाहिये।

तदनन्तर 'रक्तमाल्याम्बरधरः शक्तिशूलगदाधरः। चतुर्भुजो मेषगमो वरदः स्याद् धरासुतः' इस श्लोक से 'रक्तवस्त्र, माला, शक्ति, शूल, गदाधारण किये चार भुजाओं से युक्त मेष पर गमन करने वाले धरासुत मङ्गल मेरे लिये वरदायक हों' इस प्रकार ध्यान करके अर्घ्य देकर शूल-शक्तिधारी मेष पर बैठी गदा लिये प्रतिमा, जो कि ताँबे की बनी हो, उसे प्रतिष्ठित करे अथवा ताम्र पर भौमयन्त्र बना हो तो उसे प्रतिष्ठित करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ एह्येहि भगवन् ब्रह्मन्०' इत्यादि दो श्लोकों तथा 'ॐ अग्निर्मूर्धादिवः ककुत्पतिः०' इस वैदिक भौममन्त्र से तथा 'ॐ अङ्गारकाय विद्महे०' इत्यादि भौमगायत्री से आवाहन करके पाद्य से लेकर रक्तपुष्पों से पुष्पाञ्जलि देने तक के उपचारों से पूजकर भौमयन्त्र में आवरणपूजा करनी चाहिये।

भौम यन्त्र में आवरणपूजा—सर्वप्रथम शिवयन्त्र के मध्य के त्रिकोण के आग्नेयादि केसरों, मध्य तथा दिशा में अथवा भौममन्त्र में ही षट्कोण की कल्पना करके मूल में लिखे हुए 'ॐ ह्रां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से

षडङ्गों की पूजा करे। फिर भौमयन्त्र के इक्कीस कोठों में 'ॐ मङ्गलाय नमः पादौ पूजयामि' इत्यादि मूलोक्त इक्कीस मन्त्रों से मन्त्र में दिये हुए अङ्गों के स्थानों में पूजा करे। तदुपरान्त उससे आगे लिखे हुए 'ॐ वक्राय नमः' इत्यादि तीन मन्त्रों से त्रिकोणों के बाहर पूजन करे। फिर उसके बाहर बने अष्टदल में 'ॐ ब्राह्म्यै नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादिक्रम से इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन 'ॐ इन्द्राय नमः' इत्यादि मन्त्रों से करके दिक्पालों के बाहर उसी क्रम से 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दस मन्त्रों से दिक्पालों के आयुधों का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार से आवरण-पूजा करके धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन आदि से सम्पूजित करके अर्घ्य प्रदान करे।

अर्घ्य—जलपूर्ण ताम्रपात्र (गङ्गासागर अथवा लोटा) में रक्तगन्ध, रक्तपुष्प, रक्ताक्षत, रक्तफल डालकर घुटनों को पृथ्वी पर टेककर 'ॐ भूमिपुत्र महातेज स्वेदोद्भव पिनाकिनः' इत्यादि तीन मूलोक्त श्लोक मन्त्रों से अर्घ्य प्रदान करे। फिर अर्घ्य देकर पूर्वोक्त नामों से प्रणाम कर इक्कीस प्रदक्षिणा कर साष्टाङ्ग दण्डवत् करे।

ऋणमोचन—फिर खदिर (खैर की जलती हुई लकड़ी लेकर उससे अपने आगे भूमि पर तीन समान रेखाएँ (≡) बनाकर फिर उन्हें अपने बाँयें पैर से मिटा दे। उसके मन्त्र (ऋणमोचन मन्त्र) निम्नाङ्कित हैं—

दुःखदौर्भाग्यनाशाय पुत्रसन्तानहेतवे। कृतरेखात्रयं वामपादेनैनतत्प्रमार्ज्म्यहम्॥ १॥
ऋणदुःखविनाशाय मनोऽभीष्टार्थसिद्धये। मार्जयाम्यसिता रेखास्तिस्रो जन्मत्रयोद्भवाः॥ २॥

फिर पुष्पाञ्जलि (लाल फूलों से) लेकर प्रार्थना करनी चाहिये। प्रार्थना में दश मन्त्र (श्लोक) हैं, जो मूल में लिखे हैं, उनका भावार्थ निम्न इस प्रकार है—धरती के गर्भ से उत्पन्न विद्युत् तेज के समान प्रभा वाले शक्तिहस्त मङ्गल कुमार को मैं प्रणाम करता हूँ। हे ऋण हरने वाले, दुःख-दरिद्रता को नष्ट करने वाले! आपको नमस्कार है। आप चमकते हुए तथा सबका कल्याण करने वाले को मैं प्रणाम करता हूँ। देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, नाग जातियों के लोग जिसकी कृपा से सुखी रहते हैं, उस पृथ्वीपुत्र को नमस्कार है। जो वक्री होकर मनुष्यों को दुःख प्रदान करता है तथा पूजित होने पर सुख एवं सौभाग्य देता है, उस पृथ्वीपुत्र के लिये नमस्कार है। हे नाथ मङ्गल! आप मङ्गलप्रद, मेषवाहन, रुद्र के आत्मपुत्र हैं; आप प्रसन्न होकर मुझे पुत्र दें, धन तथा यश प्रदान करें। हे अङ्गारक महाभाग भक्तवत्सल! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। हे भगवन्! आप मेरे ऋणरूपी दुःख का उन्मूलन कर दें। ऋण, रोग, दरिद्रता तथा अपमृत्यु आदि जो भी कष्ट हैं; भय, क्लेश, मनस्ताप आदि सबको नष्ट करें। आप अति वक्र, दुराराध्य, भोगमुक्त तथा जितात्मा हैं। आप तुष्ट होकर साम्राज्य देते हैं तथा रुष्ट होकर तुरन्त साम्राज्य छीन लेते हैं। ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु आदि भी आप प्रसन्न होकर सुखदायक तथा अप्रसन्न होकर असुखप्रद होते हैं; फिर बेचारे मनुष्यों की तो बात ही क्या? मुझे पुत्र एवं धन प्रदान करें, मैं आपकी शरण में हूँ। मुझे ऋण, दुःख, दरिद्रता तथा शत्रुओं के भय से छुटकारा दिलायें।

ऐसी प्रार्थना कर पुष्पाञ्जलि दे। फिर ब्राह्मणों को पूजकर आचार्य को दक्षिणा देकर पूजा में निवेदित अन्न को खाकर एकभक्त व्रत रखे। इस प्रकार प्रति मङ्गलवार को एक वर्ष-पर्यन्त यह मङ्गलवार व्रत करना चाहिये। यह व्रतारम्भ की विधि है; अब व्रत-समापन विधि कही जा रही है।

कलशपूजन—व्रत की समाप्ति का एक वर्ष पूर्ण होने पर सर्वतोभद्रमण्डल की रचना करके उसपर यथाविधि ताम्रकलश स्थापित कर लें। उस कलश पर वरुण का आवाहन एवं पूजन करके उस पर स्वर्णमयी भौमप्रतिमा स्थापित कर प्राणप्रतिष्ठा करके षोडशोपचारों से पूजा करे। फिर ईशानकोण में तिकोने स्थण्डिल पर अग्नि को स्थापित करके पूर्णपात्र दानपर्यन्त की सब क्रियायें करके होम करे। आघाराज्य आहुतियाँ देकर 'ॐ

अग्निर्मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः' इत्यादि वैदिक मन्त्र से अथवा भौम गायत्री (ॐ अङ्गारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्) मन्त्र से १०८ आहुतियों से तिलहोम कर पूर्णपात्र दान, दिक्पालबलि आदि कराकर सपत्नीक यजमान का अभिषेक करे तथा वह भौम की सुवर्ण मूर्ति आदि आचार्य को दान कर दे। फिर पचास ब्राह्मणों को लाल गेहूँ के आटे से निर्मित गुड़ के पकवानों से भोजन कराकर तथा दक्षिणा देकर तृप्त करे। स्त्री-पुत्र-धन एवं सौभाग्य की कामना से ऐसा ही करना चाहिये। जैसा कि कहा भी गया है—

इस प्रकार से स्त्री मङ्गलव्रत को करे तो उसे भाग्यशाली पुत्र प्राप्त होते हैं। धनप्राप्ति एवं ऋणमुक्ति के लिये पुरुष को भी यह व्रत करना चाहिये। ब्राह्मण को 'अग्निर्मूर्धा०' इत्यादि वैदिक मन्त्र जपना चाहिये अथवा अङ्गारक गायत्री (भौमगायत्री=मङ्गलगायत्री) का जप करना सर्वाभीष्टप्रद होता है।

विमर्श—मनुष्य को सदैव रोग-ऋण तथा रिपु (शत्रु) से रहित रहना चाहिये। यदि आपने ऋण ले लिया और उसे चुकता न कर पाये तो उसके तनाव एवं दौड़-धूप से रोगी हो जायेंगे तथा आपकी दुर्बल स्थिति को समझकर आपके शत्रु भी प्रबल होकर आपको हानि पहुँचाने लगेंगे।

तन्त्रोक्तबृहस्पतिमन्त्रपुरश्चरणम्

मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'बृं बृहस्पतये नमः' इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः। अस्य बृहस्पतिमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। बृहस्पतिर्देवता। बृं बीजम्। नमः शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ बृहस्पतिदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बृं बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥' इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ ब्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ ब्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ब्रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ ब्रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ब्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ब्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

रत्नाष्टापदवस्त्रराशिममलं दक्षात्किरन्तं करादासीनं विपणौ करं निदधतं रत्नादिराशौ परम्।
पीतालेपनपुष्पवस्त्रमखिलालङ्कारसम्भूषितं विद्यासागरपारगं सुरगुरुं वन्दे सुवर्णप्रभम्॥

इति ध्यात्वा पीठे ॐ धर्माय नमः॥ १॥ ॐ ज्ञानाय नमः॥ २॥ ॐ वैराग्याय नमः॥ ३॥ ॐ ऐश्वर्याय नमः॥ ४॥ ॐ अधर्माय नमः॥ ५॥ ॐ अज्ञानाय नमः॥ ६॥ ॐ अवैराग्याय नमः॥ ७॥ ॐ अनैश्वर्य्याय नमः॥ ८॥ इति पीठदेवताः सम्पूजयेत् (अत्र पीठशक्त्यभावः)। ततो मूले मूर्तिं प्रकल्प्य (अथवा कलशोपरि सुवर्णमयीं प्रतिमां संस्थाप्य) आवाहनादिपीतगन्धपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणार्चनं कुर्यात्।

तद्यथा षट्कोणे आग्नेयादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च—ॐ ब्रां हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ ब्रीं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ ब्रूं शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ ब्रैं कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ ब्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ ब्रः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गपूजनम्।

तद्बहिर्भूपुरे पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिदशदिक्पालान्। तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च सम्पूज्य धूपादिनीराजनान्तपूजां कृत्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणमशीतिसहस्रजपः। तथा च—

जपित्वाशीतिसाहस्रं हुत्वान्नेन घृतेन वा। सिद्धे मनौ प्रकुर्वीत प्रयोगानिष्टसिद्धये॥
हरिद्राकुसुमैर्हुत्वा घृताक्तैर्दिवसत्रयम्। स विंशतिशतं मन्त्री वांसासि लभते मणीन्॥
शत्रुरोगादिपीडासु स्वजने कलहोद्भवे। जुहुयात्पिप्पलोत्थाभिः समिद्भिस्तन्निवृत्तये॥

इति बृहस्पतिमन्त्रविधानम्।

बृहस्पतियन्त्रम्
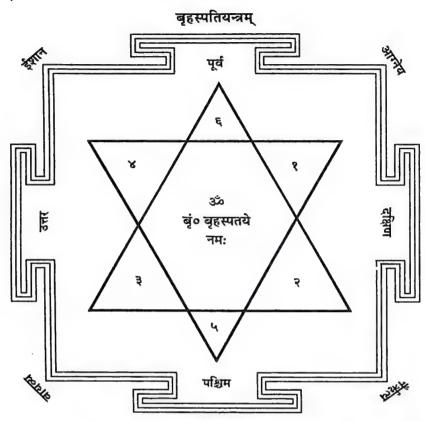
बृहस्पति के मन्त्र का अनुष्ठान—'बृं बृहस्पतये नमः' यह मूल मन्त्र है। इसके ब्रह्मा ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, बृहस्पति देवता, बृं बीज, नमः शक्ति तथा सर्वेष्ट-सिद्धिहेतु जप में इसका विनियोग होता है। इस प्रकार के भाव वाले मूलोक्त मन्त्र से इसके जप के लिये विनियोग करना चाहिये। तदनन्तर 'ॐ ब्रह्मर्षये नमः शिरसि' इत्यादि मूल में लिखित पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास सम्पन्न कर 'ॐ ब्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गुष्ठादि में करन्यास करना चाहिये। फिर 'ॐ ब्रां हृदयाय नमः, ॐ ब्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ब्रूं शिखायै वषट्, ॐ ब्रैं कवचाय हुम्, ॐ ब्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ब्रः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये।

तदनन्तर 'रत्नाष्टापदवस्त्रराशिममलं०' इत्यादि श्लोक से बृहस्पति का ध्यान कर बृहस्पतिपीठ पर मूलोक्त 'ॐ धर्माय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पीठदेवता का पूजन कर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करे अथवा कलश पर सुवर्णमयी बृहस्पति की प्रतिमा को स्थापित कर आवाहनादि पीत गन्ध पुष्पान्त उपचारों से पूजकर आवरणपूजा करे।

आवरणपूजा—प्रथम षट्कोण में यन्त्र में लिखे अङ्कों के अनुसार 'ॐ ब्रां हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्वादि दिशाओं में नाममन्त्रों से दशदिक्पाल तथा उनके आयुधों की पूजा करके धूपादि नीराजनान्त पूजा कर साष्टाङ्ग-प्रणाम कर जप करे। इसका पुरश्चरण अस्सी हजार जप से होता है। जैसा कि कहा भी है—अस्सी सहस्र का जप करके अन्न एवं घृत से हवन करके मन्त्र सिद्ध हो जाता है, जिससे अभीष्ट प्रयोग करना चाहिये। यदि हल्दी के फूलों से घृतसहित बीस सहस्र आहुति तीन दिन तक दी जय तो साधक को वस्त्र एवं मणियों की प्राप्ति होती है। पीपल की समिधाओं से हवन करने पर शत्रुपीड़ा तथा स्वजनों का कलह शान्त होता है।

तन्त्रोक्तशुक्रमन्त्रविधानम्

तत्रैव मन्त्रो यथा—'ॐ वस्त्रं मे देहि शुक्राय स्वाहा' इत्येकादशवर्णो मन्त्रः। अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। विराट् छन्दः। शुक्रो देवता। ॐ बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सर्वेष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ ब्रह्म ऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ विराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ शुक्रदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ वस्त्रं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ मे मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ देहि अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ शुक्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवं हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

श्वेताम्भोजनिषण्णगापणतटे श्वेताम्बरालेपनं नित्यं भक्तजनाय सम्प्रददतं वासोमणीन्हाटकम्।
वामेनैव करेण दक्षिणकरे व्याख्यानमुद्राङ्कितं शुक्रं दैत्यवरार्चितं स्मितमुखं वन्दे सिताङ्गप्रभम्॥

इति ध्यात्वा पूर्वोक्ते धर्मादियुते पीठे श्वेतगन्धाक्षतपुष्पान्तैरुपचारैः शुक्रं सम्पूज्य षट्कोणे कोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च—ॐ हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ वस्त्रं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ मे शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ देहि कवचय हुं॥ ४॥ ॐ शुक्राय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्॥ ६॥ इत्यङ्गानि सम्पूज्य ततो बाह्ये भूपुरे पूर्वादिषु इन्द्रादि-दिक्पालान् तद्बहिर्वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। ततो धूपादिनीराजनान्तपूजां कृत्वा जपं कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणमयुतजपः। तथा—

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः। सुगन्धैः श्वेतकुसुमैर्जुहुयाच्छुक्रवासरे॥
एकविंशतिवारं यो लभते सोंऽशुकं मणीन्।

इति शुक्रमन्त्रविधानं समाप्तम्।

शुक्रपूजनयन्त्रम्
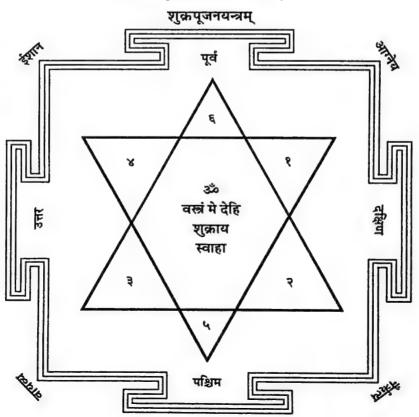
तन्त्रोक्त शुक्रमन्त्र विधान—'ॐ वस्त्रं मे देहि शुक्राय स्वाहा' यह मूल मन्त्र है। 'अस्य मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः -------------- जपे विनियोगः' इस मूलोक्त वाक्य से विनियोग करके 'ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर आगे लिखे 'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि पाँच मन्त्रों से पञ्चाङ्ग करन्यास करे। तदनन्तर 'ॐ हृदयाय नमः, ॐ वस्त्रं शिरसे स्वाहा, ॐ मे शिखायै वषट्, ॐ देहि कवचाय हुम्, ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि न्यास करे। तत्पश्चात् मूल में लिखित 'श्वेताम्भोज०' इत्यादि श्लोक के अनुसार ध्यान करना चाहिये। ध्यान करके शुक्रग्रह के पीठ पर श्वेत गन्ध अक्षत पुष्पादि उपचारों से पूजन कर शुक्र यन्त्र के षट्कोण में दिये १ से ६ तक अङ्कों वाले स्थानों में 'ॐ हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से पूजन करे। फिर बाह्य भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों तथा उनके आयुधों की पूजा भी उनके नाममन्त्रों से करे। तत्पश्चात् धूपादि नीराजनान्त पूजन करके जप प्रारम्भ करे।

पुरश्चरण—इसका पुरश्चरण एक अयुत (दस सहस्र = १०,०००) मन्त्रों का है। जैसा कि कहा गया है—अयुत मन्त्रों का जप करके उसका दशांश हवन (एक सहस्र) घ्नी, सुगन्धि, श्वेत पुष्प आदि से शुक्रवार के दिन करे। ऐसा इक्कीस शुक्रवारों तक करने पर साधक को वस्त्र तथा मणियों की प्राप्ति होती है।

विमर्श—इस ग्रन्थ में बुध का कोई विशेष अनुष्ठान नहीं दिया गया है, उसी प्रकार तान्त्रिक विधि से शनि का भी अनुष्ठान नहीं है; अतः आवश्यक होने से मन्त्रमहार्णव तथा व्रतराज से उक्त तान्त्रिक अनुष्ठान यहाँ दिये जा रहे हैं।

बुधशान्तिविधानम्

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रहस्यमेदुत्तमम्। येन लक्ष्मीः धृतिस्तुष्टिः पुष्टिः कान्तिश्च जायते॥
विशाखासु बुधं गुह्यं सप्तनक्तान्यथाचरेत्। बुधं हेममयं कृत्वा स्थाप्यं कांस्यस्य भाजने॥
शुक्लवस्त्रयुगच्छन्नं शुक्लमाल्यानुलेपनम्। गुडौदनोपहारन्तु ब्राह्मणाय निवेदयेत्॥
बुध त्वं बोधजननो बोधदः सर्वदा नृणाम्। तत्वावबोधं कुरु ते सोमपुत्र नमो नमः॥
होमं घृततिलैः कुर्याद्बुधनाम्ना च मन्त्रवित्। समिधोत्तरशतमष्टाविंशतिरेव च॥
बुधशान्तिरिति प्रोक्ता बुधवैकृतनाशनम्। बुधदोषेषु कर्त्तव्ये बुधशान्तिकपौष्टिके॥

इति बुधशान्तिविधानम्।

बुध दोष-शान्ति कथन—अब मैं एक रहस्य को कहता हूँ, जिससे लक्ष्मी, धृति, तुष्टि, पुष्टि तथा कान्ति की प्राप्ति होती है। विशाखा नक्षत्र जब बुधवार के दिन हो, तब उस दिन बुध की सुवर्णमूर्ति बनाकर उसे काँसे की थाली में रखकर श्वेत वस्त्र, माला आदि से अलंकृत कर पूजन करे तथा गुडौदन का उपहार ब्राह्मण को दे। इसके पूर्व निरन्तर सात बुधवार तक बुधवार व्रत (नक्त व्रत = रात्रि व्रत) के रूप में करे तथा पूजन करके प्रार्थना करें—'हे बुध! आप लोगों को ज्ञान देने वाले हो। हे सोमपुत्र! मुझे तत्त्वज्ञान प्रदान करो; आपको नमो नमः।' इस प्रार्थना के उपरान्त बुध के मन्त्र (ॐ द्रां द्रीं द्रौं सः बुधाय नमः) से घृत एवं तिल का होम एक सौ आठ अथवा अट्ठाईस आहुति से करे। मधु-सर्पि-दधि से हवन करे। यह बुध की शान्ति कही गई है, जो बुध की विकृतियों तथा बुद्धि की विकृतियों को दूर करने वाली है।

बुधस्तोत्रम्

मन्त्रमहार्णवे—

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटिः चतुर्भुजो देवदुःखापहर्त्ता।
धर्मस्य धृक् सोमसुतो सदा मे सिंहाधिरुढो वरदो बुधश्च॥
प्रियङ्गुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम्। सौम्यं सौम्यगुणोपेतं नमामि शशिनन्दनम्॥

सोमसूनुर्बुधश्चैव सौम्यः सौम्यगुणान्वितः। सदा शान्तः सदा क्षेमो नमामि शशिनन्दनम्॥
उत्पातरूपी जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युतिः। सूर्यप्रियकरो विद्वान् पीडां हरतु मे बुधः॥
शिरीषपुष्पसङ्काशः कपिशीलो युवा पुनः। सोमपुत्रो बुधश्चैव सदा शान्तिं प्रयच्छतु॥
श्यामः शिरालश्च कलाविधिज्ञः कौतूहली कोमलवाग्विलासी।
रजोऽधिको मध्यमरूपधृक् स्यात् आताम्रनेत्रो द्विजराजपुत्रः॥
अहो चन्द्रसुतः श्रीमान् मगधेषु समुद्भवन्। अत्रिगोत्रश्चतुर्बाहुः खड्गखेटकधारकः॥
गदाधरो नृसिंहस्थः स्वर्णनाभसमन्वितः। केतकीद्रुमपत्राभं इन्द्रविष्णुः प्रपूजितः॥
ज्ञेयो बुधः पण्डितश्च रोहिणेयश्च सोमजः। कुमारो राजपुत्रश्च सुसेव्यः शशिनन्दनः॥
गुरुपुत्रश्च तारेयो विबुधो बोधनस्तथा। सौम्यः सौम्यगुणोपेतो रत्नदानफलप्रदः॥
एतानि बुधनामानि प्रातःकाले पठेन्नरः। बुद्धिः विवृद्धितां याति शत्रुपीडा न जायते॥

इति बुधस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

बुधस्तोत्र—पीताम्बरधारी, पीत शरीर, पीत मुकुटधारी, चतुर्भुज, देवों के दुःख हरने वाले, धर्म को धारण करने वाले, सिंह पर सवार, चन्द्रमा के पुत्र बुध मुझे सदैव वरदायक हों। प्रियङ्गु के पुष्प के समान श्यामरूप बुध को, सौम्य, सौम्यगुणयुक्त चन्द्रपुत्र को नमस्कार करता हूँ। सोम के पुत्र बुध, सौम्य, सौम्यगुणान्वित, सदा शान्त, सदा क्षेम शशिनन्दन को नमस्कार करता हूँ। चन्द्र के पुत्र, जो कि संसार के लिये उत्पातरूपी हैं, महान् चमक वाले हैं। ऐसे विद्वान् सूर्य को प्रिय बुध मेरी पीड़ा का हरण करें। जो शिरीषपुष्प के समान वर्ण वाले, कपि के समान नटखट आचरण वाले युवा हैं, वे सोमपुत्र बुध मुझे सदैव शान्ति प्रदान करें। जो श्यामवर्ण, शिराल (शरीर पर नसें दिखती हैं), कलाविधियों के ज्ञाता, कौतूहलप्रिय, कोमल वाणी बोलने वाले, रजोगुण की अधिकता से युक्त, मध्यम कद वाले, ताम्रवर्ण नेत्रों वाले द्विज तथा राजपुत्र है। चन्द्रमा के पुत्र, श्रीमान् मगधों में उत्पन्न, अत्रि गोत्र वाले, चार भुज वाले, खड्ग तथा खेटक (ढाल) धारक, गदाधर, नृसिंहस्थ, स्वर्णनाभ-समन्वित, केतकी के पत्ते के समान कान्ति वाले, इन्द्र एवं विष्णु के द्वारा प्रपूजित, पण्डित, रौहिणेय, सोमज, कुमार, राजपुत्र, सुसेव्य, शशिनन्दन बुध, गुरुपुत्र, तारेय, विबुध, बोधन, सौम्य, सौम्यगुणोपेत, रत्नदानफलप्रद—ये बुध के नाम हैं; जो व्यक्ति इन्हें प्रातःकाल पढ़ता है, उसकी बुद्धि बढ़ जाती है तथा उसे बुधग्रह की पीड़ा नहीं होती है। (इसका पाठ उनके लिये उत्तम है, जिनका मन पढ़ने-लिखने में नहीं लगता है)।

बृहस्पतिस्तोत्रम् (१)

क्रौं-शक्रादिदेवैः परिपूजितोऽसि, त्वं जीवभूतो जगतो हिताय।
ददाति यो निर्मलशास्त्रबुद्धिं स वाक्पतिर्मे वितनोतु लक्ष्मीम्॥
पीताम्बरः पीतवपुः किरीटि चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः।
दधाति दण्डञ्च कमण्डलुञ्च तथाक्षसूत्रं वरदोऽस्तु मह्यम्॥
बृहस्पतिः सुराचार्यो दयावाञ्छुभलक्षणः। लोकत्रयगुरुः श्रीमान् सर्वज्ञः सर्वतो विभुः॥
सर्वेशः सर्वदा तुष्टः श्रेयस्कृत्सर्वपूजितः। अक्रोधनो मुनिश्रेष्ठो नीतिकर्त्ता महाबलः॥
विश्वात्मा विश्वकर्त्ता च विश्वयोनिरयोनिजः। भूर्भुवो धनदाता च भर्त्ता जीवो जगत्पतिः॥
पञ्चविंशति नामानि पुण्यानि शुभदानि च। नन्दगोपालपुत्राय भगवत्कीर्तितानि च॥
प्रातरुत्थाय यो नित्यं कीर्तयेत्तु समाहितः। विप्रस्तस्यापि भगवान् प्रीतः स च न शंशयः॥

बृहस्पतिस्तोत्र—हे बृहस्पते! आप इन्द्रादि देवताओं के द्वारा पूजित हो। आप जगत् के हित के लिये जीवभूत हैं। जो निर्मल शास्त्रबुद्धि प्रदान करते हैं, वे बृहस्पति मुझे लक्ष्मी प्रदान करें। जो पीताम्बर, पीत शरीर, मुकुटधारी, चतुर्भुज, देवों के गुरु तथा प्रशान्त हैं; जो दण्ड, कमण्डलु, अक्षसूत्रधारी हैं, वे मुझ वरप्रद हों। १. बृहस्पति, २. सुराचार्य, ३. दयावान्, ४. शुभलक्षण, ५. त्रिलोकगुरु, ६. श्रीमान्, ७. सर्वज्ञ, ८. सर्वतोविभु, ९. सर्वेश, १०. सर्वदातुष्ट, ११. श्रेयस्कृत्, १२. सर्वपूजित, १३. अक्रोधन, १४. मुनिश्रेष्ठ, १५. नीतिकर्त्ता, १६. महाबली, १७. विश्वात्मा, १८. विश्वकर्त्ता, १९. विश्वयोनि, २०. अयोनिज, २१. भूर्भुवः, २२. धनदाता, २३. भर्त्ता, २४. जीव तथा २५. जगत्पति—ये पच्चीस नाम (बृहस्पति के) हैं; ये पुण्यकारक तथा शुभदायक हैं। इनको नन्दगोपाल के पुत्र के लिये भगवान् ने बताया था। जो ब्राह्मण प्रातःकाल इन पच्चीस नामों का कीर्तन करता है, उससे बृहस्पति भगवान् प्रसन्न होते हैं; इसमें सन्देह नहीं है।

बृहस्पतिस्तोत्रम् (२)

देवानाञ्च ऋषीणाञ्च गुरुं काञ्चनसन्निभम्। बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम्॥
अमराणां बुद्धिदाता वाग्मीयः करुणाकरः। यावन्तो ये च मुनयः पुरुषाकारपीतभाः॥
बृहस्पतिः सुराचार्यो गीष्पतिर्धिषणो गुरुः। जीव आङ्गिरसो वाचस्पतिश्चित्रशिखण्डिजः॥
सकलसुरविनेता ब्रह्मतुल्यप्रभावस्त्रिदशपतिकरैर्यो घृष्टपादारविन्दः।
विमलमति विकासी सर्वमाङ्गल्यहेतुर्दिशतु मम विभूतिं वाक्पतिः सुप्रभावः॥
सर्वसंशयछेत्तारं वेत्तारं सर्वकर्मणाम्। परब्रह्ममयं नित्यं परमानन्दरूपिणम्॥
सर्वसिद्धिप्रदं देवं शरण्यं भक्तवत्सलम्। वरेण्यं वरदं शान्तं त्रिदशार्त्तिहरं परम्॥
लम्बकूर्चं सुवर्णाभं स्वर्णयज्ञोपवीतिनम्। पीतवस्त्रपरीधानं मार्तण्डतिलकान्वितम्॥
चन्दनागुरुकर्पूरैः सुगन्धैः शतपत्रकैः। सम्पूज्य ध्यायते यस्तु भक्त्या सुदृढया नरैः॥
धनं धान्यं जयं सौख्यं सौभाग्यं नृपमान्यता। भवन्ति सर्वदा तेषां त्वत्प्रसादात् सुरेश्वर॥
रोगाग्निसर्पचौराद्यास्तेषां न प्रभवन्ति हि। सुस्थानस्थोऽधिदेशे च ध्यानात्सर्वार्थसाधगः॥

बृहस्पतिस्तोत्र—देवों तथा ऋषियों के गुरु, कञ्चन के समान काया वाले, बुद्धिभूत, त्रिलोकेश बृहस्पति को नमस्कार करता हूँ। जो देवताओं के बुद्धिदाता, वाग्मी, करुणाकर, जितने भी मुनि हैं उन सबमें पुरुष आकार वाले तथा पीताभ हैं। बृहस्पति, सुराचार्य, गीष्पति, धिषण, गुरु, जीव, आङ्गिरस, वाचस्पति, चित्रशिखण्डिज। सम्पूर्ण देवताओं के मार्गदर्शक, ब्रह्माजी के तुल्य प्रभाव वाले, जिनके चरणों की इन्द्र सेवा करते हैं, बुद्धि को निर्मल तथा विकसित करने वाले, सभी माङ्गल्यों के हेतु वाक्पति अपने सुप्रभाव से मुझे विभूति प्रदान करे। मैं देवेन्द्रपूजित बृहस्पति गुरु को नमस्कार करता हूँ, जो कि सभी शास्त्रों के प्रवक्ता तथा सभी कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। सभी संशयों को दूर करने वाले, सभी कर्मों के ज्ञाता, परब्रह्ममय, नित्य परमानन्दस्वरूप। सभी सिद्धियों को देने वाले देव, शरण्य, भक्तवत्सल, वरेण्य, वरद, शान्त तथा देवताओं की पीड़ा को हरण करने में परम समर्थ, लम्बी दाढ़ी वाले, स्वर्णाभ, स्वर्णनिर्मित यज्ञोपवीत धारण करने वाले, पीत वस्त्र पहिनने वाले, सूर्य के तिलक से युक्त, चन्दन, अगर, कपूर, सुगन्ध, गुलाब पुष्प से जो मनुष्य सुदृढ़ भक्ति से बृहस्पति की पूजा तथा ध्यान करते हैं, उनको हे सुरेश्वर! धन, धान्य, जय, सौख्य, सौभाग्य तथा नृपमान्यता आदि तुम्हारी कृपा से सदैव प्राप्त होती रहती

है। उनको रोग, अग्नि (बिजली आदि भी), सर्प, चोर, डाकू, आतङ्कवादी आदि का भय नहीं होता है। पवित्र स्थान में तथा पवित्र देश में बृहस्पति का ध्यान एवं पूजा करना सर्वार्थसाधक होता है।

बृहस्पतिस्तोत्रम् (३)

नमः सुरेन्द्रवन्द्याय देवार्चाय च ते नमः। नमोस्त्वनन्तसामर्थ्यवेदसिद्धान्तपारग ॥
सदानन्द नमस्तेऽस्तु नमः पीडाहराय च। नमो वाचस्पते तुभ्यं नमस्ते पीतवाससे॥
नमोऽद्वितीयरूपाय लम्बकूर्चाय ते नमः। नमः प्रहृष्टनेत्राय विप्राणां पतये नमः॥
नमो भार्गवशिष्याय विपन्नहितकारक। नमस्ते सुरसैन्याय विपन्नत्राणहेतवे॥
विषमस्थस्तथा नृणां सर्वकष्टप्रणाशनम्। प्रत्यहं तु पठेद्यो वै तस्य कामफलप्रदम्॥

बृहस्पतिस्तोत्र—सुरेन्द्रवन्दित को नमस्कार है, देवार्चित को नमस्कार है। अनन्त सामर्थ्य वाले वेदसिद्धान्त के पार जाने वाले को नमस्कार है। हे सदानन्द, सदा पीड़ा हरने वाले! आपको सदा नमस्कार है। हे वाचस्पति पीतवस्त्रधारी! आपको नमस्कार है। अद्वितीय रूपवाले! आपको नमस्कार है। हे लम्बी दाढ़ी वाले! आपको नमस्कार है। हे प्रसन्न नेत्रों वाले! आपको नमस्कार है, हे विप्रों के पति आपको नमस्कार है। हे भार्गवशिष्य! आपको नमस्कार है, हे विपन्नों के हितकारी, विपन्न देवसेना के दुःख दूर करने वाले! आपको नमस्कार है। यह स्तोत्र विपत्तिग्रस्त मनुष्यों के सभी कष्टों का निवारण करने वाला है। जो नित्य इसका पाठ करता है, उसके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं।

शुक्रस्तोत्रम्

स्कान्दे—

नमस्ते भार्गवश्रेष्ठ देवदानवपूजित। वृष्टिरोधप्रकर्त्रे च वृष्टिकर्त्रे नमो नमः॥ १॥
देवयानीपितुस्तुभ्यं वेदवेदाङ्गपारग। परेण तपसः शुद्धः शङ्करो लोकशङ्करीम्॥ २॥
प्राप्तो विद्यां जीवनाख्यां तस्मै शुक्रात्मने नमः। नमस्तस्यै भगवते भृगुपुत्राय वेधसे॥ ३॥
तारामण्डलमध्यस्थस्वभासाभासिताम्बर । यस्योदये जगत्सर्वं मङ्गलार्हं भवेदिह॥ ४॥
अस्तं याते ह्यरिष्टं स्यात्तस्मै मङ्गलरूपिणे। त्रिपुरावासिनो दैत्यान् शिवबाणप्रपीडितान्॥ ५॥
विद्यया जीवयञ्छुक्र नमस्ते भृगुनन्दन। ययाति गुरवे तुभ्यं नमस्ते कविनन्दन॥ ६॥
बलिराज्यप्रदो जीवस्तस्मै जीवात्मने नमः। भार्गवाय नमस्तुभ्यं पूर्वगीर्वाणवन्दित॥ ७॥
जीवपुत्राय यो विद्यां प्रादात्तस्मै नमो नमः। नमः शुक्राय काव्याय भृगुपुत्राय धीमहि॥ ८॥
नमः कारणरूपाय नमस्ते कारणात्मने। स्तवराजमिमं पुण्यं भार्गवस्य महात्मनः॥ ९॥
यः पठेत् शृणुयाद्वापि लभते वाञ्छितं फलम्। पुत्रकामो लभेत्पुत्रं श्रीकामो लभेत् श्रियम्॥ १०॥
राज्यकामो लभेद्राज्यं स्त्रीकामो स्त्रियमुत्तमाम्। भृगुवारे प्रयत्नेन पठितव्यं समाहितैः॥ ११॥
अन्यवारे तु होरायां पूजयेद् भृगुनन्दनम्। रोगार्त्तो मुच्यते रोगात् भयार्तो मुच्यते भयात्॥ १२॥
यद्यद् प्रार्थयते वस्तु तत्तत् प्राप्नोति सर्वथा। सर्वपापविनिर्मुक्तो प्राप्नुयाच्छिवसन्निधौ॥ १३॥
ज्ञानविज्ञाननिपुणो बहुविद्यासमन्वितः। धनधान्यधरायुक्तो लोकपूज्यो च विश्रुतः॥ १४॥

इति शुक्रस्तवराजं सम्पूर्णम्।

शुक्रस्तव—हे देवदानवों से पूजित भार्गवश्रेष्ठ! आपको नमस्कार है। हे वृष्टि रोकने वाले तथा वृष्टि करने वाले! आपको नमस्कार है। हे देवयानी के वेदवेदाङ्गपारग तप से श्री शङ्कर को सन्तुष्ट कर लोकशङ्करी जीवनदायिनी सञ्जीवनी विद्या प्राप्त करने वाले शुक्र! आपको नमस्कार है। उन भृगुपुत्र को नमस्कार है। तारामण्डल के मध्य में अपनी द्युति से सम्पूर्ण आकाश को जगमगाने वाले, जिनके उदय से संसार में मङ्गलकार्य होने लगते हैं, जिनके अस्त होने पर मङ्गलकार्य करने पर अरिष्ट होता है, उन मङ्गलरूपी शुक्र को जिन्होंने शिव के बाणों से पीड़ित त्रिपुरावासी दैत्यों को अपनी विद्या से जीवित कर दिया, हे भृगुनन्दन! आपको नमस्कार है। हे ययाति के गुरु! आपको नमस्कार है। बलि को राज्य प्रदान कर जीवित रखने वाले जीवात्मा शुक्र को नमस्कार है। पूर्व देवों (दैत्यों) के द्वारा वन्दित तुम्हें नमस्कार है। जिन्होंने बृहस्पति के पुत्र (कच) को विद्या प्रदान की; अतः उनको नमो नमः। शुक्र, काव्य भृगुपुत्र का ध्यान करते हैं।

हे कारणरूप कारणात्मक! आपको नमस्कार है। जो महात्मा भार्गव (शुक्र) के इस स्तवराज को पढ़ता है या सुनता है, उसे वाञ्छित फल मिलता है। पुत्रकामी को पुत्र तथा लक्ष्मी चाहने वाले को लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। राज्य चाहने वाले को राज्य, स्त्री चाहने वाले को स्त्री प्राप्त होती है। इसे भृगु (शुक्रवार) को प्रयत्नपूर्वक पढ़ना चाहिये। अन्य वार में जब शुक्र का होरा हो तब इसका पाठ किया जा सकता है तथा शुक्र की पूजा उनके होरा में करनी चाहिये। इससे रोगपीड़ित रोग से मुक्त हो जाता है तथा भयार्त्त भय से मुक्त हो जाता है। इसके पाठ करने वाला जिस-जिस वस्तु को चाहता है, वह प्राप्त हो जाती है। वह सब पापों से मुक्त होकर शिवसायुज्य प्राप्त करता है। वह ज्ञान-विज्ञान में निपुण, बहुत विद्याओं का ज्ञाता, धन-धान्य-भूमियुक्त होकर समाज में पूजित तथा विख्यात होता है।

विमर्श—जिस वार को जो कार्य करना हो वह कार्य उसके होरा में भी किया जा सकता है। इसीलिये श्लोक १२ अन्य दिन में शुक्र के होरा में पूजा-पाठ करने को कहा है। आगे सातों वारों में प्रत्येक ढाई घटी पर सूर्योदय से एक घ्नण्टे तक किस अन्य वार को होरा होता है यह चक्र में प्रदर्शित है।

सातों वारों का कालहोराज्ञानचक्र

होरा घण्टा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
होरा घटी	२॥	५	७॥	१०	१२॥	१५	१७॥	२०	२२॥	२५	२७॥	३०	३२॥	३५	३७॥	४०	४२॥	४५	४७॥	५०	५२॥	५५	५७॥	६०
सूर्यवार	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.
चन्द्रवार	चं.	शं.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.
मंगलवार	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.
बुधवार	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.
गुरुवार	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.
शुक्रवार	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.
शनिवार	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.

सिद्धहोरा (क्षणवार) मुहूर्त्तज्ञानविधि—जिस दिन जिस समय की कालहोरा देखनी हो, ऊपर प्रदत्त कालहोरा ज्ञान-चक्र कोष्ठक सारिणी से कालहोरा समय ज्ञात कर ले। यथा रविवार की पहली होरा सूर्य की २॥

घटी अर्थात् एक घण्टा की, इसके बाद रविवार को ही दूसरी होरा शुक्र की ५ घटी तक, फिर इसी क्रमानुसार तीसरी ५ से ७॥ घटी तक बुध की होरा एवं अग्रिम ७॥ से १० घटी तक चन्द्र की अर्थात् प्रति १ घ्नण्टा वृद्धि से १ घ्नण्टे का समय प्रति १ काल होरा वार का बनता है। कोष्ठक में घटीमान तथा घण्टामान दोनों स्पष्ट किये गये हैं। इसी क्रम से प्रत्येक दैनिक वार में इष्टसमय की होरा वार काल विदित कर सकते हैं। फलित अन्वेषक आचार्यों ने दैनिक प्रमुख वार से अधिक प्रधानता होरा के (क्षणवार) को प्रदान की है। तथ्य यह भी है कि दैनिक वार तथा क्षणवार दोनों अनुकूल हों तो विशेष फलप्रदाता समय तथा आवश्यकता में वार दोष-विकार हो तो (क्षणवार) होराकाल के समय शुभ वार की काल होरा में कार्य सम्पन्न करना श्रेयस्कर होता है। यथा अनायास कोई विशेष कार्यवश रविवार को पश्चिम दिशा में यात्रा करनी है तो मुहूर्त्तनियामक से रविवार को 'दिशाशूल' यात्रा में होगा, परन्तु उस दिन भी रविवार को सोमवार का 'कालहोरा' में पश्चिम दिशा की यात्रा शुभ-सूचक अर्थात् अवरोधित वार होने पर उस दिन की इष्ट शुभ होरा में कार्य सम्पन्न कर सकते हैं।

शनि पीड़ा-निवारक मन्त्र—गाधिश्च कौशिकश्च पिप्पलादो महामुनिः। शनैश्चरकृता पीडा नाशयन्ति स्मृतास्त्रयः॥

वेदोक्तसूर्यादिनवग्रहमन्त्रप्रयोगः

आचम्य प्राणानायम्य (सङ्कल्पः) देशकालौ सङ्कीर्त्य 'श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम (यजमानस्य वा) जन्मराशेः सकासान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्टस्थानस्थितामुकग्रहपरिहारद्वारा तृतीयैकादशस्थानस्थितवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थमायुरारोग्यप्राप्त्यर्थं च अमुकग्रहस्य अमुकसङ्ख्यया जपं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य न्यासं कुर्यात्।

सूर्यादि नवग्रहों के वैदिक मन्त्रप्रयोग—सर्वप्रथम आचमन तथा प्राणायाम करके सङ्कल्प करे। सङ्कल्पहेतु प्रथम देश-काल का उच्चारण कर 'श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम (यजमानस्य वा) जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा, जन्मलग्नाद्वावर्ष लग्नाद्वा चतुर्थ-अष्टम-द्वादश आदि अनिष्टस्थानस्थित अमुकग्रहपरिहारद्वारा तृतीय-एकादश-स्थानस्थितिवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थं आयुरारोग्यप्राप्त्यर्थं च अमुकग्रहस्य अमुकसङ्ख्यया जपं करिष्ये' इस प्रकार से सङ्कल्प जिस ग्रह (सूर्य-चन्द्र-मङ्गल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि-राहु-केतु आदि) की शान्ति करनी हो, उसके नामोल्लेख-पूर्वक करना चाहिये। तदुपरान्त उस ग्रह के पूजनार्थ उसके न्यासादि करने चाहिये, जो कि अलग-अलग ग्रहों के लिये आगे दिये गये हैं।

विमर्श—इसके पूर्व में ग्रहों के तान्त्रिक अनुष्ठान दिये गये हैं, अब यहाँ से आगे नवग्रहों के वैदिक अनुष्ठान बताये गये हैं।

सूर्यमन्त्रप्रयोगः

तत्रादौ सूर्यमन्त्रन्यासादिप्रयोगः—आकृष्णेनेत्यस्य हिरण्यस्तूप ऋषिः। त्रिष्टुप्छन्दः। सविता देवता। रजसेति बीजम्। वर्त्तमान इति शक्तिः। सूर्यप्रीतये जपे विनियोगः। ॐ हिरण्यस्तूपऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सवितृदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ रजसा बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ वर्त्तमानशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ आकृष्णेनेत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ रजसेति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ वर्तमान इति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ निवेशयन्नमृतम्मर्त्यं चेत्यनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ हिरण्ययेन सविता रथेनेति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥

ॐ आदेवो भुवनानि पश्यन्निति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ आकृष्णेनेति हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ रजसेति शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वर्तमान इति शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ निवेशयन्नमृतम्मर्त्यं चेति कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ हिरण्ययेन सविता रथेनेति नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ आदेवो याति भुवनानि पश्यन्नित्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः। ॐ आकृष्णेनेति शिरसि॥ १॥ ॐ रजसेति ललाटे॥ २॥ ॐ वर्तमान इति मुखे॥ ३॥ ॐ निवेशयन्निति हृदये॥ ४॥ ॐ अमृतं चेति नाभौ॥ ५॥ ॐ मर्त्यं चेति कट्याम्॥ ६॥ ॐ हिरण्ययेनेत्यूर्वोः॥ ७॥ ॐ सवितेति जानुनोः॥ ८॥ ॐ रथेनेति जङ्घयोः॥ ९॥ ॐ आदेवो याति गुल्फयोः॥ १०॥ ॐ भुवनानीति पादयोः॥ ११॥ ॐ पश्यन्निति सर्वाङ्गेषु न्यसेत्॥ १२॥ इति मन्त्रन्यासः। एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

ॐ पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरङ्गवाहः।
दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्यात्। तत्र मन्त्रः—'ॐ आकृष्णेनरजसावर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च। हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयातिभुवनानिपश्यन्॥१॥' इति सूर्यमन्त्रः। अस्य जपसङ्ख्या सप्तसहस्राणि ७०००। जपान्ते अर्कसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्ज्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनं च कार्यम्। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ सूर्यदानद्रव्याणि—

माणिक्यगोधूमसवत्सधेनुः कौसुम्भवासो गुडहेमताम्रम्। आरक्तकं चन्दनमम्बुजं च वदन्ति दानं रविनन्दनाय॥

इति सूर्यमन्त्रपुरश्चरणम्॥ १॥

सूर्य के वैदिक मन्त्र का अनुष्ठान—सर्वप्रथम सूर्य के जप हेतु सङ्कल्प करके फिर 'आकृष्णेनेत्यस्य हिरण्यस्तूप ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। सविता देवता। रजसेति बीजं। वर्त्तमान इति शक्तिः। सूर्यप्रीतये जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग का जल छोड़े। फिर मूल में लिखे 'हिरण्यस्तूपऋषये नमः शिरसि' इत्यादि छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'आकृष्णेनेति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर मूलोक्त विधि से उन्हीं मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास करना चाहिये। तदनन्तर उससे आगे लिखे—'ॐ आकृष्णेनेति शिरसि' इत्यादि बारह मन्त्रों से शरीर के विभिन्न (निर्दिष्ट) शिर-मुख आदि अङ्गों में न्यास करना चाहिये। यह मन्त्रन्यास होता है। फिर न्यास करके मूलोक्त 'ॐ पद्मासनः पद्मकरो०' इत्यादि श्लोकमन्त्र से श्री सूर्य का इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—'पद्मासन पर बैठे, पद्म समान हाथों वाले, दो भुजाओं वाले, कमल के समान चमक वाले, सात घोड़ों की सवारी करने वाले, लोकगुरु दिवाकर, जो किं मुकुटधारी हैं, वे देव मुझपर प्रसन्न हों।' इस प्रकार से ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन करके फिर जप प्रारम्भ करना चाहिये। मूलमन्त्र है—ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।' इसका जप करे। जप के पूर्ण होने पर जप की संख्या का दशांश होम, होम का दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन तथा उसका दशांश ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ पूर्व की भाँति करनी चाहिये।

सूर्यमन्त्रहेतु	जपाङ्गों का अनुपात	जपादि की संख्या	
		सामान्य समय में	कलियुग में
१. जप	पूर्ण	७०००	२८०००
२. होम	दशांश	७००	२८००
३. तर्पण	शतांश	७०	२८०
४. मार्जन	सहस्रांश	७	२८
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	१	४

सूर्य के लिये दानवस्तुएँ—माणिक्य रत्न, लाल गेहूँ, सवत्सा गाय (लाल रङ्ग की), रेशमी वस्त्र, गुड़, सोना, ताँबा, लाल चन्दन, लाल कमल—ये दान की वस्तुएँ श्री सूर्य के नन्दन (प्रसन्नता) हेतु देनी चाहिये।

चन्द्रमन्त्रप्रयोगः

ॐ इमं देवा इति मन्त्रस्य गौतम ऋषिः। द्विपदाविराट् छन्दः। सोमो देवता। असपत्नमिति बीजम्। सोमप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ गौतमऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ द्विपदाविराट्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ सोमदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ असपत्नबीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ सोमप्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ इमं देवाऽअसपत्नꣳ सुवध्वमित्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥१॥ ॐ महतेक्षत्रायेति तर्जनीभ्यां नमः॥२॥ ॐ महतेज्ज्यैष्ठ्यायेति मध्यमाभ्यां नमः॥३॥ ॐ महते जानराज्ज्यायेन्द्रियायेत्यनामिकाभ्यां नमः॥४॥ ॐ इममुमुष्य्पुत्रममुष्यै इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥५॥ ॐ पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳ राजेति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥६॥ इति करन्यासः। ॐ इमन्देवाऽअसपत्नꣳसुवध्वमिति हृदयाय नमः॥१॥ ॐ महतेक्षत्रायेति शिरसे स्वाहा॥२॥ ॐ महतेज्ज्यैष्ठ्यायेति शिखायै वषट्॥३॥ ॐ महते जानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियायेति कवचाय हुम्॥४॥ ॐ इममुमुष्य्पुत्रममुष्यै इति नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ ॐ पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳराजा इत्यस्त्राय फट्॥६॥ इति हृदयादिन्यासः। ॐ इमं देवा इति शिरसि॥१॥ ॐ असपत्नमिति ललाटे॥२॥ ॐ सुवध्वमिति नासिकायाम्॥३॥ महतेक्षत्रायेति मुखे॥४॥ ॐ महतेज्ज्यैष्ठ्यायेति कण्ठे॥५॥ ॐ महतेजानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियायेति हृदये॥६॥ इममुमुष्येति नाभौ॥७॥ ॐ पुत्रममुष्यै इति कट्याम्॥८॥ ॐ पुत्रमस्यै इति जङ्घयोः॥९॥ ॐ विशऽएषवोमीराजासोमोस्माकंब्राह्मणानाꣳराजेति पादयोः॥१०॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

ॐ श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डकरो द्विबाहुः।
चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्यात्। तत्र मन्त्रः 'ॐ इमंदेवाऽअसपत्नꣳसुवध्वम्महतेक्षत्राय महतेज्यैष्ठ्यायमहते जानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियायइममुमुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यैविशऽएषवोमीराजासोमोस्माकं ब्राह्मणानाꣳराजा॥१॥ अस्य जपसङ्ख्या एकादशसहस्राणि ११०००। जपान्ते पलाशसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ दानद्रव्याणि—

सद्वंशपात्रस्थिततण्डुलांश्च कर्पूरमुक्ताफलशुभ्रवस्त्रम्। युगोपयुक्तं वृषभं च रौप्यं चन्द्राय दद्याद्घृतपूर्णकुम्भम्॥

इति चन्द्रमन्त्रप्रयोगः॥ २॥

वैदिक चन्द्रमन्त्र प्रयोग—मूल में लिखित 'ॐ इमं देवा इति मन्त्रस्य गौतम ऋषिः। द्विपदाविराट् छन्दः। सोम-देवता। असपत्न इति बीजम्। सोमप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करे। फिर उसके आगे लिखे 'ॐ गौतमऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास सम्पन्न करे। फिर मूलोक्त 'ॐ इमं देवा असपत्नं सुवध्वं' इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों द्वारा करन्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ इमं देवाऽअसपत्नं सुवध्वमिति हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। फिर 'ॐ इमं देवा शिरसि' इत्यादि दश मूलोक्त मन्त्रों से शरीर के निर्दिष्ट अङ्गों में मन्त्र करन्यास करना चाहिये। इस प्रकार न्यासविधि सम्पन्न करके फिर चन्द्रमा का ध्यान इस प्रकार करना चाहिये। 'ॐ श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डकरो द्विबाहुः। चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः॥' (श्वेत वस्त्रधारी, श्वेत

आभूषण धारण किये, श्वेत चमक वाले, हाथों में दण्ड लिये, दो भुजाओं वाले चन्द्र अमृतात्मा हैं, वे मुकुटधारी देव मुझपर प्रसन्न होकर कृपा करें)। इस प्रकार से ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचारों से चन्द्रमा का पूजन करके मन्त्रजप को आरम्भ करना चाहिये।

वैदिक चन्द्र मन्त्र—'ॐ इमं असपत्नं देवाऽअसपत्नं सुवध्वं महते क्षत्राय, महते ज्यैष्ठ्याय, महते जानराज्यायेन्द्रियाय इमममुष्य पुत्रममुष्यै विशऽएषवोमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानां राजा' इस मन्त्र का जप करना चाहिये। इसकी जप संख्या ११,००० (ग्यारह सहस्र) है। जप पूरा हो जाने पर पलाश की समिधाओं में तिल, पायस एवं घृत से मन्त्रजप की संख्या का दशांश होम करना चाहिये। अन्य सब क्रियायें पूर्व की भाँति सम्पन्न करनी चाहिये।

चन्द्र के वैदिक मन्त्र के पुरश्चरण में जपादि की संख्या			
आनुषङ्गिक कर्म	कर्मों में अनुपात	सामान्य पुरश्चरणसंख्या	कलियुग में पुरश्चरणसंख्या
१. जप	एक	११,०००	४४,०००
२. होम	दशांश	१,१००	४,४००
३. तर्पण	शतांश	११०	४४०
४. मार्जन	सहस्रांश	११	४४
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	दो	पाँच

दान के द्रव्य—नया बाँस का पात्र (टोकरी) लेकर उसमें श्वेत चावल, कपूर, मोती, शुभ्र वस्त्र, श्वेत बैल जो कि हल में चल सके, चाँदी तथा घृतपूर्ण कुम्भ का दान चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिये करना चाहिये।

भौममन्त्रप्रयोगः

ॐ अग्निर्मूर्द्धेति मन्त्रस्य विरूपाक्ष ऋषिः। गायत्री छन्दः। भौमो देवता। ककुद्बीजम्। भौमप्रीतये जपे विनियोगः। ॐ विरूपाक्षऋषये नमः शिरसि॥ १॥ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ भौमदेवतायै नमः हृदि॥ ३॥ ॐ ककुद्बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ भौमप्रीतये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अग्निर्मूर्द्धेत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ दिवः ककुदिति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ पतिः पृथिव्याऽअयमिति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ अपामित्यनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ रेताꣳसीति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ जिन्वतीति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ अग्निर्मूर्द्धेति हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ दिवः ककुदिति शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ पतिः पृथिव्याऽयमिति शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ अपां कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ रेताꣳसीति नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ जिन्वतीत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादि न्यासः। ॐ अग्निरिति शिरसि॥ १॥ ॐ मूर्धा ललाटे॥ २॥ ॐ दिवो मुखे॥ ३॥ ॐ ककुदिति हृदये॥ ४॥ ॐ पतिर्नाभौ॥ ५॥ पृथिव्याः कट्याम्॥ ६॥ ॐ अयमूर्वोः॥ ७॥ ॐ अपां जानुनोः॥ ८॥ ॐ रेताꣳसि गुल्फयोः॥ ९॥ ॐ जिन्वति पादयोः॥ १०॥ इति न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

ॐ रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगतो गदाभृत्।
धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्वरदः प्रशान्तः॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्यात्। तत्र मन्त्रः—ॐ अग्निर्मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्। अपाꣳरेताꣳसिजिन्वति॥ इति मन्त्रः। भौमे दशसहस्राणीति जपसंख्या १००००। जपान्ते खदिरसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ दानद्रव्याणि—

प्रवालगोधूममसूरिकाश्च वृषोरुणाश्चापि गुडः सुवर्णम्। आरक्तवस्त्रं करवीरपुष्पं ताम्रं च भौमाय वदन्ति दानम्॥

इति भौममन्त्रप्रयोगः॥ ३॥

भौम मन्त्र (वैदिक) **की प्रयोगविधि**—'ॐ अग्निर्मूर्द्धेति मन्त्रस्य विरूपाक्ष ऋषिः। गायत्री छन्दः। भौमो देवता। ककुद्वीजम्। भौमप्रीतये जपे विनियोगः' इस मन्त्र को पढ़कर विनियोग का जल छोड़ दे। फिर मूल में लिखित 'ॐ विरूपाक्षऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। तदनन्तर 'ॐ अग्निमूर्द्धेति हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तदुपरान्त मन्त्रन्यास करना चाहिये।

मन्त्रन्यास—मूल में लिखे 'ॐ अग्निरिति शिरसि, ॐ मूर्धा इति ललाटे' इत्यादि दस मन्त्रों के द्वारा उनमें निर्दिष्ट विभिन्न शारीरिक अङ्गों में मन्त्रन्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगतो गदाभृत्। धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्वरदः प्रशान्तः॥' इस श्लोकमन्त्र के अनुसार मङ्गल देवता का ध्यान करना चाहिये। इस मन्त्र का भावार्थ इस प्रकार है—'लाल वस्त्रधारी, लाल शरीर वाले, मुकुटधारी, चार भुजा वाले, मेष की सवारी पर बैठे हुए, गदा लिये हुए, पृथ्वी के पुत्र मङ्गल, शक्तिधारण किये, शूलधारण किये मेरे लिये सदैव वरदायक तथा प्रशान्त हों।' इस प्रकार की भावना के साथ ध्यान करके मानसिक उपचारों द्वारा मङ्गल की पूजा सम्पन्न करके जप आरम्भ करना चाहिये।

जप-हेतु भौम का वैदिक मन्त्र—'ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्। अपाᳬरेताᳬसिजिन्वति।' इस मन्त्र का जप शुद्ध उच्चारण के साथ करना चाहिये। इसका पुरश्चरण दस सहस्र जप से होता है। जब जप की संख्या पूरी हो जाय, तब फिर जपसंख्या का दशांश ($\frac{१}{१०}$) खैर की समिधाओं, काले तिल, पायस तथा घृत से हवन करना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ (सङ्कल्प, हवन के पश्चात् तर्पण, मार्जन, ब्राह्मणभोजनादि) पूर्व की भाँति करनी चाहिये।

मंगल के अनुष्ठान हेतु वैदिक मन्त्र के पुरश्चरण में जपादि की संख्या				
पुरश्चरण के अङ्ग	अङ्गों का पारस्परिक अनुपात	जपादि की सामान्य संख्या	जपादि की कलियुग में संख्या	दान की वस्तुएँ
१. जप	एक	१०,०००	४०,०००	प्रवाल, गोधूम,
२. होम	दशांश	१,०००	४,०००	मसूर, रक्त वस्त्र,
३. तर्पण	शतांश	११०	४००	रक्त वृषभ, गुड़,
४. मार्जन	सहस्रांश	११	४०	सुवर्ण तथा
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	१	४	ताम्र धातु

भौम के लिये दान करने योग्य पदार्थ—प्रवाल (मूंगा), गोधूम (लाल गेहूँ), मसूर, लाल रङ्ग का हल जोतने के योग्य बैल, गुड़, सुवर्ण धातु, लाल वस्त्र, लाल कनेर के फूल, ताम्र यह भौम के लिये दान कहा गया है। (कलियुग में चौगुना जप आदि करना चाहिये; ऐसा मनीषियों का कथन है)।

विशेष—मङ्गल भ्रातृकारक है तथा शस्त्रधारी है; अतः अपने सहोदरों, सैनिकों, रक्षी, आरक्षी आदि से अनुकूल एवं उचित व्यवहार करते रहने से मङ्गल प्रसन्न रहता है।

बुधमन्त्रप्रयोगः

ॐ उद्बुध्यस्वेति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः। बृहतीछन्दः। बुधो देवता। त्वमिष्टापूर्तेसमिति बीजम्। बुधप्रीतये जपे विनियोगः। ॐ परमेष्ठीऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ बृहतीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ बुधदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ त्वमिष्टापूर्तेसमिति बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ बुधप्रीतये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ उद्बुध्यस्वाग्नेप्रतिजागृहि अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ त्वमिष्टापूर्तेसं तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ सृजेथामयञ्च मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ विश्वेदेवा कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ यजमानश्चसीदत करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ उद्बुध्यस्वाग्नेप्रतिजागृहि हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ त्वमिष्टापूर्तेसं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ सृजेथामयं च शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ विश्वेदेवा नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ यजमानश्चसीदत अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः। ॐ उद्बुध्यस्व शिरसि॥ १॥ ॐ अग्नेप्रति ललाटे॥ २॥ ॐ जागृहित्वं मुखे॥ ३॥ ॐ इष्टापूर्ते सं हृदये॥ ४॥

ॐ सृजेथामयं च नाभौ ॥ ५ ॥ ॐ अस्मिन्त्सधस्थे कट्याम् ॥ ६ ॥ ॐ अध्युत्तरस्मिन्नूर्वो ॥ ७ ॥ ॐ विश्वदेवा जानुनोः ॥ ८ ॥ ॐ यजमानश्च पादयोः ॥ ९ ॥ ॐ सीदत सर्वाङ्गे ॥ १० ॥ इति न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेत्—

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च हारी।
चर्मासिधृक् सोमसुतः सदा मे सिंहाधिरूढो वरदो बुधश्च॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्यात्। तत्र मन्त्रः—ॐ उद्बुध्यस्वाग्नेप्रति जागृहित्वमिष्टापूर्तेसर्ठ० सृजेथामयञ्च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत॥ १॥ इति मन्त्रः। (बुधे चाष्टसहस्रकमिति जपसंख्या ८०००)। जपान्ते अपामार्गसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ दानद्रव्याणि—

चैलं च नीलं कलधौतकांस्यं मुद्गाज्यगारुत्मकसर्वपुण्यम्।
दासी च दन्तो द्विरदस्य नूनं वदन्ति दानं विधुनन्दनाय॥

इति बुधमन्त्रप्रयोगः॥ ४॥

बुध के वैदिक मन्त्र का अनुष्ठान—सङ्कल्प एवं गणपति-पूजन आदि करने के उपरान्त विनियोग करे। 'उद्बुध्यस्वेति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः। बृहती छन्दः। बुधो देवता। त्वमिष्टापूर्ते इति बीजम्। बुधप्रीतये विनियोगः' इस मन्त्र को पढ़कर विनियोग को जल छोड़े। तदनन्तर 'ॐ परमेष्ठीऋषये नमः शिरसि, ॐ बृहती छन्दसे नमः मुखे, ॐ बुधदेवतायै नमः हृदि, ॐ त्वमिष्टापूर्ते बीजाय नमः गुह्ये, ॐ बुधप्रीतये विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे' इन पाँच मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मूलोक्त मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास करे।

फिर 'ॐ उद्बुध्यस्व शिरसि, ॐ अग्नेप्रति ललाटे, ॐ जागृहित्वं मुखे, ॐ इष्टापूर्ते सं हृदये, ॐ सृजेथामयं च नाभौ, ॐ अस्मिन् सधस्ते, ॐ अध्युत्तरस्मिन् ऊर्वो, ॐ विश्वेदेवा जानुनोः, ॐ यजमानश्च पादयोः, ॐ सीदति सर्वाङ्गे' इन दश मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में न्यास करना चाहिये। इस प्रकार इन चारो प्रकार के न्यासों के सम्पन्न कर लेने से उपरान्त ध्यान करना चाहिये।

ध्यानमन्त्र है—'पीताम्बरो पीतवपुः'; जिसका भावार्थ इस प्रकार है—'पीताम्बरधारी, पीत शरीर वाला, मुकुटधारी, चतुर्भुजा, दण्डधारी तथा हार धारण किये, छाल तथा तलवार लिये बुध, जो कि सिंह पर बैठे हैं, सदैव मेरे लिये वरदायक रहें।' ऐसा ध्यान करके मानसिक उपचारों से पूजन कर फिर 'ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते संसृजेथामयञ्च अस्मिन् राधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत' इस मन्त्र का आठ सहस्र जप करना चाहिये।

जप का दशांश अपामार्ग (ओङ्गा) की समिधा से तिल-पायस-घृत का होम करना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ पूर्व की भाँति करनी चाहिये।

बुध के वैदिक मन्त्रानुष्ठान में जपादि की संख्या

पुरश्चरण के अङ्ग	परस्पर अनुपात	सामान्य समय में संख्या	कलियुग में संख्या	दान के द्रव्य
१. जप	एक	८,०००	३२,०००	नील वस्त्र, स्वर्ण,
२. होम	दशांश	८००	३२००	चाँदी, काँसा, मूँग,
३. तर्पण	शतांश	८०	३२०	घी, पन्ना, दासी,
४. मार्जन	सहस्रांश	८	३२	हाथीदाँत
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	१	३	आदि

दान के पदार्थ—नील वस्त्र, स्वर्ण-रजत, काँसा, घी, पन्ना इत्यादि का दान पुण्यकारी होता है। दासी, दास तथा हाथीदाँत का दान करने से भी बुध प्रसन्न होते हैं।

विशेष—ज्योतिषियों, गणितज्ञों, लेखकों, पत्रकारों आदि से सद्व्यवहार बनाये रखने से बुध प्रसन्न रहते हैं।

बृहस्पतिमन्त्रप्रयोगः

ॐ बृहस्पते इति मन्त्रस्य गृत्समद ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। बृहस्पतिर्देवता। बृहस्पतिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ गृत्समदऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ बृहस्पतिदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ बृहस्पतेऽअति यदर्य्यो इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ अर्हाद्युमदिति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ विभाति क्रतुमदिति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ जनेषु अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ द्रविणं धेहि चित्रमिति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ बृहस्पतेऽ-अतियदर्य्यो हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ अर्हाद्युमदिति शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ विभाति क्रतुमदिति शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ जनेषु कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ द्रविणंधेहिचित्रमित्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः। ॐ बृहस्पते इति शिरसि॥ १॥ ॐ अतियदर्यो ललाटे॥ २॥ ॐ अर्हाद्युमन्मुखे॥ ३॥ ॐ विभाति क्रतुमज्जनेषु नाभौ॥ ४॥ ॐ यद्दीयत्कट्याम्॥ ५॥ ॐ शवसऽऋतप्रजा ऊर्वोः॥ ६॥ ॐ ततदस्मासुद्रविणं जानुनोः॥ ७॥ ॐ धेहि चित्रं पादयोः॥ ८॥ इति मन्त्रन्यासः। एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः।
दधाति दण्डं च कमण्डलुं च तथाक्षसूत्रं वरदोऽस्तु मह्यम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्यात्। ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्योऽअर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासुद्रविणंधेहिचित्रम्॥५॥ इति बृहस्पतिमन्त्रः। 'एकोनविंशतिर्जीवे सहस्राणि १९००० विदुर्बुधाः' इति जपसङ्ख्या। जपान्ते अश्वत्थसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ दानद्रव्याणि—

शर्करा च रजनी तुरङ्गमः पीतधान्यमपि पीतमम्बरम्। पुष्पराजलवणे च काञ्चनं प्रीतये सुरगुरोः प्रदीयताम्॥

इति गुरुमन्त्रजपप्रयोगः॥ ५॥

बृहस्पति वैदिक मन्त्र-प्रयोग—सङ्कल्पादि पूर्व कर्म करके फिर 'ॐ बृहस्पते इति मन्त्रस्य गृत्समद ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। बृहस्पति देवता। बृहस्पति प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र का उच्चारण कर विनियोग के लिये जल छोड़े। फिर मूलोक्त 'ॐ गृत्समदऋषये नमः शिरसि' इत्यादि तीन मन्त्रों से शिर, गुह्य तथा हृदय में ऋष्यादि न्यास करे। फिर 'ॐ बृहस्पति अतियदर्यो, इत्यङ्गुष्ठाभ्याम नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गूठों, तर्जनियों, मध्यमाओं, कनिष्ठिकाओं तथा करतलपृष्ठों में करन्यास करना चाहिये। फिर उसके आगे लिखे 'ॐ बृहस्पतये अति यदर्यो हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अस्त्राय फट् पर्यन्त हृदयादि षडङ्गन्यास सम्पन्न करे। तदनन्तर मूल में लिखे 'ॐ बृहस्पतये इति शिरसि' इत्यादि आठ मन्त्रों के द्वारा शिर, ललाट, मुख आदि आठ अङ्गों में मन्त्र का न्यास करना चाहिये। न्यासोपरान्त ध्यान करना चाहिये।

'पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी' इत्यादि श्लोक से बृहस्पति देवता

गुरु के वैदिक मन्त्रानुष्ठान में प्रयुक्त जपादि की संख्या

पुरश्चरण के अङ्ग	पारस्परिक अनुपात	सामान्य संख्या	कलियुग में फलप्रद संख्या	दान के द्रव्य
१. जप	एक	१९,०००	७६,०००	शक्कर, हल्दी, पीत-
२. होम	दशांश	१९००	७६००	वाहन, पीला अनाज
३. तर्पण	शतांश	१९०	७६०	(चने की दाल),-
४. मार्जन	सहस्रांश	१९	७६	पीला कपड़ा, पुष्पराज,
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	२	८	नमक, सोना आदि

का ध्यान इस प्रकार करे। 'जो पीत वस्त्रधारी, पीत वर्ण के शरीर वाले, मुकुटधारी, चतुर्भुज, दण्ड-कमण्डल तथा अक्षसूत्र (रुद्राक्षादि की माला) धारण किये हैं, वे प्रशान्त देवगुरु मेरे ऊपर कृपा करे।' इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचारों से पूजा करके जप प्रारम्भ करना चाहिये। जपनीय मन्त्र है—'ॐ बृहस्पतेऽअति यदर्यो अर्हाद्युमद् विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छ्वसऽऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।' यह वैदिक मन्त्र है। इसका १९००० (उन्नीस सहस्र) जप तथा जपसमाप्ति पर उसका दशांश पीपल वृक्ष की समिधा, तिल, पायस तथा घृत से हवन करना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ पूर्ववत् करनी चाहिये।

दानद्रव्य—शक्कर, हल्दी, पीला घोड़ा (या पीले दुपहिया वाहन), पीतधान्य, पीतवस्त्र, पुखराज, नमक, सुवर्ण इन वस्तुओं को बृहस्पति की प्रसन्नता के लिये दान करना चाहिये।

विशेष—पिता-चाचा, ताऊ, पितामह, नाना, वृद्धज्ञानीजन, साधु-सन्तों की सेवा से भी बृहस्पति अनुकूल रहते हैं।

शुक्रमन्त्रजपप्रयोगः

ॐ अन्नात्परिस्रुत इति मन्त्रस्य पराशर ऋषिः। शक्करी छन्दः। शुक्रो देवता। रसं ब्रह्मणा इति बीजम्। शुक्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ पराशरऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ शक्करीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ शुक्रदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ रसं ब्रह्मणा इति बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ अन्नात्परिस्रुत इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् इति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ क्षत्रम्पय इति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सोमं प्रजापतिरित्यनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ ऋतेनसत्यमिन्द्रियंव्विपानर्ठ०शुक्रमन्धसः इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ अन्नात्परिस्रुतो हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ रसम्ब्रह्मणाव्यपिबत् शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ क्षत्रम्पयः शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ सोमम्प्रजापतिरिति कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ ऋतेन-सत्यमिन्द्रियंव्विपानर्ठ०शुक्रमन्धसो नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु इत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः। ॐ अन्नात्परिस्रुत इति शिरसि॥ १॥ ॐ रसंब्रह्मणा ललाटे॥ २॥ ॐ व्यपिबत्क्षत्रं मुखे॥ ३॥ ॐ पयः सोमं हृदये॥ ४॥ ॐ प्रजापतिर्नाभौ॥ ५॥ ॐ ऋतेनसत्यं कट्याम्॥ ६॥ ॐ इन्द्रियंविपानम् गुदे॥ ७॥ ॐ शुक्रं वृषणयोः॥ ८॥ ॐ अन्धस ऊर्वोः॥ ९॥ ॐ इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयो जानुनोः॥ १०॥ ॐ अमृतं पादयोः॥ ११॥ ॐ मधु सर्वशरीरे च॥ १२॥ न्यसेत्। इति मन्त्रन्यासः। एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः।
तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुं च दण्डं च बिभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्। तत्र मन्त्रः—ॐ अन्नात्परिस्रुतोरसं ब्रह्मणाव्यपिबत् क्षत्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः। ऋतेनसत्यमिन्द्रियंविपानर्ठ० शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु॥ १॥ शुक्रे एकादशैव तु इति जपसंख्या ११०००॥

अथ दानद्रव्याणि—

चित्राम्बरं शुभ्रतुरङ्गमश्च धेनुश्च वज्रं रजतं सुवर्णम्। सुतण्डुलानुत्तमगन्धयुक्तान् वदन्ति दानं भृगुनन्दनाय॥

इति शुक्रमन्त्रजपप्रयोगः॥ ६॥

शुक्र के वैदिक मन्त्र के प्रयोग की विधि—सर्वप्रथम गणपति-पूजन, कलश-पूजन, स्वस्तिवाचन, सङ्कल्पादि पूर्वकर्म सम्पन्न करे। फिर 'ॐ अन्नात्परिस्रुत इति मन्त्रस्य पराशर ऋषिः। शक्करी छन्दः। शुक्रो देवता।

रसंब्रह्मणा इति बीजम्। शुक्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः' कहकर विनियोग करे। फिर मूलोक्त 'ॐ पराशर ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि चार मन्त्रों से क्रमशः शिर, मुख, हृदय तथा गुह्य में ऋष्यादि न्यास करे। तदनन्तर उसके आगे लिखे 'ॐ अन्नात्परिस्रुत इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से अङ्गूठे, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा अस्त्राय फट् पर्यन्त करन्यास सम्पन्न करे। तदुपरान्त मूलोक्त 'ॐ अन्नात्परिस्रुत इति शिरसि' इत्यादि बारह मन्त्रों से निज शरीर में मन्त्रन्यास करना चाहिये। फिर न्यासोपरान्त ध्यान करना चाहिये।

शुक्र ग्रह के वैदिक मन्त्र पुरश्चरण में प्रयुक्त जपादि की संख्या

पुरश्चरण के अङ्ग	पारस्परिक अनुपात	सामान्य संख्या	कलियुग में संख्या	दान की वस्तुएँ
१. जप	एक	११,०००	४४,०००	श्वेत वाहन, छींटदार
२. होम	दशांश	११००	४४००	कपड़ा, हीरा, चाँदी,
३. तर्पण	शतांश	११०	४४०	सोना, इत्र, सफेद
४. मार्जन	सहस्रांश	११	४४	गाय, श्वेत चावल,
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	२	५	श्वेत शर्करा आदि

'श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः। तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुञ्च दण्डं च विभ्रद् वरदोऽस्तु मह्यम्॥' इस मन्त्र के अनुसार शुक्र का ध्यान करे (भावार्थ—श्वेताम्बरधारी, श्वेत शरीर वाले, मुकुटधारी, चतुर्भुज, माला, कमण्डलु तथा दण्डधारण किये प्रशान्त दैत्यगुरु (शुक्र) मेरा कल्याण करे)। इस प्रकार ध्यानोपरान्त मानसोपचारों से पूजन करके 'ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् क्षत्रम्पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतं मधु' इस मन्त्र का जप ११००० (ग्यारह सहस्र) करे। फिर उसका दशांश हवन पायस-शर्करा-तिल तण्डुल, यव, घृत के साथ गूलर की समिधा से करे।

दानद्रव्य—छींटदार कपड़े, श्वेत वाहन, श्वेत धेनु, हीरा, चाँदी, सोना, श्वेत चावल, उत्तम गन्ध (इत्र)—ये शुक्र की प्रसन्नताहेतु दानयोग्य वस्तुएँ हैं। (स्त्रियों का सम्मान करने से शुक्र प्रसन्न रहता है)।

शनैश्चरमन्त्रजपप्रयोगः

ॐ शन्नोदेवीरिति मन्त्रस्य दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः। गायत्री छन्दः। शनि देवता। आपो बीजम्। वर्तमान इति शक्तिः। शनैश्चरप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ दध्यङ्ङथर्वणऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ शनैश्चरदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ आपोबीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ वर्त्तमानशक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ शन्नोदेवीरित्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ अभिष्टये तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ आपोभवन्तु मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ पीतये अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ शंय्योरिति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ अभिस्रवन्तुनः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ शन्नोदेवीरिति हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ अभिष्टये शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ आपो भवन्तु शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ पीतये कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ शंय्योरिति नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ अभिस्रवन्तुनः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः। ॐ शन्न इति शिरसि॥ १॥ ॐ देवीरिति ललाटे॥ २॥ ॐ अभिष्टये मुखे॥ ३॥ ॐ आपो हृदये॥ ४॥ ॐ भवन्तु नाभौ॥ ५॥ ॐ पीतये कट्याम्॥ ६॥ ॐ शंय्योरूर्वोः॥ ७॥ ॐ अभिस्रवन्तु जानुनोः॥ ८॥ ॐ नः पादयोः॥ ९॥ इति मन्त्रन्यासः। एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

नीलद्युतिः शूलधरः किरीटी गजस्थितस्त्रासकरो धनुष्मान्।
चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तः सदास्तु मह्यं वरदो महात्मा॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्। तत्र मन्त्रः—'ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तुनः॥ १॥' त्रयोविंशतिर्मन्दे चेति जपसङ्ख्या २३०००। जपान्ते शमीसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ दानद्रव्याणि—

माषांश्च तैलं विमलेन्द्रनीलं तिलाः कुलित्था महिषी च लोहम्। कृष्णा च धेनुः प्रवदन्ति नूनं दुष्टाय दानं रविनन्दनाय॥

इति शनैश्चरमन्त्रप्रयोगः॥ ७॥

शनैश्चर वैदिक मन्त्र-प्रयोग—सर्वप्रथम सङ्कल्प तथा पूजनादि करके 'ॐ शन्नोदेवीरिति मन्त्रस्य दध्यङ्ङथर्वण ऋषिः। गायत्री छन्दः। शनिदेवता। आपो बीजम्। वर्त्तमान इति शक्तिः। शनैश्चरप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ दध्यङ्ङथर्वण ऋषये नमः शिरसि, ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे, शनैश्चर देवतायै नमः हृदि, ॐ आपो बीजाय नमः गुह्ये, ॐ वर्त्तमान शक्तये नमः पादयोः' इन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'ॐ शन्नो देवीरित्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर मूलपाठ में लिखित 'ॐ शन्नोदेवी इति हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों द्वारा हृदयादि षडङ्गन्यास करे। तत्पश्चात् फिर मूल में लिखित 'ॐ शन्नो इति शिरसि' इत्यादि ९ मन्त्रों से अङ्गों में मन्त्रन्यास करे। इस प्रकार न्यासों को सम्पन्न करके मूल में लिखित 'नीलद्युतिः शूलधरः किरीटी गजस्थितस्त्रासकरो धनुष्मान्। चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तः सदास्तु मह्यं वरदो महात्मा॥' इस मन्त्र से ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—'नीली चमक वाला, शूलधर (बर्छी हाथ में लिये), मुकुटधारी, हाथी पर बैठकर त्रास देने वाला, धनुर्धारी, चतुर्भुज, सूर्य के पुत्र शनि महात्मा मेरे लिये सदैव प्रशान्त तथा वरदायक रहें।' इस प्रकार से शनि का ध्यान कर मानसिक उपचारों से पूजा करके वैदिक शनिमन्त्र का जप करना चाहिये। मन्त्र है—'ॐ शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभि-स्त्रवन्तुनः॥' इसका जप करना चाहिये। इसका पुरश्चरण २३००० (तेईस सहस्र) मन्त्रजप से होता है। जप के पूर्ण होने पर उसकी संख्या का दशांश हवन शमी वृक्ष की समिधा, तिल, पायस, घृत आदि से करना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ पूर्ववत् करनी चाहिये।

दानद्रव्य—उड़द, तैल, नीलम, काले तिल, कुलथी, भैंस, लोहा, काली गाय शनि के लिये प्रशस्त दान कहा गया है।

विशेष—विकलाङ्ग, दास एवं श्रमिक वर्ग को प्रसन्न रखने से शनि भी प्रसन्न रहता है।

शनि के वैदिक मन्त्र पुरश्चरण में प्रयुक्त जपादि की संख्या

पुरश्चरण के अङ्ग	पारस्परिक अनुपात	सामान्य संख्या	कलियुग में संख्या	दान की वस्तुएँ
१. जप	एक	२३,०००	९२,०००	काले उड़द, तिलतैल,
२. होम	दशांश	२३००	९२००	तिल, नीलम, कुलथी,
३. तर्पण	शतांश	२३०	९२०	काली भैंस, काली
४. मार्जन	सहस्रांश	२३	९२	गाय, लोहा,
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	३	१०	आदि

राहुमन्त्रप्रयोगः

ॐ कयान इति मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः। गायत्री छन्दः। राहुर्देवता। कयान इति बीजम्। शचिरिति शक्तिः। राहुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।' ॐ वामदेवऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ राहुदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ कयान इति बीजाय नमः गुह्ये॥ ४॥ ॐ शचिरिति शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ कयान इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ चित्र इति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ आभुव इति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ दूती सदावृध इति अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ सखाकया इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ शचिष्ठयावृता इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। ॐ कयान इति हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ चित्र इति शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ आभुव इति शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ दूती सदावृध इति कवचाय हुम्॥ ४॥ ॐ सखाकया इति नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ शचिष्ठया वृतः इति अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिषडङ्गन्यासः। ॐ कया इति शिरसि॥ १॥ ॐ न इति ललाटे॥ २॥

ॐ चित्र इति मुखे॥ ३॥ ॐ आभुव दूती इति नाभौ॥ ४॥ ॐ सदावृधः कट्याम्॥ ५॥ ॐ सखा ऊर्वोः॥ ६॥ ॐ कया जानुनोः॥ ७॥ ॐ शचिष्ठया गुल्फयोः॥ ८॥ ॐ वृता पादयोः॥ ९॥ इति मन्त्रन्यासः। एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

नीलाम्बरो नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूली।
चतुर्भुजश्चर्मधरश्च राहुः सिंहासनस्थो वरदोऽस्तु मह्यम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्य्यात्।

राहुमन्त्रः—'ॐ कया नश्चित्रऽआभुवदूतीमुदाव्वृधःसखा कयाशचिष्ठयावृता॥८॥' राहोरष्टादशैव तु १८००० इति दूर्वासमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अथ दानद्रव्याणि—

गोमेदरत्नं च तुरङ्गमश्च सुनीलचैलामलकम्बलं च। तिलाश्च तैलं खलु लोहमिश्रं स्वर्भानवे दानमिदं वदन्ति॥

इति राहुमन्त्रजपप्रयोगः॥ ८॥

राहु मन्त्र-प्रयोग—'ॐ कयानश्चित्र०' इत्यादि मन्त्र से विनियोग का जल छोड़े। फिर मूल में लिखे 'ॐ वामदेव- ऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादिन्यास करना चाहिये। फिर मूलोक्त 'ॐ कयान इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर उसके आगे मूल में लिखित 'ॐ कयान इति हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास करे। तदुपरान्त मूल में लिखे 'ॐ कया इति शिरसि' इत्यादि नौ मन्त्रों से शरीराङ्गों में मन्त्रों का न्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् मूल में लिखित 'नीलाम्बरो नीलवपुः' इत्यादि श्लोक से ध्यान करना चाहिये।

ध्यान का भावार्थ है—'नील शरीर वाले, नील वस्त्रधारी, मुकुटधारी, कराल मुख वाले, तलवार तथा त्रिशूल लिये चतुर्भुज, ढाल लिये राहु जो कि सिंहासन पर स्थित हैं, मेरे लिये वरदायक हों।' इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजन कर जप करे। जपनीय मन्त्र है—'ॐ कयानश्चित्र आभुव दूती सदा वृधः सखाकया शचिष्ठया वृता।' इस वैदिक मन्त्र का १८००० (अठारह सहस्र) जप तथा जप का दशमांश दूर्वा की समिधा, तिल, पायस, घृत से होम करना चाहिये। अन्य सब क्रियाएँ पूजनादि पूर्व की भाँति करना चाहिये।

राहु के वैदिक मन्त्र की पुरश्चरणहेतु जपादि संख्या				
पुरश्चरण के अङ्ग	परस्पर अनुपात	सामान्य संख्या	कलियुग में संख्या	दान की वस्तुएँ
१. जप	एक	१८,०००	७२,०००	गोमेद रत्न, नीला घोड़ा
२. होम	दशांश	१८००	७२००	या नीली कार या मोटर
३. तर्पण	शतांश	१८०	७२०	साइकल, नील वस्त्र,
४. मार्जन	सहस्रांश	१८	७२	नीला कंबल, काले तिल,
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	२	८	लौहमिश्र धातु, तैल।

दान द्रव्य—गोमेद, नील तुरङ्ग, नील वस्त्र, नील कम्बल, तिल, तिलतैल तथा लौहमिश्रित धातुओं का दान करना चाहिये।

केतुमन्त्रजपविधानम्

केतुं कृण्वन्निति मन्त्रस्य मधुऋषिः। गायत्री छन्दः। केतुर्देवता। अपेशसे इति बीजम्। मर्य्या शक्तिः। केतुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ मधु ऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ केतुदेवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ

अपेशसे नमः गुह्ये ॥ ४ ॥ मर्या शक्तये नमः पादयोः ॥ ५ ॥ इति ऋष्यादिन्यासः । ॐ केतुं कृण्वन् इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ १ ॥ ॐ केतवे इति तर्ज्जनीभ्यां नमः ॥ २ ॥ ॐ पेशोमर्या इति मध्यमाभ्यां नमः ॥ ३ ॥ ॐ अपेशसे इत्यनामिकाभ्यां नमः ॥ ४ ॥ ॐ समुषद्भिः कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ५ ॥ ॐ अजायथाः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ६ ॥ इति करन्यासः । ॐ केतुं कृण्वन्निति हृदयाय नमः ॥ १ ॥ ॐ अकेतवे शिरसे स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ पेशोमर्य्या शिखायै वषट् ॥ ३ ॥ ॐ अपेशसे कवचाय हुम् ॥ ४ ॥ ॐ समुषद्भिर्नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ५ ॥ ॐ अजायथा इत्यस्त्राय फट् ॥ ६ ॥ इति हृदयादिन्यासः । ॐ केतुं शिरसि ॥ १ ॥ ॐ कृण्वन् ललाटे ॥ २ ॥ ॐ अकेतवे मुखे ॥ ३ ॥ ॐ पेशो हृदये ॥ ४ ॥ ॐ मर्य्या नाभौ ॥ ५ ॥ ॐ अपेशसे कट्याम् ॥ ६ ॥ ॐ समूर्वोः ॥ ७ ॥ ॐ उषद्भिर्जानुनोः ॥ ८ ॥ ॐ अजायथाः पादयोः ॥ ९ ॥ इति मन्त्रन्यासः । एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत् ।

अथ ध्यानम्—

धूम्रो द्विबाहुर्वरदो गदाभृद्गृध्रासनस्थो विकृताननश्च ।
किरीटकेयूरविभूषिताम्बरः सदाऽस्तु मे केतुगणः प्रशान्तः ॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य जपं कुर्य्यात् ।

तत्र मन्त्रः—'ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवेपेशोमर्य्याऽअपेशसे ॥ समुषद्भिरजायथाः ॥ १ ॥' केतोः सप्त सहस्राणि ७००० जपसङ्ख्या प्रकीर्तिता । ततो जपान्ते कुशसमित्तिलपायसघृतैर्दशांशहोमः । अन्यत्सर्वं पूर्ववत् ।

अथ दानद्रव्याणि—

वैडूर्यरत्नं सतिलं च तैलं सुकम्बलं चापि मदो मृगस्य ।
शस्त्रं च केतोः परितोषहेतोश्छागस्य दानं कथितं मुनीन्द्रैः ॥

इति केतुमन्त्रजपविधानं समाप्तम् ।

केतुमन्त्र के जप का विधान—'ॐ केतुं कृण्वन्निति मन्त्रस्य मधुऋषि । गायत्री छन्दः । केतुर्देवता । अपेशसे इति बीजम् । मर्या शक्तिः । केतुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग का जल छोड़े । तदनन्तर 'ॐ मधुऋषये नमः शिरसि' इत्यादि पाँच मन्त्रों से ऋष्यादिन्यास करे । फिर करन्यास 'ॐ केतुंकृण्वन् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मूल में लिखित छः मन्त्रों से करे । फिर मूलोक्त 'ॐ केतुं कृण्वन्निति हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास सम्पन्न करना चाहिये । तदनन्तर 'ॐ केतुं शिरसि' इत्यादि मूल में लिखे नौ मन्त्रों से शरीर के निर्दिष्ट शिर इत्यादि अङ्गों में मन्त्रन्यास करना चाहिये । फिर न्यासोपरान्त केतु का ध्यान 'धूम्रो द्विबाहुर्वरदो' इत्यादि मूल में लिखे हुए श्लोक (मन्त्र) के अनुसार करना चाहिये । भावार्थ है—'जो धूम्रवर्ण, दो भुजाओं वाले, वरदायक, गदा धारण करने वाले, गीध के ऊपर सवार, विकृत आनन (चेहरे) वाले, शिर पर मुकुट तथा केयूरादि आभूषणों के साथ चित्र वस्त्रधारी केतुओं के गण सदा मुझपर प्रशान्ति रखें ।'

वैदिक केतु मन्त्र के जप पुरश्चरणहेतु करणीय जपादि संख्या

पुरश्चरण के अङ्ग	परस्पर अनुपात	सामान्य संख्या	कलियुग में संख्या	दान द्रव्य
१. जप	एक	७,०००	२८,०००	वैदूर्य रत्न, काले तिल,
२. होम	दशांश	७००	२८००	तिल का तैल,
३. तर्पण	शतांश	७०	२८०	रंग-बिरङ्गा कम्बल,
४. मार्जन	सहस्रांश	७	२८	कस्तूरी, शस्त्र तथा
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	एक	तीन	बकरी ।

जपसंख्या—इसके मन्त्र की जपसंख्या सात सहस्र है। जप की समाप्ति पर कुश की समिधा, तिल, पायस एवं घृत से दशांश होम करे। अन्य सब पूर्ववत् है।

दानद्रव्य—वैदूर्य, कम्बल, तिलतैल, कस्तूरी, शस्त्र तथा बकरी का दान केतु की तुष्टि के लिये करना चाहिये।

सूर्यस्तोत्रम्

सुमन्तुरुवाच—

अस्तावीच्च ततः साम्बः कृशो धमनिसन्ततः। राजन्नामसहस्रेण सहस्रांशुं दिवाकरम्॥
खिद्यमानं ततो दृष्ट्वा सूर्यः कृष्णात्मजं तदा। स्वप्नेऽस्य दर्शनं दृष्ट्वा पुनर्वचनमब्रवीत्॥

सूर्यस्तोत्र—श्री सुमन्त बोले—जब धमनि सन्तत गात्र वाले कृष्णपुत्र साम्ब ने श्री सूर्य की स्तुति की तो सैकड़ों, सहस्रों नामों वाले सहस्र किरणों वाले दिवाकर ने कृष्णपुत्र को दुःखी देखकर स्वप्न में दर्शन देकर इस प्रकार के वचन कहे॥ १-२॥

श्रीसूर्य उवाच—

साम्बसाम्ब महाबाहो शृणु जाम्बवतीसूत। अलं नामसहस्रेण पठ चेमं शुभं स्तवम्॥
यानि गुह्यानि नामानि पवित्राणि शुभानि च। तानि ते कीर्तयिष्यामि प्रयत्नादवधारय॥
वैकर्तनो विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः। लोकप्रकाशः श्रीमाँल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः॥
लोकसाक्षी त्रिलोकेशः कर्ता हर्ता तमिस्त्रहा। तपनस्तापनश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः॥
गभस्तिहस्तो ब्रह्मा च सर्वदेवनमस्कृतः। एकविंशतिरित्येष स्तव इष्टस्सदा मम॥
शरीरारोग्यदश्चैव धनवृद्धियशस्करः। स्तवराज इति ख्यातस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः॥
य एतेन महाबाहो द्वे सन्ध्येऽस्तमनोदये। स्तौति मां प्रणतो भूत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
मानसं वाचिकं वापि कायिकं यच्च दुष्कृतम्। एकजाप्येन तत्सर्वं प्रणश्यति ममाग्रतः॥
एष जप्यश्च होमश्च सन्ध्योपासनमेव च। बलिमन्त्रोऽर्घ्यमन्त्रोथ धूपमन्त्रस्तथैव च॥
अन्नप्रदाने स्नाने च प्रणिपाते प्रदक्षिणे। पूजितोऽयं महामन्त्रः सर्वपापहरं शुभः॥
एवमुक्त्वा स भगवान्भास्करो जगताम्पतिः। आमन्त्र्य कृष्णतनयं तत्रैवान्तरधीयत॥
साम्बोऽपि स्तवराजेन स्तुत्वा सप्ताश्ववाहनम्। प्रीतात्मा नीरुजः श्रीमांस्तस्माद्रोगाद्विमुक्तवान्॥

इति भविष्योत्तरपुराणे सूर्यस्तवराजः समाप्तः।

श्री सूर्य बोले—हे महाबाहु साम्ब जाम्बवती के पुत्र! सुनो—सहस्रों नामों के स्तोत्र को रहने दो तथा मुझसे सूर्य के इस पवित्र स्तोत्र को सुनो। जो गुप्त तथा पवित्र नाम हैं, उन सूर्य के नामों को तुम्हें बताता हूँ। उन्हें ध्यानपूर्वक धारण करो। वैकर्त्तन, विवस्वान्, मार्तण्ड, भास्कर, रवि, लोकप्रकाश, लोकचक्षु, श्रीमान् ग्रहेश्वर, लोकसाक्षी, त्रिलोकेश, कर्त्ता, हर्त्ता, तमिस्रहा, तपन, तापन, शुचि, सप्ताश्ववाहन, गभस्तिहस्त, ब्रह्मा तथा सर्वदेवनमस्कृत—ये सूर्य के इक्कीस नाम हैं। जो मुझे सदैव प्रिय हैं। यह स्तवराज शरीर के लिये आरोग्यप्रद, धनवृद्धिकारक, यशस्कर तथा तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। हे महाबाहो! जो इस स्तोत्र से दोनों सन्ध्याओं में उदय तथा अस्तकाल में मेरी स्तुति करता है, वह सभी पापों से मुक्त हो जाता है। मन से, वाणी से, शरीर से जो भी दुष्कृत्य किया गया हो, वह सब इस एक स्तोत्र को मेरे आगे पढ़ने से नष्ट हो जाता है। यह स्तोत्र मेरे जपों में,

होमों में, सन्ध्योपासना में, बलिकर्म, अर्घ्य, धूप, अन्नप्रदान, स्नान, प्रणिपात तथा प्रदक्षिणा में प्रयुक्त कर मेरी पूजा करने से सभी पापों को हरने वाला तथा शुभ फलप्रद है। ऐसा कहकर जगत् के पति भगवान् सूर्य साम्ब को यह स्तवराज प्रदान कर अन्तर्धान हो गये तथा कृष्ण के पुत्र साम्ब भी उस स्तवराज से श्री सूर्य की स्तुति कर प्रसन्न, नीरोग तथा श्रीसम्पन्न होकर रहने लगे।

आदित्यहृदयस्तोत्रम्

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तयास्थितम्। रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम्॥ १॥
दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम्। उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्यो भगवांस्तदा॥ २॥
रामराम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम्। येन सर्वानरीन्वत्स समरे विजयिष्यते॥ ३॥
आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम्। जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम्॥ ४॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम्। चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥ ५॥
रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम्। पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम्॥ ६॥
सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः। एष देवासुरगणाँल्लोकान्याति गभस्तिभिः॥ ७॥
एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः। महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपाम्पतिः॥ ८॥
पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः। वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥ ९॥
आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्। सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥ १०॥
हरिदश्वसहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्। तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंशुमान्॥ ११॥
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोहस्करो रविः। अग्निगर्भोदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः॥ १२॥

आदित्यहृदयस्तोत्र—तब युद्ध से परिश्रान्त होकर युद्धभूमि में चिन्तायुक्त होकर बैठे हुए रावण को अपने सामने युद्ध के लिये स्थित देखकर श्री अगस्त्यमुनि देवताओं के साथ उस युद्ध को देखने के लिये रणभूमि में आये; तब राम के पास जाकर भगवान् अगस्त्यमुनि ने कहा—हे राम, महाबाहु राम! मुझसे अतिप्राचीन गुप्त रहस्य सुनो, जिसके द्वारा हे वत्स! तुम सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करोगे। यह आदित्यहृदय स्तोत्र है, जो कि पुण्यदायक, सर्वशत्रुविनाशक, विजय प्रदान करने वाला है। यह जप करने से नित्य ही अक्षय कल्याण देने वाला है। यही सभी प्रकार से मङ्गलदायक है तथा सभी पापों को नष्ट करने वाला है। चिन्ता तथा शोक को दूर कर यह उत्तम आयुवर्धक है। उगते हुए सूर्य को जो कि देवासुरों से नमस्कृत होते हैं, उन विवस्वान् भुवनेश्वर भास्कर की पूजा करो। ये सूर्य सभी देवों से युक्त, तेजस्वी, रश्मिभावन हैं। ये अपनी किरणों के द्वारा देवलोक तथा असुरगणों के लोकों में पहुँचते हैं। यही ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, स्कन्द तथा प्रजापति हैं। यही इन्द्र, कुबेर, काल, यम, सोम तथा वरुण हैं। यही पितृगण, वसुगण, साध्यगण, अश्विनीकुमार तथा मरुत् हैं। यही मनु, अग्नि, प्रजा के प्राण, ऋतुकर्ता, प्रभाकर, आदित्य, सविता, सूर्य, खग, पूषा, गभस्तिमान्, सुवर्णसदृश, भानु, हिरण्यरेता, दिवाकर, हरिदश्व, सहस्रार्चि, सप्त रश्मि वाले, तिमिरोन्मथन, शम्भु, त्वष्टा, मार्तण्ड, अंशुमान्, हिरण्यगर्भ, शिशिर, तपन, अहस्कर, रवि, अग्निगर्भ, अदितिपुत्र, शङ्ख तथा शिशिरनाशन हैं॥ १-१२॥

व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसामपारगः। धनवृष्टिरपाम्मित्रो विन्ध्यवीथी प्लवङ्गमः॥ १३॥
आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः। कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः॥ १४॥
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः। तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन्नमोऽस्तु ते॥ १५॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः। ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः॥ १६॥
जयाय जयभद्राय हर्य्यश्वाय नमोनमः। नमोनमः सहस्रांशो आदित्याय नमोनमः॥ १७॥
नम उग्राय वीराय सारङ्गाय नमोनमः। नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते॥ १८॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे। भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः॥ १९॥
तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने। कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः॥ २०॥
तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे। नमस्तमोभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे॥ २१॥
नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः। पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः॥ २२॥
एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः। एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम्॥ २३॥
देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च। यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः॥ २४॥

हे व्योमनाथ, तमोभेदी, ऋग्यजुः साम के पार जाने वाले, धनवृष्टि, अपांमित्र, विन्ध्यवीथी के प्लवङ्गम, आतपी, मण्डली, मृत्यु, पिङ्गल, सर्वतापन, कवि, विश्व, महातेज, रक्त, सर्वभव, उद्भव, नक्षत्र एवं ताराओं के स्वामी, विश्वभावन, तेजसों में भी तेजस्वी तथा द्वादशात्मन्! आपको नमस्कार है। पूर्व के गिरि तथा पश्चिम के अद्रि को नमस्कार है। ज्योतिर्गणों के पति, दिनाधिपति को नमस्कार है। जय को, जयभद्र को तथा हर्यश्व को नमो नमः। सहस्रांशो आपको नमो नमः। आदित्य के लिये नमो नमः। उग्र को, वीर को नमस्कार है; सारङ्ग को नमस्कार है। पद्मप्रबोध को नमस्कार है, हे प्रचण्ड! आपको नमस्कार है। ब्रह्मा, अच्युतेश, सूर तथा आदित्यवर्चस् को नमस्कार है। भास्वत को, सर्वभक्षी को तथा रौद्र वपु को नमस्कार है। तमोघ्न, हिमघ्न, शत्रुघ्न, अमितात्मा, कृतघ्नघ्नदेव, ज्योतिषाम्पति के लिये नमस्कार है। तप्त चामीकर के समान आभा वाले, हरि, विश्वकर्मा के लिये नमस्कार है। तमोविनिघ्न, रुचिलोकसाक्षी को नमस्कार है। यही प्राणियों का नाश करते हैं तथा यही प्रभु उनका सृजन करते हैं। यही उनको जल पिलाते हैं, यही तपाते हैं, यही अपनी किरणों द्वारा वर्षा करते हैं। ये प्राणियों को सोते से जगाकर पुनर्जीवित कर देते हैं। यही अग्निहोत्र हैं तथा अग्निहोत्र करने वालों के फल हैं। यही देवों एवं यज्ञों के फल हैं। इस लोक में जो भी कृत्य होते हैं, उन सभी कृत्यों के ये परम स्वामी हैं॥ १३-२४॥

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च। कीर्तयन्पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव॥ २५॥
पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्। एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यति॥ २६॥
अस्मिन्क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि। एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम्॥ २७॥
एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत्तदा। धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान्॥ २८॥
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान्। त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान्॥ २९॥
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागतम्। सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत्॥ ३०॥

अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति॥ ३१॥

इति वाल्मीकीयरामायणे आदित्यहृदयस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

आपत्तियों में, कठिनाइयों में, वनों में, भय उपस्थित होने पर हे राघव! जो पुरुष इनका कीर्तन करता है, वह कभी भी अवसादग्रस्त नहीं होता है। इन देवदेव जगत्पति की एकाग्रचित्त से पूजा करो। इसका तिगुना जप कर लेने

पर आप इस युद्ध को जीत लेंगे। उसी क्षण हे महाबाहु राम! तुम रावण को मार डालोगे। ऐसा कहकर श्री अगस्त्य मुनि जहाँ से आये थे, वहाँ को चले गये। यह सुनकर महातेजस्वी राम शोकरहित हो गये तथा उन्होंने इस स्तोत्र को श्रद्धापूर्वक प्रसन्न मन से धारण किया। श्री सूर्य ने राम को जब इस आदित्यहृदय का जप (पाठ) करते देखा तो बहुत प्रसन्न हुए। श्रीराम ने सूर्य को देखकर इस स्तोत्र को जपते हुए बहुत हर्ष प्राप्त किया तथा तीन बार आचमन करके उन बलशाली ने धनुष लेकर रावण को देखकर हर्षित होते हुए जीतने के लिये उसके समीप गये तथा उन्होंने सर्वप्रयत्न से रावण के वध का निश्चय किया। तब श्री सूर्य ने राम को प्रसन्नतापूर्वक देखते हुए परम प्रसन्न मन से राक्षसराज (रावण) का संहार कर देवगणों के मध्य खड़े होकर रावण के विनाश का समय निकट जानकर कहा—अब शीघ्रता करो॥ २५-३१॥

सूर्याथर्वशीर्षमुपनिषत्

अथ सूर्याथर्वाङ्गिरसं व्याख्यास्यामः। ब्रह्मा ऋषिः। आदित्यो देवता। गायत्री छन्दः। हंसाद्यग्निनारायणयुक्तं बीजम्। हल्लेखा शक्तिः। द्विपदादिसर्गसंयुक्तं कीलकम्। धर्मार्थकाममोक्षेषु जपे विनियोगः। षट्स्वरारूढबीजेन षडङ्गं रक्ताम्बुजसंस्थं सप्ताश्वरथिनं हिरण्यवर्णं चतुर्भुजं पद्मद्वयाभयवरदहस्तं कालचक्रप्रणेतारं च श्रीसूर्यनारायणं यऽएवं वेद स वै ब्राह्मणः ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं तत्सवितु० परोरजसेसावदोम् ॐ आपो ज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्। सूर्यआत्माजगतस्तस्थुषश्च। सूर्याद्वै खल्विमानि भूतानि जायन्ते। सूर्याद्यज्ञाः पर्जन्योऽन्नमात्मा। नमस्ते आदित्याय त्वमेव केवलं कर्त्तासि। त्वमेव प्रत्यक्षं विष्णुरसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वमेव प्रत्यक्षंरुद्रोऽसि। त्वमेव प्रत्यक्षमृगसि। त्वमेव प्रत्यक्षं यजुरसि। त्वमेव प्रत्यक्षंसामासि। त्वमेव प्रत्यक्षमथर्वासि। त्वमेव सर्वं छन्दोऽसि। आदित्याद्वायुर्जायते। आदित्याद्भूमिर्जायते। आदित्यादापो जायते। आदित्याज्ज्योतिर्जायते। आदित्याद्व्योम दिशो जायन्ते। आदित्याद्वेदा जायन्ते। आदित्याद्देवा जायन्ते। आदित्योवाऽएषएतन्मण्डलं तपति। असावादित्यो ब्रह्म। आदित्योऽन्तःकरणमनोबुद्धिचित्ताहङ्काराः। आदित्यो वै व्यानसमानोदानापानप्राणाः। आदित्यो वै श्रोत्रत्वक्चक्षु-रसनानासाः। आदित्यो वै वाक्पाणिपादोपस्थपायूनि। आदित्यो वै शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः। आदित्यो वै वचनादानगमनानन्दविसर्गाः। आनन्दमयो ज्ञानमयो विज्ञानमय आदित्यः। नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मा पाहि भ्राजिष्णवे विश्वहेतवे नमः। सूर्यो नो दिवस्पातु वातोअन्तरिक्षात्। अग्निर्नः पार्थिवेभ्यः सूर्याद्वै भूतानि सूर्येण पालितानि तु। सूर्ये लयं प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोहमेव च। चक्षुर्नो देवः सविता। चक्षुर्न उत पर्वतः। चक्षुर्धाता दधातु नः। आदित्याय विद्महे सहस्त्रकराय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्। सविता पश्चात्तात्। सवितां पुरस्तात्। सवितोत्तरात्तात् सविताधरात्तात्। सवितानः सुवतुसर्वतातिम्। सवितानोरासतां दीर्घमायुः ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म घृणिरिति द्वेअक्षरे सूर्य इत्यक्षरद्वयम्। आदित्य इति। त्रीण्यक्षराणि एतद्वै सूर्यस्याष्टाक्षरमनुम् 'ॐ घृणिः सूर्यआदित्य' इति मन्त्रः। यः सदाहरहर्जपति। सोऽब्रह्मण्यो ब्राह्मणो भवति। सूर्याभिमुखं जप्त्वा महाव्याधिभयात्प्रमुच्यते। अलक्ष्मीर्नश्यति। अभक्ष्यभक्षणात् पूतो भवति। अपेयपानात्पूतो भवति। अगम्यागमनात्पूतो भवति। व्रात्यसम्भाषणात्पूतो भवति। मध्याह्ने सूर्याभिमुखः पठेत् सद्यः पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते। सैषा सावित्रीविद्या न कस्यचित्प्रशंसेत्। एतन्महाभागः प्रातः पठति स भाग्यवान् जायते। पशून् विन्दति वेदार्थं लभते। त्रिकालं जप्त्वा क्रतुशतफलं प्राप्नोति। हस्तादित्ये जपति स महामृत्युं तरति। य एवं वेद। इत्युपनिषत्। इति सूर्याथर्वशीर्षम्।

इति श्रीबीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे सूर्य्यादिनवग्रहमन्त्रानुष्ठानप्रकरणं षष्ठं समाप्तम्।

सूर्य अथर्वशीर्ष उपनिषत्—अब सूर्य के अथर्व अङ्गिरस की व्याख्या करता हूँ। इसके ब्रह्मा ऋषि हैं। आदित्य देवता हैं। गायत्री छन्द है। हंसादि अग्नि नारायण युक्त बीज हैं। हल्लेखा शक्ति है। द्विपदादि सर्गसंयुक्त कीलक है। धर्मार्थ-काम-मोक्ष की प्राप्ति में विनियोग है।

छः स्वरों (षट् स्वर) पर आरूढ़ बीज से युक्त छः अङ्गों वाले, रक्तकमल पर स्थित, सात घोड़े के रथ पर स्थित, सुवर्ण वर्ण, चतुर्भुज, दो हाथों में कमल, एक में अभयमुद्रा तथा एक में वरदमुद्रा धारण किये, कालचक्र के प्रणेता श्री सूर्य नारायण को जो इस प्रकार से जानता है, वह ही ब्राह्मण है। ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः, ॐ जपः, ॐ सत्यं तत्सवितुर्वरेण्यं परोरजसे सावदोम्। ॐ आपो ज्योति रसोऽमृतं भूर्भुवः स्वरो ॐ।

सूर्य इस जगत् की आत्मा है। सूर्य से ही ये प्राणी उत्पन्न होते हैं। सूर्य से यज्ञ, पर्जन्य, अन्न तथा आत्मा है। आदित्य के लिये नमस्कार है, आप ही केवल कर्त्ता हो। आप ही प्रत्यक्ष विष्णु हो आप ही प्रत्यक्ष ब्रह्मा हो। आप ही प्रत्यक्ष रुद्र हो। आप ही प्रत्यक्ष ऋक् हो। आप ही प्रत्यक्ष यजुस् हो। आप ही प्रत्यक्ष साम हो। आप ही प्रत्यक्ष अथर्व हो। आप ही सभी छन्द हो। आदित्य से वायु उत्पन्न होती है। आदित्य से जल उत्पन्न होता है। आदित्य से अग्नि उत्पन्न होती है। आदित्य से भूमि उत्पन्न होती है। आदित्य से आकाश उत्पन्न होता है। आदित्य से देवगण उत्पन्न होते हैं। आदित्य ही इस इतने मण्डल का पति है। यही आदित्य ब्रह्म है। आदित्य अन्तःकरण, मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार आदि है। आदित्य ही व्यान, समान, उदान, अपान प्राण है। आदित्य ही श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जीभ तथा नासिका है। आदित्य ही वाक्, हाथ, पैर, प्रजननाङ्ग तथा मलद्वार है। आदित्य ही शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध है। आदित्य ही वचन, आदान, गमन, आनन्द तथा विसर्ग है। आदित्य ज्ञानमय, विज्ञानमय, आनन्दमय है।

मित्र के लिये, भानु के लिये नमस्कार है। हे चमकने वाले! मृत्यु से मेरी रक्षा करो। हे विश्व के कारण! आपको नमस्कार है। सूर्य हमारी आकाश से रक्षा करें। वायु अन्तरिक्ष से रक्षा करें। अग्नि हमारी पार्थिव पदार्थों से रक्षा करें। सूर्य से उत्पन्न प्राणी सूर्य से ही पालित हैं। सूर्य में ही सभी प्राणी विलीन हो जाते हैं। जो सूर्य है, वह मैं ही हूँ। हमारे नेत्र सविता देवता हैं। चक्षु ही हमारे पर्वत हैं। चक्षु हमारे धाता है; वे हमें धारण करे। मैं आदित्य को जानता हूँ। भास्कर का ध्यान करता हूँ। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्, वह जो सूर्य है, वह हमें श्रेष्ठ कर्म में प्रेरित करे। सविता पीछे से। सविता आगे से। सविता ऊपर से। सविता नीचे से। सविता हमारी सन्तति का कल्याण करे। सविता हमें दीर्घायु प्रदान करे। ॐ यह एक अक्षर ब्रह्म है। 'घृणि' में दो अक्षर है। सूर्य में दो अक्षर है। आदित्य में तीन अक्षर हैं। इस प्रकार से यह 'ॐ घृणिः सूर्य आदित्य' यह सूर्य का अष्टाक्षर मन्त्र है। जो इसे प्रतिदिन जपता है, वह अब्रह्मण्य होकर भी ब्राह्मण होता है। सूर्य की ओर खड़े होकर इस मन्त्र के जपने से महाभय से मुक्त हो जाता है। अलक्ष्मी नष्ट होती है। अभक्ष्य-भक्षण के दोष से मुक्त होकर पवित्र हो जाता है। अपेयपान करने के दोष से रहित हो जाता है। अगम्यागमन से पवित्र हो जाता है। व्रात्य के साथ सम्भाषण करने से जो पाप लग जाता है, उससे पवित्र हो जाता है। जो मध्याह्न काल में सूर्याभिमुख होकर इसे पढ़ता है, वह शीघ ही पाँच महापापों से मुक्त हो जाता है।

यह सावित्री महाविद्या है, इसे किसी के सामने प्रकट न करे। जो महाभाग इसे प्रातःकाल पढ़ता है, वह भाग्यवान् हो जाता है और पशुओं को प्राप्त करता है। वेदार्थ को जान लेता है। इसे तीनों कालों (प्रातः-मध्याह्न-सायं) में जप कर एक सौ यज्ञों का फल प्राप्त करता है। जो इसका जप हस्त नक्षत्रयुक्त रविवार में करता है, वह महामृत्यु से पार पा लेता है। जो ऐसा जानता है, यह उपनिषत् है।

विमर्श—सूर्यमन्त्रानुष्ठान प्रकरण में अति उपयोगी होने से यहाँ पर 'श्री सूर्य अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र' दिया जा रहा है।

श्रीसूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् (महाभारते वनपर्वे धौम्ययुधिष्ठिरसंवादे)

जनमेजय उवाच—

कथं कुरूणां ऋषभः स तु राजा युधिष्ठिरः। विप्रार्थमाराधितवान् सूर्यमद्भुतदर्शनम्॥ १॥

जनमेजय बोले—युधिष्ठिर ने विप्रों के भरण-पोषण के लिये अद्भुत दर्शन सूर्य भगवान् की आराधना किस प्रकार की?॥ १॥

वैशम्पायन उवाच—

शृणुष्वावहितो राजन् शुचिर्भूत्वा समाहितः। क्षणञ्च कुरु राजेन्द्र सम्यग् वक्ष्याम्यशेषतः॥ २॥
धौम्येन तु यथा पूर्वं पार्थाय सुमहात्मने। नामाष्टशतमाख्यातं तच्छृणुष्व महमते॥ ३॥

वैशम्पायन बोले—हे राजन्! तुम पवित्र होकर एकाग्रचित्त से सुनो; धौम्य ने प्राचीन काल में युधिष्ठिर को सूर्य के जो एक सौ आठ नाम बताए थे, उनको सुनो॥ २-३॥

धौम्य उवाच—

सूर्योऽर्यमा भगस्त्वष्टा पूषार्कः सविता रविः। गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः॥ ४॥
पृथिव्यापश्च तेजश्च खं वायुश्च परायणम्। सोमो बृहस्पतिः शुक्रो बुधोऽङ्गारक एव च॥ ५॥
इन्द्रो विवस्वान् दीप्तांशुः शुचिः शौरिः शनैश्चरः। ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कन्दो वै वरुणो यमः॥ ६॥
वैद्युतो जाठराग्निश्च एन्धनश्चतेजसाम्पतिः। धर्मध्वजो वेदकर्ता वेदाङ्गो वेदवाहनः॥ ७॥
कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिः सर्वमलाश्रयः। कलाकाष्ठामुहूर्तश्च क्षपायामस्तथा क्षणः॥ ८॥
संवत्सरकरोऽश्वत्थः कालचक्रो विभावसुः। पुरुषः शाश्वतो योगी व्यक्ताव्यक्तः सनातनः॥ ९॥
कालाध्यक्षः प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः। वरुणः सागरोंऽशुश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा॥ १०॥
भूताश्रयो भूतपतिः सर्वलोकनमस्कृतः। स्त्रष्टा संवर्त्तको वह्निः सर्वस्यादिरलोलुपः॥ ११॥
अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः। जयो विशालो वरदः सर्वधातुनिषेचिता॥ १२॥
मनः सुपूर्णो भूतादिः शीघगः प्राणधारकः। धन्वन्तरिर्धूमकेतुरादिदेवोऽदितेः सुतः॥ १३॥
द्वादशात्मारविन्दाक्षः पितामातापितामहः। स्वर्गं द्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम्॥ १४॥
देहकर्त्ता प्रशान्तात्मा विश्वात्मा विश्वतोमुखः। चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेयाः करुणान्वितः॥ १५॥
एतद् वै कीर्तनीयस्य सूर्यस्यामिततेजसः। नामाष्टकशतकं चेदं प्रोक्तमेतत् स्वयं भुवा॥ १६॥

फलश्रुतिः—

सुरगणपितृयक्षसेवितं ह्यसुरनिशाचरसिद्धवन्दितम्।
वरकनकहुताशनप्रभं प्रणिपतितोऽस्मि हिताय भास्करम्॥ १७॥
सूर्योदये यः सुसमाहितः पठेत् सपुत्रदारान् धनरत्नसञ्चयान्।
लभेत जातिस्मरतां नरस्सदा धृतिञ्च मेधां च स विन्दते पुमान्॥ १८॥
इमं स्तवं देववरस्य वो नरः प्रकीर्तयेच्छुचि सुमनाः समाहितः।
विमुच्यते शोकदवाग्निसागराँल्लभेत कामान् मनसा यथेप्सितान्॥ १९॥

इति महाभारते वनपर्वणि धौम्ययुधिष्ठिरसंवादे सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

धौम्य बोले—

१. सूर्य	२०. परायण	३९. जाठराग्नि	५७. शाश्वत पुरुष	७६. वह्नि	९५. अदितिसुत
२. अर्यमा	२१. सोम	४०. ऐन्धनाग्नि	५८. योगी	७७. सर्वादि	९६. द्वादशात्मा
३. भग	२२. बृहस्पति	४१. तेज:पति	५९. व्यक्ताव्यक्त	७८. अलोलुप	९७. अरविन्दाक्ष
४. त्वष्टा	२३. शुक्र	४२. धर्मध्वज	६०. सनातन	७९. अनन्त	९८. पिता-माता-पितामह
५. पूषा	२४. बुध	४३. वेदकर्त्ता	६१. कालाध्यक्ष	८०. कपिल	९९. स्वर्गद्वार-प्रजाद्वार
६. अर्क	२५. अङ्गारक	४४. वेदाङ्ग	६२. प्रजाध्यक्ष	८१. भानु	१००. मोक्षद्वार त्रिविष्टप
७. सविता	२६. इन्द्र	४५. वेदवाहन	६३. विश्वकर्मा	८२. कामद	१०१. ब्रह्मकर्त्ता
८. रवि	२७. विवस्वान्	४६. कृत्	६४. तमोनुद	८३. सर्वतोमुख	१०२. प्रशान्तात्मा
९. गभस्तिमान्	२८. दीप्तांशु	४७. त्रेता	६५. अरुण	८४. जय	१०३. विश्वात्मा
१०. अज	२९. शुचि	४८. द्वापर	६६. सागर	८५. विशाल	१०४. विश्वतोमुख
११. काल	३०. सौरि	४९. सर्वमलाश्रय (कलि)	६७. अंशु	८६. वरद	१०५. चराचरात्मा
१२. मृत्यु	३१. शनैश्चर	५०. कलाकाष्ठामुहूर्तरूप	६८. जीमूत	८७. सर्वधातुनिषेचिता	१०६. सूक्ष्मात्मा
१३. धाता	३२. ब्रह्मा	५१. क्षपा	६९. जीवन	८८. मन:सुवर्ण	१०७. मैत्रेय
१४. प्रभाकर	३३. विष्णु	५२. याम	७०. अरिहा	८९. भूतादि	१०८. करुणान्वित
१५. पृथ्वी	३४. रुद्र	५३. क्षण	७१. भूताश्रय	९०. शीघ्रग	
१६. आप	३५. स्कन्द	५४. संवत्सर	७२. भूतपति	९१. प्राणघातक	
१७. तेज	३६. वरुण	५५. अश्वत्थ	७३. सर्वलोकनमस्कृत	९२. धन्वन्तरि	
१८. ख (आकाश)	३७. यम	५६. कालचक्रप्रवर्त्तक	७४. स्रष्टा	९३. धूमकेतु	
१९. वायु	३८. वैद्युताग्नि	विभावसु	७५. संवर्त्तक	९४. आदिदेव	

ये अमित तेजस्वी सूर्य के एक सौ आठ नाम हैं, जिनको साक्षात् ब्रह्माजी ने बताया है। इन नामों का उच्चारण करके फिर भगवान् सूर्य को इस प्रकार से प्रणाम करे—समस्त देवता पितर तथा यक्ष जिनकी सेवा करते हैं; असुर, राक्षस एवं सिद्धजन जिसकी वन्दना करते हैं तथा जो उत्तम सुवर्ण तथा अग्नि के समान कान्ति वाले हैं, उनको प्रणाम है। जो सूर्योदय में एकाग्रचित्त से इनका पाठ करता है, उसे स्त्री-पुत्र, धन, रत्न के ढेर की प्राप्ति, पूर्वजन्म का स्मरण, धृति तथा मेधा प्राप्त होती है। जो व्यक्ति स्नानादि से पवित्र होकर इस स्तोत्र को पढ़ता है, वह संसार के शोकरूपी दावानल से मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के छठे प्रकरण सूर्य्यादिनवग्रहमन्त्रानुष्ठान प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ६॥

पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे सर्वरोगोपशमनप्रकरणं सप्तमम्॥ ७॥

सर्वरोगोपशमनविधानम्

अथ सूर्यप्रसङ्गात्सर्वरोगोपशमनविधानप्रकरणं लिख्यते; तत्र तावत्सामान्यतः सर्वरोगप्रशमनं महार्णवे—

रोगाः कर्मोद्भवाः केचित्केचिद्दोषसमुद्भवाः। कर्मदोषोद्भवाः केचिदेवं रोगास्त्रिधा स्मृताः॥
ये रोगा नैव शाम्यन्ति कृते ह्यौषधकर्मणि। धर्मेणैवोपशाम्यन्ति ते रोगाः कर्मजाः स्मृताः॥
प्रायश्चित्तेऽपि विहिते न शाम्यन्ति विनौषधम्। ये दृष्टहेतुसम्भूतास्ते रोगा दोषजाः स्मृताः॥
येषां सर्वात्मना हानिर्भवेत्पुण्यैर्न केवलैः। न केवलौषधैर्वापि रोगास्ते कर्मदोषजाः॥
पूर्वजन्मकृतं पापं नरकस्य परिक्षये। बाधते व्याधिरूपेण तस्य कृच्छ्रादिभिः शमः॥
पूर्वजन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते। तच्छान्तिरौषधैर्दानैर्जपहोमार्चनादिभिः॥
रोगहेतौ स्थिते पापे व्याधिः शाम्यति नौषधैः। असाध्यस्यापि रोगस्य प्रायश्चित्तं समाचरेत्॥

सर्वरोग प्रशमन-विधान—महार्णव में कहा है—कुछ रोग कर्मोद्भव होते हैं। कुछ रोग दोषसमुद्भव होते हैं। कुछ रोग कर्म एवं दोष दोनों से उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार रोग तीन कारणों से उत्पन्न होते हैं, ऐसा जानना चाहिये। जो रोग भली-भाँति औषधोपचार करने पर भी शान्त न हों, उन रोगों को कर्मज रोग समझना चाहिये। वे रोग धर्मकार्य (अनुष्ठान) से ही शान्त होते हैं। जो रोग प्रायश्चित्त करने पर भी बिना औषधोपचार के शान्त नहीं होते हैं; जिनका कारण ज्ञात होता है, उन रोगों को दोषज समझना चाहिये। जिन रोगों का सम्पूर्ण नाश न केवल पुण्य से होता है और न केवल औषधोपचार से होता है, वे रोग कर्मदोषज होते हैं। पूर्वजन्मकृत पाप नरक के परिक्षय में रोग के रूप में बाधित होता है, उसकी शान्ति कृच्छ्रतापूर्वक (कठिनाई से) होती है। पूर्व जन्म में किया हुआ पापकर्म व्याधि के रूप में जब बाधा पहुँचाता है तो उसकी शान्ति जप, होम, दान तथा औषधोपचार से करना चाहिये। रोग का हेतु जब पाप होता है तब वह रोग औषधि-सेवन से शान्त नहीं होता है, उस असाध्य रोग की शान्तिहेतु प्रायश्चित्त करना चाहिये।

विमर्श—रोगों के इन प्रकारों को आयुर्वेद के समस्त आचार्यों ने एकमत से स्वीकार किया है तथा इन्हें १. कर्मज, २. दोषज, ३. कर्म दोषोद्भव नाम दिया है—

कर्मजाः कथिता केचिद् दोषजाः सन्ति चापरे। कर्मदोषोद्भवाश्चान्ये व्याधयस्त्रिविधा स्मृताः॥

(भावप्रकाश पू.ख. ६)

जिस रोग का शास्त्रानुसार (आयुर्वेद-एलोपैथी-होम्योपैथी आदि से) निर्णय होने पर उसी शास्त्रविधि से चिकित्सा हुई हो; किन्तु वह फिर भी शान्त न हो तो उसे कर्मज रोग ही मानना चाहिये—

यथाशास्त्रं तु निर्णीतो यथाव्याधिचिकित्सितः। न शमं याति यो व्याधिः स ज्ञेयः कर्मजो बुधैः॥

(भा० प्र०)

भोगों के द्वारा प्राक्तन अशुभ कर्मों तथा प्रायश्चित्तादि से कर्मज व्याधियों का शमन होता है। यहाँ उपचार में व्यय होने वाले विपुल धन, अरुचिकर औषधियों के सेवन तथा पथ्यपालन से होने वाला कष्ट भी प्राक्तन पापकर्मों

का भोग ही होता है; अतः औषधोपचार तथा प्रायश्चित्तादि दोनों कर्म करना अभीष्ट होता है। पूर्वजन्मकृत कर्म का नाम दैव है; वह दो प्रकार का होता है—१. नियत (विपाकनियत) तथा अनियत (अकालनियत)। जिनका प्रत्यक्ष कारण समक्ष में नहीं आता, वे रोग कर्मज होते हैं। यथा—

निर्दिष्टं दैवशब्देन कर्म यत् पौर्वदेहिकम्। हेतुस्तदपि कालेन रोगाणामुपलभ्यते॥
(चरक शारीर १।११५)

इस प्रकार से व्यक्ति के पूर्व जन्मों में किये गये दुष्कर्म रोगों का कारण वर्त्तमान शरीर में बनते हैं। ये पूर्वकृत दुष्कर्म आत्माधिष्ठित लिङ्गशरीर के द्वारा ही इस स्थूल शरीर में अवतीर्ण होते हैं। इसी कारण से आयुर्वेद में आत्मा को भी स्थान दिया गया है।

यहाँ लिङ्गशरीर या लिङ्गदेह की व्याख्या आवश्यक है। लिङ्गशरीर क्या है ? भारतीय षड्दर्शनों में शरीर के तीन मुख्य भेद होते हैं—१. स्थूल शरीर, २. सूक्ष्म शरीर तथा ३. कारण शरीर। इनमें स्थूल शरीर से हम सभी परिचित हैं। कारण शरीर त्रिगुणात्मक (सत्व-रज-तम से युक्त) होता है, इसे ही अव्यक्त कहते हैं। इनमें जो सूक्ष्म शरीर है, वह आधार तथा आधेयभेद से दो प्रकार का होता है। सृष्टि के आरम्भ में लिङ्गशरीर समष्टि के रूप में रहता है। ग्यारह इन्द्रियाँ, पञ्च तन्मात्राएँ तथा बुद्धि के साथ लिङ्गशरीर सत्रह तत्त्वों का समुदाय होता है। यह सांख्याचार्य कपिल का मत है। यह लिङ्गशरीर सभी योनियों में निर्बाध रूप से (स्थावर-जंगम-शिला आदि में) प्रवेश कर सकता है। यह सूक्ष्म होने से स्थूल उपकरणों से बद्ध नहीं होता है। यह नियत अर्थात् महाप्रलय-पर्यन्त स्थित रहता है। लय प्राप्त होने के कारण इसका नाम लिङ्गशरीर है। चरक के अनुसार यह लिङ्गदेह एक शरीर से दूसरे माता-पिता से उत्पन्न शरीरों में भ्रमण करता रहता है। पूर्व जन्मकृत शुभाशुभ कर्मों के कारण जो आत्मा में लीन सूक्ष्म भूत (तन्मात्रा) होते हैं, वे भी आत्मा के साथ गर्भ में प्रविष्ट होते हैं।

इस सम्बन्ध में महाराज लोकमान्य तिलक महाराज बहुत स्पष्ट रूप से समझाते हुए (गीतारहस्य में) लिखते हैं—यह तथ्य स्पष्ट है कि जो व्यक्ति बिना ज्ञान प्राप्त किये हुए ही मर जाता है, उसकी आत्मा प्रकृति के चक्र से सदा के लिये छूट नहीं सकती है; क्योंकि यदि ऐसा हुआ तो फिर ज्ञान अथवा शुभाशुभ कर्मों (पाप-पुण्य) का कोई महत्त्व नहीं रह जायेगा। फिर चार्वाक के मतानुसार यह मानना पड़ेगा कि मृत्यु के पश्चात् हर प्राणी मोक्ष प्राप्त कर लेता है। अब यदि यह कहा जाय कि मृत्यु के उपरान्त केवल पुरुष (आत्मा) ही शेष रह जाता है और वही स्वयं नये-नये जन्म लिया करता है तो फिर 'पुरुष अकर्त्ता तथा उदासीन है' यह शास्त्रवाक्य मिथ्या सिद्ध हो जायेगा। इसी प्रकार जब पुरुष (आत्मा) नये-नये जन्म लेता ही रहता है तो फिर इस स्थिति में यह जन्म-मरण के चक्र से छूट ही नहीं सकता है। इसीलिये यह सिद्ध होता है कि यदि कोई मनुष्य बिना ज्ञान की प्राप्ति के देहान्त को प्राप्त हो जाय तो भी अगले जन्मों की प्राप्ति में प्रकृति का सम्बन्ध अवश्य ही होना चाहिये। मृत्यु के उपरान्त यह स्थूल शरीर तो नष्ट हो ही जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि उक्त सम्बन्ध अवश्य स्थूल पाँचभौतिक शरीर के साथ न होकर सूक्ष्म प्रकृति के साथ ही रहता है। प्रकृति केवल स्थूल पञ्चमहाभूतों से नहीं बनी है; अपितु उसके कुल तेईस तत्त्व होते हैं। इनमें से पञ्च महाभूतों को पृथक् कर देने पर शेष अठारह तत्त्व बचते हैं।

अतः यह कहना ही उपयुक्त होगा कि जो पुरुष बिना ज्ञान प्राप्त किये ही मर जाता है, वह यद्यपि पञ्चमहाभूतात्मक स्थूल शरीर से अर्थात् अन्तिम पञ्च तत्त्वों से छूट जाता है तथापि इस प्रकार की मृत्यु के शेष

अठारह तत्त्वों (महत्, अहङ्कार, ग्यारह इन्द्रियाँ तथा पञ्च तन्मात्राएँ) के साथ उसका सम्बन्ध नहीं छूट सकता। ये सब तत्त्व सूक्ष्म हैं; अतएव इन तत्त्वों के साथ पुरुष (आत्मा) का संयोग स्थिर होकर जो शरीर बनता है, उसे स्थूल शरीर के स्थान पर सूक्ष्म शरीर अथवा लिङ्गशरीर कहते हैं। (इस प्रकार) जब कोई व्यक्ति ज्ञानप्राप्ति के बिना ही मर जाता है तब मृत्य के समय उसकी आत्मा के साथ ही प्रकृति के उक्त अठारह तत्त्वों से बना हुआ शरीर (लिङ्गशरीर) भी स्थूल शरीर से निकलकर बाहर आ जाता है और जब तक उस पुरुष को ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती तब तक उसे उस लिङ्गशरीर के ही कारण नये-नये जन्म लेने पड़ते हैं तथा शुभाशुभ कर्मों के फल भोगने पड़ते हैं।

सांख्यकारिका (४०-४१) के अनुसार तिलक महाराज ने लिङ्गशरीर को अठारह तत्त्व-निर्मित स्वीकार किया है—

पूर्वोत्पन्नमसक्तं नियतं महदादिसूक्ष्मसूक्ष्मपर्यन्तम्। संसरति निरुपभोगं भावैर्यधिवासितं लिङ्गम्॥
चित्रं यथाश्रयमृते स्थाण्वादिभ्यो विना यथा छाया। तत्तद् विना विशेषैर्न तिष्ठति निराश्रयं लिङ्गम्॥

'लिङ्ग' का अर्थ महत्तत्त्व (बुद्धि) भी होता है; अतः जिस शरीर में बुद्धि (महत्तत्व) की प्रधानता हो, उसे लिङ्ग-शरीर कहा जाता है। अनेक विद्वानों ने तथा कपिल ने भी अहङ्कार को महत्तत्त्व के अन्तर्गत मानकर केवल सत्रह तत्त्वों से युक्त लिङ्गशरीर को कहा है। यथा—'सप्तदशैकं लिङ्गम्' (सांख्यसूत्र)। इस सम्बन्ध में अन्य शास्त्रीय वाक्य भी द्रष्टव्य हैं—'सप्तदश मिलित्वा लिङ्गशरीरम्। तच्च सर्गादौ समष्टिरूपमेकमेव भवतीत्यर्थः। एकादशेन्द्रियाणि। पञ्चतन्मात्राणि बुद्धिश्चेति सप्तदश। अहङ्कारस्य बुद्धावेवान्तर्भावः। कर्मात्मा पुरुषो योऽसौ बन्धमोक्षैः स युज्यते। स सप्तदशकेनापि राशिना युज्यते च सः।' वेदान्तियों ने पञ्चतन्मात्रा के स्थान पर पञ्चप्राणों को ग्रहण किया है—

पञ्चप्राण मनोबुद्धिदशेन्द्रियसमन्वितम्। अपञ्चीकृतभूतोत्थं सूक्ष्माङ्गं भोगसाधनम्॥

कर्मज व्याधियों की तिब्बती लामाओं द्वारा मान्यता—भारतीय आयुर्वेद के कर्मज व्याधि सिद्धान्त को तिब्बती लामाओं ने यथाविधि मान्यता प्रदान की है। उन्होंने चार प्रकार के कारणों से रोगों का होना स्वीकार किया है। तिब्बती भाषा में रोग को 'नद्' अथवा 'नद्-बा' कहते हैं। रोगों के चार कारण तिब्बती वैद्य लामाओं के अनुसार निम्नाङ्कित हैं—

१. ग्झाङ्-द्वाङ् स्नगोङ्-नद् अर्थात् कर्मज व्याधियाँ पूर्वजन्म के पापों से होती हैं। इनका उपचार किसी उच्च साधना वाले लामा द्वारा ही मन्त्र-तन्त्रादि से होता है। जब कोई रोग (नद्) सम्यक् औषधोपचार से शान्त न हो, तब उसे कर्मज व्याधि माना जाता है।

२. कुङ्-ब्रताग्स्-ग्दोङ्-नद् अर्थात् अमानुष रोग—यह प्रेतात्मा आदि के प्रकोप से होते हैं; जैसे उन्माद अपस्मार आदि। इनके लिये मन्त्रोपचार तथा औषधसिद्ध घृतों का सहयोग लिया जाता है।

३. ल्तार-स्नाङ्; फ्राल्-नद् अर्थात् आकस्मिक रोग—ये प्रायः तीव्रता से आते हैं और बिना औषधियों के ठीक हो जाते हैं; जैसे—प्रतिश्याय आदि।

४. योङ्स्-ग्रुब, त्शे-नाद् अर्थात् दोषज रोग—ये अच्छी प्रकार से औषधोपचार करने पर ठीक हो जाते हैं।

सर्वरोगविनाशाय जपः कार्यो विशेषतः। मृत्युञ्जयस्य रुद्रस्य होमं कुर्याद्दशांशतः॥
आगमोक्तविधानेन रोगनाशो भवेद्ध्रुवम्। सर्वरोगोपशान्त्यर्थमभिषेकं समाचरेत्॥
सहस्रकलशैः स्नानं विष्णोर्वा शङ्करस्य च। देवमभ्यर्च्य विप्रेभ्यो दद्यान्मिष्टान्नभोजनम्॥
तेभ्यश्च दक्षिणां दत्त्वा रोगेभ्यो मुच्यते ध्रुवम्। कार्यः षडङ्गरुद्रस्य जपो वा रोगशान्तये॥
महारुद्रविधानेनासाध्यो रोगोऽपि शाम्यति। अपामार्जनसंज्ञेन मालामन्त्रेण मार्जयेत्॥
मार्जनाद्रोगिणः सर्वे रोगा नश्यन्त्यसंशयम्। अच्युतानन्तगोविन्देत्येवं नामत्रयं हरेः॥
सर्वरोगोपशान्त्यर्थं सततं व्याधिमान् जपेत्। सर्वेषु ज्ञातरोगेषु प्रदद्यात्सततं नरः॥
पानीयं पायसं मुद्गाः शर्करां घृतसंयुताम्। प्रतिकूलग्रहाणां च जपं होमं च पूजनम्॥
तत्तद्दोषविनाशार्थं दानं कुर्य्याद्यथोदितम्। प्रतिरोगं च यद्दानं जपहोमादि कीर्तितम्॥
प्रायश्चित्तं तु तत्कृत्वा चिकित्सामारभेत्ततः। प्रदद्यात्सर्वरोगघ्नं छायापात्रं विधानतः॥

सर्वकर्मज व्याधियों के प्रशमनहेतु उपाय—सभी कर्मज व्याधियों के नाशहेतु मृत्युञ्जयजप अथवा रुद्रजप करना चाहिये। जप का दशांश हवन करना चाहिये। तन्त्रोक्त विधान से सर्वरोग-शान्त्यर्थ अभिषेक करना चाहिये। भगवान् विष्णु या शङ्कर का सहस्रधारा अभिषेक करके ब्राह्मणों को मिष्ठान्न भोजन देना चाहिये। उनको दक्षिणा देकर षडङ्गरुद्र का जप भी रोगशान्ति के लिये करना चाहिये। महारुद्र के विधान से असाध्य रोग भी साध्य हो जाते हैं। अपामार्जन स्तोत्र के मार्जन करने से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं; इसमें सन्देह नहीं है। हरि के तीन नाम—अच्युत-अनन्त तथा गोविन्द; इनको व्याधि से पीड़ित व्यक्ति को जपना चाहिये। इनका जप सभी रोगों से पीड़ित रोगी कर सकते हैं। पानीय, पायस, मूंग का यूष—इनको घी एवं शक्कर मिलाकर तथा प्रतिकूल ग्रहों का जप होमपूजन करे। उनके दोष के नाशन के लिये जो जप-दान-होम कहा गया है, उसका रोगानुसार प्रयोग करना चाहिये। प्रायश्चित्त करके फिर चिकित्सा आरम्भ करनी चाहिये। समस्त रोगों को नष्ट करने वाला छायापात्र दान करना चाहिये।

छायापात्रविधानम्—

चतुःषष्टिपलैः कांस्यभाजने निर्मिते शुभे। घृतेनापूरिते तत्र स्वर्णं निष्कं विनिक्षिपेत्॥
तत्राज्ये स्वतनोश्छाया आपादतलमस्तकम्। दृष्ट्वा रोगी ततो दद्याद्ब्राजनं तद्द्विजन्मने॥
पूजिताय विधानेन ततो दद्याच्च दक्षिणाम्। पक्षोऽयमुत्तमः प्रोक्तः कांस्यपात्रसुवर्णयोः॥
दद्याद्वित्तानुसारेण पात्रं स्वर्णं च बुद्धिमान्।

दानमन्त्रः—

आयुर्बलं यशो वर्च्च आज्यं स्वर्णं तथाऽमृतम्। आधारं तेजसा यस्मादतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥
मन्त्रेणानेन विप्राय सर्वरोगोपशान्तये। पात्रं सुवर्णसहितं दद्यात्सङ्कल्पपूर्वकम्॥

छायापात्र विधान—चौंसठ पल कांसा (२५६ तोले = लगभग ३ किलो) भार का कांस्य पात्र (कटोरा) बनवाकर उसे घी से भरकर उसमें एक निष्क स्वर्ण डालकर उस पिघले हुए घी में अपने शरीर की छाया रोगी देखे। छाया खड़े होकर आपादतल मस्तक कांस्य का छायापात्र दान उत्तम कहा गया है। यदि इतना सामर्थ्य न हो तो बुद्धिमान् मनुष्य अपने आर्थिक सामर्थ्य के अनुसार कांस्य तथा सुवर्ण का दान करे। दानमन्त्र है—'आयुर्बलं

यशोवर्चं आज्यं स्वर्णं तथाऽमृतम्। आधारं तेजसा यस्मादतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥' इस मन्त्र से समस्त रोगों की शान्ति के लिये ब्राह्मण को सङ्कल्पपूर्वक कांस्य पात्र को सुवर्णसहित दान कर देना चाहिये।

व्याधिप्रतिरूपदानविधानम्—

दद्यात्सर्वामयव्याधिप्रतिरूपं निवृत्तये। सुवर्णेन सरत्नेन रौप्येणापि स्वशक्तितः॥ २३॥
निर्मितं च शतैकेन निष्काणां वा तदर्द्धतः। त्रिंशता वा यथाशक्ति दद्यादुक्तविधानतः॥ २४॥
तण्डुलैः पूरिते व्याधिप्रतिरूपं सुभाजने। निधायावेष्ट्य वस्त्रेण समलङ्कृत्य भूषणैः॥ २५॥
समभ्यर्च्यार्थ विप्राय पूजिताय निवेदयेत्। पठन्मन्त्रमिमं व्याधिप्रतिरूपमथोत्सृजेत्॥ २६॥
ये मां रोगाः प्रबाधन्ते देहस्थाः सततं मम। गृह्णीष्व प्रतिरूपेण तान्रोगान्द्विजसत्तम॥ २७॥
बाढमित्येव तद्रूपं गृह्णीयाद्ब्राह्मणस्तदा। ततो रोगप्रदातासौ दीर्घमायुः प्रपद्यते॥ २८॥
तण्डुलानां तु यत्पात्रं मुख्यं तत्कांस्यसम्भवम्। दत्त्वा दानं तु तत्काले द्विजास्यं नावलोकयेत्॥ २९॥

इति व्याधिप्रतिरूपदानम्। प्रायेण सूर्यः सर्वेषां रोगाणामधिदैवतम्। आरोग्यं भास्करादिच्छेदिति प्रख्या श्रुतिः स्मृतिः। इति सामान्यतः सर्वरोगशमनविधानम्।

व्याधिप्रतिरूप का दान—रत्नसहित सुवर्ण तथा रौप्य से अपनी शक्ति के अनुसार व्याधि का प्रतिरूप बनवाकर सभी रोगों की निवृत्ति के लिये दान करना चाहिये। एक सौ निष्क अथवा पचास निष्क अथवा तीस निष्क अथवा यथाशक्ति भार चाँदी या सुवर्ण का व्याधिप्रतिरूप उक्त विधान से बनवाकर, उसे चावलों से भरे श्रेष्ठ पात्र में रखकर वस्त्र से ढककर आभूषणों से अलंकृत कर, उसकी पूजा करके सद्ब्राह्मण को पूजकर निवेदित करे तथा इस मन्त्र को पढ़ते हुए दान करे, 'ये मां रोगा प्रबाधन्ते देहस्थाः सततं मम। गृह्णीष्व प्रतिरूपेण तान् रोगान् द्विजसत्तम॥' तब ब्राह्मण 'बढ़िया' कहकर उस व्याधिप्रतिरूप को ग्रहण कर ले; इससे वह दान करने वाला रोगी दीर्घायु हो जाता है। जिस पात्र में चावल भरकर दान किया जाय, वह पात्र कांसे का बना होना चाहिये। उस पात्र को दान करने के पश्चात् रोगी को उस दान-गृहीता ब्राह्मण को नहीं देखना चाहिये॥ २३-२९॥

विमर्श—तिब्बत में तथा तिब्बतियों में मन्त्र-तन्त्रों के अनुष्ठानों तथा तान्त्रिक विधि से निर्मित औषधियों का प्रचलन अधिक मात्र में विद्यमान है। वहाँ जो वैद्य तैयार किये जाते हैं, उन्हें तान्त्रिक मन्त्र-यन्त्र एवं प्रार्थनाओं का अध्ययन कराया जाता है। यह परम्परा वज्रयान सम्प्रदाय (मन्त्रयान अथवा तन्त्रयान) के पूर्व से ही चली आ रही है। विलियम स्टाबलिन नामक पाश्चात्य लेखक ने विस्तारपूर्वक इस विषय में अपनी पुस्तक Tibetan Medical-Cultural System में लिखा है—

There are usually three of medicine created, and these correspond to the outer, inner and secret levels of disease. The outer one is a pill made of eight Ayurvedic ingredients charged with the blessing of the deity. The inner one is torma (gtorma), ritual offering cake. These torma are made in the shapes of ears, nose etc. and they represent the body purified by the eight inner substances which promote bodily growth. The secret medicine is represented by eight sexual aspects of subtle body, four from the male and four from the female.

तिब्बती तन्त्रशास्त्र के अनुसार मन्त्र तब तक अपना प्रभाव नहीं करते, जब तक कि उन्हें गुरु से दीक्षा लेकर सिद्ध न कर लिया जाय। यदि उन्हें बिना समझे तोते की भाँति रटा जाय तो वे प्रभाव नहीं करते हैं; अतः उन्हें

किसी लामा गुरु से दीक्षा लेकर सिद्ध करना आवश्यक होता है। अतः उन्हें पुस्तक में पढ़कर नहीं सीखना चाहिये—

By practicing the recitaion of mantras, one can read just the vibrational harmony of the subtle body and realise it as the Buddha body. But learning a mantra out of a book and practicing it without empowerment dosen't usually work. Most mantras must be received in initiation from the master or Lama either in actual experience or by more mystical means. Further, mantras have no power if they are repeated mindlessly like parrot—Tibetan Buddhist Medicine page 79.

ज्वरशमनविधानम्

महार्णवे गार्ग्यः—

ये पुनः क्रूरकर्माणः पापाः पिशुनचेतसः। ते भवेयुः सदा शीतज्वरवन्तश्च तत्पराः॥
शान्तयेऽयुतसङ्ख्याकं कुर्य्यात्तु प्रयतो जपम्। जातवेदसमन्त्रेण ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः॥
सुरामांसोपहाराद्यैर्बलिः सर्वत्र शस्यते। सहस्रकलशस्नानं शतभोजनमेव च॥

ज्वरशमन का मन्त्रात्मक विधान—महार्णव में गार्ग्य का वचन है—जो क्रूरकर्मा, पापकर्मा तथा चुगलखोर हैं, उन्हें सदैव रहने वाला शीतज्वर उत्पन्न होता है, उसकी शान्ति के लिये अयुत (दस सहस्र) की संख्या में 'जातवेदस मन्त्र' का जप करना चाहिये तथा जप-होमादि के पूर्ण होने पर ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। ज्वर के लिये सुरा-मांस आदि उपहारों की बलि देकर सहस्रकलशस्नान तथा एक सौ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये।

माहेश्वरतन्त्रेऽपि—

उष्णज्वरे महेशस्य प्रकुर्यादभिषेचनम्। शीतज्वरे तथा कुर्यादभिषेकं हरेर्बुधः॥

माहेश्वर तन्त्र में कहा है—उष्ण ज्वर होने पर श्री शङ्कर का अभिषेक करे तथा शीत ज्वर में बुद्धिमान् को श्री विष्णु जी का अभिषेक करना चाहिये।

कर्मविपाकसङ्ग्रहेऽपि—

माङ्गल्येषु च कार्येषु सततं कोपवान्नरः। उष्णज्वराभिभूतः स्यात्तत्पापस्यापनुत्तये॥
सहस्रकलशस्नानं रुद्रेणेशस्य कारयेत्। ब्राह्मणाञ्भोजयेच्छक्त्या जपेद्वै जातवेदसम्॥

कर्मविपाकसंग्रह में भी कहा है—जो व्यक्ति माङ्गलिक कार्यों एवं उत्सवों में सदैव क्रोधित होता रहता है, वह उष्णज्वर से पीड़ित होता है। उसके पापफल की निवृत्ति के लिये रुद्र से सहस्र कलशस्नान रुद्र को कराकर यथाशक्ति भोजन कराना चाहिये। अथवा जातवेदस मन्त्र का जप कराना चाहिये।

महार्णवे शातातपः—

देवस्वग्रहणाच्चैव जायते विविधज्वरः। ज्वरो महाज्वरश्चैव रौद्रो वैष्णव एव च॥
ज्वरे रुद्रजपं कुर्य्यान्महारुद्रं महाज्वरे। महारुद्रं जपेद्रौद्रे वैष्णवे तद्द्वयं जपेत्॥ इति।
रुद्रातिरुद्रमहारुद्राणि शिवानुष्ठानप्रकरणे दर्शितानि।

महार्णव में शाततप का वचन है—देवस्व (मन्दिर तथा देवता के धन-सम्पत्ति) को ग्रहण या हरण करने से विविध प्रकार के ज्वर होते हैं—ज्वर, महाज्वर, रौद्रज्वर, वैष्णवज्वर आदि। सामान्य ज्वर में रुद्रजप तथा महाज्वर

में महारुद्र का जप-अनुष्ठान कराना चाहिये। रुद्रज्वर में महारुद्र का वैष्णवज्वर में महारुद्र तथा रुद्र दोनों का जप करना चाहिये। रुद्र, अतिरुद्र तथा महारुद्रों की जपविधि पीछे शिवानुष्ठान प्रकरण में बताई जा चुकी है।

ज्वरशमनमन्त्रविधानम्

मन्त्रो यथा—

त्रिपाद्भस्मप्रहरणस्त्रिशिराश्च त्रिलोचनः। स मे प्रीतः सुखं दद्यात्सर्वामयपतिज्वरः॥

अस्य श्रीज्वरमन्त्रस्य कालाग्निरुद्र ऋषिः। महादेवो देवता। अनुष्टुप् छन्दः। सकलज्वरशान्त्यर्थे जपे विनियोगः। ततः पूर्वोक्तऋष्यादिन्यासं ध्यानं च कृत्वा यथाविधि अयुतं सहस्रं वा जपेत्। जपान्ते होमतर्पणादि कुर्यात्। अथवा ज्वर-गायत्रीं जपेत्। तद्यथा—

ॐ भस्मायुधाय विद्महे ऐं क्रीं एकदंष्ट्राय धीमहि, तन्नो ज्वरः प्रचोदयात्— इति ज्वरगायत्री।

ज्वरमन्त्र-जप-विधान—'त्रिपाद्भस्मप्रहरणः त्रिशिराश्च त्रिलोचनः। स मे प्रीतः सुखं दद्यात् सर्वामयपतिज्वरः' यह ज्वरशामक मन्त्र है। इस ज्वरमन्त्र के कालाग्नि रुद्र ऋषि हैं। महादेव देवता हैं तथा अनुष्टुप् छन्द है। सकल ज्वरों की शान्ति में इसका विनियोग है। इस भाव का मूल में लिखित मन्त्र का प्रयोग विनयोग में करे तथा—'ॐ कालाग्निरुद्रऋषये नमः शिरसि, महादेवदेवतायै नमः हृदये, अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे' इन तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूल मन्त्र 'त्रिपाद्भस्म०' इत्यादि के अनुसार ध्यान करके विधिपूर्वक इसी मन्त्र का जप एक अयुत (दश सहस्र) अथवा एक सहस्र करे। जप के अन्त में दशांश होम तर्पणादि भी करे। अथवा इसी विधान से 'ॐ भस्मायुधाय विद्महे ऐं क्रीं एकदंष्ट्राय धीमहि, तन्नो ज्वरः प्रचोदयात्' इस ज्वरगायत्री का जप (एक अयुत की संख्या में) करना चाहिये।

जातवेदसमन्त्रानुष्ठानप्रयोगः

पूर्वदिने पूर्वोक्तप्रायश्चित्तं कृत्वा प्रारम्भदिने प्रातर्नित्यावश्यकं समाप्य सुमुहूर्त्ते शिवालयादिपवित्रस्थले स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं मम (यजमानस्य वा) उत्पन्नज्वरस्य अमुकव्याधेर्वा जीवच्छरीराऽविरोधेन समूलनाशार्थं सद्य आरोग्यार्थं जातवेदस इति मन्त्रस्यामुकसङ्ख्यया जपं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठामन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासं च कृत्वा मूलमन्त्रन्यासादिकर्म्म कुर्य्यात्। मूलमन्त्रो यथा—ॐ जातवेदसेसुनवामसोमंमरातीयतोनिर्दहातिवेदः। सनःपर्षदतिं दुर्गाणिविश्वानावेवसिन्धुं दुरितात्यग्निः॥' इति चतुश्चत्वारिंशद्वर्णात्मको मन्त्रः। ॐ जातवेदसः इति मन्त्रस्य मारीचः काश्यप ऋषिः। त्रिष्टुप्छन्दः। जातवेदोग्निर्दुर्गादेवता। रोगशमने विनियोगः। ॐ मारीचकाश्यपऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ जातवेदोग्निदुर्गादेवताभ्यां नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः। ॐ जातवेदसेसुनवाम इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ सोममरातीयतो इति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ निदहाति वेदः इति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सनः पर्षदति अनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ दुर्गाणिविश्वानावेव इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ सिन्धुं दुरितात्यग्निरिति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कुर्य्यात्।

अथ मन्त्रवर्णन्यासः—ॐ नमः दक्षिणपादाङ्गुष्ठे॥ १॥ ॐ जां नमः वामपादाङ्गुष्ठे॥ २॥ ॐ तं नमः दक्षगुल्फे॥ ३॥ ॐ वें वामगुल्फे॥ ४॥ ॐ दं नमः दक्षिणजङ्घायाम्॥ ५॥ ॐ सें नमः वामजङ्घायाम्॥ ६॥ ॐ सुं नमः दक्षिणजानुनि॥ ७॥ ॐ नं नमः वामजानुनि॥ ८॥ ॐ वां नमः दक्षिणोरौ॥ ९॥ ॐ मं नमः वामोरौ॥ १०॥ ॐ सों नमः दक्षकट्याम्॥ ११॥ ॐ मं नमः वामकट्याम्॥ १२॥ ॐ मं नमः लिङ्गे॥ १३॥ ॐ रां नमः नाभौ॥ १४॥ ॐ तीं नमः

हृदये॥ १५॥ ॐ यं नमः दक्षस्तने॥ १६॥ ॐ तों नमः वामस्तने॥ १७॥ ॐ निं नमः दक्षपार्श्वे॥ १८॥ ॐ दं नमः वामपार्श्वे॥ १९॥ ॐ हां नमः पृष्ठे॥ २०॥ ॐ तिं नमः दक्षस्कन्धे॥ २१॥ ॐ वें नमः वामस्कन्धे॥ २२॥ ॐ दं नमः दक्षिणबाहुमूले॥ २३॥ ॐ सं नमः दक्षबाहुमूलकूर्परयोर्मध्ये॥ २४॥ ॐ नं नमः दक्षकूर्परे॥ २५॥ ॐ पं नमः कूर्परमणिबन्धयोर्मध्ये॥ २६॥ ॐ सं नमः दक्षमणिबन्धे॥ २७॥ ॐ दं नमः अङ्गुष्ठमूलप्रदेशे॥ २८॥ ॐ तिं नमः वामबाहुमूले॥ २९॥ ॐ दुं नमः वामबाहुमूलकूर्परयोर्मध्ये॥ ३०॥ ॐ र्गां नमः वामकूर्परे॥ ३१॥ ॐ णिं नमः वामकूर्परमणिबन्धयोर्मध्ये॥ ३२॥ ॐ विं नमः वाममणिबन्धे॥ ३३॥ ॐ श्वां नमः अङ्गुष्ठमूलप्रदेशे॥ ३४॥ ॐ नां नमः मुखे॥ ३५॥ ॐ वें नमः दक्षनासायाम्॥ ३६॥ ॐ वं नमः वामनासायाम्॥ ३७॥ ॐ सिं नमः दक्षिणनेत्रे॥ ३८॥ ॐ धुं नमः वामनेत्रे॥ ३९॥ ॐ दुं नमः दक्षिणकर्णे॥ ४०॥ ॐ रिं नमः वामकर्णे॥ ४१॥ ॐ तौ नमः ललाटे॥ ४२॥ ॐ त्यं नमः ललाटोपरिभागे॥ ४३॥ ॐ ग्रिं नमः मूर्ध्नि॥ ४४॥ इति वर्णन्यासः।

अथ पदन्यासः—ॐ जातवेदसे नमः शिखायाम्॥ १॥ ॐ सुनवाम नमः ललाटे॥ २॥ ॐ सोमं नमो नेत्रयोः॥ ३॥ ॐ अरातीयतः नमः कर्णयोः॥ ४॥ ॐ निदहाति नमः ओष्ठयोः॥ ५॥ ॐ वेदः नमः जिह्वायाम्॥ ६॥ ॐ सनः नमः कण्ठे॥ ७॥ ॐ पर्षत् नमः बाह्वोः॥ ८॥ ॐ अति नमः हृदये॥ ९॥ ॐ दुर्गाणि नमः कुक्षौ॥ १०॥ ॐ विश्वा नमः कटौ॥ ११॥ ॐ नावेव नमः गुह्ये॥ १२॥ ॐ सिंधुं नमः ऊर्वोः॥ १३॥ ॐ दुरिता नमः जानुनोः॥ १४॥ ॐ अति नमः जङ्घयोः॥ १५॥ ॐ अग्नि नमः पादयोः॥ १६॥ एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापाङ्कुशं तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां स्मरेत्॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्।

जातवेद मन्त्र का अनुष्ठान—अनुष्ठान आरम्भ करने के लिये जो मुहूर्त निश्चित किया गया हो, उसके एक दिन पूर्व प्रायश्चित्त कर्म कर लेना चाहिये तथा जिस दिन प्रारम्भ करने का मुहूर्त हो, उस दिन प्रातः शीघ्र उठकर आवश्यक नित्यकर्मों को निपटा कर शुभ मुहूर्त में किसी शिवालय आदि पवित्र स्थान में अपने आसन पर पूर्व की ओर मुख करके अथवा उत्तराभिमुख बैठकर तथा आचमन एवं प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण करके 'अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं मम (यजमानस्य वा) उत्पन्नज्वरस्य अमुकव्याधेर्वा जीवच्छरीराविरोधेन समूलनाशार्थं सद्य आरोग्यार्थं जातवेदस इति मन्त्रस्य अमुकसङ्ख्यया जपं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृकान्यास, बहिर्मातृकान्यास तथा मूल मन्त्र का वर्णन्यास एवं पदन्यास आदि करना चाहिये।

'ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहातिवेदः। सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेवसिन्धुं दुरितात्यग्निः।' यह मूल मन्त्र है, जिसमें चौवालीस वर्ण हैं। सर्वप्रथम 'ॐ जातवेदस०' इति मन्त्रस्य मारीचः काश्यपः ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। जातवेदोऽग्निदुर्गा देवता। रोगशमने विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करना चाहिये। फिर 'ॐ मारीचकाश्यपऋषये नमः शिरसि, ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे, ॐ जातवेदो अग्निदुर्गादेवताभ्यां नमः हृदये' इन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास सम्पन्न कर मूलोक्त 'ॐ जातवेदसे सुनवाम इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करना चाहिये। तदुपरान्त 'ॐ जातवेदसे सुनवाम हृदयाय नमः, ॐ सोममरातीयतो इति शिरसे स्वाहा, ॐ निदहाति वेदः इति शिखायै वषट्, ॐ सनः पर्षदति कवचाय हुम्, ॐ दुर्गाणि विश्वानावेव इति नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ सिन्धुं दुरितात्यग्निरिति अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास करना चाहिये।

फिर मूल में लिखे 'ॐ नमः दक्षिणपादाङ्गुष्ठे' इत्यादि चौवालीस मन्त्रों से उन मन्त्रों के आगे निर्दिष्ट शरीर के अङ्गों में मन्त्र के चौवालीस अक्षरों का न्यास करना चाहिये। फिर उसके आगे लिखे ॐ 'ॐ जातवेदसे नमः शिखायाम्' इत्यादि १६ (सोलह) मन्त्रों से उनमें निर्दिष्ट अङ्गों में पदन्यास करने के उपरान्त मूलोक्त

'विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविलसद् हस्ताभिरासेविताम्। हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापाङ्कुशं तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥' इस श्लोक के अनुसार ध्यान करना चाहिये। ध्यान का भावार्थ है—'बिजली की चमक के समान प्रभा वाली, सिंह के कन्धों पर सवार, भीषण स्वरूप वाली, कन्याओं के द्वारा ली गई तलवारों से सुशोभित, अपने हाथों में तलवार, गदा, चक्र, खेट, धनुष, बाण, अङ्कुश, तर्जनी घुमाती हुई, अग्निरूपा, शशिधरा, त्रिनेत्रा दुर्गा का स्मरण करे।' इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजकर पीठ-पूजा करनी चाहिये।

तद्यथा—(मण्डले सर्वतोभद्रे षट्कोणाङ्कितकर्णिके विधिना वक्ष्यमाणेन पीठं देव्याः प्रपूजयेत्) मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताः पूर्ववत्सम्पूज्य प्राचीक्रमेण—ॐ जयायै नमः॥ १॥ ॐ विजयायै नमः॥ २॥ ॐ भद्रायै नमः॥ ३॥ ॐ भद्रकाल्यै नमः॥ ४॥ ॐ सुमुख्यै नमः॥ ५॥ ॐ दुर्मुख्यै नमः॥ ६॥ ॐ ॐ व्याघ्रमुख्यै नमः॥ ७॥ ॐ सिंहमुख्यै नमः॥ ८॥ मध्ये—ॐ दुर्गायै नमः॥ ९॥ इति नवपीठशक्तीः पूजयेत्। ततः 'ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट् नमः' इति मन्त्रेणासनं दत्त्वा तत्र मूलेन मूर्तिं प्रकल्प्य तस्यां देवतामावाह्य पाद्यादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्य्यात्।

तद्यथा—षट्कोणे आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च पूर्वोक्तहृदयादिषडङ्गानि पूजयेत्। तद्बाह्येऽष्टदले प्राचीक्रमेण—ॐ जातवेदसे नमः॥ १॥ ॐ सप्तजिह्वाय नमः॥ २॥ ॐ हव्यवाहनाय नमः॥ ३॥ ॐ अश्वोदरजाय नमः॥ ४॥ ॐ वैश्वानराय नमः॥ ५॥ ॐ कौमारतेजसे नमः॥ ६॥ ॐ विश्वमुखाय नमः॥ ७॥ ॐ देवमुखाय नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्।

ततः पूर्वादिचतुर्दिक्षु—ॐ पृथिव्यै नमः॥ १॥ ॐ अद्भ्यो नमः॥ २॥ ॐ वायवे नमः॥ ३॥ ॐ आकाशाय नमः॥ ४॥ इति सम्पूज्य कोणदलाग्रेषु—ॐ निवृत्त्यै नमः॥ ५॥ ॐ प्रतिष्ठायै नमः॥ ६॥ ॐ शान्त्यै नमः॥ ७॥ ॐ शान्त्यतीतायै नमः॥ ८॥ इति पूजयेत्। ततः पूर्वादिचतुर्दिक्षु प्रदक्षिणक्रमेण एकादशैकादशशक्तयः पूज्यास्तद्यथा पूर्वे—ॐ जाग्रतायै नमः॥ १॥ ॐ तपन्यै नमः॥ २॥ ॐ वेदगर्भायै नमः॥ ३॥ ॐ दहनरूपिण्यै नमः॥ ४॥ ॐ सेन्दुखण्डायै नमः॥ ५॥ ॐ अशुभहन्त्र्यै नमः॥ ६॥ ॐ नभश्चारिण्यै नमः॥ ७॥ ॐ वागीश्वर्यै नमः॥ ८॥ ॐ मदवहायै नमः॥ ९॥ ॐ सोमरूपायै नमः॥ १०॥ ॐ मनोजवायै नमः॥ ११॥ इति पूजयेत्।

ततो दक्षिणे—ॐ मरुद्वेगायै नमः॥ १॥ ॐ रात्रिसंज्ञायै नमः॥ २॥ ॐ तीव्रकोपायै नमः॥ ३॥ ॐ यशोवत्यै नमः॥ ४॥ ॐ तोयात्मिकायै नमः॥ ५॥ ॐ नित्यायै नमः॥ ६॥ ॐ दयावत्यै नमः॥ ७॥ ॐ हारिण्यै नमः॥ ८॥ ॐ तिरस्क्रियायै नमः॥ ९॥ ॐ वेदमात्रे नमः॥ १०॥ ॐ तत्परायै नमः॥ ११॥ इति पूजयेत्।

पश्चिमे—ॐ मदनप्रियायै नमः॥ १॥ ॐ समाराध्यै नमः॥ २॥ ॐ नन्दिन्यै नमः॥ ३॥ ॐ रिपुमर्दिन्यै नमः॥ ४॥ ॐ षष्ठ्यै नमः॥ ५॥ ॐ दण्डिन्यै नमः॥ ६॥ ॐ तिग्मायै नमः॥ ७॥ ॐ दुर्गायै नमः॥ ८॥ ॐ गायत्र्यै नमः॥ ९॥ ॐ निरवद्यायै नमः॥ १०॥ ॐ विशालाक्ष्यै नमः॥ ११॥ इति पूजयेत्।

उत्तरे—ॐ श्वासोद्वाहायै नमः॥ १॥ ॐ वनादिन्यै नमः॥ २॥ ॐ वेदनायै नमः॥ ३॥ ॐ वह्निगर्भायै नमः॥ ४॥ ॐ सिंहवाहायै नमः॥ ५॥ ॐ धुर्यायै नमः॥ ६॥ ॐ दुर्विषहायै नमः॥ ७॥ ॐ गिरंसायै नमः॥ ८॥ ॐ तापहारिण्यै नमः॥ ९॥ ॐ त्यक्तदोषायै नमः॥ १०॥ ॐ निस्सपत्नायै नमः॥ ११॥ इति पूजयेत्।

ततो भूपुरे पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादीन् दशदिक्पालान् तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च पूजयेत्। एवमावरणपूजां कृत्वा धूपादिनमस्कारान्तं सम्पूज्य यथाविधि जपं कुर्यात्।

पीठपूजा—(सर्वतोभद्रमण्डल में षट्कोणाङ्कित कर्णिका में वक्ष्यमाण पीठ देवी का पूजन करे।) 'मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः' कहकर पीठ का पूजन कर मूलोक्त 'ॐ जयायै नमः' इत्यादि ९ मन्त्रों से

नौ पीठशक्तियों की पूजा करे। फिर 'ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट् नमः' इस मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर उसमें देवताओं का आवाहन कर पाद्यादि पुष्पान्त उपचारों से पूजा कर आवरण-पूजा करनी चाहिये।

आवरणपूजा—षट्कोण में आग्नेयादि कोणकेसरों में, मध्य में तथा दिशाओं में पूर्वोक्त हृदयादि छः अङ्गों का पूजन कर उसके बाहर अष्टदल कमल में प्राचीक्रम से 'ॐ जातवेदसे नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर पूर्वादि दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से 'ॐ पृथिव्यै नमः' इत्यादि चार मन्त्रों से पूजा करे। फिर कोणों के दलाग्रों में 'ॐ निवृत्त्यै नमः' इत्यादि शेष मन्त्रों से पूजा करे। फिर पूर्वादि दिशाओं में प्रदक्षिणक्रम से प्रत्येक दिशा की ग्यारह-ग्यारह शक्तियों की पूजा पूर्व में 'ॐ जागृतायै नमः' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से एक साथ एक स्थान पर पूजा करे। फिर दक्षिण में 'ॐ मरुद्वेगायै नमः' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से पूजा करे। फिर पश्चिम में 'ॐ मदनप्रियायै नमः' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से पूजा करके उत्तर में 'ॐ श्वासोद्वाहायै नमः' इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से पूजा करे। फिर भूपुर में पूर्वादिक्रम से इन्द्रादि दश दिक्पालों को उनके नाममन्त्रों से इस प्रकार पूजे—'ॐ इन्द्राय नमः, ॐ अग्नये नमः, ॐ यमाय नमः, ॐ निर्ऋतये नमः, ॐ वरुणाय नमः, ॐ वायवे नमः, ॐ सोमाय नमः, ॐ ईशानाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः तथा ॐ अनन्ताय नमः' यह दश दिक्पालों का पूजन होता है। पुनः उनके समीप उनके आयुधों का इस प्रकार पूजन करना चाहिये—'ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ ध्वजाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ त्रिशूलाय नमः, ॐ पद्माय नमः तथा ॐ चक्राय नमः'। इस प्रकार आवरण-पूजा करके धूपादि नमस्कारान्त पूजा सम्पन्न कर यथाविधि जप प्रारम्भ करे।

अस्य पुरश्चरणं चतुश्चत्वारिंशत्सहस्र ४४००० जपः। तथा च शारदायाम्—

मन्त्रवर्णसहस्राणि जपेन्मन्त्रं विशालधीः। तदन्ते तिलसिद्धार्थचित्रमूलैः समिद्वरैः॥
क्षीरद्रुमाणामाज्येन हविषान्नैर्घृतान्वितैः। चतुश्चत्वारिंशदाढ्यं चतुःशतसमन्वितम्॥
चतुःसहस्रं जुहुयादर्चिते हव्यवाहने। इत्थं जपादिभिः सिद्धे मन्त्रेऽस्मिन्साधकोत्तमः॥

इति शारदातिलकोक्तं जातवेदोमन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम्।

पुरश्चरण—इसका पुरश्चरण चौवालीस सहस्र मन्त्रों से होता है; जैसा कि शारदातिलक नामक तन्त्रग्रन्थ में वर्णित है—जितने मन्त्र के अक्षर हैं, उतने सहस्र जप को विशाल बुद्धि साधक को जपना चाहिये। उसके अन्त में काले तिल, सफेद सरसों, चित्रक की जड़, क्षीरीवृक्षों (वट, पीपल, पाकर, गूलर, जामुन, आम आदि) की समिधाओं से होम करना चाहिये। होम की संख्या चौवालीस सौ होनी चाहिये। घृत तथा हविष्यान्न का प्रयोग भी हवन में करना चाहिये। (इसके साथ तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मणभोजन भी दशांश के अनुपात में कराना आवश्यक है)। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

ज्वरहरणाऽपामार्जनस्तोत्रम्

महादेव उवाच—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि अपामार्जनमुत्तमम्। पुलस्त्येन यथोक्तं तु दालभ्याय महात्मने॥ १॥
सर्वेषां रोगदोषाणां नाशनं मङ्गलप्रदम्। तत्तेऽहं तु प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं नगनन्दिनि॥ २॥

ज्वर अपामार्जनस्तोत्र—श्रीमहादेव जी बोले—अब मैं उत्तम अपामार्जन कहता हूँ, जिसे पुलस्त्य ऋषि ने महात्मा दाल्भ्य को बताया था। यह सभी रोगदोषों को दूर कर मङ्गल करने वाला है। हे पार्वति! उसे तुम सुनो॥ १-२॥

श्रीदाल्भ्य उवाच—

भगवान्प्राणिनः सर्वे विषरोगाद्युपद्रवैः। कुष्ठग्रहाभिभूताश्च सर्वकाले ह्युपद्रुताः॥ ३॥
अभिचारिककृत्याद्या बहुरोगाश्च दारुणाः। न भवन्ति मुनिश्रेष्ठ तन्मे त्वं वक्तुमर्हसि॥ ४॥

श्री दाल्भ्य बोले—हे भगवन्! सभी प्राणी सर्वकाल में विष, रोग, कुष्ठ तथा ग्रह (भूत-प्रेतादि) के उपद्रवों से पीड़ित रहते हैं। कृत्या आदि अभिचार कृत्यों, बहुत से दारुण रोगों से पीड़ित होते हैं; उन्हें ये पीड़ाएँ न हों, ऐसा उपाय आप बताइये॥ ३-४॥

पुलस्त्य उवाच—

व्रतोपवासनियमैर्विष्णुर्वै तोषितस्तु यैः। ते नरा नैव रोगार्ता जायन्ते मुनिसत्तम॥ ५॥
यैर्न कृतं व्रतं पुण्यं न दानं न तपस्तदा। न तीर्थं देवपूजां च नान्नं दत्तं तु भूरिशः॥ ६॥
ते वै लोकास्तदा ज्ञेया रोगदोषैः प्रपीडिताः। आरोग्यं परमामृद्धिं मनसा यद्यदिच्छति॥ ७॥
तत्तदाप्नोत्यसन्दिग्धं विष्णोः सेवी विशेषतः। नाधिं प्राप्नोति न व्याधिं न विषग्रहबन्धनम्॥ ८॥
कृत्यास्पर्शभयं नापि तोषिते मधुसूदने। समस्तदोषनाशश्च सर्वदा च शुभा ग्रहाः॥ ९॥
देवानामप्यधृष्योऽसौ तोषिते च जनार्दने। यः सर्वेषु च भूतेषु यथात्मनि तथा परे॥ १०॥
उपवासादिना तेन तोषितो मधुसूदनः। तोषिते तत्र जायन्ते नराः पूर्णमनोरथाः॥ ११॥
अरोगाः सुखिनो भोगभोक्तारो मुनिसत्तम। तेषां च शत्रवो नैव न च रोगाभिचारिकम्॥ १२॥
ग्रहरोगादिकं चैव पापकार्यं न जायते। अव्याहतानि कृष्णस्य चक्रादीन्यायुधानि वै॥ १३॥
रक्षन्ति सकलापद्भ्यो येन विष्णुरुपासितः।

पुलस्त्य जी बोले—जो लोग व्रत-उपवास-नियम आदि से विष्णु को तुष्ट करते हैं, हे मुनिसत्तम! वे लोग रोगों से पीड़ित नहीं होते हैं। जिसके द्वारा व्रत-दान-पुण्य-तप-तीर्थाटन-पूजा तथा अन्नदान आदि में से कुछ नहीं किया गया होता है, वे ही लोग रोग-दोषों से पीड़ित होते हैं; परन्तु जो लोग भगवान् की आराधना तथा व्रतादि करते हैं, उन्हें व्याधि, विष, ग्रह, बन्धन आदि का कष्ट नहीं होता है। उनको आरोग्य, समृद्धि आदि जिस-जिस पदार्थ की कामना मन से होती है, वे-वे सब उन्हें प्राप्त होते हैं। विष्णुसेवी को आधि-व्याधि, कृत्या आदि का कोई भय नहीं होता है। उन मधुसूदन को तुष्ट करने वालों के समस्त दोषों का नाश हो जाता है तथा ग्रह सदैव शुभ रहते हैं। जनार्दन के तुष्ट होने पर वह देवताओं से भी पराभूत नहीं होता है। जो उपवासादि से मधुसूदन को तुष्ट करता है, उससे उसके मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। वे लोग निरोगी, सुखी, भोग भोगने वाले हो जाते हैं। हे मुनिश्रेष्ठ! उनको न तो शत्रुभय होता है, न ही अभिचार कर्म का भय होता है। वह न पाप कर्म करते हैं और न उन्हें ग्रह तथा रोगों से पीड़ा होती है। उनकी रक्षा कृष्ण के चक्र आदि आयुध अव्याहत रूप से करते रहते हैं। जिसके द्वारा विष्णु की उपासना होती है, उसकी सम्पूर्ण आपदाओं से रक्षा होती है॥ ५-१३॥

श्रीदाल्भ्य उवाच—

अनाराधितगोविन्दा ये नरा दुःखभागिनः। तेषां दुखाभिभूतानां यत्कर्तव्यं दयालुभिः॥ १४॥
पश्यद्भिः सर्वभूतस्थं वासुदेवं सनातनम्। समदृष्टिभिरप्यत्र तन्मे ब्रूहि विशेषतः॥ १५॥

दाल्भ्य बोले—जो लोग गोविन्द की आराधना नहीं करते हैं, वे दुःख के भागी होते हैं। उनके दुःखपीड़ित होने पर दयालु महापुरुषों ने सभी प्राणियों के लिये वासुदेव सनातन को देखते हुए समदृष्टि होकर जो उपाय बताये हैं, उनको मुझसे कहो॥ १४-१५॥

श्रीपुलस्त्य उवाच—

तद्वक्ष्यामि मुनिश्रेष्ठ समाहितमनाः शृणु। रोगदोषाशुभहरं विज्वरादिविनाशनम्॥ १६॥
शिखायां श्रीधरं न्यस्य शिखाधः श्रीकरं तथा। हृषीकेशं तु केशेषु मूर्ध्नि नारायणं परम्॥ १७॥
ऊर्ध्वश्रोत्रे न्यसेद्विष्णुं ललाटे जलशायिनम्। विभुं वै भ्रूयुगे न्यस्य भ्रूमध्ये हरिमेव च॥ १८॥
नरसिंहं नासिकाग्रे कर्णयोरर्णवेशयम्। चक्षुषोः पुण्डरीकाक्षं तदधो भूधरं न्यसेत्॥ १९॥
कपोलयोः कल्किनाथं वामनं कर्णमूलयोः। शङ्खिनं शङ्खयोर्न्यस्य गोविन्दं वदने तथा॥ २०॥
मुकुन्दं दन्तपंक्तौ तु जिह्वायां वाक्पतिं तथा। रामं हनौ तु विन्यस्य कण्ठे वैकुण्ठमेव च॥ २१॥
बलघ्नं बाहुमूलाधश्चांसयोः कंसघातिनम्। अजं भुजद्वये न्यस्य शार्ङ्गपाणिं करद्वये॥ २२॥
सङ्कर्षणं कराङ्गुष्ठे गोपमङ्गुलिपङ्क्तिषु। वक्षस्यधोक्षजं न्यस्य श्रीवत्सं तस्य मध्यतः॥ २३॥
स्तनयोस्त्वनिरुद्धं च दामोदरमथोदरे। पद्मनाभं तथा नाभौ नाभ्यधश्चापि केशवम्॥ २४॥
मेढ्रे धराधरं देवं गुदे चैव गदाग्रजम्। पीताम्बरधरं कट्यामूरुयुग्मे मधोर्द्विषम्॥ २५॥
मुरद्विषं पिण्डिकयोर्जानुयुग्मे जनार्दनम्। फणीशं गुल्फयोर्न्यस्य पादयोश्च त्रिविक्रमम्॥ २६॥
पादाङ्गुष्ठे श्रीपतिं च पादाधो धरणीधरम्। रोमकूपेषु सर्वेषु विष्वक्सेनं न्यसेद्बुधः॥ २७॥
मत्स्यं मांसे तु विन्यस्य कूर्मं मेदसि विन्यसेत्। वाराहं तु वसामध्ये सर्वास्थिषु तथाच्युतम्॥ २८॥
द्विजप्रियं तु मज्जायां शुक्रे श्वेतपतिं तथा। सर्वाङ्गे यज्ञपुरुषं परमात्मानमात्मनि॥ २९॥

पुलस्त्य बोले—हे मुनिश्रेष्ठ! समाहित मन से सुनो। जो रोग-दोष का उपशमन, ज्वर आदि का विनाशन है, उसे सुनो। शिखा में श्रीधर का न्यास कर शिखा के नीचे श्रीकर का न्यास करे। केशों में हृषीकेश का तथा शिर में नारायण का, कानों से ऊपर विष्णु का, ललाट में जलशायी का, भौंहों में विभु का, भ्रूमध्य में हरि का न्यास करना चाहिये। नरसिंह को नासिका के अग्रभाग में, कर्णों में अर्णवशायी (बालमुकुन्द) का, नेत्रों में पुण्डरीकाक्ष का और उनके नीचे भूधर का न्यास करे। कपोलों में कल्किनाथ, कर्णमूलों में वामन, शङ्खप्रदेशों में शङ्खी तथा मुख में गोविन्द का न्यास करे। दन्तपङ्क्ति में मुकुन्द, जिह्वा में वाक्पति, हनु में राम का न्यास करे तथा कण्ठ में वैकुण्ठ का, बाहुमूल के नीचे बलघ्न का, कन्धों में कंसघाती का, दोनों भुजाओं में अज का न्यास करे। दोनों हाथों में शार्ङ्गपाणि का, कराङ्गुष्ठ में सङ्कर्षण का, अंगुलियों की पङ्क्ति में गोप का, वक्ष में अधोक्षज का तथा उसके मध्य में श्रीवत्स का न्यास करना चाहिये। दोनों स्तनों में अनिरुद्ध का, उदर में दामोदर का, नाभि में पद्मनाभ का, नाभि के नीचे केशव का, मेढ्र में धराधर का, गुदा में गदाग्रज का, कटि में पीताम्बरधर का, दोनों ऊरुओं में मधुद्वेषी का, दोनों पिण्डलियों में मुरद्वेषी का, दोनों घुटनों में जनार्दन का, दोनों गुल्फों में फणीश का तथा दोनों पैरों में त्रिविक्रम का न्यास करना चाहिये। पैरों के अङ्गूठों में पैरों के नीचे धरणीधर का, सभी रोमकूपों में बुद्धिमान् विष्वक्सेन का

न्यास करना चाहिये। मत्स्य को मांस में विन्यस्त कर कूर्म को मेद धातु में न्यास करना चाहिये। वसा में वराह का तथा सभी अस्थियों में अच्युत का न्यास करना चाहिये। द्विजप्रिय का मज्जा में, शुक्र में श्वेतपति का तथा अपने शरीर के सर्वाङ्ग में परमात्मा यज्ञपुरुष का न्यास करना चाहिये॥ १६-२९॥

एवं न्यासविधिं कृत्वा साक्षान्नारायणो भवेत्। यावन्न व्याहरेत्किञ्चित्तावद्विष्णुमयः स्थितः॥ ३०॥
गृहीत्वा तु समूलाग्रान्कुशाञ्शुद्धान्समाहितः। मार्जयेत्सर्वगात्राणि कुशाग्रैरिह शान्तिकृत्॥ ३१॥
विष्णुभक्तो विशेषेण रोगग्रहविषार्दिते। विषार्तानां रोगिणां च कुर्याच्छान्तिमिमां शुभाम्॥ ३२॥
जायते तेन भो विप्र सर्वरोगप्रणाशनम्। नमः श्रीपरमार्थाय पुरुषाय महात्मने॥ ३३॥
अरूपबहुरूपाय व्यापिने परमात्मने। वाराहं नारसिंहं च वामनं च सुखप्रदम्॥ ३४॥
ध्यात्वा कृत्वा नमो विष्णोर्नामान्यङ्गेषु विन्यसेत्। निष्कल्मषाय शुद्धाय व्याधिपापहराय वै॥ ३५॥
गोविन्दपद्मनाभाय वासुदेवाय भूभृते। नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः॥ ३६॥
त्रिविक्रमाय रामाय वैकुण्ठाय नराय च। श्रीवाराहनृसिंहाय वामनाय महात्मने॥ ३७॥
हयग्रीवाय शुभ्राय हृषीकेशं हराशुभम्। परोपतापमहितं प्रयुक्तं चाभिचारिकम्॥ ३८॥
गरस्पर्शमहारोगप्रयोगं जरया जर। नमोऽस्तु वासुदेवाय नमः कृष्णाय खड्गिने॥ ३९॥
नमः पुष्करनेत्राय केशवायादिचक्रिणे। नमः किञ्जल्कवर्णाग्र्यपीतनिर्मलवाससे॥ ४०॥
महादेववपुष्कन्धधृतचक्राय चक्रिणे। दंष्ट्रोद्धृतक्षितितलत्रिमूर्तिपतये नमः॥ ४१॥
महायज्ञवराहाय श्रीवल्लभ नमोऽस्तु ते। तप्तहाटककेशान्तज्वलत्पावकलोचन ॥ ४२॥
वज्राधिकनखस्पर्शदिव्यसिंह नमोऽस्तु ते। कश्यपायातिह्रस्वाय ऋग्यजुःसामलक्षण॥ ४३॥
तुभ्यं वामनरूपाय क्रमते गां नमोनमः। वाराहाशेषदुःखानि सर्वपापफलानि च॥ ४४॥
मर्द्दमर्द्द महादंष्ट्र मर्दमर्द च तत्फलम्। नृसिंह कुलिशस्पर्शदन्तप्रान्तनखोज्ज्वल॥ ४५॥
भञ्जभञ्ज निनादेन दुःखान्यस्यार्त्तिनाशन। ऋग्यजुःसामभिर्वाग्भिः कामरूपधराद्रिधृक्॥ ४६॥

इस प्रकार से न्यास करके साधक साक्षात् नारायण हो जाता है। जब तक वह आसन से उठता नहीं है, तब तक उसे विष्णुमय होकर ही स्थित रहना चाहिये। शुद्ध चित्त से समूलाग्र कुशाओं को हाथ में लेकर अपने सम्पूर्ण शरीर का मार्जन कुशाग्र से करके शान्तिलाभ प्राप्त करना चाहिये। विशेष रूप से जो विष्णुभक्त है, उसे रोग-ग्रह-विष आदि से पीड़ित होने पर उनके लिये इस शुभ-शान्ति कर्म को करना चाहिये, जिससे हे विप्र! सर्वरोगों का प्रशमन हो जाय। श्री परमार्थपुरुष महात्मा को नमस्कार है। अरुण होकर भी बहुरूप तथा व्यापी परमात्मा का, वाराह का, नृसिंह का तथा सुखप्रद वामन का ध्यान करके नमस्कार करके उनके नामों का अपने शरीराङ्गों में विन्यास करना चाहिये, जो कि निष्पाप, शुद्ध, व्याधिहर तथा पापहर हैं। गोविन्द, पद्मनाभ, भूभृत् वासुदेव को नमस्कार करके मैं कह रहा हूँ, जिससे मेरी वाणी सिद्ध हो। त्रिविक्रम को, राम को, नर को, वाराह को, नृसिंह को, महात्मा वामन को, हयग्रीव को, शुभ्र को, हृषीकेश को, जो कि अशुभ को हरने वाले, परोपताप, अहितकर अभिचार आदि से मुक्त करने वाले हैं; गर विष का स्पर्श, महारोग का प्रयोग—इनसे तथा जरा से अजर करने वाले वासुदेव कृष्ण खड्गधारी को नमस्कार है। पुष्करनेत्र को नमस्कार है, चक्रधारी केशव को नमस्कार है। किञ्जल्क वर्ण वाले को नमस्कार है, पीतवर्ण निर्मल वस्त्रधारी को नमस्कार है। महादेव शरीर वाले, स्कन्ध पर चक्र धारण करने वाले, दंष्ट्राओं से पृथ्वी का उद्धार करने वाले त्रिमूर्तिपति को नमस्कार है। हे महायज्ञ वराह, श्री वल्लभ! तुम्हें नमस्कार है, हे तप्त स्वर्ण के समान केशान्त वाले, ज्वलिताग्नि के समान नेत्रों वाले, वज्र से भी अधिक कराल नखों

के स्पर्श वाले दिव्य सिंह! आपको नमस्कार है। कश्यप, अतिह्रस्व ऋग्यजु:साम के लक्षणों वाले वामनरूप होकर भी पृथ्वी को मापने वाले को नमस्कार है, नमस्कार है। हे वराह! आप मेरे अशेष दु:खों का तथा सभी पापफलों का मर्दन करो, मर्दन करो। हे महादंष्ट्र! उन पापों के फलों को मर्दित कर दो, मर्दित कर दो। हे नृसिंह! वज्र के समान स्पर्श वाले, दाँत, नख, दन्तधार तथा उज्ज्वल नखों वाले! अपनी गर्जना से दु:खों एवं पीड़ाओं भञ्जित कर दो, भञ्जित कर दो। आप ऋग्यजु:साम की वाणी के द्वारा इच्छानुसार रूपधारी तथा गोवर्धनधारी हैं॥ ३०-४६॥

प्रशमं सर्वदु:खानि नय त्वस्य जनार्दन। ऐकाहिकं द्व्याहिकं च तथा त्रिदिवसज्वरम्॥ ४७॥
चातुर्थिकं तथात्युग्रं तथा वै सततज्वरम्। दोषोत्थं सन्निपातोत्थ तथैवागन्तुकज्वरम्॥ ४८॥
शमं नयतु गोविन्दो भित्त्वा छित्त्वास्य वेदिनाम्। नेत्रदु:खं शिरोदु:खं दु:खं तूदरसम्भवम्॥ ४९॥
अनुच्छ्वासं महाश्वासं परितापं सवेपथुम्। गुदघ्राणांघ्रिरोगांश्च कुष्ठरोगं तथा क्षयम्॥ ५०॥
कमलादींस्तथा रोगान् प्रमेहादींश्च दारुणान्। ये वातप्रभवा रोगा लूताविस्फोटकादय:॥ ५१॥
ते सर्वे विलयं यान्तु वासुदेवापमार्जिता:। विलयं यान्ति ते सर्वे विष्णोरुच्चारणेन वा॥ ५२॥
क्षयं गच्छन्तु चाशेषास्ते चक्राभिहता हरे:। अच्युतानन्तगोविन्दनामोच्चारणभेषजात् ॥ ५३॥
नश्यन्ति सकला रोगा: सत्यं सत्यं वदाम्यहम्। स्थावरं जङ्गमं यच्च कृत्रिमं चापि यद्विषम्॥ ५४॥
दन्तोद्भवं नखोद्भूतमाकाशाप्रभवं च यत्। भूतादिप्रभवं यच्च विषमत्यन्तदु:सहम्॥ ५५॥
शमं नयतु तत्सर्वं कीर्तितोऽस्य जनार्दन:।

हे जनार्दन! समस्त दु:खों का हरण का उनका शमन कर दो। एकाहिक ज्वर, द्व्याहिक ज्वर, त्र्याहिक ज्वर, अत्युग्र चातुर्थिक ज्वर, सन्तत ज्वर, एकदोषज, द्विदोषज, त्रिदोषज तथा आगन्तुक ज्वर को हे गोविन्द! शान्त कर दो तथा इसकी वेदना का छेदन-भेदन कर दो। नेत्रदु:ख, शिरोदु:ख, उदरशूल, अनुच्छ्वास, महाश्वास, परिताप (जलन), वेपथु (कँपकँपी), गुदरोग, नासारोग, पैरों के रोग, कुष्ठरोग, क्षयरोग, कामला आदि रोगों; दारुण प्रमेहों, वातरोगों, लूता (मकड़ी), स्फोट (फोटे) आदि सभी रोग वासुदेव के द्वारा अपमार्जित होकर विलीन हो जायँ। वे सब विष्णु के उच्चारण से विलीन हो जायँ। शेष जितने भी रोग हैं, वे श्रीहरि के चक्र से नष्ट हो जायँ। अच्युत, अनन्त तथा गोविन्द के नामोच्चारणरूपी भेषज से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, यह मैं सत्य कहता हूँ। स्थावर विष, जङ्गम विष तथा कृत्रिम विष, दाँतों का विष, नाखूनों का विष, आकाश से वर्षा हुआ विष, भूतादि द्वारा प्रेषित विष, जो भी अत्यन्त विषम तथा दु:स्सह विष हैं, वह सब जनार्दन के नाम-गुणकीर्तन से शान्त हो जायँ॥ ४७-५५॥

ग्रहान् प्रेतग्रहांश्चैव तथान्याच्छाकिनीग्रहान्॥ ५६॥
मुखमण्डलिकान् क्रूरान् रेवतीं वृद्धिरेवतीम्। वृद्धिकाख्यान्ग्रहांश्चोग्रांस्तथा मातृग्रहानपि॥ ५७॥
बालस्य विष्णोश्चरितं हेतुं बालग्रहानपि। वृद्धानां ये ग्रहा केचिद्बालानां चापि ये ग्रहा:॥ ५८॥
नृसिंहदर्शनादेव नश्यन्ते तत्क्षणादपि। दंष्ट्राकरालवदनो नृसिंहो दैत्यभीषण:॥ ५९॥
तं दृष्ट्वा ते ग्रहा: सर्वे दूरं यान्ति विशेषत:। श्रीनृसिंह महासिंह ज्वालामालोज्ज्वलानन॥ ६०॥
ग्रहानशेषान्सर्वेश नुद स्वास्यविलोचन। ये रोगा ये महोत्पाता ये द्विषो ये महाग्रहा:॥ ६१॥
यानि च क्रूरभूतानि ग्रहपीडाश्च दारुणा:। शस्त्रक्षतेषु ये रोगा ज्वालगर्दभिकादय:॥ ६२॥
विस्फोटकादयो ये च ग्रहा गात्रेषु संस्थिता:। त्रैलोक्यरक्षाकर्त्तस्त्वं दुष्टदानववारण॥ ६३॥
सुदर्शनमहातेजश्छिन्धि छिन्धि महाज्वरम्। छिन्धि वातं च लूतां च छिन्धि घोरं महाविषम्॥ ६४॥
उद्दण्डामरशूलं च विषज्वालासगर्दभम्। ॐ ह्रांह्रांह्रूंह्रूं प्रधारेण कुठारेण हन द्विष:॥ ६५॥

ग्रह, प्रेतग्रह, अन्य शाकिनी आदि ग्रह, मुखमण्डलिका ग्रह, क्रूर रेवती आदि जो बालकों को पीड़ित करने वाले ग्रह हैं, वे सब नृसिंह के दर्शनमात्र से ही उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं। भीषण दैत्य भी दंष्ट्रा कराल मुख वाले नृसिंह को देखकर तथा वे ग्रह भी उनको देखकर दूर से ही पलायन कर जाते हैं। बूढ़ों के ग्रह, मातृगृह, वृद्धिकाख्य ग्रह—ये सभी भाग जाते हैं। श्री नृसिंह महासिंह ज्वालाओं की माला से उज्ज्वल आनन वाले हे सर्वेश! अपनी दृष्टि से इन सभी ग्रहों को भस्म कीजिये। जो रोग हैं, महान् उत्पात हैं; जो शत्रु हैं, जो महाग्रह हैं, जो क्रूर भूत-प्रेतों की दारुण पीड़ा हैं, शस्त्र के घाव से जो रोग उत्पन्न होते हैं, ज़ालगर्दभिका आदि रोग, विस्फोट आदि, जो ग्रह शरीर में स्थित हैं, आप तीनों लोकों के रक्षक तथा दुष्ट दानवों का निवारण करने वाले हैं। हे सुदर्शन महातेजस्वी! आप महाज्वर को काट दो, काट दो, वातरोग को काट दो, लूता (मकड़ी के विष) को काट दो, घोर महाविष को काट दो, उद्दण्डामरशूल, विषज्वाला, ज्वालागर्दभ, ॐ ह्रां ह्रां ह्रूं ह्रूं तेज धार के कुठार से वैरियों को मार दो॥ ५६-६५॥

ॐ नमो भगवते सुदर्शनाय दुःखदारणविग्रह। यानि चान्यानि दुष्टानि प्राणिपीडाकराणि वै॥ ६६॥
तानि सर्वाणि सर्वात्मा परमात्मा जनार्द्दनः। किञ्चिद्रूपं समास्थाय वासुदेव नमोऽस्तु ते॥ ६७॥
क्षिप्त्वा सुदर्शनं चक्रं ज्वालामालाविभीषणम्। सर्वदुष्टोपशमनं कुरु देववराच्युत॥ ६८॥
सुदर्शन महाचक्र गोविन्दस्य वरायुध। तीक्ष्णधार महावेग सूर्यकोटिसमद्युते॥ ६९॥
सुदर्शन महाज्वाल छिन्धि छिन्धि महारव। सर्वदुःखानि रक्षांसि पापानि च विभीषण॥ ७०॥
दुरितं हन चारोग्यं कुरु त्वं भो सुदर्शन। प्राच्यां चैव प्रतीच्यां च दक्षिणोत्तरतस्तथा॥ ७१॥
रक्षां करोतु विश्वात्मा नरसिंहः स्वगर्जितैः। भूम्यन्तरिक्षे च तथा पृष्ठतः पार्श्वतोग्रतः।
रक्षां करोतु भगवान् बहुरूपी जनार्दनः॥ ७२॥
यथा विष्णुमयं सर्वं सदेवासुरमानुषम्। तेन सत्येन सकलं दुःखमस्य प्रणश्यतु॥ ७३॥
यथा योगेश्वरो विष्णुः सर्ववेदेषु गीयते। तेन सत्येन सकलं दुःखमस्य प्रणश्यतु॥ ७४॥
परमात्मा यथा विष्णुर्वेदाङ्गेषु च गीयते। तेन सत्येन विश्वात्मा सुखदोऽस्त्वस्य केशवः॥ ७५॥
शान्तिरस्तु शिवं चास्तु प्रणाशं यातु चासुखम्। वासुदेवशरीरोत्थैः कुशैः सम्मार्जितं मया॥ ७६॥
अपामार्जित गोविन्द नमो नारायणस्तथा। तथापि सर्वदुःखानां प्रशमो वचनाद्धरेः॥ ७७॥
शान्ताः समस्तदोषास्ते ग्रहाः सर्वे विषाणि च। भूतानि च प्रशाम्यन्ति संस्मृते मधुसूदने॥ ७८॥
एते कुशा विष्णुशरीरसम्भवा जनार्दनोऽहं स्वयमेव जाग्रतः।
हतं मया दुःखमशेषमस्य वै स्वस्थो भवत्वेष वचो यथा हरेः॥ ७९॥
शान्तिरस्तु शिवं चास्तु दुःखं च यत् प्रणश्यतु। यदस्य दुरितं किञ्चित्क्षिप्तं तल्लवणाम्भसि॥ ८०॥
स्वास्थ्यमस्य सदैवास्तु हृषीकेशस्य कीर्त्तनात्। यद्योतोत्रागतं पापं तत्तु तत्र प्रगच्छतु॥ ८१॥

हे भगवन् सुदर्शन! जो दुःख के दारण करने वाले हैं, जो अन्य पीड़ाकारक दुष्ट प्राणी हैं, उन सबको हे परमात्मा जनार्दन! आप किसी भी रूप में स्थित होकर नष्ट कर दो। हे वासुदेव! आपको नमस्कार है। ज्वालामाल-विभूषण सुदर्शन चक्र को फेंककर हे देवश्रेष्ठ अच्युत! सभी दुष्टों का प्रशमन कर दो। हे महाचक्र, गोविन्द के श्रेष्ठ आयुध, तीक्ष्ण धार, महावेग तथा करोड़ों सूर्य के समान आभा वाले सुदर्शन, महाज्वाला तथा महारव करने वाले!

सभी भयदायक महापापों, राक्षसों को काट दो-काट दो। दुरितों को समाप्त करो तथा आरोग्य को प्राप्त कराओ। हे सुदर्शन! आप पूर्व से, पश्चिम से, दक्षिण से तथा उत्तर से पापों को नष्ट करो। हे विश्वात्मा नृसिंह! आप अपनी गर्जना से रक्षा करो। भूमि में, अन्तरिक्ष में, पीछे से, आगे से, बहुरूपी जनार्दन भगवान् रक्षा करो। जिस प्रकार से देव, असुर, मानव सबमें विष्णु का निवास है, इसी सत्य से इस रोगी के भी दुःख नष्ट हों। जिस प्रकार योगेश्वर विष्णु की महिमा का गान सभी देवों द्वारा किया जाता है, उस सत्य के द्वारा हे विश्वात्मा केशव! आप इस (पीड़ित) के लिये सुखदायी हों। शान्ति हो, कल्याण हो तथा असुख का नाश हो। मेरे द्वारा वासुदेव के शरीर से उत्पन्न कुशों के द्वारा मार्जन करने से हे अपमार्जित गोविन्द नमोनारायण मेरे वचन से हे हरि सर्वदुःखों का प्रशमन हो जाय। जितने भी दोष हैं, पीड़ाकारक ग्रह हैं, जितने भी विष हैं, हानिकर प्राणी हैं; वे सभी मधुसूदन के स्मरण से शान्त हो जाते हैं। ये कुश विष्णु के शरीर से उत्पन्न हैं तथा मैं स्वयमेव जनार्दन आगे स्थित हूँ। अतः इस रोगी के सभी दुःख शान्त हो जायँ, यह वाणी भगवान् के सत्य होने की भाँति ही सत्य हो। शान्ति हो, कल्याण हो, जो भी दुःख हो, वह नष्ट हो। इस रोगी के जो कुछ भी दुःख हों, वे सब समुद्र में गिर जायँ भगवान् के कीर्तन से सदैव इसका स्वास्थ्य बना रहे और जहाँ-जहाँ से पाप आया हो, वहाँ-वहाँ चला जाय॥ ६६-८१ ॥

एतद्रोगेषु पीडासु जन्तूनां हितमिच्छुभिः। विष्णुभक्तैश्च कर्तव्यमपामार्जनकं परम्॥ ८२॥
अनेके सर्वदुःखानि विलयं यान्त्यशेषतः। सर्वपापविशुद्ध्यर्थं विष्णोश्चैवापमार्जनम्॥ ८३॥
आर्द्रं शुष्कं लघु स्थूलं ब्रह्महत्यादिकं तु यत्। तत्सर्वं नश्यते तूर्णं तमोवद्रविदर्शनात्॥ ८४॥
नश्यन्ति रोगदोषाश्च सिंहात्क्षुद्रमृगा यथा। ग्रहभूतपिशाचादिः श्रवणादेव नश्यतु॥ ८५॥
द्रव्यार्थं लोभपरमैर्न कर्तव्यं कदाचन। कृतेऽपामार्जने किञ्चिन्न ग्राह्यं हितकाम्यया॥ ८६॥
निरपेक्षैः प्रकर्तव्यमादिमध्यान्तबोधकैः। विष्णुभक्तैः सदाशान्तैरन्यथा सिद्धिदं भवेत्॥ ८७॥
अतुलेयं नृणां सिद्धिरियं रक्षा परा नृणाम्। भेषजं परमं ह्येतद्विष्णोर्यदपमार्जनम्॥ ८८॥
उक्तं हि ब्रह्मणा पूर्वं पुलस्त्याय सुताय वै। एतत्पुलस्त्यो हि मुनिर्दालभ्यायोक्तवान्स्वयम्॥ ८९॥
सर्वभूतहितार्थाय दालभ्येन प्रकाशितम्। त्रैलोक्ये तदिदं विष्णोः समाप्तं चापमार्जनम्॥ ९०॥
तवाग्रे कथितं देवि यतो भक्तासि मे सदा। श्रुत्वा तु सर्वं भक्त्या च रोगान्दोषान्व्यपोहति॥ ९१॥

इस अपामार्जन प्रयोग को रोगपीड़ित व्यक्तियों के हित के लिये विष्णुभक्तों को प्रयोग करना चाहिये, इससे सभी दुःख समूल नष्ट हो जाते हैं। यह विष्णु का अपमार्जन सभी पापों की विशुद्धि के लिये है। आर्द्र या शुष्क, लघु या स्थूल जो भी ब्रह्महत्यादिक पाप हैं, वे सब शीघ्र ही इसके प्रयोग से उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्य से अन्धकार नष्ट होता है। जिस प्रकार से सिंह से क्षुद्र मृग भाग जाते हैं, उसी प्रकार इस अपमार्जन स्तोत्र के श्रवणमात्र से ग्रह-भूत-पिशाच आदि नष्ट हो जाते हैं। विष्णुभक्तों को इसका जप (पाठ) निष्काम भाव से भी करते रहना चाहिये। धन के लोभ के लिये इसका प्रयोग किसी रोगी पर नहीं करना चाहिये। यदि किसी का अपमार्जन करे तो बदले में कुछ भी नहीं लेना चाहिये। यदि विष्णुभक्त निष्काम भाव से इसका पाठ करते हैं तो उनको सदैव शान्ति रहती है। यह मनुष्यों का अमोघ रक्षक है, विष्णु का यह अपमार्जन परम भेषज है। इसे पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने अपने पुत्र पुलस्त्य को कहा था। पुलस्त्य ने इसे दालभ्य मुनि से कहा। यह सभी प्राणियों के हित के लिये दालभ्य ने प्रकट किया है, इससे तीनों लोकों का हित है। अब यह अपमार्जन समाप्त होता है। तुम मेरी भक्त हो, अतः मैंने तुम्हें इसे बता दिया है। जो इसे भक्तिपूर्वक सुनेगा, उसके सभी रोग तथा दोष नष्ट होंगे॥ ८२-९१ ॥

महादेव उवाच—

अपामार्जनकं दिव्यं परमाद्भुतमेव च। पठितव्यं विशेषेण पुत्रकामार्थसिद्धये॥ ९२॥
एतत्स्तोत्रं पठेत्प्राज्ञः सर्वकामार्थसिद्धये। एककालं द्विकालं वा ये पठन्ति द्विजातयः॥ ९३॥
आयुश्च श्रीर्बलं तस्य वर्द्धयन्ति दिने दिने। ब्राह्मणो लभते विद्यां क्षत्रियो राज्यमेव वा॥ ९४॥
वैश्यो धनसमृद्धिं च शूद्रो भक्तिं च विन्दति। अन्यैश्च लभ्यते भक्तिः पठनाच्छ्रवणाज्जपात्॥ ९५॥
सामवेदफलं तस्य जायते नगनन्दिनि। अखिलं पापसङ्घातं तत्क्षणादेव नश्यति॥ ९६॥
इति ज्ञात्वा तु भो देवि पठितव्यं समाहितैः। पुत्राश्चैव तथा लक्ष्मीः सम्पूर्णा भवति ध्रुवम्॥ ९७॥
लिखित्वा भूर्जपत्रे तु यो धारयति वैष्णवः। इहलोके सुखं भुक्त्वा याति विष्णोः परं पदम्॥ ९८॥
पठित्वा श्लोकमेकं तु तुलसीं यः समर्पयेत्। सर्वं तीर्थं कृतं तेन तुलस्या पूजने कृते॥ ९९॥
एतत्स्तोत्रं तु परमं वैष्णवं मुक्तिदायकम्। पृथ्वीदानसमं पाठाद्विष्णुलोकं तु गच्छति॥ १००॥
जपेत्स्तोत्रं विशेषेण विष्णुलोकस्य वाञ्छया। बालानां जीवनार्थाय पठितव्यं समाहितैः॥ १०१॥
रोगग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम्। भूतग्रहविषं चैव पठनादेव नश्यति॥ १०२॥
कण्ठे तुलसिजां मालां धृत्वा विप्रो हि यः पठेत्। स च वैष्णवो ज्ञेयो विष्णुलोकं स गच्छति॥ १०३॥
कण्ठे माला धृता येन शङ्खचक्रादिचिह्नितः। वैष्णवः प्रोच्यते विप्रः स्तोत्रं चैतत्पठन्सदा॥ १०४॥
इमं लोकं परित्यज्य विष्णुलोकं स गच्छति। मोहमायापरित्यक्तो दम्भतृष्णाविवर्जितः॥ १०५॥
एतत्स्तोत्रं पठेद्दिव्यं परं निर्वाणमाप्नुयात्। ते धन्याः सन्ति भूर्लोके ये विप्रा वैष्णवाः स्मृताः॥ १०६॥
स्वात्मा वै तारितस्तैस्तु सकुलो नात्र संशयः। ते वै धन्यतमा लोके नारायणपरायणाः॥
तैर्भक्तिश्च सदा कार्या ते वै भागवता नरा॥ १०७॥

इति श्रीपाद्मे महापुराणे उत्तरखण्डे शिवपार्वतीसंवादे अपामार्जनस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

श्री महादेव जी बोले—यह परम अद्भुत अपमार्जन है, इसे पुत्र की कामना वालों को अपनी सिद्धि के लिये पढ़ना चाहिये। प्राज्ञ पुरुष को यह स्तोत्र समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिये पढ़ना चाहिये। एक समय या दो समय इसे जो द्विजाति पढ़ते हैं, उनके आयु, लक्ष्मी, बल दिन-प्रतिदिन बढ़ते हैं। ब्राह्मण को विद्या प्राप्त होती है। क्षत्रिय को राज्य मिलता है। वैश्य को धन-समृद्धि प्राप्त होती है। शूद्र को भगवान् की भक्ति प्राप्त होती है। अन्यों को भी इसके पठन, श्रवण तथा जप से भक्ति मिलती है। पढ़ने वाले को हे पार्वति! सामवेद का फल मिलता है, उसके सभी पापसमूह तुरन्त ही नष्ट हो जाते हैं। ऐसा जानकर हे देवि! इसे एकाग्रचित्त से पढ़ना चाहिये। पाठक को पुत्र तथा लक्ष्मी सम्पूर्ण रूप में निश्चित ही प्राप्त होती है। जो वैष्णव इस स्तोत्र को भोजपत्र पर लिखकर धारण करता है, वह इस लोक में सुख भोगकर विष्णु के परमपद को प्राप्त होता है। जो इसके एक श्लोक को पढ़कर भगवान् विष्णु को तुलसीपत्र अर्पित करता है, उसे सभी तीर्थों की पूजा का फल मिल जाता है। यह परम स्तोत्र वैष्णव को मुक्ति देने वाला है। इसके पाठ का फल पृथ्वीदान के समान है, इसके पाठ से विष्णुलोक की प्राप्ति होती है। विष्णुलोक की कामना से इस श्लोक का विशेष रूप से जप करना चाहिये। बच्चों के जीवन के लिये इसका पाठ एकाग्र मन से करना चाहिये। यह रोगग्रस्त तथा भूतादि से पीड़ित बालकों के लिये शान्तिदायक है। भूत-ग्रह तथा विष इसको पढ़ने मात्र से नष्ट होते हैं। जो ब्राह्मण कण्ठ में तुलसी की माला पहिन कर इसे पढ़ता है, वह वैष्णव होता है तथा विष्णुलोक को जाता है। जिसने अपने कण्ठ में शङ्ख-चक्र आदि चिह्नों से युक्त माला

पहिनी हो, वह विप्र वैष्णव है, वह इस स्तोत्र को सदैव पढ़े। वह इस लोक को त्याग कर विष्णुलोक को जाता है तथा मोह, माया, दम्भ, तृष्णा से रहित हो जाता है। इस दिव्य स्तोत्र को पढ़ने से परम निर्वाण प्राप्त होता है। वे ब्राह्मण धन्य हैं, जो इस पृथ्वी पर वैष्णव कहे जाते हैं। वे स्वयं को तथा अपने कुल को भी तार लेते हैं; इसमें संशय नहीं है। वे लोग धन्य हैं, जो नारायण-परायण हैं। जो भागवत व्यक्ति हैं, उनको विष्णु की भक्ति सदैव करनी चाहिये॥ ९२-१०८॥

सर्वरोगहरं श्रीमाहेश्वरकवचम्

राजोवाच—

अङ्गन्यासो यदुक्तो भो महेशाक्षरसंयुतः। विधानं कीदृशं तस्य कर्तव्यः केन हेतुना॥ १॥
तद्वदस्व महाभाग विस्तरेण ममाग्रतः।

माहेश्वर कवच—राजा ने पूछा—हे महाभाग! आपने माहेश्वर कवच का जो अङ्गन्यास महेशाक्षर से युक्त बताया है, उसका विधान क्या है और उसे किस हेतु करना चाहिये? उसे विस्तार से मुझे बतायें॥ १॥

भृगुरुवाच—

कवचं माहेश्वरं राजन्देवैरपि सुदुर्लभम्। यः करोति स्वगात्रेषु पूतात्मा स भवेन्नरः॥ २॥
कृत्वा न्यासमिमं यस्तु सङ्ग्रामं प्रविशेन्नरः। न शरास्तोमरास्तस्य खड्गशक्तिपरश्वथाः॥ ३॥
प्रभवन्ति रिपोः क्वापि भवेच्छिवपराक्रमः। व्याधिग्रस्तस्तु यः कश्चित्कारयेच्चैव मार्जनम्॥ ४॥
एकादशकुशैः साग्रैर्मुक्तो भवति नान्यथा। न भूता न पिशाचाश्च कूष्माण्डा न विनायकाः॥ ५॥
शिवस्मरणमात्रेण न विशन्ति कलेवरम्।

ॐ नमः पञ्चवक्त्राय शशिसोमार्कनेत्राय भयार्तानामभयाय मम सर्वगात्ररक्षार्थे विनियोगः। 'ॐ ह्रौं ह्रां ह्रं' मन्त्रेणानेन वृषगोमयभस्मनाम्। आमन्त्र्य ललाटे तिलकमादाय पठेत्।

श्री भृगु बोले—हे राजन्! यह माहेश्वर कवच देवों को भी दुर्लभ है। जो इसका न्यास अपने शरीराङ्गों में करता है, वह पवित्रात्मा हो जाता है। जो इस न्यास को करके संग्राम में प्रवेश करता है, उसके शरीर पर बाण, तलवार, तोमर, शक्ति तथा परशु प्रभाव नहीं करते हैं। वह शिव के समान पराक्रमी हो जाता है, उसके शत्रु उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ पाते हैं। जो व्याधिग्रस्त व्यक्ति शिवमार्जन ग्यारह कुशों से करता है, उसका भूत-प्रेत, पिशाच, कूष्माण्ड तथा विनायक-जन्य कष्ट दूर हो जाता है। शिव के प्रभाव से वे उसके शरीर में प्रवेश नहीं करते हैं।

'ॐ नमः पञ्चवक्त्राय, शशिसोमार्कनेत्राय, भयार्त्तानामभयाय मम सर्वगात्ररक्षार्थे विनियोगः' इस मन्त्र से कवच का विनियोग करना चाहिये। तिलक 'ॐ ह्रौं ह्रां ह्रं' इस मन्त्र से बैल के गोबर के भस्म का तिलक (त्रिपुण्ड्र) ललाट पर लगाकर कवच का पाठ करना प्रारम्भ करना चाहिये।

त्राहि मां देव दुष्प्रेक्ष शत्रूणां भयवर्द्धन। ॐ स्वच्छन्दभैरवः प्राच्यामाग्नेय्यां शिखिलोचनः॥ १॥
भूतेशो दक्षिणे भागे नैर्ऋत्यां भीमदर्शनः। वारुण्यां वृषकेतुश्च वायौ रक्षतु शङ्करः॥ २॥
दिग्वासाः सौम्यतो नित्यमैशान्यां मदनान्तकः। वामदेवोर्ध्वतो रक्षेदधो रक्षेत्त्रिलोचनः॥ ३॥
पुरारिः पुरतः पातु कपर्दी पातु पृष्ठतः। विश्वेश्वो दक्षिणे भागे वामे कालीपतिः सदा॥ ४॥
महेश्वरः शिरोभागे भवो भाले सदैव तु। भ्रुवोर्मध्ये महातेजास्त्रिनेत्रो नेत्रयोर्द्वयोः॥ ५॥
पिनाकी नासिकादेशे कर्णयोर्गिरिजापतिः। उग्रः कपोलयो रक्षेन्मुखदेशे महाभुजः॥ ६॥

जिह्वायामन्धकध्वंसी दन्तान्रक्षतु मृत्युजित्। नीलकण्ठः सदा कण्ठे पृष्ठे कामाङ्गनाशनः॥ ७॥
त्रिपुरारिः स्कन्धदेशे बाह्वोश्च चन्द्रशेखरः। हस्तिचर्मधरो हस्ते नखाङ्गुलिषु शूलभृत्॥ ८॥
भवानीशः पातु हृदि पातूदरकटी मृडः। गुदे लिङ्गे च मेढ्रे च नाभौ च प्रमथाधिपः॥ ९॥
जङ्घोरुचरणे भीमः सर्वाङ्गे केशवप्रियः। रोमकूपे विरूपाक्षः शब्दस्पर्शे च योगवित्॥ १०॥
रक्तमज्जावसामांसशुक्रे वसुगणार्चितः। प्राणापानसमानेषूदानव्यानेषु धूर्जटिः॥ ११॥
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन यत्। तत्सर्वं रक्ष मे देव व्याधिदुर्गज्वरादितः॥ १२॥

हे शत्रुओं का भय बढ़ाने वाले, दुष्प्रेक्ष्य देव! मेरी रक्षा करो। स्वच्छन्दभैरव पूर्व में, अग्निकोण में शिखिलोचन, भूतेश दक्षिण भाग में, भीमदर्शन नैर्ऋत्य में, वृषकेतु पश्चिम में एवं वायव्य में मेरी रक्षा शङ्कर करें। दिग्वासा उत्तर से मेरी नित्य रक्षा करें तथा ईशान में मदनान्तक, वामदेव ऊर्ध्व में तथा त्रिलोचन अधोभाग में रक्षा करें। पुरारी सामने से रक्षा करें, कपर्दी पीछे से रक्षा करें। विश्वेश दाहिनी ओर से तथा कालीपति बाँई ओर से सदैव मेरी रक्षा करें। महेश्वर शिरोभाग में, भव भाल में, भौंहों के मध्य में महातेजा एवं त्रिनेत्र दोनों नेत्रों की रक्षा करें। पिनाकी नाक की, गिरिजापति कर्ण की, उग्र कपोलों की तथा महाभुज मुख की रक्षा करें। अन्धकध्वंसी जीभ की एवं मृत्युजित् दाँतों की रक्षा करें। नीलकण्ठ सदैव कण्ठ की रक्षा करें तथा पीठ की कामाङ्गनाशन रक्षा करें। त्रिपुरारी स्कन्ध देश की, चन्द्रशेखर बाहुओं की, हस्तिचर्मधर हाथ की एवं शूलभृत् नख तथा अङ्गुलियों की रक्षा करें। भवानीश हृदय की रक्षा करें। मृड उदर तथा कटि की रक्षा करें। गुद-लिंग-मेढ्र-नाभि की रक्षा प्रमथाधिप करें। जङ्घा-ऊरु-चरण की भीम, सर्वाङ्ग की केशवप्रिय, रोमकूपों की विरूपाक्ष, शब्दस्पर्श की योगवित्, रक्त-मज्जा-वसा-मांस-शुक्र की वसुगणार्चित तथा प्राणापान-समान-उदान एवं व्यान की रक्षा धूर्जटि करें। जो रक्षाहीन स्थान है तथा जिसका कवच में उल्लेख नहीं है, उस सबकी एवं रोग, दुर्ग तथा ज्वरादि से देव रक्षा करें॥ १-१२॥

कार्य्यं कर्म्म त्विदं प्राज्ञैर्दीपं प्रज्वाल्य सर्पिषा। निवेद्य शिखिनेत्राय वारयेत्तु ह्युदङ्मुखम्॥ १३॥
ज्वरदाहपरिक्रान्तं तथान्यव्याधिसंयुतम्। कुशैः सम्मार्ज्य सम्मार्ज्य क्षिपेद्दीपशिखां ज्वरम्॥ १४॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा तृतीयकचतुर्थकम्। वातपित्तकफोद्भूतं सन्निपातोग्रतेजसम्॥ १५॥
अन्यं दुःखदुराधर्षकर्म्मजं चाभिचारिकम्। धातुस्थं कफसम्मिश्रं विषमं कामसम्भवम्॥ १६॥
भूताभिषङ्गसंसर्गं भूतचेष्टादिसंस्थितम्। शिवाज्ञां घोरमन्त्रेण पूर्ववृत्तं स्वयं स्मर॥ १७॥
त्यज देहं मनुष्यस्य दीपं गच्छ महाज्वरः। कृतं तु कवचं दिव्यं सर्वव्याधिभयार्द्दनम्॥ १८॥

बुद्धिमानों को यह कार्य करना चाहिये—घी का दीपक जलाकर उसे श्री शङ्कर जी को निवेदित करके उसको उत्तर की ओर मुख तथा ज्योति करके जलाये। जो व्यक्ति ज्वर, दाह से परिक्रान्त तथा अनेक रोगों से युक्त हो, उसके शरीर का मार्जन कुशाग्र भाग से करके उसे दीपशिखा में फेंकते हुये (छिड़कते हुये) इस प्रकार कहे—एकाहिक द्व्याहिक, तृतीयक, चातुर्थिक, वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज उग्र तेज वाला ज्वर; अन्य कठिन दुर्धर्ष अभिचारजन्य तथा कर्मज दुःख, धातु में स्थित, कफसम्मिश्रित विषम, कामसम्भव रोग, भूताभिषङ्ग-जन्य रोग, संक्रामक रोग, भूत की चेष्टाओं वाला रोग जो भी हो, वह शिव की आज्ञा से अपने घोर चरित्र को स्वयं स्मरण कर इस मनुष्य के शरीर को छोड़कर हे महाज्वर! तू दीपक में चला जा। यह सर्वव्याधिविनाशकर्त्ता दिव्यकवच है॥ १३-१८॥

न बाधन्ते व्याधयस्तं बालग्रहभयानि च। लूताविस्फोटकं घोरं शिरोर्तिच्छर्दिविग्रहम्॥ १९॥
कामलां क्षयकासं च गुल्माश्मरीभगन्दराः। शूलोन्मादं च हृद्रोगयकृती पाण्डुविद्रधिम्॥ २०॥

अतिसारादिरोगांश्च डाकिनीपीडकग्रहान्। पामाविचर्चिकादद्रुकुष्ठव्याधिविषार्दनम् ॥ २१ ॥
स्मरणान्नाशयत्याशु कवचं शूलपाणिनः। यस्तु स्मरति नित्यं वै यस्तु धारयते नरः॥ २२ ॥
स मुक्तः सर्वपापेभ्यो वसेच्छिवपुरे चिरम्। सङ्ख्याव्रतस्य दानस्य यज्ञस्यास्तीह शास्त्रतः॥ २३ ॥
न सङ्ख्या विद्यते शम्भोः कवचस्मरणाद्यतः। तस्मात्सम्यगिदं सर्वैः सर्वकामफलप्रदम्॥ २४ ॥
श्रोतव्यं सततं भक्त्या कवचं सर्वकामिकम्। लिखितं तिष्ठते यस्य गृहे सम्यगनुत्तमम्॥ २५ ॥
न तत्र कलहोद्वेगो नाकालमरणं भवेत्। नाल्पप्रजाः स्त्रियस्तत्र न दौर्भाग्यं समाश्रिताः॥ २६ ॥
तस्मान्माहेश्वरं नाम कवचं देवगणार्चितम्। श्रोतव्यं पठितव्यं च मन्तव्यं भावुकप्रदम्॥ २७ ॥
श्रीमाहेश्वरकवचं सर्वव्याधिनिषूदनम्। यः पठेत्तु नरो नित्यं स व्रजेच्छाङ्करं पुरम्॥ २८ ॥

इति सर्वव्याधिहरं श्रीमाहेश्वरकवचं सम्पूर्णम्।

इस कवच को धारण करने वाले के रोग, बालग्रह, भय, लूता, विस्फोट, घोर शिरोशूल, वमन, कामला, क्षय, कास, गुल्म, अश्मरी, भगन्दर, शूल, उन्माद, हृद्रोग, यकृत् रोग, पाण्डु, विद्रधि, अतिसार आदि रोग, डाकिनी आदि ग्रहों की पीड़ा, पामा, विचर्चिका, दद्रु, कुष्ठ, व्याधि तथा विष का नाश होता है। इस शिवजी के कवच के स्मरण से शीघ्र ही ये सब नष्ट हो जाते हैं। जो इस कवच का नित्य स्मरण करता है तथा उसे धारण करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर शिवपुर में चिरकाल तक वास करता है। व्रत-दान-यज्ञ की तो शास्त्रों में संख्या बताई गयी है, परन्तु शिवजी के कवच के स्मरण तथा पाठ की कोई संख्या निर्धारित नहीं है। यह कवच सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। जिसके घर में यह कवच लिखा हुआ अथवा छपा हुआ स्थित रहता है, उसके घर में कलह तथा उद्वेग नहीं होता है और न ही अल्प सन्तान, अल्प स्त्रियाँ तथा दुर्भाग्य आता है। यह माहेश्वर कवच देवगणों के द्वारा अर्चित है। इसे सुनना, पढ़ना तथा मनन करना चाहिये। यह श्री माहेश्वर कवच सभी व्याधियों को नष्ट कर देता है। जो व्यक्ति इस कवच का नित्य पाठ करता है, वह शिवपुर को जाता है॥ १९-२८ ॥

सद्य आरोग्यकरं सूर्य्यार्घ्यदानविधानम्

सुदिने कृतनित्यक्रियः आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'मम अमुकस्य वा अमुकज्वरादिव्याधि-समूलनिरासद्वारा सद्यआरोग्यार्थं श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं हंसादिसप्ततिनामभिः श्रीसूर्य्याय सप्तत्यर्घ्यदानमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य भूतशुद्ध्यादि कृत्वा सम्मान्यार्घ्यं कल्पयेत्।

विगृह्य पाणियुग्मेन ताम्रपात्रं सुनिर्म्मलम्। जानुभ्यामवनीं गत्वा परिपूर्य्य जलेन च॥
करवीरादिकुसुमैः रक्तचन्दनमिश्रितैः। दूर्वाङ्कुरैरक्षतैश्च निक्षिप्तैः पात्रमध्यतः॥
दद्यादर्घ्यमनर्घाय सवित्रे ध्यानपूर्वकम्। उपमौलिसमानीय तत्पात्रं नान्यदिङ्मनाः॥
प्रतिमन्त्रं नमस्कुर्यादुदयास्तमिते रवौ। अनया नामसप्तत्या महामन्त्ररहस्यया॥

एवमर्घ्यं प्रकल्प्य पाद्यादिभिः सम्पूज्य प्रणम्य यथोक्तविधिना प्रत्येकनाम्ना बृहत्पात्रे घटे जले वा अर्घ्यं दद्यात्। तद्यथा—ॐ हंसाय नमः॥ १ ॥ ॐ भानवे नमः॥ २ ॥ ॐ सहस्रांशवे नमः॥ ३ ॥ ॐ तपनाय नमः॥ ४॥ ॐ तापनाय नमः॥ ५ ॥ ॐ रवये नमः॥ ६ ॥ ॐ विकर्त्तनाय नमः॥ ७॥ ॐ विवस्वते नमः॥ ८ ॥ ॐ विश्वकर्म्मणे नमः॥ ९ ॥ ॐ विभावसवे नमः॥ १०॥ ॐ विश्वरूपाय नमः॥ ११॥ ॐ विश्वकर्त्रे नमः॥ १२॥ ॐ मार्तण्डाय नमः॥ १३॥ ॐ मिहिराय नमः॥ १४॥ ॐ अंशुमते नमः॥ १५॥ ॐ आदित्याय नमः॥ १६॥ ॐ उष्णगवे नमः॥ १७॥ ॐ सूर्य्याय नमः॥ १८॥ ॐ अर्य्यम्णे नमः॥ १९॥ ॐ ब्रध्नाय नमः॥ २०॥ ॐ दिवाकराय नमः॥ २१॥ ॐ द्वादशात्मने

नमः ॥ २२ ॥ ॐ सप्तहयाय नमः ॥ २३ ॥ ॐ भास्कराय नमः ॥ २४ ॥ ॐ अहस्कराय नमः ॥ २५ ॥ ॐ खगाय नमः ॥ २६ ॥ ॐ सुराय नमः ॥ २७ ॥ ॐ प्रभाकराय नमः ॥ २८ ॥ ॐ श्रीमते नमः ॥ २९ ॥ ॐ लोकचक्षुषे नमः ॥ ३० ॥ ॐ ग्रहेश्वराय नमः ॥ ३१ ॥ ॐ लोकेशाय नमः ॥ ३२ ॥ ॐ लोकसाक्षिणे नमः ॥ ३३ ॥ ॐ तमोऽरये नमः ॥ ३४ ॥ ॐ शाश्वताय नमः ॥ ३५ ॥ ॐ शुचये नमः ॥ ३६ ॥ ॐ गभस्तिहस्ताय नमः ॥ ३७ ॥ ॐ तीव्रांशवे नमः ॥ ३८ ॥ ॐ तरणये नमः ॥ ३९ ॥ ॐ सुमहोरुणये नमः ॥ ४० ॥ ॐ द्युमणये नमः ॥ ४१ ॥ ॐ हरिदश्वाय नमः ॥ ४२ ॥ ॐ अर्काय नमः ॥ ४३ ॥ ॐ भानुमते नमः ॥ ४४ ॥ ॐ भयनाशनाय नमः ॥ ४५ ॥ ॐ छन्दोश्वाय नमः ॥ ४६ ॥ ॐ वेदवेद्याय नमः ॥ ४७ ॥ ॐ भास्वते नमः ॥ ४८ ॥ ॐ पूष्णे नमः ॥ ४९ ॥ ॐ वृषाकपये नमः ॥ ५० ॥ ॐ एकचक्ररथाय नमः ॥ ५१ ॥ ॐ मित्राय नमः ॥ ५२ ॥ ॐ मन्देहारये नमः ॥ ५३ ॥ ॐ तमिस्त्रहन्त्रे नमः ॥ ५४ ॥ ॐ दैत्यहन्त्रे नमः ॥ ५५ ॥ ॐ पापहर्त्रे नमः ॥ ५६ ॥ ॐ धर्म्माय नमः ॥ ५७ ॥ ॐ अधर्म्माय नमः ॥ ५८ ॥ ॐ प्रकाशकाय नमः ॥ ५९ ॥ ॐ हेलिकाय नमः ॥ ६० ॥ ॐ चित्रभानवे नमः ॥ ६१ ॥ ॐ कलिघ्नाय नमः ॥ ६२ ॥ ॐ तार्क्ष्यवाहनाय नमः ॥ ६३ ॥ ॐ दिक्पतये नमः ॥ ६४ ॥ ॐ पद्मिनीनाथाय नमः ॥ ६५ ॥ ॐ कुशेशयकराय नमः ॥ ६६ ॥ ॐ हरये नमः ॥ ६७ ॥ ॐ घर्मरश्मये नमः ॥ ६८ ॥ ॐ दुर्निरीक्ष्याय नमः ॥ ६९ ॥ ॐ चण्डांशवे नमः ॥ ७० ॥ (ॐ कश्यपात्मजाय नमः)।

एभिः सप्ततिसङ्ख्याकैः पुण्यैः सूर्य्यस्य नामभिः। प्रणवादिचतुर्थ्यन्तैर्नमस्कारसमायुतैः ॥
प्रत्येकमुच्चरन्नाम दृष्ट्वा-दृष्ट्वा दिवाकरम्। एवं कुर्वन्नरो याति न दारिद्र्यं न शोकभाक्॥
व्याधिभिर्मुच्यते घोरैरपि जन्मान्तरार्जितैः। विनौषधैर्विना वैद्यैर्विना पथ्यपरिग्रहैः॥
कालेन निधनं प्राप्य सूर्य्यलोके महीयते।

इति सर्वव्याधिहरं श्रीसूर्य्यार्घ्यविधानम्।

सूर्यार्घ्य-विधान—शुभ दिन प्रात:काल नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर आचमन तथा प्राणायाम करके देश-काल का उच्चारण करके 'मम अमुकस्य वा ज्वरादिव्याधिसमूलनाशद्वारा सद्य आरोग्यार्थं श्रीसवितृसूर्यनारायण-प्रीत्यर्थं हंसादिसप्ततिनामभिः श्रीसूर्याय सप्तति अर्घ्यदानमहं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके भूतशुद्धि आदि कर अर्घ्य की कल्पना करे।

अर्घ्यनिर्माण-विधि—शुद्ध ताम्रपात्र को अपने दोनों हाथों में ग्रहण करके उसे निर्मल जल से परिपूर्ण करके लाल कनेर आदि के फूलों तथा लाल चन्दन को मिश्रित कर दूर्वाङ्कुरों तथा अंक्षतों का निक्षेप उस पात्रस्थ जल में करके घुटनों को धरती पर टेककर ध्यानपूर्वक अनर्घ्य सूर्यनारायण को अर्घ्य दे। अर्घ्य देते समय अर्घ्य को शिर से लगाकर सूर्य की दिशा में देना चाहिये। यह अर्घ्य उदित तथा अस्तकाल में आगे लिखे ७० मन्त्रों के उच्चारण के साथ किसी बड़े घड़े या पात्र से (मन्त्रों के उच्चारण पूर्ण होने तक निरन्तर) देते रहना चाहिये।

अर्घ्यदान के सत्तर मन्त्र—मूल पाठ में 'ॐ हंसाय नमः' से लेकर 'ॐ चण्डांशवे नमः' पर्यन्त कुल सत्तर मन्त्र लिखे हैं, उनसे ही अर्घ्य देना चाहिये। इस प्रकार से सूर्य के सत्तर नामों के पूर्व ॐ तथा पश्चात् चतुर्थी विभक्ति के उपरान्त नमः लगाकर प्रत्येक नाम का उच्चारण करते हुए सूर्य की ओर देख-देखकर जो मनुष्य अर्घ्य देता है, उसे दरिद्रता तथा शोक प्राप्त नहीं होता है। वह घोर व्याधियों से मुक्त होकर जिन्हें उसने जन्मान्तरों में अर्जित किया है, वे सब रोग बिना औषधि, वैद्य तथा पथ्यपरिग्रह के ही ठीक हो जाते हैं। समय पर उसकी मृत्यु होती है तथा वह सूर्यलोक में आनन्द करता है।

विमर्श—संस्कृत का 'अर्घ्य' शब्द ही घिसकर यूनानी अरबी चिकित्सा पद्धति में 'अर्क' बन गया है, जो सुगन्धित द्रव्यों तथा मृदु वनस्पतियों को जल में भिगोकर उनके वाष्पीकरण द्वारा बनाया जाता है, जैसे—

अर्कगुलाब, अर्ककेवड़ा, अर्कसन्दल (चन्दन), अर्कसौंफ, अर्कमकोय आदि। अर्घ्य में भी जल को सुगन्धित पुष्पों के प्रक्षेपादि से सुवासित करके ही प्रयोग में लाते हैं।

ज्वरस्तोत्रम्

विद्राविते भूतगणे ज्वरस्तु त्रिशिरास्त्रिपात्। अभ्यपद्यत दाशार्हं दहन्निव दिशो दश॥ १॥
अथ नारायणो देवस्तं दृष्ट्वा व्यसृजज्ज्वरम्। माहेश्वरो वैष्णवश्च युयुधाते ज्वरावुभौ॥ २॥
माहेश्वरः समाक्रन्दन्वैष्णवेन बलार्दितः। अलब्ध्वाभयमन्यत्र भीतो माहेश्वरो ज्वरः॥ ३॥
शरणार्थी हृषीकेशं तुष्टाव प्रयताञ्जलिः।

ज्वरस्तोत्र—भूतगणों के पलायन कर जाने पर तीन शिर तथा तीन पैरों वाला ज्वर दशों दिशाओं को जलाता हुआ भगवान् श्रीकृष्ण की ओर दौड़ पड़ा। तब भगवान् ने उसे अपनी ओर आता हुआ देखकर उसके प्रतिकारहेतु नारायण ज्वर को छोड़ दिया। तब माहेश्वर ज्वर तथा नारायण ज्वर दोनों आपस में लड़ने लगे। अन्ततः वैष्णव ज्वर के द्वारा पराभूत माहेश्वर ज्वर अन्यत्र अभय न देखकर हृषीकेश से हाथ जोड़कर बोला॥ १-३॥

ज्वर उवाच—

नमामि त्वाऽनन्तशक्तिं परेशं सर्वात्मानं केवलं ज्ञप्तिमात्रम्।
विश्वोत्पत्तिस्थानसंरोधहेतुं यत्तद्ब्रह्म ब्रह्मलिङ्गं प्रशान्तम्॥ ४॥
कालो दैवं कर्म जीवः स्वभावो द्रव्यं क्षेत्रं प्राण आत्मा विकारः।
तत्सङ्घातो बीजरोहप्रवाहस्त्वन्मायैषा तन्निषेधं प्रपद्ये॥ ५॥
नानाभावैर्लीलयैवोपपन्नैर्देवान् साधूँल्लोकसेतून् बिभर्षि।
हंस्युन्मार्गान् हिंसया वर्तमानाञ्जन्मैतत्ते भारहाराय भूमेः॥ ६॥
तप्तोऽहं ते तेजसा दुःसहेन शान्तोग्रेणात्युल्बणेन ज्वरेण।
तावत्तापो देहिनां तेंऽघ्रिमूलं नो सेवेरन्यावदाशानुबद्धाः॥ ७॥

ज्वर बोला—आप परेश अनन्तशक्ति सर्वात्मा तथा सर्वस्वरूप हैं। संसार की उत्पत्ति, स्थिति, तथा संहार के कारण आप ही हैं। श्रुतियों में आपका ही वर्णन तथा अनुमान किया जाता है। आप समस्त विकारों से रहित स्वयंब्रह्म हैं; अतः मैं आपको प्रणाम करता हूँ। काल दैव, (अदृष्ट), कर्म, जीव, स्वभाव, सूक्ष्मभूत शरीर, सूत्रात्मा प्राण, अहङ्कार, एकादश इन्द्रियाँ तथा पञ्च महाभूत—इन सबका सङ्घात यह लिङ्गशरीर है। बीजाङ्कुर न्याय के अनुसार उससे कर्म तथा कर्म से फिर लिङ्गशरीर की उत्पत्ति होती है। यह सब आपकी माया है। आप माया के निषेध की परम अवधि हैं। मैं आपकी शरण में जाता हूँ। हे प्रभो! आप ही अपनी लीला से अनेकों रूप धारण करते हैं तथा देवताओं, लोकों एवं साधु-सन्तों का पालन करते हैं; साथ ही उन्मार्गगामी असुरों का संहार भी करते हैं। आपका यह अवतार पृथ्वी का भार उतारने के लिये ही हुआ है। मैं आपके तेज से तप्त उत्पन्न उल्वण ज्वर से अत्यन्त सन्तप्त हो रहा हूँ। हे प्रभो! जीवों को तभी तक सन्ताप रहता है जब तक वे आशाओं के पाश में बँधे रहकर आपकी शरण में नहीं जाते हैं॥ ४-७॥

श्रीभगवानुवाच—

त्रिशिरस्ते प्रसन्नोऽस्मि व्येतु ते मज्ज्वराद्भयम्। यो नौ स्मरति संवादं तस्य त्वन्न भवेद्भयम्॥ ८॥
इत्युक्तोऽच्युतमानम्य गतो माहेश्वरो ज्वरः। बाणस्तु रथमारूढः प्रागाद्योत्स्यञ्जनार्दनम्॥ ९॥

इति श्रीमद्भागवते दशमस्कन्धे ज्वरकृतस्तोत्रम्।

श्री भगवान् बोले—हे त्रिशिर! मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, तुम मेरे ज्वर से भय मत करो। जो मनुष्य मेरे और तुम्हारे इस संवाद का स्मरण करेगे, उन्हें ज्वर का भय नहीं रहेगा। भगवान् के ऐसा कहने पर वह माहेश्वर ज्वर अच्युत को प्रणाम करके चला गया और बाणासुर भी रथ पर आरूढ़ होकर श्रीकृष्ण से युद्ध करने के लिये पुनः आ डटा॥ ८-९॥

ज्वरतर्पणम्

महार्णवे—

योऽसौ सरस्वतीतीरे कुत्सगोत्रसमुद्भवः। त्रिरात्रज्वरदाहेन मृतो गोविन्दसंज्ञकः॥ १॥
ज्वरापनुत्तये तस्मै ददाम्येतत्तिलोदकम्।

तथा—

गङ्गाया उत्तरे कूले अपुत्रस्तापसो मृतः। रात्रौ ज्वरविनाशाय तस्मै दद्यात्तिलोदकम्॥ २॥

इति मन्त्रद्वयेन तिलरक्ताक्षतरक्तपुष्पादियुतजलेन ज्वरानुसारेणाष्टोत्तरशताद्ययुतं तर्पणं ज्वरमुद्दिश्य कर्त्तव्यम्।

इति ज्वरतर्पणम्।

ज्वरतर्पण (महार्णव के अनुसार)—इस सरस्वती के तीर पर जो कुत्स गोत्र में उत्पन्न गोविन्द नामक व्यक्ति त्रिरात्र ज्वर के कारण मर गया है, उसके लिये यह तिलोदक दिया जाता है। गङ्गा के उत्तर किनारे पर जो अपुत्र तापस मर गया है, रात्रिज्वर के विनाश के लिये उसे तिलोदक दिया जाता है। इस भावार्थ को प्रकट करने वाले इन दो मन्त्रों को उच्चारित करके काले तिल, लाल चावल, लाल फूल आदि से युक्त जल के द्वारा ज्वर के अनुसार एक सौ आठ तर्पण उस ज्वर के लिये करना चाहिये।

सर्वरोगहरमच्युतानन्तगोविन्देति नामत्रयविधानम्

ॐ अच्युतानन्द गोविन्देति नामत्रयस्य वसिष्ठकश्यपनारदा ऋषयः। उष्णिग्गायत्रीपुरुषप्रकृतीसुतलच्छन्दांसि। महाविष्णुमहानृसिंहमहावराहा देवताः। अमुकरोगशान्तये जपे विनियोगः। अस्य मन्त्रस्य रोगानुसारेण सहस्रमयुतं लक्षं वा जपं कृत्वा जपान्ते दशांशेन तिलपायसहोमं तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्ज्जनं तद्दशांशेन शक्त्या वा ब्राह्मणभोजनं च कुर्य्यात्। तथा च वीरसिंहावलोकने शङ्करगीतावाक्यम्—

अच्युतानन्तगोविन्देत्येतन्नामत्रयं द्विजः। अयुतत्रयसङ्ख्याकं जपं कुर्य्याद्धि शान्तये॥

इति नामत्रयविधानम्।

सर्वरोगनाशक नामत्रय का विधान—अच्युत, अनन्त, गोविन्द—इन तीन नामों के वसिष्ठ, कश्यप तथा नारद ऋषि हैं। उष्णिक्, गायत्री, पुरुष, प्रकृति तथा सुतल छन्द हैं। महाविष्णु, महानृसिंह तथा महावराह देवता हैं। अमुक रोग की शान्तिहेतु नामत्रय के जप में विनियोग है। इस मन्त्र का रोगानुसार एक सहस्र, अयुत अथवा लक्षसंज्ञक जप करके अन्त में दशांश संख्या में तिल-पायस से होम करके उसके दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन तथा तद्दशांश अथवा यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। जैसा कि वीर सिंहावलोक में शङ्करगीता का वाक्य दिया गया है—अच्युत, अनन्त तथा गोविन्द—इन तीन नामों का द्विज अयुत संख्या में जप करे। तो व्याधि की शान्ति होती है।

सर्वव्याधिहरं विष्णुसहस्रनामविधानम्

तदुक्तं महाभारते—

सहस्रनामस्तोत्रं च सर्वं वारत्रयं जपेत्। मृत्युरोगप्रशान्त्यर्थमात्मनश्च शुभाप्तये॥

तत्र प्रयोगः—सुमुहूर्त्ते शिवालयादिषु कृतनित्यक्रियः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'ममामुकव्याधेः समूलनाशद्वारा सद्य आरोग्यार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थममुकसङ्ख्यया विष्णुसहस्रनामजपं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य गणेशस्मरणं कृत्वा स्वपुरतः आधारे अन्यलिखितपुस्तकं संस्थाप्य गन्धपुष्पादिभिः सम्पूज्य शापविमोचनं पठेत्। ॐ अस्य श्रीविष्णोः सहस्रनाम्नां रुद्रशापमोचनमन्त्रस्य महादेव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरुद्रानुग्रहशक्तिर्देवता। सुरेशः शरणं शर्मेति बीजम्। अनन्तो हुतभुग्भोक्तेति शक्तिः। सुरेश्वरायेति कीलकम्। रुद्रशापविमोचने विनियोगः। ॐ क्लीं ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

तमालश्यामलतनुं पीतकौशेयवाससम्। वर्णमूर्तिमयं देवं ध्यायेन्नारायणं विभुम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपारैः सम्पूज्य 'ॐ क्लींह्रांह्रींह्रूंह्रैंह्रौंह्रः स्वाहा' इति मन्त्रं शतवारं दशवारं वा जप्त्वा किञ्चिज्जलं क्षिप्त्वा प्रार्थयेत्। 'ॐ श्रीविष्णोः सहस्रनामस्तवो रुद्रशापविमुक्तो भव' इति प्रार्थ्य सततं तदनन्तरं सहस्रनामपठनं कुर्य्यात्।

विष्णोः सहस्रनाम्नां यो ह्यकृत्वा शापमोचनम्। पठेच्छुभानि सर्वाणि स्युस्तस्य निष्फलानि तु॥

इत्यगस्तिसंहितायां रुद्रशापविमोचनम्।

सर्वव्याधिनाशक विष्णुसहस्रनाम प्रयोग—महाभारत में कहा गया है—मृत्यु तथा रोग की शान्ति के लिये एवं आत्म-कल्याण के लिये प्रतिदिन त्रिकाल समय (प्रातः, मध्याह्न, सायं) श्रीविष्णुसहस्रनाम का जप करना चाहिये।

शापमोचन—अगस्त्यसंहिता के अनुसार सर्वप्रथम विष्णु सहस्रनाम का शाप-विमोचन कर्म करना चाहिये। वह इस प्रकार है—सुमुहूर्त में शिवालय आदि में नित्यक्रिया से निवृत्त होकर अपने आसन पर पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके बैठकर आचमन तथा प्राणायाम कर देश-काल का उच्चारण करके 'ममामुकव्याधिसमूलनाशद्वारा सद्य आरोग्यार्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं अमुकसङ्ख्यया विष्णुसहस्रनामजपं करिष्ये' ऐसा सङ्कल्प करके श्रीगणेशजी का स्मरण कर शाप-विमोचनार्थ न्यास करे। सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीविष्णोः सहस्रनाम्नां रुद्रशापमोचनमन्त्रस्य महादेव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरुद्रानुग्रहशक्तिर्देवता। सुरेशः शरणं शर्मेति बीजम्। अनन्तो हुतभुक् भोक्तेति शक्तिः। सुरेश्वरायेति कीलकम्। रुद्रशापविमोचने विनियोगः' यह मन्त्र कहकर रुद्रशाप-विमोचनार्थ पृथ्वी पर जल छोड़े। शाप-विमोचन मन्त्र-हेतु ऋष्यादिन्यास करके मूलोक्त 'ॐ क्लीं ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। तदनन्तर 'ॐ क्लीं ह्रां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं कवचाय हुम्, ॐ ह्रौं नेत्रत्राय वौषट्, ॐ ह्रः अस्त्राय फट्' इन छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। फिर मूल में लिखित 'तमालश्यामलतनुं पीतकौशेयवासम्। वर्णमूर्तिमयं देवं ध्यायेन्नारायणं विभुम्॥' (तमालपत्र के समान श्यामल शरीर वाले, पीतकौशेय वस्त्रधारी, चारो वर्णों के मूर्तिमान् स्वरूप विभु देव नारायण का ध्यान करे) मन्त्र से ध्यान करना चाहिये। फिर मानसोपचारों से देव नारायण का पूजन करके 'ॐ क्लीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः स्वाहा' यह विष्णुसहस्रनाम का शाप-विमोचन मन्त्र है, इसे एक सौ बार या दश बार जपना चाहिये तथा थोड़ा-सा जल हाथ में लेकर फेंककर प्रार्थना करे—'ॐ श्रीविष्णोः सहस्रनामस्तवो रुद्रशापविमुक्तो भव'। इसके उपरान्त एक बार निरन्तर विष्णुसहस्रनाम का पाठ कर ले तो वह शापविमुक्त हो जाता है। इस प्रकार जो विष्णु सहस्रनाम का पाठ करने के पूर्व शाप-विमोचन करके पढ़ता है, उसका अनुष्ठान सफल होता है। यदि बिना शाप-विमोचन किये पाठ करे तो वह निष्फल होता है।

अथ सहस्रनामस्तोत्रस्य न्यासध्यानादिप्रकारः—ॐ अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रमालामन्त्रस्य श्रीभगवान् वेदव्यास ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीकृष्णः परमात्मा देवता। आत्मयोनिः स्वयं जात इति बीजम्। देवकीनन्दनः स्रष्टेति शक्तिः। उद्भवः क्षोभणो देव इति परमो मन्त्रः। शङ्खभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकम्। त्रिसामासामगः सामेति कवचम्। शार्ङ्गधन्वा गदाधर इत्यस्त्रम्। ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कार इति ध्यानम्। श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे अमुकरोगनिवारणार्थे नामसहस्रपाठे विनियोगः। ॐ वेदव्यासऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमो मुखे॥ २॥ ॐ श्रीकृष्णपरमात्म-देवतायै नमः हृदये॥ ३॥ ॐ आत्मयोनिः स्वयं जात इति बीजाय नमो गुह्ये॥ ४॥ ॐ देवकीनन्दनः स्रष्टेति शक्तये नमः पादयोः॥ ५॥ ॐ शङ्खभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकाय नमः सर्वाङ्गे॥ ६॥ इति ऋष्यादिन्यासः। अथ करन्यासः—ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कार इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ १॥ ॐ अमृतांशूद्भवो भानुरिति तर्जनीभ्यां नमः॥ २॥ ॐ ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद्ब्रह्मेति मध्यमाभ्यां नमः॥ ३॥ ॐ सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्य इत्यनामिकाभ्यां नमः॥ ४॥ ॐ आदित्यो ज्योतिरादित्य इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ५॥ ॐ शार्ङ्गधन्वा गदाधर इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ६॥ इति करन्यासः। एवमेव हृदयादिषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य ॐ नारायणाय नमः॥ १॥ ॐ नराय नमः॥ २॥ ॐ नरोत्तमाय नमः॥ ३॥ ॐ देव्यै नमः॥ ४॥ ॐ सरस्वत्यै नमः॥ ५॥ ॐ व्यासाय नमः॥ ६॥ इति नमस्कृत्य स्पष्टपदाक्षरं स्तोत्रं पठेत्। अस्य पुरश्चरणं रोगानुसारेण सहस्रमयुतं लक्षं वा जपदशांशतस्तिलपायसाज्यैर्होमः। होमस्तु सहस्रनामभिः स्वाहान्तैः कार्य्यः। अन्यत्सर्वं यथाविधि कुर्य्यात्। सद्य आरोग्यतासिद्धये अच्युतानन्त गोविन्देति नामत्रयेण सम्पुटितस्य सहस्रनामस्तवस्य जपः कार्य्यः। अथवा—

ॐ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने। प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमोनमः॥ १॥
इत्यनेन।

ॐ आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्। लोकाभिरामं श्रीरामं भूयोभूयो नमाम्यहम्॥ २॥
इति मन्त्रेण वा सम्पुटितस्य जपेन सर्वरोगनाशः।

इति ज्वरहराणि।

मुख्य प्रयोग—सहस्रनामस्तोत्र के न्यासादि शापविमोचनोपरान्त इस प्रकार करना चाहिये। सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रमालामन्त्रस्य श्री भगवान् वेदव्यासऋषिः अनष्टुप् छन्दः। श्रीकृष्णपरमात्मा देवता। आत्मयोनिः स्वयं जात इति बीजम्। देवकीनन्दनः स्रष्टेति शक्तिः। उद्भवः क्षोभणो देव इति मन्त्रः। शङ्खभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकम्। त्रिसामासामगः सामेति कवचम्। शार्ङ्गधन्वागदाधर इत्यस्त्रम्। ॐ विश्वं वषट्कार इति ध्यानम्। श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे अमुक- रोगनिवारणार्थे नामसहस्रपाठे विनियोगः' इस मन्त्र को पढ़कर विनियोग करे। तदनन्तर ॐ वेदव्यास ऋषये नमः शिरसि इत्यादि मूल पाठ में लिखे छः मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर उसके आगे 'ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कार इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से करन्यास करे। फिर 'ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कार इति हृदयाय नमः, ॐ अमृतांशूद्भवो भानुरिति शिरसे स्वाहा, ॐ ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद्ब्रह्मेति शिखायै वषट्, ॐ सुवर्णविन्दुरक्षोभ्यः इति कवचाय हुम्, ॐ आदित्यो ज्योतिरादित्य इति नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ शार्ङ्गधन्वा गदाधर इति अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गन्यास सम्पन्न करे। फिर 'शान्ताकारं भुजगशयनं०' इत्यादि श्लोक से ध्यान करे। ध्यानोपरान्त मानसोपचारों से विष्णु की पूजा कर 'ॐ नारायणाय नमः, ॐ नराय नमः, ॐ नरोत्तमाय नमः,

ॐ देव्यै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ व्यासाय नमः' इन छः नामों से विष्णु को नमस्कार करे। इसके उपरान्त स्पष्ट उच्चारण के साथ श्रीविष्णुसहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे।

पुरश्चरण—विष्णुसहस्रनाम का पुरश्चरण रोग के अनुसार एक सहस्र, एक अयुत अथवा एक लक्ष होता है। जप का दशांश तिल-पायसादि से होम सहस्रनामों में चतुर्थी विभक्ति तथा स्वाहा लगाकर करना चाहिये। जप का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश अथवा शक्ति के अनुसार अधिक भी ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये।

श्रीविष्णुसहस्रनाम के पुरश्चरण में कर्माङ्गों का संख्यान अन्य युगों में

पुरश्चरण के अङ्ग	परस्पर अनुपात	सामान्य रोग में	मध्यम रोग में	तीव्र रोग में	कलियुग में		
					सामान्य	मध्यम	तीव्र रोग
१. जप	एक	एक सहस्र	एक अयुत	एक लक्ष	चार सहस्र	चारअयु०	चार लक्ष
२. होम	दशांश	१००	१०००	१०,०००	४००	४०००	४०,०००
३. तर्पण	शतांश	१०	१००	१०००	४०	४००	४०००
४. मार्जन	सहस्रांश	१	१०	१००	४	४०	४००
५. ब्राह्मणभोजन	अयुतांश	१	१०	१०	४	४	४०

सम्पुट—(१) श्री आरोग्य चाहने के लिये 'अच्युतानन्त गोविन्द नामस्मरणभेषजात्। नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं-सत्यं वदाम्यहम्' इस मन्त्र का प्रत्येक नाम के अन्त में सम्पुट लगाना चाहिये अथवा प्रतिश्लोक में सम्पुट लगाये। (२) अथवा 'कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने। प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः॥' इस मन्त्र का सम्पुट लगाकर पाठ करे। (३) अथवा 'आपदामपहर्त्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्। लोकाभिरामं श्रीरामं भूयोभूयो नमाम्यहम्॥' इस मन्त्र से सम्पुटित पाठ करना चाहिये। इससे सभी रोगों का नाश होता है।

अतिसारशमनविधानम्

अग्न्युपशमी अतिसारी भवति तडागभेत्ता च इति। सोऽग्निरस्मीत्यृचं दशसहस्र १०००० सङ्ख्यया जपेत्। तिलाज्यद्रव्येण जुहुयात् हिरण्यं च दद्यात्।

इत्यतिसारशमनम्।

अतिसार का निदान तथा उपचार—जो कुलपरम्परागत प्रज्वलित अग्नि अथवा अखण्ड ज्योति को शान्त कर देता है, उसे कर्मज व्याधि के रूप में घोर असाध्य अतिसार (दस्त) का रोग होता है। किसी जलाशय या पानी की टंकी या कूप या नलकूप आदि को नष्ट करने का भी यही फल होता है। इसकी शान्ति के लिये 'ॐ सोऽग्निरस्मि' इस ऋचा का जप दश सहस्र की संख्या में करके एक सहस्र हवन उसी ऋचा से तिल तथा घृत से करना चाहिये एवं स्वर्ण का दान करना चाहिये।

संग्रहणीशमनम्

यः पुनः स्वीयां भार्यामनन्यगतिकां कारणमन्तरेण परित्यजति स जन्मान्तरे संग्रहणीरोगवान् भवति। तच्छान्तये शिवसङ्कल्पसूक्तमष्टोत्तरसहस्रं जपेत्। मधु हिरण्यं च दद्यात्। तथा च शिवगीतायाम्—

साध्वीं भार्यां च यो मर्त्यः परित्यजति कामतः। ग्रहणीरोगसंयुक्तः सदा भवति मानवः॥
शिवसङ्कल्पसूक्तेन जपेदष्टोत्तरं शतम्।

इति सङ्ग्रहण्युपशमनम्।

संग्रहणी रोगशमन का उपाय—(महीनों पुराने दस्तों को संग्रहणी कहते हैं) जो पुरुष अपनी पतिव्रता (वफादार) पत्नी को बिना कारण के त्याग देता है, अगले जन्म में उसे संग्रहणी रोग होता है। उसकी शान्ति-हेतु

शुक्ल यजुर्वेद के शिवसङ्कल्प सूक्त को एक हजार आठ की संख्या में जपना चाहिये तथा मधु एवं सुवर्ण का दान भी करना चाहिये। शिवगीता में कहा है—जो व्यक्ति अपनी साध्वी भार्या को कामेच्छा की पूर्ति के लिये दूसरी को अपनाकर त्याग देता है, वह अगले जन्म में संग्रहणी रोग से पीड़ित होता है। शिवसङ्कल्प सूक्त के एक सौ आठ जप से संग्रहणी शान्त होती है।

अर्शोरोगशमनम्

वेतनमादाय योऽध्यायपयत्यर्च्चयति जुहोति जपति सोऽर्शोरोगवान् भवति। स कृच्छ्रातिकृच्छ्रचान्द्रायणानि कृत्वा पुरुषसूक्तम्। उद्यन्नमृचम्। आदित्यहृदयं वा। अग्निवर्णमित्यादिसूक्तं व्याधिगुरुलघुभावेन वापेक्षयासहस्त्रमयुतं वा जपेत्। सघृतं हिरण्यं च दद्यात्। इत्यर्शोघ्नप्रतीकारः।

अर्शरोग-उपशमन की विधि—जो व्यक्ति इस जन्म में वेतन लेकर वेद पढ़ता है, जप करता है, वह अर्शरोग (बवासीर) से अगले जन्म में पीड़ित होता है। उसे कृच्छ्रव्रत, अतिकृच्छ्र चान्द्रायण व्रत करके पुरुषसूक्त, उद्यन्न ऋचा को अथवा आदित्य हृदय का पाठ करना चाहिये अथवा 'अग्निवर्णा' इत्यादि सूक्त का जप रोग की गम्भीरता के अनुसार एक सहस्र अथवा एक अयुत जपे तथा घृत के साथ स्वर्ण का दान भी करना चाहिये।

अजीर्णमन्दाग्निशमनम्

ऋग्विधाने—

यस्य भुक्तं न जीर्येत न तिष्ठेद्वा कथञ्चन। तस्यान्नस्यानुरोधत्वादग्निरस्मीत्यृचं जपेत्॥

वृद्धपराशरः—अग्निसूक्तं जपेन्नित्यं श्रीसूक्तं च विचक्षणः इति। जातवेदसे इति मन्त्रजपं वा कुर्य्यात्। अथवा मन्दाग्निशान्तये राजतं मेषं यथाविधि दद्यात्।

अजीर्ण एवं मन्दाग्नि का उपाय—ऋग्विधान के अनुसार जिसका खाया हुआ अन्न न पचता हो अथवा जिसे भस्मक रोग हो, उसे 'अग्निरस्मि' इत्यादि ऋचा का जप करना चाहिये। वृद्धपराशर के अनुसार उस व्यक्ति को नित्य ही अग्निसूक्त का जप अथवा श्रीसूक्त का जप करना चाहिये अथवा उसे 'जातवेदसे' इत्यादि मन्त्र का जप करना चाहिये अथवा मन्दाग्नि को शान्त करने के लिये चाँदी का मेष (भेड़ा या बकरा) बनवाकर दान करना चाहिये। इससे अजीर्ण तथा मन्दाग्नि जब पूर्वजन्म के दोष से उत्पन्न होते हैं तब शान्त हो जाते हैं।

विषूचिकोपशमनविधानम्

योगवासिष्ठे उत्पत्तिप्रकरणे एकोनसप्ततितमे सर्गे—

दुर्भोजना दुरारम्भा मूर्खा दुःस्थितयश्च ये। दुर्देशवासिनो दुष्टास्तेषां हिंसां करिष्यसि॥
प्रविश्य हृदयं प्राणैः पद्मप्लीहादिबाधनात्। वातलेखात्मिका व्याधिर्भविष्यसि विषूचिका॥
सगुणं निर्गुणं चैव जनमासादयिष्यसि। गुणान्वितचिकित्सार्थं मन्त्रोऽयं तु मयोच्यते॥

विषूचिका-उपशमन विधान—योगवासिष्ठ के उत्पत्ति प्रकरण के उनहत्तरवें सर्ग में कहा गया है—जो दुर्भोजन (प्रदूषित भोजन, चटपटा भोजन, फास्टफूड, समोसा आदि) करते हैं, जो बुरे कार्यों को आरम्भ करते हैं, जो मूर्ख हैं तथा दुःस्थितियों (कुसङ्ग) में निवास करते हैं, दुर्देश या दुर्ग्राम, दुर्नगर आदि में रहते हैं तो वहाँ के दुष्ट (हानिकारक कीटाणु) उनकी हिंसा करेंगे। वे हृदय, फुफ्फुस, मस्तिष्क, प्लीहा आदि में बाधा उत्पन्न करेंगे। उन्हें वातलेखात्मिका व्याधि विषूचिका होगी। वह विद्वान् या मूर्ख सभी को एक साथ मारेगी। उसकी लाभकारी चिकित्सा के लिये यह मन्त्र बताया जाता है।

ब्रह्मोवाच—

हिमाद्रेरुत्तरे पार्श्वे कर्कटी नाम राक्षसी। विषूचिकाभिधाना सा नाम्नाप्यन्या यवाधिका॥

तस्या मन्त्रो यथा—'ॐ ह्रींह्रींरांरां विष्णुशक्तये नमः। ॐ भगवति विष्णुशक्तिमेनाम् ॐ हरहर नयनय पचपच मथमथ उत्सादय दूरे कुरु स्वाहा हिमवन्तं गच्छ जीव सः सः सः चन्द्रमण्डलगतोऽसि स्वाहा॥

इति मन्त्री महामन्त्रं न्यस्य वामकरोदरे। मार्ज्जयेदातुराकारं तेन हस्तेन संयुतः॥
हिमशैलाभिमुख्येन विद्रुतान्तां विचिन्तयेत्। कर्कटीं कर्कशाक्रन्दां मन्त्रमुद्गरमर्दिताम्॥
आतुरं चिन्तयेच्चण्टे रसायनहृदि स्थितम्। अजरामरणं युक्तं मुक्तं सवाधिविभ्रमैः॥
साधको हि शुचिर्भूत्वा स्वाचान्तः सुसमाहितः। क्रमेणानेन सकलां प्रोच्छिनन्ति विषूचिकाम्॥

इति विषूचिकाप्रतीकारः।

ब्रह्माजी बोले—हिमालय के उत्तरी पार्श्व में कर्कटी नाम की राक्षसी है। उसी का नाम विषूचिका भी है, वह अन्य नाम यवाधिका से भी पुकारी जाती है। उसका मन्त्र है—ॐ ह्रीं ह्रीं रां रां विष्णुशक्तये नमः। ॐ नमो भगवति विष्णुशक्तिमेनाम् ओं हर-हर नय-नय, पचपच, मथमथ, उत्सादय दूरे कुरु कुरु स्वाहा। हिमवन्तं गच्छ जीवः सः सः सः चन्द्रमण्डलगतोऽसि स्वाहा'। इस महामन्त्र का साधक वाम कर तथा उदर में न्यास करे। उसी हाथ से रोगी के आकार का मार्जन करे। हिमशैलाभिमुख होकर वह राक्षसी भाग रही है—ऐसा चिन्तन करे। रोगी को चिन्तन करना चाहिये कि वह कर्कश आक्रन्द करने वाली राक्षसी मन्त्ररूपी मुद्गर (मोगरे) से मर्दित होकर भाग रही है। मन्त्रसाधक पवित्र होकर सुवाचा को अन्तःकरण में समाहित करके इस उपचार को करे तो विसूचिका की महामारी चली जाती है।

पाण्डुरोगोपशमनविधानम्

देवब्राह्मणद्रव्यापहारी पाण्डुरोगवान् भवति। स कृच्छ्रातिकृच्छ्रचान्द्रायणानि कुर्यात् कूष्माण्डहोमं च कुर्यात् हिरण्यं वसुधां च दद्यात्। अथवा पूर्वोक्तपृथिवीमन्त्रानुष्ठानं कुर्यादिति पाण्डुरोगोपशमनम्।

पाण्डुरोग-निदान एवं चिकित्सा—जो पूर्वजन्म में देवता एवं ब्राह्मण का द्रव्य हरण करता है, वह पाण्डुरोगी होता है। उसके प्रायश्चित्त के लिये उसे प्रथम कृच्छ्रचान्द्रायण अथवा अतिकृच्छ्रचान्द्रायण व्रत करना चाहिये। तत्पश्चात् कूष्माण्ड होम करना चाहिये। होमोपरान्त स्वर्णदान तथा भूमिदान करना चाहिये अथवा फिर पूर्व में कथित पृथ्वी मन्त्र का अनुष्ठान करना चाहिये। इससे पाण्डुरोग का शमन होता है।

रक्तपित्तोपशमनम्

यः पूर्वजन्मनि वैद्यशास्त्रे मदाद्युक्तौषधमन्यथा कृत्वा प्रयोजयति स शोणितपित्तव्याधिमान् भवति। स ॐ अग्निंदूतं वृणीमह इत्यादिना चरुघृताभ्यामष्टोत्तरायुतमग्नौ जुहुयात्। इति रक्तपित्तोपशमनम्।

रक्तपित्त-निदान चिकित्सा—जो व्यक्ति अपने पूर्वजन्म में वैद्यक शास्त्र के अनुसार मादक द्रव्ययुक्त औषध का प्रयोग अन्यथा रूप में औषध के अतिरिक्त करता है, वह इस जन्म में रक्तपित्ती होती है। उसे 'अग्निदूतं वृणीमहे०' इत्यादि मन्त्र से चरु-घृत के साथ एक सौ आठ आहुतियाँ अग्नि में देनी चाहिये।

क्षयरोगोपशमनविधानम्

महार्णवे—यः पूर्वजन्मनि साक्षाद्ब्रह्मणा क्षयरोगवान् भवति। 'ब्रह्मणा क्षयरोगी स्यात्' इति शातातपोक्तेः। अस्य प्रायश्चित्तमसाध्यरोगोपसृष्टं षडब्दं व्रतमाचरेत्। रोगतारतम्याभावात्प्रायश्चित्ताभावो द्रष्टव्यः। ऋग्विधाने—

असाध्यव्याधिना ग्रस्त उग्रेण प्राणहारिणा। आतेरौद्रेण सूक्तेन प्रत्यृचं वाग्यतः शुचिः॥
पूर्वमाज्याहुतीर्हुत्वा उपस्थाय च शङ्करम्। हविःशेषेण वर्तेत एकोत्तरशतं ततः॥
पूर्णे मासे जयेन्मृत्युं रोगेभ्यश्च प्रमुच्यते। होमकर्मण्यशक्तानां जपस्तद्द्विगुणो भवेत्॥
अथवा त्र्यम्बकमन्त्रपुरश्चरणं कुर्यात्।
इति क्षयोपशमनविधानम्।

क्षयरोग-निदान चिकित्सा—महार्णव के अनुसार पूर्वजन्म में जो साक्षाद् ब्रह्महत्या करता है, उसे इस जन्म में क्षयरोग पीड़ित करता है। इसके प्रायश्चित्त के लिये रोगपीड़ित व्यक्ति को छः वर्षों तक व्रत का पालन (ब्रह्मचर्य-पालन) करना चाहिये। रोग के तारतम्य के अनुसार प्रायश्चित्त का अभाव है। जैसा कि ऋग्विधान में कहा है कि असाध्य उग्र एवं प्राणहारी व्याधि से पीड़ित होने पर अतिरौद्र सूक्त से प्रत्येक ऋचा का शुद्ध उच्चारण करते हुए प्रथम घृत की आहुतियाँ देकर फिर खड़े होकर शर्करा की एक सौ आठ आहुतियाँ देनी चाहिये। एक मास तक ऐसा करने से वह मृत्यु को जीत लेता है तथा रोग से मुक्त हो जाता है। होमकर्म में अशक्त रोगियों को दुगुना जप करना चाहिये। अथवा त्र्यम्बक मन्त्र का पुरश्चरण करना चाहिये।

श्वासकासादिकफरोगोपशमनम्

उमामहेश्वरसंवादे—

कृतघ्नो जायते मर्त्यः कफवाञ्श्वासकासवान्। उष्णज्वरी च नित्यं हि पित्तरोगसमन्वितः॥ इति।
तच्छान्तये पिपीलिकामध्यानि यवमध्यानि वा त्रीणि चान्द्रायणानि कुर्यात्। यथेप्सितं पञ्चाशद्ब्राह्मणान् भोजयेत्।
तद्विष्णोरिति सूक्तेन जपं कुर्याद्द्विजोत्तमः। पूजयेद्भोजयेद्द्यात्तन्मना नान्यमानसः॥ इति।

अथवा पुरुषसूक्तम्। सहस्रनामस्तोत्रम्। उद्यन्नित्यृचं वा प्रत्यष्टोत्तरायुतं जपं कृत्वा चरुघृताभ्यां हुत्वा पञ्चाशद्-ब्राह्मणान् भोजयेत्। महाभारते—

हिरण्यं रक्तवासांसि पञ्चाशद्विप्रभोजनम्। सहस्रकलशस्नानं कुर्याद्रोगस्य शान्तये॥ इति।
अथ अच्युतानन्त गोविन्देति नामत्रयमष्टोत्तरायुतत्रयं जपेत्।
इति कफरोगोपशमनम्।

श्वास-कासादि कफरोग-निदान एवं चिकित्सा—श्वास, खाँसी आदि कफरोगों के कारण बताते हुए श्री उमा-महेश्वर संवाद में कहा है कि पूर्वजन्म में जो व्यक्ति कृतघ्न होता है, वह कास-श्वास आदि कफरोगों से इस जन्म में पीड़ित होता है; साथ ही उसे पित्तरोग के साथ उष्णज्वर भी रहता है। उसकी शान्ति के लिये पिपीलिकामध्य चान्द्रायण अथवा यवमध्य चान्द्रायण अथवा तीन चान्द्रायण करना चाहिये। अथवा पुरुषसूक्त, सहस्रनामस्तोत्र, 'उद्यन्' इत्यादि ऋचाओं से एक सौ आठ अयुत जप करके चरु एवं घृत से होम कर पचास ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये। महाभारत में कहा है—स्वर्ण, रक्तवस्त्र, पचास ब्राह्मणों का भोजन, सहस्र कलशस्नान रोग की शान्ति के लिये करना चाहिये। अथवा १०८ अयुत के तिगुने प्रमाण में अच्युतानन्त गोविन्द इन तीनों नामों का जप करना चाहिये। (एक सौ आठ अयुत=एक लाख अस्सी सहस्र तथा इसका तिगुना ५ लाख ४० सहस्र होता है)।

वातव्याधिशमनविधानम्

देवब्राह्मणस्वापहरणात् स्वामिद्रोहाद्वातरोगी भवति। अस्य प्रायश्चित्तं कृच्छ्रातिकृच्छ्रचान्द्रायणं कुर्यात्। वीरसिंहावलोकने—

वात आवातमन्त्रोऽयं जप्यतेऽयुतसङ्ख्यया। अग्निरश्मीत्यृचं वापि जपेद्वा जुहुयादपि॥ इति।

धनुर्वाते विशेषस्तत्रैव यः पुनरक्षतयोनिमनिच्छिन्तीं परस्त्रियं बलादाक्रम्योपभुङ्क्ते स सर्वसन्धिषु धनुर्वातरोगवान् वा विषमज्वरी वा तीव्रपीडावान् भवति। तच्छान्तिर्ब्राह्मे—

अपमृत्युप्रशान्त्यर्थं प्रतिरूपं द्विजोत्तमे। प्रदद्यान्महिषीं कृष्णां सवत्सां पूजयेत्ततः॥
सहस्रनामस्तोत्रं वा सर्वं वारत्रयं जपेत्। मृत्युरोगोपशान्त्यर्थमात्मनश्च शुभाप्तये॥

शङ्करगीतायाम्—

अच्युतानन्त गोविन्देत्येतन्नामत्रयद्द्विजः। अयुतत्रयसङ्ख्याकं जपं कुर्याद्धि शान्तये॥ इति।

अथवा पुरुषसूक्तं जपेत् पापक्षयाद्रोगमोक्षो भवत्येव।

इति वातरोगोपशमनविधानम्।

वातरोग निदान एवं चिकित्सा—वातव्याधि देव-ब्राह्मण के धन हरने से, स्वामीद्रोह से होती है। इसका प्रायश्चित्त कृच्छ्रचान्द्रायण अथवा अतिकृच्छ्रचान्द्रायण है। वीरसिंहावलोक में कहा है—इसमें वात आवात मन्त्र का अयुत संख्या के साथ ही 'अग्निरश्मि०' इत्यादि ऋचा का भी वातरोगी जप तथा हवन भी करना चाहिये।

धनुर्वात में विशेष—जो किसी अक्षत योनि स्त्री को उसकी इच्छा के बिना बलपूर्वक भोगता है, उसे सभी सन्धियों में धनुर्वात (यह टिटेनस नहीं; अपितु अस्थिमृदुता है) होता है अथवा उसे विषमज्वर या तीव्र पीड़ा होती है। उसकी शान्ति ब्रह्मपुराण में कही गई है—अपमृत्यु की शान्ति हेतु उत्तम ब्राह्मण को रोग का प्रतिरूप अथवा काली सवत्सा दुधारू भैंस का दान करना चाहिये अथवा सहस्रनामस्तोत्र का तीन बार जप करना चाहिये। मृत्युरोग तथा आत्मशान्ति एवं शुभ फल के लिये ऐसा करना चाहिये। शङ्करगीता में कहा गया है—अच्युतानन्द गोविन्द—इन तीन नामों को द्विज तीन अयुत (५ लाख ४० हजार) की संख्या में जप करे। अथवा पुरुषसूक्त का जप करे। पुरुषसूक्त के जप से पापों का नाश तथा रोग से मुक्ति होती है। पुरुषसूक्त का भावार्थ ठीक से समझकर उसका जप करना चाहिये, तभी उसका सम्यक् फल प्राप्त होता है; केवल तोतारटन्त जप करने से कोई लाभ नहीं होता; यह ध्यान में रखना चाहिये।

शूलरोगोपशमनविधानम्

याचितारमकिञ्चनं ब्राह्मणं श्रुताध्यापनसम्पन्नमतिशान्तमाहूय यो न प्रयच्छति स जठरशूलरोगवान् भवति कदाचिदाध्मानी भवति सकृच्छ्रातिकृच्छ्राणि कृत्वा वस्त्राणि दद्यात्। दाननिबन्धोक्तं त्रिशूलदानं च कार्यम्। महार्णवे शातातपः—

शूली परोपतापेन जायते वपुषा तनुः। सोऽन्नदानं प्रकुर्वीत तथा रुद्रं जपेद्बुधः॥ इति।

रुद्रविधानं (शिवप्रकरणे) द्रष्टव्यम्।

इति शूलोपशमनम्।

शूलरोग-निदान चिकित्सा—जो व्यक्ति अपने पूर्व जन्म में किसी अकिञ्चन (दीन-हीन गरीब) श्रुत एवं अध्ययन-सम्पन्न ब्राह्मण को, जो कि अत्यन्त शान्त स्वभाव का हो, बुलाकर कुछ नहीं देता है, वह जठरशूल का रोगी इस जन्म में होता है। कभी-कभी उसे अफारा भी लगता है। उसके लिये कृच्छ्र करके वस्त्रदान करना चाहिये। दानप्रकाश ग्रन्थ में बताई विधि से त्रिशूल-दान भी करना चाहिये। शातातप के अनुसार दूसरों को कष्ट देने से इस जन्म में शूल हो जाता है, उसे अन्नदान करना चाहिये तथा रुद्रजप भी करना चाहिये।

गुल्मरोगशमनम्

गुरुप्रत्यर्थी वातगुल्मवान् भवति। तच्छान्तये मासमेकं पयोव्रतं कृत्वा ॐ मुञ्चामीत्यनेन सूक्तेन प्रत्यृचं चरुघृताभ्यां जुहुयात्। ॐ वातआवातुभेषजमित्यस्य वातायन उल ऋषिः। वायुर्देवता। गायत्री छन्दः। विहितार्थे जपे विनियोगः। ॐ

वात आवातु भेषजꣳ शम्भूर्मयोभूर्नोहृदेप्रखआयूꣳषितारिषत्॥ १ ॥ इति मन्त्रेणायुत सङ्ख्यया जपो होमश्च कार्य्यः।

इति गुल्मोपशमनम्।

गुल्म रोग-निदान चिकित्सा—जो अपने गुरु से धन की याचना करता है, उसे वातगुल्म (बायगोला) होता है। उसकी शान्ति के लिये एक मास तक पयोव्रत करके 'ॐ मुञ्चामि०' इस सूक्त से प्रतिऋचा चरु एवं घृत से हवन करना चाहिये। 'ॐ वात आवातु भेषजम्०' इस मन्त्र के वातायन उल ऋषि इत्यादि का विनियोग करके इस मन्त्र का अयुत संख्या (दस हजार) में जप करना चाहिये। मन्त्र मूल पाठ में लिखा है।

उदररोगाणां शमनविधानम्

महार्णवे—

योब्रह्मविष्णुरुद्राणां भेदमुत्तमभावतः। कुर्यात्स उरव्याधियुक्तो भवति मानवः॥
कुर्यात्कृच्छ्रं चातिकृच्छ्रं चान्द्रायणमथापरम्। सहस्रकलशस्नानमीश्वरस्य तु कारयेत्॥
जपेदयुतसङ्ख्याकमुद्यन्नद्येत्यृचं तथा। आतेपितरतः सूक्तान् घृतेन चरुणा पृथक्॥
अष्टोत्तरसहस्रं हि जुहुयाच्च ततः परम्। मधुनाज्येन संयुक्तं हिरण्यं शक्तितो दिशेत्॥ इति।
सहस्रकलशस्नानं महेशस्य शतरुद्रेण तत्तु रुद्रप्रकरणे द्रष्टव्यम्। उद्यन्नद्येत्यृचमपि पूर्वं प्रतिपादितमित्यर्थः।

अथ जलोदरे विशेषस्तत्रैव—

सहस्रकलशस्नानं महादेवस्य कारयेत्। भोजयेच्च शतं विप्रान्मुच्यते किल्बिषात्ततः॥

प्लीहोदरे विशेषः—

भृतकाध्यापको यस्तु कन्यादूषणतत्परः। प्लीहवान् स भवेद्विप्रो जपेच्छ्रीसूक्तमन्त्र हि॥
अयुतत्रयसङ्ख्याकं प्लीहोदरविमुक्तये। प्रत्यृचं च भवेद्धोमश्चरुणा सर्पिषा पृथक्॥ इति।
श्रीसूक्तं देवीमन्त्रप्र .णे ज्ञेयम्।

अथ प्लीहरोगनाशकहनुमन्मन्त्रः; मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'योयोहनूमन्तफलफलितधगधगितआयुराषफूरुडाह' इति चतुर्विंशति २४ वर्णो मन्त्रः।

प्लीहयुक्तोदरे स्थाप्यं नागवल्लीदलं शुभम्। तदुपर्य्यष्टगुणितं वस्त्रमाच्छादयेत्ततः॥
वंशजं शकलं तस्योपरि मुञ्चेत्कपिं स्मरन्। आरण्यप्रस्तरोत्पन्ने वह्नौ यष्टिं प्रतापयेत्॥
बदरीतरुसम्भूतां मन्त्रेणानेन सप्तशः। तया सन्ताडयेद्वंशं शकलं जठरस्थितम्॥
सप्तकृत्वः प्लीहरोगो नश्यत्येव नृणां क्षणात्।

इत्युदररोगशमनप्रकारः।

उदररोग-निदान चिकित्सा—जो ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र में भेद करता है, उसे छाती में पीड़ा होती है। उसे कृच्छ्र, अतिकृच्छ्रचान्द्रायण करना चाहिये। श्री शिवजी को सहस्र कलश से स्नान कराना चाहिये। 'उद्यन्' ऋचा का जप अयुत संख्या में करना चाहिये। उसके अतिरिक्त 'आते पितरतः' सूक्तों का घृत से होम करना चाहिये। उनकी आहुति १०८ हजार देनी चाहिये। फिर मधु-घृत एवं सुवर्ण का दान करना चाहिये। शिवजी को सहस्र कलश स्नान कराने की विधि रुद्रानुष्ठान प्रकरण में देखनी चाहिये।

जलोदर में विशेष—महादेव जी को सहस्रकलश स्नान तथा एक सौ ब्राह्मणों को भोजन कराने से पाप से छूट जाता है।

प्लीहोदर में विशेष—जो वेतन पर अध्यापन कार्य करता है एवं कन्यादूषण में लगा रहता है, उस ब्राह्मण को प्लीहा रोग होता है; उसे श्रीसूक्त का जप करना चाहिये। यह सूक्त अयुक्त संख्या में जपा जाय तो प्लीहोदर से मुक्त हो जाता है। चरु तथा घृत से श्रीसूक्त की प्रत्येक ऋचा से हवन भी करना चाहिये। श्रीसूक्त पीछे देवीमन्त्रानुष्ठान प्रकरण में दिया गया है।

प्लीहा-नाशक हनुमान् मन्त्र—मन्त्र महोदधि के अनुसार 'यो यो हनूमन्तं फलफलितधगधगित आयुराष फूरुडाह' यह चौबीस अक्षरों का मन्त्र है। प्लीहोदर रोग में रोगी की प्लीहा पर पेट पर पान का पत्ता रखकर उसके ऊपर आठ तह का वस्त्र आच्छादित करे। उसके ऊपर बाँस का टुकड़ा हनुमान जी का स्मरण करते हुए छोड़ दे। अब जङ्गली कण्डों की अग्नि में बेर की लकड़ी को तपाकर इस मन्त्र का उच्चारण सात बार करके उसके द्वारा उस वस्त्र पर रखे बाँस के टुकड़े का ताडन करे। सात बार ऐसा करने से प्लीहावृद्धि शान्त हो जाती है।

मूत्रकृच्छ्रादिरोगहरप्रतीकारः

महार्णवे—

सहस्रनामस्तोत्रस्य सूक्तस्य पौरुषस्य च। गायत्र्याश्च जपः कार्य्यः शक्त्या पापापनुत्तये॥

अथ प्रमेहरोगोपशमनविधानम्; महार्णवे—

मातृगामी स्वसृगामी मधुमेही भवेन्नरः। भ्रातृभार्याभिगामी च जलमेही नराधिप॥
यो गच्छेद्भगिनीं नित्यमिक्षुमेहीति निश्चितम्। चाण्डालीगमनात्सर्वप्रमेहव्याधिमान्भवेत् ॥
क्षुत्पिपासातुरश्चैव जायते तस्य निष्कृतिः। चान्द्रायणत्रयं कुर्याद्यवमध्यं तथापरम्॥
तिर्यग्गामी स शूलेन प्रमेहेन युतो भवेत्। कुर्य्यात्सान्तपनादीनि प्रायश्चित्तं यथाविधि॥
पर्वव्यवायी मनुजः कन्यागामी तथैव च। वातप्रमेहयुक्तः स्यात्कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम्॥

मूत्रकृच्छ्र-निदान एवं प्रतिकार—श्रीविष्णुसहस्रनाम अथवा पुरुषसूक्त अथवा गायत्री मन्त्र का प्रयोग मूत्रकृच्छ्र (पेशाब की जलन) के प्रतिकार के लिये करना चाहिये।

प्रमेह-रोगोपशमन विधान—मातृगामी, स्वसृगामी व्यक्ति अगले जन्म में मधुमेही होते हैं। इसी प्रकार जो अग्रज अथवा अनुज की पत्नी के साथ मैथुन करता है, उसे अगले जन्म में मधुमेह या प्रमेहनामक रोग उत्पन्न होता है। जो बहिन के साथ मैथुन करता है, वह निश्चित ही इक्षुमेह से पीड़ित होता है। चाण्डाली के साथ गमन करने से अनेक प्रकार के प्रमेह उत्पन्न होते हैं। उसे भूख एवं प्यास से व्याकुलता होती है, उसकी निष्कृति इस प्रकार है—यवमध्य चान्द्रायण करे। जो तिर्यक् योनियों, पशु-पक्षियों के साथ मैथुन करते हैं, वे शूलमेही होते हैं। उन्हें कृच्छ्र सान्तपन व्रत करना चाहिये। जो कन्या के साथ मैथुन करते हैं, पर्वतिथि में मैथुन करते हैं, वे वातप्रमेही होते हैं। उनके लिये तीन चान्द्रायण करना चाहिये।

सर्वप्रमेहशमनप्रकारः

प्रोक्ताधिकं प्रायश्चित्तं प्रकल्प्य मात्रादीनामतिमात्रनिषिद्धत्वात्। यत्राशक्तः तत्र कृच्छ्रत्रयं प्रतिदिनं चत्वारिंशद्-ब्राह्मणभोजनं कारयेत्। पुरुषसूक्तं सहस्रनामस्तोत्रं गायत्रीं वा जपेत्। आतेरौद्रसूक्तेनाज्यहोमं जपं वा अष्टोत्तरसहस्रं कारयेत्। स्वर्णधेनुं च दद्यात्।

सर्वप्रमेह-निदान चिकित्सा—इसके लिये शास्त्र में कठोर प्रायश्चित्त कहा गया है; अतः पीड़ित को यथाशक्ति तीन कृच्छ्र करके प्रतिदिन चालीस ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये तथा पुरुषसूक्त, विष्णुसहस्रनाम

स्तोत्र अथवा गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिये। आतेरौद्र सूक्त से आज्य होम, एक सौ आठ आहुति अथवा जप करना चाहिये एवं स्वर्णधेनु का दान करना चाहिये।

श्वयथुरोगोपशमनम्

महार्णवे—

पर्वताग्रं नदीतीरं छायामारुह्य वा नरः। मूत्रं पुरीषमथवा यः प्रक्षिपति वा जले॥
श्वयथुव्याधिमाप्नोति इत्याह भगवाञ्छिवः॥

'स ॐ इदंवोविश्वतःशरीर' इत्यादि अष्टोत्तरशतायुतत्रयं जपेत्। ॐ आपोहिष्ठामयोभुव इत्यनेन चरुघृताभ्यामष्टोत्तरायुतत्रयं होमं कुर्य्यात्।

शोथरोग निदान चिकित्सा—शरीर में जलीय सूजन को शोथ कहते हैं। जो पहाड़ की चोटी पर, नदी के किनारे अथवा वृक्ष की छाया में मूत्र एवं पुरीष का त्याग करता है अथवा इनको जल में फेंकता है, उसे शोथरोग होता है—ऐसा भगवान् शिव का कथन है। उसे 'ॐ इदं वो विश्वतः शरीर०' इत्यादि मन्त्र का तीस हजार एक सौ आठ संख्या में जप तथा 'ॐ आपो हिष्ठा मयो भुव इत्यादि०' मन्त्र से चरु एवं घृत से तीन सहस्र एक सौ आठ होम करना चाहिये।

वृषणव्याधिशमनप्रकारः

तत्र स्नुषागामी वातवृषणः। असकृदज्ञानाद्गत्वा चान्द्रायणत्रयाच्छुध्येत्। ज्ञानात्सकृद्गमने कृच्छ्राद्वा शुद्धिः। बुद्धिपूर्वकं बहुदिनेषु गत्वा अग्निं प्रविश्य मृतः शुध्येत्। स रुद्रसंहितामष्टोत्तरसहस्रं जपेत्। गां च दद्यात्। तथा च महार्णवे विष्णुः—

जायते वृषणे यस्य व्याधिः परमदारुणः। जपित्वा दशसाहस्रं मुच्यते रुद्रसंहिताम्॥

वृषण रोग निदान चिकित्सा—जो अपनी पुत्रवधू के साथ मैथुन करता है, उसे वातवृषण का रोग हो जाता है, जिसमें अण्डकोषों में सूजन एवं पीड़ा होती है। यदि यह कार्य अनजाने में हो तो चान्द्रायण व्रत करके शुद्ध होता है। जानबूझकर केवल एक ही बार हो तो कृच्छ्रचान्द्रायण से शुद्धि होती है। जानबूझकर बहुत समय तक किया जाय तो उसकी शुद्धि तो अग्नि में कूदकर प्राण देने से ही होती है। अथवा वह रुद्रसंहिता का एक हजार आठ जप एवं गोदान करे तब शुद्धि होती है।

गण्डमालाशमनविधानम्

गुरुद्वेषी परचित्तदुःखकारी गुल्मी गण्डमालाव्याधिमांश्च जायते। अस्य प्रायश्चित्तं चान्द्रायणं कृत्वा गण्डमाला-गलगण्डोपशान्तये पुरुषसूक्तं सहस्रमयुतं वा व्याध्यनुसारेण जपेत्।'

गण्डमाला निदान चिकित्सा—गुरुद्वेषी तथा दूसरे को दुःख देने वाला गुल्मरोगी तथा गण्डमाला (विसब्रेलि= Scrafula) से पीड़ित होता है। इसके प्रायश्चित्त-स्वरूप चान्द्रायण व्रत करके पुरुषसूक्त का जप एक सहस्र अथवा एक अयुत (दस सहस्र) करना चाहिये।

कुष्ठरोगोपशमनविधानम्

तत्र जन्तुघातकः कुष्ठरोगी वस्त्रहारी श्वेतकुष्ठी भवति, सान्तपनं कुर्य्यात्। तदुक्तं महार्णवे—

यो नरो हन्ति वै जतून्कुष्ठरोगी भवेत्तु सः। स च सान्तपनं कुर्याद्भगवानाह शङ्करः॥ इति।

अन्यायदण्डकारी च मुखकृष्णो भवति। असौ कृच्छ्रातिकृच्छ्रचान्द्रायणं कुर्य्यात्। क्षुद्रप्राणिहिंसको विवर्णमुखः, स चान्द्रायणमतिकृच्छ्रं च कृत्वा राजतवृषभदानं कुर्य्यात्।

ब्रह्महा नरकस्यान्ते पाण्डुकुष्ठी प्रजायते। प्रायश्चित्तं प्रकुर्वीत यथोक्तमृषिभाषितम्॥

महाभारते—

हिरण्यं रक्तवासांसि पञ्चाशद्विप्रभोजनम्। सहस्त्रकलशस्नानं तस्य रोगोपशान्तये॥ इति।

अत्र सहस्त्रकलशस्नानं शालग्रामोपरि कार्यम्। पुरुषसूक्तं सहस्त्रनामस्तोत्रम्। उद्यन्नद्येत्यृचो जपेत्प्रत्यष्टोत्तरायुतं चरुघृताभ्यां जुहुयात्। अथवा सूर्याराधनम्। आदित्यहृदयजपं महाभारतश्रवणं च कुर्य्यात्।

कुष्ठरोग का कर्मज निदान एवं शमन—पूर्वजन्म में प्राणियों की हत्या करने वाला कुष्ठरोगी होता है। कपड़ों को छीनने वाला श्वेतकुष्ठी होता है। इसके लिये सान्तपन करना चाहिये। महार्णव में भगवान् शङ्कर ने कहा है कि जन्तुघाती कुष्ठरोगी होता है। जो अन्यायपूर्ण दण्ड देता है, वह कृष्णमुख होता है। इन सबको कृच्छ्रचान्द्रायणादि करना चाहिये। छोटे-छोटे प्राणियों की जो हत्या करता है, वह विवर्ण मुख वाला होता है। उसे चान्द्रायण करके वृषभदान करना चाहिये। ब्राह्मण का धन हरण करने वाला नरक भोगने के उपरान्त अगले जन्म में पाण्डुकुष्ठी होता है। उसे ऋषियों द्वारा बताया गया प्रायश्चित्त करना चाहिये। महाभारत में कहा है—स्वर्ण, रक्त वस्त्र का दान तथा पचास ब्राह्मणों का भोजन कराना चाहिये। भगवान् शङ्कर का सहस्त्रधारा कलश अभिषेक कराना चाहिये। अथवा शालग्राम का सहस्त्रकलश अभिषेक कराना चाहिये। 'उद्यन्०' इत्यादि ऋचाओं का 'दस हजार आठ' जप तथा चरु एवं घृत से हवन अथवा सूर्य की आराधना करनी चाहिये। आदित्य हृदय का जप अथवा महाभारत का श्रवण करना चाहिये।

विमर्श—श्रीलङ्का में कुष्ठ एवं क्षय रोग के उपचार के लिये रोगी वैद्यों एवं डाक्टरों के पास जाने के स्थान पर उनका धार्मिक उपचारों द्वारा ही उपचार कराना अधिक पसन्द करते हैं। पूर्वकर्म के दोष से ये रोग होते हैं—ऐसा विश्वास सिंहलीजनों में भी है। इस सम्बन्ध में श्रीलङ्का के श्री गननाथ ओबेयेसेकेरे अपने निबन्ध में लिखते हैं—

And this is surely due to my bad karma from a previous birth karma dosha. Illness may be due to naturalistic causes such as an upset humour from spoiled inappropriate or unbalanced foods. It may be caused by supernatural doshas, or by combination of both. And when both natural and supernatural causes are at work both type of curing are in order.—The Impact of Ayurvedic Ideas on the Culture and Individual in Sri Lanka.

इस प्रकार से इन व्याधियों में दैवी उपचार के साथ भेषजोपचार भी करना चाहिये। यह सिद्धान्ततः ठीक भी है; क्योंकि वह व्याधि दोनों कारणों से अर्थात् दोषों तथा कर्मों दोनों से हो सकती है; अतः दोनों प्रकार का उपचार करना युक्तियुक्त ही होता है। इसीलिये श्री गननाथ ओबेयेसेकेरे पुनः अपने उसी निबन्ध में कहते हैं—

Religious specialists may prescribe Ayurvedic medicine along with their magico-religious curing techniques.

शिरोरोगशमनविधानम्

गुरूपरोधी शिरोरोगी भवति। तच्छान्तये पञ्चाशद्ब्राह्मणभोजनं कार्यम्। उद्यन्नद्येत्यृचं जपेत्। कूष्माण्डीभिश्च जुहुयात्। अथवा अक्षीभ्यामिति सूक्तमष्टोत्तरशतं जपेत्। चरुघृताभ्यां दशांशेन जुहुयात्। अथवा वायुपुराणोक्त-स्वर्णयज्ञोपवीतदानं कुर्य्यात्।

शिरोरोगशमन विधान—गुरु का विरोध करने वाला, उन्हें परेशान करने वाला अगले जन्म में असाध्य शिरोरोग से पीड़ित होता है। उसकी शान्तिहेतु पचास ब्राह्मणभोजन करना चाहिये। 'उद्यन्' ऋचा का जप, कूष्माण्ड मन्त्रों से हवन अथवा 'अक्षीभ्यां' सूक्त का एक सौ आठ जप करना चाहिये। चरु एवं घृत से दशांश होम करना चाहिये अथवा वायुपुराण में कथित विधि से स्वर्ण का यज्ञोपवीत दान करना चाहिये।

नेत्ररोगशमनविधानम्

महार्णवे—

परदृष्टिविघातेन भिषग्मिथ्याचरेण च। कामात्परस्त्रियं दृष्ट्वा नेत्ररोगी भवेन्नरः॥
चान्द्रायणपराकं च पञ्चाशद्विप्रभोजनम्। कुर्याद्वयः सुपर्णेति चरुणा सर्पिषा तथा॥
अष्टोत्तरसहस्रं तु जुहुयाद्रोगशान्तये। वर्चोदाअसि मन्त्रं तु जपेदाज्यं सकाञ्चनम्॥
दद्याद्विप्राय विधिवन्नेत्ररोगः प्रशाम्यति। इति।

कर्मविपाकसङ्ग्रहेऽपि—

नग्नां परस्त्रियं दृष्ट्वा सूर्यं वास्तमयोदये। नेत्रशूली भवेत्सोऽपि नेक्षितुं क्षमते दृशा॥
वर्चोमेदेहि मन्त्रेण होमः स्यादष्ट चायुतम्। वयः सुपर्णा मन्त्रेण नेत्रे सिञ्चेच्च वारिणा॥
अक्षीभ्यान्तः इति जपेन्नेत्रशूलं प्रशाम्यति। इति।

'ॐ वर्चोदा असि वर्चो मे देहि' इति दशाक्षरो मन्त्रः। होमकाले स्वाहान्तः कर्त्तव्यः। अस्य मन्त्रस्य प्राजापत्यपरमेष्ठी-वामदेवा ऋषयः। अग्निर्देवता। अतिशक्वरीछन्दः। विहितार्थे विनियोगः। ॐ वर्चोदाअसिवर्चोमे देहि॥ १॥ ॐ वयः सुपर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधाऋषयोनाधमानाः। अपध्वान्तमूर्णुहिपूर्धिचक्षुर्मुमुग्ध्यस्मान्निधयेवबद्धान्॥ २॥ एवं यथाशक्ति यथारोगं च जपसङ्ख्यां प्रकल्प्य यावद्रोगविमुक्तिस्तावन्नेत्रसेचनं कृत्वा यथाशक्ति ब्राह्मणान् भोजयेत्। सूर्यप्रीत्यर्थं सूर्यपूजा च कार्य्या। नेत्राधिदेवतात्वात्तस्येति। ससुवर्णं साज्यं छायापात्रं दद्यात्। नेत्रपूयहरमपि। तत्रैव—

दम्पतीभ्यां प्रवृत्तं तु मैथुनं यो निरीक्षते। स नेत्रपूययुक्तः स्यादक्षीभ्यामिति मन्त्रतः॥
जपहोमौ च कर्त्तव्यौ शक्त्या ब्राह्मणभोजनम्। सहस्रकलशस्नानं रवेः कुर्याद्द्विजोत्तमः॥ इति।

अत्र सहस्रकलशस्नानं सूर्यप्रतिमायां मण्डले वा ॐ विभ्राडित्यादिसौरसूक्तेन कार्यम्। अथवा सर्वनेत्ररोगोप-शमनार्थमादित्यहृदयं नेत्रोपनिषदं वा सहस्रमयुतं वा पठेत्।

नेत्ररोगशमन विधान—जो पूर्वजन्म में दूसरों की आँख फोड़ता है अथवा बिना वैद्यक पढ़े लोगों की चिकित्सा आँख मींचकर करता है अथवा कामवासना से ग्रस्त होकर दूसरे की स्त्री को देखता है, वह व्यक्ति अगले जन्म में नेत्ररोगी होता है। इसके प्रतीकार के लिये रोगी को चान्द्रायण व्रत करके फिर पचास ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। 'वयः सुपर्ण०' इत्यादि ऋचाओं से घृत एवं पायस का एक सौ आठ आहुति हवन रोगशान्ति के लिये करना चाहिये। अथवा 'वर्चोदा असि०' मन्त्र का जप करके कांसे के कटोरे में घी भरकर उसमें स्वर्ण डालकर विप्र को दान देना चाहिये। इससे विविध नेत्ररोग शान्त होते हैं।

कर्मविपाक संग्रह में भी कहा है कि जो परस्त्री को नग्न देखता है अथवा सूर्य को उदित अथवा अस्त होते हुए देखता है, वह नेत्रशूली होता है तथा वह देखने में समर्थ नहीं होता है। उसे 'वर्चो मे देहि०' इत्यादि मन्त्र से दस सहस्र आठ (१०,००८) की संख्या में होम करना चाहिये। 'वयः सुपर्णा०' इत्यादि मन्त्र से नेत्रों में शीतल जल के छींटे देना चाहिये। 'अक्षीभ्यान्तं' इत्यादि मन्त्र का जप करना चाहिये। इससे नेत्रशूल शान्त होता है।

'ॐ वर्चोदा असि० वर्चो मे देहि' यह दश अक्षरों का मन्त्र है। इससे होम किया जाय तो इसके अन्त में स्वाहा लगाना चाहिये। 'ॐ वयः सुपर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो बाधमानाः। अपध्वान्तमूर्णुहिपूर्धि चक्षुर्मुमुग्ध्यस्मान् निधयेव बद्धान्॥' यह मन्त्र है। इसका रोग के बलानुसार संख्या में जप करना चाहिये। जब तक रोग दूर न हो तब तक इससे नेत्रों का सेचन करते रहना चाहिये तथा यथाशक्ति संख्या में ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। सूर्य की प्रसन्नता के लिये सूर्यपूजा करनी चाहिये; क्योंकि सूर्य ही नेत्रों के अधिदेवता हैं। सुवर्णसहित, घृतसहित छायापात्र का दान करना चाहिये। यह नेत्र का पूय भी हरण करता है।

जो किसी दम्पति को मैथुन करते हुए देखता है, वह नेत्रपूय (आँखों में पीब आने) का रोगी होता है अथवा उसके नेत्रों में नासूर हो जाता है। उसे 'अक्षीभ्यां०' इत्यादि मन्त्र से जप एवं होम करना चाहिये तथा यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन भी कराना चाहिये।

मन्त्र—ॐ अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छबुकादधि। यक्ष्मं शीर्षण्य मस्तिष्क जिह्वाया विवृहामि ते॥' (ऋग्वेद १०।१६३।१) यह मन्त्र है। इस सूक्त में कुल छः मन्त्र हैं।

सूर्य को सहस्र कलशस्नान कराना चाहिये। यहाँ सहस्र कलशस्नान सूर्यमन्दिर में सूर्य की प्रतिमा पर अथवा सूर्य के बिम्ब में 'ॐ बिभ्राडित्यादि' सौर सूक्त के द्वारा कराना चाहिये। अथवा सर्वनेत्ररोगोपशमनार्थ आदित्यहृदय स्तोत्र अथवा नेत्रोपनिषद् (चाक्षुषोपनिषद) का पाठ एक सहस्र अथवा एक अयुत की संख्या में करना चाहिये।

विमर्श—भारतीय आयुर्वेद के अङ्ग भूतविद्या की भाँति चीन में भी बाह्य शक्तियों के प्रभाव, भूत-प्रेत पिशाच आदि को भी अनेक रोगों में कारणभूत स्वीकार किया गया है। प्राचीन चीनी चिकित्सा ग्रन्थों में इसे 'वाइचिङ्' नामक विद्या कहा गया है; परन्तु अब इस विद्या का वहाँ लोप-सा हो चला है। पाश्चात्य विद्वानों ने चीन की इस विद्या को Mystical Science नाम दिया है; वहाँ इस प्रकार से अनेक रोगों के उपचार में जादू, गण्डे, ताबीज, मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र तथा झाड़-फूँक का प्रयोग होता रहा है तथा विरल प्रमाण में आज भी होता है। चीन के प्राचीन चिन्तकों ने कर्मफल सिद्धान्त को स्वीकार किया है—

I turn now to a religious view of disease which contrasts with a moral conceptions we have dealt with so far. This view involves the anthropomarphism of nature and humanization of natural laws. It deals with problems of morality and it compliments the other systems. In Chinese thought, man's nature is part of a universal order, but culture teach him how to comply this order by preserving inner and outer harmony. If he is aggressive, angry or envious he creats disharmonies in the universe and within himself—Chinese Traditional Etiology.

चीन में भी भूत-प्रेत, यक्ष, राक्षस, गन्धर्वादि के द्वारा मानव शरीर में प्रविष्ट होकर उसे आधि-व्याधिग्रस्त बना देने की बात मान्य है। उनके अनुसार धर्म का सम्बन्ध मनुष्य के अनैतिक क्रिया-कलापों से है। प्रथम प्रकार में पाँच प्रकार के अमानुष, जिन्हें चीनी भाषा में 'ङ्ग-क्वाई' कहा जाता है, मनुष्य से असामान्य व्यवहार करवाते हैं। वे अमानुष उसके कार्य-व्यवहार एवं विचारों में परिवर्तन कर देते हैं, जिसके कारण मनुष्य का शरीर रोगों का घर बन जाता है तथा दुर्भाग्य उसे घेर लेता है। इनका व्यवहार बाघ, बाज, शूकर तथा सर्प की भाँति हो जाता है। अभिचार कर्म में इन अमानुषों का प्रयोग होता है—

Discussion with ritual experts indicates that certain entities in popular religion may be relate to man's immoral actions in two ways. Five demons (ng̃-kwai) are portrayed as non civilized men (wear-

ing lion cloths) on commonly used charm-papers. This kind of demon may be seen as a metaphorical counter-part of man acting in an uncivilized, i.e. disturbing manner, the five as a group being a metonymy for all kinds of disturbing activity. On the other hand, the demon itself may be thought of as activated or conjured up by disturbing human activity and itself an independent agent of disease and misfortune. On the charms are also portryed a tiger, eagle, wild pig and snake. They are termed 'improper' (ts'e). Again they are mataphorical counter-parts, this time of disturbed forces of nature and as a group a metonymy for all such disturbed forces. At the same time they are also mal-elvalent entities activated by these forces, and have an independent role. But Gods defend men from them. The white Tiger, Cock and Dog (the tiger in this context has been tamed by a Taoist immortal) quell the demons, and the killing of improper creatures. Other Gods symbolizing culture and its values are dressed as officials. They do for man as a part of nature. What literal officials do for him as a member of society.

यह तो हुआ चीन के ताओ सम्प्रदाय एवं उनके पूर्ववर्ती आचार्यों के अनुसार उपस्थित किया गया सिद्धान्त; परन्तु भारत से गये हुए बौद्धधर्म के विचार तथा चीन की प्राचीन विचारधारा में मनुष्य के साथ प्रकृति के सन्तुलन-सम्बन्धी चिन्तन में एक स्पष्ट पार्थक्य दृष्टिगोचर होता है। इसे भी समझ लेना जिज्ञासुओं के लिये आवश्यक है। प्राचीन बौद्धों के अनुसार मनुष्य प्राकृतिक व्यवस्था एवं लयबद्धता का एक अंश है, जो कि नैतिक नियमों द्वारा शासित है। जब वह इस प्राकृतिक विधान के अनुसार आचरण करता है, नैतिक नियमों का पालन करता है तो वह इस जीवन में सौभाग्य को प्राप्त होकर मृत्यु के उपरान्त भी सद्गति को प्राप्त होता है; परन्तु इसके विपरीत जब वह प्रकृतिविरुद्ध तथा नैतिकता-विरुद्ध आचरण करता है अर्थात् मनमानी करता है तो वह पुनः जन्म लेता है। जो महत्त्वपूर्ण अन्तर चीनी तथा बौद्ध विचारधारा में है, वह यह है कि बुद्ध के विचार के अनुसार प्राकृतिक विधान अनेक बार सामाजिक रीति-रिवाजों के विपरीत पड़ जाता है। जैसे कि धार्मिक रीति-रिवाजों के लिये एक सूअर की बलि देना। उदाहरण के लिये यह कार्य चीन के रीति-रिवाज के अनुसार आवश्यक है; जैसे कि वे लोग अपने पितरों की सन्तुष्टि के लिये यह सब करते हैं; परन्तु बौद्ध विचारधारा से यह प्रकृति के नियम के विरुद्ध है (आज पर्यावरण प्रदूषण एवं अनेक वन्य जन्तुओं की प्रजातियों के पूर्णतः लुप्त होने का एक बड़ा कारण इस प्रकार की रीतियाँ भी हैं, जो धर्म के नाम पर चलती हैं); जैसा कि मार्जोरीटॉपले अपने निबन्ध में लिखते हैं—

Buddhism introduced to China another conception of man and nature different from the cosmic theory we have discussed so far. According to formal Buddhism, man is part of a natural order governed by moral law. If he complies with this law, he works out his fate in this life and dies a completed individual. If he acts un naturally, he activates principles inherent in the law of nature (karma) which cause him to be reborn. One important difference between the Buddhist and Chinese cosmic view is that—in Buddhism natural law may sometimes be in opposition to the customs, and law of society. It is unnatural to kill pigs for ritual purposes for example, although it may be demanded by Chinese custom (e.g. ancestral rites). A Chinese veiw, and one certainly accepted by the politically dominant Confucian philosophy, is that culture and nature can never be in opposition, since one is the morally correct method for approaching and under standing the other. The conflict of nature and culture is resolved to some extent in popular Buddhism by introducing sins against society and culture as additional causes for rebirth (cf. Eberhard 1967). .... Chinese Traditional Etiology.

इतना ही नहीं, चीन में भी विवाह के पूर्व, व्यापार में साझीदारी आदि करने के पूर्व दोनों व्यक्तियों की जन्मपत्रियाँ मिलाने की प्रथा है। पञ्चाङ्ग देखकर शुभ समय में कार्य आरम्भ करने की प्रथा है तथा दुष्ट प्रसूति में माता-पिता के लिये अशुभ ग्रहों के प्रभाव से बचने के लिये उनमें जन्मे बालक-बालिकाओं को माता-पिता से दूर करने की प्रथा भी है।

नेत्रोपनिषत्

अथातश्चाक्षुषीं पठितसिद्धविद्यां चक्षुरोगहरां व्याख्यास्यामो यथा चक्षुरोगाः सर्वतो नश्यन्ति चक्षुषो दीप्तिर्भवति। अस्याश्चाक्षुषविद्याया अहिर्बुध्न्य ऋषिः। गायत्री छन्दः। सविता देवता। चक्षुरोगनिवृत्तये जपे विनियोगः। ॐ चक्षुश्च-क्षुश्चक्षुस्तेजः। स्थिरो भव मां पाहि त्वरितं चक्षूरोगान् शमयशमय मम जातरूपं तेजो दर्शयदर्शय यथाहमन्धो न स्यां तथा कृपया कल्याणं कुरुकुरु मम यानियानि पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुःप्रतिरोधकदुष्कृतानि तानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय। ॐ नमश्चक्षुस्तेजोदात्रे दिव्यभास्कराय ॐ नमः करुणाकराय अमृताय। ॐ नमो भगवते सूर्याय। अक्षितेजसे नमः। खेचराय नमः। महते नमः। रजसे नमः। तमसे नमः। असतो मां सद्गमय। तमसो मां ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मामृतं गमय। उष्णो भगवान् शुचिरूपः हंसो भगवान् शुचिरप्रतिरूपः। य इमां चाक्षुष्मतीं विद्यां ब्राह्मणो नित्यमधीते। न तस्याक्षिरोगो भवति न तस्य कुलेन्धो भवति। अष्टौ ब्राह्मणान् ग्राहयित्वा विद्यासिद्धिर्भवति। ॐ विश्वरूपं घृणितंजातवेदसं हिरण्मयं ज्योतिरूपं ज्योतिरूपं तपन्तं सहस्त्ररश्मिभिः शतधा वर्तमानः। पुरः प्रजातामुदयत्येषसूर्यः ॐ नमो भगवते आदित्याय अवाग्वादिने स्वाहा। इति नेत्रोपनिषत्समाप्तिः।

यह नेत्रोपनिषत् है, इसे ही चक्षुषोपनिषत् तथा चाक्षुषी विद्या कहते हैं। इसका नित्यप्रति पाठ करने से तथा सूर्य की पूजा करने से उस व्यक्ति के नेत्रों में कभी रोग नहीं होता है, उसकी जीवन-पर्यन्त नेत्रदृष्टि ठीक बनी रहती है। उसके कुल में कोई व्यक्ति अन्धा नहीं होता है। इसके पाठ की समाप्ति होने पर गन्ध-पुष्पादि से युक्त जल के द्वारा सूर्य को नमस्कार अवश्य करना चाहिये। इसके अतिरिक्त प्रतिदिन भोजन के उपरान्त दोनों समय हाथ धोने के उपरान्त गीले हाथों से अपने नेत्रों का स्पर्श करना चाहिये, इससे नेत्रों को शक्ति मिलती है। आज के समय में कम्प्यूटर तथा दूरदर्शन का प्रयोग बढ़ रहा है; इनसे नेत्रसुरक्षा चाहने वाले को दूरदर्शन का उपयोग न्यूनतम करना चाहिये तथा कम्प्यूटर एवं अन्तरताने (इण्टरनेट) के उपभोक्ताओं को इस क्रिया को अवश्य करना चाहिये।

गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित नित्यकर्मपूजा प्रकाश में चक्षुषोपनिषत् का पाठ कुछ भिन्न है; अतः उसे भी यहाँ दिया जा रहा है—

चाक्षुषोपनिषद् (चाक्षुषी विद्या)

विनियोग—ॐ अस्याश्चाक्षुषीविद्याया अहिर्बुध्न्य ऋषिर्गायत्री छन्दः सूर्योदेवता चक्षुरोगनिवृत्तये विनियोगः।

ॐ चक्षुः चक्षुः चक्षुः तेजः स्थिरो भव। मां पाहि पाहि। त्वरितं चक्षुरोगान् शमय शमय। मम जातरूपं तेजो दर्शय दर्शय। यथाहं अन्धो न स्याम् तथा कल्पय कल्पय। कल्याणं कुरु कुरु। यानि मम पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुःप्रतिरोधकदुष्कृतानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय।

ॐ नमः चक्षुस्तेजोदात्रे दिव्याय भास्कराय। ॐ नमः करुणाकरायामृताय। ॐ नमः सूर्याय। ॐ नमो भगवते सूर्यायाक्षितेजसे नमः। खेचराय नमः। महते नमः। रजसे नमः। तमसे नमः। असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मा अमृतं गमय। उष्णो भगवान् शुचिरूपः। हंसो भगवान् शुचिरप्रतिरूपः।

य इमां चाक्षुष्मतीविद्यां ब्राह्मणो नित्यमधीते न तस्याक्षिरोगो भवति। न तस्य कुले अन्धो भवति। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा विद्यासिद्धिर्भवति ॐ नमो भगवते आदित्याय अहोवाहिनी अहोवाहिनी स्वाहा॥

॥ श्रीकृष्णयजुर्वेदीया चाक्षुषीविद्या सम्पूर्णा॥

नेत्ररोगहरं तर्पणम्

महार्णवे—उद्यन्नद्येति त्र्यृचस्य कण्वः प्रस्कण्व ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। सूर्यो देवता। तर्पणे विनियोगः। ॐ उद्यन्नद्यमित्रमहः॥ ॐ सूर्यं तर्पयामि॥१॥ ॐ आरोहन्नुत्तरान्दिवम् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥२॥ ॐ हृद्रोगंममसूर्य ॐ सूर्यं तर्पयामि॥३॥ ॐ हरिमाणं च नाशय ॐ सूर्यं तर्पयामि॥४॥ ॐ शुकेषुमेहरिमाणम् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥५॥ ॐ रोपणाकासुदध्मसि ॐ सूर्यं तर्पयामि॥६॥ ॐ अथोहारिद्रवेषुमे ॐ सूर्यं तर्पयामि॥७॥ ॐ हरिमाणं निदध्मसि ॐ सूर्यं तर्पयामि॥८॥ ॐ उदगादयमादित्यः ॐ सूर्यं तर्पयामि॥९॥ ॐ विश्वेनसहसासह ॐ सूर्यं तर्पयामि॥१०॥ ॐ द्विषन्तंमह्यंरन्धयन् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥११॥ ॐ मोअहंद्विषतेरधम् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥१२॥

अथार्धर्चः—ॐ उद्यन्नद्यमित्रमहआरोहन्नुत्तरांदिवम् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥१॥ ॐ हृद्रोगंममसूर्यहरिमाणञ्च नाशय ॐ सूर्यं तर्पयामि॥२॥ ॐ शुकेषुमेहरिमाणंरोपणाकासुदध्मसि ॐ सूर्यं तर्पयामि॥३॥ ॐ अथोहारिद्रवेषुमे हरिमाणंनिदध्मसि ॐ सूर्यं तर्पयामि॥४॥ ॐ उदगादयमादित्योविश्वेन सहसासह ॐ सूर्यं तर्पयामि॥५॥ ॐ द्विषन्तंमह्यंरन्धयन्मोअहंद्विषतेरधम् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥६।

अथ सर्वर्चः—ॐ उद्यन्नद्यमित्रमहआरोहन्नुत्तरांदिवम्। हृद्रोगंममसूर्यहरिमाणञ्चनाशय ॐ सूर्यं तर्पयामि॥१॥ ॐ शुकेषुमेहरिमाणंरोपणाकासुदध्मसि॥ अथोहारिद्रवेषुमेहरिमाणन्निदध्मसि। ॐ सूर्यं तर्पयामि॥२॥ ॐ उदगादयमा-दित्योविश्वेनसहसासह। द्विषन्तम्मह्यरन्धयन्मोअहंद्विषतेरधम् ॐ सूर्यं तर्पयामि॥३॥

अथ सार्द्धर्चशः—ॐ उद्यन्नद्यमित्रमहआरोहन्नुत्तरांदिवम्। हृद्रोगंममसूर्यहरिमाणंचनाशय॥१॥ शुकेषुमे हरिमाणंरोपणाकासुदध्मसि ॐ सूर्यं तर्पयामि॥१॥ ॐ अथोहारिद्रवेषुमेहरिमाणंनिदध्मसि॥२॥ ॐ उदगादयमा दित्योविश्वेनसहसासह। द्विषन्तंमह्यंरन्धयन्मोअहंद्विषतेरधम्॥३॥ ॐ सूर्यं तर्पयामि॥

अथ त्र्यृचेन त्रिः—ॐ उद्यन्नद्य० १ ॐ शुकेषु० २ ॐ उदगादय० ३ ॐ सूर्यं तर्पयामि १ एवं त्र्यर्चेन पुनरपि द्विः। अस्य सकलस्यापि तर्पणप्रयोगस्य व्याध्यनुसारेणाष्टाविंशतिरष्टोत्तरशतमित्याद्यावृत्तिः कल्पनीया। तत्र तर्पणे रक्ताक्षतरक्तपुष्पाणि ग्राह्याणि अयं च तर्पणप्रकारो न केवलनेत्ररोगहरः; अपि तु ज्वरादिरोगहरोऽपि ज्ञेयः। तथा च सायनभाष्ये शौनकः—

उद्यन्नद्येति मन्त्रोऽयं सौरः पापप्रणाशनः। रोगघ्नश्च विषघ्नश्च भुक्तिमुक्तिफलप्रदः॥

इति नेत्रादिरोगहरतर्पणम्।

मूल में लिखे विनियोग मन्त्र को पढ़कर जल छोड़कर इस तर्पणकर्म के लिये 'ॐ उद्यान्नद्यमित्रमहः ॐ सूर्यं तर्पयामि' इत्यादि मूल में लिखे बारह मन्त्रों से नेत्रों का तथा सूर्य का भी तर्पण करना चाहिये। फिर आगे लिखी आधी-आधी ऋचाओं वाले छः मन्त्रों से तर्पण करना चाहिये। तदुपरान्त इस सम्पूर्ण ऋचा से तथा 'ॐ शुक्रेषुमेहरिमाणं०' इत्यादि दूसरी पूर्ण ऋचा से तर्पण करना चाहिये। फिर 'ॐ उदगादय०' इत्यादि तीसरी मूल में लिखित सम्पूर्ण ऋचा से तीसरी बार तर्पण करना चाहिये। तदुपरान्त डेढ़-डेढ़ ऋचाओं के तीन मन्त्रों से तीन बार तर्पण करने के बाद पूरी तीन ऋचाएँ एक साथ बोलकर तीन बार तर्पण करना चाहिये। सबसे अन्त में तीनों ऋचाओं से दो तर्पण करना चाहिये।

इस सम्पूर्ण तर्पण-प्रयोग की व्याधि के अनुसार अट्ठाईस अथवा एक सौ आठ आवृत्तियाँ करनी चाहिये। इस तर्पण में लाल चावल, लाल फूल ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार से तर्पण करने पर केवल नेत्ररोगों में ही लाभ नहीं होता; अपितु ज्वरादि अन्य रोगों का भी नाश होता है। जैसा कि सायनभाष्य में श्री शौनक जी ने कहा है—'उद्यन्न०' इत्यादि मन्त्र सौरमन्त्र है, जो कि पापनाशक है। यह रोगनाशक, विषनाशक तथा भुक्ति-मुक्ति का फल देने वाला है।

कर्णरोगोपशमनम्

महार्णवे—

मातृपितृगुरूणां च देवब्राह्मणयोस्तथा। शृणोति निन्दां बुद्ध्या यः कर्णाभ्यां तस्य शोणितम्॥
पूयं च प्रस्रवत्यस्य शान्तिः कृच्छ्रचतुष्टयात्। हिरण्यरक्तवस्त्राणां दानाद्ब्राह्मणभोजनात्॥
जपाद्धोमाच्च भवति सौरमन्त्रेण शक्तितः॥ इति।

अत्र जपे होमश्च ॐ उद्यन्नद्येतिसौरमन्त्रेणाष्टोत्तरशतादिः कार्यः। सौरमन्त्रस्तु नेत्ररोगे पूर्वं कथितः।

कर्णरोग-निदान एवं प्रतिकार—जो मन लगाकर माता-पिता देवता ब्राह्मण एवं गुरुजनों की निन्दा सुनता हो, अगले जन्म में उसके कानों से रक्तस्राव तथा पूयस्राव होता है। उसे चार कृच्छ्रचान्द्रायणों या केवल कृच्छ्र का व्रत करके स्वर्ण तथा रक्तवस्त्रों का दान एवं ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये तथा शक्ति के अनुसार सौरमन्त्र का जप एवं उसी से हवन भी करना चाहिये। 'ॐ उद्यन्नद्य०' यह सौर मन्त्र है, जो पीछे नेत्ररोगोपशमन में दिया जा चुका है।

नासिकारोगहरविधानम्

महार्णवे—

लवणस्यापहर्ता तु शीर्णघ्राणांघ्रिपाणिकः। घर्घरस्वरवांश्चैव जायते तस्य निष्कृतिः॥
उद्यन्नद्यत्र्यृचं सम्यक् जपेदष्टोत्तरायुतम्। जुहुयाच्चरुसर्पिर्भ्यां रक्तवासांसि काञ्चनम्॥
दद्यादेवं द्विजगवां कुर्य्यात्पूजां स्वशक्तितः।

नासिकारोगों का निदान एवं प्रतिकार—जो नमक की चोरी करता है, उसके हाथ-पैर गल जाल जाते हैं तथा नाक में पीनस हो जाती है। उसका स्वर घर्घर होता है। इसके प्रतिकार-हेतु दस हजार आठ की संख्या में 'उद्यन्नद्य०' इत्यादि तीन ऋचाओं का जप तथा उसका दशांश खीर तथा घृत से हवन करना चाहिये। लाल वस्त्र, स्वर्ण तथा गोदान करना चाहिये। गोपूजन तथा ब्राह्मणपूजन करना चाहिये।

मुखरोगोपशमनविधानम्

अथ मुखरोगहराणि महार्णवे—

कूटसाक्षी भवेद्वक्त्ररोगी शोणितपित्तवान्। कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ कुर्वीत चान्द्रायणमथापरम्॥
कुर्यात्कूष्माण्डहोमं च गायत्रीमयुतं जपेत्। दद्याद्धिरण्यं व्रीहींश्च मुखरोगस्य शान्तये॥

इति मुखरोगोपशमनविधानं समाप्तम्।

मुखरोग-निदान एवं प्रतिकार—झूठी गवाही देने वाला मुखरोगी तथा रक्तपित्तरोगी (अगले जन्म में) होता है। इसके प्रतिकार-हेतु कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, चान्द्रायणादि व्रत, कूष्माण्ड होम तथा अयुत गायत्री जप करना चाहिये। हिरण्य तथा चावल एवं जौ का दान करना चाहिये। इससे कर्मज व्याधि शान्त (मुखरोग) हो जाती है।

अपस्मार(मृगी)रोगोपशमनविधानम्

महार्णवे—

गुरौ स्वामिनि वा यस्तु प्रतिकूलं समाचरेत्। सोऽपस्मारी भवेत्तत्र कुर्याच्चान्द्रायणं व्रतम्॥
सदसस्पतिमन्त्रेण चर्वाज्यं जुहुयात्तथा। कयान इति सूक्तं तु जपेद्ब्राह्मणतर्पणम्॥
कुर्याद्धिरण्यदानं च शक्त्या रोगस्य शान्तये॥

सदसस्पतिमिति मन्त्रस्य मेधातिथिर्ऋषिः। गायत्रीछन्दः। सदसस्पतिर्देवता। होमे विनियोगः। ॐ सदसस्पतिमद्भुतम्प्रियमिन्द्रस्यकाम्यं सनिं मेधामयासिषम्॥ १॥ कयान इति सूक्तं पञ्चदशर्चात्मकं ऋग्वेदीयं ज्ञातव्यम्। शातातपः—

धूर्त्तोपस्माररोगी स्यात्तत्तद्दोषोपशान्तये। ब्रह्मकूर्चत्रयं कृत्वा धेनुं दद्यात्सदक्षिणाम्॥

अथवा दाननिबन्धोक्तं गणपतिप्रतिमादानं कुर्यात्। इत्यपस्मारशमनम्।

अपस्मार निदान एवं प्रतिकार—जो अपने गुरु तथा स्वामी के साथ प्रतिकूल बर्त्ताव करता है, वह अपस्मारी (मिरगी के दौरे पड़ने वाला) होता है। उसे चान्द्रायण व्रत करना चाहिये। उस सदसस्पति मन्त्र—'ॐ ॐ सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषं स्वाहा॥' से चरु एवं आज्य से हवन करना चाहिये। 'कयान' इत्यादि सूक्त का जप करना चाहिये तथा ब्राह्मणों को तृप्त करना चाहिये। यथाशक्ति सुवर्णदान भी रोगशान्ति के लिये करना चाहिये। सदसस्पति मन्त्र का विनियोग इस प्रकार है—'ॐ अस्य सदसस्पतिमन्त्रस्य मेधातिथिर्ऋषिः। गायत्री छन्दः। सदसस्पतिर्देवता, होमे विनियोगः।' 'कयान॰' सूक्त ऋग्वेद के चतुर्थ मण्डल का इकतीसवाँ सूक्त है, जिसमें कुल पन्द्रह मन्त्र हैं, उनका जप करना चाहिये।

शातातप के अनुसार जो धूर्त्त होता है, वह अगले जन्म में अपस्माररोगी होता है। उसके दोष की शान्ति के लिये तीन ब्रह्मकूर्च व्रतों का पालन करने के उपरान्त दक्षिणा-सहित गोदान करना चाहिये। अथवा दाननिबन्ध में कथित (दानप्रकाश ग्रन्थ में वर्णित) विधि से श्री गणेश जी की मूर्ति का दान करना चाहिये (यह दानप्रकाश ग्रन्थ स्वयं इस ग्रन्थ=अनुष्ठानप्रकाश के रचयिता पं॰ चतुर्थीलाल द्वारा प्रणीत है; उसी को दाननिबन्ध लिखा है। चतुर्थीलाल जी का यह अनुष्ठानप्रकाश छठा निबन्ध है)।

भगन्दररोगोपशमनम्

महार्णवे—

यो गृहीत्वा द्विजो मोहान्नियुक्तो धर्म्मनिश्चये। भगन्दरो भवेत्तस्य ह्यधर्म्मं वदतो मुखात्॥

पद्मपुराणे विशेषः—आचार्यभार्यागमने भगन्दरयुतो भवेत्। शातातपोऽपि—

स्वगोत्रस्त्रीप्रसङ्गेन जायते च भगन्दरी। तेनापि निष्कृतिः कार्या मेषदानेन यत्नतः॥

अत्र मेषदानं दानग्रन्थोक्तं रजतमयमेषदानं बोध्यम्। इति भगन्दरोपशमनम्।

भगन्दर रोग की शान्ति—जो ब्राह्मण को जबरदस्ती पकड़कर धर्मकार्य में लगाता है अथवा जो ब्राह्मण धन लेकर धर्म का निश्चय (धार्मिक निर्णय) करता है तथा उसके स्थल पर अधर्म करता है, उसको भगन्दर रोग होता है। पद्मपुराण में कहा है—आचार्य की भार्या से गमन करने वाला भगन्दरयुक्त होता है। शातातप ने भी कहा है—अपने गोत्र स्त्री से मैथुन करने से भगन्दरयुक्त होता है। उसका उपाय मेषदान के रूप में करना चाहिये। चाँदी का बकरा बनाकर दान करना चाहिये।

हृदयादिव्रणरोगोपशमनम्

शातातपस्मृतौ—

स्वजातिजायागमने जायते हृदयव्रणी। तत्पातकविशुध्यर्थं प्राजापत्यव्रतं चरेत्॥
जात्युत्तमस्त्रीगमनाज्जायते मस्तकव्रणी। तत्पातकविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यव्रतं चरेत्॥
श्रोत्रियस्त्रीप्रसङ्गेन जायते नासिकाव्रणी। आचरेत् सर्वशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यचतुष्टयम्॥

महार्णवे—

जलाग्न्युद्बन्धनप्रायनिमित्तेन म्रियेत यः। भवेदुरसि दुष्टं हि व्रणं तस्यापि निष्कृतिः॥
स दद्याद्गोद्वयं सम्यक्पञ्चाशद्विप्रभोजनम्। दक्षिणां च यथाशक्ति मुक्तो भवति रोगतः॥

भगव्रणे विशेषः—

मृते भर्तरि या नारी ब्रह्मचर्यविघातिनी। सा भवेद्व्रणदोषेण सम्भोक्तुं क्षमते न च॥
सम्भोगानन्तरं तीव्रवेदना पुरुषस्य वा। स नीलवृषभान्दद्यान्मधुसर्पिस्तिलानपि॥

स्तनस्फोटेऽपि विशेषः—

अवमन्य तु भर्तारं जारमालिङ्गते नवम्। सार्द्धं क्रीडति या नारी तमेवानुस्मरत्यपि॥
तस्यास्तु स्तनयोः स्फोटा जायन्ते जननान्तरे। भगाच्च रक्तं स्रवति तद्रोगस्य प्रशान्तये॥
दद्याद्गाः पञ्च लवणं हरिद्रा धान्यमेव च। उमामहेश्वरं चैव पूजयेच्च धने सति॥

निष्कद्वादशकं दद्याज्जपेत्तामग्निसूक्तम्। [तामग्निसूक्तं तामग्निवर्णां तपसा इत्यादि सप्तर्चसूक्तं ऋग्वेदे प्रसिद्धम्] इति व्रणशमनम्।

हृदयादि मर्मस्थानों के फोड़े एवं घाव—हृदय-वक्ष-आन्त्र आदि में उत्पन्न होने वाले गम्भीर आन्तरिक व्रणों को ही यहाँ हृदयादि व्रण कहा गया है। शातातप स्मृति में कहा है—(१) अपनी जाति की परस्त्री के साथ मैथुन करने वाले व्यक्ति को अगले जन्म में हृदय में व्रण होता है, उसके पातक की विशुद्धि-हेतु प्राजापत्य व्रत करना चाहिये। (२) अपनी जाति से ऊँची जाति की स्त्री से गमन करने पर मस्तकव्रण (दिमागी फोड़ा) होता है, उसकी शुद्धि के लिये भी प्राजापत्य व्रत करना चाहिये। (३) वेदपाठी ब्राह्मण की स्त्री से मैथुन करने के कारण अगले जन्म में नासिकाव्रण होता है; उसकी शान्ति-हेतु चार प्राजापत्य व्रत करना चाहिये।

महार्णव ग्रन्थ के अनुसार—जिसकी मृत्यु जल, अग्नि अथवा उद्बन्धन (फाँसी पर लटकने) से होती है, उसकी छाती में फोड़ा होता है। उसकी निष्कृति इस प्रकार है—उसे दो गोदान सम्यक् रीति से (गायों को स्वर्णमण्डित करके) देना चाहिये तथा पचास ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये। यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये। ऐसा करने से उसे दुर्मृत्यु के पाप से छुटकारा मिल जाता है।

भगव्रण में विशेष—जो स्त्री पति के मरने पर ब्रह्मचर्य का विघात करती है, अगले जन्म में उसकी योनि में व्रण हो जाता है, जिससे वह सम्भोग करने में अक्षम होती है। उसे सम्भोग के उपरान्त तीव्र वेदना होती है। उसे नील वृष, मधु-घृत तथा तिल का दान करना चाहिये।

स्तन-स्फोट में विशेष—जो अपने पति की अवमानना कर अन्य जार पुरुष का आलिङ्गन करती है तथा उसके साथ रतिक्रीड़ा करती है, उसी का चिन्तन करती है तो अगले जन्म में उसके स्तनों में फोड़े होते हैं तथा योनि से रक्तस्राव होता है। उस रोग की शान्ति के लिये पाँच गायों, लवण, हरिद्रा, धान्य आदि का दान करना

चाहिये तथा उमा-महेश्वर की पूजा करके यदि सम्भव हो तो बारह निष्क स्वर्णदान भी करना चाहिये। साथ ही अग्निसूत्र का जप करना चाहिये। (अग्निसूक्त ऋग्वेद में प्रसिद्ध है)।

वातरक्तशमनम्

वृद्धबौधायनः—

सवर्णागमने रक्तवातवाञ्जायते नरः। एतद्रोगनिवृत्त्यर्थं षडब्दं कृच्छ्रमाचरेत्॥

शातातपोऽपि—

रक्तवस्त्रप्रवालानां हारी स्याद्रक्तवातवान्। सवस्त्रां महिषीं दद्यात्पद्मरागसमन्विताम्॥

वस्त्रं रक्तमेव। इति वातरक्तोपशमनम्।

वातरक्त निदानोपचार—जो पुरुष अपने वर्ण की परस्त्री से मैथुन करता है, उसे रक्तवात उत्पन्न होता है। इस रोग की निवृत्ति-हेतु छः वर्ष तक कृच्छ्रव्रत करना चाहिये। शातातप में भी कहा है—लाल वस्त्र, प्रवाल इत्यादि की चोरी करने वाले को रक्तवात होता है; उसे वस्त्रों के साथ ही भैंस एवं पन्ना का दान करना चाहिये (वस्त्र रक्त वर्ण होना चाहिये)। वातरक्त को गठिया कहा जाता है।

स्त्रीप्रदररोगोपशमनविधानम्

अथ स्त्रीणां प्रदररोगस्योपायः महार्णवे—

स्रवद्गर्भा भवेत्सा तु बालकं हन्ति या पुरा।

एतद्दोषविनाशार्थं वायुपुराणोक्तं काञ्चनयज्ञोपवीतं यथाविधि दद्यात्।

गर्भस्रावभवाद्दोषादेवं कृत्वा विमुच्यते।

पूर्वजन्मनि या पित्रा मात्रा गुरुणा वा सार्द्धं स्पर्धते सा प्रदररोगिणी भवति, सा कृच्छ्रातिकृच्छ्रं कुर्य्याच्चान्द्रायणानि च कुर्यात्। तद्विष्णोरिति मन्त्रमयुतत्रयं जपेत्। आज्यसहितमधुमण्डकान्नं दद्यात्। विप्रपादक्षालितोदकेन स्वाङ्गं मार्जयेत्। विप्रोच्छिष्ठेनानुलिम्पेत्। या इत्थमाचरति तस्या अवश्यं चिकित्सायां रोगो नश्यति। इति प्रदररोगहरो विधिः।

स्त्रियों के प्रदररोग का निदान एवं प्रतिकार—महार्णव में कहा है कि जो अपने पूर्वजन्म में बालकों की हत्या करती है, वह अगले जन्म में प्रदर रोग से पीड़ित होती है। उसके उपचार-हेतु वायुपुराण में कथित स्वर्णनिर्मित यज्ञोपवीत दान करना चाहिये। ऐसा करने से गर्भपात कराने के दोष से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। जो पूर्वजन्म में अपने माता-पिता से स्पर्धा करती है, वह प्रदररोगिणी होती है। उसे कृच्छ्र तथा अतिकृच्छ्र करके चान्द्रायण करना चाहिये। 'ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्॥' इस मन्त्र का अयुतत्रय (तीस हजार) जप करना चाहिये तथा जप के उपरान्त आज्यसहित मधु, मण्डकान्न (मांड का अन्न) दान करना चाहिये। ब्राह्मण के पैरों के धोने का जो जल थाली में हो, उससे रोगिणी को अपने शरीर का मार्जन करना चाहिये एवं विप्र के उच्छिष्ट का अपने शरीर में लेपन करना चाहिये। जो इस प्रकार का आचरण करती है, उसका रोग फिर औषधोपचार करने पर अवश्य ही नष्ट हो जाता है।

गर्भरक्षाविधानम्

अथ गर्भिण्याः प्रतिमासं गर्भरक्षाप्रकारः वीरसिंहावलोकने—

प्रथमे मासि—गर्भिण्या गर्भरक्षामुद्दिश्य ब्रह्मणे बलिं दद्यात्। पायसघृतश्वेतवस्त्रचन्दनच्छत्राङ्गुलीयककवचरत्नगर्भ-गन्धपुष्पधूपदीपहिरण्यसहितपूर्णकुम्भेन बलिं क्षिपेत्। बलिमन्त्रः—

एह्येहि भगवन् ब्रह्मन् प्रजाकर्त्तः प्रजापते। प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं चापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥

इति मन्त्रेण शुद्धात्मना बलिर्देयः बलिदात्रे दक्षिणां च दद्यातिति प्रथममासबलिदानविधानम्॥ १ ॥ एवमेव सर्वत्र।

द्वितीये मासि—पायसदध्यन्नलाजतिलपिण्याकवस्त्रहिरण्यजलपूर्णकुम्भादिभिरलङ्कृत्य—

ॐ अश्विनौ देवदेवेशौ प्रगृह्णीतं बलिं त्विमम्। सापत्यां गर्भिणीं चेमां रक्षत पूजयानया॥

इति मन्त्रेणाश्विभ्यां बलिं दद्यात्। इति द्वितीयमासबलिः॥ २ ॥

तृतीये मासि—क्षीरान्नलाजश्वेतध्वजहिरण्यवस्त्रगन्धादिभिर्बलिं सम्पाद्य—

ॐ रुद्राश्चैकादश प्रोक्ताः प्रगृह्णन्तु बलिं त्विमम्। युष्माकं प्रीतये वृत्तं नित्यं रक्षत गर्भिणीम्॥

इति मन्त्रेण जलाशये एकादशरुद्रेभ्यो बलिं दद्यात्। इति तृतीयमासबलिः॥ ३ ॥

चतुर्थे मासि—रक्तान्नध्वजगन्धपुष्पवस्त्रहिरण्यादिभिः पूर्ववद्बलिं सम्पाद्य—

ॐ आदित्या द्वादश प्रोक्ताः प्रगृह्णीध्वं बलिं त्विमम्। युष्माकं तेजसां वृद्ध्या नित्यं रक्षतु गर्भिणीम्॥

इति द्वादशादित्येभ्यो बलिं दद्यात्। इति चतुर्थमासबलिः॥ ४॥

पञ्चमे मासि—माध्वीपैष्टीसुरशर्करामधुमधुकेक्षुतिलपिष्टधूपलाजहिरण्यादिभिः सहकारमूले गर्भरक्षायै गोमयेन विनायकं कृत्वा वस्त्रयुग्मेनावेष्ट्य सम्पूज्य—

ॐ विनायक गणाध्यक्ष शिवपुत्र महाबल। प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥

इति मन्त्रेण विनायकाय बलिं दद्यात् इति पञ्चममासबलिः॥ ५ ॥

षष्ठे मासि—पायसघृतशर्करालाजहरिद्रान्नविशिष्टं बलिं प्रभातसमये नदीतीरे नद्यभावे तडागसमीपे—

ॐ स्कन्द षण्मुख देवेश पुत्रप्रीतिविवर्धन। प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥

इति मन्त्रेण स्कन्दाय बलिं दद्यात्॥ ६ ॥

सप्तमे मासि—पायसलाजशर्कराघृतसहितं हरिद्राध्वजसर्वालङ्कारभूषितं बलिं रक्तवस्त्रद्वयवेष्टितशरीरो नदीतीरे—

ॐ प्रभासः प्रभवः श्यामः प्रत्यूषो मारुतो नलः। ध्रुवो धराधरश्चैव वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः॥
प्रगृह्णीध्वं बलिं चेमं नित्यं रक्षन्तु गर्भिणीम्॥

इति मन्त्रेणाष्टवसुभ्यो बलिं दद्यात्॥ ७॥

अष्टमे मासि—दध्यन्नमुद्गकृसरान्नसाज्यपक्वापक्वमत्स्यमांससुरेक्षुरसगन्धकृष्णवस्त्रकुक्कुटगन्धपुष्पधूपदीपहिरण्य-सहितपूर्णकुम्भेन नीलोत्पलसहितेन स्वयं रक्तवस्त्रेणालङ्कृत्य दक्षिणस्यां दिशि—

ॐ पितृदेवि पितृज्येष्ठे बहुपुत्रि महाबले। भूतश्रेष्ठे दिवावासे निर्वृते शौनकप्रिये॥
प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥

इति मन्त्रेण दुर्गायै बलिं दद्यात्॥ ८ ॥

नवमे मासि—दध्यन्नमुद्गकृसरान्नविशिष्टं पूर्ववत् प्रभातसमये—

ॐ रक्ष रक्ष महादेव भक्तानुग्रहकारक। पक्षिवाहन गोविन्द सापत्यं रक्ष गर्भिणीम्॥ १॥

इति मन्त्रेण विष्णवे बलिं दद्यात्॥ ९ ॥

दशमे मासि—पायसगुडापूपलाजपिष्टसक्तुभिः श्यामध्वजकृष्णगन्धपुष्पधूपदीपहिरण्यसहितपूर्णकुम्भेन नीलोत्पल-सहितेन पूर्ववत् बलिहर्ता अलङ्कृत्यै वासुदेवालये अभ्यर्च्य वृक्षमूले—

ॐ त्रिविक्रम क्रमाक्रान्तभूरिभूतजगत्त्रय। गोवर्द्धनमहाशैलसमुद्धरणगर्वित ॥
हिरण्यकशिपोर्वक्षोविदारणनखाङ्कुर । विक्रमेण सुरज्येष्ठ रक्ताङ्गेन महोज्ज्वल॥
बलदेवानुज ज्येष्ठ कंसचाणूरक्रन्दन। गरुडध्वज दैत्यारेऽनन्ताच्युत चतुर्भुज॥
विधुन्तुदप्राणहर आदित्यकृतचक्रभृत्। भीषणाकार भुजगशयानेन्दीवरच्छवे॥ ४॥
पाञ्चजन्यप्रभाव्यक्तकौस्तुभोद्द्योतभास्कर । वाराहवपुषा पूर्वं सम्यग्धृतवसुन्धर॥ ५॥
शार्ङ्गज्याघातरुचिमत्किणाङ्कितमहाभुज । अनाद्यन्तासुररिपो धीर पद्मालयालय॥ ६॥
प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥

एभिर्मन्त्रैर्बलिं दद्यात्। इति दशममासबलिदानप्रकारः॥ १०॥ इति गर्भरक्षाविधानम्।

गर्भिणी के प्रतिमास गर्भरक्षा के उपाय—जिन स्त्रियों का गर्भ गिर जाता हो, उनके लिये औषधोपचार लेने के साथ प्रतिमास गर्भरक्षा-हेतु निम्न उपाय भी करना चाहिये—

(१) प्रथम मास में गर्भरक्षा-हेतु श्री ब्रह्माजी (प्रजापति) को बलिदान करना चाहिये। उसके लिये—'एह्येहि भगवन् ब्रह्मन् प्रजाकर्त्तः प्रजापते। प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं चापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र को पढ़कर पवित्र एवं भक्तिपूर्ण मनोभाव के साथ खीर, घृत, श्वेत चन्दन, श्वेत छाता, अङ्गूठी, कवच, रत्न, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, सुवर्णसहित जलपूर्ण कुम्भ की बलि देनी चाहिये। बलिपात्र में दक्षिणा भी रखनी चाहिये।

(२) द्वितीय मास में पायस, दही-भात, खील, तिल की खली, वस्त्र, सुवर्ण तथा कुम्भादि से अलंकृत बलि को 'ॐ अश्विनौ देवदेवेशौ प्रगृह्णीतं बलिं त्विमम्। सापत्यां गर्भिणीं चेमां रक्ष त्वं पूजयाऽनया॥' इस मन्त्र के उच्चारण के साथ भक्तिभाव एवं पवित्र मन से अश्विनीकुमारों के निमित्त बलिदान करना चाहिये।

(३) तृतीय मास में दूध-भात, धान की खील, श्वेत ध्वज, सुवर्ण, वस्त्र, गन्ध आदि से बलि को सम्पादित करके 'ॐ रुद्राश्चैकादश प्रोक्ताः प्रगृह्णन्तु बलिं त्विमम्। युष्माकं प्रीतये वृत्तं नित्यं रक्षत गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र से जलाशय में ग्यारह रुद्रों के लिये बलिदान करना चाहिये।

(४) चतुर्थ मास में लाल भात, लाल ध्वज, गन्ध, पुष्प, वस्त्र, सुवर्ण एवं जलपूर्ण कलश के साथ 'ॐ आदित्या द्वादश प्रोक्ताः प्रगृह्णीध्वं बलिं त्विमम्। युष्माकं तेजसा वृद्ध्या नित्यं रक्षतु गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र से बारह आदित्यों को श्रद्धाभक्ति के साथ बलि प्रदान करनी चाहिये।

(५) पाँचवें मास में माध्वी (मधु से निर्मित), पैष्टी (अन्न की पीठी के सन्धान से निर्मित) सुरा, शर्करा, मधु, महुआ का फूल, ईख, तिलपिष्ट, धूप, लाजा तथा स्वर्णसहित जलकलश को लेकर आम के वृक्ष की जड़ में गोबर से गणेशजी बनाकर दो वस्त्रों से लपेटकर 'ॐ विनायक गणाध्यक्ष शिवपुत्र महाबल। प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र से विनायक के लिये बलिदान करना चाहिये।

(६) छठे मास में पायस, घृत, शर्करा, लाजा, हरिद्रान्न-विशिष्ट बलि को प्रभात काल में नदी या तालाब के किनारे 'ॐ स्कन्द षण्मुख देवेश पुत्रप्रीतिविवर्धन। प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्ष गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र से स्कन्द (स्वामी कार्तिकेय) को बलि प्रदान करना चाहिये।

(७) सातवें मास में पायस, लाजा, शर्करा घृतसहित, हरिद्राध्वज, सर्वालङ्कारभूषित वाले को दो लाल वस्त्रों में लपेट कर नदी के तीर पर जाकर 'ॐ प्रभासः प्रभवः श्यामः प्रत्यूषो मारुतो नलः। ध्रुवो धराधरश्चैव वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः॥ प्रगृह्णीध्वं बलिं चेमं नित्यं रक्षन्तु गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र से आठ वसुओं को बलि देनी चाहिये।

(८) आठवें मास में दही-भात, मूंग, खिचड़ी, पक्का-कच्चा मछली का मांस, सुरा, ईख का रस, गन्ध, कृष्ण वस्त्र, मुर्गा, गन्ध (इत्र), पुष्प, धूप, दीप, हिरण्यसहित पूर्णकुम्भ (जलपूर्ण) के साथ नीलकमलसहित स्वयं रक्तवस्त्र से बलि को अलंकृत करके दक्षिण दिशा की ओर जाकर 'ॐ पितृदेवि पितृज्येष्ठे बहुपुत्रि महाबले। भूतश्रेष्ठे दिवावासे निर्वृते शौनकप्रिये॥ प्रगृह्णीष्व बलिं चेमं सापत्यां रक्षगर्भिणीम्॥' इस मन्त्र के साथ दुर्गा के लिये बलि देनी चाहिये।

(९) नवें मास में दही-भात, मूंग, खिचड़ी अन्न से विशिष्ट करके गन्ध, पुष्प, शर्करादि, पीत वस्त्र अलंकारों से सुशोभित सम्पूर्ण कुम्भबलि को पूर्ववत् प्रभात काल में 'ॐ रक्ष रक्ष महादेव भक्तानुग्रहकारक। पक्षिवाहन गोविन्द सापत्यं रक्ष गर्भिणीम्॥' इस मन्त्र से विष्णु के लिये बलि देनी चाहिये।

(१०) दसवें मास में पायस, गुड़, अपूप (मालपूए), लाजा, पिट्ठि, सत्तू आदि पदार्थों के साथ में श्याम ध्वज, कृष्ण गन्ध (कस्तूरी), पुष्प, धूप, दीप, सुवर्णसहित पूर्णकुम्भ तथा पूर्व की भाँति अलंकृत करके बलिहर्ता को सजा-बजाकर देवालय में अभ्यर्चित कर वृक्ष की जड़ में मूल में लिखित 'ॐ त्रिविक्रम क्रमा०' इत्यादि छः मन्त्रों को पढ़कर वासुदेव को बलि देनी चाहिये।

शीघ्रप्रसवोपायः

संस्कारभास्करे—

हिमवत्युत्तरे पार्श्वे शवरी नाम यक्षिणी। तस्या नूपुरशब्देन विशल्या स्यात्तु गर्भिणी स्वाहा॥

इति मन्त्रेणैकविंशतिदूर्वाङ्कुरैरेकपलं तिलतैलं प्रदक्षिणमावर्तयन्नष्टशतं मन्त्रयित्वा तत्तैलं किञ्चित्पाययेच्छेषमुदरे लेपयेदिति।

अथ यन्त्रप्रकारः—

गजाग्निवेदा उडुराट्शराङ्कारसर्षिपक्षा इति हि क्रमेण।
लिखेत्प्रसूतेः समये गृहे वै सुखेन नार्यः सुवते हि शीघ्रम्॥ इति।

शीघ्रप्रसवकारकमिदम्

८	१	६
३	५	७
४	९	२

शीघ्र प्रसव के उपाय—हिमवत्युत्तरे पार्श्वे शवरी नाम यक्षिणी। तस्या नूपुरशब्देन विशल्या गभिणी भवेत्॥' इस मन्त्र को पढ़कर इक्कीस दूर्वाङ्कुर तथा एक पल काले तिल का तैल प्रदक्षिणक्रम से घुमाकर एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित करके उस तेल को गर्भिणी को पिला दे तथा पिलाने से जो शेष बचे, उसका गर्भिणी के पेट पर लेप लगा दे तथा पार्श्व में लिखे शीघ्र प्रसव यन्त्र (पन्द्रह यन्त्र = पञ्चदशी यन्त्र) को लिखकर गर्भिणी को दिखाने से शीघ्र ही प्रसव होता है।

यन्त्रनिर्माण प्रकार—गज (आठ), अग्नि (तीन), वेद (चार)—ये अङ्क ऊपर से नीचे प्रथम पङ्क्ति में, फिर उडुराट् (एक), शर (पाँच), अङ्क (नौ)—ये दूसरी पङ्क्ति में तथा (सरर्षियक्षा (६-७-२)—ये तीसरी पङ्क्ति में लिखने चाहिये।

बालानां रोगशमनविधानम्

वीरसिंहावलोकने—बालानां सर्वरोगोपशान्त्यर्थं व्याहृतिहोममन्त्रदानं च कुर्यात्। तत्रैव—

ताडनतर्जनहासभयाद्वा निजजननीप्राकृतहितभावात्।
स्कन्दमुखाः प्रथमा बलिहेतोः शिशुकममङ्गलमाशु विशन्ति॥

स्तब्धविलोचनशोणितगन्धः कुटिलमुखाल्परवो लुलिताक्षः।
स्तन्यपराङ्मुखगाढविमुष्टिश्चकितमनाः शिशुराकुलितस्तैः॥

बालानां प्रायेण स्कन्दमातृकादिबालघातकदेवदोषैरेव रोगा भवन्ति; तस्मात्तेषां बलिदानादिना शान्तिं कुर्यात्। तच्छांतिविधानं तु शान्तिसारादौ ज्ञेयं ग्रन्थविस्तरभयादत्र न लिख्यते। इति सामान्यतो बालरोगशमनविधानम्।

बालरोगों के कारण तथा प्रतिकार—वीरसिंहावलोक में लिखा है कि बालकों के सभी रोगों की शान्ति-हेतु व्याहृति होम तथा अन्नदान करना चाहिये। वहीं पर यह भी कहा गया है कि बालकों को ताडन (पीटने), तर्जन (बलपूर्वक रोकने), अधिक हँसाने, भयभीत करने आदि क्रियायें माता के द्वारा अपने स्वभाववश किये जाने पर स्कन्द-प्रमुख प्रमथगण बलि प्राप्त करने के लिये शिशु के अमङ्गल के लिये शीघ्र ही उसके शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं। उसके कारण बालक स्तब्ध नेत्र वाला, रक्त गन्ध वाला, कुटिल मुख वाला, अल्परव (क्षीण आवाज) वाला, लुलिताक्ष (फड़कती हुई आँखें), माता का दूध न पीने वाला, मुट्ठियाँ भींचे रहने वाला, चकित होकर देखने वाला (कौंध पड़ने वाला) तथा आकुल-व्याकुल हो जाता है। प्रायः बालकों को स्कन्द मातृकादि बालघातक देवों के प्रकोप से ही रोग हो जाते हैं, उनकी शान्ति करनी चाहिये। बलिदान आदि के द्वारा भी उनकी शान्ति करना चाहिये। उस शान्तिविधान को शान्तिसार आदि ग्रन्थों में देखना चाहिये। यहाँ उसे ग्रन्थ के विस्तार भय से नहीं लिखा जा रहा है।

बालानां दुष्टदृष्टिदोषादौ रक्षाविधानम्

कपिलसंहितायाम्—

शिशुसंरक्षणार्थायाऽशुभग्रहनिवारिणीम्। रक्षां सन्ध्यासु कुर्वीत निम्बसर्षपगृञ्जनैः॥
फलीकरणसम्मिश्रैः करञ्जैरवलोकने। वचोधरान्नदेशेषु बालग्रहविमुक्तये॥
वासुदेवो जगन्नाथः पूतनातर्जनो हरिः। रक्षतु त्वरितो बालं मुञ्चमुञ्च कुमारकम्॥
कृष्ण रक्ष शिशुं शङ्खमधुकैटभमर्दन। प्रातः सङ्गवमध्याह्नसायाह्नेषु च सन्ध्ययोः॥
महानिशि सदा रक्ष कंसारिष्टनिषूदन। यद्गोरजःपिशाचांश्च ग्रहान्मातृग्रहानपि॥
बालग्रहान् विशेषेण छिन्धिछिन्धि महाभयान्। त्राहित्राहि हरे नित्यं त्वद्रक्षाभूषितं शिशुम्॥
इति भस्माभिमन्त्र्यैव भूषयेत्तेन भस्मना। शिरोललाटाद्यङ्गेषु रक्षां कुर्याद्यथा विधि॥
मन्त्रसंरक्षणादेवं शिशुः संवर्धतेन्वहम्।

बालकों को नजर लग जाने पर उपाय—कपिल संहिता में लिखा है—अशुभग्रह-निवारण के लिये तथा शिशुओं की रक्षा के लिये रक्षाकर्म कहा जा रहा है, जिसे सन्ध्याओं के समय में करना चाहिये। नीम, सफेद सरसों, लहसन, फली नामक मछली, जम्बीरी नीबू, करञ्ज के बीज—इनका सम्मिश्रण कर इनका भस्म बना ले तथा दूसरों के द्वारा दृष्टिदोष होने पर, अन्य लोगों की हाय पड़ने पर एवं बालग्रहों से मुक्ति के लिये मूल में लिखित 'वासुदेवो जगन्नाथ०' इत्यादि छः श्लोकमन्त्रों को पढ़कर बालक के शिर (माथे) आदि अङ्गों पर लगा दे। इस प्रकार मन्त्र से प्रतिदिन रक्षा करने पर शिशु नजर लगने, हाय पड़ने तथा बालग्रहों से बचा रहता है एवं प्रतिदिन बढ़ता रहता है।

हरिवंशे—

नदोङ्कमेनमारोप्य भूरेणुं परिगृह्य च। शिरः प्रदक्षिणं कुर्वन्मन्त्रमेनं जजाप ह॥
विष्णुस्ते पूर्वतः पातु रुद्रो रक्षतु दक्षिणे। ब्रह्मा च पश्चिमे पायाच्चन्द्रो रक्षत्वथोत्तरम्॥

उपरिष्टात्तथा सूर्यः पायाच्चाधश्च वासुकिः। पायादूर्ध्वमधो वत्सं शिष्टाः काष्ठाः समीरणः॥
स्वस्तिं करोतु भगवान् पिनाकी वृषभध्वजः। गावो रक्षन्तु सर्वत्र भूमौ पातु सदाशिवः॥
एवमुच्चार्य नन्दस्तु कृष्णं स्पर्श सर्वतः। एष मन्त्रो हि बालानां रक्षायै परिकीर्तितः॥

इति स्खलनादौ बालरक्षाविधानम्।

हरिवंश पुराण के अनुसार स्खलन से रक्षा करने का मन्त्र—(मूल में श्लोक १ से ५ तक) फिर नन्द ने इसको (कृष्ण को) गोद में लेकर धरती से रेणु उठाकर शिर पर प्रदक्षिणक्रम से उसे घुमाते हुए उसारा किया तथा इस मन्त्र को जपा—'हे बालक! विष्णु तेरी पूर्व से रक्षा करे। रुद्र दक्षिण से रक्षा करे। ब्रह्मा पश्चिम से रक्षा करे तथा चन्द्रमा उत्तर से रक्षा करे। सूर्य ऊपर से रक्षा करें तथा नीचे से वासुकी रक्षा करे। ऊर्ध्व तथा अधः में इस बालक की शिष्ट जन काष्ठा तथा समीरण रक्षा करे। भगवान् पिनाकी वृषभध्वज (शङ्कर) तेरा कल्याण करे। सम्पूर्ण जगह गायें तेरी रक्षा करे। भूमि पर सदा शिव रक्षा करे।' इस प्रकार से कहकर नन्द ने कृष्ण के सब शरीर पर हाथ फेरा। यह मन्त्र बालकों की रक्षा के लिये कहा गया है।

विमर्श—बच्चे को ताड़ित करना कथमपि उचित नहीं है। इस सम्बन्ध में संसार में जापानी माताओं का व्यवहार अन्य देशों की तुलना में अपने शिशुओं से उत्तम होता है। भारत में शिशु के नाल को घर में गाड़ने की प्रथा है; परन्तु जापान में तो इसे एक सुन्दर पेटी में सुरक्षित रखते हैं। यह माता एवं शिशु के अधिक भावनात्मक प्रेम का प्रतीक होता है। वहाँ के अस्पतालों में छुट्टी के समय उसको शिशु का नाल भेंट करते हैं—

Japanese mother were given their baby's umblical cord at the time they left the Hospital. In Japan the mother usually stays in the hospital until the ninth or tenth day when the umblical cord shrivel and drops off. The remment of the cord is placed in a pretty wooden box tied with ribbon and presented to the mother. —Everyday Health and Illness in Japan and America by William Candil.

चीन में अपने बीमार बच्चों का उपचार वहाँ की माताएँ स्वयं के परम्परागत अनुभव के आधार पर तथा ज्योतिषियों, तान्त्रिकों आदि से कराती हैं—

And they went to a range of other specialists for advice and treatment : Horoscope readers, Taoist, Buddhist and other priests, women experts in ritual performances; and even spirit-mediums.

—Chinese Traditional Etiology

महामारीशमनविधानम्

ब्रह्मवैवर्ते—

राजा च कुरुते पापं ब्रह्महत्यादिदारुणम्। वंशजान्हन्ति सहसा स्त्रीवधं कुरुते भृशम्॥
तेन राज्ञा हि सा पृथ्वी सनरा क्षयमाप्नुयात्। कालस्फोटादयो रोगा वैद्याऽविज्ञातलक्षणाः॥
प्रभवन्त्यौषधं नैव मन्त्रतन्त्राणि चैव हि। आशु मृत्युकराश्चैव ज्वरदाहकरास्तथा॥

हेमाद्रौ गर्गः—

रुद्रप्रकोपजो यस्माज्जनमारः प्रवर्तते। तस्मात्प्रसादयेद्यत्नाद्देवदेवं महेश्वरम्॥
गाणपत्येन विधिना अथर्वशिरसा तथा। यामलेन विधानेन कुर्याद्देवप्रसाधनम्॥
शिवशूक्तमुमासूक्तं जपेच्च शतरुद्रियम्। बल्योपहारान् विविधांश्चत्वरेषु निवेदयेत्॥

आवाह्य च गणैस्सार्द्धं रुद्रं रात्रावहस्सु च। ब्राह्मणान्भक्ष्यभोज्यैश्च दक्षिणाभिश्च तोषयेत्॥
प्रसादिते ततो रुद्रे जनमारो निवर्त्तते। आत्मरक्षां स्वयं कृत्वा ततः शान्तिं प्रयोजयेत्॥
आत्मरक्षा कवचादिना कर्त्तव्या।

नृसिंहपुराणे—

अनावृष्टिमहामारीज्वररोगभये तथा। नरसिंहं समाराध्य ब्राह्मणैर्वेदपारगैः॥
कारयेल्लक्षहोमं तु ग्रामे यश्च नराधिपः॥

नृसिंहमन्त्रो विष्णुप्रकरणे द्रष्टव्यः।

सुश्रुते—

स्थानत्यागाज्जपाद्धोमान्महामारी प्रशाम्यति॥ इति।

जपान्महामृत्युञ्जयनृसिंहशतचण्डीरुद्रविधानादिभिर्होमान्मृत्युञ्जयदुर्गाभैरवादिमन्त्रैः पायसतिलाज्यमधुत्रयहोमादित्यर्थः।

महामारीशमन विधान—ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में लिखा है—जब किसी देश का राजा ब्रह्महत्यादि पापकर्म करता है तथा अपने वंशजों एवं स्त्रियों के दारुण वधकर्म में प्रवृत्त होता है तो उस राजा के उस पापकर्म के फलस्वरूप उस राज्य में रहने वाले नागरिकों में पृथ्वी-मनुष्यों का क्षय, कालस्फोट आदि रोग होते हैं, जिनका निदान चिकित्सक भी नहीं कर पाते हैं। औषधियाँ तथा मन्त्र-तन्त्र भी प्रभाव नहीं करते हैं एवं उनसे तीव्र दाह तथा शीघ्र मृत्यु होती है।

हेमाद्रि में गर्ग का वचन है—जनमार (महामारी) रुद्र के प्रकोप से फैलता है; अतः देवदेव महेश्वर को प्रसन्न करना चाहिये। चबूतरों पर उनके लिये बलि उपहार आदि निवेदित करना चाहिये। गणपति अथर्वशीर्ष का पाठ एवं यामल के विधान से देव को प्रसन्न करना चाहिये। शिवसूक्त, उमासूक्त तथा शतरुद्रिय का जप करना चाहिये। दिन तथा रात में रुद्र का आवाहन उनके गणों के साथ करके उनकी पूजा करनी चाहिये तथा ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करना चाहिये। इस प्रकार रुद्र के प्रसन्न होने पर जनमार समाप्त हो जाता है। स्वयं की रक्षा करके शान्तिकर्म का अनुष्ठान करना चाहिये। आत्मरक्षा कवचादि से करनी चाहिये॥

नृसिंहपुराण में कहा है—अनावृष्टि, महामारी, ज्वर तथा रोगभय में नरसिंह की आराधना करके वेदपाठी ब्राह्मणों के द्वारा अपने ग्राम या राजधानी में राजा को लक्ष होम कराना चाहिये (नृसिंह मन्त्र पीछे विष्णु प्रकरण में देखना चाहिये)।

सुश्रुतसंहिता में कहा है—स्थानत्याग, जप-होम आदि से महामारी शान्त होती है। (जपों में मृत्युञ्जय मन्त्र, नृसिंहमन्त्र, शतचण्डी, रुद्रविधानादि तथा होम मृत्युञ्जय, दुर्गा, भैरव आदि के मन्त्रों से पायस, तिलाज्य, मधुत्रय आदि से करना चाहिये—यह अभिप्राय है)।

विमर्श—ग्रीष्मकाल में महामारी से बचने के लिये श्रीलंका में पत्तिनी पूजा (कुलत्तीपर्व) मनाते हैं—

The contemporary rituals for Pattani are performed anually or in times of drough and pestilence. The annual rituals among the Sinhalese and Tamils of the east coast of Srilanka generally occur around May. For the rest of the year the temple doors are closed. According to local belief, when the doors are opened, there is an immediate increase in temperature. Humen beings most careful during this time to avoid eating hearty foods and to obtain polluting activities. After about a weak the priest begin to sing

the secred text which recount the myths of Pattini. This part of ceremony among Tamil Hindus is known a Kulatti; which lilterally means "cooling." By recounting the history of how the Goddes anger was cooled, the community is spared from drought, and people's bodies are cooled so that pestilence caused by the excessive bile is controlled—Impects of Ayurvedic Ideas in Srilanka.

इस प्रकार इस अनुष्ठान से रोग तथा अनावृष्टि आदि से भी बच जाते हैं।

अनावृष्टिशमनविधानम्

तत्र तावद्वरुणमन्त्रपुरश्चरणम् शारदातिलके। मन्त्रो यथा—

ॐ ध्रुवासुत्वासक्षितिषुक्षियन्तो व्यस्मत् पाशं वरुणोमुमोचत्।
अवोवन्वानाआदितेरुपस्थाद्यूयम्पातस्वस्तिभिः सदानः॥

द्विचत्वारिंशद्वर्णात्मक ऋग्वेदोक्तो मन्त्रः। अस्य वरुणमन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। वरुणो देवता। अनावृष्टिशमनार्थे जपे विनियोगः। ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि॥ १॥ ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे॥ २॥ ॐ वरुण-देवतायै नमः हृदये॥ ३॥ इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ ध्रुवासुत्वासुक्षितिषु हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ क्षियन्तोव्यस्मत्पाशं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वरुणो मुमोचत शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ अवोवन्वाना अदिते कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ रुपस्थाद्यूयम्पात नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वस्तिभिः सदान इत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति हृदयादिन्यासः।

अथ मन्त्रवर्णन्यासः—ॐ ध्रुं नमः दक्षिणपादाङ्गुल्यग्रे॥ १॥ ॐ वां नमः दक्षिणपादाङ्गुलिमूले॥ २॥ ॐ सुं नमः दक्षिणगुल्फे॥ ३॥ ॐ त्वां नमः दक्षिणजानुनि॥ ४॥ ॐ सं नमः दक्षपादमूले॥ ५॥ ॐ क्षिं नमः वामपादाङ्गुल्यग्रे॥ ६॥ ॐ तिं नमः वामपादाङ्गुलिमूले॥ ७॥ ॐ षुं नमः वामगुल्फे॥ ८॥ ॐ क्षिं नमः वामजानुनि॥ ९॥ ॐ यं नमः वामपादमूले॥ १०॥ ॐ तों नमः गुदे॥ ११॥ ॐ ष्यं नमः लिङ्गे॥ १२॥ ॐ स्मं नमः नाभौ॥ १३॥ ॐ त्पां नमः कुक्षौ॥ १४॥ ॐ शं नमः पृष्ठे॥ १५॥ ॐ वं नमः हृदये॥ १६॥ ॐ रुं नमः दक्षिणस्तने॥ १७॥ ॐ णों नमः वामस्तने॥ १८॥ ॐ मुं नमः गले॥ १९॥ ॐ मों नमः दक्षिणहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ २०॥ ॐ चं नमः दक्षिणहस्ताङ्गुलि-मूले॥ २१॥ ॐ अं नमः दक्षिणमणिबन्धे॥ २२॥ ॐ वों नमः दक्षिणकूर्परे॥ २३॥ ॐ वं नमः दक्षिणबाहुमूले॥ २४॥ ॐ न्वां नमः वामहस्ताङ्गुल्यग्रे॥ २५॥ ॐ नां नमः वामहस्ताङ्गुलिमूले॥ २६॥ ॐ अं नमः वाममणिबन्धे॥ २७॥ ॐ दिं नमः वामकूर्परे॥ २८॥ ॐ तें नमः वामबाहुमूले॥ २९॥ ॐ रुं नमः वक्त्रे॥ ३०॥ ॐ पं नमः दक्षकपोले॥ ३१॥ ॐ स्थां नमः वामकपोले॥ ३२॥ ॐ द्यूं नमः दक्षिणनासिकायाम्॥ ३३॥ ॐ यं नमः वामनासिकायाम्॥ ३४॥ ॐ पां नमः दक्षिणनेत्रे॥ ३५॥ ॐ तं नमः वामनेत्रे॥ ३६॥ ॐ स्वं नमः दक्षिणकर्णे॥ ३७॥ ॐ स्तिं नमः वामकर्णे॥ ३८॥ ॐ भिं नमः भ्रूमध्ये॥ ३९॥ ॐ सं नमः मस्तके॥ ४०॥ ॐ दां नमः शिरसि॥ ४१॥ ॐ नं नमः सर्वाङ्गे॥ ४२॥ इति मन्त्रवर्णन्यासः। एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

चन्द्रप्रभं पङ्कजसन्निषण्णं पाशां कुशाभीतिवरं दधानम्। मुक्ताविभूषाञ्चितसर्वगात्रं ध्यायेत्प्रसन्नं वरुणं विभूत्यै॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य धर्मादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताः पूर्ववत् सम्पूज्य मध्ये मूलेन मूर्त्तिं प्रकल्प्य आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैर्भगवन्तं वरुणं सम्पूज्य आवरणपूजां कुर्यात्।

तद्यथा—(षट्कोणे) प्राचीक्रमेण आग्नेयादिकोणकेसरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ ध्रुवासुत्वासक्षितिषु हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ क्षियन्तोव्यस्मत्पाशं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वरुणो मुमोचत् शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ अवोवन्नवानाअदिते कवचाय

हुम्॥४॥ ॐ रुपस्थाद्यूयम्पात नेत्रत्रयाय वौषट्॥५॥ ॐ स्वस्तिभिः सदान इत्यस्त्राय फट्॥६॥ इति षडङ्गानि पूजयेत्॥१॥

ततो दलाग्रेषु प्राचीक्रमेण—ॐ शेषाय नमः॥१॥ ॐ वासुकये नमः॥२॥ ॐ तक्षकाय नमः॥३॥ ॐ कर्कोटकाय नमः॥४॥ ॐ पद्माय नमः॥५॥ ॐ महापद्माय नमः॥६॥ ॐ शङ्खपालाय नमः॥७॥ ॐ कुलिकाय नमः॥८॥ इति पूजयेत्॥२॥

तस्माद्बाह्ये चतुरस्त्रे भूपुरे पूर्वादिदशदिक्षु—ॐ लं इन्द्राय नमः॥१॥ ॐ रं अग्नये नमः॥२॥ ॐ मं यमाय नमः॥३॥ ॐ क्षं निर्ऋतये नमः॥४॥ ॐ वं वरुणाय नमः॥५॥ ॐ यं वायवे नमः॥६॥ ॐ सं सोमाय नमः॥७॥ ॐ हं ईशानाय नमः॥८॥ ईशानपूर्वयोर्मध्ये ॐ आं ब्रह्मणे नमः॥९॥ निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये ॐ अं अनन्ताय नमः॥१०॥ इति पूजयेत्॥३॥

तद्बहिस्तत्तत्समीपे—ॐ वज्राय नमः॥१॥ ॐ शक्तये नमः॥२॥ ॐ दण्डाय नमः॥३॥ ॐ खड्गाय नमः॥४॥ ॐ पाशाय नमः॥५॥ ॐ अङ्कुशाय नमः॥६॥ ॐ गदायै नमः॥७॥ ॐ त्रिशूलाय नमः॥८॥ ॐ पद्माय नमः॥९॥ ॐ चक्राय नमः॥१०॥ इत्यायुधानि पूजयेत्॥४॥

एवमावरणपूजां कृत्वा धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणानीराजनप्रदक्षिणानमस्कारैः पूजां समाप्य यथाविधि वाग्यतो जपं कुर्य्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। जपान्ते वृष्टिकामनया वेतसोत्थाभिः क्षीरक्ताभिः समिद्भिः पायसान्नेन सर्पिः सिक्तेन च दशांशहोमं कृत्वा तद्दशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशतः यथाशक्ति वा पायसान्नेन ब्राह्मणभोजनं च कार्यम्।

शारदातिलके—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं पायसेन दशांशतः। सर्पिः सिक्तेन जुहुयान्मन्त्री मन्त्रस्य सिद्धये॥
ऋणमुक्त्यै जपेन्मन्त्रं प्रत्यहं साष्टकं शतम्। जपेनानेन लभते महतीमव्ययां श्रियम्॥
शितेक्षुशकलैर्मन्त्री जुहुयाद्घृतसम्प्लुतैः। चतुर्दिनं दशशतमृणमुक्त्यै महाश्रियै॥
समिद्भिर्वेतसोत्थाभिः क्षीराक्ताभिर्दिनत्रयम्। जुहुयाद्वृष्टिसंसिद्ध्यै मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः॥
अनेन विधिना मन्त्री सूर्ये शतभिषं गते। चतुःशतं घृतयुतं पायसं जुहुयाद्वशी॥
ऋणनाशाय सम्पत्त्यै वश्यारोग्याभिवृद्धये। भृगुवारे कृतो होमः पायसेन च सर्पिषा॥
महतीं सम्पदं कुर्यान्नाशयेत्सकलापदः। शालिभिर्घृतसंसिक्तैः सरिदन्तरितः सुधीः॥
त्र्यहं चतुःशतं हुत्वा स्तम्भयेत्परसैन्यकम्। सायं प्रत्यङ्मुखो वह्निमाराध्य प्रजपेन्मनुम्॥
चतुःशतं विमुच्येत मन्त्री सर्वैरुपद्रवैः। मन्त्री प्रत्यङ्मुखो भूत्वा तर्पयेद्विमलैर्जलैः॥
सर्वोपद्रवनाशाय समस्ताभ्युदयाप्तये। बहुना किमिहोक्तेन मन्त्रेणानेन साधकः॥
साधयेत्सकलान्कामान्जपहोमादितत्परः॥

इति वृष्टिप्रदवारुणीऋग्विधानम्।

अनावृष्टि-शमनहेतु वारुणमन्त्र का पुरश्चरण—अब शारदातिलक के अनुसार अनावृष्टि के समय वृष्टि कराने के लिये वारुण मन्त्र का पुरश्चरण लिखा जा रहा है। मन्त्र है—'ॐ ध्रुवासुत्वासक्षितिषुक्षियन्तो व्यस्मत् पाशं वरुणोमुमोचत्।अवोवन्वानाअदितेरुपस्थाद्यूयम्पातस्वस्तिभिः सदानः॥' यह ऋग्वेद के सातवें मण्डल के ८८वें सूक्त का सातवाँ मन्त्र है। इसमें बयालीस अक्षर हैं। सर्वप्रथम 'ॐ अस्य वरुणमन्त्रस्य वसिष्ठऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। वरुणो देवता। अनावृष्टिशमनार्थे जपे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग-हेतु जल छोड़े। फिर उसके आगे लिखे मूलोक्त 'ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि, ॐ त्रिष्टुपृछन्दसे नमः मुखे, ॐ वरुणदेवतायै नमः हृदये' इन तीन मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास करे। फिर मूलोक्त 'ॐ ध्रुवासुत्वासुक्षितिषु हृदयाय नमः' इत्यादि छः मन्त्रों से हृदयादि

षडङ्गन्यास करे। फिर उसके आगे लिखे 'ॐ ध्रुं नमः दक्षिणपादाङ्गुल्यग्रे' इत्यादि ४२ मन्त्रों से मन्त्र के वर्णों का न्यास शरीर के निर्दिष्ट अङ्गों में करने के उपरान्त इस प्रकार ध्यान करे—

चन्द्रप्रभं पङ्कजसन्निषण्णं पाशांकुशाभीतिवरं दधानम्। मुक्ताविभूषाञ्चितसर्वगात्रं ध्यायेत्प्रसन्नं वरुणं विभूत्यै॥ (चन्द्रमा के समान प्रभा वाले, कमल पर विराजमान, पाश-अङ्कुश-अभयमुद्रा तथा वरमुद्रा धारण किये हुए, सर्वशरीर को मुक्ताओं से विभूषित किये वरुणदेव का विभूति प्राप्तिहेतु ध्यान करे)। यह ध्यानमन्त्र है। फिर मानसोपचारों से पूजा करके पूर्व की भाँति धर्मादिपरतत्त्वान्त पीठदेवताओं की पूजा करके पीठ के मध्यभाग में वरुणदेव की मूर्ति की कल्पना करके आवाहन से लेकर पुष्पार्पण-पर्यन्त भगवान् वरुण की पूजा करके आवरण-पूजा करे।

आवरण-पूजा—षट्कोण में प्राचीक्रम से 'ॐ ध्रुवासुत्वासक्षितिषु०' इत्यादि मूलोक्त छः मन्त्रों से वरुणदेव के हृदयादि छः अङ्गों की पूजा करे। फिर अष्टदल में प्राचीक्रम से 'ॐ शेषाय नमः' इत्यादि आठ मन्त्रों से पूजा करे। फिर उसके बाहर भूपुर में पूर्वादि दिशाओं में 'ॐ लं इन्द्राय नमः' इत्यादि दश मन्त्रों से इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करे। फिर उनके समीप बाहर 'ॐ वज्राय नमः' इत्यादि दस मंत्रों से दिक्पालों के आयुधों की पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार से आवरण-पूजा करके धूप-दीप-नैवेद्य-ताम्बूल-दक्षिणा-नीराजन प्रदक्षिणा-नमस्कार से पूजा को समाप्त करके यथाविधि स्पष्ट उच्चारणपूर्वक मूल मन्त्र (वारुणमन्त्र) का जप प्रारम्भ करे।

पुरश्चरण—इसका पुरश्चरण एक लाख मन्त्रजप करने से होता है। जप की समाप्ति पर वृष्टिकामना से वेतस वृक्ष की समिधाओं को दूध में डुबोकर पायसान्न तथा घृत से आप्लुत करके मन्त्रजप का दशांश होम करना चाहिये; फिर होम का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन सम्पन्न कराना चाहिये।

शारदातिलक के अनुसार प्रयोग—एक लाख मन्त्र का जप करके फिर पायस से दशांश सर्पिःसिक्त हवन मन्त्रवेत्ता को करना चाहिये। इससे मन्त्र सिद्ध हो जाता है। ऋणमुक्ति के लिये एक सौ आठ मन्त्र का जप करना चाहिये। इसके जप से महान् लक्ष्मी प्राप्त होती है। श्वेत ईख के टुकड़ों को घी में डुबोकर चार दिन तक एक सहस्र आहुतियाँ महाश्री की प्राप्ति के लिये देनी चाहिये। वेतवृक्ष की दूधिया समिधाओं (दूध में डुबोकर) से तीन दिन तक जितेन्द्रिय होकर वृष्टि कराने के लिये आहुति देनी चाहिये। जब सूर्य शतभिषा नक्षत्र में हो तब जितेन्द्रिय होकर चार सौ घृतयुक्त पायस का होम ऋणनाश, सम्पत्ति की प्राप्ति, वशीकरण तथा आरोग्य की अभिवृद्धि के लिये करना चाहिये। भृगुवार (शुक्रवार) को घी तथा खीर का होम करने से महान् सम्पत्ति की प्राप्ति होती है तथा सम्पूर्ण आपदाओं का नाश होता है। विद्वान् को घृताक्त चावलों से नदी के भीतर (जल में) तीन दिन तक चार सौ आहुति प्रतिदिन देना चाहिये; इससे पराई सेना का स्तम्भन होता है। सायङ्काल में साधक पश्चिम की ओर को मुख करके अग्नि की आराधना करके मन्त्रजप करे तो चार सौ मन्त्र प्रतिदिन जपने से सभी उपद्रवों से मुक्त हो जाता है। मन्त्रसाधक को पश्चिम की ओर मुख करके निर्मल जल से (वरुणदेव का) तर्पण करना चाहिये, इससे उसके समस्त उपद्रव नष्ट होते हैं तथा सब प्रकार की उन्नति भी होती है। अधिक क्या कहा जाय; इस मन्त्र के जप-होमादि से सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होते हैं।

वृष्टिप्रदविधानं द्वितीयम्

बृहदृग्विधाने शौनकः—

अच्छावदेति सूक्तं तु वृष्टिकामः प्रयोजयेत्। निराहारः क्लिन्नवासा अचिरेण प्रवर्षति॥
हुत्वायुतं वैतसीनां क्षीराक्तानां हुताशने। महद्वर्षमवाप्नोति सूक्तेनाच्छावदेन हि॥

अनेन सूक्तेन प्रत्यृचं वा दिश उपस्थेया इति सायणभाष्ये। अथ अच्छावदेति सूक्तं ऋ० अ० ४ अ० ४ वर्ग २७। ॐ अच्छावदतवसंङ्गीर्भिराभिः स्तुहिपर्जन्यंनमसाविवास। कनिक्रदद्वृषभोजीरदानूरेतोदधात्योषधीषुगर्भम्॥१॥ विवृक्षान्हन्त्युतहन्तिरक्षसोविश्वंविभायभुवनंमहावधात्। उतानागाईषतेवृष्ण्यावतोयत्पर्जन्यः स्तनयन्हन्तिदुष्कृतः॥२॥ रथीवकशयाश्वांअभिक्षिपन्नाविदूतान् कृणुतेवर्ष्यां ३ अह। दूरात्सिंहस्यस्तनथाउदीरतेयत्पर्जन्यः कृणुतेवर्ष्यं १ नभः॥३॥ प्रवातावान्तिपतयन्तिविद्युतउदोषधीर्जिहतेपिन्वतेस्वः। इराविश्वस्मैभुवनायजायतेयत्पर्जन्यः पृथिवीरेतसावति॥४॥ यस्यव्रतेपृथिवीनन्नमीतियस्यमीतियस्यव्रतेशफवजर्भुरीति। यस्यव्रतओषधीर्विश्वरूपाः सनः पर्जन्यमहिशर्मयच्छ॥५॥ दिवोनोवृष्टिंमरुतोररीध्वंप्रपिन्वतवृष्णोअश्वस्यधाराः। अर्वाङेतेनस्तनयित्नुनेह्यपोनिषिञ्चन्नसुर पितानः॥६॥ अभिक्रन्दस्तनयगर्भमाधाउदन्वतापरिदीयारथेनदृतिंसुकर्षविषितन्यञ्चसमाभवन्तूद्वतोनिपादाः॥७॥ महान्तंकोशमुदचानिषिञ्चस्यन्दन्ताङ्कुल्याविषिताःपुरस्तात्॥ घृतेनद्यावापृथिवीव्युन्धिसुप्रपाणंभवत्वघ्न्याभ्यः॥८॥ यत्पर्जन्यकनिक्रदत्स्तनयन्हंसिदुष्कृतः प्रतीदंविश्वं मोदतेयत्किञ्चपृथिव्यामधि॥९॥ अवर्षीर्वर्षमुदुषूगृभायाकर्धन्वान्यत्येतवाउ। अजीजन ओषधीर्भोजनायकमुतप्रजाभ्योविमोदनीषाम्॥१०॥ इति दशर्चं सूक्तम्। अनेन सूक्तेन प्रत्यृचं वा अयुतवेतसीनां क्षीराक्तानां होमाच्छीघ्रं वर्षति। होमान्ते इदं पर्जन्याय इति त्यागं कुर्यादितिपर्जन्यविधानम्।

द्वितीय वृष्टिकारक मन्त्रप्रयोग—बृहद् ऋग्विधान में शौनक का कथन है—'अच्छावद०' इत्यादि सूक्त का प्रयोग वृष्टि की कामना से करना चाहिये, यह सूक्त निराहार तथा गीले कपड़ों में पढ़ना चाहिये तथा एक-एक अयुत वेत की समिधाओं को दूध में डुबोकर हवन करे तो शीघ्र ही बहुत वृष्टि होती है। इस सूक्त का खड़े होकर प्रत्येक दिशा में मुख करके पाठ करना चाहिये। (यह सूक्त ऋग्वेद के चौथे अष्टक के चौथे अध्याय अथवा मण्डल ५। सूक्त ८३ में है, उसमें दस मन्त्र है)।

इस सूक्त के भौम अत्रि ऋषि हैं, पर्जन्य देवता है तथा त्रिष्टुप् जगती एवं अनुष्टुप् छन्द है। जिनका विनियोग में प्रयोग करना चाहिये। इस सूक्त की प्रत्येक ऋचा से अयुत संख्या में होम करना चाहिये तथा आहुति के अन्त में 'इदं पर्जन्याय न मम' कहकर त्याग भी करना चाहिये।

विशेष—इस प्रयोग का जलचर राशिगत चन्द्रमा में तथा वृष्टि के आर्द्रादि दश सूर्यनक्षत्रों में अनावृष्टि रहने पर प्रयोग करना चाहिये।

अथ तिस्रो वाच इत्यादिसूक्तद्वयविधानम् ; ऋग्विधाने शौनकः—

आस्यदघ्नं विगाह्यापः प्राङ्मुखः प्रयतः शुचिः। सूक्ताभ्यां तिस्र आदिभ्यामुपतिष्ठेत भास्करम्॥
अनश्नंस्तैतज्जप्तव्यं वृष्टिकामेन यत्नतः। पञ्चरात्रेऽप्यतिक्रान्ते महतीं वृष्टिमाप्नुयात्॥

ॐ तिस्रो वाच इत्यादिसूक्तस्य अग्निपुत्रः कुमार ऋषिः वसिष्ठो वा। त्रिष्टुप्छन्दः। पर्जन्यो देवता। वृष्टिप्राप्त्यर्थे विनियोगः।

ॐ तिस्रो वाचः प्रवदज्योतिरग्राया एतद्दुह्रेमधुदोघमूधः। सवत्सं कृण्वन् गर्भमोषधीनां सद्योजातो वृषभो रोरवीति॥ योवर्धनओषधीनांयोअपांयोविश्वस्य जगतो देव ईशे। सत्रिधातुशरणं शर्मयंसत्रिवर्तुज्योतिः स्वभिष्ट्य १ स्मे॥ स्तरीरुत्वद्भवतिसूतउत्वद्यथावशन्तन्वञ्चक्रएषः। पितुःपयः प्रतिगृभ्णातिमातातेन पितावर्धतेतेनपुत्रः॥ यस्मिन्विश्वानिभुवनानितस्थुस्तिस्रोद्यावस्त्रेधासस्रुरापः। त्रयः कोशानउपसेचनासोमध्वश्चोतन्त्यभितोविरप्शम्॥

इदं वचः पर्जन्यायस्वराजेहृदोअस्त्वन्तरंतज्जुजोषत्।
मयोभुवोवृष्टयः सन्त्वस्मेसुपिप्पलाओषधीर्देवगोपाः॥

पुरेतोधावृषभः शश्वतीनां तस्मिन्नात्माजगतस्तस्थुषश्च।
तन्मऋतं पातु शतशारदाययूयं पातस्वस्तिभिः सदानः॥

इति प्रथमसूक्तम्।

ॐ पर्जन्यायेति सूक्तस्य अग्निपुत्रः कुमार ऋषिः वसिष्ठो वा। गायत्री छन्दः। पर्जन्यो देवता। वृष्टिप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः। ॐ पर्जन्यायप्रगायतदिवस्पुत्रायमीढुषे। सनोयवसमिच्छतु॥ १॥ योगर्भमोषधीनाङ्गवाङ्कृण्णोत्पर्वताम्। पर्जन्यः पुरुषीणाम्॥ २॥ तस्माइदास्येहविर्जुहोतामधुमत्तमम्। इलान्नः संयतं करत्॥ ३॥

इति वृष्टिप्राप्तिकरविधानम्।

तृतीय वृष्टिकारक मन्त्रप्रयोग—ऋग्विधान में शौनक ने कहा है—जल के भीतर आस्यदघ्न (मुख के बराबर गहराई तक जिसमें मुख में पानी न जा सके) खड़े होकर प्रयत्नपूर्वक पवित्र शरीर तथा पवित्र मन से 'तिस्रोवाचः प्रवद' सूक्त का निराहार रहकर सूर्य के उपस्थित रहने तक निरन्तर जप करते रहने से पाँच रात्रि के अतिक्रान्त होने पर या उनके भीतर घोर वर्षा होती है। सर्वप्रथम 'ॐ तिस्रोवाचः इत्यादि सूक्तस्य अग्निपुत्रः कुमार ऋषिः वसिष्ठो वा। त्रिष्टुप् छन्दः। पर्जन्यो देवता। वृष्टिप्राप्त्यर्थे विनियोगः' इस मन्त्र से विनियोग करके फिर मूल में लिखित 'ॐ तिस्रोवाचः प्रवद०' इत्यादि छः ऋचाओं के सूक्त का पाठ करना चाहिये। फिर 'ॐ पर्जन्यायेति' द्वितीय सूक्त का भी पाठ करनी चाहिये।

द्वितीय सूक्त का विनियोग है—'ॐ पर्जन्यायेति सूक्तस्य अग्निपुत्रः ऋषिः वसिष्ठो वा। गायत्री छन्दः। पर्जन्यो देवता। वृष्टिप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः' इससे विनियोग करे तथा मूल में लिखित 'ॐ पर्जन्याय प्रगायत दिवस्पुत्राय मीढुषे। सनो यव समिच्छतु॥ १॥ योगर्भमोषधीनां गवां कृणोत्पर्वताम्। पर्जन्यः पुरीषीणाम्॥ २॥ तस्मा इदास्ये हविर्जुहोता मधुमत्तमम्। इलां नः संयतं करत्॥ ३॥' यह पर्जन्य सूक्त है।

विशेष—इनमें प्रथम सात ऋचाओं वाला सूक्त ऋग्वेद के सातवें मण्डल का १०१वाँ तथा द्वितीय सूक्त का १०२वाँ है।

सर्वरोगनाशकधर्मराजमन्त्रविधानम्

मन्त्रमहोदधौ मन्त्रो यथा—'ॐ क्रौं ह्रीं आं वैं वैवस्वताय धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमः' इति चतुर्विंशतिवर्णो मन्त्रः। नास्य ऋष्यादिपूजाविधानं सिद्धमन्त्रत्वादिति। ॐ क्रौं ह्रीं हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ आं वैं शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ वैवस्वताय शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ धर्मराजाय कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ भक्तानुग्रहकृते नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ नमः अस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

अथ ध्यानम्—

पाथःसंयुतमेधसन्निभतनुः प्रद्योतनस्यात्मजो नृणां पुण्यकृतां शुभावहवपुः पापीयसां दुःखकृत्।
श्रीमद्दक्षिणदिक्पतिर्महिषगोभूषाभरालङ्कृतो ध्येयः संयमनीपतिः पितृगणस्वामी यमो दण्डभृत्॥
अभ्यस्तोयं सदा मन्त्रः सकलापद्विनाशनः। नरकप्राप्तिरोद्धा स्याद्रिपुभीतिनिवर्तकः॥

इति धर्मराजमन्त्रानुष्ठानम्।

सर्वरोगनाशक धर्मराज मन्त्रप्रयोग—'ॐ क्रौं ह्रीं आं वैं वैवस्वताय भक्तानुग्रहकृते नमः।' यह चौबीस अक्षरों का मन्त्र है। यह एक सिद्ध मन्त्र है; अतः इसके ऋष्यादि पूजा का विधान (मन्त्रमहोदधि में) नहीं कहा गया है। 'ॐ क्रौं हृदयाय नमः' इत्यादि मूल में लिखित छः मन्त्रों से हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये (मन्त्रमहोदधि में इसका करन्यास नहीं बताया है; परन्तु मन्त्रमहार्णव में करन्यास भी लिखा गया है)।

करन्यास—'ॐ क्रौं ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ आं वैं तर्जनीभ्यां नमः, ॐ वैवस्वताय मध्यमाभ्यां नमः, ॐ धर्मराजाय अनामिकाभ्यां नमः, ॐ भक्तानुग्रह कृते कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐ नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।'

इनका ध्यान इस प्रकार करना चाहिये। अग्नि तथा सूर्यसंयुक्त मेघ की भाँति आभा वाले सूर्य के पुत्र, जिनका शरीर पुण्यात्माओं के लिये शुभ तथा पापात्माओं को भयङ्कर है; श्रीमान् दक्षिण दिशा के पति, भैंसे पर सवार, भूषा से अलंकृत, संयमनीपति, पितृगणों के स्वामी, दण्डधारी यम का ध्यान करे। इस मन्त्र का नित्य अभ्यास करने से सब पाप दूर हो जाते हैं।

चित्रगुप्तमन्त्रानुष्ठानम्

तत्रैव मन्त्रो यथा—'ॐ नमो विचित्राय धर्मलेखकाय यमवाहिकाधिकारिणे म्ल्व्यूंजन्म सम्पत्प्रलयं कथय कथय स्वाहा' इत्यष्टात्रिंशदक्षरो मन्त्रः। अस्य ऋष्यादिन्यासपूजाऽभावः सिद्धमन्त्रत्वात्। ॐ नमो विचित्राय हृदयाय नमः॥ १॥ ॐ धर्मलेखकाय शिरसे स्वाहा॥ २॥ ॐ यमवाहिकाधिकारिणे शिखायै वषट्॥ ३॥ ॐ म्ल्व्यूंजन्मसम्पत्प्रलयं कवचाय हुं॥ ४॥ ॐ कथयकथय नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ५॥ ॐ स्वाहा इत्यस्त्राय फट्॥ ६॥ इति षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

किरीटोज्ज्वलं वस्त्रभूषाभिरामं विचित्रासनासीनमिन्दुप्रभास्यम्।
नृणां पापपुण्यानि पत्रे लिखन्तं भजे चित्रगुप्तं सखायं यमस्य॥

सिद्धमन्त्रमिमं पुंसां जपतां चित्रगुप्तकः। प्रसन्नो गणयेत्पुण्यं नैव पापं कदाचन॥

इति चित्रगुप्तमन्त्रविधानम्।

इति श्रीवीकानेरराज्यान्तर्गतश्रीरत्नगढ़नगरनिवासिना गौडवंशोद्भवश्रीवसिष्ठगोत्रश्रीरामकृष्णपौत्रेण श्रीकस्तूरीचन्द्रसूनुना श्रीमहादेवभक्तशुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयीशाखानुयायिना वैद्यपण्डितश्रीचतुर्थीलालशर्मणा विरचिते अनुष्ठानप्रकाशे महानिबन्धे पुरश्चरण(प्रयोग)काण्डे सर्वरोगोपशमनप्रकरणं सप्तमं समाप्तम्।

चित्रगुप्त मन्त्र का अनुष्ठान—'ॐ नमो विचित्राय धर्मलेखकाय यमवाहिकाधिकारिणे म्ल्व्यूं जन्म सम्पत् प्रलयं कथय कथय स्वाहा' यह अड़तीस अक्षरों का मन्त्र है। यह एक सिद्ध मन्त्र है, जिसके ऋष्यादिन्यास का अभाव है। षडङ्गन्यास इस प्रकार होता है—ॐ नमो विचित्राय हृदयाय नमः, ॐ धर्मलेखकाय शिरसे स्वाहा, ॐ यमवाहिका-धिकारिणे शिखायै वषट्, ॐ म्ल्व्यूं जन्म सम्पत् प्रलयं कवचाय हुं, ॐ कथय कथय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ स्वाहा इत्यस्त्राय फट्।'

ध्यान—'किरीटोज्ज्वलं वस्त्रभूषाभिरामं, विचित्रासनासीनमिन्दुप्रभास्यं नृणां पापपुण्यानि पत्रे लिखन्तं भजे चित्रगुप्तं सखायं यमस्य॥' (उज्ज्वल मुकुट तथा अभिराम वेषभूषा धारण किये, चन्द्रमा के समान आभा वाले, मनुष्यों के पुण्यों एवं पापों को कागज पर लिखने वाले चित्रगुप्त, जो यमराज के सखा हैं, उनको भजे)।

फलश्रुति—जो इस सिद्ध मन्त्र को (चित्रगुप्त मन्त्र को) नित्यप्रति प्रसन्न मन से जपता है, तो प्रसन्न चित्रगुप्त उसके पुण्यों को ही गिनते हैं, पाप को कभी नहीं गिनते हैं अर्थात् उसके कर्म पुण्यात्मक ही होते हैं; पापात्मक नहीं होते हैं।

विमर्श—इस प्रकार इस ग्रन्थ के प्रथम काण्ड विचारकाण्ड में सामान्य प्रकरण-होमविचार प्रकरण तथा तान्त्रिक होमविचार प्रकरण ये तीन प्रकरण हैं, द्वितीय काण्ड में (पद्धतिकाण्ड) में तीन प्रकरण तथा अन्तिम तृतीय पुरश्चरणकाण्ड में सात प्रकरण हैं।

ग्रन्थालङ्कारः

देशे मनोज्ञे हि मरौ बभूव वीकोजिनामा नृपतिः पुरा हि।
तस्यैव नाम्ना खलु राजधानी लोके विकानेर इति प्रथाङ्गता॥ १॥

तदन्तरे शक्रपुरोपमे पुरे श्रीरत्नदुर्गे सुजनैः सुसेविते।
आसीद्वसिष्ठान्वयगौडविप्रो माध्यन्दिनीयो बुधजीवराजः॥ २॥

तस्यात्मजा बाणमितास्तु सद्गुणाः सुवेदविद्याऽध्ययने च नैपुणाः।
आयातयातद्विजशुद्धप्राङ्गणा वीर्येण सन्ताडितवैरिदुर्गणाः॥ ३॥

एतेषु मध्ये खलु रामकृष्णो ज्ञानेन स्वल्पीकृतसर्वतृष्णः।
स्वबुद्धितः खण्डितवैरिप्रश्नः सुभक्तिसन्तर्पितदेवकृष्णः॥ ४॥

तस्याऽभवन्नाममिताः सुपुत्राः स्वधर्म्मयायिस्वकलत्रमित्राः।
गृहेषु संलेखितरम्यचित्राः श्रीकान्तपूजानिरताः पवित्राः॥ ५॥

इमानि नामानि भवन्ति तेषां चतुर्भुजाख्यो विबुधोऽयमाद्य।
कस्तूरिचन्द्राभिधसज्जनोऽपरोऽपरोगुणैर्मण्डितजेष्ठरामः॥ ६॥

स जेष्ठरामः खलु पण्डिताङ्ग्रयः षट्शास्त्रवेत्ता द्विजकर्म्मतत्परः।
त्यागी मनस्वी द्विजदेवभक्तो हुतावशिष्टान्नसदानुरक्तः॥ ७॥

तत्रापि मध्यो निजवंशपालकः कस्तूरिचन्द्राख्यमहत्सुशीलः।
तस्मात्सुपुत्रावनवद्यवन्द्यविद्यान्वितौ द्वौ नितरामभूताम्॥ ८॥

चतुर्थिलालाख्यगुरूमुखाख्यौ सुज्ञौ गुणाढ्यौ निजधर्मतत्परौ।
ज्येष्ठस्तयोर्वै खलु पण्डिताग्रणीः षट्शास्त्रवेत्ता शिवपूजने रतः॥ ९॥

षट्कर्माभिरतो नित्यं देवतातिथिपूकः। हुतशेषं तु भुञ्जानश्चतुर्थीलालपण्डितः॥ १०॥

मातामहो यस्य बभूव पण्डितः श्रीरामनामा प्रथितः स्वदेशे।
दाता वदान्यो धनिभिश्च वन्द्यो भिषक्सुवृत्त्या परिपूर्णकोशः॥ ११॥

एतादृशे शुद्धकुले विशाले चतुर्थिलालो हि बभूव चन्द्रमाः।
परोपकारी निजवंशकेतुः शिष्टानुरागी च निबन्धकर्त्ता॥ १२॥

यस्य माता हरीवाई पिता कस्तूरिचन्द्रकः।
यथाऽनसूया साध्वी सा यथाऽत्रिस्स तथा खलु॥ १३॥

सूत्रं कात्यायनं यस्य शाखा माध्यन्दिनीयिका।
श्रीवसिष्ठकुलं यस्य स चतुर्थ्याख्यपण्डितः॥ १४॥

तेनायं रचितो ग्रन्थो गौडानां प्रीतिदः सदा।
अनेन प्रीयतां शम्भुर्भवान्या सह सर्वदा॥ १५॥
व्योमशास्त्राङ्कचन्द्रेब्दे १९६० विक्रमादित्यसंज्ञके।
फाल्गुने शुक्लपञ्चम्यां ग्रन्थः पूर्णोऽभवच्छिवः॥ १६॥

॥ समाप्तोऽयं महानिबन्धः॥

ग्रन्थालङ्कार—मरु नामक मनोज्ञ देश में एक बीकाजी नामक राजा हुए, उनके नाम पर ही उनकी राजधानी बीकानेर (बीकानगर) प्रसिद्ध हुई। उसके अन्तर्गत इन्द्रपुरी के समान अनुपम पुर श्रीरतनगढ़ में सज्जनों के द्वारा सुसेवित वसिष्ठगोत्रीय माध्यन्दिनि शास्त्रीय गौड़ ब्राह्मण विद्वान् जीवराज हुए। उनके पाँच पुत्र हुए, जो विद्याध्ययन में निपुण थे। उनमें से एक रामकृष्ण थे, जिन्होंने ज्ञान प्राप्त कर अपनी तृष्णा न्यून कर ली थी। उनके आँगन में (घर में) आने-जाने वाले ब्राह्मणों से पवित्रता थी तथा वे अपने बौद्धिक पराक्रम से प्रतिद्वन्द्वियों को सन्ताडित करते थे एवं उनके प्रश्नों का खण्ड-खण्ड कर देते थे। अपनी भक्ति से उन्होंने श्रीकृष्ण भगवान् को प्रसन्न किया था। उनके तीन सुपुत्र हुए, जो अपने धर्म-कलत्र तथा मित्रों से स्नेह करते थे। घर में सुन्दर चित्र बनाते थे तथा श्रीविष्णु की पूजा में निरत रहते थे। उनमें से प्रथम पुत्र चतुर्भुज नाम वाले विद्वान् थे। दूसरे श्री कस्तूरीचन्द्र थे, जो अपनी सज्जनता तथा विद्वत्ता में श्रेष्ठ थे। तीसरे श्री जेष्ठराम थे। वह जेष्ठराम पण्डितों में अग्रणी, छः दर्शनों के मर्मज्ञ तथा द्विजकर्म में सदैव तत्पर रहने वाले थे। वे त्यागी, मनस्वी, द्विजदेवों के भक्त थे तथा सदैव जो अन्न हवन करने पर शेष रहता था, उसका ही आहार करते थे। उन तीन पुत्रों में जो मंझले पुत्र श्री कस्तूरीचन्द्र थे, वे अत्यधिक सुशील थे। उन श्री कस्तूरीचन्द्र के अनवद्य तथा विद्या से युक्त दो पुत्र हुए। उनमें चतुर्थीलाल नामक पुत्र गुरुमुख से प्राप्त ज्ञान द्वारा सुज्ञ, गुणाढ्य, निजधर्म-तत्पर तथा उन दोनों पुत्रों में ज्येष्ठ हुआ। पण्डितों में अग्रणी, षट्शास्त्रवेत्ता, शिवभक्त, नित्य षट्कर्मरत, नित्य देवता-अतिथिपूजक तथा हुतशेष भोजन करने वाले चतुर्थीलाल पण्डित के नाना पण्डित श्रीराम नाम से अपने क्षेत्र में प्रसिद्ध थे। वे दानशील, सत्यवादी, धनियों के द्वारा वन्दित थे तथा चिकित्सा वृत्ति से परिपूर्ण कोश वाले थे। इस प्रकार के शुद्ध विशाल कुल में चतुर्थीलाल चन्द्रमा के समान परोपकारी, निजवंश में पताका के समान, शिष्टानुरागी, निबन्धग्रन्थों की रचना करने वाला हुआ। उसकी माता हीराबाई, पिता कस्तूरीचन्द्र दोनों ही अनसूया तथा अत्रि के समान थे, जिनकी शाखा माध्यन्दिनी तथा सूत्र कात्यायन का था। ऐसे वसिष्ठ कुल में उत्पन्न चतुर्थीलाल पण्डित के द्वारा रचा गया ग्रन्थ गौडों के लिये प्रसन्नतादायक होगा। इस ग्रन्थ से भगवान् शङ्कर प्रसन्न हों। श्री विक्रमादित्य के १९६० संवत्सर में तथा शकाब्द १८२६ (तदनुसार ईस्वी सन् १९०४) में चान्द्रमास फाल्गुन शुक्ल पक्ष की पञ्चमी नामक तिथि में इस अनुष्ठानप्रकाश नामक छठवें निबन्धग्रन्थ की समाप्ति हुई। यह वाचकों के लिये कल्याणदायक हों।

सप्तषष्ट्युत्तरे वर्षे द्विसाहस्रे च वैक्रमे। फाल्गुने च सिते पक्षे सप्तम्यां शनिवासरे॥ १॥
एकोनविंशतितमे द्वात्रिंशदब्धिके शके। युगाब्दे पञ्चसाहस्रे तथा एकादशोत्तरे॥ २॥
निरयणे कुभेऽर्के सायने मीनसंस्थिते। रोहिण्यां प्रीतियोगे च वाणिजे करणे शुभे॥ ३॥
श्रीवत्से निर्मिते तत्र सर्वार्थसिद्ध्यपिस्तथा। नवनीतानुरोधेन गुप्तेन प्रकाशकेन च॥ ४॥
नवीनेन च गुप्तेन सुतेन च तच्छ्रेष्ठिना। वाराणस्यां संस्थितेन चौखम्बासुरभारतीम्॥ ५॥
अनुष्ठानप्रकाशस्य निबन्धस्य प्रबोधये। प्रदेशे मध्यनामाख्ये भारते मध्यसंस्थिते॥ ६॥

भिण्डर्षिनामके जिल्ले लहाराख्ये जनपदे। शिवधामात्सुपूर्वे च लाक्षागारस्य पश्चिमे॥ ७॥
अश्ववारादुत्तरे तु चन्द्रावलितो दक्षिणे। विश्रुते बरहाग्रामे ब्रह्मविद्याश्रमे शुभे॥ ८॥
यक्षेश्वरसमीपे च बर्हा इव सुपावने। विप्राणां सङ्कुले चैव आदिगौडकुले तथा॥ ९॥
वसिष्ठगोत्रजातेन दीक्षितेनास्पदेन च। ज्योतिर्विदेन वैद्येन बहुभाषाविदेन पि॥ १०॥
नानाशास्त्र अधीतेन स्वाध्यायनिरतेन च। साहबदासगौडेन कात्यायनेनाभयेन वा॥ ११॥
पाठकानां हितार्थाय सुधीनां रञ्जनाय च। सुटीका हिन्दीभाषायां सुस्पष्टा पूर्णताङ्गता॥ १२॥

इस प्रकार पं० चतुर्थीलाल-विरचित अनुष्ठानप्रकाश-महानिबन्ध के तृतीय काण्ड पुरश्चरणकाण्ड के सप्तम प्रकरण सर्वरोगोपशमन प्रकरण की महर्षि अभय कात्यायन-विरचित हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ७॥

इस प्रकार यहीं पर तीसरे काण्ड की टीका भी सम्पूर्ण हुई॥ ३॥

इस प्रकार अनुष्ठानप्रकाश ग्रन्थ पूर्ण हुआ